Jinvani Vol.46 1989 G. K. V. Haridwar

जिनवाणी

प्रैल, १९८९
चैत्र, २०४६

गीतिका

'जिनवाणी'-पतवार

☐ वर्षा सिंह

दीन-हीन पीड़ित जन के, "जिन", हैं जीवन-आधार ।
महावीर प्रभु के चरणों में, नमन हजारों बार ।।

बिखरा चारों ओर सघन तम
असत् अमावस का,
स्वर्ण बने मन, मिले परस जो
"जिन" प्रभु पारस का,

आलोकित हो ज्ञान दीप फिर, बहे ज्योति की धार ।
महावीर प्रभु के चरणों में, नमन हजारों बार ।।

माया का बन्धन अति दृढ़ है
सहज नहीं कटता,
जितना चाहें इसे काटना
और अधिक कसता,

"जिनवाणी" के सुमिरन से ही, हो सकता उद्धार ।
महावीर प्रभु के चरणों में, नमन हजारों बार ।।

डूब रही है मोह-भंवर में
सांसों की काया,
दिखती नहीं भ्रमित आंखों से
मंजिल की छाया,

यह अथाह भवसागर "वर्षा", "जिनवाणी" पतवार ।
महावीर प्रभु के चरणों में, नमन हजारों बार ।।

—एफ-३६, एम.पी.ई.बी. कॉलोनी
मकरोनिया, सागर-४७०००४

अनुक्रमणिका

☐ प्रवचन/निबन्ध ☐

☐ कथा/प्रसंग/सूक्ति ☐

☐ धारावाहिक उपन्यास ☐

☐ प्रश्नमंच–कार्यक्रम [२९] ☐

☐ कविता ☐

☐ स्तम्भ ☐

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा, कल्याणी ।
द्रोह, मोह, छल, मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ।।

एविंदियत्था य मणस्स अत्था,
दुक्खस्स हेउं मणुयस्सरागिणो ।।
ते चेव थोवं पि कयाइ दुक्खं,
न वीयरागस्स करेंति किंचि ।।

—उत्तराध्ययन ३२/१००

इन्द्रिय और मन के विषय रागात्मक-मनुष्य के लिए ही दुःख के हेतु बनते हैं, वीतराग के लिए वे किंचित् भी दुःखदायी नहीं बन सकते ।

अप्रैल, १९८९
वीर निर्वाण सं० २५१५
चैत्र, २०४६

वर्ष : ४६ • अंक : ४

मानद सम्पादक :
डॉ० नरेन्द्र भानावत, एम.ए., पी-एच.डी.

सम्पादन :
डॉ० (श्रीमती) शान्ता भानावत
एम.ए., पी-एच.डी.

प्रबन्ध सम्पादक :
प्रेमराज बोगावत

संस्थापक :
श्री जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ़

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार दुकान नं० १८२-१८३ के ऊपर
जयपुर—३०२००३ (राजस्थान)
फोन : ४८६६७

सम्पादकीय सम्पर्क सूत्र :
सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग, तिलक नगर
जयपुर—३०२००४ (राजस्थान)
फोन : ४७४४४

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं० ३६५३/५७

स्तम्भ सदस्यता : १००१ रु०
संरक्षक सदस्यता : ५०१ रु०
आजीवन सदस्यता : देश में २५१ रु०
आजीवन सदस्यता : विदेश में ७५१ रु०
त्रिवर्षीय सदस्यता : ५५ रु०
वार्षिक सदस्यता : २० रु०

मुद्रक :
फ्रैण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जयपुर—३०२००३

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो ।

अनुक्रमणिका

☐ प्रवचन/निबन्ध ☐

☐ आचार्यत्व के ६० वर्ष पर विशेष सामग्री ☐

☐ कथा/प्रसंग/सूक्ति ☐

☐ धारावाहिक उपन्यास ☐

☐ प्रश्नमंच–कार्यक्रम [३०] ☐

☐ स्तम्भ ☐

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा, कल्याणी ।
द्रोह, मोह, छल, मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ।।

परम श्रद्धेय
आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०
के
६० वें आचार्य-पद-ग्रहण दिवस
[वैशाख शुक्ला तृतीया, सं० २०४६]
पर
विशेष सामग्री सहित

☐

मई, १९८९
वीर निर्वाण सं० २५१५
वैशाख, २०४६

वर्ष : ४६ • **अंक : ५**

मानद सम्पादक :
डॉ० नरेन्द्र भानावत, एम.ए.,पी-एच.डी.

सम्पादन :
डॉ० (श्रीमती) शान्ता भानावत
एम.ए.,पी-एच.डी.

प्रबन्ध सम्पादक :
प्रेमराज बोगावत

संस्थापक :
श्री जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ़

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार दुकान नं० १८२-१८३ के ऊपर
जयपुर—३०२००३ (राजस्थान)
फोन : ४८६९७

सम्पादकीय सम्पर्क सूत्र :
सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग, तिलक नगर
जयपुर—३०२००४ (राजस्थान)
फोन : ४७४४४

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं० ३६५३/५७

स्तम्भ सदस्यता : १००१ रु०
संरक्षक सदस्यता : ५०१ रु०
आजीवन सदस्यता : देश में २५१ रु०
आजीवन सदस्यता : विदेश में ७५१ रु०
त्रिवर्षीय सदस्यता : ५५ रु०
वार्षिक सदस्यता : २० रु०

मुद्रक :
फ्रैण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जयपुर—३०२००३

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो ।

अनुक्रमणिका

☐ प्रवचन/निबन्ध ☐

☐ कथा/प्रसंग/सूक्ति ☐

☐ धारावाहिक उपन्यास ☐

☐ प्रश्नमंच—कार्यक्रम [३१] ☐

☐ कविता ☐

☐ स्तम्भ ☐

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा, कल्याणी ।
द्रोह, मोह, छल, मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ।।

इमाइं छ अवयणाइं वदित्तए—
अलियवयणे, हीलियवयणे,
खिसितवयणे, फरुसवयणे,
गारत्थिवयणे विउसवितं,
वा पुणो उदीरित्तए ।

—स्थानांग सूत्र ६/३

साधक को छह तरह के वचन नहीं बोलने चाहिये— असत्य वचन, तिरस्कारमय वचन, झिड़कते हुए वचन, कर्कश-कठोर वचन, अविचार-पूर्ण वचन, शान्त हुए कलह को फिर से उद्बुद्ध करने वाले वचन ।

☐

जून, १९८९
वीर निर्वाण सं० २५१५
ज्येष्ठ, २०४६

मानद सम्पादक :
डॉ० नरेन्द्र भानावत, एम.ए.,पी-एच.डी.

सम्पादन :
डॉ० (श्रीमती) शान्ता भानावत
एम.ए.,पी-एच.डी.

प्रबन्ध सम्पादक :
प्रेमराज बोगावत

संस्थापक :
श्री जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ़

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार दुकान नं० १८२-१८३ के ऊपर
जयपुर—३०२००३ (राजस्थान)
फोन : ४८९९७

सम्पादकीय सम्पर्क सूत्र :
सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग, तिलक नगर
जयपुर—३०२००४ (राजस्थान)
फोन : ४७४४४

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं० ३६५३/५७

स्तम्भ सदस्यता : १००१ रु०
संरक्षक सदस्यता : ५०१ रु०
आजीवन सदस्यता : देश में २५१ रु०
आजीवन सदस्यता : विदेश में ७५१ रु०
त्रिवर्षीय सदस्यता : ५५ रु०
वार्षिक सदस्यता : २० रु०

मुद्रक :
फ्रैण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जयपुर—३०२००३

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो ।

वर्ष : ४६ • **अंक : ६**

अनुक्रमणिका

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा, कल्याणी ।
द्रोह, मोह, छल, मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ।।

कोहेण जो ण तप्पदि,
सुर-णर तिरिएहि कीरमाणे वि ।
उवसग्गे वि रउद्दे,
तस्स खमा णिम्मला होदि ।।

—कार्तिकेयानुप्रेक्षा-३९४

जो देव, मानव तथा तिर्यंच पशुओं के द्वारा घोर, भयानक उपसर्ग पहुँचाने पर भी क्रोध से तप्त नहीं होता, उसी के निर्मल क्षमा होती है ।

☐

अगस्त, १९८९
वीर निर्वाण सं० २५१५
श्रावण, २०४६

वर्ष : ४६ • अंक : ८

मानद सम्पादक :
डॉ० नरेन्द्र भानावत, एम.ए.,पी-एच.डी.

सम्पादन :
डॉ० (श्रीमती) शान्ता भानावत
एम.ए.,पी-एच.डी.

प्रबन्ध सम्पादक :
प्रेमराज बोगावत

संस्थापक :
श्री जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ़

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार दुकान नं० १८२-१८३ के ऊपर
जयपुर–३०२००३ (राजस्थान)
फोन : ४८९९७

सम्पादकीय सम्पर्क सूत्र :
सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग, तिलक नगर
जयपुर–३०२००४ (राजस्थान)
फोन : ४७४४४

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं० ३६५३/५७

स्तम्भ सदस्यता : १००१ रु०
संरक्षक सदस्यता : ५०१ रु०
आजीवन सदस्यता : देश में २५१ रु०
आजीवन सदस्यता : विदेश में ७५१ रु०
त्रिवर्षीय सदस्यता : ५५ रु०
वार्षिक सदस्यता : २० रु०

मुद्रक :
फ्रैण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जयपुर–३०२००३

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो ।

अनुक्रमणिका

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा, कल्याणी ।
द्रोह, मोह, छल, मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ।।

पडिक्कमणेणं वयछिद्दाइं पिहेइ, पिहियवयछिद्दे पुण जीवे निरुद्धासवे, असबल चरित्ते अट्ठसु पवयणमायासु उवउत्ते उपहुत्ते सुप्पणिहिए विहरइ ।

—उत्तराध्ययन सूत्र-२९ अ०

प्रतिक्रमण करने से अहिंसा आदि व्रतों के दोष रूप छिद्रों का निरोध होता है, छिद्रों का निरोध होने से आत्मा आश्रव का निरोध करता है तथा शुद्ध चारित्र का पालन करता है। और इस प्रकार आठ प्रवचनमाता (पांच समिति, तीन गुप्ति) रूप संयम में सावधान, अप्रमत्त तथा सुप्रणिहित होकर विचरण करता है।

सितम्बर, १९८९
वीर निर्वाण सं० २५१५
भाद्रपद, २०४६

वर्ष : ४६ • अंक : ९

मानद सम्पादक :
डॉ० नरेन्द्र भानावत, एम.ए.,पी-एच.डी.

सम्पादन :
डॉ० (श्रीमती) शान्ता भानावत
एम ए.,पी-एच.डी.

प्रबन्ध सम्पादक :
प्रेमराज बोगावत

संस्थापक :
श्री जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ़

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार दुकान नं० १८२-१८३ के ऊपर
जयपुर—३०२००३ (राजस्थान)
फोन : ४८९९७

सम्पादकीय सम्पर्क सूत्र :
सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग, तिलक नगर
जयपुर—३०२००४ (राजस्थान)
फोन : ४७४४४

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं० ३६५३/५७

स्तम्भ सदस्यता : १००१ रु०
संरक्षक सदस्यता : ५०१ रु०
आजीवन सदस्यता : देश में २५१ रु०
आजीवन सदस्यता : विदेश में ७५१ रु०
त्रिवर्षीय सदस्यता : ५५ रु०
वार्षिक सदस्यता : २० रु०

मुद्रक :
फ्रैण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जयपुर—३०२००३

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो ।

अनुक्रमणिका

□ प्रवचन/निबन्ध □

□ कथा/प्रसंग/सूक्ति □

□ धारावाहिक उपन्यास □

□ प्रश्नमंच—कार्यक्रम [३५] □

□ कविता □

□ स्तम्भ □

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा, कल्याणी ।
द्रोह, मोह, छल, मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ।।

जं इच्छसि अप्पणत्तो,
जं च न इच्छसि अप्पणत्तो ।।
तं इच्छसि परस्स वि,
एत्तियगं जिणसासणयं ।।

—बृहत्कल्पभाष्य–४५८४

जो अपने लिए चाहते हो वह दूसरों के लिए भी चाहना चाहिए, जो अपने लिए नहीं चाहते, उसे दूसरों के लिए भी नहीं चाहना चाहिए, बस इतना मात्र जिनशासन है ।

अक्टूबर, १९८९
वीर निर्वाण सं० २५१५
आश्विन, २०४६

वर्ष : ४६ • अंक : १०

मानद सम्पादक :
डॉ० नरेन्द्र भानावत, एम.ए.,पी-एच.डी.

सम्पादन :
डॉ० (श्रीमती) शान्ता भानावत
एम.ए.,पी-एच.डी.

प्रबन्ध सम्पादक :
प्रेमराज बोगावत

संस्थापक :
श्री जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ़

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार दुकान नं० १८२-१८३ के ऊपर
जयपुर–३०२००३ (राजस्थान)
फोन : ४८९९७

सम्पादकीय सम्पर्क सूत्र :
सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग, तिलक नगर
जयपुर–३०२००४ (राजस्थान)
फोन : ४७४४४

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं० ३६५३/५७

स्तम्भ सदस्यता : १००१ रु०
संरक्षक सदस्यता : ५०१ रु०
आजीवन सदस्यता : देश में २५१ रु०
आजीवन सदस्यता : विदेश में ७५१ रु०
त्रिवर्षीय सदस्यता : ५५ रु०
वार्षिक सदस्यता : २० रु०

मुद्रक :
फ्रैण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जयपुर–३०२००३

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो ।

अनुक्रमणिका

□ प्रवचन/निबन्ध □

□ कथा/प्रसंग/सूक्ति □

□ धारावाहिक उपन्यास □

□ प्रश्नमंच–कार्यक्रम [३७] □

□ स्तम्भ □

जिनवाणी

मंगल-मूल, धर्म की जननी, शाश्वत सुखदा, कल्याणी ।
द्रोह, मोह, छल, मान-मर्दिनी, फिर प्रगटी यह 'जिनवाणी' ।।

सीतंति सुवंताणं अत्था,
पुरिसाण लोगसारत्था ।
तम्हा जागरमाणा,
विधुणध पोराणयं कम्मं ।।

—बृहत्कल्पभाष्य-३३८३

जो पुरुष सोते हैं, उनके जगत् में सारभूत अर्थ नष्ट हो जाते हैं। अतः सतत जागते रह कर पूर्वार्जित कर्मों को नष्ट करो।

दिसम्बर, १९८९
वीर निर्वाण सं० २५१६
मार्गशीर्ष, २०४६

वर्ष : ४६ • अंक : १२

मानद सम्पादक :
डॉ० नरेन्द्र भानावत, एम.ए.,पी-एच.डी.

सम्पादन :
डॉ० (श्रीमती) शान्ता भानावत
एम.ए., पी-एच.डी.

प्रबन्ध सम्पादक :
प्रेमराज बोगावत

संस्थापक :
श्री जैनरत्न विद्यालय, भोपालगढ़

प्रकाशक :
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार दुकान नं० १८२-१८३ के ऊपर
जयपुर—३०२००३ (राजस्थान)
फोन : ४८९९७

सम्पादकीय सम्पर्क सूत्र :
सी-२३५ ए, दयानन्द मार्ग, तिलक नगर
जयपुर—३०२००४ (राजस्थान)
फोन : ४७४४४

भारत सरकार द्वारा प्रदत्त
रजिस्ट्रेशन नं० ३६५३/५७

स्तम्भ सदस्यता : १००१ रु०
संरक्षक सदस्यता : ५०१ रु०
आजीवन सदस्यता : देश में २५१ रु०
आजीवन सदस्यता : विदेश में ७५१ रु०
त्रिवर्षीय सदस्यता : ५५ रु०
वार्षिक सदस्यता : २० रु०

मुद्रक :
फ्रैण्ड्स प्रिण्टर्स एण्ड स्टेशनर्स
जयपुर—३०२००३

नोट : यह आवश्यक नहीं कि लेखकों के विचारों से सम्पादक या मण्डल की सहमति हो ।

अपनी बात :

महावीर और हम ?

□ डॉ. नरेन्द्र भानावत

श्रमण भगवान् महावीर भौतिक रूप में आज हमारे सामने नहीं हैं, पर हम उनकी आध्यात्मिक विरासत लिये जी रहे हैं। जब-जब महावीर-जयन्ती आती है, तब-तब हमें चिन्तन के लिए यह अवसर मिलता है कि हम उस विरासत को किस रूप में सुरक्षित रखे हुए हैं और उससे स्व-पर कल्याण का कितना हित-साधन किया है ?

महावीर राज-परिवार और राज-सत्ता से जुड़े हुए थे। पर उन्होंने अपने दुर्लभ मानव-जीवन की सार्थकता उसका भोग भोगने में नहीं समझी और उसका सहज परित्याग कर वे आत्म-चेतना के परम सुख की प्राप्ति के लिए साधना के पथ पर अग्रसर हुए। उन्होंने सम्पत्ति को नहीं, सन्मति को सर्वोपरि समझा, सत्ता को नहीं, सेवा को मुख्यता दी। पर यह कैसी विडम्बना है कि हम उनके उपदेशों पर पारम्परिक रूप से चलकर भी सम्पत्ति और सत्ता के सुख को छोड़ना नहीं चाहते, उसे सन्मति और सेवा में परिणत नहीं करना चाहते वरन् चाहते हैं सम्पत्ति और सत्ता-सुख उत्तरोत्तर बढ़ता रहे। आज तो इसी के लिए जीवन और समाज के हर क्षेत्र में आपाधापी है, कण्ठछेदी प्रतिस्पर्द्धा और प्राणान्तक संघर्ष है।

जरा, शान्त होकर विचार करें और गहरे पैठ कर सोचें कि महावीर जब हमारे समक्ष प्रत्यक्ष में, मूर्त्त रूप में नहीं हैं तो हमारे और उनके बीच का संबंध किस बूते पर है ? ढाई हजार वर्ष की सुदीर्घ अवधि किन आधारों पर हमें उनसे जोड़े हुए है ? कहने को तो हम कहते हैं कि महावीर की पट्ट-परम्परा और आचार्य-परम्परा, उनकी वाणी का ग्रन्थ-परम्परा के रूप में निहित संदेश और चतुर्विध-संघ का अविच्छिन्न चलता आया रूप; हमें महावीर से जोड़े हुए है। हम उनके उपासक हैं, अनुयायी हैं।

विचारणीय प्रश्न यह है कि हम महावीर से अपने आपको पारम्परिक रूप में ही, सामाजिक दाय और धर्म-व्यवस्था के रूप में ही जोड़े हुए हैं अथवा अहिंसा, संयम और तप रूप उनकी संयम-साधना से अपना जीवन-व्यवहार और

आचार-विचार भीतरी स्तर तक जोड़े हुए हैं? मुझे लगता है कि महावीर के साथ, उनकी चेतना के साथ, उनकी देशना के साथ हमारा संबंध मुख्यतया ऊपरी स्तर का है, रेल या बस में यात्रा करने वाले सहयात्री का सा है, पड़ौस में रहने वाले आत्मीयजन या चिर-परिचित साथी का नहीं। चेतना के स्तर पर यह संबंध तभी जुड़ पाता है, जब विषय, कषाय, प्रमाद, मिथ्यात्व और अविरति का अवरोध नष्ट हो। विगत ढाई हजार वर्षों में यह अवरोध पूर्वापेक्षा अधिक जटिल, सघन और प्रगाढ़ बना है। भौतिक जगत् के क्षेत्र में जिस नये तकनीकी विज्ञान का आविष्कार हुआ है, उसने विषय-सेवन के क्षेत्रों का अधिकाधिक विस्तार कर शब्द, रूप, रस, गन्ध और स्पर्श के सुख-भोग के लिए इन्द्रियों को अधिकाधिक बहिर्मुखी बनाया है। मन अधिक चंचल बना है और परिधि को नापने की दिशा में ही वह अपनी शक्ति को क्षीण करने में लगा है। इसमें सहायक बने हैं—क्रोध, मान, माया, लोभ रूप कषाय।

महावीर की चेतना इन्द्रियों को अन्तर्मुखी बनाने की चेतना है। इसमें क्रोध आग की तरह जलता नहीं, वह क्षमा का जल पीकर शान्त हो जाता है, प्रेम में बदल जाता है। मान पत्थर के स्तम्भ की तरह कठोर बना नहीं रहता, वह विनय का संग पाकर, कोमल बनकर बहने लगता है, पिघलने लगता है। माया बांस की कठिन जड़ का टेढ़ापन लिये नहीं रहती वरन् सरलता का आश्रय पाकर सब के साथ आत्मीय संबंध जोड़ लेती है, अपनापन स्थापित कर लेती है। लोभ किरमची रंग का स्थायित्व ग्रहण नहीं करता वरन् सन्तोष की संगत पाकर हल्दी के रंग की तरह सहज छूट जाता है, अपने 'स्व' का 'सर्व' में विलय कर देता है।

जब कषाय इतने पतले पड़ जाते हैं, तब प्रमाद रहता ही नहीं, विषम परिस्थितियों में भी जागरूकता, सजगता बनी रहती है, भोग का सुख छूट जाता है, मन, वचन और काया का संयम सधता चलता है, आन्तरिक वीरत्व जाग उठता है, न अनुकूल परिस्थितियों में राग होता है न प्रतिकूल परिस्थितियों में द्वेष। प्रत्येक जीव, भूत, सत्व और प्राणी के प्रति अनन्त मैत्री, गुणीजनों के प्रति अनन्त प्रमोद भाव, विषम और विपरीत परिस्थितियों में भी अनासक्ति और दुःखियों, पीड़ितों के प्रति अनन्त करुणा, प्रेम और सहानुभूति। यही सच्ची महावीरता है और इसका धारक महावीर।

पर हमारी दिक्कत यह है कि हम महावीर के अनुयायी होकर भी महावीर की वास्तविक चेतना से अपने को अनुभूति के स्तर पर जोड़ नहीं पाते। क्रोध के प्रति हमारा क्रोध अधिक उग्र, मान के प्रति हमारा मान अधिक कठोर, माया के प्रति हमारी माया अधिक छद्मवेषी और लोभ के प्रति हमारा

लोभ अधिक प्रभाव व्यापी बनता जाता है। आवश्यकता इस बात की है कि हम विषय-कषायों पर नियंत्रण करें, प्रमाद से ऊपर उठें, 'इन्द्रिय-भोग में सुख है' इस मिथ्या मान्यता को छोड़ें और संयमनिष्ठ बनें।

यह सब तब संभव है, जब हम परिधि से केन्द्र की ओर लौटें, अपने व्यक्तित्व को निज-ज्ञान से जोड़ें। महावीर परिधि से केन्द्र की ओर आये थे, केन्द्र को मजबूत बनाया था, बिखरी हुई मन, वचन और कर्म की शक्तियों को केन्द्रित किया था। उससे जो ऊर्जा प्राप्त हुई, उसी के बल पर विविधता में एकता के दर्शन किये। हमारी स्थिति यह है कि हम केन्द्र की ओर आना तो दूर रहा, केन्द्र को पहचान भी नहीं पा रहे हैं। इसीलिए जीवन-यात्रा में भटकाव है, थकान है, विषाद है, बिखराव है। जब तक यात्रा से उल्लास नहीं फूटता, जीवन में भराव नहीं आता, मधुर मुस्कान का आलोक नहीं फूटता, व्यक्तित्व की समग्रता का रस छलक पाता नहीं।

महावीर ने निज के व्यक्तित्व को बुनने के साथ लोक-कल्याण का लक्ष्य रखा, सामूहिक चैतन्य को स्फुरित किया। हम निज व्यक्तित्व को बुने बिना सामूहिक हित की बात करते हैं। पर कहीं न कहीं उस हित में क्षुद्र स्वार्थ, अहम्, एषणा और सुख-भोग छिपा रहता है। परिणामस्वरूप हमारे धार्मिक अनुष्ठान, पूजा-पाठ, जप-तप, सामायिक-स्वाध्याय मन के महावीर को जाग्रत नहीं कर पाते, उसे सबल और पुष्ट नहीं बना पाते। कभी-कभी तो ऐसा लगता है कि हम धार्मिक आयोजनों, तथाकथित प्रतिष्ठा-महोत्सवों, जन्म-जयन्तियों, पुण्य-तिथियों के नाम पर सामुदायिक महल-मंदिर का शिखर तो ऊँचा उठाते हैं, पर अपने निज व्यक्तित्व में बौने होते चलते हैं, आध्यात्मिक विरासत की नींव के पत्थर को मजबूत बनाने की बजाय उसे अस्थिर, शिथिल और विचलित किये चलते हैं। जब तक हमारे आचार-विचार, कथनी-करनी में यह द्वैत रहेगा, हम महावीर नहीं बन पायेंगे, भले ही महावीर को अपना कहते रहें। आवश्यकता है स्वयं महावीर बनने की। □

आवश्यक सूचना

सभी महानुभावों से निवेदन है कि जिनके पास "सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल" व "जिनवाणी" की रसीद बुकें हैं वे अपना हिसाब दिनांक ३१ मार्च, १९८९ तक का कार्यालय में पहुँचा देवें ताकि १९८८-८९ में जमा खर्च हो सके। इसे आवश्यक समझें। इसके साथ ही शेष रसीद बुक्स का विवरण भी भिजवाने की कृपा करावें। विदित हो कि ३१ मार्च, १९८९ को मण्डल का वित्तीय वर्ष समाप्त हो रहा है।

मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर

ज्ञानामृत—८

सदाचरण ही धर्म है

□ डॉ. प्रेमचन्द रांवका

सत् या सम्यक् आचरण ही धर्म कहलाता है। धर्म और कर्तव्य, व्यवहार में एक दूसरे के पर्यायी हैं। तुलसीदास ने दया को धर्म का मूल बताया है। **"अहिंसा परमो धर्मः"** भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र है। व्यक्ति के जिस व्यवहार से व्यक्तिगत एवं सामाजिक स्तर पर संतुलन-समता-सुख-शान्ति बनी रहे, वही सम्यक् आचरण या धर्म है। इसीलिये **"आचारः प्रथमो धर्मः"** कहकर हमारे ऋषि-मुनियों ने सदाचरण को ही धर्म माना है। कहा है—

"आचारलक्षणो धर्मः, संतश्च चारित्र लक्षणाः।
साधूनां च यथावृत्तम्, एतद् आचार लक्षणम्॥"

अर्थात् आचरण ही धर्म का लक्षण है। चारित्रयुक्त ही संत है। संत-पुरुषों का व्यवहार ही उनके चारित्र की पहचान है।

"सर्वलक्षण हीनोऽपि यः, सदाचारवान्तरः।
श्रद्धानोऽनसूयश्च, शतंवर्षाणि जीवति॥"

अर्थात् अन्य लक्षणों से हीन भी जो मानव सदाचारवान् है, श्रद्धालु है, किसी से ईर्ष्या-द्वेष नहीं करता, वह सौ वर्ष जीता है।

सदाचरण और धर्म में कोई भेद नहीं है। सदाचार से जीवन भौतिकता से हटकर आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर होता है। सदाचरण स्वयं धर्म है। सामाजिक सुख-शान्ति का आधार आचारवान् मनुष्यों की बहुलता है। मन-वचन-कर्म की एकता-समानता ही सदाचरण का लक्षण है। धर्माचरण की विशद व्याख्या करने वाले महाभारतकार वेदव्यास ने जिज्ञासुओं को निम्न श्लोक में धर्म का सारभूत तत्त्व बताया है—

"श्रूयतां धर्म सर्वस्वं, श्रुत्वा चाप्यवधार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि, परेषां न समाचरेत्॥"

धर्म का यह सर्वस्व सुनकर अपने जीवन में उतारो कि अपने को प्रतिकूल लगने वाला आचरण दूसरों के साथ भी नहीं करना चाहिये। यही सदाचरण है और यही धर्म है।

—१६१०, खेजड़े का रास्ता, जयपुर—१ (राज.)
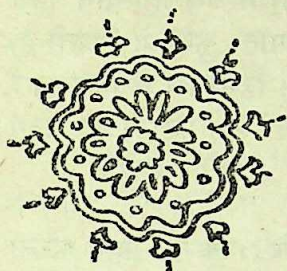
जिनवाणी - ज्ञानगंगा•

□ आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा.

वीर – हिमाचल से निकसी,
गुरु गौतम के श्रुत-कुण्ड ढरी है ।
मोह-महाचल भेद चली,
जग की जड़ता सब दूर करी है ।
ज्ञान-पयोदधि माहिं रली,
बहु भंग-तरंगन ते उछरी है ।
ता शुचि शारद गंग नदी,
प्रणमी अंचली निज शीश धरी है ।।

यह स्तुति भगवती वीरवाणी (जिनवाणी) अर्थात् ज्ञान-गंगा की की गई है। भौतिक गंगा से तन शुद्धि होती है जबकि ज्ञान-गंगा से मन-शुद्धि और आत्मशुद्धि भी होती है ।

सब जलों में गंगाजल की विशेष महिमा है। गंगा का स्रोत कुछ ऐसी विशेष स्थितियों से गुजर कर आता है कि गंगाजल में कीटाणु उत्पन्न नहीं होते । छोटी-बड़ी नालियों का पानी जो स्वयं गंदला होता है, दूसरों को क्या शुद्ध करेगा ?

इसी प्रकार जो ज्ञान स्वयं सदोष हो वह दूसरों को क्या पवित्र करेगा ? हां, जो ज्ञानधारा दोष रहित हो, वही जगत् का कल्याण करने वाली होती है । अर्थशास्त्र, कोकशास्त्र, कामशास्त्र या राजनीतिशास्त्र आदि उपयोगी होते हुए भी श्रोताओं के मन को निर्मल करने में समर्थ नहीं हैं ।

वाणी की निर्मलता वक्ता पर निर्भर है । वक्ता का मन यदि निर्मल हुआ तो उसकी वाणी भी निर्मल होगी । इसलिए कहा–वीरवाणी अर्थात् ज्ञान-गंगा का उद्भव कहां से हुआ ?

•आचार्य श्री के प्रवचन से संकलित ।

सुरगंगा का उद्भवस्थल हिमालय है। जैन शास्त्रों में चूल हिमवान पर्वत के पद्मद्रह नामक स्थान से निकलकर गंगानदी गंगा प्रपात कुण्ड में गिरती है, ऐसा वर्णन आता है। इसी प्रकार ज्ञानगंगा महावीर रूपी हिमाचल से निकलकर गुरु गौतम के श्रुत (कर्ण) कुण्ड में गिरती है। गंगा ने बड़े-बड़े पहाड़ों का भेदन किया, इसी प्रकार ज्ञानगंगा ने मोह रूपी महान् पर्वत का भेदन किया है।

मोह, साधना के मार्ग में बहुत बड़ा रोड़ा है। इसके धक्के को सहन करना शूरवीरों का ही काम है। कहा है—

एक कनक अरु कामिनी, ये दोनों तलवार।
निकले थे हरि भजन को, लिया बीच में मार ।।

किन्तु ज्ञान-गंगा में अवगाहन कर लेने वाले को मोह नहीं सता सकता। पशु-पक्षियों में मोह-माया कम दिखाई देती है। ऊपरी तौर से उनकी जीवन-पद्धति में ऐसा दिखाई देता है किन्तु हृदय से उनका मोह कम नहीं होता। यही कारण है कि जब कभी उन पर या उनके साथियों पर वार होता है तो वे जान की बाजी लगा देते हैं।

रोष की मात्रा भी उनमें अधिक है। दूसरे प्राणी को आता देख चिड़ियां चहचहा उठती हैं। आपस में लड़ते-लड़ते तो वे बेहोश हो जाती हैं। क्या लेना है उनको? घोंसला बदला जाने वाला है, टिकाऊ नही है फिर भी मजाल है कि दूसरा कोई घोंसले के पास आ भी जाय। चील झपट्टा लगाती है, तो कौवे कांव-कांव मचा देते हैं। बिल्ली हमला करती दिखाई देती है तो चिड़ियां शोर मचा देती हैं। ये सब बातें मोह व्यक्त करती हैं। कविवर मानतुंगाचार्य ने अभिव्यक्त किया है:—

प्रीत्यात्मवीर्यमविचार्य मृगीमृगेन्द्रं।
नाभ्येति किं निजशीशोः परिपालनार्थं।

हरिणी प्रीति के वश से अपने पराक्रम को बिना सोचे ही बच्चे की रक्षा के निमित्त क्या सिंह के सन्मुख सामना करने के लिए नहीं दौड़ पड़ती?

मोह अन्तःकरण में आता है, वह ज्ञानगंगा में अवगाहन किये बिना शान्त नहीं होता। याद रखिये पत्नी, भाई-बन्धु, मित्र और अन्य सम्बन्धी धोखा दे सकते हैं किन्तु सुमति-सखी कभी भी धोखा नहीं देती है। गंगा तन में स्फूर्ति लाती है इसी प्रकार ज्ञान-गंगा भी मन और बुद्धि की जड़ता को दूर कर देती है। मन जब तक जड़ बना रहता है उसमें प्रवृत्ति नहीं होती।

हम उपदेश देते हैं, "व्रत ग्रहण करो, संसार के प्रपंच को घटाओ, अमुक काम करो।" आप कह देते हैं, "कल करेंगे या अमुक काम हो जाय फिर करेंगे" ये सब जड़ता के ही चिह्न हैं।

भृगु पुरोहित अज्ञानता के कारण मोह में फँसा हुआ है। उसके बच्चे आत्मज्ञान पाकर आगे बढ़ते हैं। उस समय भृगु पुरोहित बच्चों को कहता है—"बेटा, अभी मुनि बनने का समय कहां है? पुत्र हो जाय और स्वयं भुक्त भोगी बन जाओ तब साधना करना।"

पुत्र बोले—"पिताजी! कल की बात क्यों सोचते हो? कल किसने देखा है?" कल की बात सोचने के लिए तीन बातें चाहिए :—

(१) यदि किसी को मृत्यु से मित्रता हो।
(२) मृत्यु से भागा जा सकता हो।
(३) यदि यह जानता हो कि मैं कभी नहीं मरूँगा।

अपने पास तीनों में से एक भी नहीं, फिर आगे करने को कैसे कह सकते हैं? स्मरण रखिए, जिसका आदि है उसका अन्त भी है। जो जन्म लेता है, वह मरता भी है। इसलिए जो कुछ करना है उसे आज और अभी कर लेना चाहिए।

ज्ञान ही मानव का संरक्षण करता है और संसार-सागर में भटकने से उसे बचाता है। भरत और बाहुबलि युद्ध के कगारे पर खड़े थे, कोई किसी से कम उतरने वाला नहीं था। ९८ भाइयों ने भगवान ऋषभदेव के पास पहले ही दीक्षा ले ली थी। अब बाहुबलि और भरत रह थे। बाहुबलि को आदिनाथ ने तक्षशिला का राज्य दे रक्खा था। जब भरत ने पृथ्वी के ६ खण्ड जीत लिए तब अपने भाई बाहुबलि के पास दूत भेजा और कहलाया कि—"मैं छः खण्ड का स्वामी हो गया हूं अतः तुम्हें भी मेरी अधीनता स्वीकार करनी चाहिए।"

संसार में परिग्रह ही झगड़े का कारण है। धन-संपदा के कारण धर्म-स्थान, मन्दिर और आश्रम भी कर्मस्थान बन जाते हैं। मारपीट और अदालती कार्यवाही तक का अवसर आ जाता है। यही कारण है कि समझदार धर्मस्थान में जमा रकम खर्च से अधिक नहीं रखते। लाला गोकुलचन्दजी देहली के बारादरी जैन भवन पर देना बाकी रखते और साथियों को ट्रस्ट संभालने को सदा कहते रहते पर कर्जदारी में कौन संभाले? चार्ज लेने वाले को कर्ज चुकाना पड़ता। उनका अनुभव था कि सार्वजनिक संस्थाओं में पूँजी नहीं होनी चाहिए,

ग्रौर तो क्या, पर बाप-दादे भी कोई ट्रस्ट कायम कर जायें तो उस पर भी मोह हो जाना सम्भव है ।

साधना में शान्ति चाहिए ग्रौर वह परिग्रह का जोर बढ़ने पर कठिन है । कार्यकर्ताग्रों को खासकर काम का लक्ष्य चाहिये । काम उचित हुग्रा तो पूंजी स्वयं दौड़ती ग्रा जायेगी । ग्रच्छे कार्यकर्ता जितनी ग्राय हो उतना ही खर्च कर देते हैं—"वासी रहे न कुत्ता खाय", फिर वात्सल्य समिति हो या ग्रन्य कोई । पूंजी ग्राये तो उसको काम में ले लो । ग्रागे के लिए फिर देखना । ग्रावश्यक काम को ग्रर्थ के परिणाम में बांधना ग्रच्छा नहीं । बिना पैसे के कुर्सी का झगड़ा भी नहीं होगा ।

ग्रादिनाथ के ६८ पुत्र परिग्रह का मोह छोड़कर चल पड़े । छत्रपति से पात्रपति बन गए । कहावत है—

सूरा चढ़ संग्राम में, फिर पाछे मत जोय ।
उतर पड़े मैदान में, कर्ता करे सो होय ।।

हानि-लाभ की परवाह करने वाला चंचलचित्त मानव क्या कर सकता है ? लोक में यात्रा करते समय पीछे देखना ग्रपशकुन माना जाता है । 'कठे जाग्रो' यह पूछना भी ग्रपशकुन माना जाता है । ग्रागे बढ़ने वाला न तो पीछे देखता है ग्रौर न यह विचार ही करता है कि उसे किस मार्ग से जाना है ? ६८ भाई तो दीक्षा लेकर साधु बन गए किन्तु बाहुबलि ने भरत की ग्राज्ञा मानने से इन्कार कर दिया । नीतिकार कहते हैं—

ग्रधमा धनं मिच्छंति, धनं मानं च मध्यमा ।
उत्तमा मान मिच्छंति, मान हि महतां धनम् ।।

ग्रर्थात् निम्न श्रेणी के पुरुष धन चाहते, मध्यम श्रेणी के धन ग्रौर मान चाहते, किन्तु उत्तम श्रेणी के लोग केवल मान ही चाहते हैं । बाहुबलि उत्तम कोटि के व्यक्ति थे । वे ग्रपमानित होकर नहीं रहना चाहते थे, ग्रत: वे मुकाबले के लिए तैयार हो गए । भरत ग्रौर बाहुबलि दोनों की सेना तक्षशिला के मैदान में खड़ी हो गई । संस्कार ऊँचे थे, इसलिए विचार हुग्रा कि भूमि ही हम दोनों के लिए झगड़े का कारण है फिर भला दूसरे निरपराधियों का खून क्यों बहाया जाय ? कई बार दो व्यक्ति टकराते हैं तो समाज, जातियां या दो राष्ट्र टकरा जाते हैं, ग्रच्छा हो दोनों व्यक्ति तत्पर ही युद्ध करके फैसला कर लें ।

भरत ग्रौर बाहुबलि के बीच द्वन्द्व युद्ध का निश्चय हुग्रा । दृष्टि-युद्ध हुग्रा । बाहुयुद्ध ग्रौर दृष्टियुद्ध में दोनों बराबर रहे, ग्रब मुष्टि युद्ध से लड़ना तय हुग्रा ।

भरत ने बाहुबलि को मुष्टि मारी । बाहुबलि का भी रोष बढ़ गया । उन्होंने रोष में मुष्टि उठाई । जमीन व आसमान कांप उठे । चक्रवर्ती जमीन में घुस जायगा या चकनाचूर हो जायगा । एक आवाज हुई और बाहुबलि की आत्मा जाग उठी । सोचा—भाई भरत पिता तुल्य हैं, उन पर वार करना भारतीय संस्कृति का नाश करना है । मेरे हाथ से संस्कृति को धब्बा लगे यह ठीक नहीं । तक्षशिला का राज्य तो चला जायगा पर उसपर लगा हुआ कलंक अमिट हो जायगा । हत्या क्यों करूं ? बाहुबलि रुक जाते हैं और सोचते हैं :—

"वरं में अप्पा दंतो, संजमेण तवेण य ।"

संयम और तप द्वारा अपनी आत्मा का दमन करना ही श्रेष्ठ है । बाहुबलि ने अपनी मुट्ठी सिर के बालों पर चलाई और बाल नोच डाले । सिर के बालों के साथ वासना का भी मुण्डन कर लिया । सिर मुण्डन के साथ उन्होंने इन्द्रिय और कषायों का भी मुण्डन कर लिया । यह है करोड़ों वर्ष पूर्व का उदाहरण । एक उदाहरण जरा इधर का भी देखिए :—

शिक्षा दे रही जी हमको, रामायण अति भारी ।
राजतिलक की गेंद बनाकर, खेलन लगे खिलारी ।।
एक तरफ राम एक तरफ भरत दोनों ने ठोकर मारी ।

संसार के इतिहास में है कहीं ऐसा उदाहरण ! रामायण बतला रही है कि परिग्रह को गेंद बनाकर खेलो । गेंद को पकड़ कर बैठ जाने से खेल नहीं बनता । महाराजा दशरथ ने घोषणा की कि कल राम को राजतिलक होगा । उत्तराधिकारी ज्येष्ठ पुत्र राम होता है, किन्तु मन्थरा को अपना महत्त्व कम होते दिखाई दिया । वह राजमाता की दासी बनकर रहने में अपना गौरव समझती थी । उसने कैकेयी को अपना शस्त्र बनाया और कहा—"तुम राजमाता नहीं बनोगी तो दासी बनकर रहना पड़ेगा । कौशल्या तुम पर राज करेगी ।" स्त्रियों का सौतिया डाह प्रसिद्ध है । तिलमिला उठी कैकेयी । उसे अपने दो वरदानों की बात याद आई और मांग बैठी दोनों वरदान दशरथ से । दशरथ वचनबद्ध होने से क्या बोलते ? वे ही तो थे राम के राजतिलक की घोषणा करने वाले । अतः कैकेयी द्वारा मांगे गये वरों को ठुकरा नहीं सके । कहा भी है :—

रघुकुल रीति सदा चली आई ।
प्राण जाय पर वचन न जाई ।।

राजा बेहोश हो गए । राम पिताजी व माताजी को प्रणाम करने आये तो पिता की स्थिति देखकर घबराये, पूछने पर माता कैकेयी ने कहा :—

"राम ! तुमको चौदह वर्ष का बनवास और भरत को राजतिलक दिया जाने को है। ये नहीं कह सकते, मैं बताती हूं।" राम बड़े प्रसन्न हुए, बोले— "भरत कौन और राम कौन ? यह तो वह सोचे जहां भेद-बुद्धि हो।" आज तो चुनाव में बाप-बेटे लड़ पड़ते हैं, किन्तु ज्ञान-गंगा में नहाने वालों की भेदबुद्धि नष्ट हो जाती है। वहां मोह और वासना का नाम ही नहीं रहता। राम विदा हो गए, पीछे भरत आये तो कैकेयी बड़ी प्रसन्न होकर भरत को राजतिलक और राम के बनवास का संदेश सुनाने लगी। भरत विह्वल होकर बोले :—

"मां, तू मेरी मां नहीं, दुश्मन है, अच्छा होता यदि तू मेरा जन्म होते ही गला घोंट देती।" भरत राम के पास जाते हैं, राज्य लौटाने की प्रार्थना करते हैं और राम भरत को राज्य करने का आग्रह करते हैं। प्रदान में जो आनन्द है वह आनन्द आदान में कहां ? दोनों में प्रेम की लड़ाई होती रही। राज्य न भरत ने लिया न राम ने। समस्या का हल निकल गया। राम की पादुका सिंहासन पर स्थापित की जाय और भरत प्रतिनिधि के रूप में निर्लेप भाव से शासन का संचालन करते रहें। दु:शासन और दुर्योधन आदि देश की बरबादी का इतिहास बताते हैं। जबकि राम और भरत का इतिहास हमारे स्वर्णयुग की याद दिलाता है।

यदि हम ज्ञान-गंगा का आदर करना सीख जायँ तो हमारा पारस्परिक स्नेह बढ़ जायगा। हमारा जीवन त्यागमय होगा। जो इस प्रकार जिनवाणी का अवगाहन करेंगे, उनके लिए यह लोक और परलोक दोनों आनन्दप्रद और कल्याणकारी होंगे। • • •

पत्रांश

चरित्र-निर्माण की दिशा में सार्थक प्रयास

भाई राजीवजी भानावत द्वारा सम्पादित एवं परीक्षित स्तम्भ 'बालकथामृत' वस्तुतः प्रशंसनीय है। यह तथ्य शाश्वत सत्य है कि बाल्यकाल में निर्मित संस्कार जीवन पर्यन्त मनुष्य के साथ रहते हैं। यह स्तम्भ बालकों के चरित्र निर्माण की दिशा में एक सार्थक भूमिका का निर्वाह कर रहा है। अपने क्षेत्र के बच्चों में इस स्तम्भ का व्यापक प्रचार-प्रसार करने के लिए मैं प्रयासरत हूँ। मेरी हार्दिक इच्छा है कि समाज का प्रबुद्ध-वर्ग अपना कुछ समय देकर इस उपयोगी स्तम्भ के लिए बच्चों के बीच व्यापक प्रचार-प्रसार हेतु प्रयास करें।

मंगल कामना सहित............

माणकचन्द
अध्यक्ष, वर्धमान स्थानकवासी जैन संघ
पचपहाड़ (झालावाड़) राजस्थान

धारावाही लेखमाला [३]
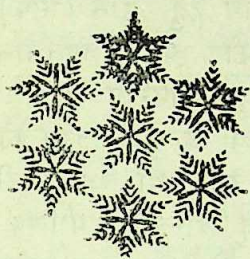
जैन संस्कृति में नारी का स्थान

□ श्री रमेश मुनि शास्त्री
[उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी के विद्वान् शिष्य]

कला वस्तुतः कामधेनु है, और वह चिन्तामणि रत्न है। कला ही आत्म-कल्याण करने में सक्षम है। ऐसा चिन्तन कर सम्राट् श्री ऋषभदेव ने अपने ज्येष्ठ पुत्र भरत को बहत्तर कलाओं का[1] और कनिष्ठ पुत्र बाहुबली को प्राणी-लक्षणों का बोध कराया।[2] कला जन-जीवन को परिष्कृत करती है, बुद्धि को परिमार्जित करती है और मानव को अच्छा और सच्चा बनने के लिये उत्प्रेरित करती है।

आगम साहित्य में जिन बहत्तर कलाओं का वर्णन हुआ है, उनमें 'औपपातिक' सूत्र में उन्नीसवीं कला 'गन्ध युक्ति' और तीसवीं कला का नाम 'चूर्णयुक्त' तथा छप्पनवीं कला 'दृष्टियुद्ध' नहीं है। शेष समस्त कलाएँ 'ज्ञातासूत्र' के अनुसार ही दी गई हैं। 'राजप्रश्नीय' सूत्र में उनतीसवीं कला का नाम 'चूर्ण युक्ति' नहीं है और अड़तीसवीं कला का नाम 'चक्रलक्षण' है तथा छप्पनवीं कला 'दृष्टियुद्ध' के स्थान पर 'यष्टि युद्ध' कला का उल्लेख मिलता है। शेष सभी कलाएँ 'ज्ञाता सूत्र' के अनुसार ही वर्णित की गई हैं।

ऋषभदेव ने भरत आदि पुत्रों के समान ही स्त्री-शिक्षा की अनिवार्यता को संलक्ष्य में रखकर अपनी दोनों पुत्रियों को दीक्षित किया। पुत्री ब्राह्मी को दक्षिण

१—(क) ज्ञाताधर्मकथांग सूत्र अध्ययन—१ सूत्र—१८
(ख) समवायांगसूत्र समवाय—७२। (ग) औपपातिक सूत्र—४० पत्र १८५
(घ) राजप्रश्नीय सूत्र पत्र ३४०।

२—(क) आवश्यक चूर्णि पृ० १५६, जिनदास।
(ख) आवश्यक निर्युक्ति २१३
(ग) त्रिषष्टिशलाका पुरुष चरित १/२/९६०—९६२।
(घ) कल्पसूत्र सुबोधिनी टीका ४९६, साराभाई।

हस्त से अठारह लिपियों का सम्यक् रूप से अध्ययन कराया[1] और पुत्री सुन्दरी को वाम-हस्त से गणित-विद्या का परिबोध कराया।[2] इसी सन्दर्भ में ऐसा भी उल्लेख जैन-वाङ्मय में प्राप्त होता है कि व्यवहार-साधन हेतु मान (माप) उन्मान (तोला, माशा आदि वजन) अवमान (गज, फीट आदि) प्रतिमान (छटांक, सेर) आदि कला से भी अवगत कराया।[3] मणि आदि पिरोने की कला का भी परिबोध कराया।[4] ब्राह्मी और सुन्दरी ये कन्याद्वय प्रत्युग्र-प्रतिभा की साकार प्रतिमा थीं। ब्राह्मी जहाँ अक्षर ज्ञान आदि में पारंगत थी, वहाँ दूसरी ओर सुन्दरी गणित-विद्या में पारंगत थी। श्री ऋषभदेव वास्तव में मौलिक-चिन्तन के अत्यन्त अभ्यस्त थे। वे अति सूक्ष्म दृष्टि से विषयों का सर्वांगीण अध्ययन करने और तलस्पर्शी निष्कर्ष की भूमिका तक पहुँचाने की अद्भुत क्षमता रखते थे। भगवती ब्राह्मी प्राप्त-कला और ज्ञान-प्रसारण में किञ्चित् मात्र भी कृपणता नहीं बरतती थी। भगवान ऋषभदेव का यह गम्भीर अध्ययन प्रमाण परिपुष्ट था और उन्होंने ब्राह्मी को इस कसौटी पर सर्वथा रूप से खरा पाया था। अतएव तत्कालीन मानव-समुदाय को कला और ज्ञान से परिसम्पन्न बनाकर एक नव्य-संस्कृति और सभ्य-समाज की संस्थापना का जो उच्च लक्ष्य निर्धारित-निर्णित किया गया था, उस महनीय-अभियान में अपनी प्रिय पुत्री ब्राह्मी को सक्रिय करने का उन्होंने दृढ़ निश्चय किया।

१—(क) आवश्यक चूर्णि १५६। (ख) विशेषावश्यक भाष्यवृत्ति १३२।
(ग) त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित—१/२/९६३।
(घ) लेहं लिवीविहाणं जिणेण बंभीए दाहिण करेणं।
आवश्यक निर्युक्ति—२१२
(ङ) आवश्यक हारिभद्रीयावृत्ति भाष्य—६/१३२।

२—(क) दर्शयामास सव्येन सुन्दर्या गणितं पुनः।
त्रिषष्टिशलाका पुरुषचरित १/२/९६३।
(ख) गणियं संखाणं सुन्दरीए वामेण उवइट्ठं।
आवश्यक निर्युक्ति—२१२
(ग) महापुराण १६/१०४/३५५।
(घ) विशेषावश्यक भाष्यवृत्ति—१३२।
(ङ) आवश्यक चूर्णि पृष्ठ—१५६।

३—माणुम्माणवमाणपमाणगणिमाइ वत्थूणं।
आवश्यक निर्युक्ति—२१३

४—आवश्यक सूत्र हारिभद्रीया वृत्ति मूल भाष्य—११/१३२।

यह ध्रुव सत्य है कि भगवती ब्राह्मी में अद्भुत अलौकिक ग्राह्यता थी। उसे कला और ज्ञान के प्रति जितनी अभिरुचि सीखने की थी, उसे उतनी सर्व-जनहिताय दृष्टिकोण के साथ प्रचारित-प्रसारित करने की भी थी। ब्राह्मी ने अपने हाथ से वर्णमाला के प्रथम वर्ण को आकार प्रदान किया था। इसी कारण हमारी लिपि 'ब्राह्मी-लिपि' कहलाती है। इस लिपि का आविष्कार ऋषभदेव की पुत्री ब्राह्मी के द्वारा ही हुआ है। जैन-साहित्य में स्पष्टत: उल्लेख प्राप्त होता है कि ऋषभदेव ने अपनी प्रिय पुत्री ब्राह्मी को दाहिने हस्त से इस लिपि की शिक्षा प्रदान की[1], अतएव वह 'ब्राह्मी लिपि' के नाम से विश्रुत हुई और इसे अत्यन्त ही आदर के साथ नमस्कार किया गया है।[2] इस लिपि में छयालीस मूल अक्षर अर्थात् मातृकाक्षर माने गये हैं।[3] 'भगवती सूत्र' के प्रारम्भ में 'ब्राह्मी' लिपि को भी नमन करने का उल्लेख है। प्रस्तुत उल्लेख नि:संदेह उसकी प्राचीनता का द्योतक है। जैन आगम साहित्य में जहाँ लिपियों के विषय में विस्तार से उल्लेख मिलता है, वहाँ पहला नाम—ब्राह्मी लिपि का है।[4] कुछ आचार्य ब्राह्मी को लिपि विशेष न मानकर अठारह लिपियों के लिये प्रयुक्त होने वाला सामान्य नाम मानते हैं।[5] इसी सन्दर्भ में ऐसा भी उल्लेख प्राप्त है कि भगवान ऋषभदेव के समय आजीविका के मुख्य छह साधन थे। वे ये हैं—(१) असि—सैनिक वृत्ति; (२) मषि—लिपि विद्या; (३) कृषि—खेती का कार्य; (४) विद्या—अध्यापन, शास्त्रोपदेश-कार्य; (५) वाणिज्य—व्यापार-व्यवसाय; (६) शिल्प-कला-कौशल।[6] इन आजीविका के साधनों में लिपि और कला का उल्लेख है।

१—लेहं लिबी विहाणं, जिणेणं बंभीए दाहिण करेण।

—अभिधान राजेन्द्र कोष, पंचम भाग पृ. १२८४

२—णमो बंभीए लिवीए।

—भगवती सूत्र

३—बंभीएणं लिवीए छायालीसं माउयक्खरा।

—समवायांग सूत्र ४६

४—(क) समवायांग सूत्र समवाय १८।
(ख) प्रज्ञापना सूत्र पद १ सूत्र ३७।

५—अतो ब्राह्मीति स्वरूप विशेषणं लिपेरिति।

—आचार्य अभयदेव

६—असिर्मषि: कृषिर्विद्या वाणिज्यं शिल्पमेव च।
कर्माणीमानि षोढा स्यु: प्रजाजीवन हेतवे।।

—आदिपुराण १६/१७९

यहाँ पर अष्टादश लिपियों के नाम[1] और महिलाओं की चौंसठ कलाएँ[2] प्रतिपादित हैं। जिससे प्रतिपाद्य-विषय और भी स्पष्ट हो जाता है।

अष्टादश लिपियों के नाम इस प्रकार हैं :—

(१) ब्राह्मी
(२) यावनी
(३) दोसापुरिया
(४) खरोष्टी
(५) पुक्खरासारिया
(६) भोगवइया
(७) पहराइया
(८) अक्खरपुट्ठिया
(९) अन्तक्खरिया
(१०) वैनयिकी
(११) अंकलिपि
(१२) निह्नविकी
(१३) गणित लिपि
(१४) गन्धर्वलिपि
(१५) आयंसलिपि
(१६) माहेश्वरी
(१७) दोमिलीलिपि
(१८) पोलिन्दी

महिलाओं की चौंसठ कलाएँ इस प्रकार प्रतिपादित हैं :—

(१) नृत्य
(२) औचित्य
(३) चित्र
(४) वादित्र
(५) मन्त्र
(६) तन्त्र
(७) ज्ञान
(८) विज्ञान
(९) दम्भ
(१०) जलस्तम्भ
(११) गीतमान
(१२) तालमान
(१३) मेघवृष्टि
(१४) फलाकृष्टि
(१५) आरामरोपण
(१६) आकारगोपन
(१७) धर्म विचार
(१८) शकुन विचार
(१९) क्रियाकल्प
(२०) संस्कृतजल्प
(२१) प्रासाद नीति
(२२) धर्म नीति
(२३) वर्णिकावृद्धि
(२४) सुवर्ण सिद्धि
(२५) सुरभि तैलकरण
(२६) लीला संचरण
(२७) हयगज परीक्षण
(२८) पुरुष-स्त्री लक्षण
(२९) हेमरत्न भेद
(३०) अष्टादशलिपि परिच्छेद
(३१) तत्काल बुद्धि
(३२) वस्तु सिद्धि

१—प्रज्ञापना सूत्र पद-प्रथम सूत्र ३७।

२—जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति वृत्ति, वक्षस्कार २, पत्र १३९-२, १४०-१।

(३३) देश भाषा विज्ञान
(३४) वैद्यक क्रिया
(३५) कुम्भभ्रम
(३६) सारिश्रम
(३७) अंजनयोग
(३८) चूर्णयोग
(३९) हस्तलाघव
(४०) वचनपाटव
(४१) भोज्यविधि
(४२) वाणिज्यविधि
(४३) मुख मण्डन
(४४) शालिखण्डन
(४५) कथाकथन
(४६) पुष्पग्रन्थन
(४७) वक्रोक्ति
(४८) काव्यशक्ति
(४९) स्फार विधिवेष
(५०) सर्व भाषा विशेष
(५१) अभिधान ज्ञान
(५२) भूषणपरिधान
(५३) भृत्योपचार
(५४) गृहाचार
(५५) व्याकरण
(५६) पर निराकरण
(५७) रन्धन
(५८) केश बन्धन
(५९) वीणानाद
(६०) वितण्डावाद
(६१) अंक विचार
(६२) लोक व्यवहार
(६३) अन्त्याक्षरिका
(६४) प्रश्न प्रहेलिका

श्री ऋषभदेव ने लिपि-विधान के अतिरिक्त चौंसठ कलाओं का ज्ञान ब्राह्मी को कराया था। ब्राह्मी अपनी प्रत्युग्र प्रतिभा और विशिष्ट प्रज्ञा के कारण इन समग्र-कलाओं में दक्ष हो गयी और अपार उत्साह के साथ इन के प्रचुर-प्रचार में जुट गयी। उसने महिला-वर्ग को इन सभी कलाओं से सम्पन्न कर जो अलौकिक अद्भुत उपलब्धि प्राप्त की, वह निश्चित रूप से आश्चर्य और गौरव का विषय है। कला और शिक्षा ये दोनों अपने-अपने यथार्थ स्वरूप में इस प्रकार नारी-नारी के मन-मन में पहुँच गयीं और भगवती ब्राह्मी ने नारी-समुदाय के लिये एक नवीन भूमिका निर्मित कर दी। उसने कलात्मक-अभिरुचियों के जागरण के लिये अहर्निश, अविराम और अथक प्रयास किया था। वह अपने तेजस्वी व्यक्तित्व की समग्र-गरिमा को विस्मृत कर इसी महत्त्वपूर्ण लक्ष्य की संपूर्ति में लग गयी थी।

शक्तिशाली राजवंश की राजकुमारी होकर भी अपनी इस महत्त्वपूर्ण और गौरवपूर्ण भूमिका के निर्वाह के लिये वह प्रयत्नशील रही। उसे वैभव और सुविधाओं के परित्याग करने में किञ्चित् मात्र भी परिताप नहीं हुआ। ब्राह्मी और सुन्दरी इन दोनों बहनों ने अपने जीवन के लक्ष्य को आत्म-कल्याण तक ही सीमित नहीं रखा। भगवती ब्राह्मी के साथ विरागमती सुन्दरी भी निरन्तर रूप से विचरणशील रही और जनता-जनार्दन के मानस को अज्ञानान्धकार से मुक्त किया। ज्ञान-विज्ञान की इन अमर बहनों ने जन-जन के

मन-मन को स्फटिक-मणि की भांति निर्मल और कान्तिमान कर दिया। इन भगिनीद्वय ने भव्य जीवों को आत्म-कल्याण के मंगलमय मार्ग पर आरूढ़ करने में अपनी अद्भुत भूमिका का निर्वाह किया। स्वयं का आत्म-कल्याण करना एक बात है और अन्य जनों को इस हेतु उत्प्रेरित करके सन्मार्गी बना देना अन्य बात है। साध्वीरत्न ब्राह्मी और महासती सुन्दरी ने अपने जीवन में इन दोनों तत्त्वों का समीचीन समन्वय रखा।

अन्ततः दोनों साध्वी बहनों ने तप और संयम की उत्कृष्ट आराधना कर कर्मों का आत्यन्तिक क्षय किया और वे सिद्ध, बुद्ध और मुक्त हो गयीं।

भगवान् ऋषभदेव ने दीक्षा अंगीकार करने के बाद अपने शरीर की ओर लक्ष्य देना छोड़ दिया था। शारीरिक-विद्यमानता में ही देहातीत-दशा उनकी सहज साधना बन चुकी थी, चातुर्मास के अतिरिक्त निरन्तर विचरणशील उनका जीवन था। उनका विहार-स्थल अधिकांशतः शून्य-आवास, एकान्त-शान्त नीरव-प्रदेश और गिरिकन्दराएँ रहा है। वे आत्म-चिन्तन, आत्म-मन्थन, आत्म-निरीक्षण और आत्म-आराधना करते रहे। इस प्रकार अपनी आत्मा को भावित करते-करते एक हजार वर्ष का समय व्यतीत हो गया।[1] ज्योतिर्मय साधक भगवान ऋषभदेव अयोध्या महानगरी के पुरिमताल नामक उपनगर में पधारे। वहाँ पर नन्दनवन के समान रमणीय शकटमुख उद्यान में वटवृक्ष के नीचे, अष्टम तप की आराधना करते हुए ध्यान-साधना में अवस्थित थे। फाल्गुन कृष्णा एकादशी का दिन था। पूर्वाह्न की बेला थी। ध्यान-साधना चरम सीमा पर पहुँची। आत्मा पर से घातिकर्मों का आवरण दूर हुआ। उत्तराषाढ़ा नक्षत्र के योग में भगवान ऋषभदेव को केवल-ज्ञान और केवल-दर्शन का अपूर्व-अलौकिक आलोक प्राप्त हुआ।[2] जिस समय प्रभु को केवलज्ञान और केवलदर्शन की प्राप्ति हुई, उस समय सम्राट् भरत की आयुधशाला में चक्ररत्न भी समुत्पन्न हुआ और उसकी सूचना एक साथ ही यमक व शमक दूतों के द्वारा सम्राट् भरत को मिली।[3] भरत एक साथ दो सुखद सूचनाएँ मिलने से एक क्षण असमंजस में पड़

१—कल्पसूत्र सूत्र १९३।

२—(क) समवायांग सूत्र १५७, गाथा ३३-५।
(ख) कल्पसूत्र, सूत्र १९७। (ग) जम्बूद्वीप प्रज्ञप्ति ४०-४१/८४।
(घ) आवश्यक निर्युक्ति गाथा ३३८-३४०।

३—(क) चउप्पन्न महापुरिस चरियं —आचार्य शीलांक
(ख) त्रिषष्टिशलाका पुरुषचरित १/३/५११-५१३। —आचार्य हेमचन्द्र
(ग) आवश्यक निर्युक्ति गाथा ३४२। (घ) आवश्यक चूर्णि पृष्ठ १८१।

गये ।[1] उन्होंने चिन्तन की चाँदनी में गहराई से सोचा—प्रथम चक्ररत्न की अर्चना करनी चाहिये या भगवान ऋषभदेव की पर्युपासना करनी चाहिये ? कहाँ अभयदाता केवलज्ञान और कहाँ प्राणियों का विनाशक चक्ररत्न ? मुझे प्रथम चक्ररत्न या पुत्ररत्न की नहीं, अपितु प्रभु की उपासना करनी चाहिये ।[2] क्योंकि भगवान को केवलज्ञान उत्पन्न होना धर्म का फल है ।[3] वह समस्त कल्याणों का प्रमुख स्रोत है, महान् से महान् फल देने वाला है ।[4] ऐसा विचार कर सम्राट् भरत भगवान् के दर्शन और चरण-स्पर्श हेतु सपरिजन प्रस्थित हुए ।

माता मरुदेवी भी अपने प्रिय पुत्र के दर्शन हेतु चिरकाल से छटपटा रही थी । वह प्यारे पुत्र के वियोग से व्यथित थी । उसके नेत्रों से आँसू बह रहे थे । जब उसने सुना कि ऋषभ विनीता के बाग में आया है, तो वह भरत के साथ हाथी पर आरूढ़ होकर चल पड़ी । प्रिय पुत्र की स्मृति से उसकी आँखें छलछला आईं । भरत के द्वारा तीर्थंकर की दिव्य एवं भव्य विभूति का शब्द-चित्र प्रस्तुत करने पर भी उसके हृदय को संतोष नहीं हो रहा था ।[5] भरत के अपार वैभव को देख कर उसने कहा—बेटा भरत ! एक दिन मेरा अत्यन्त प्यारा ऋषभ भी इसी प्रकार राज्य-वैभव का उपभोग करता था । पर इस समय वह क्षुधा-पिपासा की व्यथा सहन करता होगा । निर्जन वनों और गिरिकन्दराओं में कितने दुःख सहता होगा, अब वह दंश-मशक आदि की कितनी पीड़ाएँ सहन करता हुआ न मालूम कहाँ रहता होगा । उसके वन-विहार की कल्पना मात्र से महामाता के रोमाञ्च खड़े हो जाते थे ।

१—(क) महापुराण २४/२/५७३ । (ख) त्रिषष्टि शलाका १/३/५१४ ।

२—आवश्यक निर्युक्ति गाथा ३४३ ।

३—(क) तत्र धर्मफलं तीर्थम् । —महापुराण २४/६/५७३
(ख) त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित १/३/५१५ ।
—कालिकाल सर्वज्ञ आचार्य हेमचन्द्र

४—कार्येषु प्राग्विधेयं तद्धर्म्यं श्रेयोनुबन्धि तत् ।
महाफलञ्च तद्देवसेवा प्राथमकल्पिकी ।। महापुराण २४/८/५७३
—आचार्य जिनसेन

५—(क) आवश्यक निर्युक्ति, पृष्ठ १८१ ।
(ख) आवश्यक मलयगिरिवृत्ति, पृष्ठ २२९ ।
(ग) समवायांग सूत्र, समवाय ११ ।
(घ) महापुराण श्लोक ६८-७७/११/२३३-३४ ।

मरुदेवी माता ऐसा सोच-विचार कर अत्यन्त ही व्यथित हो रही थी। उसका समूचा शरीर काँप रहा था। हृदय की धड़कन बढ़ गयी थी। ऐसा उद्भासित हो रहा था मानों कि उसके ऊपर किसी ने वज्रपात ही कर दिया था। वे शनैः-शनैः समवसरण के सन्निकट पहुँची तो उसके आश्चर्य का पार न रहा—अरे! मेरे लाड़ले लाल की इतनी अधिक दिव्य-विभूति! मैं तो चिन्ता और कल्पना कर रही थी कि वह अत्यन्त ही दुःखी होगा, पर यह तो मेरी ओर पलक उठाकर भी नहीं देख रहा है। मेरी सारी की सारी कल्पनाएँ व्यर्थ थीं। यह प्रिय पुत्र तो कितना निस्पृह है, मैं इसके विषय में कल्पना भी नहीं कर पा रही। यह सब कैसे हो रहा है, और ऐसा क्यों हो रहा है? क्या इसके अन्तर्हृदय में माता के प्रति ममता नहीं है, मोह नहीं है? चिन्तन का प्रवाह बदला और विशुद्ध विचारों का प्रवाह बढ़ता ही गया। वह मरुदेवी माता आर्तध्यान से शुक्लध्यान में तन्मय हो गई। प्रशस्त ध्यान का उत्तरोत्तर उत्कर्ष बढ़ा। मोहनीय कर्म का सघन बन्धन सर्वांशतः टूटा। ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय कर्म का आत्यन्तिक क्षय कर वह केवलज्ञान और केवलदर्शन की धारिका बन गई। उसी क्षण शेष चार अघाती कर्मों को क्षीण कर हस्ती पर आरूढ़ हुई सिद्ध, बुद्ध और कर्म-मुक्त हो गई।[१] वर्तमान कालचक्र के अर्थात् अवसर्पिणी काल में भगवान ऋषभदेव के युग में सर्वप्रथम मुक्ति को प्राप्त करने वाली माता मरुदेवी नारी ही थी और सर्व प्रथम केवलज्ञान ऋषभदेव को हुआ।[२] कितने ही आचार्यों का यह भी मन्तव्य है कि तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव के शब्द माता मरुदेवी के कानों में गिरने से उन्हें आत्म-ज्ञान होता है और मुक्ति प्राप्त हुई।[३] भगवान ऋषभदेव के शासन काल में चालीस हजार श्रमणियाँ सिद्ध हुईं।[४]

[क्रमशः]

१—(क) त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित १/३/५२८-५३०।

—आचार्य हेमचन्द्र

(ख) आवश्यकचूर्णि, पृष्ठ १८१।

(ग) आवश्यक मलयगिरि वृत्ति, २२९।

२—(क) त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित १/३/५३५।

(ख) आवश्यकचूर्णि, १८१।

३—(क) त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित १/३/५३१।

(ख) अन्ने भणंति—भगवओ धम्म कहा सद्दं सुणेंतीए तक्कालं च तीए खुट्टमाउयं ततो सिद्धा।

—आवश्यक मलयगिरि वृत्ति २२९

४—कल्पसूत्र, सूत्र १९७।
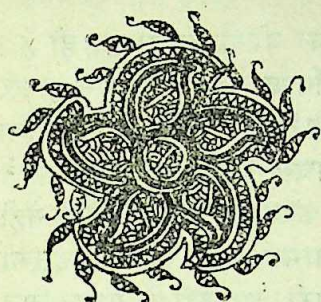
'धम्मपद' और 'उत्तराध्ययन सूत्र' का तुलनात्मक अध्ययन•

☐ डॉ. महेन्द्रनाथ सिंह

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध का उद्देश्य 'धम्मपद' और 'उत्तराध्ययन' सूत्र का एक तुलनात्मक अध्ययन करना है। 'धम्मपद' बौद्धधर्म का प्रसिद्ध ग्रन्थ है और 'उत्तराध्ययन' जैनधर्म का। बौद्ध और जैन धर्म दोनों ही श्रमण संस्कृति की धाराएँ हैं। तथागत बुद्ध और तीर्थंकर महावीर समकालीन थे। दोनों का प्रचार-स्थल प्रायः पूर्वी उत्तर प्रदेश और बिहार रहा। दोनों मानवतावादी थे। दोनों ने ही जातिवाद एवं कर्मकाण्ड को महत्त्व न देकर आन्तरिक विशुद्धि और सदाचार पर बल दिया। भगवान् महावीर के पावन प्रवचन 'गणिपिटक' (जैन आगम) के रूप में विश्रुत हैं, तो बुद्ध के प्रवचनों का संकलन 'त्रिपिटक' (बौद्धागम) के रूप में प्रसिद्ध है। 'धम्मपद' त्रिपिटक का एक अंग है और 'उत्तराध्ययन' सूत्र जैन आगम साहित्य का एक भाग है।

बौद्ध धर्म में जो महत्त्व 'धम्मपद' को प्राप्त है वही जैन धर्म में 'उत्तराध्ययन' को है। बौद्धधर्म में 'धम्मपद' के पाठ का तथा जैन धर्म में 'उत्तराध्ययन' के पाठ का आज भी प्रचलन है। 'धम्मपद' सुत्तपिटक में खुद्दक निकाय के अन्तर्गत एक स्वतंत्र ग्रन्थ है। इसमें कुल २६ वर्ग और ४२३ गाथायें हैं। बौद्ध परम्परा इन्हें भिन्न-भिन्न अवसरों पर बुद्ध द्वारा कही हुई स्वीकार करती है। यद्यपि इस मान्यता को ऐतिहासिक तथ्य के रूप में स्वीकार करना कठिन है, परन्तु 'धम्मपद' को प्रायः खुद्दक निकाय के अपेक्षाकृत प्राचीन स्तर का माना जाता है। 'धम्म' शब्द से धर्म, अनुशासन, नियम आदि का तात्पर्य किया जाता है और 'पद' का अर्थ वक्तव्य या पथ से किया जाता है। इस प्रकार 'धम्मपद' का अर्थ सत्य सम्बन्धी वक्तव्य या सत्य का मार्ग है।

'उत्तराध्ययन सूत्र' अर्धमागधी प्राकृत भाषा में निबद्ध है। इसकी गणना मूल सूत्रों में होती है। इसमें कुल ३६ अध्ययन हैं। जिनमें से १६५६ पद्य तथा ८९ गद्य सूत्र हैं। इनमें कुछ अध्ययन शुद्ध दार्शनिक सिद्धान्तों का तथा कुछ 'धम्मपद' की तरह उपदेशात्मक साधु के आचार एवं नीति का विवेचन करते

•लेखक के शोध प्रबन्ध के निष्कर्षों पर आधारित।

हैं। कुछ कथा एवं संवाद-रूप हैं, पर उनका विषय भी मुनि-आचार ही है। अतः यह सूत्र भी किसी एक व्यक्ति की एक काल विशेष की रचना न होकर विभिन्न समयों में संकलित ग्रन्थ प्रतीत होता है। परम्परागत रूप में तो यह माना जाता है कि 'उत्तराध्ययन' के ३६वें अध्ययन का प्रवचन करते हुए महावीर ने निर्वाण प्राप्त किया था, तथापि इस तथ्य का प्रमाणीकरण प्राचीन ग्रन्थों से नहीं होता है। सामान्यतया भाषा, छन्द एवं विषय-सामग्री की दृष्टि से इसका रचनाकाल ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी से ईसा की दूसरी शताब्दी के मध्य सिद्ध होता है।

'धम्मपद' बौद्ध परम्परा का अत्यन्त लोकप्रिय ग्रन्थ है। वहां यह ब्राह्मण परम्परा की गीता के समकक्ष है, और आज भी श्रीलंका में बिना 'धम्मपद' का पारायण किये भिक्षु की उपसम्पदा नहीं होती। इसके अनेक संस्करण और अनुवाद प्राप्त हैं। 'धम्मपद' को समझने में 'अट्ठकथा' भी अत्यन्त सहायक है। प्रायः बुद्धघोष ही 'धम्मपद' अट्ठकथा के रचयिता माने जाते हैं, यद्यपि इस पर शंका भी की गयी है। 'उत्तराध्ययन सूत्र' पर भी प्राचीन-अर्वाचीन विपुल व्याख्यात्मक साहित्य विद्यमान है। जैन परम्परा में यह ग्रन्थ अत्यन्त लोकप्रिय रहा, और इस पर सर्वाधिक टीका-ग्रन्थ भी लिखे गये, जिनमें आचार्य भद्रबाहु की निर्युक्ति और जिनदास गणि महत्तर की चूर्णि विशेष उल्लेखनीय हैं।

उपर्युक्त से स्पष्ट है कि 'धम्मपद' तथा 'उत्तराध्ययन' दोनों अपनी-अपनी परम्पराओं के अतिविशिष्ट प्रतिनिधि ग्रन्थ हैं। अतः दोनों का तुलनात्मक अध्ययन रोचक तथा महत्त्व का हो सकता है। परन्तु तुलनात्मक अध्ययन से स्पष्ट होता है कि दोनों ग्रन्थों में विषय, शब्दों, उक्तियों एवं कथानकों की दृष्टि से अत्यधिक साम्य है। इस साम्य का मूल्य आधार यही हो सकता है कि दोनों ग्रन्थ श्रमण-परिव्राजक परम्परा से निःसृत थे तथा एक ही वातावरण, काल और क्षेत्र में निर्मित हुए थे। इन दोनों ग्रन्थों में प्राप्त सामग्री के आधार पर बौद्ध तथा जैन धर्म का तुलनात्मक विवरण प्रस्तुत करना ही हमारा अभीष्ट है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध छः अध्यायों में विभक्त है। दोनों धर्म सांसारिक जीवन में दुःख की सर्व व्यापकता स्वीकार करते हैं और दुःख-विमुक्ति का आदर्श रखते हैं। 'उत्तराध्ययन' सूत्र में सच्चे और अविनश्वर सुख की प्राप्ति के लिए चेतन और अचेतन के संयोग और वियोग की आध्यात्मिक प्रक्रिया का सम्यक्ज्ञान आवश्यक बताया गया है। इस प्रक्रिया को नौ तथ्यों द्वारा व्यक्त किया गया है—जीव, अजीव, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा, मोक्ष पुण्य तथा पाप। हिंसादि अशुभ कार्यों से अजीव से जीव का बन्ध होता है, और अहिंसादि शुभ कार्यों से जीव मुक्त होता है। कुछ इसी प्रकार के सत्य का साक्षात्कार भगवान बुद्ध ने भी किया, यद्यपि वे

चेतन-अचेतन द्रव्यों की नित्य सत्ता में विश्वास नहीं करते थे और अनित्यता, अनात्मता तथा दुःखता सांसारिक जीवन के प्रधान लक्षण मानते थे। उन्होंने अपने स्वानुभूत ज्ञान को चतुरार्य सत्यों के रूप में व्यक्त किया—दुःख, दुःखसमुदय, दुःख-निरोध तथा दुःखनिरोध-मार्ग। दुःख-निरोध के लिए जिन उपायों को 'धम्मपद' में बतलाया गया है वे ही प्रायः 'उत्तराध्ययन' में भी हैं, अन्तर इतना ही है कि जहां बौद्ध दर्शन नैरात्म्यभावना पर जोर देता है वहां 'उत्तराध्ययन' उपनिषदों की तरह आत्मा के सद्भाव पर। उपर्युक्त चार बौद्ध सत्यों की तुलना 'उत्तराध्ययन' सूत्र की जैन तत्त्व योजना से निम्न रूप में की जा सकती है।

'धम्मपद' का दुःख तत्त्व 'उत्तराध्ययन' के बन्धन तत्त्व से, दुःख-हेतु आस्रव से, दुःख निरोध मोक्ष से और दुःख निरोधमार्ग (अष्टांङ्गिकमार्ग) संवर और निर्जरा से तुलनीय है।

बौद्ध धर्म में त्रिशरण बुद्ध, धर्म और संघ त्रिरत्न माना गया है, और प्रत्येक बौद्ध के लिए इनकी अनुस्मृति आवश्यक कही गयी है। बुद्ध की अनुस्मृति का अर्थ है, उनके अर्हत्व आदि गुणों का पुनः पुनः स्मरण। 'धम्मपद' में बुद्ध और उनकी स्मृति के ऊपर एक वर्ग ही है। धम्म की अनुस्मृति को बुद्ध स्मृति से भी महत्त्वपूर्ण कहा गया है, क्योंकि धर्म के साक्षात्कार से ही बुद्ध बुद्ध बने थे। 'धम्मपद' में धम्म पर भी एक अलग से वर्ग है। धर्म के प्रचार एवं आध्यात्मिक साधना के अभ्यास के लिए बौद्ध अनुयायियों का संगठन ही संघ था। बुद्ध संघ को धर्म द्वारा संचालित और अपने से भी बड़ा मानते थे। संघ के गुणों का बार-बार स्मरण संघानुस्मृति है, और 'धम्मपद' में इसे भी उतना ही आवश्यक माना गया है। त्रिशरण की बात तो 'उत्तराध्ययन' में नहीं है, किन्तु चतुर्विध शरण का उल्लेख 'आवश्यक सूत्र' में है, और संघ के महत्त्व का उल्लेख 'नन्दीसूत्र' में है। बौद्ध और जैन दोनों में आध्यात्मिक प्रगति के विभिन्न स्तरों की कल्पना है। सामान्यतया बौद्धधर्म में इनको क्रमशः स्रोतापन्न, सकृदागामी, अनागामी एवं अर्हत् कहा जाता था। 'धम्मपद' में इनका क्रमबद्ध उल्लेख तो नहीं है, किन्तु अर्हत् तत्त्व का है। इस ग्रन्थ के सातवें वग्ग का नाम 'अरहन्तवग्ग' है, और इसकी प्रत्येक गाथा में अर्हतों का वर्णन है। अर्हत्व का तात्पर्य साधक की उस अवस्था से है, जिसमें तृष्णा, राग-द्वेष की वृत्तियों का क्षय हो चुका हो और वह सभी सांसारिक मोह और बन्धनों से ऊपर हो। 'उत्तराध्ययन' में भी वीतराग एवं अरिहन्त जीवन का प्रायः इसी रूप में वर्णन है और उसे नैतिक जीवन का परम साध्य माना गया है। जैन और बौद्ध दोनों धर्मों को कर्म सिद्धान्त समान रूप से स्वीकार्य है। जगत् के सृष्टा और नियामक किसी ईश्वर की कल्पना अस्वीकार कर दोनों धर्म जीव की गति कर्म के ही अधीन मानते हैं। परन्तु दोनों के कुछ मौलिक अन्तर भी हैं। बौद्ध कर्म को किसी नित्य, शाश्वत-

कर्त्ता का व्यापार नहीं मानते हैं। इसी प्रकार जहां बौद्ध कर्म को मूलतः मानसिक संस्कार के रूप में ग्रहण करते थे, वहां जैन उसे पौद्गलिक मानते थे। 'धम्मपद' और उत्तराध्ययन' सूत्र के अध्ययन से भी इन तथ्यों की पुष्टि होती है।

'धम्मपद' के अनुशीलन से यह स्पष्ट होता है कि शील, समाधि और प्रज्ञा ये तीन ही दुःख विमुक्ति के मूल साधन हैं तथा अष्टाङ्गिक मार्ग इसी साधनत्रय का पल्लवित रूप है। 'उत्तराध्ययन' सूत्र में मोक्ष के साधन चार बतलाये गये हैं—सम्यक् दर्शन, ज्ञान, चारित्र और तप। जैन आचार्यों ने सम्यक् चारित्र में ही तप का अन्तर्भाव कर परवर्ती साहित्य में त्रिविध साधना मार्ग का विधान किया, जो जैन दर्शन में 'रत्नत्रय' नाम से प्रसिद्ध हुआ। तुलनात्मक अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि उत्तराध्ययन के सम्यक् दर्शन और सम्यक्ज्ञान 'धम्मपद' के समाधि और प्रज्ञा स्कन्ध के समकक्ष हैं और 'धम्मपद' का शील स्कन्ध 'उत्तराध्ययन' के सम्यक् चारित्र में सरलता से अन्तर्भूत हो जाता है। वस्तुतः बौद्ध और जैन धर्म के आचार में मौलिक समानतायें हैं। बौद्धों के शील जैन व्रतों से सहज तुलनीय हैं। अहिंसा के सम्बन्ध में दोनों में किंचित् दृष्टिभेद अवश्य था और तत्त्वमीमांसा के मौलिक अन्तर के कारण दोनों की ध्यान पद्धतियों में भी असमानतायें थीं। दोनों में सबसे महत्त्वपूर्ण भेद यह था कि जहां जैन धर्म काय क्लेश और कठोर तप पर बल देता था, बौद्धधर्म अतिवर्जना और मध्यम मार्ग के पक्ष में था। 'धम्मपद' और 'उत्तराध्ययन' से इन तथ्यों की भी पुष्टि होती है। 'धम्मपद' और 'उत्तराध्ययन' दोनों में पुण्य-पाप की अवधारणायें प्रायः समान हैं। दोनों में याज्ञिकी हिंसा तथा वर्ण-भेद की आलोचना है। दोनों सदाचरण को ही जीवन में उच्चता-नीचता का प्रतिमान मानते हैं और ब्राह्मण की जन्मानुसारी नहीं अपितु कर्मानुसारी परिभाषा प्रस्तुत करते हैं। साथ ही प्रायः दोनों में आदर्श भिक्षु, यति के गुण प्रायः समान शब्दों में वर्णित हैं।

'धम्मपद' और 'उत्तराध्ययन' दोनों ग्रन्थों में चित्त, अप्रमाद, कषाय तथा तृष्णा आदि मनोवैज्ञानिक तथ्यों का विवेचन है। साधारण रूप से जिसे जैन परम्परा 'जीव' कहती है, बौद्ध लोग उसी के लिए 'चित्त' शब्द का प्रयोग करते हैं। उनके लिए चित्त की सत्ता तभी तक है जब तक इन्द्रिय तथा ग्राह्य विषयों के परस्पर घात-प्रतिघात का अस्तित्व है। ज्योंही इन्द्रियों तथा विषयों के परस्पर घात प्रतिघात का अन्त हो जाता है त्योंही चित्त भी समाप्त या शान्त हो जाता है। बौद्ध धर्म में चित्त, मन और विज्ञान को प्रायः एक ही अर्थ का माना गया है। जैन दृष्टिकोण से जिसके द्वारा मनन किया जाता है वह मन है। 'उत्तराध्ययन' के अनुसार मन भी एक प्रकार का द्रव्य है, जिसके द्वारा सुख-दुःख की अनुभूति होती है। दूसरे शब्दों में इन्द्रियों और आत्मा के बीच की कड़ी मन

है। 'धम्मपद' के 'चित्तवर्ग' में चित्त के ऊपर विशेष रूप से प्रकाश डाला गया है। 'मनोपुब्बंगमाधम्मां' (मन सभी प्रवृत्तियों का अगुआ है) और 'फन्दनं चपलं चित्त'। (चित्त क्षणिक है, चंचल है) तथा 'उत्तराध्ययन' सूत्र के 'मणसमाहारणयाएणं एगग्गं जणयइ' (मन की समाधारणा से जीव एकाग्रता को प्राप्त होता है) तथा 'मणो साहसिओ भीमो दुट्ठस्सो परिधावई' (मन ही साहसिक, भयंकर दुष्ट अश्व है, जो चारों तरफ दौड़ता है) जैसे वाक्य दोनों ग्रन्थों में मन के स्वरूप को भली-भांति स्पष्ट करते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि मन व्यक्ति के अन्तरङ्ग में एक प्रकार का साधन है जिसके द्वारा वह बाह्य संसार को ग्रहण करता है। मन कोई सामान्य इन्द्रिय नहीं है, वरन् इसे चेतना के रूप में स्वीकार किया गया है।

सामान्यतया समय का अनुपयोग या दुरुपयोग न करना, अप्रमाद है। 'धम्मपद' तथा 'उत्तराध्ययन' सूत्र में 'अप्रमाद' का विशद विवेचन है। 'धम्मपद' में प्रमाद को मृत्युतुल्य तथा अप्रमाद को निर्वाण कहा गया है। 'उत्तराध्ययन' सूत्र में प्रमाद को कर्म, आस्रव और अप्रमाद को अकर्म संवर कहा गया है। प्रमाद के होने से मनुष्य मूर्ख और अप्रमाद के होने से पण्डित कहा जाता है। आत्मा को मलीन करने वाली समस्त भावनायें, वासनायें, कषाय में गर्भित हैं। क्रोध, मान, माया और लोभ रूपी भावनायें सबसे अधिक अनिष्ट व अशुभ हैं। 'उत्तराध्ययन' में इन्हें चार कषाय की संज्ञा दी गयी हैं। 'धम्मपद' में कषाय शब्द का प्रयोग दो अर्थों में है। पहला जैन परम्परा के समान दूषित चित्त वृत्ति के अर्थ में तथा दूसरा संन्यस्त जीवन के प्रतीक गेरुए वस्त्रों के अर्थ में। 'धम्मपद' में कषाय शब्द के अन्तर्गत कौन-कौन दूषित वृत्तियां आती हैं इनका स्पष्ट उल्लेख तो नहीं मिलता, परन्तु इन अशुभ चित्त वृत्तियों को दूर कर साधक को इनसे ऊपर उठने का सन्देश दिया गया है। 'उत्तराध्ययन' में इन चारों का विशद वर्णन है।

'धम्मपद' तथा 'उत्तराध्ययन' मूलतः धार्मिक ग्रन्थ हैं, फिर भी इनमें प्राप्त उपदेशों का सामाजिक पक्ष भी है, जिसके आधार पर सामाजिक परिस्थिति, सामाजिक आदर्श, सामाजिक व्यवहार, आदर-सत्कार, रीति-रिवाज, पारिवारिक जीवन आदि का अध्ययन किया जा सकता है।

—कमरा नं. १४, डालमिया होस्टल
बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी—२२१००५

अर्थ/धर्म
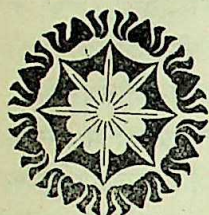
चेतन चतुर हिसाब लगा !*

□ श्री लाभचन्द कोठारी

हर वणिक अपनी वणिक बुद्धि से धन-उपार्जन करता है। सुबह से शाम, मन, वचन, काया के योग से द्रव्य-प्राप्ति के लिए सतत प्रयत्नशील रहता है। हर कार्य में लाभ अधिक, अत्यधिक और हानि न्यूनतम हो, इस विचार से प्रेरित रहता है। साल भर अपने व्यापार में लिप्त रहता है और साल के अन्त में अपना हिसाब देखने के लिए लाभ-हानि खाता तैयार करता है। लाभ होने पर वह बहुत विचार-विमर्श करता है कि इस लाभ की रकम को किस तरह नियोजित करूँ ताकि आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न बना रहूँ। यहां तक कि अपना आयुष्य पूर्ण होने के बाद अपने परिवार स्वजन को इसका लाभ मिलता रहे। इस चिन्तन से न सिर्फ इस लोक का अपितु लोकोत्तर भविष्य की भी व्यवस्था में संलग्न रहता है।

इस लोक में अपने लाभ को स्थायित्व प्रदान करने हेतु वह अचल सम्पत्ति, मकान, जायदाद आदि खरीदता है। उसे ऐसा आभास होता है कि अचल सम्पत्ति से उसका द्रव्य स्थायी हो जायेगा, लाभ पक्का हो जायेगा। अचल सम्पत्ति के पश्चात् वह अपने लाभ का बचा हिस्सा स्वर्ण आभूषणों व बहुमूल्य रत्नों में निवेशित (इन्वेस्ट) करता है ताकि दुःख-सुख के समय काम आ सके और अर्थ संकट आने पर अपनी प्रतिष्ठा बचा सके। सम्पत्ति-स्वर्ण में नियोजित पूँजी के बाद बचे हुए द्रव्य को वह सेविंग्स बांड में लगाता है ताकि नकद रकम बची रहे और ब्याज में उसकी बढ़ोतरी हो सके।

इन सेविंग बांड्स का महत्त्व व्यक्ति ही नहीं अपितु बड़े-बड़े संस्थान जैसे बैंक आदि भी स्वीकार करते हैं। व्यक्ति के बचाये हुए पैसे से बाण्ड में पूँजी नियोजित करके सरकार, बैंक, बीमा कम्पनियाँ आदि भी विकास कार्यों में पूँजी नियोजित करते हैं और उसके एवज में ब्याज देते हैं। बॉण्ड में पैसा लगाने को

* आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के दर्शन कर सवाई माधोपुर से जयपुर लौटते समय श्री कैलाशचन्दजी हीरावत के साथ हुई बातचीत के आधार पर।

प्रोत्साहित करने के लिये नयी-नयी आकर्षक एवं लाभप्रद योजनाएँ बराबर प्रस्तुत की जाती हैं जिन्हें विकास-पत्र भी कहते हैं। हर साधारण गृहस्थ अपनी क्षमतानुसार भविष्य की अप्रत्याशित आशंका से निर्भय प्राप्ति के लिये पूँजी नियोजित करता है। औसत आदमी इस बात को भलीभांति समझता है कि ब्याज पर पैसा लगाने पर १ रुपया सैकड़ा से छह वर्ष में रकम दुगुनी हो जाती है। सरकार को भी पूँजी की जरूरत है अतः बचाने की प्रवृत्ति को बढ़ाने के लिए आयकर, सम्पत्तिकर आदि भी माफ कर दिये जाते हैं ताकि जनता अधिकाधिक पूँजी बचत बाण्डों में, विकास-पत्रों में लगा सके। इस बचत योजना अथवा विकास योजना से देश के कई कार्य जिनमें असाधारण पूँजी की आवश्यकता होती है; सम्पन्न किये जाते हैं।

प्रत्येक दिवस के २४ घन्टे होते हैं। हम उनमें अपने जीवन सम्बन्धी सब कार्य पूरे करते हैं। पर क्या हमने यह ध्यान किया है कि दिवस सम्बन्धी कार्य में हमारा लाभ-हानि का हिसाब क्या कहता है? हमारे मानव जीवन का, जैन धर्म का, उच्च गोत्र का, जिनवाणी के श्रवण-अध्ययन का, निर्ग्रंथ सद्गुरुओं के वचन-उपदेशों का जो दुर्लभ अवसर मिला है, उसका हम कितना सही उपयोग कर रहे हैं? २४ घन्टे में हमने कौन से ऐसे कर्म किये हैं जो नामे की तरफ लिखे हैं जिनसे पाप कर्मों का बन्धन हुआ है और कौन से कर्म ऐसे किये हैं जो जमा की तरफ लिखे हैं जिससे पुण्य का बन्ध हुआ है। चिट्ठा (हिसाब) तैयार करेंगे तो अधिकांशतः हम यह पायेंगे कि दिवस सम्बन्धी अतिचारों की ही भरमार है। अठारह प्रकार के पापों से खर्चा ज्यादा और संवर-निर्जरा तप की आमद कम है और दैनिक जीवन का लेखा हानि में चल रहा है।

हम वणिक साहूकार, महाजन, व्यापारी इस संसार के नश्वर द्रव्य के चिट्ठे के लिए मुनीम, एकाउटेन्ट, ऑडिटर रखते हैं। सारे दिन जमा-खर्च के क्रम को बराबर मानिटर करते रहते हैं। हर एन्ट्री को बहुत ध्यान से समझकर लिखते हैं। इसके लिये कानून की अनेक पुस्तकों का अवलोकन करते हैं। किसी भी प्रकार का संशय होता है तो कानूनवेत्ता, विधिवेत्ताओं को हजारों रुपया घण्टे का खर्च कर उनसे सलाह-परामर्श लेते हैं। कहीं हमारी एन्ट्री, हिसाब-किताब गलत न हो जाय, कहीं हमें पेनल्टी, सजा अथवा दोनों न हो जाय। हानि के भय से, सरकार की कानून-व्यवस्था के अन्तर्गत बनाये हुए नियमों की अवहेलना से, सजा के भय से हम अपना हिसाब-किताब कितना साफ, स्वच्छ और परिमार्जित रखते हैं और उस पर कितना समय और द्रव्य खर्च करते हैं। हर व्यापारी को अपनी रोज की रोकड़, स्टॉक, नकद बैलेन्स आदि मिलाकर रखने पड़ते हैं। आयकर, बिक्रीकर का कभी भी छापा पड़ सकता है। जरा भी असावधानी हो जाय तो कितनी विषमताएँ खड़ी हो जाती हैं, वर्षों के वर्षों यहाँ तक कि कभी-

कभी तो परिवार की पीढ़ी दर पीढ़ी उस समस्या को सुलझाने में समाप्त हो जाने की मिसाल मिलती है।

हम कैसे वणिक हैं जो अर्थ का इतना गहन अध्ययन-चिन्तन करते हैं और आत्मा सम्बन्धी सच्चे धन से बेखबर-बेभान रहते हैं? हमें सरकारी अफसरों का भय लगता है पर हम कैसे हो गये हैं कि कभी हार्ट अटैक आ जाय, कैंसर जैसी बीमारी हो जाय, कोई लाइलाज मर्ज खड़ा हो जाय या फिर महाकाल का अनायास बुलावा आ जाये तो भी डरते नहीं। हमारी परलोक की अथवा इहलोक की क्या स्थिति होगी, कितना हानि-लाभ होगा इस पर विचार नहीं करते। हम कैसे चतुर वणिक हैं जो भौतिक द्रव्य का इतना ध्यान रखते हैं पर आध्यात्मिक धन से विमुख हैं।

वीर प्रभु भगवान की जिनवाणी को प्रचारित-प्रसारित करते हुए पंच महाव्रतधारी निर्ग्रंथ श्रमण, सद्गुरु हमें बार-बार समझाते हैं कि आप अपने वणिक जीवन में अर्थ के साथ धर्म की भी एकाउन्टिंग रखिये। उनका आत्म-जागृति का यह सन्देश कितना प्रेरक है—

उठ भोर भई टुक जाग सही, भज वीर प्रभु, भज वीर प्रभु।
रे चेतन चतुर हिसाब लगा, क्या खाया, खर्चा लाभ हुआ,
अब भूल कुमार्ग विषे मत जा, भज वीर प्रभु, भज वीर प्रभु।।

रोकड़ खाता रखिये, सारे दिवस के कर्मों की रोकड़ बराबर लिखिये, फिर हर एन्ट्री को सही खाते में खताइये और खाते में बेलेन्स शीट बनाइये। इसके लिये अपने यहाँ प्रतिक्रमण का विधान है। हर सुबह-शाम को प्रतिक्रमण कर अतिचारों की आलोचना कीजिये। १४ ज्ञान के, ५ समकित के, ६० बारह व्रतों के, १५ कर्मादान के और ५ संलेखना के इस प्रकार ९९ अतिचारों को जानते, अनजानते, मन, वचन, काय से सेवन किया हो, कराया हो, करते को भला जाना हो तो अनन्त भगवान की साक्षी से दिन-रात भर में जो अतिचार लगे हों, उनके लिए एवं १८ पापों में से किसी का सेवन किया हो तो उसके लिये मिच्छामि दुक्कड़ं यानी क्षमायाचना करना है।

जिस प्रकार एकाउंटिंग सिखायी जाती है, उसके मूल तत्त्वों को बताया, समझाया जाता है उसी प्रकार जीवन के दिन-रात सम्बन्धी अतिचारों-पापों को भी शास्त्रों में भलीभांति बताया गया है, समझाया गया है, उनकी व्याख्या एवं मीमांसा की गयी है जो कि बहुत सरल, सुबोध और ग्राह्य है। आवश्यकता सिर्फ इस बात की है कि हमारी दृष्टि उस ओर लक्षित हो, भौतिक ज्ञान के साथ-साथ आध्यात्मिक ज्ञान का तारतम्य हो ताकि लौकिक और पारलौकिक दोनों

का सुन्दर सम्बन्ध हो। इनके लिये सामायिक-स्वाध्याय करना अत्यन्त आवश्यक है। इसके महत्त्व को प्रकाशित करते हुए आचार्य प्रवर पूज्य श्री हस्तीमल जी म. सा. ने कितने सरल, सुन्दर शब्दों व भावों में प्रेरणा दी है—

करलो सामायिक रो साधन, जीवन उज्ज्वल होवेला।
तन का मैल हटाने खातिर, नित प्रति न्हावेला।
मन पर मल चहुं ओर जमा है, कैसे धोवेला।। करलो सामायिक।।

हमें अर्थ प्राप्ति के साथ-साथ धर्म प्राप्ति भी होती रहे, हमारी आय बढ़ती रहे, रकम की सुरक्षा बनी रहे, वृद्धि होती रहे, जीवन में, परिवार में, समाज में, राष्ट्र में सुख-शान्ति सम्पन्नता बनी रहे, इसी तरह सामायिक-स्वाध्याय का नित्य प्रति क्रम बना रहे, हमारी आध्यात्मिक आय बढ़ती रहे, शुभ कर्मों से संचित पुण्य रूपी सम्पदा बढ़ती रहे, हमारे निज के जीवन में, परिवार में, समाज में, राष्ट्र में, विश्व में आनन्द, प्रसन्नता, प्रेमभाव, मानवीय गुणों का प्रचार-प्रसार सम्यक् दर्शन, ज्ञान, चारित्र विकास की ओर अग्रसर होता रहे, यही चेतन चतुर का हिसाब लगाना है। आप चेतन हैं, चतुर हैं, हिसाब लगाइये।

—104-40, Queens Blvd, Forest Hills, Newyork NY-11375 USA
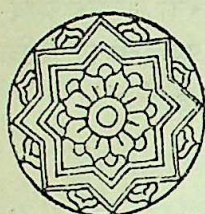
महावीर का आर्थिक चिन्तन

☐ श्रीमती कौशल्या भानावत

महावीर का दर्शन मूलतः वीतराग दर्शन है। वे राजकुमार थे। राज्य वैभव, राजसी ठाटबाट, सम्पत्ति व सत्ता का सुख छोड़कर वे संन्यस्त हो गए थे। संसार-त्याग की यह घटना पलायनवाद नहीं कही जा सकती। जीवन से निराश व हताश होकर उन्होंने संसार नहीं छोड़ा था। अपने इर्दगिर्द उन्होंने दुःख, पीड़ा और मनुष्य द्वारा मनुष्य का शोषण देखा था। धर्म और समाज के विभिन्न क्षेत्रों में शोषण का घिनौना रूप उनके क्रान्ति चेता मन को आन्दोलित कर उठा। इस दुःख से स्वयं मुक्त होने और संसार को मुक्ति दिलाने का उपाय खोजने के लिए उन्होंने साढ़े बारह वर्ष की कठोर तपस्या की। इस अवधि में उन्हें कई प्रकार के शारीरिक कष्ट दिये गये पर वे मौन और क्षमाशील बने रहे। शरीर और आत्मा के भेद को वे समझ चुके थे। आत्म-शक्ति को जाग्रत कर परमात्म-शक्ति से उन्होंने साक्षात्कार किया। इसी आन्तरिक वीरत्व को जाग्रत करने के कारण वे 'महावीर' कहलाये।

महावीर आध्यात्मिक महापुरुष थे पर जीवन की यथार्थता से वे कटे नहीं। उन्होंने कर्मवाद व पुरुषार्थ से गुजर कर अनासक्त योग और समता का सन्देश दिया। हर स्तर पर उन्होंने विषमता के खिलाफ संघर्ष किया।

ऊपरी तौर पर हमें लगता है कि महावीर का आर्थिक चिन्तन से कोई सम्बन्ध नहीं है, पर जब हम उनके चिन्तन में गहरे पैठते हैं तो आर्थिक चिन्तन के निम्न तत्त्व उभर कर आते हैं—

१. शोषण से मुक्ति

२. आवश्यकताओं का नियमन और परिग्रह की मर्यादा

३. स्वामित्व का विसर्जन

४. श्रम-भाव की प्रतिष्ठा।

१. शोषण से मुक्ति :

महावीर शोषण विहीन अहिंसक समाज-रचना के पक्षधर थे। शोषण का मूल है—मोह और लोभ। इसी के वशीभूत होकर व्यक्ति नाना प्रकार के

हिंसक कार्य करता है। महावीर के समय में धार्मिक शोषण चरम सीमा पर था। धर्म के नाम पर मूक पशुओं की बलि दी जाती थी। आत्म-देव—आत्म-चेतना के स्थान पर अन्य देवी-देवता साधना के केन्द्र में थे। व्यक्ति अपने सुख-दुःख के लिए अन्य देवी-देवताओं की पसन्दगी--नाराजगी पर निर्भर था। महावीर ने स्पष्ट कहा—तुम्हारी आत्मा ही सुख-दुःख देने वाली है। सद्-प्रवृत्तियों में लगी हुई आत्मा मित्र है और दुष्प्रवृत्ति में लगी हुई आत्मा शत्रु है। सदाचरण ही धर्म है। क्रोध, मान, माया, लोभ आदि कषायों को होम कर समस्त दुःखों से मुक्त हो सकते हैं, ईश्वर बन सकते हैं।

सामाजिक शोषण के नाम पर जातिगत, वर्गगत, लिंगगत भेदभाव था। व्यक्ति जन्म से ऊँचा-नीचा माना जाता था। महावीर ने जन्म को नहीं कर्म को, व्यक्ति के आचरण को ऊँच-नीच का आधार माना। उन्होंने क्षत्रिय, ब्राह्मण आदि की नयी परिभाषाएँ कीं। क्षत्रिय वह जो अपने आत्म-गुणों की और संसार के प्राणियों की रक्षा करे, वह नहीं जो दूसरों को गुलाम बनाकर उन पर शासन करे, उनका शोषण करे। ब्राह्मण वह जो ब्रह्म में विचरण करे।

महावीर ने नारी-शक्ति को पूर्ण सम्मान और महत्त्व दिया। उनके समय में नारी दासी की तरह बेची जाती थी। हर स्तर पर उसका शोषण होता था। उन्होंने नारी को न केवल सामाजिक प्रतिष्ठा दिलायी वरन् अपने धार्मिक संघ में उसे दीक्षित कर उसके लिए चरम आध्यात्मिक उन्नति का रास्ता खोल दिया। दासी बनी चन्दनबाला को उन्होंने छत्तीस हजार साध्वियों का नेतृत्व प्रदान किया। उनके संघ में कई गणिकाएँ भी दीक्षित हुईं। नारी-उद्धार के लिए महावीर ने कठोर अभिग्रह भी धारण किया।

मानव-शोषण के अतिरिक्त महावीर ने पशु-शोषण के खिलाफ भी उपदेश दिया। उन्होंने कहा—तुम्हें अपनी आत्मा जिस प्रकार प्रिय है, उसी प्रकार हर प्राणी को अपनी आत्मा प्रिय है, अतः किसी को दुःख न दो। पशु-पक्षी जगत् यहाँ तक कि वनस्पति-जगत् भी तुम्हारा मित्र है। किसी भी पशु पर अधिक भार न लादो, उसके अंगों का छेदन-भेदन न करो, उसके खाने-पीने में बाधा न डालो, उस पर उसकी क्षमता से अधिक भार न लादो। पेड़ों को न काटो, जंगल न जलाओ, तालाब आदि न सुखाओ, मादक पदार्थों का व्यापार न करो, समाज-कंटकों को आश्रय न दो।

इस प्रकार महावीर ने जीवन और समाज में विभिन्न स्तरों पर व्याप्त शोषण-मुक्ति के लिए उपदेश दिया।

२. आवश्यकताओं का नियमन और परिग्रह-मर्यादा :

सामान्यतः यह माना जाता है कि 'आवश्यकता आविष्कार की जननी है।' अर्थात् जीवन और समाज की आवश्यकताएँ बढ़ने पर ही विभिन्न क्षेत्रों में नये-नये आविष्कार सम्भव हो पाते हैं। जिस समाज में जितनी आवश्यकताएँ अधिक बढ़ती हैं वह समाज जीवन-स्तर की दृष्टि से उतना ही उच्च माना जाता है। भौतिक प्रगति का विकास इसी आधार पर होता चलता है। पर मनुष्य का मन अत्यधिक चंचल है। एक इच्छा की पूर्ति होते ही नयी-नयी इच्छाएँ जन्म लेती रहती हैं और वह स्थिति कभी नहीं आ पाती जबकि मनुष्य की सभी इच्छाएँ पूरी हो जाएँ। अनन्त इच्छाओं के दुष्जाल में फँसा व्यक्ति सदैव अतृप्त, अशान्त और व्यग्र बना रहता है। वह इच्छाओं को ही आवश्यकता समझ कर उनकी पूर्ति के लिए नानाविध अनैतिक कार्यों में फँसता जाता है और अन्ततः हीन भावों से ग्रस्त होकर आत्म-विश्वास खो बैठता है। इच्छा और आवश्यकताओं के इस मनोविज्ञान को महावीर ने अनुभूति के स्तर पर खूब समझा और यह उपदेश दिया कि सुख इच्छाओं की पूर्ति में नहीं, बल्कि इच्छाओं को नियन्त्रित करने में व आवश्यकताएँ कम करने में है। इस दृष्टि से उन्होंने गृहस्थों के लिए इच्छा-परिमाण व्रत और परिग्रह-मर्यादा करने का नियम बनाया। जिस व्यक्ति की जितनी आवश्यकता हो उसकी पूर्ति होने पर शेष वस्तु, पदार्थ और सम्पत्ति का वह दूसरों के लिए, समाज के लिए उसका उपयोग करे। उन्होंने धन, धान्य, जमीन, जायदाद, मुद्रा आदि सभी की मर्यादा करने पर बल दिया। उन्होंने आवश्यकता से अधिक संग्रह न हो इसके लिए विभिन्न दिशाओं में आने-जाने, व्यापार आदि करने की मर्यादा निश्चित करने पर बल दिया। यही नहीं, आवश्यकताओं के लिए जो वस्तु और पदार्थ संचित करना है, उसमें भी शुद्धता और साधन की पवित्रता पर बल दिया।

अपनी जीविका के आय के साधन जुटाने में किसी की निरर्थक हिंसा न हो, किसी के प्रति अन्याय न हो, कोई अपने अधिकारों से वंचित न हो, इस बात का विशेष ध्यान रखा जाय। इसके लिए उन्होंने अहिंसा के साथ सत्य और अचौर्य व्रत पर विशेष बल दिया।

अपने वाणिज्य-व्यवसाय में व्यक्ति सत्यनिष्ठ और प्रामाणिक बने यह आवश्यक है। लेन-देन में, विनिमय में न झूठा अनुबंध करे, न कम तोले, न कम नापे, चौर्य वृत्ति से अलग रहे। किसी की वस्तु को बलपूर्वक छीनना ही चोरी नहीं है, बल्कि किसी की वस्तु को उससे बिना पूछे लेना भी चोरी है। यही नहीं, चोर की चुरायी हुई वस्तु को खरीदना, चोर को सहायता देना,

असली वस्तु में नकली वस्तु मिलाना, उसे असली बता कर बेचना, सरकारी नियमों के विरुद्ध कार्य करना चोरी है।

इस प्रकार महावीर धार्मिक नियमों के माध्यम से आर्थिक सदाचरण की बात कहते हैं। आज के सन्दर्भ में जहाँ मुद्रा-स्फीति बढ़ रही है और परिणाम स्वरूप कर-चोरी व काले धन का संकट बढ़ता जा रहा है, महावीर का अपरिग्रह चिन्तन और स्वैच्छिक आर्थिक नियमन अपना विशेष महत्त्व रखता है।

३. स्वामित्व का विसर्जन :

महावीर ने आवश्यकताओं को सीमित कर जीवन में सादगी और स्वावलम्बन का गुण विकसित करने पर बल दिया। भौतिक वस्तुओं का परिग्रह सीमित करने पर भी, सीमित वस्तुओं के प्रति ममत्व और मूर्च्छा का भाव रह सकता है। मूर्च्छा भाव को ही महावीर ने परिग्रह कहा है। परिग्रह ही अलग-अलग स्तरों पर हठवाद, मताग्रह, दुराग्रह और साम्प्रदायिकता का रूप ले लेता है। आज हमारा देश इस रोग से अधिक ग्रस्त है। यह रोग तभी मिट सकता है जब आन्तरिक रूप से व्यक्ति अनासक्त और अपरिग्रही बने। इसके लिए व्यक्ति को अपनी भोगवृत्ति पर अंकुश लगाना आवश्यक है। उपभोक्ता संस्कृति में जीने वाला व्यक्ति कभी अपरिग्रही नहीं बन सकता। जहां भोग है वहाँ अधिकार की भावना है, स्वामित्व के लिए संघर्ष है। महावीर स्वामित्व को नकारते हैं। महात्मा गांधी ने इसी भावना को ट्रस्टीशिप सिद्धान्त के रूप में प्रस्तुत किया। अर्थात् आवश्यकता से अधिक जो धन-सम्पत्ति है, व्यक्ति उसे अपनी नहीं माने, अपने सुख-भोग के लिए उसका उपयोग न करे। व्यक्ति यह समझे कि यह धन-सम्पत्ति समाज की है, लोक की है, लोकहित और लोक-कल्याण में ही इसका उपयोग होना चाहिए। महावीर ने अतिथि संविभाग व्रत के रूप में इस बात को प्रस्तुत किया है। उन्होंने स्पष्ट कहा है—जो प्राप्य वस्तु का संविभाग नहीं करता, उसकी मुक्ति नहीं होती। आहार दान, औषध दान, ज्ञान दान आदि के रूप में प्राप्य सम्पदा का उपयोग किया जाना चाहिए।

कार्ल मार्क्स व्यक्ति के स्थान पर सम्पत्ति पर समाज या राज्य का स्वामित्व मानते हैं। स्वामित्व चाहे व्यक्ति का हो, समाज का हो या राज्य का हो। वहाँ संघर्ष है, हिंसा है, शोषण है, दमन है। महावीर किसी भी स्तर पर स्वामित्व स्वीकार नहीं करते। वे स्वामित्व का विसर्जन करने पर बल देते हैं। इसी पृष्ठभूमि पर लोक-कल्याणकारी राज्य की अवधारणा प्रतिफलित होती है।

४. श्रम-भाव की प्रतिष्ठा :

वर्तमान समाज-व्यवस्था में मानव-श्रम का महत्त्व कम होता जा रहा है। उसका स्थान मशीन लेती जा रही है। परिणाम-स्वरूप न केवल बेरोजगारी बढ़ी है वरन् श्रम से प्राप्त आन्तरिक उल्लास में भी कमी आयी है। जीवन में यान्त्रिकता की वृद्धि हुई है तथा हार्दिकता पीछे छूट गयी है। महावीर ने अपने जीवन और साधना में श्रम-भाव को प्रतिष्ठत किया। दार्शनिक स्तर पर उन्होंने इस बात पर बल दिया कि मानव अपने श्रम और पुरुषार्थ के बल पर समस्त विकारों को नष्ट कर आत्म-चेतना के सर्वोच्च बिन्दु पर पहुँच सकता है।

महावीर के साधना-काल में उनके कष्ट-निवारण के लिए स्वयं इन्द्र ने उपस्थित होकर सहायता करने की प्रार्थना की। महावीर ने उसे स्वीकार नहीं किया और कहा—'मैं अपने श्रम-बल और पुरुषार्थ से सिद्धि प्राप्त करूँगा। किसी अन्य के सहयोग की आकांक्षा करके नहीं।' तीर्थंकरों के पूर्व विशेषण के रूप में 'भगवान' शब्द लगता है जो उनकी अनन्त ज्ञान-शक्ति और आन्तरिक वैभवशीलता का प्रतीक है। पर महावीर के साथ 'श्रमण' विशेषण और लगता है जो उनके तपस्वी जीवन का परिचायक है। 'श्रमण' शब्द श्रम और पुरुषार्थ का तथा अपनी इन्द्रियों पर संयम रखने रूप तपनिष्ठा का प्रतीक है। इस तप के द्वारा ही पूर्व अर्जित कर्मों को, विकारों को नष्ट किया जाता है। महावीर ने तप को केवल अनशन तक ही सीमित न रखकर उसे सेवा, प्रायश्चित्त, विनय, स्वाध्याय, ध्यान और अनासक्ति से जोड़ा है।

श्रमण सादगीपूर्ण स्वावलम्बी जीवन जीता है। वह दूसरों से सेवा नहीं लेता, अपना काम स्वयं अपने हाथों से करता है। भिक्षा लेने के लिए जाता है, पैदल चलता है, अपना भार स्वयं ही उठाता है और सदा अप्रमत्त व जागरूक बना रहता है। श्रमण-वेष धारण करके भी जो रात-दिन नींद लेता रहता है, आलस में डूबा रहता है, खा-पीकर पेट पर हाथ फिराता रहता है उसे **'पापी श्रमण'** कहा गया है—

जे केइमे पव्वइए, निद्दासीले पगामसो।
भोच्चा पेच्चा सुहं सुवइ, पावसमणे त्ति वुच्चई ॥

—उत्तराध्ययन १७/३

आज की अर्थ-व्यवस्था में शारीरिक श्रम उपेक्षित है। गरीब अधिक गरीब और अमीर अधिक अमीर बनता जाता है। भारत में तो आधे से अधिक लोग गरीबी की रेखा से नीचे हैं। उत्पादन के साधन कुछेक धनी व्यक्तियों के हाथों में केन्द्रित हैं। उनका लाभ उन्हें अधिकाधिक धनी बनाता चलता है।

परिणाम स्वरूप आर्थिक विषमता की खाई घटने के बजाय निरन्तर बढ़ती जाती है। केवल सरकारी कानून बनाकर इस समस्या का समाधान सम्भव नहीं। जब तक व्यक्ति का मन इच्छा-परिमाण और परिग्रह-मर्यादा के व्रत-नियम से नहीं जुड़ता तब तक आवश्यकताओं को नियन्त्रित करने के अभ्यास की शुरुआत नहीं हो पाती और न समाज-हित में अर्जित सम्पत्ति के उपयोग की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिल पाता है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि हम महावीर के सिद्धान्तों में निहित आर्थिक चिन्तन को आधुनिक अर्थ-व्यवस्था के साथ समन्वित करें।

—सहायक प्रोफेसर, अर्थशास्त्र विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर-४

रूपक कथा

भगवान का रूप

□ श्री मोतीलाल सुराना

रोग किसे छोड़ता है—गरीब हों या अमीर। राजा ही बीमार हो गया तो प्रजाजन चिन्तित हुए। साथ ही अपनी-अपनी अलग-अलग राय देने लगे। नतीजा यह हुआ कि जो कुछ कहा गया—वह सब किया गया पर क्या वैद्य, क्या जानकार सभी ने हार मान ली।

पर राजकुमारी थी तीक्ष्ण बुद्धि वाली जिसने हार न मानी। वह साथ के प्रदेश में गई तथा परदेशियों से बीमारी का इलाज पूछती रही। संयोग से उसे एक बूढ़ा आदमी मिल गया जिसने बतलाया कि जब मैं छोटा था तब हमारे इस देश के राजा के पिताजी को एक सन्तोषी ने अच्छा किया था, जिसे किसी प्रकार की चिन्ता न थी। पर अब तो वह मर गया है। यह सुनकर राजकुमारी चिन्तित हुई तथा अपने प्रदेश में आई। ऐसे आदमी को ढूंढ़ने लगी जिसे किसी प्रकार की चिन्ता न हो।

बहुत जगह पूछा तो कोई रोग से चिन्तित था, तो कोई धन के लिए रोना रोता था। आखिर ढूंढ़ते-ढूंढ़ते एक शाम को एक झोंपड़ी के पास राजकुमारी पहुँची जहाँ भीतर से आवाज आ रही थी—भगवान तेरा लाख-लाख धन्यवाद। दिनभर का काम मिला, उन पैसों से भूख भगी और सुख की नींद सोने के लिए यह झोंपड़ी है। बस, मुझे अब और क्या चाहिए? राजकुमारी ने भीतर रह रहे वृद्ध को सारी बात सुनाई तो वह अपने राजा के लिए रात को ही अपनी लाठी लेकर चल पड़ा। उसके महल में पाँव रखते ही राजा का सब रोग दूर हो गया। मानो सन्तोषी भगवान का रूप हो।

—१४/२ न्यू पलासिया, इन्दौर—४५२००१

धारावाहिक उपन्यास [१]

आत्म-दर्शन*

□ श्री धन्ना मुनि
[आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के सुशिष्य]

चतुर्थ आरक का समय था। राजगृह नगर के राजपथ, चतुष्पथों और शृंगाटकों में श्वेत हाथियों पर बैठे हुए राजपुरुष पटह-निनाद के साथ घोषणा कर रहे थे—"महाराजाधिराज मगधेश पुरजनों एवं परिजनों के साथ महान् आचार्य श्री धर्मघोष के दर्शनार्थ पधार रहे हैं। सभी श्रद्धालु मुमुक्षु जो दर्शनों के इच्छुक हों, शीघ्र ही उद्यान की ओर प्रस्थित हों।"

अपने महान् धर्माचार्य के शुभागमन का सुसंवाद सुनते ही राजगृह नगर के नागरिक आनन्द और उमंग के साथ मुनि दर्शनार्थ सुन्दर परिधान धारण कर सुसज्जित होने लगे।

अपनी चतुरंगिनी सेना, अमात्यों, राजमहिषियों, युवराजों आदि परिजनों एवं पौरजनों के साथ मुनि दर्शनार्थ उद्यान की ओर जाते हुए मगधराज के इस परिकर के साथ नगर के विभिन्न चतुष्पथों से निकल-निकल कर रंग-बिरंगे परिधानों से सुशोभित नर-नारियों के वृन्द सम्मिलित होने लगे। उद्यान की ओर उमड़ते हुए नगर के विभिन्न विभागों से जन-समूह ठीक उसी प्रकार सुशोभित हो रहा था, जिस प्रकार कि दिशाओं-विदिशाओं से पूर्ण प्रवाह के साथ-साथ सागर में समाहित होती नदियाँ।

मगधराज के साथ यह विशाल जन-समूह उद्यान में पहुँचा। मगधराज के मुकुटमण्डित उत्तमांग के मुनि-चरणों में अवनत होते ही सहस्रों शीश भी एक साथ झुक गये। वंदनान्तर मगधेश्वर और उनके साथ आये हुये सभी परिजन प्रजाजनादि आचार्य श्री के सम्मुख उपदेश श्रवणार्थ बैठे। अतिशयज्ञानी आचार्य श्री धर्मघोष ने संसार और सांसारिक प्रपंचों की निस्सारता एवं क्षण-भंगुरता पर प्रकाश डालते हुए श्रोताओं को यथाशक्ति धर्मपथ पर अग्रसर होने के लिये प्रेरणा प्रदान की। अनेक भव्यों ने आचार्य श्री के उपदेश से प्रभावित होकर अनेक प्रकार के व्रतनियम तथा सावद्य कार्यों से दूर रहने के प्रत्याख्यान ग्रहण किये।

---

* मुनि श्री की डायरी से संकलित।

उपदेश श्रवणानन्तर मगधेश एवं अन्य जनों के नगर की ओर लौट जाने के पश्चात् एक युवावय के मुनि ने आचार्य श्री के सम्मुख उपस्थित हो अभिवादन-अभिवंदनान्तर अति विनम्र स्वर में निवेदन किया—"भगवन् ! यदि आप आज्ञा प्रदान करें तो मैं नगर में मधुकरी हेतु जाऊँ ?"

आचार्य श्री धर्मघोष ने स्नेह-सुधासिक्त स्वर में कहा—"हाँ ! हाँ ! तपस्विन मुने ! आज तुम अपने अष्टम तप का पारणा कर लेना। भिक्षाटन हेतु तुम नगर के सभी वर्गों के गृहस्थों के घरों में भ्रमण करो।"

आचार्य श्री को साञ्जलि शीश झुकाकर "जैसा भगवन् का आदेश" कहते हुए वह कृशकाय घोर तपस्वी मुनि भिक्षाचारी हेतु राजगृह नगर की ओर प्रस्थान करने को ज्यों ही उद्यत हुये, आचार्य श्री धर्मघोष ने अपने शिष्य को सावधान करते हुए कहा—"वत्स ! तुमने घोर तपश्चरण के साथ-साथ सागर के समान अगाध द्वादशांगी में पुनः-पुनः निमज्जन कर आगमों के मर्म को जाना है। निष्काम भावना से किये गये घोर तपश्चरण और पूर्वों के अपरिमेय ज्ञान के परिणामस्वरूप तुम्हें अनेक प्रकार की उच्चकोटि की लब्धियाँ स्वतः ही प्राप्त हो गई हैं। थोड़ी सी असावधानी भी स्खलन का कारण बन सकती है। अतः तुम्हें इन दिनों पूर्णतः सजग रहने की आवश्यकता है।"

"आपकी आज्ञा को अक्षरशः शिरोधार्य करता हूँ भगवन् !" इस विनम्र अभिव्यक्ति के साथ अपने आचार्य देव को नमन कर अति कृशकाय युवक मुनि ने राजगृह नगर की ओर भिक्षार्थ प्रस्थान किया।

मुनि का नाम था आषाढ़भूति। प्रतप्त स्वर्ण के समान अरुणिमा लिये सम्मोहक सुन्दर वर्ण, सुगठित समुन्नत देह यष्टि, तोते की चोंच के समान तीखी नासिका, आजानुभुज, व्यूढोरस्क, वृषस्कन्ध मुनि आषाढ़भूति अचपल गति से पथ पर दृष्टि रखे नगर में प्रवेश कर मधुकरी हेतु प्रमुख एवं गौण पथों में अटन करते हुए एक सुविशाल भवन के समीप पहुँचे।

उनके कर्णरन्ध्रों में अन्तर को आन्दोलित कर देने वाली गीत-ध्वनि गुंजरित हो उठी। विविध वाद्ययंत्रों की सुमधुर ध्वनि की ताल के साथ सधे हुए आरोह-अवरोह के कौशल को प्रकट करने की संगीत की सुमधुर स्वर-लहरियों ने मुनि आषाढ़भूति को हठात् आकर्षित कर लिया। विशाल भवन का मुख्य द्वार पार कर स्फटिकमणि की शिलाओं से निर्मित सोपान मार्ग से वे एक भव्य कक्ष में पहुँचे।

मुनि को अपने कक्ष में प्रविष्ट हुए देख सुरबालाओं के सौन्दर्य को तिरस्कृत करने वाली दो बालिकायें अपने वाद्ययंत्रों को एक ओर रख उठ

खड़ी हुईं। उन दोनों बालिकाओं ने आगे बढ़कर मुनिराज का प्रगाढ़ श्रद्धा-भक्ति के साथ वंदन-नमन किया।

किशोरवय पार कर इन दोनों गन्धर्वकन्योपमा बालाओं ने यौवन से अठखेलियां करना प्रारम्भ कर दिया था। दोनों की वय में दो वर्ष का अन्तर प्रतीत होता था। ज्येष्ठा ने वातावरण में अमृत घोल देने वाले सुमधुर स्वर में अभ्यर्थना की "षट्जीवनिकाय के सच्चे बन्धु! मुनिवर! आपने इस कुटिया को अपने चरणों की रज से पवित्र कर हम सब पर बड़ी कृपा की; अब एषणीय विशुद्ध आहार-पानी ग्रहण कर हमें कृतार्थ कीजिये।"

वीणा की झंकार के अनुरूप अतीव सुमधुर स्वर में दूसरी बाला ने आग्रहपूर्ण प्रार्थना की—"हाँ, मुनिपुंगव! मेरी भगिनी के साथ-साथ मैं भी आपसे प्रार्थना करती हूँ कि कल्पनीय आहार-पानी ग्रहण कर हमारे जीवन का सबसे सुन्दर, महार्घ्य और महत्त्वपूर्ण दिन आज सिद्ध कीजिये। सूक्ष्मातिसूक्ष्म जीवों पर भी दया करने वाले हे दयानिधान! आप इस मानव देह धारिणी बालाओं पर भी अवश्य कृपा करेंगे ऐसी हमारी दृढ़ आशा है।"

रजत निर्मित एक पात्र के ढक्कन को उठाकर बड़ी बालिका ने उसमें से दो बड़े मोदक दोनों हाथों में थामते हुए मुनि आषाढ़भूति से निवेदन किया—"लीजिए करुणाकर! हम पर करुणा कर हमें कृतार्थ कीजिये।" मुनि ने अपनी झोली से भिक्षा-पात्र निकाल कर उस बाला के सम्मुख किया। बड़ी बालिका ने दोनों लड्डू मुनि के पात्र में रखते हुए एक अनिर्वचनीय आनन्द और सन्तोष की श्वास ली। उसके मुख पर उभर कर आँखों के माध्यम से छलकती हुई आनन्द-सागर की लहर से यही प्रकट हो रहा था कि उसे अपने जीवन में बहुत बड़ी सफलता प्राप्त हुई है।

मुनि आषाढ़भूति अपने भिक्षा-पात्र को समेटने ही वाले थे कि उस दूसरी बाला ने भी रजत पात्र से दो और लड्डू अपने हाथ में लेकर आग्रह भरे स्वर से झोली में रखने का उपक्रम करते हुए मुनि से आन्तरिक उद्वेग को वाणी के माध्यम से अभिव्यक्त कर कहा—"भगवन्! अपनी इस अकिञ्चन चरणचेरी को भी लाभान्वित कर कृतार्थ कीजिये।"

बालिका के अन्तःकरण से उद्भूत उद्गारों से मुनि आषाढ़भूति को ऐसा प्रतीत हुआ यदि उसकी आशा निराशा में परिवर्तित हुई तो वह रो देगी, उसका सुकोमल हृदय वज्राघात से प्रताड़ित हो जायेगा।

दया द्रवित मुनि आषाढ़भूति ने उस निर्दोष आहार को ग्रहण करने हेतु अपना भिक्षापात्र उस बाला के समक्ष रखा। उस बाला के मुख पर

हर्षातिरेक की छटा प्रबल वेग से प्रकट हुई और उसने शीघ्रता पूर्वक दोनों लड्डू मुनि के भिक्षा-पात्र में डाल दिए।

भिक्षा ग्रहण करने के अनन्तर मुनि आषाढ़भूति ने उस कक्ष से प्रत्यावर्तन किया। सोपानों से उतरते समय उनके मन में विचार आया—ये मोदक वस्तुतः अतीव उत्तम, सुगन्धित, पौष्टिक पदार्थों से निर्मित हैं। जिस समय उस बाला ने रौप्य निर्मित पात्र के ढक्कन को खोला, तत्काल सम्पूर्ण कक्ष अतीव सम्मोहक, मधुर एवं मादक सुगन्ध से ओतप्रोत हो गया। इनकी सुगन्ध से ही यह अनुमान लगाया जा सकता है कि ये मोदक वस्तुतः अतीव स्वादिष्ट होंगे।

उसी समय उनके अन्तर में एक कौतूहलजनक विचार उत्पन्न हुआ। परमपूज्य आचार्य प्रवर श्री धर्मघोष प्रभु के अत्र विराजित सम्पूर्ण शिष्य वर्ग को इस प्रकार के मोदकों से ही तृप्त किया जाय तो कितना अच्छा हो, किन्तु एषणीय आहार ग्रहण करने वाले श्रमण भिक्षुक के लिये यह सम्भव नहीं कि इतने विशाल श्री संघ को एक ही प्रकार के ऐसे भोज्य पदार्थों से प्रतिलाभित किया जाय। हाँ बिना किसी प्रकार की कामना के मुझे जो वैक्रिय लब्धि प्राप्त हुई है, उसकी लक्ष्यता से मैं इतने मोदक तो अवश्यमेव प्राप्त कर सकता हूँ कि थोड़ा-थोड़ा अंश सभी साधुओं को भोजनकाल में दिया जा सके।

सोपान से उतरते ही उस विशाल प्रासाद के पार्श्वस्थ भाग में बगीचे पर मुनि आषाढ़भूति की दृष्टि पड़ी। वे तत्काल उस उद्यान में प्रविष्ट हुए और एक विशाल वृक्ष की ओट में खड़े होकर क्षणभर में ही एक वयोवृद्ध मुनि का रूप धारण कर लिया।

इस प्रकार रूप-परिवर्तन के अनन्तर मुनि आषाढ़भूति पुनः सोपान-मार्ग से ऊपर चढ़े और उसी कक्ष में प्रविष्ट हुए। एक और मुनि को भिक्षार्थ अपने यहाँ उपस्थित देख उन अनुपम रूप-लावण्य सम्पन्न कन्याओं के हर्ष का पारावार न रहा। पूर्ववत् प्रगाढ़ श्रद्धा-भक्ति के साथ वंदनान्तर, उन दोनों बालाओं ने नवागन्तुक वयोवृद्ध मुनि को उसी रजत पात्र में से दो लड्डुओं की भिक्षा प्रदान की।

अब मुनि के पास आठ लड्डू आ गये थे। मुनि ने मन ही मन विचार किया कि अब आठ लड्डू और प्राप्त कर लिये जायें तो इन लड्डुओं के सुगन्ध-पूर्ण स्वाद का रसास्वादन सभी मुनियों को कराया जा सकेगा। इस प्रकार विचार कर मुनि आषाढ़भूति सोपान मार्ग से उतर कर पुनः उसी उद्यान में पहुँचे और उसी वृक्ष की ओट में खड़े होकर उन्होंने एक प्रौढ़ वय के मुनि के रूप में अपने आपको परिवर्तित किया और पुनः उसी कक्ष में पहुँचे।

सुरबालोपमा वे दोनों रूपवती कन्यायें तीसरे अन्य मुनि को अपने यहाँ उपस्थित देख परम प्रमुदित हुईं। उसी प्रकार भक्ति, श्रद्धा और निष्ठा के साथ वंदनान्तर उन दोनों कन्याओं ने मुनि श्री को उसी रजत पात्र में से लड्डुओं की भिक्षा प्रदान की।

भिक्षा पात्र लिये मुनि पुनः उसी वृक्ष की ओट में पहुँचे और इस बार उन्होंने कामदेव को भी तिरस्कृत कर देने वाले अति कमनीय किशोर मुनि का रूप धारण किया। भिक्षा पटलक में रिक्त पात्र को ऊपर रख वे पुनः उसी कक्ष की ओर प्रस्थित हुए।

पुनः-पुनः इस प्रकार इच्छानुरूप रूप-परिवर्तन की क्रिया को उन दोनों कन्याओं का पिता, महान् मगध साम्राज्य का नाट्य विद्यानिष्णात राजकीय सूत्रधार देख रहा था। वह तत्काल अपनी पुत्रियों के कक्ष में पहुँचा और उसने अपनी दोनों पुत्रियों को संक्षेप में आदेश दिया कि येन-केन प्रकारेण आगन्तुक मुनि को अपने मोहपाश में इस प्रकार आबद्ध करें कि मेरे साथ ही साथ तुम दोनों के भाग्य भी पराकाष्ठा को स्पर्श करने लगें। यह तुम्हारे पुत्र-विहीन पिता की अटल आज्ञा है। शेष सब कुछ कार्यसिद्धि के पश्चात् शनैः शनैः ज्ञात हो जायेगा।

दोनों बालाओं ने साञ्जलि शीश झुकाकर कहा—"पितृदेव ! आपकी आज्ञा का अक्षरशः पालन करने का प्रयास करेंगी और जो एतद्विषयक कला-कौशल आज तक हमने सीखा है, उसका प्रयोग करने में किसी प्रकार की त्रुटि नहीं होगी।"

राजकीय नाट्यमञ्च के सूत्रधार के जाते ही मुनि आषाढ़भूति अति कमनीय किशोरवय के मुनि का रूप धारण किये हुए कक्ष में प्रविष्ट हुए। दोनों बालाओं ने मुनि के मन को जीतने के लिये प्राण-पण से सभी प्रयास किये।

मुनि केवल मोदक ग्रहण करने के लिए ही चौथी बार उस कक्ष में प्रविष्ट हुए थे। उन्होंने उन दोनों बालाओं की मन को विचलित कर देने वाली भाव-भंगियों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया, न उनके तपःपूत अन्तर मन में किसी प्रकार के विकार को प्रवेश करने का अवकाश ही प्राप्त हुआ। भिक्षा प्रदान करने के स्थान पर कटाक्ष-निक्षेप और कामोत्तेजक भंगियों के प्रयोग को देखकर मुनि आषाढ़भूति ने मुख मोड़ा और सोपान की ओर चल पड़े।

ज्येष्ठा तड़ित की चमक के समान उनके सम्मुख आई और हठात् धड़ाम से निश्चेष्ट हो द्वार पर गिर गई। कनिष्ठा बाला ने त्वरित गति से आगे बढ़कर अपनी अग्रजा के मस्तक को अपने अङ्क में रखकर व्यजन डुलाना प्रारम्भ किया। वह कभी अपनी निश्चेष्ट पड़ी अग्रजा के मुख की ओर तो कभी कामदेवोपम किशोर मुनि के मुख की ओर देखने लगी।

इस प्रकार पत्थर को भी पानी कर देने वाले अपने करुणा भरे त्रिया-चरित्र के अनन्तर उसने अपना मस्तक मुनि के चरणों के समक्ष आंगन पर रखते हुए वीणा की झंकार तुल्य सुमधुर स्वर में कहना प्रारम्भ किया—"हे कृपानाथ! बिना कुछ ग्रहण किए ही आप यहाँ से लौटने लगे इससे मेरी अग्रजा के हृदय पर गहरा आघात लगा है। यह मेरी बड़ी बहिन जहाँ एक ओर आदर्श गुण-ग्राहिका है, वहीं दूसरी ओर अत्यन्त भावुक भी है। मधुर स्वर से यदि आप सम्बोधित नहीं करेंगे, तो मुझे आशंका है कि देह-पिंजरे को तोड़ इसके प्राण-पक्षी किसी अदृश्य लोक की ओर प्रयाण कर देंगे। स्वामिन्! अन्तरमन के आहत की बात वही जानता है जिसका अन्तरमन आहत हो चुका हो। हे पुरुषोत्तम! वस्तुस्थिति यह है कि मेरी यह ज्येष्ठा सहोदरा आपको अन्तर मन से अपना सर्वस्व प्रथम दृष्टि में ही समर्पित कर चुकी है। यदि आप मृत सञ्जीवनी-सुधा स्वरूपा अपनी सुमधुर वाणी से इसे तत्काल आश्वस्त न कर देंगे तो यह इसी क्षण इहलीला समाप्त कर देगी।

उस कनिष्ठा बाला ने एक बार और अन्तःस्तल भेदिनी अद्भुत दृष्टि से मुनि की ओर देखते हुए कहा—"इस प्रकार चींटी की भी रक्षा के लिए सदा सजग रहने वाले आप दो अबलाओं के अकाल कालकवलित होने के कारण बन जायेंगे।"

इस प्रकार अपने सधे हुए कटाक्षों की अनवरत वर्षा के अनन्तर उस किशोरी ने अमोघास्त्र-रुदन का आश्रय लिया। वह फफक-फफक कर रोने लगी—सुबकियां भरने लगी।

सुदीर्घ काल से अष्टम तप करते चले आ रहे आगममर्मज्ञ, तपस्वी मुनि आषाढ़भूति की मनोभूमि पर अब तक के इन बालाओं के त्रियाचरित्र का किंचित् मात्र भी प्रभाव नहीं पड़ा, किन्तु इस अमोघास्त्र के प्रहार से उनका अजेय मनोबल हिल उठा, और "तमाशा खुद न बन जाना तमाशा देखने वाले" के अनुसार कौतुक करने के इच्छुक वे मुनि स्वयं कौतुक के जाल में फँस गए। उन्होंने अब कभी अचेतन अवस्था में पड़ी हुई ज्येष्ठा बाला के सुकोमल मुख-कमल की ओर तो कभी अनवरत अश्रुधाराओं की गंगा-यमुना प्रवाहित करती हुई कनिष्ठ बाला की सुगठित, सुडौल एवं सम्मोहक कदलीदल तुल्य देहयष्टि

के अंग-प्रत्यंग की ओर दृष्टि-निपात करना प्रारम्भ किया। मुनि को अनुभव हुआ कि उनका मन मुट्ठी से निकल कर भागता चला जा रहा है। यहाँ एक भक्त कवि का निम्नांकित श्लोक स्मृति-पटल पर उतर रहा है—

स्नेहं परित्यज्य निपीय धूम्रं, कान्ताकचामोक्षपथं प्रपन्नाः।
नितम्बसङ्गात् पुनरेव बद्धा, अहो दुरन्ता विषयेषु सक्तिः॥

अर्थात्—स्नेह (घी, तेल आदि की चिकनाहट) का परित्याग कर धूम्र का सेवन कर मानिनी के सिर के बाल मोक्ष के पथ की ओर बढ़ गये अथवा मुक्त हो गये, किन्तु नितम्बों के साथ संग होते ही पुनः वे सिर के लम्बे-लम्बे बाल पुनः बन्धन में डाल दिये गये—पुनः बांध दिये गये। हाय! विषयों में आसक्ति वस्तुतः अतीव दुःखान्त कारक है।

वर्षों की विशुद्ध संयम-साधना, ज्ञानाराधना, तपश्चरण और समर्थ गुरु के कृपा-प्रसाद के परिणाम स्वरूप जिन आषाढ़भूति मुनि ने अपने आत्मदेव को प्रचण्ड अग्नि में पुनः-पुनः प्रतप्त स्वर्ण के समान समुज्ज्वल बना लिया था, वे ही कुछ ही क्षणों के कामिनी-संसर्ग में सुपथ से स्खलित होने लगे। विरक्ति के अथाह सागर में डूबा उनका मन कामिनियों के साथ कुछ ही क्षण के सहवास-संसर्ग के परिणामस्वरूप पुनः वासना के विषमय पङ्क की ओर उन्मुख हो गया।

उन दोनों बालाओं के सुनियोजित सम्मोहक जाल में अन्ततोगत्वा मुनि आषाढ़भूति ऐसे फँसे कि जिस प्रकार पतंगा दीपक की लौ पर झंपापात करने को उद्विग्न हो उठता है, व्यग्र हो उठता है, ठीक उसी प्रकार वे भी अहर्निश प्रतिपल उन दोनों किशोरियों के सहवास में रहने हेतु उत्कट रूपेण लालायित हो उठे।

उन दोनों ललनाओं के साथ मुनि आषाढ़भूति का आलाप-संलाप लगभग अर्ध घटिका पर्यन्त चला और वे उन दोनों ललनाओं के वाक्जाल में पूरी तरह आबद्ध हो गये। यह क्रम कुछ लम्बे समय तक चला किन्तु हठात् मुनि आषाढ़-भूति को अपने गुरुदेव का स्मरण हो आया। उन्होंने उन दोनों किशोरियों को आश्वस्त करते हुए कहा—"मैं अपने परमोपकारी गुरु आचार्य श्री धर्मघोष से पुनः गृहस्थधर्म में प्रविष्ट होने की आज्ञा प्राप्त कर शीघ्र ही लौट रहा हूँ। तुम मन में किसी प्रकार की आशंका मत करो। मैंने अपने अन्तर मन में भली-भांति सोच-विचार कर दृढ़ निश्चय कर लिया है कि अब मैं तुम दोनों के साथ अपने अवशिष्ट जीवन को व्यतीत करूँगा।"

आषाढ़भूति की इस आश्वासन भरी बात को सुनने के अनन्तर भी उन दोनों किशोरियों के नेत्रों से गंगा-यमुना प्रवाहित होने लगी। वस्तुतः यह त्रियाचरित्र वह अमोघ रामबाण था, जो लक्ष्यवेध के अनन्तर पुनः तूणीर में आ प्रविष्ट होता है, इस अमोघास्त्र के प्रहार से मुनि विह्वल हो उठे। और "मेरे वचन कभी अन्यथा नहीं होते, गुरुदेव से अनुमति प्राप्त कर मैं बिना किसी प्रकार का विलम्ब किये लौट आऊँगा" कहते हुए मुनि आषाढ़भूति अपनी झोली उठा, द्रुतगति से उस उद्यान की ओर लौट गये जहाँ आचार्य धर्मघोष अपने शिष्य संघ के साथ विराजमान थे।

अपने गुरुदेव के समक्ष पहुँचते ही मुनि आषाढ़भूति ने उन्हें भक्ति सहित बन्दन किया और साञ्जलि शीश झुका उनके समक्ष खड़े हो गये।

अतिशय ज्ञानी गुरु ने मुनि आषाढ़भूति को सम्बोधित करते हुए कहा— वत्स! "कर्मणो गहना गति" अन्यथा तुम्हारे जैसा क्रियानिष्ठ, तपोनिष्ठ और वैराग्य के प्रगाढ़ रंग में बाह्याभ्यन्तर पूर्णरूपेण श्रमणवर की इस प्रकार की गति नहीं होती। मैं देख रहा हूँ तुम अवश्य जाओगे, तुमने जाने की अन्तरमन में ठान ली है, "जहा सुहं देवाणुपिया" किन्तु उन दोनों बालाओं के साथ परिणय-सूत्र में बंधने से पूर्व उन दोनों से इस बात की प्रतिज्ञा करो कि उस घर में मदिरा और आमिष का कभी प्रयोग नहीं किया जायेगा, और जिस दिन मद्य अथवा मांस उस घर में होगा, उसी दिन तुम पुनः उसका सदा के लिये परित्याग कर श्रमणत्व अंगीकार कर लोगे।

"यथाज्ञापयति देव!" कहते हुए विधिसहित मुनि आषाढ़भूति ने भिक्षा-पात्र, रजोहरण और मुखवस्त्रिका गुरु के समक्ष रखकर मगधेश की नाट्यशाला के सूत्रधार के भव्य भवन की ओर प्रस्थान किया। वहाँ पहुँचते ही आषाढ़भूति ने अपना प्रण रखा जिसे सबने अक्षरशः स्वीकार कर लिया। तदनन्तर सूत्रधार के प्रासाद में आषाढ़भूति का बड़ा स्वागत हुआ। तेल, अभ्यंगादि के मर्दन के अनन्तर उन्हें सुगन्धित जल से स्नान करवाया गया। सोने के तारों के साथ रेशम के धागों से बने बहुमूल्य वस्त्रों एवं अनमोल मणिमाणिक्यों से जटित आभरणों से आषाढ़भूति अलंकृत किये गये। शीघ्र ही शुभ घड़ी निश्चित की गई और उसमें नाट्यशाला के सूत्रधार ने अपनी दोनों कन्याओं का विवाह आषाढ़भूति के साथ कर दिया। □ [क्रमशः]

□□
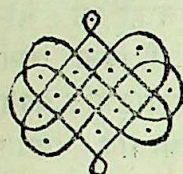
चिन्तन के अभाव में धार्मिक क्रियायें कितनी प्रभावकारी ?

□ श्री चंचलमल चौरड़िया

आज भौतिक विकास के साथ-साथ बाह्य रूप से धर्म का प्रचार-प्रसार बढ़ता हुआ प्रतीत होता है। जितने धार्मिक आयोजन, सम्मेलन, शिविर, धर्म-यात्रायें, सत्साहित्य का प्रकाशन, तपस्यायें, दीक्षाएँ एवं सद्गुरुओं का जन-सम्पर्क आज हो रहा है, उतना शायद पहले नहीं था। सैकड़ों विद्यार्थी धार्मिक विषयों पर नवीन शोध करने में व्यस्त हैं एवं हजारों विद्वान् अपनी लेखनी द्वारा जन-जन को आध्यात्मिक प्रेरणा दे रहे हैं। हजारों स्वाध्यायी एवं प्रचारक धर्म-प्रचार में अपने अमूल्य समय का भोग दे रहे हैं। आज धर्म-शास्त्रों का विभिन्न भाषाओं में अनुवाद हो जाने से जनसाधारण को उसका मर्म एवं रहस्य समझने के अधिक अवसर उपलब्ध हो रहे हैं। पहले चाहते हुए भी आगम पढ़ने व समझने का सौभाग्य सब को प्राप्त नहीं होता था।

वर्तमान में धर्म एवं सिद्धान्तों की जानकारी, सीमित सम्प्रदाय व क्षेत्रों से बढ़कर अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक फैल रही है। मानव की बुद्धि, तर्क व चिन्तन का विकास हुआ है। सत्य को स्वीकारने में उसका दुराग्रह कम हुआ है। वह प्रत्येक तथ्य को अपनी अल्प बुद्धि के अनुसार तर्क की कसौटी पर तोल कर अपनी मान्यता एवं धारणा बनाने का प्रयास करता है। उसकी श्रद्धा एवं विश्वास का यही मापदण्ड बनता जा रहा है। सम्यग् ज्ञान एवं श्रद्धा के अभाव में वह चल अवश्य रहा है परन्तु उसको अपने लक्ष्य का भान नहीं है, फलतः उसके भटकने की संभावनायें बढ़ जाती हैं। **इसी कारण धार्मिक क्षेत्र में इतना सब कुछ होने के बावजूद जीवन-मूल्यों का जो ह्रास हो रहा है, धार्मिक क्षेत्र में कट्टरता, शिथिलता, साम्प्रदायिकता, अन्धानुकरण, मूल सिद्धान्तों के विरुद्ध आचरण बढ़ रहा है जिससे धर्म से लोगों का विश्वास हटता जा रहा है। अधिकांश समाज धर्म के मूल सिद्धान्तों से भटक रहा है। हमारी लम्बे समय से नियमित साधना एवं धर्म क्रियाओं के बावजूद भी हमारे जीवन में अपेक्षित परिवर्तन बहुत कम देखने को मिलता है।** जिस उद्देश्य के लिए हम सब प्रयत्नशील हैं उसे

सही रूप से प्राप्त नहीं कर पा रहे हैं। इन सबके पीछे कुछ न कुछ कारण अवश्य हैं जिन पर सम्यग् चिन्तन आवश्यक है।

किसी कवि ने अपने भजन में कितनी मार्मिक बात कही है ---

जीवन में शान्ति न जो लाता, वह धर्म नहीं बस धोखा है,
जीवन में क्रान्ति न जो लाता, वह धर्म नहीं बस धोखा है।

जो व्यापारी लाखों रुपये लगाकर व्यापार करता है एवं लाभ कमाने के स्थान पर अपनी मूल पूंजी भी गंवा दे तो वह सफल व्यापारी नहीं कहला सकता। हम भोजन खावें और भूख नहीं मिटे, पानी पीवें और प्यास नहीं मिटे तो हमें समझना होगा कि हम भोजन एवं पानी के रूप में अखाद्य तथा अन्य द्रव्य का सेवन कर रहे हैं।

इसी प्रकार हम धार्मिक साधना करें एवं जीवन में बदलाव न आवे, सद्गुणों एवं सद्प्रवृत्तियों का जीवन में विकास न हो, संतोष, सरलता, शान्ति, समता का प्रादुर्भाव न हो, विषय-कषाय घटने के स्थान पर बढ़ने लगें तो हमें स्वीकारना होगा कि हमारी साधना पद्धति के मूल में भूल है एवं ऐसी धार्मिक क्रियाएँ व आचरण से धर्म के नाम पर हम अपने आपको व दूसरों को धोखा दे रहे हैं।

यदि हमारी दुकान में आय बराबर न हो तो हम चिन्तित होते हैं। उसका कारण ढूँढ़ने का प्रयास करते हैं। हम विचार करते हैं कहीं हमारे पास ग्राहकों की आवश्यकतानुसार उचित मूल्य पर माल का अभाव तो नहीं है, कहीं दुकान एकान्त में तो नहीं है, इत्यादि अनेक प्रश्न हमारे सामने प्रतिदिन खड़े होते हैं एवं हम आय बढ़ाने के स्रोतों का पता लगा उन्हें क्रियान्वित करते हैं।

यदि हमारा बच्चा किसी कक्षा में बार-बार अनुत्तीर्ण होता रहे तो उसको बुद्धिमान नहीं कह सकते। इसी प्रकार दीर्घकाल की साधना के बाद भी जीवन में परिवर्तन न आवे तो साधना-पद्धति की भूल को सुधारना होगा। साधना की नियमित समीक्षा करनी होगी।

आश्चर्य तो इस बात का है कि धार्मिक-क्षेत्र में हमारा दृष्टिकोण एवं मापदण्ड दूसरा ही होता है। ऐसा प्रतीत होता है कि धार्मिक क्रियाएँ तो सद् गुरुओं की प्रेरणा एवं सुसंस्कार होने से परम्परागत हमको करनी पड़ती हैं। उसमें जितना उल्लास, रुचि, श्रद्धा, विश्वास-पात्रता होनी चाहिए वह नहीं है, अतः वर्षों की धार्मिक क्रियाओं के पश्चात् हम इस बात का पता तक नहीं करते कि हमारी साधना का लक्ष्य क्या है ? उसमें कितना आगे बढ़े ? अगर नहीं बढ़े तो क्यों ? जीवन में कितने सद्गुणों का विकास हुआ ? जीवन कितना निर्व्यसनी

एवं संयमित बना। राग-द्वेष एवं विषय-कषायों में कितनी कमी आयी ? साधना प्रारम्भ करने के बाद जीवन में समता, सरलता, संतोष एवं शान्ति में कितनी अभिवृद्धि हुई ? हम अपने स्वभाव के कितने नजदीक आये ?

यदि इन प्रश्नों के समाधानों से हम संतुष्ट हैं तो हमारा जीवन स्व-पर कल्याण के मार्ग में आगे बढ़ सकेगा अन्यथा धार्मिक अनुष्ठानों में हमारे समय, श्रम एवं साधनों का पूर्णरूपेण संतोषजनक उपयोग नहीं कहा जा सकता। साधना एवं धार्मिक क्रियायें हमें भार रूप लगेंगी। उसमें जितना आनन्द, रस, प्रमोद एवं उत्साह होना चाहिये, नहीं होगा। जो बाह्य क्रियायें अन्तर की प्रेरणा जागृत करने के लिए की जा रही हैं वे बाहर तक ही सीमित रह जायेंगी। अतः आवश्यक है कि धार्मिक साधना, सम्यग् चिन्तन पूर्ण हो। उसमें हमारा मन भी जुड़े—जितनी वाणी और काया जुड़ती हैं, अन्यथा तन से सामायिक करते हुए भी मन में समता न हो, हाथों में माला का मनका घुमाते हुए मन अन्य कार्यों में व्यस्त हो, मुँह से भले ही शास्त्रों का उच्चारण करें, जब तक उस पर मनोयोग-पूर्ण चिन्तन नहीं चलेगा, जीवन में उसका प्रभाव नहीं पड़ेगा तथा आवश्यक बदलाव आना कठिन होगा। विकास करना हमारा स्वभाव है एवं उसके लिए अपने लक्ष्य की तरफ चलते ही रहना होगा।

आगे बढ़ने के लिए आवश्यक है—या तो हमें स्वयं को मार्ग का ज्ञान हो अथवा जिसके पीछे चल रहे हैं वह सही पथ प्रदर्शक हो। यदि न तो हमें मार्ग का ज्ञान है और न हमें सच्चे मार्गदर्शकों पर श्रद्धा एवं विश्वास है तो अपने लक्ष्य पर पहुँचना हमारे लिए कठिन होगा। अपवाद के रूप में धार्मिक साधना से, बिना विशेष ज्ञान परिवर्तन करने वाले साधक भी मिल सकते हैं परन्तु उनका प्रतिशत नगण्य है। उनका जीवन अपने आराध्य के प्रति पूर्ण रूप से समर्पित होता है, तर्क का जहां कोई स्थान नहीं। वे तो आगम एवं गुरुवाणी को विनय एवं श्रद्धापूर्वक स्वीकारते हैं। उनके स्वभाव से सरलता, संतोष, करुणा, निस्पृहता जैसे भाव, सुसंस्कारों एवं सत्संगति से अधिक पाये जाते हैं तब ही उनकी श्रद्धा दृढ़ होती है। वे भले ही ज्ञानी न हों फिर भी सदैव सजग व सतर्क रहते हुए अपनी कमजोरियों का चिन्तन कर उन्हें दूर करने का प्रयास करते हैं।

परन्तु आज के युग में जन-साधारण को सच्चे गुरु एवं मार्गदर्शक का सान्निध्य मिलना अत्यन्त कठिन है। यदि पथ प्रदर्शक ही भटक जाये तो स्थिति और भी विकट हो जाती है और आज ऐसी स्थिति प्रायः सामान्य हो गई है।

साधना का मूल उद्देश्य विषय एवं कषायों में मन्दता लाना है परन्तु प्रायः ऐसा अनुभव किया जा रहा है कि आज हमारी धार्मिक क्रियायें, आयोजन, सेवा-दान के कार्य बिना चिन्तन जन-साधारण की वाहवाही प्राप्त करने तक

सीमित हो रहे हैं जिससे कभी-कभी विषय-कषाय घटने के स्थान पर बढ़ रहे हैं। इस बात पर हमारा ध्यान ही नहीं जा रहा है, हमें हमारे मूल सिद्धान्तों का ज्ञान तक नहीं है फिर उन पर सम्यग् श्रद्धा, चिन्तन, आचरण, समीक्षा कैसे हो ?

डाक्टर बनने के लिए डाक्टरी का और इन्जीनियर बनने के लिए इंजीनियरिंग का अध्ययन आवश्यक है। ठीक उसी प्रकार साधक बनने अथवा साधना करने से पूर्व उसके उद्देश्य, तरीकों आदि का ज्ञान आवश्यक है। ज्ञान से स्वाध्याय एवं चिन्तन की तरफ हमारे कदम बढ़ते हैं, चिन्तन से विवेक जागृत होता है, अन्धानुकरण रुकता है एवं लक्ष्य की तरफ बढ़ने में मिलने वाली अनुभूति का आभास होता है।

चिन्तन से हमारा दृष्टिकोण एकपक्षीय न होकर यथार्थवादी होता है। साधना में एकाग्रता, दृढ़ता एवं तल्लीनता आती है। चिन्तन के साथ जो भी क्रियाएँ की जायेंगी उनमें दिखावा कम होगा। साधना के सही स्वरूप का खयाल रहेगा एवं आवश्यक सावधानी हेतु सदैव सजगता रहेगी। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में आध्यात्मिकता को महत्त्व मिलेगा एवं हमारे जीवन में निश्चित रूप से बदलाव आवेगा। हमारी प्राथमिकतायें एवं मापदण्ड बदलेंगे। भौतिक प्रवृत्तियों में रुचि व आकर्षण कम होगा। जीवन में समता का विकास होगा जिससे मन अनुकूल एवं प्रतिकूल वातावरण में विचलित नहीं होगा। हमारा लक्ष्य आत्म-शान्ति की, किसी भी मूल्य पर रक्षा करने का होगा। हम संसार में रहते हुए भी अपने सभी कर्तव्यों एवं जिम्मेदारियों का निर्वाह करते हुए भी उसमें आसक्त होने से बचने हेतु प्रयत्नशील रहेंगे।

प्रश्न खड़ा होता है जब चिन्तन एवं समीक्षा इतनी आवश्यक है तो धार्मिक क्षेत्र में कदम बढ़ाने वाले साधक उसकी उपेक्षा क्यों करते हैं ? **रूढ़िगत द्रव्य साधना मात्र से उन्हें सन्तुष्टि कैसे मिलती है ? कभी सद्गुरुओं की सेवा में उपस्थित हो अपनी वस्तु स्थिति बतलाने का प्रयास क्यों नहीं करते ? कहीं सद्गुरु ऐसा तो नहीं सोचते—जैसा करते हैं, करने दो, नहीं करने वालों से तो अच्छे हैं। साधना से उनका तन और वाणी तो स्थिर हुई है और धीरे-धीरे मन भी स्थिर हो जायेगा। अगर उन्हें अधिक प्रेरणा दी गयी तो वे धार्मिक-स्थलों में आना ही छोड़ देंगे अथवा जिन विषय-कषाय को कम करने की प्रेरणा देनी चाहिए उनसे वे स्वयं अछूते नहीं हैं ?**

वर्तमान में अधिकांश साधकों में सम्यग्ज्ञान का अभाव है एवं उनकी साधना सद्गुरुओं की प्रेरणा एवं मार्गदर्शन पर आधारित रहती है। प्रायः द्रव्य साधना की ही प्रेरणा दी जाती है। विषय-कषाय को कम करने के लिए जितनी निरन्तर नियमित प्रेरणा देनी चाहिए, संकल्प कराने चाहिए उस तरफ उपेक्षा

हो रही है। विषय-कषाय की मंदता के बिना द्रव्य साधना कितनी प्रभावकारी होगी, इस पर चिन्तन नहीं हो रहा है। अतः हम मूल को छोड़ फूल-पत्तों के सींचन में अपना श्रम कर रहे हैं।

विषय-कषाय की मंदता एवं आध्यात्मिक आनन्द का निश्चित मापदण्ड न होने से, बाह्य साधना की गणित से हम अपनी साधना का मूल्यांकन करते हैं। हमने कितनी मालायें फेरीं, कितने घण्टों का स्वाध्याय किया, कितनी सामायिक, दया-पौषध एवं अन्य व्रत पचक्खाण (प्रत्याख्यान) तथा तपस्याएँ कीं? हमारा सारा प्रयास बाह्य क्रियाओं को बढ़ा-चढ़ा कर बताने एवं प्रचार-प्रसार करने का हो रहा है। हमने क्रोध को कितना जीता, मान एवं माया पर कितनी विजय पायी एवं लोभ को कितना वश में किया, प्रतिकूल एवं अनुकूल परिस्थितियों में कितना समभाव रहा, हमने सुकृत की कितनी अनुमोदना की आदि-आदि बातों की समीक्षा ही नहीं होती। हमें अपने रूढ़िगत मापदण्डों को बदलना होगा। हम अपने निज स्वभाव के कितना निकट आये, उसको हमारे अलावा वर्तमान में कोई नहीं जान सकता। हम ही हमारे परीक्षक, निरीक्षक एवं सच्चे समीक्षक हैं। जब तक हम (साधक अथवा प्रेरक) स्वयं के प्रति ईमानदार न होंगे एवं साधना की प्राथमिकता का निश्चय न कर पावेंगे तो मूल से भटक बाह्य क्रिया-काण्डों में ही उलझ जावेंगे। जब तक मूल सुरक्षित है, बाह्य साधना उपयोगी हो सकती है, परन्तु मूल से हटने पर उसका महत्त्व नगण्य हो जाता है। जिस प्रकार अंक के साथ शून्य होने से उसका महत्त्व अधिक बढ़ जाता है परन्तु बिना अंक शून्य का कितना महत्त्व?

इसी प्रकार जो साधना एवं क्रियाएँ हमें अपने निज स्वभाव में लाने में सहयोगी हैं, हमारे लिए उपयोगी हैं और जो विभाव में ले जाने वाली हैं, हमारे लिए लाभदायक नहीं हो सकतीं। साधना एवं धार्मिक क्रियाओं को करते समय इस मापपण्ड को ध्यान में रखना होगा। जो साधना आस्रव को रोक संवर एवं निर्जरा में सहयोगी है, हमारे लिए करणीय है, अन्यथा नहीं।

परन्तु आज हमारी दृष्टि बदल गयी है, धार्मिक अनुष्ठानों से हमें कितना आदर-सत्कार, मान-प्रतिष्ठा एवं अहम् तुष्टीकरण होता है, वह सफलता का मापदण्ड बनता जा रहा है। इसी कारण जब कभी पर्युषणों एवं चातुर्मास की सफलता का लेखा-जोखा प्रस्तुत किया जाता है तो व्रत-प्रत्याख्यान एवं तपस्याओं के आंकड़े प्रस्तुत किये जाते हैं। कितने व्यक्तियों का जीवन बदला, जीवन में नैतिकता एवं प्रामाणिकता का संकल्प लिया, मान एवं माया से बचने का निश्चय किया, क्रोध त्यागने एवं लोभ को वश में करने का दृढ़ मनोबल दिखाया, पूर्वाग्रहों को छोड़ आध्यात्मिकता से जुड़े आंकड़े शायद ही कहीं देखने को मिलते

हैं। इसका कारण हमने उन मूल सिद्धान्तों को जितना महत्त्व देना चाहिए, नहीं दिया एवं द्रव्य साधना को ही सब कुछ मान संतुष्ट होने की भूल कर रहे हैं।

अतः साधना के साथ सम्यक् चिन्तन आवश्यक है। उसके अभाव में हम अपने लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकते। चिन्तन के अभाव में साधना के लिए खर्च किया गया समय एवं श्रम आशा के अनुरूप उपयोगी नहीं होगा। साधना के साथ चिन्तन जुड़ जाने से उसका लाभ कई गुना बढ़ जाता है। अतः साधना के साथ चिन्तन की अनिवार्यता समझें एवं करें।

—चौरड़िया भवन,
जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर

□ □ □

१०१ रुपये में १०८ पुस्तकें प्राप्त करें

अ. भा. जैन विद्वत् परिषद् द्वारा प्रारम्भ की गई "ज्ञान प्रसार पुस्तक-माला" के अन्तर्गत अब तक ५७ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। कुल १०८ पुस्तकें प्रकाशित करने की योजना है। प्रत्येक पुस्तक का फुटकर मूल्य दो रुपया है पर जो व्यक्ति या संस्था १०१ रुपये भेजकर ट्रेक्ट साहित्य सदस्य बन जायेंगे, उन्हें १०८ पुस्तकें निःशुल्क प्रदान की जायेंगी।

तपस्या, विवाह, जयन्ती, पुण्यतिथि पर प्रभावना के रूप में वितरित करने के लिए १०० या अधिक पुस्तकें खरीदने पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायेगा।

कृपया १०१ रुपये मनिआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा 'अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद्' के नाम सी-२३५ ए, तिलक नगर, जयपुर-३०२ ००४ के पते पर भेजें।

—डॉ. नरेन्द्र भानावत
सम्पादक-संयोजक

सम्यक्ज्ञान

□ प्रस्तोता : श्री पी. एम. चौरड़िया

[१]

(१) **प्रश्न**—ज्ञान किसे कहते हैं?

उत्तर—आत्मा अपनी जिस शक्ति से पदार्थों का बोध करती है, उसे ज्ञान कहा जाता है।

(२) **प्रश्न**—सम्यक्ज्ञान की व्याख्या शास्त्रों में किस प्रकार की गई है?

उत्तर—जीव आदि पदार्थों में जो प्रमाणों, नयों व निक्षेपों द्वारा यथार्थ रूप से निश्चय करावें उसे सम्यक्ज्ञान कहते हैं।

(३) **प्रश्न**—सम्यक्ज्ञान का दूसरा नाम क्या है?

उत्तर—आत्मज्ञान।

[२]

(१) **प्रश्न**—दर्शन शास्त्र में सम्यक् ज्ञान को क्या कहा गया है?

उत्तर—प्रमाण

(२) **प्रश्न**—कौन से दो ज्ञान इन्द्रिय और मन के आश्रित हैं?

उत्तर—१. मति ज्ञान २. श्रुत ज्ञान

(३) **प्रश्न**—मति ज्ञान के पर्यायवाची शब्द बताइये?

उत्तर—ईहा, विमर्श, मार्गणा, गवेषणा, संज्ञा, स्मृति, मति, प्रज्ञा आदि पर्यायवाची शब्द हैं। वाचक उमास्वाति ने मति ज्ञान के लिए निम्नलिखित शब्दों का प्रयोग किया है—मति, स्मृति, संज्ञा, चिन्ता और आभिनिबोधिक।

[३]

(१) **प्रश्न**—कौन-कौन से ज्ञान आत्मा से उत्पन्न होते हैं?

उत्तर—१. अवधि ज्ञान २. मनःपर्यय ज्ञान ३. केवल ज्ञान

(२) **प्रश्न**—कौन-कौन से ज्ञान ऐसे हैं जो कभी मिथ्या नहीं हो सकते ?

उत्तर—१. मनःपर्ययज्ञान २. केवलज्ञान

(३) **प्रश्न**—मति एवं श्रुतज्ञान परोक्ष क्यों माने जाते हैं ?

उत्तर—इन दोनों में ज्ञान-स्वभाव आत्मा को स्वेतर-इन्द्रिय तथा मन की अपेक्षा होती है। अतः ये दोनों पराधीन होने से परोक्ष हैं।

[४]

(१) **प्रश्न**—ज्ञान समान न आन जगत में, सुख को कारण ।
इह परमामृत जन्म-जरा, मृतु रोग-निवारण ।।

उपर्युक्त पद्य में कवि ने ज्ञान के सम्बन्ध में क्या कहा है ?

उत्तर—इस जगत् में ज्ञान के समान अन्य कोई भी पदार्थ सुख देने वाला नहीं है। यह ज्ञान जन्म, जरा और मृत्यु रूपी रोग को दूर करने के लिए परम अमृत है, सर्वोत्कृष्ट औषधि है।

(२) **प्रश्न**—सुख-दुःख दोनों वस्तु है, ज्ञानी के घट मांहि ।
गिरि-सर दीसे मुकुर में, भार भींजता नांहि ।।

उपर्युक्त पद्य में कवि ने क्या कहा है ?

उत्तर—जैसे दर्पण में पर्वत व तालाब दोनों झलकते हैं फिर भी वह न तो भार का अनुभव करता है और न तनिक मात्र भी भीगता है। ऐसे ही ज्ञानी सुख-दुःख में रहकर भी उससे अपने को भिन्न रखते हैं। मरणान्तिक कष्टों में भी वे दुःखी नहीं होते, कारण आसक्ति न होने से वे मरने से पूर्व ही त्याग भाव से समाधि को प्राप्त कर लेते हैं।

(३) **प्रश्न**—कर्म पुद्गल रूप है, जीव रूप है ज्ञान ।
दो मिलकर बहुरूप हैं, बिछड्या पद-निरवाण ।।

उपर्युक्त दोहे का अर्थ बताइये ।

उत्तर—कर्म पुद्गल है तथा हमारी आत्मा ज्ञानमय है। जब कर्म रूपी पुद्गल-आत्म प्रदेश से चिपक जाते हैं, तो यह आत्मा ४ गति, ८४ लाख योनियों में चक्कर काटती फिरती है और जब आत्मा ज्ञान, दर्शन, चारित्र एवं तप की सम्यक् साधना करती है तो पुद्गल रूपी कर्म आत्म-प्रदेश से अलग हो जाते हैं और आत्मा मोक्ष को प्राप्त कर लेती है।

[५]

(१) **प्रश्न**—किस आत्मा में सम्यक्ज्ञान निवास करता है ?

उत्तर—जिस आत्मा में सम्यक्दर्शन की ज्योति प्रज्वलित है, उस आत्मा का ज्ञान सम्यक् ज्ञान है।

(२) **प्रश्न**—जैन दर्शन की दृष्टि से आत्मा और ज्ञान में क्या सम्बन्ध है ?

उत्तर—आत्मा और ज्ञान में गुण-गुणी सम्बन्ध है। गुणी आत्मा है और गुण ज्ञान है। आत्मा ज्ञाता है और संसार के जितने भी पदार्थ हैं वे सब ज्ञेय हैं। ज्ञाता अपनी जिस शक्ति से ज्ञेय को जानता है, वस्तुतः वही ज्ञान है।

(३) **प्रश्न**—ज्ञान-प्राप्ति का सरल साधन क्या है ?

उत्तर—जिज्ञासा।

[६]

(१) **प्रश्न**—अवधि ज्ञान की सीमा क्या है ?

उत्तर—रूपी पदार्थों को जानना।

(२) **प्रश्न**—अवधि ज्ञान कौनसी गतियों वाले जीवों को हो सकता है ?

उत्तर—अवधि ज्ञान चारों गतियों के जीवों को हो सकता है।

(३) **प्रश्न**—कौनसी बातें ज्ञान-वृद्धि में सहायक हैं ?

उत्तर—१. कम खाना २. कम बोलना ३. कम नींद लेना (४) कपट रहित तप करना (५) ज्ञानियों की संगत करना (६) ज्ञानियों की विनय करना (७) उद्यम करना (८) स्वाध्याय करना (९) संसार की वस्तुओं को असार समझना, ज्ञान को ही सार वस्तु समझना (१०) पाँचों इन्द्रियों को वश में करना आदि-आदि।

[७]

प्रश्न—'पढ़मं नाणं तओ दया।'

अर्थ—पहिले ज्ञान हासिल करो फिर दया करो।

उपर्युक्त वाणी किस शास्त्र से ली गई है ?

उत्तर—दशवैकालिक सूत्र ।

(२) **प्रश्न**—'जे आया से विण्णाया ।'

अर्थ—आत्मा ज्ञान स्वरूप है, राग स्वरूप नहीं ।

उपर्युक्त आगम की वाणी किस सूत्र में कही गई है ?

उत्तर—आचारांग सूत्र ।

(३) **प्रश्न**—अह पंचहिं ठाणेहिं, जेहिं सिक्खा न लब्भई ।
थंभा कोहा पमाएणं, रोगेणालस्सएण वा ।।

अर्थ—अहंकार, क्रोध, प्रमाद (विषयासक्ति) रोग और आलस्य इन पांच कारणों से व्यक्ति शिक्षा (ज्ञान) प्राप्त नहीं कर सकता ।

उपर्युक्त प्रभु की वाणी किस शास्त्र से ली गई है ?

उत्तर—'उत्तराध्ययन सूत्र' ।

[८]

(१) **प्रश्न**—मनः पर्ययज्ञान किस गति में होता है ?

उत्तर—मनः पर्ययज्ञान केवल मनुष्य गति में ही होता है । मनुष्य में भी संयत मनुष्य को ही होता है, असंयत मनुष्य को नहीं ।

(२) **प्रश्न**—केवलज्ञान को आगम की भाषा में क्या कहा गया है ?

उत्तर—'क्षायिक ज्ञान'

(३) **प्रश्न**—केवलज्ञान को सकल प्रत्यक्ष ज्ञान क्यों कहा गया है ?

उत्तर—केवलज्ञान देश और काल की सीमा-बन्धन से मुक्त होकर रूपी एवं अरूपी समग्र अनन्त पदार्थों का प्रत्यक्ष करता है, अतः इसे सकल प्रत्यक्ष ज्ञान कहा गया है ।

[९]

(१) **प्रश्न**—'जाणह' और 'पासह' का अर्थ बताइये ?

उत्तर—जानना और देखना । जानना ज्ञान है और देखना दर्शन है ।

(२) **प्रश्न**—अन्नं दानं परं दान, विद्या दानं मनः परम् ।
अन्नेन क्षणिका तृप्तिर, यावज्जीवन च विद्यया ।।

उपर्युक्त छन्द का अर्थ कीजिए ?

उत्तर—अन्न दान जो परम दान है, उससे भी ज्ञान श्रेष्ठ है कारण अन्न से क्षणिक तृप्ति होती है पर ज्ञान से यावज्जीवन तृप्ति होती है।

(३) **प्रश्न**—ज कन्नाणी कम्मं खवेइ, बहु आहिं बास कोडी हिं ।
त नाणी तिहि गुत्तो, खवेइ असासमित्तेण ।।

उपर्युक्त आगम की वाणी का हिन्दी में अर्थ समझाइये ?

उत्तर—अज्ञानी जीव करोड़ों वर्षों में जितने कर्म खपाता है, उतने संवृत ज्ञानी मन, वचन, कर्म से एक उच्छ्वास जितने समय में ही क्षय कर डालता है।

[१०]

प्रश्न—बौद्ध धर्म में सम्यक्ज्ञान को क्या कहा है ?

उत्तर—'प्रज्ञा'।

(२) **प्रश्न**—ज्ञान को कल्प वृक्ष से भी बढ़कर क्यों कहा गया है ?

उत्तर—कहा जाता है कि कल्प वृक्ष अपने पास आने वाले जन को अभीष्ट फल देकर उसकी मनोकामना सफल कर देता है, मगर ज्ञान की शक्ति कल्प वृक्ष से भी बढ़कर कही गयी है, क्योंकि कल्प वृक्ष से केवल मनोरथ के लिए हमें पराधीनता-पाश में बंधना पड़ता है। कल्प वृक्ष से मोक्ष प्राप्त नहीं किया जा सकता, जबकि ज्ञान से मोक्ष भी प्राप्त किया जा सकता है। इसलिये ज्ञान को कल्प वृक्ष से बढ़कर कहा गया है।

(३) **प्रश्न**—जीव मिथ्यात्व से हटकर सम्यक्त्व की ओर कब अभिमुख होता है ?

उत्तर—जैनागमों में कर्म की उत्कृष्ट स्थिति ७० कोड़ा-कोड़ी सागरोपम बताई गई है। जब कर्म की स्थिति ७० करोड़ में से ६९ करोड़ सागर घटकर जब एक अन्तः कोड़ा कोड़ी सागर बाकी बचती है, तब जीव मिथ्यात्व से हटकर सम्यक्त्व की ओर अभिमुख होता है।

[११]

(१) **प्रश्न— ।। ज्ञान की कहानी ।।**

भेष में न ज्ञान नहिं, ज्ञान गुरु वर्तनन में।
मन्त्र-जन्त्र-तन्त्र में न ज्ञान की कहानी है ।।

ग्रन्थ में न ज्ञान नहिं ज्ञान कवि चातुरी में।
बातनि में ज्ञान नहिं, ज्ञान कहा बानी है ।।

तातैं भेस गुरुता कवित्त ग्रन्थ मन्त्र बात ।
इनतै अतीत ज्ञान चेतना निसानी है ।।

ज्ञान ही में ज्ञान नहिं ज्ञान और ठौर कहुं।
जाकै घट ज्ञान, सोइ ज्ञान का निदानी है ।।

उपर्युक्त गीतिका के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—पं. बनारसीदास ।

(२) **प्रश्न— "उसी को मिलता है निर्वाण"**

सम्यग् ज्ञानी, सम्यग् दर्शी सम्यग् संयमवान,
उसी को मिलता है निर्वाण।

शास्त्र-शास्त्र में स्थान-स्थान पर बोल गये भगवान,
उसी को मिलता है निर्वाण ।। टेर ।।

जीव तत्त्व है जड़ से निराला, पुण्य शुभ्र है, पाप है काला ।
संवर बांध है आश्रव नाला, बंध-बंध निर्जरा उजाला ।।

मोक्ष मुक्ति है, यों जो इन तत्वों का ज्ञान ।
उसी को..........।। १ ।।

देव वही जो अरिहंत हों, गुरु वही जो निरग्रन्थ हो ।
धर्म वही जो दयापूर्ण हो, शास्त्र वही जो जिनभाषित हो ।।

जिस प्राणी की नस-नस में यों अटल भरी श्रद्धान
उसी को..........।। २ ।।

उपर्युक्त स्तवन के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—श्री पारस मुनि ।

(३) **प्रश्न**— **करलो करलो ए प्यारे**

तर्ज—जावो जावो ऐ मेरे साधु रहो गुरु के संग

करलो करलो, अब प्यारे सज्जनो, जिनवाणी का ज्ञान ।। टेर ।।

जिसके पढ़ने से मति निर्मल, जगे त्याग तप भाव ।
क्षमा दया मृदु भाव विश्व में, फैल करे कल्याण ।। १ ।।

मिथ्या-रीति अनीति घटे जग, पावे सच्चा ज्ञान ।
देव गुरु के भक्त बनें सब, हट जावे अज्ञान ।। २ ।।

पाप-पुण्य का भेद समझकर, विधियुत देवो दान ।
कर्म बन्ध का मार्ग घटाकर, कर लेओ उत्थान ।। ३ ।।

उपर्युक्त गीतिका के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—आचार्य श्री हस्तीमल जी म. सा.

[१२]

(१) **प्रश्न**—ज्ञान का स्वभाव क्या है ?

उत्तर—ज्ञान का स्वभाव जानने का है ।

(२) **प्रश्न**—सम्यक् ज्ञान को परम मित्र एवं अज्ञान को परम शत्रु क्यों कहा गया है ?

उत्तर—ज्ञान हमें हिताहित और लक्ष्य का बोध कराता है । सम्यक् ज्ञान के अभाव में सम्यक् आचरण का विकास नहीं हो सकता । सम्यक् चारित्र, सम्यक् ज्ञान के प्रकाश में ही आलोकित होता है, तेजस्वी बनता है और यथेष्ट फल को प्रदान करता है, इसलिए सम्यक् ज्ञान को परम मित्र कहा गया है । दूसरी ओर अज्ञान गहरा अंध-कूप है, जहां भटकना ही भटकना है । जब तक उसका समूल नाश नहीं होता, हमें सही राह नहीं मिलती । इस कारण इसे शत्रु कहा गया है ।

(३) **प्रश्न**—ज्ञान को दु:ख का कारण कब कहा गया है ?

उत्तर—जब ज्ञान में राग-द्वेष का मिश्रण हो जाता है, तभी उसे दु:ख का कारण कहा जाता है ।
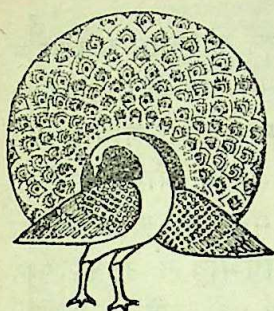
महावीर और ईसा

□ श्री अभय प्रकाश जैन

भगवान महावीर और ईसा के आदर्शों में सबसे महत् सादृश्य अहिंसा के विषय में है। दोनों ही महापुरुष मानवजीवन की हत्या के सर्वथा विरोधी थे और दोनों की ही एक धारणा और शिक्षा थी कि जो तुम्हारे साथ अन्याय करें, उनके प्रति अहिंसक प्रतिरोध-विद्रोह करो। ईसामसीह ने "सर्मन ऑन दी माउण्ट" में स्पष्टतः कहा है—"तुमने सुना था कि तुम अपने पड़ोसी से प्यार करो और अपने शत्रु से द्वेष, परन्तु मैं (ईसा) तुमसे कहता हूं कि तुम अपने शत्रुओं से भी प्रेम करो और उनके लिये प्रार्थना करो जो तुमको सतावें। तुमने यह भी सुना है कि एक आंख के बदले एक आंख और एक दांत के बदले एक दांत लो, परन्तु मैं तुमसे कहता हूं कि यदि कोई तुम्हारे एक गाल पर चांटा मारे तो तुम उसकी तरफ दूसरा गाल कर दो······यदि वह तुम्हारा कोट मांगे तो तुम उसे अपनी जाकेट भी दे दो, यदि वह तुम्हें एक मील साथ चलने को बाध्य करे तो तुम उसके साथ दो मील जाओ।" इस शिक्षा ने ईसा को पूर्ण प्रशांत बना दिया। उन्होंने सताये जाने पर अपने विरोधियों से बदला न लिया। बाल कतरने के समय जैसे भेड़ चुप हो जाती है, ऐसे ही ईसा तब मौन थे, जब उनके शरीर में कीलें ठोकीं गयीं, उन्होंने अपने हत्यारों के भले के लिये भी प्रार्थना की।

हमारे जैन सूत्र, कथायें, ग्रंथ और साहित्य महावीर के अहिंसाभाव, सहिष्णुता और क्षमाभाव की कथाओं से भरे हुए हैं। उनके ही साथी मानवों ने उनके साथ दुर्व्यवहार किया परन्तु उन्होंने सब कुछ समता से सहा। कई बार कुछ क्रूर ग्रामीणों ने जब तपस्वी महावीर को देखा तो उन्होंने उनके पैरों के बीच में आग सुलगाकर देखना चाहा कि वे भयभीत होते हैं या नहीं? कुछ लोगों ने उनके कानों में कीलें ठोकने का अमानवीय दुष्प्रयास किया। कुछ ने उन पर आक्रमण किया और शिकारी कुत्ते छोड़े किन्तु ऐसे सभी अवसरों पर ज्ञानी महावीर शांत रहे और सब कुछ समता से सहन कर लिया। उनके ऊपर नाना प्रहार किये गये, धूल और वज्र बरसाये गये, किन्तु भगवान महावीर ने इन सभी परीषहों-कष्टों को समता से सहन किया। उनके भीतर कोई इच्छा न थी—कोई द्रोह न था—वे निर्वाण के मार्ग में अग्रसर हो रहे थे।

किन्तु भगवान महावीर अहिंसा, जीवहत्या न करने के विषय में ईसा से भी बहुत आगे बढ़े हुए मिलते हैं। उन्होंने केवल मानव-हत्या को ही नहीं रोका, अपितु मानवेतर जीवहत्या को भी रोका। रास्ता चलते मार्ग को शोधना भी जीवरक्षा के लिए उन्होंने आवश्यक माना। छना हुआ पानी पीना इसलिए आवश्यक बताया कि जलकाय के जीवों की रक्षा हो। वे सूक्ष्मतम कीड़े मकोड़ों को भी नहीं मारते थे। प्रत्यक्षतः हत्या के प्रति विरोधभाव ने उनको पूर्ण प्रशांतवादी बना दिया, क्योंकि बिना हत्या के युद्ध लड़े ही नहीं जा सकते। अहिंसक युद्ध उन्हें मान्य था, जैसा कि शताब्दियों के बाद गांधी जी ने भारत की मुक्ति के लिए लड़ा था। भगवान महावीर की शिक्षा में भी गृहस्थ के लिए युद्ध की छूट दी गयी थी जैसे कि ईसा के समय में भी घटित हुआ था। एक गृहस्थ के लिए बिना हिंसा के जीना कठिन है इसलिए उनसे कहा गया कि जितनी शक्ति हो उतने अंश में अहिंसा का पालन करो। परिणामतः सैनिक धर्म भी एक जैन गृहस्थ के लिए विधेय है।

—एन-१४, चेतकपुरी
ग्वालियर–४७४००६

PEACE

WITH the clock of the time bomb ticking aloud.
The fate of man seems to shroud with dark clouds of nuclear holocaust.
What will happen tomorrow, seems difficult to forecast.
Star war programmes of outer space.
And nations running an armament race.
Racist regimes seem to gather pace.
Uncertainty of survival is at every place.
When super powers seem to control this earth.
Hatred and enmity is taking birth.
It is essential for our survival.
That we proclaim nuclear bombs, our rival.
Peace is a small five lettered word.
But it means a lot if adopted in this world.
Goodness and honesty will rise in the sky.
Brotherhood and friendship will not be priced high.
When the youth of today are misguided by morphine.
Many nations seem to be not too keen.
To adopt an idea which in my mind haunts—
A 'piece' of 'peace' is what the world wants.

—ARADHANA
KOTNALA

युवा स्वाध्यायी श्री राजेन्द्र पटवा

☐ श्री चंचलमल चौरड़िया

आकर्षक व्यक्तित्व, तेजस्वी मुखमण्डल, ओजस्वी वक्ता, व्यवहार-कुशल, दृढ़ मनोबली, प्रबुद्ध चिन्तक एवम् प्रेरक, समर्पित उत्साही, सक्रिय, सामाजिक कार्यकर्ता युवा स्वाध्यायी श्री राजेन्द्र पटवा का जन्म २४ जून, १९५० को जयपुर में हुआ। आप सरल हृदय सुश्रावक श्री जौहरीमलजी पटवा के सुपुत्र हैं। श्री पटवा विज्ञान व कला के स्नातक हैं। शिक्षा सम्पन्न करने के पश्चात् आप व्यवसाय में लग गये। आप अभी जवाहरात-फाइनेन्स व कोटा स्टोन आदि विविध व्यवसायों का कुशलतापूर्वक संचालन कर रहे हैं। आपके कुशल संचालन में आपके जयपुर, सूरत एवं मोड़क में व्यावसायिक प्रतिष्ठान कार्यरत हैं।

श्री पटवा बचपन से ही परमपूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० एवं अन्य संत-सतीवृन्द के सान्निध्य में धार्मिक अध्ययन करते रहे हैं। स्वाध्याय का महत्त्व समझ कर आप सामायिक व स्वाध्याय की गतिविधियों से जुड़े रहे हैं। स्वाध्याय-क्रम में आपने सामायिक, प्रतिक्रमण, विविध स्तोत्रों एवं थोकड़ों को कंठस्थ किया है तथा अन्तकृतांग सूत्र, दशवैकालिक सूत्र, उत्तराध्ययन सूत्र, सुख विपाक सूत्र, भगवती सूत्र, ज्ञाता धर्मकथा, आचारांग चयनिका आदि का अध्ययन कर अपने ज्ञान की अभिवृद्धि की है।

श्री पटवा स्वाध्याय एवं सत्संग से प्राप्त ज्ञानार्जन को 'दीप से दीप जले' की उक्ति को चरितार्थ करते हुए पर्युषण-सेवा एवं धर्म-प्रचार के महती कार्यक्रमों में सदैव सक्रिय हैं। सन् १९७१ से आप लगातार प्रतिवर्ष विविध क्षेत्रों में सक्रिय स्वाध्यायी के रूप में पर्युषण-पर्वाराधन हेतु अपनी उल्लेखनीय सेवायें दे रहे हैं। संघ को सतत सेवा देने वाले सदस्यों में आपका अग्रगण्य स्थान है। आपने कभी भी प्रतिकूलताओं को पर्युषण-सेवा में बाधक नहीं बनने दिया। सामायिक-स्वाध्याय को जीवन की प्राथमिकता के रूप में स्वीकार ही नहीं किया, परन्तु

अपने जीवन की सफलता का मापदण्ड भी बनाया। आप स्वाध्याय संचालन समिति के सक्रिय सदस्य हैं एवम् समय-समय पर अपने मार्ग-दर्शन से संस्था को सजग एवं सक्रिय रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। कार्यालय से जब कभी भी आपको जिम्मेदारी सौंपी जाती है, उसको पूर्ण निष्ठा से पूर्ण करने का प्रयास करते हैं। आप समय-समय पर संत-सती विहार-चर्या में भी अपनी सेवायें देते रहते हैं।

सामायिक संघ के संयोजक के रूप में आपने अपनी महती सेवायें देकर ग्राम-ग्राम, नगर-नगर में सामायिक संघों के गठन में भाग लिया है। आप जवाहर नगर, जयपुर में नित्य सामूहिक स्वाध्याय एवं प्रार्थना कार्यक्रम का संचालन करते हैं। वर्ष में दो बार सामायिक संघ की गतिविधियों के प्रचार-प्रसार हेतु प्रवास कार्यक्रमों में भाग लेते हैं। आपकी प्रेरणा से सैकड़ों नर-नारी, युवक सामायिक संघ एवं स्वाध्याय संघ की गतिविधियों से जुड़े हैं। इसके अतिरिक्त महावीर इण्टरनेशनल, महावीर विकलांग सहायता समिति, लायन्स क्लब, युवक मैत्री संघ, पशु क्रूरता निवारण समिति आदि समाज-सेवी संस्थाओं के माध्यम से आप मानव-सेवा, पशु क्रूरता निवारण, समाज-सुधार आदि प्रवृत्तियों में सक्रिय हैं। अभी अ० भा० श्री जैन रत्न युवक संघ की स्थापना में आपकी सक्रिय भूमिका रही। समाज को ऐसे समाज-सेवी, प्रबुद्ध युवा स्वाध्यायी बन्धु से बहुत आशाएँ हैं।

आप चिरायु हों, शतायु हों एवं समाज को निरन्तर-नियमति धार्मिक क्षेत्र में प्रोत्साहित करते रहें। इसी मंगल भावना के साथ।

"जिनवाणी" प्रकाशनार्थ विज्ञापन की दरें

साधारण अंक की दरें	प्रतिमाह	सम्पूर्ण वर्ष	विशेषांक की दरें
टाइटल चौथा पृष्ठ	१,५००/—	८,०००/—	५,०००/—
टाइटल तीसरा पृष्ठ	१,०००/—	५,०००/—	३,०००/—
टाइटल दूसरा पृष्ठ	१,०००/—	५,०००/—	३,०००/—
आर्ट पेपर पृष्ठ	१,०००/—	५,०००/—	३,०००/—
साधारण पृष्ठ	६००/—	३,०००/—	१,०००/—
साधारण आधा पृष्ठ	४००/—	२,०००/—	५००/—
साधारण चौथाई पृष्ठ	३००/—	१,०००/—	२५०/—

कृपया विज्ञापन राशि मनीआर्डर/ड्राफ्ट/चैक से 'जिनवाणी' के नाम से कार्यालय के पते पर भेजें।

बाल कथामृत* (६७)

☐ १८ वर्ष तक के बच्चे इस कहानी को पढ़कर प्रश्नों के उत्तर १५ दिन में "जिनवाणी" कार्यालय को भेजें। उत्तरदाताओं के नाम पत्रिका में छापे जायेंगे। प्रथम, द्वितीय व तृतीय आने वालों को क्रमशः २५, २० व १५ रुपयों की उपहार राशि भेजी जायेगी। श्री राजेन्द्रप्रसादजी जैन, एडवोकेट भवानीमंडी की ओर से उनकी माताजी की पुण्य स्मृति में ११ रुपये का 'श्रीमती बसन्तबाई स्मृति पुरस्कार' चतुर्थ आने वाले को दिया जायेगा। प्रोत्साहन पुरस्कार स्वरूप १० बच्चों तक को "जिनवाणी" का सम्बद्ध अंक निःशुल्क भेजा जायेगा।

—सम्पादक
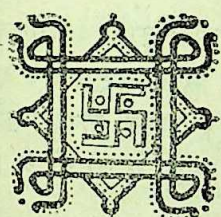
गुरु की खोज

☐ राज सौगानी

शहर के बाहर एक छोटी सी झोंपड़ी थी। वहां से हमेशा भक्ति संगीत और पूजा-पाठ की मंत्र-मुग्ध कर देने वाली आवाजें आती रहती थीं जो सूनी पगडंडियों पर गूंजा करतीं। कोई भी राहगीर इस संगीत से खिचकर झोंपड़ी में पहुँचता तो वहां रहने वाला सन्त उन्हें अच्छे उपदेश देता और खुश होता।

धीरे-धीरे यह चर्चा शहर में भी फैल गई। धर्म में आस्था व विश्वास रखने वाले वक्त निकाल कर वहां पहुँचने लगे और उपदेशों का लाभ उठाने लगे।

उसी शहर का कोतवाल भी इसी आशय से एक दिन उधर गया। उस दिन झोंपड़ी सुनसान थी। इधर-उधर देखने पर थोड़ी ही दूर उसे एक आदमी कंटीली झाड़ियां काटता हुआ दिखाई दिया। वह पास जाकर कोतवाली रोब में बोला—

* श्री राजीव भानावत द्वारा सम्पादित–परीक्षित स्तम्भ।

'तुम्हें मालूम है इस झोंपड़ी में रहने वाला सन्त आज कहाँ गया है ?'

सुनने वाला कुछ नहीं बोला। फिर से अपने काम में व्यस्त हो गया। यह देख कोतवाल का पारा चढ़ गया। वह जोर से बोला—'मैं तेरा नौकर नहीं, शहर का कोतवाल हूँ, जल्दी जवाब दे।'

हाथ रोककर इस बार उस व्यक्ति ने आश्चर्य से कोतवाल को देखा और धीरे से मुस्करा दिया। उसकी मुस्कान ने क्रोध की आग में घी का काम किया। फिर क्या था जो डंडा कोतवाल के हाथ में था, वही व्यक्ति पर बरसने लगा, फिर भी वह मुस्कराता रहा।

उसकी यह ढिठाई देखकर कोतवाल ने उस पर थूका और लौट पड़ा। आठ-दस कदम चलने पर ही उसे एक दूसरा व्यक्ति मिला। उसने उससे भी वही सवाल किया—'झोंपड़ी में रहने वाला सन्त कहाँ है ?'

व्यक्ति ने जवाब दिया—'इस समय वह राहगीरों के लिए रास्ता साफ कर रहे होंगे, चलो मैं मिलवाता हूँ।'

फिर वह उसी व्यक्ति के पास ले गया। व्यक्ति अधघायल होने के बावजूद भी शान्त भाव से पहले जैसे ही झाड़ियाँ काट-काट कर एक तरफ कर रहा था। पसीने के साथ सिर से खून भी चू रहा था जिस पर उसने कपड़ा लपेट लिया था। व्यक्ति ने इशारे से कहा—'जिनकी आपको तलाश है, ये वो ही हैं।'

यह सुन कोतवाल की आँखें फटी रह गईं। 'जिसे खोजने आया था उसी की यह हालत कर डाली' यह विचार आते ही वह सन्त के चरणों में गिर पड़ा और सुबकते हुए बोला—

"मुझे क्षमा करो महात्मा ! मैं तो आपकी ही खोज में आया था। मेरी बुद्धि पर पर्दा पड़ा था, इसीलिए मैं भटक गया था, अब आप ही मेरा उद्धार करो स्वामी ! मैंने आपको एक साधारण आदमी समझा था इसीलिए भूल हो गई। मैं तैयार हूँ आप जो भी दण्ड दें........।"

"तुम जिस उद्देश्य से यहाँ आए हो मैं जानता हूँ" सन्त ने उसी तरह मुस्कराते हुए आगे कहा—"मैं तो आने-जाने वालों के लिए रास्ता साफ कर रहा हूँ अधिक तो कुछ नहीं ? यह तो साधारण सा काम है। आत्मदर्शन को जाने वाली सड़क तो बिल्कुल सीधी है। इस पर जब काम, क्रोध, लोभ, मोह और अहंकार की कंटीली झाड़ियाँ उग आती हैं तब लोगों के लिए चलना कठिन हो जाता है। यदि बहुत अधिक झाड़ियाँ उग आएं तो मार्ग बिलकुल ही लुप्त

हो जाएगा। एक आध्यात्मिक संसार की बात है और दूसरी भौतिक संसार की। यात्रियों को कष्ट न हो इसीलिए मैं ये झाड़-झंखाड़ साफ कर रहा हूँ।"

"मैं समझ गया अब, पर मेरा अपराध क्षमा करो महाराज।"

यह सुन सन्त जोरों से हँसा फिर बोला—"अपराध तुमने किया ही कहाँ है? तुम तो व्यर्थ ही परेशान हो रहे हो? एक मिट्टी का घड़ा खरीदते समय भी हम उसे ठोंक-बजाकर देखते हैं फिर तुमने जिसे अपना मार्ग बताने वाला गुरु खोजना चाहा, उसकी परख कर ली तो हर्ज ही कहाँ है?"

सन्त की महानता पर कोतवाल नत मस्तक हो गया।

—स्टेशन रोड, भवानीमंडी–३२६ ५०२

अभ्यास के लिए प्रश्न

उपर्युक्त कहानी को पढ़कर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

१. 'धीरे-धीरे यह चर्चा शहर में फैल गई।' यह चर्चा क्या थी?

२. झोंपड़ी के सुनसान रहने का कारण क्या था?

३. कोतवाल के डंडा बरसाने पर भी संत क्यों मुसकराते रहे? यदि आप संत की जगह होते तो क्या करते?

४. 'मेरी बुद्धि पर पर्दा पड़ा था।' कोतवाल ने यह क्यों कहा? यह पर्दा कैसे दूर हुआ?

५. सन्त ने कोतवाल को क्या उपदेश दिया?

६. 'आत्म-दर्शन को जाने वाली सड़क पर कंटीली झाड़ियाँ उग आई हैं।' ये झाड़ियाँ कौन सी हैं? इन्हें कैसे साफ किया जा सकता है?

७. आप जिन सन्त-महात्मा के सम्पर्क में आये हों, उनके जीवन की कोई दो विशेषताएँ सोदाहरण लिखिए।

८. आप कोई ऐसा घटना–प्रसंग लिखिए जिसमें अपना काम अपने हाथ से करने की बात हो।

'जिनवाणी' के फरवरी, १९८९ के अंक में प्रकाशित डॉ. राम कुलकर्णी की कहानी **'दस लाख का धनी'** (९५) के उत्तर जिन बाल पाठकों से प्राप्त हुए हैं, उन सभी को बधाई।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं के नाम

प्रथम—सुश्री ब्रजेश कुमारी भाटी, द्वारा श्री लक्ष्मीनारायण भाटी, रेलवे फाटक के बाहर, पुलिस चौकी के पास, **चौमहला** (झालावाड़)।

द्वितीय—श्री जेठमल सेठिया, द्वारा श्री किशोरकुमार लोढ़ा, श्री जैन रत्न छात्रालय, **भोपालगढ़**–३४२ ६०३ (जोधपुर–राज०)।

तृतीय—सुश्री अनिता सिंह, द्वारा दुर्गा प्रिण्टिंग प्रेस, सब्जी मार्केट, **भवानीमंडी** (जि० झालावाड़)।

चतुर्थ—श्री महावीर जैन, द्वारा श्री मीठालालजी सरूपरिया अध्यक्ष, जैन समाज, पो० **भदेसर**–३१२ ६०२ (चित्तौड़गढ़)।

प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त उत्तरदाता

जिन्हें अप्रेल, १९८९ की '**जिनवाणी**' उपहार स्वरूप भेजी जा रही है—

१. श्री विमलकुमार जैन, द्वारा जैन स्टडी **सर्कल**, बोथरा हाउसेज, पो० **नागौर**–३४१ ००१।

२. श्री राजेशकुमार पोरवाल, द्वारा श्री गोरधनलालजी पोरवाल, पोस्ट ऑफिस के सामने, **भवानीमंडी** (राज०)।

३. श्री सुरेशकुमार जैन, द्वारा श्री सम्पतराजजी बोथरा, गांधी बाड़ी, पो० **नागौर**–३४१ ००१।

४. सुश्री उषा चण्डालिया, श्री महावीर जैन शिक्षण शाला, पो० **भादसोड़ा** (जिला चित्तौड़गढ़)।

अन्य उत्तरदाता

भैसोदामंडी से विजयकुमार पौराणिक, पवन पंचोली, नासिद बेग, **रायपुर** से संजयकुमार बोल्या, कमला बोरदिया, **जोधपुर** से राकेश ओस्तवाल, अंजु कर्णावट, विक्रान्त कर्णावट, मनीष लोढ़ा, **जयपुर** से सीमा कुचेरिया, दीपक जैन, विजय लोढ़ा, **बालेसर सतां** से गुलाब चौपड़ा, **चौमहला** से सुरेशकुमार राठौड़, सुनीलकुमार भाटी, **भवानीमंडी** से भगवानदास, दुर्गा शर्मा, विपिन जैन, सपना श्रीश्रीमाल, अनिता व्यास, बालकिशन शर्मा, मनीषा जैन, पारसकुमार सेठी, अनिता जैन, राजकुमार, गणेशराम जटिया, तुलसीकुमार, किरणकुमार, मंगलसिंह, प्रहलाद पराशर, गिरधारीलाल शर्मा, **रनायरा** से राजेन्द्रसिंह झाला, **पचपहाड़** से सुनीताकुमारी, किरण जैन, **किशनगढ़ शहर** से जितन्द्र जैन, श्री जैन

महावीर शिक्षण शाला, **भादसोड़ा** से साधना चंडालिया, तारा चंडालिया, सुनीता रांका, मुकेश चंडालिया, श्री जैन रत्न जवाहरलाल बाफना कन्या पाठशाला, **भोपालगढ़** से प्रियंका शर्मा, प्रेमलता, सविता चौरड़िया, प्रतिभा भाटी, **बल्लारी** से मदनलाल चौपड़ा, **हैदराबाद** से विजयराज गादिया **नागौर** से नवरतनमल बोथरा, **भदेसर** से राकेश सरूपरिया, **जैतारण** से संगीता खारीवाल, **लहसोड़ा** से गिर्राजप्रसाद जैन, **भनोखर** से मनोजकुमार जैन, **मेड़ता सिटी** से जयमल जैन, **रेलमगरा** से गिरिराज अगाल, आजाद जैन, **पाली** से एस. राजेन्द्र कुमार लूंकड़, **सवाईमाधोपुर** से रेखा जैन, सतीश जैन, आशा जैन, **प्रतापगढ़** से किरण बाला भैरविया, **जलगाँव** से दिनेशकुमार भैरविया, **भोपालगढ़** से लीलमचन्द ओसवाल, **नीमच** से नवीनकुमार पीपाड़ा, रेखा कुमारी पीपाड़ा, **झालरापाटन** से विजयकुमार जैन; **बजरिया सवाईमाधोपुर** से गौतमचन्द जैन ।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं के वे घटना-प्रसंग जिसमें उन्होंने अपनी जेब-खर्च का उपयोग पर-हित में किया—

[१]

कई दिनों से मैं अपने जेब खर्च के पैसे बचाकर एक सुन्दर गुलदस्ता खरीदने के लिए इकट्ठे कर रही थी । कुछ दिन बाद जब पर्याप्त रुपये जमा हो गए तो मैं गुलदस्ता खरीदने के लिए बाजार जाने की सोच रही थी । उसी समय मेरी नजर पास की झुग्गी में रहने वाली एक लड़की पर पड़ी । वह बुरी तरह रो रही थी । वह गरीब पितृविहीन लड़की थी । उसके आँसू देखकर मेरा मन भर आया । मैंने उसे अपने पास बुलाया और रोने का कारण पूछा । उसने बड़े दुःखी स्वर में बताया कि उसकी माँ को तेज बुखार है और उसके पास दवाई लाने के लिए पैसे नहीं हैं ।

उसकी व्यथा सुनकर मुझे दुःख हुआ । मैंने गुलदस्ता खरीदने का विचार तुरन्त त्याग दिया और अपने पास के सारे पैसे उसे दे दिए और दवाई लाने को कहा । पैसे देखते ही उस गरीब मासूम लड़की के बहते हुए आँसू रुक गए और वह कृतज्ञता भरी दृष्टि से मेरी ओर देखती हुई दवाई लेने चली गयी ।

दवाई देने के कुछ देर पश्चात् उसकी माँ का बुखार उतर गया । उसकी माँ ने मुझसे कहा कि वह कुछ दिनों में मेरे पैसे लौटा देगी । परन्तु मैंने मना कर

दिया और कहा कि मेरे जेब खर्च का इससे अच्छा उपयोग और क्या हो सकता है ?

—ब्रजेशकुमारी भाटी, चौमहला

[२]

मेरे चाचाजी मुझे रोजाना खर्ची के लिए एक रुपया दिया करते थे । मैं रोजाना ५० पैसे बचाया करता था । ऐसा करते-करते मेरे पास १००) रु० इकट्ठे हो गये । बात पिछले साल की है जब मेरी बहिन का जन्म दिवस था । मैंने सोचा कि मैं इन रुपयों से एक घड़ी खरीद कर बहिन को उपहार के रूप में दे दूं । मैं घड़ी खरीदने के लिए बाजार जा रहा था । ग्रीष्म ऋतु थी । भास्कर अपनी प्रखर किरणों के द्वारा धरती को तपा रहा था । सड़क के किनारे एक बूढ़ा व्यक्ति चिल्ला रहा था । मैं उसके पास गया और उसको चिल्लाने का कारण पूछा । वह एक शब्द भी नहीं बोल सका । केवल उसने सीने पर अपना हाथ रखा । मैं समझ गया कि उसको हार्ट-अटैक हो गया है । मैंने जल्दी से एक टैक्सी किराये पर मंगवायी और उस बूढ़े को टैक्सी के अन्दर लिटाया तथा अस्पताल ले पहुँचा । टैक्सी वाले को किराये के ५) रु० दिये । डॉक्टर ने उसके शरीर की जाँच की और उसको खतरे से बाहर बताया । डॉक्टर ने उसके दो इन्जेक्शन लगाये और मुझ कुछ दवाइयाँ लाने को कहा । मैं जल्दी ही दवाइयाँ लेकर पहुँचा । इस प्रकार २ घण्टे व्यतीत हो गये । कुछ समय बाद बूढ़ा बोलने लग गया । उसकी आँखों से आँसू आ रहे थे । उसने मुझको शुभाशीर्वाद दिया । मैं जल्दी ही घर पहुँचा । मेरे पापा ने मुझको डाँटा । मैंने उनको सारी घटना सुनायी । घटना सुनकर वे गद्‌गद हो उठे ।

—जेठमल सेठिया, भोपालगढ़

[३]

एक समय की बात है । गर्मी के दिन थे । मैं और मेरे कुछ मित्र बगीचे में खेल रहे थे । हम सब बड़े ही प्रसन्न दिखाई दे रहे थे और अपनी-अपनी मस्ती में थे । लेकिन एक बच्चा बड़ा ही उदास इस शोरगुल के वातावरण में चुपचाप एक जगह बैठा हुआ था । ऐसा लगता था कि वह बहुत दुःखी है । यह देखकर हम सब उसके पास गए और बोले—क्यों भाई ! तुम इतने शोर भरे माहौल में इतने उदास क्यों बैठे हो ? क्या तुम्हारा कोई दोस्त नहीं है ? क्या तुम्हें कोई अपने साथ नहीं खिलाता है ? हम सबके प्रश्न सुनकर उसकी आँखों में आँसू आ गए ।

वह बोला कि नहीं, नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है । वह कुछ रुक कर बोला कि मैं बहुत गरीब बच्चा हूँ । मेरे माता-पिता बहुत गरीब हैं । वे जो

कुछ कमाते हैं उससे घर का खर्च भी बड़ी कठिनाई से चलता है। मैं पढ़ना चाहता हूँ, लेकिन मेरे माता-पिता के पास इतना रुपया नहीं है कि वे मेरी पढ़ाई का खर्च दे सकें। मैं इसी कारण उदास हूँ कि मैं इस गरीबी के कारण पढ़ नहीं सकता।

उसकी यह दुःख भरी बात सुनकर हमने उससे कहा कि तुम पढ़ना चाहते हो तो हम तुम्हें पढ़ाई का खर्चा देंगे। हमारी बात सुनकर बड़े आश्चर्य से उसने कहा—मगर तुम लोग मेरी पढ़ाई का खर्चा कहाँ से दोगे ?

हमने कहा कि हमें रोजाना जो जेब खर्च मिलता है, उसे हम आज से ही जमा करना आरम्भ करेंगे जिससे कि विद्यालय खुलने तक हमारे पास इतना पैसा एकत्रित हो जाये जिससे कि हम तुम्हारी मदद कर सकें।

इस प्रकार मैंने और मेरे मित्रों ने उसी दिन से अपना जेब खर्च जमा करना शुरू किया और जब विद्यालय खुले तो हमने उस गरीब बच्चे को विद्यालय में दाखिला दिलाया और पुस्तकें खरीद कर दीं।

—सुश्री अनिता सिंह, भवानीमंडी

[४]

घटना दो वर्ष पुरानी है। मेरी बहिन की शादी तीन माह बाद होना तय हुआ था। तब मैंने सोचा मैं अपनी "जेब खर्च" में से कुछ पैसे बचाकर एक अच्छा उपहार बहिन को भेंट करूँगा। यह बात जब मैंने पिताजी को बताई तो वे भी प्रसन्न हुए। शादी के अभी १५ दिन बाकी थे। मैं अपने एक मित्र के घर ही रात को पढ़ता था। शादी के ७ दिन पूर्व रात को मेरे उस मित्र की तबियत अचानक खराब हो गई। मैं घबरा गया। मित्र गरीब था। उसके पिता बहुत कठिनाई से उसे पढ़ा रहे थे। मैंने सोचा—बहन को उपहार देने के लिए जो "जेब खर्च" बचाया उससे मित्र का इलाज करा लेना चाहिये लेकिन फिर मेरे मन में आया कि मैंने बड़ी कठिनाई से पैसे एकत्र किये हैं। परन्तु अन्त में पर-हित उपकार को सोच मैं दौड़कर डॉक्टर सा० को मित्र के घर लाया। डॉक्टर सा० ने उसे देख कर दवाई लिख दी। मैंने लगभग १५०) रुपये की दवाइयाँ लाकर मित्र को दे दीं। सुबह तक मित्र ठीक हो गया। जब सुबह सारी बात मैंने पिताजी से कही तो वे बेहद प्रसन्न हुए।

—महावीर जैन, भदेसर

[५]

मेरे घर के पास एक साधारण गरीब परिवार रहता था। उस परिवार में काफी सदस्य थे। मुझे एक दिन ऐसा मालूम हुआ कि मेरे पड़ौस का यह कुटुम्ब कई दिन से भूखा रह रहा है। मेरा हृदय काँप उठा। मैंने सोचा कि पड़ौसी सात दिन से भूखा हो तो मैं अपने जेब खर्च के बचे हुए रुपये व्यर्थ बाजार में खाने की चीजों पर जीभ की लालसा के लिए क्यों खर्च करूँ ? यह मेरे लिये उचित नहीं है। यह सोचकर मैंने शीघ्र ही बचे हुए निजी जेब खर्च के रुपये अपने पड़ौसी को दे दिये ताकि वह अपने बच्चों की भूख को शान्त कर सके।

—विमलकुमार जैन, नागौर

[६]

बात एक वर्ष पुरानी है। तब मैं कक्षा ६ में पढ़ता था। मेरा एक मित्र जो कि गरीब परिवार का है, मेरे साथ पढ़ता था। पढ़ने में वह बहुत होशियार था। परीक्षा नजदीक आ गई थी और हम सभी लड़कों ने बोर्ड फीस जमा करा दी थी। मित्र का परिवार निर्धन होने के कारण वह बोर्ड फीस जमा न करा पाया। प्रधानाध्यापक ने उससे कहा कि तुम परीक्षा में नहीं बैठ सकते हो। मेरे मन में विचार आया कि मेरे मित्र ने साल भर मेहनत की है और उसका फल इसे नहीं मिला तो इसके और इसके परिवार वालों के मन पर क्या गुजरेगी। यह सोच कर मैंने अपनी जेब खर्च से जो कि मेरे पापा पचास पैसे रोज देते थे, इकट्ठे किये हुए ८५) रु० लाकर प्रधानाध्यापकजी को दे दिए और उसकी फीस जमा करा दी। दूसरे दिन वह मेरे पास आया और बोला—राजेश भैया। अब क्या होगा मैं परीक्षा से वंचित रह जाऊँगा। मैंने उससे कहा—तुम आराम से पढ़ाई करो। तुम्हारी फीस मैंने अपनी जेब खर्च से बचे हुए ८५) रु० जमा कर दी है। वह बड़ा ही प्रसन्न हुआ और मुझे धन्यवाद देता हुआ घर चला गया। जब परीक्षा का रिजल्ट आया तो वह प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण हुआ।

—राजेशकुमार पोरवाल, भवानीमंडी

[७]

पौष महीने की कड़कड़ाती सर्दी थी। रात के लगभग ११ बजे होंगे। मैं स्टेशन से अपने अतिथियों को बिदाकर लौट रहा था। मैं गरम कपड़ों में मजे में गाता हुआ धीरे-धीरे चल रहा था। अचानक एक जगह रुक गया। रास्ते में एक पेड़ की जड़ में सर्दी से थर-थर काँपता हुआ चिथड़े लपेटे एक

भिखारी घुटने सिकोड़े पड़ा कराह रहा था। मैं उस भिखारी के समीप पहुँच गया। मैंने धीरे से अपने शरीर पर से गरम ओवरकोट उतारा। भिखारी के पास जाकर उसको उठाया और बिना कुछ कहे-सुने उसे वह कोट पहना दिया। सिर पर अपना मफलर लपेट दिया और निजी खर्च के बचत के १०-१० रुपये के चार नोट उसके हाथ पर रख दिए। भिखारी एक बार तो हक्का-बक्का सा रह गया। उसके मुरझाये होठ काँपते हुए खुले—'हे भगवान् तेरी कैसी दया।' फिर मुझे सामने देखकर उसने कहा—'मेरे प्यारे! मैं तुझे क्या दूँ? मेरे पास है ही क्या? सिर्फ दुआ।' यों कहकर उसने मेरे दोनों हाथ चूम लिए।

—सुरेशकुमार जैन, नागौर

[८]

मैंने कक्षा ५ पास करके कक्षा ६ में प्रवेश किया। मेरे पड़ौस में एक लड़की बहुत गरीब थी। उसने कक्षा ४ पास कर ली और कक्षा ५ में प्रवेश किया। उसके पास किताबें खरीदने के लिए पैसे नहीं थे। तब उसने मुझसे कहा कि आपके पास कक्षा ५ की पुस्तकें हों तो मुझे दे दो। मुझे उस पर दया आ गई। मैंने अपनी कक्षा ५ की किताबें बेच कर जेब खर्ची जमा करने का विचार त्याग दिया एवं वे किताबें उस छात्रा को दे दीं।

—उषा चण्डालिया, भादसोड़ा

भूल सुधार

'जिनवाणी' के जनवरी, १९८९ के अंक में पृ० ४७ पर उत्तरदाता विद्यार्थियों में राबिया, शिखा, सपना, माया, सुनीता, छाया, कृष्णकुमार, राजकुमार एवं आलोक अग्रावत को श्री जैनरत्न जवाहरलाल बाफना कन्या विद्यालय, भोपालगढ़ का बताया है जबकि ये विद्यार्थी श्री जवाहर विद्यापीठ, मन्दसौर में अध्ययनरत हैं।

—सम्पादक
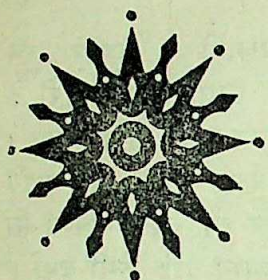
कुतिया की दया-भावना

□ श्री हीरालाल गांधी 'निर्मल जैन'

गेम वार्डन डेस्मोड वाराडे दक्षिण अफ्रीका के वन में एक अधिकारी थे। उन्हें शिकार का बड़ा शौक था। एक दिन बन्दूक लेकर शिकार के लिए घने जंगल में गये। उनके साथ उनकी प्यारी कुतिया भी थी। वे कुतिया को हमेशा अपने साथ ही रखते थे।

जंगल में उन्हें एक चीता दिखाई दिया। उन्होंने अपनी बन्दूक सम्भाली और निशाना साधकर गोली चलादी। एक दर्दभरी दहाड़ उन्हें सुनाई दी। वे समझ गये कि गोली चीते को लग गई है। वे अपनी कुतिया के साथ घायल चीते की ओर चल दिये। उन्होंने पास जाकर देखा। वह एक मादा चीता थी। गोली उसके पेट में लगी थी। उसके दो बच्चे अपनी मां का दूध पी रहे थे। मादा चीता तड़फ रही थी। उसके थनों से दूध बह रहा था। उसके दोनों छोटे-छोटे बच्चे अपनी मां को मौत से संघर्ष करते देखकर डर रहे थे। मां ममता की मारी अपने बच्चों के लिए तड़फ रही थी। वह शिकारी की ओर व्यथित दृष्टि से देख रही थी। मानो पूछ रही हो कि मेरा और मेरे नन्हें-नन्हें बच्चों का क्या कसूर था, जो मुझे गोली मार दी। अब मैं तो दुनिया से जा रही हूं, परन्तु मेरे इन बच्चों को कौन पालेगा? उसकी आंखें शिकारी से दया की भीख मांग रही थीं।

वाराडे का कठोर हृदय पिघल गया। वे मादा चीते के पास बैठ गये। वे अपना हाथ उसके शरीर पर फिराकर उसे सहलाने लगे। वहां का करुण दृश्य देखकर उनकी आँखों से आंसू बहने लगे। वे घोर पश्चात्ताप करने लगे।

वे कहने लगे—"मैं पापी हूं। मैंने घोर पाप किया है।"

कुतिया भी यह सब दृश्य देख रही थी। पशु होते हुए भी उसमें चीते के दोनों बच्चों के लिए वात्सल्य-भाव जागृत हुआ। उसकी दया-भावना उमड़ पड़ी। वह दौड़कर उनके पास पहुंची और उन्हें चाटने लगी। चीते के बच्चों ने कुतिया के थन अपने मुंह में ले लिये। मादा चीते ने आश्वस्त होकर दम तोड़ दिया। वह मर गई। वाराडे फूट-फूट कर रोने लगे। उन्हें शिकार से घृणा हो गई। उन्होंने प्रतिज्ञा की—"अब मैं कभी शिकार नहीं करूंगा।"

इधर कुतिया को देखिए। वह चीते के दोनों बच्चों को मां का प्यार देने लगी। वह अपने बच्चों को दूध पिलाती तब चीते के दोनों बच्चों को भी पिलाती। कुतिया इससे कमजोर हो गई। वाराडे कुतिया की हालत को समझ गये। उन्होंने सभी बच्चों के लिए दूध की व्यवस्था की। सभी एक साथ बड़े होने लगे। कुतिया अपने बच्चों से भी अधिक चीते के दोनों बच्चों को प्यार करती, क्योंकि उनकी मां मर चुकी थी।

धन्य है, कुतिया की दया-भावना।

रेल्वे उच्च माध्यमिक विद्यालय
आबूरोड (राज.)

काश !

□ श्री हरिकृष्णदास गुप्त 'सियहरी'

जीवन की बगिया में—जगत् के उद्यान में भी, मैंने फूल खिलाने चाहे—सुन्दरतम फूल ! जी—तोड़ परिश्रम किया। लेकिन हुआ उल्टा ही। कांटे ही कांटे खड़े होकर रह गये—तीक्ष्णतम कांटे।

कैसे हुआ..........क्यों होकर रह गया यह उलट-फेर ?

किसी अदृश्य हाथ ने यह दृश्य दिखाया—यह मानना तो आत्म-प्रवंचना होगी।

सम्भवतः जल्दी-जल्दी में मैंने फूलों की जगह कांटों के बीज बो धरे। मेरे दुचित्तेपन का तो निश्चय ही उसमें हाथ रहा होगा।

यह भी हो सकता है कि मुझ मतिगर्वी का मति-कालुष्य बीज-बीज में तमीज ही न कर पाया हो। उसके उल्टेपन ने ही यह उलटाव कर धरा हो।

कुछ भी हो जो हुआ, वह तो सामने है और वह-वह हुआ है, जो नहीं होना चाहिए था।

काश ! शान्त-चिन्तता, स्थिर-चित्तता मेरी चिर-सहचरी होती; मति-गर्विता के फेर में न पड़ा रहकर मैं शुद्ध समझ का, सम्यक् समझ का सच्चा धनी होता।

८८२, गली बेरी वाली, कूचा पातीराम
दिल्ली—११०००६

समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियां आना आवश्यक है।

साहित्य-समीक्षा

□ डॉ. नरेन्द्र भानावत

१. **नवजीवन**—मुनि ललितप्रभ सागर, प्र० श्री जितयशाश्री फाउन्डेशन, प्र. ६-सी, एस्प्लानेड रो (ईस्ट), कलकत्ता—७०० ०६६, पृष्ठ ७२, मू. ५.०० ।

इस पुस्तक में मुनि श्री के छह प्रवचन संकलित हैं। इनमें मानव जीवन की महत्ता और उसे नित्य नवीन शक्ति, पुरुषार्थ और आन्तरिक वीरत्व से सार्थक बनाने का उद्‌बोधन दिया गया है। मानव आकृति से नहीं, प्रकृति से महान् बनता है। उसे महान् बनाने में सम्यक् ज्ञान, दर्शन और चारित्र की विशेष भूमिका रहती है। मुनि श्री ने इस भूमिका को शास्त्र और लोकानुभव द्वारा सरल और ओजस्वी शैली में प्रस्तुत करने का सफल और प्रभावी प्रयास किया है।

२. **कालजयी व्यक्तित्व बनारसीदास**—सं० अखिल बंसल, अ० भा० जैन युवा फैडरेशन, ए-४, टोडरमल स्मारक भवन, बापूनगर, जयपुर–३०२०१५, पृ० १६४, मू० १०.०० ।

महाकवि बनारसीदास आध्यात्मिक कवि, दार्शनिक विचारक और हिन्दी के प्रथम आत्म-चरित्र लेखक के रूप में विख्यात हैं। उनके चतुर्थ जन्म शताब्दी पर टोडरमल स्मारक भवन में आयोजित अ० भा० संगोष्ठी में बनारसीदास के जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व के विभिन्न पक्षों पर विद्वानों द्वारा जो शोध निबन्ध प्रस्तुत किये गये थे, उनका संकलन इस पुस्तक में है। संकलित २० निबन्धों में कवि की युगचेतना, रस-दृष्टि, छन्द-योजना, दार्शनिक चिन्तन, मानवतावादी स्वर, जीवन-मूल्य, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक अवदान पर मूल्यात्मक विवेचना की गयी है।

३-६. **गीता–चयनिका, अष्टपाहुड-चयनिका, समयसार-चयनिका, परमात्म प्रकाश व योगसार-चयनिका**—सं० डॉ० कमलचन्द सोगानी, प्र० प्राकृत भारती अकादमी, ३८२६, यती श्यामलाल जी का उपाश्रय, मोतीसिंह भोमियो

का रास्ता, जयपुर—३०२ ००३, पृ० क्रमशः १६४, ९६, १३६, ९६, मू० क्रमशः १६.००, १०.००, १६.०० और १०.०० ।

संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश भाषा में कई ऐसे आर्ष ग्रन्थ हैं, जिनमें भारतीय संस्कृति और जीवन-मूल्य अनुभूति के स्तर पर अभिव्यक्त हुए हैं । इन भाषाओं का जन-जीवन में पठन-पाठन और उपयोग न होने से बहुसंख्यक लोग इस विपुल ज्ञान-गरिमा से वंचित हैं । डॉ० सोगानी ने आर्ष ग्रन्थों के इस अगाध ज्ञान-सागर का अपनी विशिष्ट मेधा, गहन अनुभूति और सुदीर्घ अनुभव के समन्वित कौशल से मन्थन कर जीवन और समाज के लिए ऐसे कल्याणकारी आलोकपूर्ण मुक्ताओं का चयन किया है, जो मानव-जीवन-यात्रा में दीप-स्तम्भ का कार्य करते हैं । प्रस्तुत चारों कृतियाँ संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं ।

'गीता-चयनिका' में १७० श्लोक, **'अष्टपाहुड-चयनिका'** में कुन्दकुन्दाचार्य द्वारा रचित ५०३ गाथाओं में से १०० गाथाएँ, **'समयसार-चयनिका'** में कुन्द-कुन्दाचार्य के ४१५ गाथाओं में निबद्ध महान् दार्शनिक आध्यात्मवादी ग्रन्थ 'समयसार' से १६० गाथाएँ और **'परमात्म-प्रकाश व योगसार चयनिका'** में ६-७वीं शती के अपभ्रंश के महान् कवि योगीन्दु के ग्रन्थों से १०८ दोहे चयनित किये गये हैं । छन्दों का चयन करते समय डॉ० सोगानी की दृष्टि मानवतावादी जीवन-मूल्यों पर केन्द्रित रही है । यह चयन सागर में से गागर भरने के समान है ।

इन चयनिकाओं की तीन प्रमुख विशेषताएँ हैं । प्रथम—मूल गाथाओं का हिन्दी अनुवाद शब्दों के धातुगत अर्थ को ध्यान में रखकर इस प्रकार किया गया है कि अर्थ की पंखुड़ियाँ सहज रूप से स्वतः खुलती हैं । द्वितीय—कृति के अन्त में व्याकरणिक विश्लेषण इस ढंग से प्रस्तुत किया गया है कि सामान्य पाठक भी व्याकरण के नियमों को सहज-सरल रूप में समझ कर शब्दों के धातुगत अर्थ पकड़ने में सक्षम बन जाता है । व्याकरण के जटिल नियमों को सुगम बनाकर प्रस्तुत करने में सोगानी जी की यह शैली उनके मौलिक चिन्तन एवं सतत अभ्यास का परिणाम है । तृतीय—प्रत्येक चयनिका की प्रस्तावना उसमें निहित जीवन-मूल्यों को उद्घाटित करने वाली पारदर्शी दीपिका है । इसमें सोगानी जी कृति के बाहरी कलेवर का परिचय न देकर उसकी अन्तरात्मा से साक्षात्कार कराते चलते हैं । इन प्रस्तावनाओं में उन्होंने कई पारम्परिक जटिल समस्याओं का मनो-वैज्ञानिक समाधान भी प्रस्तुत किया है ।

इन चयनिकाओं का पठन-पाठन व्यक्ति को अपने 'स्व' से जोड़ने के साथ-साथ उसकी सामाजिक चेतना को भी निर्मल और प्रबुद्ध बनाता है । इन कृतियों का अधिकाधिक स्वाध्याय होना चाहिये ।

७. **Lord Mahavir**—डॉ० बूलचन्द, प्र० पी० वी० रिसर्च इन्स्टीट्यूट, आई० टी० आई० रोड, वाराणसी-५, पृ० १४०, मू० ४०.०० ।

इस कृति में लेखक ने सात अध्यायों में भगवान महावीर कालीन परिस्थितियों का वर्णन करते हुए उनके पारिवारिक जीवन, तपस्वी जीवन, केवलज्ञान-प्राप्ति, धर्म-प्रचार और देशना तथा उनके समय में उनके समानान्तर खड़े विभिन्न प्रतिद्वन्द्वी दार्शनिक विचारों एवं विचारकों का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में संक्षिप्त पर प्रामाणिक वर्णन किया है। इस पुस्तक का प्रथम संस्करण सन् १९४८ में प्रकाशित किया गया था। कई वर्षों से इसकी मांग बनी हुई थी, उसकी पूर्ति रूप यह पुस्तक का द्वितीय संस्करण है। इसमें प्रस्तावना के रूप में डॉ. सागरमल जैन का महत्त्वपूर्ण निबन्ध जोड़ा गया है जो वर्तमान विश्व में भगवान महावीर के सिद्धान्तों की प्रासंगिकता को बड़े प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करता है।

८. **Jainism : The Oldest-Living Religion**—डॉ० ज्योतिप्रसाद जैन, प्र० पी० वी० रिसर्च इन्स्टीट्यूट, वाराणसी-५, पृ० ६४, मू० २०-०० ।

इस पुस्तक में प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता डॉ० ज्योतिप्रसाद जैन ने जैन धर्म के संबंध में प्रचलित विभिन्न भ्रांतियों का निराकरण करते हुए ऐतिहासिक दृष्टि से यह तथ्य प्रमाणित किया है कि जैन धर्म वर्तमान में प्राचीनतम जीवित धर्म है। इस पुस्तक का प्रथम संस्करण सन् १९५१ में प्रकाशित हुआ था और बहुत समय से यह अप्राप्य थी। यह पुस्तक का द्वितीय संस्करण है।

९. **Ajmer Postal History (1820-1947)** – जे० एम० ढोर एवं टी० सी० रंजन, प्र० ९९९, गोपालजी का रास्ता, जयपुर-३, पृ० १००, हार्ड बाउन्ड, मू० १४५ रुपये, २० डालर, १२ पौंड ।

श्री जतनमल ढोर रत्न व्यवसायी हैं, पर डाक टिकट संग्रहकर्ता के रूप में इनकी अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति है। इन्होंने कई राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय डाक टिकट प्रदर्शनियों में भाग लिया है और पुरस्कार प्राप्त किये हैं। डाक टिकिट पर ये मौलिक लेखन भी करते रहे हैं। प्रस्तुत पुस्तक में सन् १८२० से १९४७ तक का 'अजमेर का डाक इतिहास' प्रस्तुत किया गया है। इसमें डाक व्यवस्था, उसका विकास, विविध डाक टिकिट एवं डाक मोहरों का लगभग ३०० ब्लाक से साथ रोचक वर्णन है। जनवरी, १९८९ में दिल्ली में आयोजित 'विश्व डाक टिकिट प्रदर्शनी' में प्राप्त २२ पुस्तकों में से यह पुस्तक प्रथम पुरस्कार के रूप में स्वर्ण-पदक से सम्मानित हुई है। पुस्तक पठनीय और ज्ञानवर्धक है।

◆ ◆ ●

समाज–दर्शन

सन्त-विहार और चातुर्मास स्वीकृति

टोंक—आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. आदि ठाणा देवली में होली चातुर्मास सम्पन्न कर दूणी, नयागांव, भरनी, छान, मेन्दवास, बाड़ा आदि ग्रामों में विचरण करते हुए टोंक पधारे। आपने साधु–मर्यादा के आगारों सहित अपने आगामी चातुर्मास के लिए **कोसाणा** श्री संघ को अपनी स्वीकृति प्रदान की है। अक्षय तृतीया पर तपस्वियों को नवीन नियम कराने के लिए मदनगंज बिराजने की स्वीकृति प्रदान की है। श्री ज्ञानमुनिजी के चातुर्मास के लिए किशनगढ़, महासती श्री शान्तिकंवरजी के लिए धनोप, महासती श्री सुशीलाकंवरजी के लिए केकड़ी-दूणी संघ की विनतियाँ विशेष चल रही हैं। गुलाबपुरा संघ भी विनती कर रहा है। आचार्य श्री ने बूंदी, ब्यावर और अलीगढ़-रामपुरा क्षेत्र खाली नहीं रहने की स्वीकृति फरमाई है।

पीपलिया मण्डी—यहाँ आचार्य श्री नानेश ने होली चातुर्मास के अवसर पर साधु-मर्यादा के आगारों सहित आगामी चातुर्मास आदिवासी अंचल की शिक्षा नगरी **कानोड़** के लिए स्वीकृति फरमाई है। यह आचार्य श्री की दीक्षा अर्ध शताब्दी वर्ष का ऐतिहासिक चातुर्मास है। इसके साथ ही आचार्य श्री ने महावीर जयन्ती पर नीमच, अक्षय तृतीया पर जावद तथा बैसाख सुदी सप्तमी ११ मई को संभावित दीक्षाओं के अवसर पर निम्बाहेड़ा विराजने की संभावना व्यक्ति की है।

उपाध्याय श्री पुष्करमुनिजी एवं उपाचार्य श्री देवेन्द्रमुनिजी रतलाम से सैलाना, जावरा, मन्दसौर होते हुए होली चातुर्मास पर नीमच पधारे। यहाँ हजारों युवकों ने व्यसन मुक्त होने तथा सामायिक, प्रार्थना आदि करने के नियम लिये। महावीर जयन्ती पर राशमी एवं अक्षय तृतीया पर उदयपुर विराजने की संभावना है।

पूज्य प्रवर्तक श्री अम्बालालजी म. सा., महामंत्री श्री सौभाग्य मुनिजी 'कुमुद' आदि ठाणा ७ का होली चातुर्मास आसीन्द में सम्पन्न हुआ। आपने साधु-मर्यादा अनुसार अक्षय तृतीया पर रायपुर (भीलवाड़ा) विराजने की एवं अगला चातुर्मास **भोपालगंज-भीलवाड़ा** में करने की स्वीकृति प्रदान की है। श्री मगनमुनिजी का चातुर्मास सनवाड़ एवं महासती श्री प्रभावतीजी का चातुर्मास भीम के लिए फरमाया। श्री राजेन्द्र मुनि 'रत्नेश' जयपुर विराज रहे हैं।

युवाचार्य डॉ. शिवमुनिजी ने आगामी चातुर्मास **बोलारम** (हैदराबाद) करने की स्वीकृति फरमाई है। इस चातुर्मास में ध्यान-साधना के विशेष कार्यक्रम आयोजित करने के साथ-साथ जैन साधकों के लिए ध्यान-केन्द्र स्थापित करने की योजना है।

श्री कजोड़ीलालजी जैन, नेता प्रचारक खेरली की विज्ञप्ति के अनुसार आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के सुशिष्य पं. रत्न श्री मानमुनिजी, पं. र, श्री शुभेन्द्र मुनिजी ठाणा ७ खेड़िया, बरगमा, श्री महावीरजी, सेमाड़ा, श्यामपुरा, चकेरी, कुण्डेरा, आलनपुर आदि गाँवों में विचरण करते हुए, सवाईमाधोपुर पधारे। यहाँ होली चातुर्मास तप-त्याग एवं धर्म-ध्यान पूर्वक सम्पन्न हुआ। कुशल सेवा मुर्ति श्री शीतल मुनिजी म. सा. जयपुर के उपनगरों में धर्म-प्रभावना कर रहे हैं। श्री ज्ञानमुनिजी म. सा. किशनगढ़ के आस-पास ग्रामीण क्षेत्रों में विचरण कर रहे हैं। साध्वी प्रमुखा प्रवर्तिनी महासती श्री बदनकंवरजी म. सा. ठाणा ६ जोधपुर के घोड़ों के चौक स्थानक में विराजमान हैं। महासती श्री सायरकंवर जी ठाणा ५ अजमेर विराज रहे हैं। महासती श्री मैनासुन्दरीजी ठाणा ६ उज्जैन से नागदा, बड़ावन, खाचरोद, रतलाम, सैलाना होते हुए राजस्थान की ओर पधार रहे हैं।

जीव दया-प्रेमियों से अपील

जयपुर–राजस्थान सरकार के स्वायत्त शासन विभाग द्वारा दि. २९-९-८८ को राज. उच्च न्यायालय की खण्डपीठ के निर्णय दि. २६-७-८८ के तहत राज्य की समस्त नगरपरिषदों एवं नगरपालिकाओं को पत्र भेजकर आदेश दिया गया है कि राज. नगरपालिका अधिनियम १९५९ की धारा २३६ के अधीन मांस-व्यापारियों एवं बूचड़खानों को प्रति शुक्रवार का साप्ताहिक अवकाश एवं वर्ष के निम्नलिखित १६ अगतों का पालन करना चाहिये। इसकी पालना में जीवदया प्रेमियों को अपने-अपने क्षेत्रों में अध्यक्ष नगरपालिका एवं श्रम-निरीक्षक से सम्पर्क कर सहयोग लेना चाहिये। वर्ष भर के अगले—गणतंत्र दिवस, गांधी निर्वाण दिवस, महाशिवरात्रि, महावीर जयन्ती, बुद्ध पूर्णिमा, स्वतंत्रता दिवस, कृष्ण-जन्माष्टमी, गणेश चतुर्थी, ऋषि पंचमी, अनन्त चतुर्दशी, गांधी जयन्ती, निर्वाण दिवस, दीपावली, कार्तिक पूर्णिमा, कार्तिक सुदी प्रतिपदा।

□ • □

संक्षिप्त समाचार

इन्दौर—श्री अजित मुनि जी ने अपील की है कि वि. सं. २०५२ में गुरुत्रय शताब्दी का महान् दुर्लभ संयोग उपस्थित हो रहा है। तीनों विभूतियाँ श्रमण भगवान महावीर के शासन को दीपाने वाली हैं—१. आचार्य श्री खूबचन्द जी म. आषाढ शुक्ला ३, दीक्षा शताब्दी २. जैन दिवाकर श्री चौथमलजी म. फाल्गुन शुक्ला ३ दीक्षा शताब्दी, ३. उपाध्याय श्री प्यारचन्दजी म. जन्म शताब्दी।

आचार्य श्री की रुचि स्वाध्याय एवं तप की विशेष रही। जैन दिवाकरजी व्यसन-मुक्ति एवं जीवदया-पालन का उपदेश देते थे। उपाध्याय श्री आगम-वाचन के हिमायती रहे। अतः इन प्रवृत्तियों के अनुरूप समाज में ठोस, मौलिक और रचनात्मक कार्यक्रम आयोजित किया जाना चाहिये, जिससे आत्म-कल्याण एवं लोक-कल्याण की दिशा में स्थायी महत्त्व का कार्य संपादित हो।

सवाईमाधोपुर—श्री श्वे. स्था. जैन श्री संघ के चुनाव में श्री राधेश्यामजी जैन अध्यक्ष, श्री लड्डूलालजी लोहिया उपाध्यक्ष, श्री गोपीकृष्णजी हाड़ा महामंत्री, श्री चौथमलजी जैन (बैंक वाले) सहमंत्री और श्री जीतमलजी लोहिया कोषाध्यक्ष चुने गये। श्री बजरंगलालजी सर्राफ, श्री रामदयालजी सर्राफ, श्री नरेन्द्रमोहनजी जैन, श्री रघुनाथदासजी जैन, श्री सूरजमलजी जैन, श्री मोतीलालजी बोहरा, श्री बाबूलालजी समीधी वाले एवं श्री मदनलालजी जैन कार्यकारिणी के सदस्य चुने गये।

जयपुर—भारतीय प्रशासनिक सेवा के वरिष्ठ अधिकारी एवं जैन, धर्म, दर्शन के प्रबुद्ध विचारक-लेखक श्री रणजीतसिंहजी कूमठ, महावीर इन्टरनेशनल (अपेक्स) के अध्यक्ष चुने गये हैं। हार्दिक बधाई।

कानोड़—महावीर आवासीय विद्यालय एवं जवाहर जैन छात्रालय के नवनिर्मित 'अरिहन्त आवास' का उद्घाटन श्रीमती मानकुंवर मेहता, इन्दौर द्वारा सम्पन्न हुआ। श्री अशोककुमार मेहता विशिष्ट अतिथि थे। श्री नाथूलाल जारोली ने अतिथियों का स्वागत किया तथा व्यवस्थापक श्री सुन्दरलाल मुरड़िया ने संस्था की प्रवृत्तियों पर प्रकाश डाला। समारोह का संचालन श्री भैरूंसिह राव ने किया।

जोधपुर—महावीर इन्टरनेशनल द्वारा 'एक्यूप्रेशर' एवं चुम्बकीय चिकित्सा प्रशिक्षण शिविर ११ मार्च से १३ मार्च तक डॉ. जितेन्द्र भट्ट के नेतृत्व में

आयोजित किया गया। संयोजक थे महावीर इन्टरनेशनल के सचिव श्री चंचलमल चोरड़िया।

रायपुर—श्री विनय मित्र मण्डल द्वारा विकलांगों की सेवा के क्षेत्र में सराहनीय कार्य हो रहा है। २५ फरवरी को बुलडाना में १३० मूक-बधिरों को निःशुल्क श्रवण यंत्र प्रदान किये गये। १७ मार्च को राजनांदगांव में आयोजित शिविर में १२ विकलांग स्कूली छात्रों को ट्राईसाइकिल प्रदान की गई तथा पाँच बच्चों को द्विपहिया कुर्सी दी गई, ताकि वे समाज में आत्म-सम्मान की जिन्दगी जी सकें। शिविर में १०९ मूक-बधिरों का परीक्षण किया गया। आगामी शिविर के लिए ४०० विकलांगों द्वारा अपना नाम दर्ज कराया गया।

मालेगांव—१८ मार्च को आयोजित अ. भा. गोरक्षा सम्मेलन में अध्यक्ष श्री मानवमुनिजी ने गौवंश हत्या बंदी एवं गोधन-रक्षा के लिए विगत २५ वर्षों में किये जाने वाले सत्याग्रह आदि कार्यक्रमों का विवरण प्रस्तुत करते हुए यह अपील की कि जब तक गोवंश हत्या बंदी नहीं होती, सांस्कृतिक प्रदूषण दूर नहीं हो सकता। गाय हमारी माता है और उसकी रक्षा के साथ हमारा अस्तित्व जुड़ा हुआ है। पी. टी. आई. की रिपोर्ट का ब्यौरा देते हुए उन्होंने कहा कि १९८१ की रिपोर्ट के अनुसार देश में १८ करोड़ गायें और उनके वंशज तथा ६ करोड़ भैंसें और उनके वंशज हैं। ये सब लगभग ८४ करोड़ टन गोबर प्रति वर्ष देते हैं। यदि उसका समुचित उपयोग गोबर गैस संयंत्र में किया जावे तो लगभग ५ हजार करोड़ रुपये की गैस भोजन बनाने के लिए प्रति वर्ष मिल सकती है। वैज्ञानिकों का कथन है कि जिन मकानों में गाय के गोबर से पुताई होगी, वहाँ अणुबम के किरणोत्सर्ग द्वारा किसी भी प्रकार की हानि नहीं होगी।

दिल्ली :—आचार्य कुन्दकुन्द द्विसहस्राब्दी समारोह समिति द्वारा आचार्य कुन्दकुन्द और उनके साहित्य पर शोध करने वाले पांच विद्वानों को ५ मार्च को 'श्री कुन्दकुन्द भारती, प्राकृत भाषा भवन' में ५–५ हजार रुपये, प्रशस्तिपत्र एवं शाल भेंट कर सम्मानित किया गया। सम्मानित विद्वान् हैं—पं० बलभद्र जैन (उत्तर प्रदेश), डॉ० लालबहादुर जैन शास्त्री (दिल्ली), पं० नरेन्द्रकुमार भिसीकर (महाराष्ट्र), पं० मल्लिनाथ शास्त्री (तमिलनाडु) और डॉ० सुषमा गांग (राजस्थान) हार्दिक बधाई।

मूडबिद्री :—यहां स्थित श्रीमती रमारानी जैन शोध संस्थान को मंगलौर विश्वविद्यालय ने पी-एच० डी० के लिए शोध केन्द्र के रूप में मान्यता प्रदान कर दी है। यह कार्य भट्टारक श्री चारुकीर्तिजी के सुप्रयास का परिणाम है, जो विश्वविद्यालय की सीनेट के सदस्य भी हैं। आशा है, उनके मार्गदर्शन में विशेष शोध कार्य सम्पन्न होगा।

दिल्ली :—यहाँ पीतमपुरा में मुनि श्री रामकृष्णजी म० की प्रेरणा से पूज्य सन्त श्री मायाराजजी म० की पावन स्मृति में उनके १११ दीक्षा दिवस (माघ शुक्ला सप्तमी) पर मुनि मायाराम जैन अस्पताल का शिलान्यास सेठ श्री केशोरामजी जैन (चाँदी वाले) द्वारा सम्पन्न हुआ। अध्यक्षता सेठ श्री कीमतीलालजी जैन ने की। मुख्य अतिथि थे गाज़ियाबाद के श्री जे० डी० जैन।

एलोरा :—यहाँ दिगम्बर जैन मुनि श्री आर्यनन्दीजी म० की प्रेरणा से समाज में नैतिक मूल्यों की स्थापना के लिए शिक्षण देने की दृष्टि से ९ मार्च को 'श्री पार्श्वनाथ ब्रह्मचर्य आश्रम (गुरुकुल)' भवन का शिलान्यास किया गया।

दिल्ली :—भारत के प्रधानमंत्री श्री राजीव गाँधी १८ अप्रेल को महावीर जयन्ती पर 'भगवान महावीर वनस्थली' का उद्‌घाटन कर उसे राष्ट्र को समर्पित करेंगे। इसका विकास भगवान महावीर के २५००वें परिनिर्वाण महोत्सव के राष्ट्रीय कार्यक्रम के तहत किया गया है। यहाँ जिन प्रवृत्तियों को योजित किया गया है, उनमें मुख्य हैं—भारतीय दर्शनों पर पुस्तकालय, जैन कला एवं स्थापत्य पर संग्रहालय, अध्ययन एवं शोध, प्रकाशन एवं प्रचार आदि।

सवाई माधोपुर :—श्री श्वे० स्था० जैन रत्न युवक मण्डल के इस समय ५१ सदस्य हैं, जो मण्डल के नियमानुसार धर्माराधना करते हुए रविवार को विचार गोष्ठी व अन्य कार्यक्रम आयोजित करते हैं। सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन के लिए भी मण्डल के सदस्य सक्रिय हैं।

राणावास :—यहाँ के व० स्था० जैन छात्रावास के लिए एक अनुभवी गृहपति, एक मुनीम एवं एक कोठारी की आवश्यकता है। वेतन अनुभव एवं योग्यतानुसार। प्रार्थी निम्न पते पर सम्पर्क करें—लालचन्द गूगलिया, मंत्री श्री व० स्था० जैन छात्रालय, राणावास (पाली)।

साढ़ूमल :—पं० हीरालाल जैन शास्त्री, सिद्धान्ताचार्य के व्यक्तिगत संग्रह में सतरहवीं-अठारहवीं शती की अमूल्य जैन पांडुलिपियाँ एवं षटखण्डागम, कषायपाहुड, समवायांग, स्थानांग आदि सूत्र व अन्य कई पुस्तकें संगृहीत हैं। जो इनकी खरीद के इच्छुक हों, वे कृपया सम्पर्क करें—देवेन्द्र जैन, सचिव, हीरानिधि, साढ़ूमल, स्टेशन ललितपुर, वाया—महरौनी (उ० प्र०) २८४४०४।

दिल्ली :—जैन महासभा ने समस्त जैन समाज के रोजगार के इच्छुक युवकों को रोजगार देने की दृष्टि से जैन रोजगार सूचना केन्द्र की स्थापना की है । रोजगार इच्छुक व्यक्ति अपना पूरा विवरण, योग्यता, अनुभव आदि के साथ निम्न पते पर भेजें—प्रो० रतन जैन, महासचिव, जैन महासभा, ६—ए०, पोकेट–बी०, ब्लॉक ६, अशोक विहार, फैज–३, दिल्ली–११००५२ ।

जो युवक स्व-रोजगार चलाने के इच्छुक हों, वे आवश्यक प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए अपने अनुभव, योग्यता आदि का विवरण देते हुए निम्न पतों पर सम्पर्क करें – (१) ग्रामीण विकास एवं स्व उद्योग प्रशिक्षण संस्थान, २०२७, सैक्टर–४, अरबन स्टेट, **गुड़गांव** एवं (२) एस० एच० २६६, शास्त्री-नगर, गाजियाबाद–२२१००२ (उ० प्र०) ।

जयपुर :—यहाँ श्री व० स्था० जैन श्रावक संघ की ओर से महासती श्री शुभमतीजी के सान्निध्य में वैराग्यवती बहिन सुश्री पुष्पावती चोपड़ा का अभिनन्दन किया गया । पुष्पा बहिन बालोतरा निवासी हैं । आप ११ मई को आचार्य श्री नानेश के सान्निध्य में दीक्षा अंगीकार कर रही हैं । हार्दिक शुभ कामनाएँ ।

चन्द्रपुर :—वाणीभूषण श्री रतनमुनिजी के सान्निध्य में १५ मई को वैरागी बन्धु श्री अनिलकुमार पींचा की भागवती दीक्षा एवं नव-निर्मित जैन भवन का उद्घाटन समारोह सम्पन्न हो रहा है ।

नागलोई–दिल्ली :—यहाँ जैन स्थानक का शिलान्यास समारोह एवं आचार्य श्री खुशहालचन्दजी म० सा० का पुण्य स्मृति समारोह, पं० र० श्री हेमचन्द्रजी म० सा० के सान्निध्य में सम्पन्न हुआ ।

जलगाँव :—प्रमुख श्रावक एवं समाजसेवी श्री रतनलालजी बाफना के अनुसार आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० की प्रेरणा से स्थापित श्री महावीर जैन पाठशाला योजना के अन्तर्गत १६ स्थानों पर आयोजित विभिन्न धार्मिक परीक्षाओं में ४१७ छात्र प्रविष्ट हुए, जिसमें २८७ छात्र उत्तीर्ण हुए । विभिन्न कक्षाओं के प्रथम चार श्रेष्ठ छात्रों को पुरस्कार प्रदान किये गये । यह योजना मै० राजमल, लखीचन्द ललवानी फर्म की ओर से संचालित है ।

कालियास (भीलवाड़ा) :—यहाँ अ० भा० बुरड़ (ओसवाल) परिवार के सदस्यों का सम्मेलन आयोजित किया जा रहा है । सम्बन्धित सदस्य अपनी पूरी जानकारी श्री मिश्रीलाल रतनलाल बुरड़ के पते पर भेजें ।

मद्रास :—श्री अ० भा० सुधर्म श्रावक संघ (दक्षिण शाखा) की ओर से २१ अप्रेल से २८ अप्रेल तक धार्मिक प्रशिक्षण शिविर एवं २७ से २९ अप्रेल तक स्वाध्यायी प्रशिक्षण शिविर का आयोजन किया जा रहा है। इच्छुक शिविरार्थी सम्पर्क करें—११८, आदिअप्पा, नायकन स्ट्रीट, मद्रास—६०००७९।

जयपुर :—'स्वाध्याय संगोष्ठी' के अन्तर्गत १२ मार्च को श्री एच० एस० रांका के निवास-स्थान पर डॉ० नरेन्द्र भानावत का 'जैन धर्म' पर विशेष व्याख्यान हुआ। संयोजन श्री बी० एल० पानगड़िया ने किया। व्याख्यान के बाद प्रश्नोत्तर भी हुए।

जयपुर :—राज० उच्च न्यायालय के वरिष्ठ न्यायाधीश श्री नरेन्द्र-मोहन कासलीवाल हिमाचल प्रदेश के मुख्य न्यायाधीश पद पर नियुक्त किये गये हैं। हार्दिक बधाई।

जोधपुर :—श्री पी० सी० जैन राज्य सरकार द्वारा भूतल विभाग में मुख्य अभियन्ता पद पर पदोन्नत किये गये हैं। हार्दिक बधाई।

शोक-श्रद्धांजलि

जम्मू :—आचार्य श्री नानेश के सुशिष्य श्री भूपेन्द्र मुनिजी का ७ फरवरी को संथारापूर्वक ३७ वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। लगभग १७ वर्षों तक आपने तप-त्याग-पूर्वक संयमी जीवन का पालन किया। पं० रं० श्री शान्ति मुनिजी के साथ यहीं आपका चातुर्मास था।

जोधपुर :—यहाँ प्रवर्तक श्री रूपचन्दजी म० सा० की आज्ञानु-वर्तनी वयोवृद्धा महासती श्री सज्जन कंवरजी का संथारापूर्वक स्वर्गवास हो गया। आप सरलमना साध्वी-रत्न थीं।

नागपुर :—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री प्रेमजी भाई शाह का १० मार्च को ६६ वर्ष की अवस्था में स्वर्गवास हो गया। आप सन् ८१ से नागपुर स्था० जैन संघ के अध्यक्ष थे। विभिन्न धार्मिक, सामाजिक एवं व्यावसायिक संस्थाओं के आप पदाधिकारी एवं संचालक थे। आप उदार विचार के प्रगतिशील, कर्मठ समाजसेवी एवं स्वाध्यायी श्रावक थे। सन्त-सतियों की सेवा में आप सदैव अग्रणी रहते थे। वर्षों तक आप

व० स्था० जैन श्रावक संघ, नागपुर के महामंत्री रहे और समाजसेवा की विविध प्रवृत्तियाँ संचालित कीं। सादगी, सरलता, उदारता, सहिष्णुता और सहृदयता से ओतप्रोत आपका जीवन समाज के लिए प्रेरणादायक रहा।

कुचेरा :—यहाँ वयोवृद्ध शास्त्र मर्मज्ञ पं० जसवन्तराजजी खींवसरा का ८३ वर्ष की आयु में ३ फरवरी को समाधिपूर्वक स्वर्गवास हो गया। आप श्री पूनमचन्दजी खींवसरा, आविष्कारक जैन संकेत लिपि द्वारा संचालित 'श्री जैन वीराश्रम, ब्यावर' के आद्य स्नातकों में से थे। बलून्दा, जैतारण, पाली, कुचेरा आदि स्थानों की धार्मिक शिक्षण संस्थाओं में आपने वर्षों तक अध्यापन कार्य किया। आपका जीवन सरल, सादगीपूर्ण, सात्विक और धर्मनिष्ठ था। आप नियमित सामायिक-स्वाध्याय एवं प्रतिक्रमण करते थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं। आपके निधन से एक मूकसेवी आगमिक परम्परा के मूर्धन्य विद्वान् की अपूरणीय क्षति हुई है।

सवाई माधोपुर :—यहाँ के उत्साही, सेवाभावी, युवा कार्यकर्ता श्री धर्मचन्दजी जैन गाडौला निवासी की धर्मपत्नी श्रीमती सम्पतबाई का २५ फरवरी को २४ वर्ष की अल्पायु में दुखद निधन हो गया। आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के प्रति इनकी अनन्य श्रद्धा थी।

पाचोरा :—श्री हरकचन्दजी संघवी का १२ फरवरी को ५८ वर्ष की आयु में असामयिक निधन हो गया। आप विगत २० वर्षों से स्थानीय स्था० जैन श्रावक संघ के अध्यक्ष थे। सन्त-सतियों की सेवा में आप सदैव अग्रणी रहते थे। आपका जीवन धर्मपरायण, सादगीपूर्ण और व्रतनिष्ठ था।

उदयपुर :—यहाँ श्रीमती लहरकंवर धर्मपत्नी स्व० श्री इन्द्रसिंहजी कोठारी का ८५ वर्ष की आयु में २ मार्च को निधन हो गया। आप धार्मिक वृत्ति की सरलस्वभावी महिला थीं। आप डॉ० देवेन्द्र कोठारी की माता थीं।

जोधपुर :—यहाँ के प्रमुख श्रावक श्री चन्दनराजजी झाम्बड़ मेहता का २३ फरवरी को ५७ वर्ष की आयु में निधन हो गया। आप आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के परम भक्त एवं गायक श्रावक थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं।

मद्रास :—श्री इन्दरचन्दजी झाबक की धर्मपत्नी एवं श्री पन्नालालजी की पुत्रवधू श्रीमती मंजुकंवर का २३ मार्च को ३१ वर्ष की अल्पायु में दुखद निधन हो गया। आप धर्मनिष्ठ, सरल स्वभावी महिला थीं और कई धार्मिक-सामाजिक संस्थाओं से जुड़ी हुई थीं। आप धर्मपरायण सुश्रावक श्री गिरधारीलालजी बेताला की सुपुत्री थीं।

जयपुर :—आकाशवाणी के प्रसिद्ध समाचार वाचक बख्शी भागचन्द जैन का ६३ वर्ष की आयु में १४ मार्च को दुखद निधन हो गया। गत ३० वर्षों से आकाशवाणी, जयपुर से जैन भजनों एवं अन्य कार्यक्रमों के प्रसारण में आपकी विशेष भूमिका रही।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति हम सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 'जिनवाणी' एवं अ० भा० जैन हितैषी श्रावक संघ की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए शोक-विह्वल परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

—सम्पादक

साभार प्राप्ति स्वीकार

२५१/– रु० "जिनवाणी" के आजीवन सदस्यता हेतु प्रत्येक

२४६७. मैसर्स अरुण दाल मिल, जलगांव
२४६८. श्री मोहनलालजी धरमीचन्दजी भण्डारी, नवाब (अजमेर)
२४६९. श्री विमलचन्दजी देवड़ा, अहमदाबाद
२४७०. श्री सायरचन्दजी बाघमार, कोसाणा (जोधपुर)
२४७१. श्री एम० शान्तिलालजी जैन, बैंगलोर
२४७२. श्री अमर जैन साहित्य संस्थान, उदयपुर
२४७३. श्री अभयजी डोसी पुत्र श्री नवरतनमलजी डोसी, जोधपुर
२४७४. श्री अशोककुमारजी तातेड़, मद्रास
२४७५. श्री सूरजकुंवर लोढा, वडालाकच्छ (गुजरात)
२४७६. श्री निर्मलचन्दजी धांधिया, कलकत्ता
२४७७. श्री बस्तीमलजी पुत्र श्री मालाजी जाब (जालोर)

"जिनवाणी" को सहायतार्थ भेंट

२०१/– श्री उम्मेदसिंहजी बड़कतिया, टाटोटी
चि० सुरेन्द्र के विवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१/– श्री शान्तिलालजी डागा, जयपुर
सौ० कां० पूर्णिमा (सुपुत्री श्री शान्तिलालजी डागा) के शुभ विवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१/– श्री ज्ञानचन्दजी नेमीचन्दजी चौरड़िया, जयपुर
श्रीमती लाड़देवी चौरड़िया धर्मपत्नी स्व० श्री धनरूपमलजी चौरड़िया की पुण्य स्मृति में भेंट।

५१/– मैसर्स महावीर इलैक्ट्रीकल्स एजेन्सी, मद्रास
चि० श्याम सुपुत्र श्री सुमेरमलजी लुनवाल का शुभ विवाह सौ० कां० शर्मिला के साथ होने की खुशी में।

३१/– श्री रामजीलालजी जैन, भरतपुर
आपका पौत्र खो गया, वह मिल गया उसकी खुशी में भेंट।

३१/– श्रीमती मोहनकंवरजी धर्मपत्नी स्व० श्री सम्पतचन्दजी सिंघवी, जोधपुर।

११/– श्री कमलचन्दजी जैन, जयपुर
धर्मपत्नी श्रीमती सुनीता जैन का ज्ञानपंचमी के तप के समापन के उपलक्ष्य में भेंट।

"सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल" को सहायतार्थ भेंट

१००/– श्री वर्ध० स्था० जैन श्रावक संघ, नागपुर
श्री प्रेमजी भाई नागसी भाई शाह की पुण्य स्मृति में भेंट।

५०१/– रु० साहित्य प्रकाशन के आजीवन सदस्यता हेतु

३४४. श्री कान्तिलालजी भीकमचन्दजी चौधरी, धूलिया।
३४५. श्री एस० महावीरचन्दजी जैन, आडियारगंज (तमिलनाडु)।
३४६. श्री टीकमचन्दजी हीरावत, जयपुर।

—मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

यह शरीर नौका रूप है, जीवात्मा उसका नाविक है और संसार समुद्र है। महर्षि इस देह रूप नौका के द्वारा संसार-सागर को तैर जाते हैं। उत्तराध्ययन २३/७३

अपनी बात : आचार्यत्व के साठ वर्ष

नमो आयरियाणं

□ डॉ० नरेन्द्र भानावत

पंच परमेष्ठियों में 'आचार्य' तीसरा पद है, जिसका विशेष महत्त्व है। आचार्य को इसलिए नमस्कार किया गया है कि उसके द्वारा निर्दिष्ट मार्ग पर चलकर ही 'अरिहन्त' और 'सिद्ध' पद तक पहुँचा जा सकता है। 'साधु' और 'उपाध्याय' पद के साधना-पथ पर चलकर ही 'आचार्य' पद की प्राप्ति संभव है। 'आचार्य' वह सूत्र है, जो 'साधु' को 'सिद्ध' बनाता है। आचार्य चतुर्विध संघ, जिसके अंग हैं—साधु, साध्वी, श्रावक और श्राविका—का संचालक होता है। संघ की व्यवस्था, उसका सुचारु रूप से संचालन, उसकी समृद्धि और सुदृढ़ता आचार्य की कुशलता, आचार-निष्ठता, जितेन्द्रियता और मार्ग-दर्शक नेतृत्व-क्षमता पर निर्भर रहती है। आचार्य में सूर्य की तरह प्रखरता और चन्द्र की तरह प्रशान्तता का विरल संगम रहता है। आचार्य स्वयं पांच आचारों—ज्ञानाचार, दर्शनाचार, चारित्राचार, वीर्याचार और तपाचार—का पालन करता हुआ दूसरों को तदनुरूप आचरण करने की प्रेरणा देता है। सच्चा आचार्य वह है, जिसके आचरण से प्रेरणा पाकर संघ सदाचरण में प्रवृत्त होता है। आचार्य छत्तीस गुणों से युक्त होता है। वह इन्द्रिय-विजेता, कषाय-त्यागी, तपोधनी, समिति-गुप्ति का आराधक और संघनायक होता है।

शास्त्रों में कहा गया है—प्रवचन रूपी समुद्र के जल के मध्य में स्नान करने से अर्थात् परमागम के पूर्ण अभ्यास और अनुभव से जिसकी बुद्धि निर्मल हो गई है, जो निर्दोषरीति से छह आवश्यकों का पालन करता है, जो मेरू के समान निष्कम्प है, जो शूरवीर है, सिंह के समान निर्भय है, श्रेष्ठ है, देश, कुल और जाति से शुद्ध है, सौम्यमूर्ति है, अन्तरंग और बहिरंग दोनों प्रकार के परि-ग्रह-संग से उन्मुक्त है और प्रकाश के समान निर्लेप है, ऐसा महापुरुष आचार्य होता है जो संघ के संग्रह अर्थात् दीक्षा देने में और निग्रह अर्थात् प्रायश्चित्त—दंड देने में कुशल हो, सूत्र और अर्थ की विचारणा में विशारद हो, जिसकी कीर्ति सर्वत्र फैल रही हो और जो सारण (आचरण), वारण (निषेध) एवं साधन (व्रतों का संरक्षण रूप क्रियाओं) में निरन्तर उद्युक्त हो, ऐसा व्यक्ति ही आचार्य होने के योग्य है।

कहना न होगा कि परम श्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के व्यक्तित्व में आचार्य पद के लिए उपर्युक्त वर्णित सभी विशेषताएँ समाहित हैं।

आज से ६० वर्ष पूर्व स्व. आचार्य श्री शोभाचन्द्रजी म. सा. के लिखित गोपनीय दस्तावेज के आधार पर जोधपुर चतुर्विध संघ ने केवल २० वर्ष की अल्पायु में आपको अक्षय तृतीया सं० १९८७ को आचार्य जैसे महान् दायित्वपूर्ण पद पर प्रतिष्ठित किया। वर्तमान विद्यमान आचार्यों में संभवतः आप ही ऐसे आचार्य हैं, जो ६० वर्ष की सुदीर्घ अवधि तक इस पद को कुशलतापूर्वक संभाले हुए हैं। इस अवधि में आपने आत्म-कल्याण के साथ-साथ लोक-कल्याण के लिए न केवल देश के विभिन्न प्रान्तों में सुदूर पदयात्राएँ कीं वरन् शास्त्र और लोकानुभव मिश्रित विशिष्ट रत्नत्रय आराधना के बल पर कई योजनाएँ चतुर्विध संघ के समक्ष प्रस्तुत कीं, जिनका समाज में यथाशक्ति क्रियान्वयन भी हुआ। समग्र रूप से आपके आचार्यकाल की देन के चार विशिष्ट आयाम हैं—१. सामायिक, २. स्वाध्याय, ३. शिक्षा और ४. साहित्य।

१. सामायिक—श्रमण का जीवन विशुद्ध आजीवन सामायिक-साधक का जीवन है। शास्त्रों में 'समय' को आत्मा कहा गया है। जो आत्मस्थ होता है, वह सामायिक में होता है। सामायिक समभाव की साधना है। आचार्य श्री ने सुख-दुःख, हर्ष-विषाद, लाभ-हानि, यश-अपयश आदि से ऊपर उठकर समभाव में रमण करना ही अपनी संयम-साधना का लक्ष्य बनाया है। स्वयं सदा सामायिक में रहते हुए समाज में समता स्थापित हो, जीवन और परिवार में क्रोध, मान, माया, लोभादि कषाय मन्द से मन्दतर हों, जीवन-व्यवहार तनावमुक्त हो, सबके प्रति करुणा, प्रेम और दया का उद्रेक हो, संघ में समता, समन्वय, सहिष्णुता और सरसता का संचार हो, इस उद्देश्य से आपने जन-जन को समभाव की साधना के लिए सामायिक के नियम दिलाने का व्यापक अभियान प्रारम्भ किया। आपके उपदेशों से अ० भा० सामायिक संघ का गठन हुआ और व्यक्तिगत एवं सामूहिक रूप में स्थान-स्थान पर सामायिक-साधना की अलख जगी। इससे हजारों भाई-बहिनों के जीवन में परिवर्तन आया, परिवार में सुख-शांति का वातावरण बना और मनसा, वाचा, कर्मणा समत्व का अभ्यास बढ़ा।

२. स्वाध्याय— समभाव की पुष्टि के लिए स्वाध्याय आवश्यक है। आचार्य श्री बराबर यह महसूस करते रहे कि यदि भाई-बहिनों में स्वाध्याय का रस पैदा नहीं हुआ तो सामायिक जड़ सामायिक बनकर रह जायेगी। सामायिक दस्तूर के रूप में केवल तन की सामायिक बनकर न रहे, वह सच्चे अर्थ में मन की सामायिक बने, उससे हृदय स्वच्छ, बुद्धि निर्मल और प्रज्ञा स्थिर बने। इसके लिए आवश्यक है कि सामायिक-साधक अपने अन्तर से जुड़े, अपना आत्म-निरीक्षण करे और जीवन में रूपान्तरण लाये। यह आन्तरिक रूपान्तरण "स्वाध्याय" से ही संभव है। आचार्य श्री ने इस बात पर बल दिया कि जिस प्रकार सुई के साथ धागा होने पर उसके गुमने का खतरा नहीं रहता, इसी

प्रकार जीव के साथ श्रुतज्ञान रूप "स्वाध्याय" जुड़ने से जीव भव-प्रपंच में नहीं पड़ता, उसे अपने अस्तित्व की पहचान बनी रहती है। वह अपने "स्व" से हटता नहीं। "पर" पदार्थों की ओर आकर्षित भी होता है तो फिर सावधान होकर स्वाध्याय के द्वारा अपने 'स्व" से, आत्म से जुड़ जाता है।

आप श्री की प्रेरणा से राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु आदि प्रान्तों में स्वाध्याय संघ गठित हुए और स्वाध्यायियों के रूप में समता-साधकों की एक शान्ति सेना सी तैयार हो गयी। ५०० से अधिक की संख्या में ये शान्ति सैनिक न केवल प्रतिदिन नियमित रूप से सामायिकपूर्वक स्वाध्याय करते हैं वरन् अपने सम्पर्क में आने वाले भाई-बहिनों को धर्माराधना की प्रेरणा भी देते हैं। यही नहीं, चातुर्मास-काल में जो क्षेत्र सन्त-सतियों के चातुर्मास से वंचित रह जाते हैं, वहाँ पर्युषण के दिनों में जाकर संवर रूप सन्त-जीवन में रहते हुए, उन्हें रत्नत्रय की आराधना में सहयोग करते हैं। स्वाध्याय की प्रवृत्ति अधिकाधिक बढ़े, शास्त्राभ्यास की ओर जन-सामान्य की स्थायी रुचि जगे, इस उद्देश्य से आचार्य श्री की प्रेरणा के फलस्वरूप **"स्वाध्याय-शिक्षा"** नाम से द्वैमासिक पत्रिका का भी प्रकाशन होता है।

३. **शिक्षा**—सामायिक और स्वाध्याय से जीवन में स्थायी रूपान्तरण हो, इसके लिए व्यक्ति का शिक्षित होना आवश्यक है। आध्यात्मिक शिक्षण, व्यावहारिक लोक-शिक्षण से मिलकर अधिक व्यापक, तर्कसंगत और पुष्ट बनता है। आज तो गाँव-गाँव में व्यावहारिक शिक्षण की सुविधाएँ हैं, पर आज से ५० वर्ष पूर्व शिक्षा के अवसर बहुत कम थे। आचार्य श्री ने समाज में ज्ञान की ज्योति प्रज्वलित करने के लिए जगह-जगह विद्यालय खोलने की प्रेरणा दी। परिणामस्वरूप समाज के भाई-बहिनों में शिक्षा के प्रति रुचि बढ़ी। जो बहिनें विभिन्न सामाजिक कुरीतियों से ग्रस्त थीं, उनमें भी आत्म-विश्वास जगा और वे प्रगतिविरोधक सामाजिक कुरीतियों का उन्मूलन कर समाज-सेवा में आगे आयीं।

आचार्य श्री बराबर इस बात पर बल देते हैं कि केवल पुस्तकीय ज्ञान पर्याप्त नहीं, शिक्षा तभी हितवाही बनती है, जब वह सद्संस्कारों के साथ जुड़े। जीवन-निर्वाह के साथ-साथ जीवन-निर्माण में सहयोगी बनने के उद्देश्य से आचार्य श्री ने स्थान-स्थान पर गुरुकुल पद्धति पर छात्रावास खोलने की प्रेरणा दी। आज लौकिक व्यावहारिक शिक्षण का आनुपातिक प्रतिशत अन्य समाज की अपेक्षा जैन समाज में कहीं अधिक है, पर धार्मिक शिक्षण और साँस्कृतिक विरासत के प्रति जो निष्ठा और आंतरिक अभिरुचि होनी चाहिये, वह नहीं है। आचार्य श्री इस विसंगति को दूर करने के लिए समाज के कर्णधारों को सदैव

प्रेरित करते रहते हैं। परिणामस्वरूप अब कई स्थानों पर धार्मिक पाठशालाएँ चलने लगी हैं। साथ ही जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान, जयपुर, महावीर जैन स्वाध्याय विद्यापीठ, जलगाँव जैसी संस्थाएँ अस्तित्व में आयी हैं, जहां पारम्परिक प्राकृत, संस्कृत और जैनविद्या के अध्ययन के साथ-साथ स्नातक-स्नातकोत्तर स्तर के विश्वविद्यालीय शिक्षण की भी सुविधा है। स्त्री-शिक्षा के क्षेत्र में भी आशातीत प्रगति हुई है। अ० भा० महावीर जैन श्राविका संघ के गठन के मूल में आचार्य श्री की यह भावना बलवती रही है कि समाज में स्त्री-शक्ति यदि जाग्रत हो जाए तो फिर उस समाज को प्रगति की दौड़ में कोई नहीं पछाड़ सकता। स्त्री देहरी का दीपक है, जिससे पीहर और ससुराल, दोनों पक्ष आलोकित हो उठते हैं।

४. **साहित्य**—जैन समाज मुख्यतः व्यावसायिक समाज है, जहाँ धन के प्रति अधिक लगाव और आकांक्षा बनी रहती है। साहित्य का प्रभाव प्रत्यक्ष रूप में कम दिखाई देता है। वह अप्रत्यक्षरूप से व्यक्ति के मन को संस्कारित करता है। चतुर्विध संघ में बहुत कम सन्त-सती और श्रावक-श्राविकायें हैं, जिनका साहित्य के प्रति गहरा जुड़ाव और आंतरिक्त रुझान हो। यही कारण है कि हमारे समाज में साहित्य के संरक्षण, संग्रह, प्रकाशन, वितरण और पठन-पाठन के प्रति जैसी रुचि होनी चाहिये वह नहीं है। आचार्य श्री उन दूरद्रष्टा साहित्य-साधकों में से हैं, जिन्होंने न केवल जैन आगमों की जन-साधारण के लिए सुगम-सुबोध व्याख्यायें और टीकायें कीं, वरन् तहखानों, बस्तों, थैलों और आलमारियों में बन्द पड़े पुराने हस्तलिखित ग्रन्थों को संगृहीत, व्यवस्थित और सूचीबद्ध कर संरक्षित करने की प्रेरणा दी। '**आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भण्डार, जयपुर**' आचार्य श्री की साहित्य-संरक्षकता और सांस्कृतिक विरासत को सुरक्षित रखने की प्रेरणा का जीवित स्मारक है।

केवल प्राचीन साहित्य वर्तमान जीवन के लिए प्रेरक और भावी जीवन के लिए दिशा-निर्देशक नहीं बन सकता, जब तक कि वह आधुनिक सम-सामयिक चेतना से न जुड़े। इस दृष्टि से आचार्य श्री बराबर इस बात पर बल देते रहे हैं कि प्राचीन साहित्य के अनुसंधान में आधुनिक ज्ञान-विज्ञान के चिन्तन का अवश्य उपयोग किया जाय। इस भावना के फलस्वरूप ही 'विनयचन्द्र ज्ञान भंडार' में दुर्लभ एवं स्तरीय मुद्रित ग्रंथों का भी अच्छा संग्रह है।

साहित्य का इतिहास से गहरा संबंध है। साहित्य और इतिहास की समझ, बिना दर्शन-शास्त्र और धर्म-शास्त्र के मजबूत नहीं बनती। "**जैन धर्म का मौलिक इतिहास**" चार भागों में प्रस्तुत करने के पीछे आचार्य श्री का इतिहास-बोध प्रेरक कारक रहा है। इतिहास तीसरी आँख है, जिसके द्वारा परम्परा को देख-परख कर भावी समाज रचना के लिए आवश्यक निर्देशक तत्त्वों की पकड़ हो पाती है।

आचार्य श्री 'सादा जीवन, उच्च विचार' के आदर्श रूप हैं। समाज में भी वे सादगी, स्वावलंबन और सात्विक प्रवृत्ति का विकास देखना चाहते हैं। अपने प्रवचनों में वे बराबर इस बात पर बल देते हैं कि धर्म प्रदर्शन, आडम्बर, परिग्रह में नहीं है, वह है समता, सरलता और सहिष्णुता में। जो धन तुम्हें मिला है, यदि उसका सदपुयोग दूसरों के दुःख-निवारण में, समाज को आगे बढ़ाने में, राष्ट्र को सुखी और समृद्ध बनाने में होता है तो वह धन धन्य है और धनिक श्रेष्ठि है और यदि उसका उपयोग विषय-सेवन, व्यसन-वृद्धि और इन्द्रिय-भोग में होता है तो वह हिंसा और पाप है।

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि आचार्य श्री ने अपने आचार्य-काल में सामायिक, स्वाध्याय, शिक्षा और साहित्य के माध्यम से वैयक्तिक जीवन में समभाव, सामाजिक जीवन में स्वस्थता-शुद्धता और राष्ट्रीय जीवन में जागृति का शंखनाद किया है। ऐसे समताशील, प्रेरणापुंज, तेजस्वी व्यक्तित्व को ६०वें आचार्य पद ग्रहण दिवस पर शत-शत वंदन और दीर्घायु होने की शुभ कामना।

पूज्य श्री हस्ती स्तवन

प्रिय सुशिष्य पं. श्री उदयचंदजी म. जैन सिद्धान्ताचार्य

(शार्दूल विक्रीड़ित छन्दः)

प्रान्ते श्रीमरुसंज्ञके शुभ पुरे पीपाड़ संज्ञेवरे स्थितः।
बोहरा वंशविभूषणोऽति सुभगः केवलजीनाम्ना ॥
तस्यैवात्मज इत्यसौमुनिवरो माता च रूपामता।
पूज्यो हस्तिमलः सदा, विजयते शिष्योदय प्राथितः ॥१॥

मारवाड़ प्रान्त में पीपाड़ नामक ग्राम में श्रीमान् बोहरा वंश के भूषण केवलजी हुए थे, उन्हीं के सुपुत्र श्री पूज्य हस्तीमलजी म. सा. हुए। उनकी माता का नाम श्रीमती रूपा बाई था। ऐसे पूज्य हस्तीमलजी म. सा. सदा विजयी होते हैं और उदय मुनि के द्वारा प्रार्थना किये गये हैं।

सप्तेषणनक्चन्द्र संमित वरे वर्षे न पौष सिते।
तिथ्यांचापि चतुर्दशीति वितता यां जन्मलेभे शुभम्।
श्री रत्नेन्द्रजी सम्प्रदायमतगः शोभा च चन्द्रो गुरुः ॥
पूज्यो हस्तिमलः सदा विजयते शिष्योदय प्रार्थितः ॥२॥

पूज्य महाराज श्री का जन्म विक्रम संवत् १६६७ पौष शुक्ला चतुर्दशी के दिन हुआ। आप श्री पूज्य रत्नचन्द्रजी महाराज के सम्प्रदाय में श्री शोभाचन्द्रजी महाराज के शिष्य हुए। ऐसे पूज्य हस्तीमलजी महाराज सा., उदय मुनि के द्वारा प्रार्थना किये गये, सदा विजयी होते हैं।

सोचें और करें
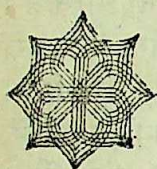
आप अपने समाज व स्वधर्मी भाई-बहनों के लिये क्या कर रहे हैं ?

☐ श्री चैतन्यमल ढड्ढा

........क्या कुछ भी जिम्मेदारी आपके ऊपर नहीं आती है ?

........क्या कभी आपने इस विषय में सोचा है ?

........क्या आप अनुभव करते हैं कि आप समाज की एक महत्त्वपूर्ण इकाई हैं ?

........क्या आपने यह भी सोचा है कि बहुत अधिक सुख-सुविधाओं, संसाधनों के बीच जीवन जीने वाले होते हुए भी आज अतृप्ति, अशान्ति, अज्ञात भय, कष्ट कारक संवेदनाओं में आकण्ठ डूबे हुए हैं ?

........उत्तरोत्तर प्रगति के तुमुलघोष में होते हुए भी आप अपने आपको अकेला, असहाय, निरुपाय, प्रताड़ित एवं दीनहीन अनुभव कर रहे हैं ?

........आप पूछ सकते हैं—मैं क्या करूँ ? जो भी काम आपके जिम्मे हो उसे पूरा करें।

अगर आप अपना काम पूरी लगन से करते हैं तो स्वयं अपनी क्षमता बढ़ा रहे हैं। अपनी उन्नति कर रहे हैं, चाहे उसका पूरा फायदा मिले या नहीं। आज हर क्षेत्र में कर्मनिष्ठ व्यक्ति की बहुत मांग है। अगर वर्तमान संस्था में आपको अपनी मेहनत का पूरा मुआवजा नहीं मिलता तो दूसरी संस्था देगी।

........अपना फालतू समय किसी स्थानीय समाजसेवी संस्था में लगाएँ—पुस्तकालय, स्कूल, चिकित्सालय सभी जगह निस्वार्थी व्यक्तियों की आवश्यकता है। असंतुष्ट होकर रहने से न तो आप बंदल सकेंगे न ही आप स्वधर्मी भाई-बहनों का अथवा समाज का भला कर सकेंगे।

........रोजी-रोटी का प्रबन्ध तो भिखारी, आवारा पशु और गली के कुत्ते भी कर लेते हैं। पर आप पढ़े लिखे हैं, सोच-विचार कर सकते हैं, काम-धन्धे में लगे हैं, अपने परिवार की जिम्मेदारी उठाए हैं, इसलिए यह आवश्यक है कि आप अपने आपसे पूछें कि—

"आप अपने समाज व स्वधर्मी भाई-बहनों के लिये क्या कर रहे हैं ?"

—मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर-३०२ ००३

प्रवचनामृत
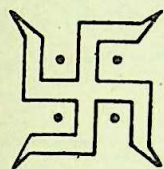
आहार-शुद्धि—जीवन-शुद्धि*

□ आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा.

आत्मा अनादि काल से आबद्ध है। मुमुक्षुओं के सम्मुख चिरकाल से ही यह विचारणीय प्रश्न है कि चेतन को बंधन-मुक्त कैसे किया जाय? पानी स्वभावतः ही ठंडा होता है। पर भट्टी आदि के संयोग के कारण वही पानी गरम हो जाता है। इसी प्रकार जड़ संयोग के कारण ही आत्मा बंधनयुक्त है। आत्मा के लिए पर संयोग अज्ञान और मोह है।

भारत बन्धन में था। जब वह जागा तो उसने विदेशी सत्ता का जुआ उतार कर फेंक दिया। इसी प्रकार आत्मा जाग जाय तो वह कर्मों के बन्धन को काट कर फेंक सकती है। यही नहीं, साधना मार्ग पर चलकर परमात्मा तक वन सकती है।

अज्ञान और मोह के बन्धनों को काटने के लिए ज्ञान और वीतरागता की आवश्यकता है। ज्ञान और वीतरागता की प्राप्ति का साधन धर्म है। धर्म-साधना के दो मार्ग हैं—आगार धर्म और अनगार धर्म। आगार धर्म के साधक आनन्द ने १४ वर्ष तक श्रावक धर्म की साधना की और पडिमाधारी बनकर पडिमा की साधना में रत रहा।

आनन्द सचित्त आहार का त्याग करता है। क्यों? इसलिए कि आहार की शुद्धि का विचारों पर भारी प्रभाव पड़ता है। आनन्द भोजन भी केवल एक बार करता है। एक बार भोजन करने से शरीर का पोषण तो हो ही जाता है—साथ ही प्रमत्तता या उन्मत्तता भी उत्पन्न नहीं होती।

अति भूखा रहना या अति भोजन करना दोनों साधना के आराधन में बाधक होते हैं। इसलिये भगवान् महावीर ने छः कारण से आहार छोड़ना और छः ही कारण से आहार करना बताया है। गीता ने इसी बात को बड़े सुन्दर शब्दों में अभिव्यक्त किया है—

*आचार्य श्री के प्रवचन से संकलित।

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः
युक्ताहार विहारस्य,
युक्त चेष्टस्य कर्मसु ।
युक्त स्वप्नावबोधस्य,
योगो भवति दुःखहा ।।

अर्थात् युक्तिपूर्वक-उचित ढंग का आहार-विहार, कार्य, चेष्टा, सोना और जागना, दुःख को हरण करने वाला योग बन जाता है ।

ब्रह्मचर्य पालन के लिए आहार-विहार पर अंकुश होना अत्यन्त आवश्यक है ।

अपरिमित आहार सेवन का परिणाम यह होगा कि आलस्य और निद्रा परेशान करेंगे, इन्द्रियों में उत्तेजना पैदा होगी और विकारों का पोषण होगा ।

'उत्तराध्ययन सूत्र' के ३२ वें अध्ययन में बताया गया है कि—

"रसा पगामं न निसेवियव्वा,
पायं रसा दित्तिकरा नराणं ।
दित्तं च कामा समभिद्दवन्ति,
दुमं जहा साउफलं व पक्खी ।।१०।।

जिस प्रकार स्वादिष्ट फल-शाली वृक्षों के फलों को खाने के लिए पक्षी मंडराते हैं, उसी प्रकार ठूंस-ठूंस कर खाने वाले, मिष्ठान्न भोजी और उत्तेजक भोजन करने वालों को विकार घेर लेते हैं ।

ब्रह्मचर्य के साधक को सरस और प्रकाम (कामोत्तेजक) भोजन नहीं करना चाहिये । क्योंकि इससे विकार उत्पन्न होता है और विकारी व्यक्ति ज्ञान प्राप्ति नहीं कर सकता ।

ज्ञान प्राप्ति के बाद ज्ञानी पुरुष को आहार-पानी की सरसता और तमोगुण आदि उन्मत्त नहीं बना सकते । उन्हें बाह्य पदार्थ प्रभावित नहीं करते । उनकी हैरानी नहीं बढ़ती । ज्ञानी तो विष तक पचा जाते हैं । साधारण साधक ऐसा नहीं कर सकते ।

महामुनि स्थूलिभद्र ने कोश्या वैश्या की चित्रशाला में चातुर्मास किया । सरस आहार का सेवन भी किया । राग-रंग के वातावरण में रहते हुए भी स्थूलिभद्र का मन अडोल बना रहा । कोश्या को स्थूलिभद्र ने अपने रंग में रंग लिया । यहाँ तक कि कोश्या श्राविका बन गई ।

स्थूलिभद्र की प्रशंसा सहन नहीं कर सकने वाला स्थूलिभद्र का साथी ईर्ष्यालु मुनि भी कोश्या की चित्रशाला में चातुर्मास करने को चल पड़ा। परन्तु चार मास की कौन कहे—पहले दिन ही वह डगमगा गया और नेपाल में रत्न-कंबल की भीख लेने को चल पड़ा। सारी मान-मर्यादा मिट्टी में मिल गई। क्योंकि ज्ञान के प्रकाश से जीवन जगमगाया हुआ नहीं था।

मुनि सचित्त के त्यागी होते हैं। पडिमाधारी श्रावक भी सचित्त के त्यागी तो हैं—पर आरम्भ के त्यागी नहीं होने से आरम्भ करते हैं और कराते भी हैं। ऐसे समय में एक शङ्का उद्भूत होती है। कुछ लोग तो ऐसी कुशङ्का कर बैठते हैं कि जल आदि का आरम्भ करके उन्हें अचित्त बनाकर भोगने से तो वैसे ही खाने में क्या हर्ज है ? मार कर खाने में कौन-सी विशेषता है ?

इस शङ्का का समाधान इस प्रकार है :—

(१) सचित्त के त्याग से संसार के जितने फल-फूल आदि हजारों सचित्त पदार्थ हैं वे मर्यादित हो जाते हैं। आदमी सबको अचित्त नहीं बना सकता।

(२) हिंसा की दृष्टि से भी विचार कर लीजिये। हिंसा दो प्रकार की है—(१) द्रव्य-हिंसा और (२) भाव-हिंसा। आरम्भ करते समय मोह, क्रोध आदि हों तो भाव-हिंसा है। इसलिये बेपरवाही से किये गए काम में द्रव्य-हिंसा न होने पर भी भाव-हिंसा है और विवेक पूर्वक कार्य करते हुए द्रव्य-हिंसा हो जाने पर भी भाव-हिंसा नहीं है।

एक डॉक्टर के ऑपरेशन करने पर कदाचित रोगी मर जाय तो वह हत्या करने वाला नहीं होता, जबकि हत्या करने की नियत से गोली चलाने वाला हिंसक है।

अन्धाधुन्ध पत्थर फेंकने वाला किसी के न मरने पर भी हिंसक है और सावधानी पूर्वक इधर-उधर देखकर निशाना मारते किसी की हत्या भी हो जाय तो जुर्म नहीं समझा जाता। शास्त्रीय दृष्टि से हिंसा में प्रमाद और मोह ही प्रमुख कारण हैं। आचार्य कहते हैं :—

"प्रमत्तयोगात्प्राणव्यपरोपणं हिंसा।"

प्रमत्तयोग से प्राणों का पृथक्करण हिंसा है। गृहस्थ के खाना पकाते, पानी पीते, वस्त्रादि धोते-धुलाते विवेकपूर्वक क्रिया करते हुए भी हिंसा होती है, पर मोह की मन्दता से वह कटु फलदायिनी नहीं होती।

गृहस्थ त्रस जीवों को बचाने के लिये पानी को छानता तो है ही फिर वह पानी को अचित्त करता है। इससे त्रस जीवों का सम्यग् रक्षण हो जाता है। अतः

पानी को अचित्त करके पीने का व्रत होने से कई जलाशय और परेंडों का पानी छूट जाता है। फिर कच्चे पानी में जो प्रतिपल नये-नये जीव उत्पन्न होते और मरते हैं, अचित्त कर लेने पर वह हिंसा भी रुक जाती है। दूसरी बात यह है कि व्रत की पालना में स्वाद-विजय का भी दृष्टिकोण है। कच्चे पानी का स्वाद धोवन या गर्म की स्थिति में बदल जाता है और ठण्डे पानी का स्वाद अचित्त जल में नहीं रहता।

पानी को या सचित्त पदार्थ को अचित्त बनाते समय भी श्रावक की भावना आरम्भ घटाने की रहती है। वह यह सोचता है कि आज तो मुझे दोष लग रहा है पर वह दिन धन्य होगा, जब मैं आरंभ से पूर्णरूप से निवृत्त होऊँगा। अन्ततोगत्वा दोष को दोष मानने वाला, एक दिन दोष से मुक्त हो जाता है। इसी प्रकार प्रतिमाधारी श्रावक एक दिन आरम्भ का भी त्याग कर देता है। फिर अपने निमित्त बनी हुई वस्तु का त्याग करता है और अन्त में अनुमोदन का भी त्याग कर लेता है। फिर वह श्रमणभूत होकर मुनिवर जीवन व्यतीत करता है। आहार-पानी लेने को जाते समय यदि कोई उसे श्रमण समझ कर वन्दना करे तो वह कहता है—"भाई, मैं श्रावक हूँ, श्रमण नहीं।" वह धोखा नहीं देता। वेष की ओट में अपने आपको नहीं छिपाता। त्याग के गुण होते हुए भी वह व्यवहार को साफ रखता है। तब बिना गुण के पूजा पाना तो कितना बड़ा अपराध है।

गोस्वामी तुलसीदास ने नकली संतों की पोल खोलते हुए कहा है—

"नारि मुई घर सम्पत्ति नासी।
मूंड मुंडाय भये संन्यासी।।
ते सज्जन संग पांव पुजावहिं।
उभय लोक निज हाथ नसावहि।।"

नकली साधु को पूजने वाले से पुजाने वाला भारी गुनहगार है।

हमें गुण का उपासक होना चाहिये। अपना और पराये का भेद करके गुणों का आदर भूलना एवं शिथिलता का पोषण करना हितैषी श्रावकों का कर्तव्य नहीं है।

लेकिन करें तो क्या? आपका खान-पान शुद्ध नहीं। ताजा गाय, भैंस का दूध, सात समंदर पार से आये पैक दूध से ज्यादा महत्त्व का आपकी नजर में नहीं रहा। अपनी जिह्वा के स्वाद में पड़कर आज यह विचार ही नहीं किया जाता कि डबल रोटी, बिस्कुट या होटल के भोजन का मूल उपादान क्या है? और इसीलिये व्यक्ति में भी गुण-पूजा के बदले वेश-पूजा या स्वार्थ-पूजा बढ़ गई है। नकली खाने से आचरण भी नकली ही होंगे, किन्तु महावीर का मार्ग ऐसा नहीं है।

महावीर तो कहते हैं :—

'गुणेहि साहू—अगुणेहि साहू' दश० ९
"गुणः पूजा स्थानं,
गुणिषु न च लिगं न च वयः।"

विलायती फूल रंग-बिरंगे होते हैं और दिखने में नयनाभिराम होते हैं किन्तु उनमें खुशबू कहाँ? और भारतीय पुष्प चंपा, मोगरा, राजरानी, सुन्दर चाहे न हों पर खुशबू का भंडार उनमें भरा हुआ है। इसी प्रकार मनुष्य की पूजा में सदाचार, सत्य, शील, संतोष, दान आदि की खुशबू का विचार करना चाहिये। नकली रूप पर रीझना छोड़ दें।

जीवन में सद्गुणों की अत्यन्त आवश्यकता है। एक कन्या सभ्यता से उत्तर देती है दूसरी पत्थर-पटक बोलती है। ये सद्गुण रास्ते में पड़े नहीं मिलते, इसके लिए शिक्षा की आवश्यकता है। आप यदि यह विश्वास लिए बैठे हों कि महाराज आए हैं तो हम शिक्षित बन जायेंगे तो यह आपकी भूल होगी। यह काम तो आपको ही करना है।

श्रावक ऊँचे होंगे तो आप में से आने वाले साधु भी ऊँचे होंगे और आपके यहाँ घर में बार-बार झगड़ा करने वाले, आत्महत्या उतारू एवं समय-समय पर घर से भाग जाने वाले प्राणी हमारे यहाँ आकर कौन-सा उद्धार करेंगे? संयम में अशन-भाव को कैसे निभायेंगे? वे तो साधु-समाज को कलङ्कित ही करेंगे, उसका उद्धार नहीं। भावी सन्तति को आप ज्ञान देंगे तभी उसका स्थायी हित हो सकेगा। धन, दौलत और जमीन-जायदाद की भौतिक सम्पदा में भय है, इसको राजा छीन लेता है, इससे बन्धुओं में झगड़ा होता है पर ज्ञान-धन को छीनने वाला न कोई हुआ है न होगा। इसलिए ज्ञान से सजाओ अपने बच्चों को। धन और जायदाद दे जाओगे तो वे नंगे भी हो सकते हैं। कवि कहता है :—

"न राज हार्यं न च चौर हार्यं,
न भ्रातृ भाज्यं न च भारकारी।
व्यये कृते वर्द्धत एव नित्यं,
विद्या धनं सर्व धन प्रधानम् ॥"

यह काम नौजवानों का है। नौजवानों को यह काम संभालना चाहिए।

"किस काम की नदी वह,
जिसमें नहीं रवानी।
जो जोश ही न हो तो,
किस काम की जवानी ॥"

जवानो ! अपना कर्तव्य समझो । ज्ञान-वृद्धि के काम में जुटोगे तो सहयोग मिल ही जायगा । आप लोग शादी-विवाह में हजारों रुपये पानी की तरह बहा देते हैं और सुकृत में लगाने का अवसर आता है तो विचार में पड़ जाते हैं । अफसरों की पार्टियों में हजारों रुपये फूंक दिए जाते हैं क्योंकि उसमें आपको अपना मतलब दिखता है । पाँच सौ खर्च करके दो हजार का काम बनवा लिया जाता है । किन्तु ये लाभ नाशवान हैं, इनमें आत्म-कल्याण नहीं । इनसे आत्मा को धोखा दिया जाता है । आपको अपनी संस्कृति बचानी हो, अपनी इज्जत बचानी हो तो अपने बच्चों को शिक्षित करें । जो लोग अपढ़, अनाड़ी और जंगली गिने जाते हैं उन आदिवासी भील और हरिजनों ने उन्नति में कदम बढ़ाया है । आज वे कुर्सी पर बैठकर न्याय करते और कथा-कीर्तन कराते हैं । धर्म-जागरण और सद्ग्रंथों का पठन-पाठन करते हैं । ऐसे समय में आप अपने धर्म से उदासीन से होते जा रहे हैं, ये शुभ लक्षण नहीं, पतन के चिह्न हैं ।

बादशाहों की बराबरी में बैठने वाले शाहो ! तुम्हारी यह हालत ! मुझे खेद होता है तुम्हारी यह हालत देखकर ! धर्म का पल्ला छोड़ने से ही तुम्हारी यह स्थिति हुई है । राजा परदेशी को केशी श्रमण का योग मिला । महान् हत्यारा भी कितना प्रभाविक श्रावक बन गया ? परदेशी ने अपनी आय के चार भाग किये थे—एक भाग सेना के लिए, एक भाग व्यवस्था के लिए, एक भाग कोष के लिए और एक भाग दानशाला के लिए । क्या आपमें से कोई अपनी आय का भाग करता है ? धर्म या शुभ काम का भी कोई भाग होता है ? हाँ, पूर्वजों ने माल के पीछे धर्मादा निकालने की परम्परा अवश्य डाल रखी थी पर आज उसका भी उचित उपयोग नहीं होता फिर घर से अपने लाभ से तो निकालने की बात ही क्या ?

शरीर का स्वभाव देखा जाता है कि जब मल बाहर नहीं निकलता है तो भीतर ही भीतर सड़कर रोग पैदा कर देता है । शरीर को बलवान रखने के लिए मल का बाहर होना जरूरी है । इसी प्रकार आपको अपनी आय में से सम्पत्ति का भाग निकालना आवश्यक है ।

परदेशी राजा दो दिन तक उपवास करता और एक दिन भोजन करता था । इस प्रकार वह आत्मशुद्धि के लिए मानों प्रायश्चित करता था । रानी के विरोधी व्यवहार पर भी परदेशी को रोष नहीं हुआ । सचमुच इसी को साधना का परिणाम कह सकते हैं । आपका भी कर्तव्य है कि ज्ञान के प्रकाश से समाज को जगमगादो । अपना उज्ज्वल जीवन-निर्माण करो । इसी से तुम्हारा यह जीवन शान्तिमय और भावी जीवन भी सुखमय होगा ।

आचार्य श्री के ६०वें आचार्य पद ग्रहण दिवस [अक्षय तृतीया] पर विशेष:

हे आत्मन् ! तुझसे बढ़कर कोई नहीं*

□ श्री धन्ना मुनि
[आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के सुशिष्य]

आज के युग के महान् युग-प्रवर्तक, अनुपम अध्यात्म योगी, प्रातः-स्मरणीय पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी महाराज अपने ६९ वर्ष के साधना-काल एवं ५९ वर्ष के आचार्यकाल में जन-जन के अन्तर्मन में आध्यात्मिक अभिनव जागृति का बीज अंकुरित कर उसे पुष्पित, पल्लवित एवं अमृत-सिंचन से समृद्ध कर संवत् २०४६ की अक्षय तृतीया के दिन अपने सुरतरु तुल्य विश्व कल्याणकारी परम पावन पुनीत आचार्य जीवन के ६०वें वर्ष में पदार्पण कर रहे हैं। इस पावन प्रसंग पर हमारे अन्तर्मन आनन्द विभोर हो, मेघ के आगमन पर नाचते हुए मत्तमयूर की भांति मुदित हो, मधुरगिरा उद्गीरित करने के लिए हठात् अति व्यग्र हो उठे हैं।

जिस प्रकार प्राची में उदयाचल पर प्रातः नयनाभिराम अरुण वरुण उदित होता है, उसी प्रकार आर्यधरा की सती-शूरमा और सन्तों को जन्म देने वाली मरुधरा के पीपाड़ नगर में वि० सं० १९६७ की पौष शुक्ला चतुर्दशी के दिन ओसवंशावतार बोहरा कुल के श्रेष्ठिवर श्री केवलचन्द जी की सदाचार सम्पन्ना, धर्मपरायणा, पतिव्रतेकव्रतनिष्ठा रूपादेवी की रत्न कुक्षि से जैन-जगत् के दिवाकरोपम इन ज्योतिर्धर महापुरुष का जन्म हुआ। जिस भाँति प्रचण्ड अग्नि-ज्वालायें तीव्रतम वेग से स्वर्ण को पुनः पुनः प्रतप्त कर निखारती हैं, विशुद्ध-मनमोहक स्वरूप प्रदान करती हैं, ठीक उसी प्रकार विपत्तियों की एक सक्षम सेना ने इस महान् हस्ती के उदय से पूर्व ही भीषण आक्रमण आपदाओं की अग्नि में इस अरुण-वरुण की अरुणिमा अभिवृद्ध करने का प्रयास प्रारम्भ कर दिया। जन्म के चार माह पूर्व ही आपके पिता श्री केवलचन्द जी का युवावय में ही महामारी के प्रकोप के परिणामस्वरूप अप्रत्याशित अनभ्र वज्रपात की भांति अचानक देहावसान हो गया। जन्म के पश्चात् आठ वर्ष की आयु होते-होते मातु श्री रूपादेवी के अतिरिक्त आपके सभी सहारे, सभी ऐहिक अवलम्बन

* मुनि श्री की डायरी से संकलित।

धरातल से उठ गये और बालवय में ही इस महान् हस्ती की पारिवारिक स्थिति "आसमान से पटका हुआ धरती के द्वारा झेला हुआ" जैसी हो गई ।

इस प्रकार की घोरातिघोर दारुण आपदाओं के आक्रमण पर आक्रमण के उपरान्त भी, माता-पुत्र का मनोबल अणुमात्र भी विचलित होने के स्थान पर उत्तरोत्तर अकम्प-अडोल-अविचल एवं वज्रसाद की भांति सशक्त ही होता गया। आपदाओं की असंख्य सेना ने जैन-जगत् के बाल सूर्य के समक्ष अपनी पराजय स्वीकार की ।

आपदायें पुनः कभी समीप तक फटकने का साहस न कर सकें, इस प्रकार की आध्यात्मिक अवस्था को अवाप्त कर लेने के लोकोत्तर लक्ष्य से पुत्र और माता दोनों ने विक्रम संवत् १९७७ की माघ कृष्णा द्वितीया के दिन अजमेर नगर में रत्नवंश-परंपरा के आचार्य प्रवर-सशक्त-समर्थगुरु श्री शोभाचन्द्र जी म० की चरण शरण ग्रहण करते हुए भवपाश विध्वंसिनी शाश्वत सौख्य प्रदायिनी भागवती दीक्षा अंगीकार की ।

दस वर्ष जैसी लघुवय में ही दीक्षित इन उदीयमान बाल ज्योतिर्धर के शीश पर शोभागुरु के साथ-साथ विश्वभारती श्रुतदेवी मां सरस्वती के भी वरद हस्तयुगल रहने का महान् चमत्कारी ऐसा अद्भुत प्रभाव हुआ कि आप किशोरकाल से पूर्व ही आगमों के गूढ़ मर्मज्ञ एवं विविध विद्याओं के पारदृष्टा विद्वान् बन गये । आप श्री के इस बाल सरस्न्ती स्वरूप से सर्वात्मना-सर्वभावेन परम सन्तोष एवं अनिर्वचनीय आनंद का अनुभव करते हुए जिस समय आपकी आयु पन्द्रह के अंक को भी पार नहीं कर पायी थी, उसी समय आज से ६४ वर्ष पूर्व ही महान् आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी महाराज ने अपने पश्चात् आप श्री को अपने भावी उत्तराधिकारी के रूप में आचार्य पद प्रदान करने की लिखित रूप में गोपनीय घोषणा कर दी थी । शोभा गुरु की उस लिखित घोषणा का उनके स्वर्गस्थ होने के पश्चात् चतुर्विध संघ ने अन्तर्मन से अनुमोदन एवं अनुपालना करते हुए विक्रम सं० १९८७ की अक्षय तृतीया भ० आदिनाथ की प्रथम पारणक तिथि के दिन सूर्य नगर जोधपुर में बड़े हर्षोल्लास से आयोजित समारोह के साथ आप श्री को आचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया ।

आचार्य पद पर अधिष्ठित किये जाने के समय से ही आप श्री ने अपने अन्तरमन में अटल निश्चय के साथ मनसा, वाचा, कर्मणा जीवनपर्यन्त अपने इस परम लक्ष्य पर अग्रसर होते रहने का महान् अभियान प्रारम्भ किया ।

गजमुनि के मन की साध यही, जिनरसिक निखिल जग-जन कर दूं ।
बन्धुत्व भाव मय विश्व प्रेम, जन-जन के मानस में भरदूं ।।

आज से ५९ वर्ष पूर्व आचार्य पद पर अधिष्ठित होते ही आप श्री ने जिन शासन के अभ्युदय-अभ्युत्थान एवं सर्वतोमुखी उत्कर्ष की दिशा में गंगावतरण तुल्य भागीरथ प्रयास, क्षीर समुद्रमंथन सम विचार-मंथन, चिंतन-मनन प्रारम्भ किया। उत्कट चिंतन के अनंतर निश्चयात्मक निर्णायक निष्कर्षों को समाज के समक्ष रखकर उन्हें क्रियान्वित करने, मूर्त स्वरूप देने की प्रेरणाएँ प्रदान करना प्रारम्भ किया जिनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है :—

(१) प्रारम्भ में आप श्री ने मारवाड़, अजमेर, मेवाड़, ढूंढाड़ और मालव भूमि में विभिन्न ग्रामों एवं नगरों में अप्रतिबद्ध विहार-विचरण कर तत्कालीन जैन समाज में व्याप्त ओसर-मोसर (मृत्युभोज) आदि कुरूढ़ियों के समूलोन्मूलन हेतु अमोघ प्रभावकारी उपदेशों के माध्यम से अभियान चलाया। आप श्री के उपदेशों का जैन धर्मावलम्बियों पर आशातीत आश्चर्यकारी स्थायी प्रभाव पड़ा कि देखते ही देखते एक दशक से भी कम अवधि के प्रयास से ही मारवाड़ आदि भूतपूर्व राज्यों के अनेक ग्रामों, नगरों में जैन समाज में इस प्रकार की कुप्रथाएँ समाप्त प्रायः हो गईं।

(२) कुप्रथाओं के समूलोन्मूलन के समान ही आप श्री ने सप्त व्यसनों के त्याग. व्रत, नियम, प्रत्याख्यान, सामायिक, स्वाध्याय, सामूहिक प्रार्थना, पौषध-प्रतिक्रमण और जैन समाज के सामाजिक नैतिक एवं धार्मिक धरातल को समुन्नत करने के दृढ़ संकल्प के साथ ग्रामों एवं नगरों में पावस घन की झड़ी के समान उपदेशामृत की वर्षा करना प्रारम्भ किया।

(३) उपरिवर्णित आध्यात्मिक अभियानों की उपलब्धियों को चिर-स्थायी बनाने के लिए जैन-जगत् में ज्ञान-गंगा के प्रवाह को अनवरत अपना सतत प्रवाही बनाने हेतु प्रवचनों के माध्यम से प्रबल प्रेरणाएँ प्रदान कीं। आप श्री की प्रेरणाओं के परिणामस्वरूप जैन समाज में आध्यात्मिक ज्ञान को प्रौढ़ बनाते रहने की उत्कट लालसा जाग्रत हुई जो उत्तरोत्तर अभिवृद्ध होती चली जा रही है। उसके सुपरिणाम आज यत्र-तत्र-सर्वत्र स्पष्टतः दृष्टिगोचर हो रहे हैं। आप श्री की प्रबल प्रेरणाओं का ही परिणाम है कि —

(४) सम्यक् ज्ञान प्रचारक मण्डल अनेक प्रकार के आगमिक, आध्यात्मिक प्रकाशन कर अखिल भारतीय स्तर पर जैन समाज के सैद्धान्तिक ज्ञान को उत्तरोत्तर अभिवृद्ध कर रहा है।

(५) 'जिनवाणी' मासिक पत्रिका गत ४६ वर्षों से जैन धर्म को जन-जन में धर्म का स्वरूप प्रदान करने के लिए प्रयत्नशील है।

(६) स० ज्ञान प्र० मण्डल के तत्वावधान में स्वाध्याय संघ वर्षों से स्वाध्यायियों की एक सशक्त शांति सेना सुगठित कर देश के सुदूरस्थ प्रदेशों तक

में अष्टाहोरात्रिक पर्वाराधन करवाने की इहलोक और परलोक दोनों ही लोकों में मंगलकारिणी प्रवृत्तियों में उत्तरोत्तर द्रुतगति से प्रगति कर रहा है।

(७) स्वाध्यायियों के ज्ञानवृद्धि हेतु "स्वाध्याय-शिक्षा" द्विमासिक पत्रिका भी स्वाध्याय के वास्तविक स्वरूप को प्रदान करने में रत है।

(८) आप श्री की प्रबल प्रेरणाओं का ही परिणाम है कि श्रुताराधन साहित्य सृजन में सरस्वती के वरदान के समान सहायक आचार्य श्री विनयचन्द्र ज्ञान भंडार (जयपुर) जैसी अनुपम अनमोल अलभ्य अथाह ज्ञाननिधि जैन जगत् को उपलब्ध है। जोधपुर, जलगाँव, पीपाड़, अजमेर आदि अन्यान्य अनेक नगरों में भी इस प्रकार के ज्ञान-भंडार प्रगति पथ पर अग्रसर हो रहे हैं।

(९) आप श्री के प्रेरणा-स्रोत इंगित मात्र से आर्यधरा के अनेकानेक नगरों में स्थापित धार्मिक पाठशालाएँ सहस्रों बालक-बालिकाओं की मनोभूमि में विश्वकल्याणकारी जैन धर्म के आधार शिला तुल्य अहिंसा, सत्य, अस्तेय, सदाचार, सामायिक, प्रतिक्रमण, नित्य नियमित प्रभु-स्मरण, आदि जीवन को समुन्नत बनाने वाली मूलभूत शिक्षाओं का बीजारोपण करने में निरत हैं।

(१०) जयपुर का श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान, जलगांव "स्वाध्याय विद्यापीठ" जैसी शिक्षण संस्थाओं की स्थापना आप श्री के उपदेशों का ही सुफल है। इन धार्मिक शिक्षण संस्थाओं के स्नातक देश के विभिन्न भागों में जैन धर्म का प्रचार-प्रसार करने में संलग्न हैं।

(११) मातृशक्ति में समाज सुधार-धर्म प्रचार, संघाभ्युदय के प्रति अद्भुत आकर्षण, अदम्य उत्साह की सदा तरंगित होने वाली लहर उत्पन्न कर आप श्री ने जैन जगत् की न केवल वर्तमान की ही अपितु भावी अनेकानेक पीढ़ियों के सामाजिक, नैतिक एवं धार्मिक धरातल को उत्तरोत्तर समुन्नत एवं आदर्श बनाने की अनिवार्यरूपेण परमावश्यक प्रक्रिया का सन् १९७१ में ही शुभारम्भ कर दिया। आप श्री के उपदेशों से जोधपुर नगर की प्रबुद्ध महिलाओं ने "महावीर जैन श्राविका समिति" की स्थापना के साथ-साथ "वीर उपासिका" नाम की मासिक-पत्रिका का शुभारम्भ किया। आप श्री की प्रेरणाओं से अनुप्रेरित आर्यधरा के महिलावर्ग ने उस समय भी एक छोटी सी क्षेत्रिय समिति को सन् १९७५ के अपने वार्षिक अधिवेशन में ही "अखिल भारतीय महावीर जैन श्राविका संघ" का स्वरूप प्रदान कर दिया। इस संघ के द्वारा प्रकाशित मासिक पत्रिका "वीर उपासिका" सम्पूर्ण आर्यधरा के प्रायः सभी प्रदेशों के नगरों और ग्रामों के जैन बन्धुओं के घरों में आप श्री द्वारा उद्घोषित सामायिक-स्वाध्याय के शाश्वत सुखप्रद मधुर घोष को गुंजारित कर जिस शांतिपूर्ण अभिनव धर्म कान्ति का आपने सूत्रपात किया है, उसे आर्यधरा के चारों दिशाओं के ग्राम-ग्राम, नगर-नगर और डगर-डगर में प्रसारित कर रही है।

(१२) भागीरथ तुल्य अथक प्रयास कर आप श्री ने जैन इतिहास की गंगा प्रवाहित की है, उसमें तो आपकी प्रचुर कीर्ति में मानों न केवल चार चाँद ही अपितु सहस्रों सहस्र सूर्य ही लगाकर आपकी दुग्ध धवला कीर्ति को "यावच्चन्द्रदिवाकरौ" तक की अनवधिक अक्षय अवधि के लिए स्थायी बना दिया है।

जैन इतिहास का अभाव जैन जगत् के मन-मस्तिष्क और हृदय में शताब्दियों से ही खटकता चला आ रहा है। एक-एक हजार पृष्ठों के तीर्थंकर खण्ड आदि चार भागों में आदिनाथ से लेकर महान् धर्मोद्धारक लोंकाशाह द्वारा अभिसूत्रित, अभिनव धर्मक्रान्ति का सांगोपांग आद्योपान्त जैन धर्म के इतिहास का निर्माण कर जो महती महतीया प्रभावना की है, उसे युग-युगान्तरों तक भावी पीढ़ियाँ श्रद्धा के साथ स्मरण करती रहेंगी।

आप श्री ने जिन शासन के उत्कर्ष, जैन समाज के अभ्युदय-उत्थान और समष्टि के कल्याण के लिए जितने आध्यात्मिक अभियान, आयोजन एवं आश्चर्यकारी अथक श्रम साध्य प्रयास किये हैं उन सबका यथावत् लेखा जोखा प्रस्तुत करना न तो लेखनी के माध्यम से साध्य है और न वाणी के द्वारा ही।

शैशव काल में ही सभी सहायकों-सहारों के उठ जाने के अनन्तर भी एक बालक एकाकी ही एक मात्र अपने मस्तिष्क और दृढ़ संकल्प के बल पर, संसार के समक्ष असंभव को संभव सिद्ध कर अथवा इस प्रकार का विराट् स्वरूप प्रकट कर सकता है, यह आप श्री का तथ्यपरक जीवन न केवल प्रत्येक जैन के लिए ही अपितु जन-जन के लिए प्रेरणा स्रोत है और है क्लैव्य भाव से ग्रस्त हताशों-निराशों के मुर्दा जीवन में ओजपूर्ण साहसिक नवजीवन का संचार करने वाला दिव्य मंत्र।

एक मनीषी कवि ने मानव के मनोबल को बढ़ाते हुए कहा है—

पृथ्वी तावदियं महत्सु महती, तद्वेष्टनं वारिधि।
पीतोऽसौ कलशोद्भवेन मुनिना, तद्व्योम्नि खद्योतवत्।
तद् विष्णोः दनुजाधिनाथ दमने पूर्ण पदं ना भवत्।
देवोऽसौ तव राजते हृदि सदा, त्वतो महान् नापरः॥

अर्थात्—संसार में सबसे बड़ा कौन है यह जिज्ञासा मन में अवधार नारद जी विष्णु के पास आये और पूछा—भगवन्! क्या संसार में पृथ्वी सबसे बड़ी है? नहीं! उसे तो चारों ओर से सागर ने वेष्टित कर रखा है। तो क्या समुद्र सबसे बड़ा है? नहीं नारद! उसे भी अगस्त्य ऋषि ने तीन चूल्लू में ही पी लिया था। तो क्या अगस्त्य ऋषि सबसे बड़े हैं? नहीं नारद, नहीं! वे तो अनंत आकाश के एक छोटे से जुगनू की तरह दृष्टिगोचर होते हैं। तो क्या

भगवन् ! आकाश सबसे बड़ा है ? नहीं। आकाश भी सबसे बड़ा कैसे हो सकता जब मैंने वामनावतार लिया था, तब एक पैर में ही उस अनंत आकाश को नाप लिया था। तब क्या भगवन् ! आप ही सबसे बड़े हो क्या ? नहीं नारद, नहीं ! जिस अनंत आकाश को एक पैर से नापने वाले को तू बड़ा कहता है भला मैं कहाँ श्रेष्ठ हूँ ? मुझ जैसे विराट् रूप धारण करने वाले को भी तेरे जैसे भक्तों ने अपने हृदय के एक कोने में आबद्ध कर रखा है। अर्थात् हे मानव ! इस संसार में तुझसे बढ़कर कोई नहीं है।

कवि की इस उक्ति को अक्षरशः सत्य सिद्ध करने का हमारे आचार्य देव का साधनापूर्ण परमपूत, परम पावन जीवन मानव मात्र को ऊर्जा प्रदान करता हुआ प्रेरणा देता है कि दृढ़ संकल्प एवं अटूट उत्साह के साथ समष्टि के लिये कल्याणकारी किसी भी कर्म क्षेत्र से कटिबद्ध हो उतर जाने पर तुझे तेरे लक्ष्य की प्राप्ति में संसार की सबसे बड़ी से बड़ी शक्ति भी नहीं रोक सकती क्योंकि तेरे अन्तर्घट में विराजमान आत्मदेव से बड़ा संसार में कोई नहीं है।

अन्त में हृदय के अन्तस्तल से, अपने अन्तर्मन से प्रार्थना के स्वरों में यही कामना करता हूँ कि महान् अध्यात्मयोगी युग पुरुष परम पूज्य आचार्य देव युगों-युगों तक विश्व को विश्व-शान्ति का प्रशस्त पथ प्रदर्शित करते रहें।

परमाराध्य आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के साठवें आचार्य पद ग्रहण दिवस पर

अभिनन्दन एवं शुभकामना

महामहिम आचार्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी म. सा. युगद्रष्टा, युग प्रवर्तक और युग-निर्माता हैं। बीस वर्ष की लघु आयु में आपको रत्नवंश-परंपरा का आचार्य पद प्राप्त होना एक ऐतिहासिक घटना है। अक्षय तृतीया के शुभ दिन विक्रम संवत १९८७ में जोधपुर की सिंहपोल में चतुर्विध संघ ने आपको आचार्य पद से विभूषित किया। आचार्य प्रवर अप्रमत्त भाव से चतुर्विध संघ के नायक के रूप में हमारा मार्गदर्शन करते हुए जिन शासन की अपूर्व सेवा कर रहे हैं।

आचार्य प्रवर के साठवें आचार्य पद ग्रहण दिवस पर हार्दिक अभिनन्दन···कोटि-कोटि वन्दन···।

श्रीचरणों में

करोड़ीमल लोढ़ा

महामंत्री

अ. भा. श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ,

घोड़ों का चौक, जोधपुर-३४२ ००१
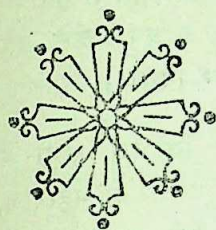
महान् आचार्य हस्ती

□ श्री रिखबराज कर्णावट

संसारी जीवों को कष्टों से छुड़ाने एवं कर्म-बन्धनों से मुक्ति दिलाने हेतु महान् पुरुष अपने ज्ञान का प्रकाश देने के लिए अवतीर्ण होते हैं। ऐसे ही महापुरुषों में आज से २६०० वर्ष पहले इस भूतल पर महावीर स्वामी ने जन्म लिया। उन्होंने कठिन तपस्या व शुद्ध ध्यान की आराधना करके सम्पूर्ण ज्ञान पा लिया व जन-जन को अपने ज्ञान का प्रकाश बांट कर उन्हें कर्म-बन्धनों से मुक्त होने का मार्ग बताया। भक्त को स्वयं भगवान बनने का रास्ता बताया।

भगवान महावीर के उपदेशों को उनके शिष्य गणधरों ने वाणी में गूंथा। यही 'जिनवाणी' शास्त्र, आगम कहलाए। महावीर स्वामी के मोक्ष चले जाने के बाद उनकी वाणी को अनेक महान् आचार्यों ने सर्व-साधारण के लाभ के लिए वितरण करने का भरसक प्रयास किया। महावीर द्वारा प्रदत्त अध्यात्म सम्पदा को विस्तार देने का श्रेय जैनाचार्यों को ही है।

आचार्य स्वयं आचार के धनी होते हैं। वे संघशास्ता होते हैं। भगवान महावीर के पश्चात् आचार्य सुधर्मा, आचार्य जम्बू, आचार्य प्रभव, आचार्य शयम्भव, आचार्य भद्रबाहु, आचार्य मानतुंग, आचार्य सुहस्ती आदि अनेक आचार्यों ने आंधी और तूफानों के बीच अपने साहस का दीप जलाये रखा और दिग्भ्रान्त जनमानस को प्रकाश देते रहे।

आचार्य सुहस्ती की भांति वर्तमान में आचार्य हस्ती भी शुद्ध आचार की पालना करते हुये जन-जन में उनके कल्याण के लिये अपने ज्ञान का प्रकाश पिछले छः दशक से कर रहे हैं। दस वर्ष की लघु वय में इन्होंने कुशल वंश के (रत्न सम्प्रदाय के) स्वनाम धन्य आचार्य श्री शोभाचन्दजी म० सा० के पास अपनी माता (जो बाद में स्वयं दीक्षित होकर रूपा महासती बन गईं) की प्रेरणा से जैन भागवती दीक्षा ग्रहण की। अत्यन्त अल्प समय में अनेक ग्रन्थों व शास्त्रों का अध्ययन कर प्राकृत-संस्कृत भाषा पर उल्लेखनीय अधिकार कर लिया। साधु आचार की पालना में किसी भी प्रकार की स्खलना बाल-वय होते हुये भी नहीं होने दी। इनके ज्ञान, दर्शन और चरित्र के कारण आचार्य शोभाचन्दजी ने अपने बाद इन्हें आचार्य बनाने का निर्णय ले लिया। फलस्वरूप २० वर्ष की

लघु वय में अक्षय तृतीया के दिन आज से ६० वर्ष पहले (वैशाख शुक्ला तृतीया सं० १९८७) आचार्य शोभाचन्दजी के निर्णय के अनुसार इन्हें जोधपुर जैसे बड़े संघ ने आचार्य की चादर ओढ़ाकर आचार्य पद पर आसीन कर दिया।

आचार्य पद पर आसीन होने के पश्चात् इन्होंने देश के विभिन्न क्षेत्रों में पैदल भ्रमण कर तत्कालीन बड़े-बड़े सन्त आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज, पंजाब केसरी आचार्य श्री काशीरामजी महाराज, आचार्य श्री आत्मारामजी महाराज, प्रज्ञावान श्री पन्नालालजी महाराज, जैन दिवाकर श्री चौथमलजी महाराज, शास्त्रज्ञ श्री घासीलालजी महाराज आदि से समागम किया। उनसे शास्त्रों के गूढ़ रहस्यों पर वार्त्तालाप किया। अपनी प्रगाढ़ लेखनी से पचासों ग्रन्थों की रचना की व टीका लिखी। शोधपूर्ण तथ्यों के आधार पर जैन धर्म का मौलिक इतिहास विस्तारपूर्वक लिखा जिसका सर्वत्र आदर हुआ।

जैन विद्या के प्रचार में योग देने वाली अनेक संस्थाओं की स्थापना आचार्य श्री की प्रेरणा से हुई। भोपालगढ़ का जैनरत्न विद्यालय, जलगांव की जैन शिक्षण शाला, जयपुर का जैन शिक्षण संस्थान, विनयचन्द ज्ञान भण्डार, जोधपुर का जैनरत्न पुस्तकालय आदि संस्थाओं के माध्यम से कई जैन विद्वान् तैयार हुये। "जिनवाणी" मासिक पत्रिका विगत ४६ वर्षों से सेवारत है। महिलाओं के ज्ञान-वृद्धि व जागरण के उद्देश्य से अ० भा० महावीर श्राविका संघ की स्थापना हुई जहाँ से "वीर उपासिका" पत्र का प्रकाशन कई वर्षों से हो रहा है।

सारे देश में जैन समाज के फैलाव को देखते हुए सन्त-सतियों के सर्वत्र प्रवास की कठिनाई को अनुभव कर पर्युषण पर्व पर धर्म की आराधना हेतु स्वाध्यायी बन्धुओं को प्रज्ञापुरुष श्री पन्नालालजी महाराज का संकेत पाकर सुदूर स्थानों में भेजना प्रारम्भ किया। भारत के अनेक प्रान्तों में स्वाध्याय संघों की स्थापना हुई जहाँ से हजारों की संख्या में स्वाध्यायी बन्धु पर्युषण पर आठ दिन के लिये धर्म प्रचारार्थ जाते हैं। आचार्य श्री की प्रेरणा से अ० भा० जैन विद्वत् परिषद् की स्थापना हुई जिसमें दिगम्बर, मन्दिर-मार्गी, स्थानकवासी, तेरापंथी एवं अजैन विद्वान् भी सम्मिलित हैं जो तात्विक विषयों पर चर्चाएँ कर शोध पत्र तैयार करते हैं। कई लघु पुस्तिकाएँ भी इस परिषद् द्वारा प्रकाशित हुई हैं।

आचार्य श्री की सेवा-भावना व करुणा के अनेक प्रसंग जन-साधारण में चर्चित हैं। कई बार अपने प्राणों की परवाह किये बिना इन्होंने विषैले व हिंसक जानवरों की रक्षा की है। इनकी वचन-सिद्धि, लब्धि व अतिशय के अगणित किस्से भी जन-जन की जुबान पर हैं/आते रहते हैं।

आचार्य श्री का सबसे बड़ा गुण उनकी समन्वय-दृष्टि है। एक सम्प्रदाय के आचार्य होते हुए भी अन्य सम्प्रदायों के बारे में कभी अपलाप नहीं करते। अपने क्रिया-कर्म में कठोर होते हुए भी अन्य सम्प्रदायों के लोगों के साथ अपने सम्बन्ध मधुर रखते हैं। इस बात का प्रयत्न कभी नहीं करते कि किसी अन्य सम्प्रदाय का व्यक्ति उस सम्प्रदाय को छोड़कर इनकी सम्प्रदाय में आवे। वे उन लोगों को गुरुआम्ना देते हैं जो पहले से अन्य गुरुओं से आम्ना नहीं ले चुके होते हैं। गुरुआम्ना देते समय वे देव, गुरु व धर्म का स्वरूप समझाते हैं। यही कारण है कि इनकी गुरु आम्ना धारण करने वाले अधिकतर लोग अन्य सम्प्रदायों के सन्तों की सेवा में जाने से नहीं हिचकिचाते। मेरे जैसे अनेक लोगों का यह अनुभव है कि आचार्य श्री किसी भी सम्प्रदाय के सन्त-सतियों की सेवा में जाने से अपने अनुयायियों को रोक-टोक का संकेत भी नहीं देते। कई बार आचार्य श्री ने फरमाया है कि जिनवाणी या सत्ज्ञान सुनने का लाभ जहां भी मिले, वहां जाकर अपने समय का सद्उपयोग करना चाहिए। आचार्य श्री की इसी सद्-भावना के कारण प्रायः सभी सम्प्रदायों के जैन बन्धु एवं अजैन बन्धु आचार्य श्री की सेवा में बड़ी श्रद्धा से आते हैं। विशेषकर विचारक, विद्वान् व जिज्ञासु बन्धु उनके साथ धर्म-वार्त्ता करने में बड़ा आनन्द अनुभव करते हैं।

आचार्य श्री एक फक्कड़ सन्त हैं। वे बेलाग बात करते हैं। जो भी व्यक्ति इनके पास आता है उसको स्वाध्याय करने, क्षमता भाव रखने व ईश्वरीय गुणों को स्मरण करने का परामर्श देते हैं। आचार्य श्री को आडम्बर कतई पसन्द नहीं है। व्यक्ति से ही समष्टि का निर्माण होता है, अच्छे व्यक्तियों से अच्छा समाज बनेगा, यह उनकी धारणा है। फिर भी सामूहिक रूप से समाज में फैली बुराइयों का निराकरण करने में वे नहीं चूकते।

ऐसे ज्ञानी, ध्यानी, चरित्र के धनी आचार्य श्री की आयु अब ८० वर्ष की हो गई और दीक्षा काल के ७० वर्ष पूरे हो गये तथा आचार्य पद पर आसीन हुये ६० वर्ष हो रहे हैं। आचार्य श्री इतनी वृद्ध अवस्था के होते हुये भी पैदल प्रवास करते हैं और गांव-गांव व नगर-नगर में जाकर लोगों को सत्पथ पर चलने की प्रेरणा दे रहे हैं। आचार्य श्री शतायु हों, यही सबकी मंगल कामना है।

—ऋषभायतन, मकान नं० ४४८
सरदारपुरा, जोधपुर (राज०)

—o—
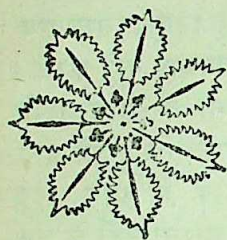
आध्यात्मिक चेतना के प्रेरणास्रोत—आचार्य श्री हस्ती

□ न्यायाधिपति, श्री श्रीकृष्णमल लोढ़ा
अध्यक्ष, राज्य आयोग उपभोक्ता संरक्षण राजस्थान

यह मेरे सौभाग्य की बात है कि मुझे सामायिक-स्वाध्याय के प्रणेता बाल-ब्रह्मचारी पूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के सम्पर्क में आने का गत चालीस वर्षों में अनेकों बार अवसर मिला है।

आपके मुख पर मधुर मुस्कान के साथ-साथ वाणी में मधुरता है। हृदय नवनीत से भी अधिक कोमल है। साधना निर्मल है। तप, जप, त्याग, वैराग्य, संयम और ब्रह्मचर्य से निखरा आपका आत्म-तेज अलौकिक है।

आपका सारा दिन ध्यान, माला, जपन, स्वाध्याय, लेखन, पठन तथा जैन सन्तों की शास्त्रविहित क्रियाओं में व्यतीत होता है। प्रमाद तो नजदीक आता ही नहीं। पल भर भी व्यर्थ नहीं खोते हैं। नियमित साहित्य-लेखन के कार्य में लगे रहते हैं।

इस महान् साधक के जो भी दर्शन करने आता है, वह अपने को सौभाग्यशाली समझता है। वह निहाल हो जाता है। आपको ज्ञानमग्न ही पाता है। जो भी नवागन्तुक दर्शन हेतु आते हैं, आचार्य श्री उनसे नैतिकता व सदाचार सम्बन्धी प्रश्न ही पूछते हैं—क्या नवकार मंत्र की माला फेरते हो? क्या सामायिक करते हो? क्या कुछ समय के लिये स्वाध्याय करते हो? क्या व्रत, प्रत्याख्यान हैं? सात कुव्यसन का त्याग तो कर दिया है आदि-आदि।

श्रावक और श्राविका को जैन धर्म के प्रति सुदृढ़ बनाने हेतु आपने सामायिक व स्वाध्याय की दो अति उत्तम प्रवृत्तियों के प्रचार व प्रसार की योजना को मूर्त रूप दिया है।

आचार्य श्री के प्रवचन सारगर्भित होते हैं। आपकी रचनाओं से आध्यात्मिक खुराक मिलती है। आप जैसा शास्त्रीय ज्ञान कम सन्तों में मिलता है।

कथनी और करणी का अद्भुत साम्य है। आचार विचार की एकरूपता का जैसा सामन्जस्य आपके जीवन में मिलता है, वैसा अन्यत्र बहुत कम। ज्ञान व क्रिया का अनोखा अभ्यास है।

आचार्य श्री अपनी प्रशंसा को पसन्द नहीं करते। आपके प्रवचन के पश्चात् आपकी उपस्थिति में जब कभी आपकी स्तुति की जाती है अथवा प्रशंसात्मक गायन व भाषण होते हैं तो आप आँखें बन्द कर ध्यानमग्न हो जाते हैं।

आचार्य श्री भविष्यद्रष्टा भी हैं। मेरे निजी जीवन के कई प्रसंग हैं जब आपने कोई बात कही, वही कुछ समय पश्चात् सत्य हुई। इसे चमत्कार कहूँ या क्या?

आचार्य श्री के बारे में जो भी लिखा जाय, थोड़ा ही होगा। ऐसे महान् और प्रभावी आचार्य श्री की सराहना व प्रशंसा जितनी ही की जावे कम है।

श्री जिनेश्वर देव से मेरी यह मंगल कामना है कि आचार्य श्री शतायु होकर समाज में आध्यात्मिक चेतना को बढ़ाने की प्रेरणा देते रहें।

अपनी पूर्ण श्रद्धा के साथ शत-शत वन्दना।

—अध्यक्ष, श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ
घोड़ों का चौक, जोधपुर

गुरु हस्ती

☐ **किरण देवी मेहता**

पूज्य हस्ती गुरु हैं, सच्चे गुरु हैं, गुण-गरिमा के बाजे घूंघरू।
गुरु हस्ती हैं अतिशय ज्ञानी, अमृत सी मीठी जिनकी वाणी॥
गुरु हस्ती हैं, करुणा सागर, प्रेम, दया अरु संयम के आगर।
गुरु हस्ती हैं संत प्रधान, स्वाध्याय के स्तम्भ महान्॥
गुरु हस्ती हैं तारण तरण, उनके चरणों की ले लो शरण।
गुरु हस्ती की महिमा भारी, झुकते हैं चरणों में सब नर-नारी॥
गुरु हस्ती हैं समता के धारी, सूरत जिनकी है मोहनगारी।
गुरु हस्ती हैं जग उपकारी, दीन दयाल परम हितकारी॥
गुरु हस्ती हैं भाग्य निधान, पद-पद मंगल हो कल्याण।
गुरु हस्ती की जय जयकार, वंदन नमन से हो जावे उद्धार॥
गुरु हस्ती को करलो नमन, जीवन-उपवन में अमन-चमन।
गुरु हस्ती हैं ऋतु में बसन्त, चरण-शरण में भवोदधि अन्त॥

द्वारा—मदनचन्द नाहटा
छोटालाल भवन, कालबादेवी रोड, बम्बई-४०० ००२
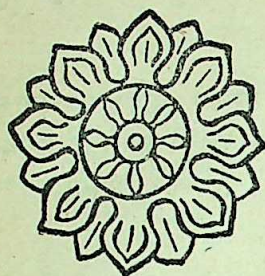
महानता का महान् प्रतिमान

☐ डॉ. महेन्द्र सागर प्रचण्डिया

हिमालय अपनी उत्तुंग ऊँचाई के लिए उल्लिखित है, पर उसमें गहराई का सर्वथा अभाव है, हिन्द महासागर अपनी अतल गहराई के लिए विख्यात है, पर उसमें ऊँचाई के लिए कोई सम्भावना नहीं। एक साथ ऊँचाई और गहराई यदि कहीं देखना हो तो दर्शक को जनवंद्य-राष्ट्रसंत आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज का पवित्र सान्निध्य प्राप्त करना होगा। उनमें जहाँ एक ओर आगमी ज्ञानराशि की अथाह गहराई है वहाँ चारित्रिक तप-साधना की उच्चवर्ती महा ऊँचाई भी।

रूप-स्वरूप में आकर्षण, भाव-स्वभाव में आर्जवी सारल्य, त्रासनाशी, अविनाशी वाणी का सुमधुर आस्वाद पाकर आगत अपना सारा क्लेश मिटा लेता है और भर लेता है अपना अन्तरंग मोद से, प्रमोद से। आचार्य श्री का पवित्र सान्निध्य पाकर प्राणियों के जागतिक विरोध त्वरन्त अनुरोध में बदल जाते हैं। ऐसा है अद्भुत, अद्वितीय आलोकमयी व्यक्तित्व पूजनीय परमवंद्य आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज सा. का।

दिन-दिनांक तो स्मरण नहीं रहा पर अर्द्धदशाब्दि से पूर्व की बात रही होगी जब पूज्य आचार्य श्री का वर्षावास जयपुर नगरी में सम्पन्न हो रहा था। आचार्य श्री रत्नचन्द्र व्याख्यानमाला के अन्तर्गत मुख्य व्याख्यानार्थ मुझे आमन्त्रित किया गया था और स्मरण पड़ता है उस समय अनेक गोष्ठियों और यहाँ तक कि महाराज श्री के सान्निध्य में आयोजित एक प्रवचन सभा से भी मुझे बचाकर मेरा विशिष्ट व्याख्यान प्रिय भाई विद्वान् संयोजक डॉ. नरेन्द्र भानावत द्वारा रखा गया था रवीन्द्र मंच पर, जिसे लोगों ने बहुत-बहुत सराहा था और मुझे लगता है कि इस यशार्जन का मूलाधार रहा है आचार्य श्री का आशीर्वाद और कल्याणकारी मंगल पाठ।

आचार्य श्री सम्प्रदायी संत नहीं हैं। जैन—दिगम्बर, श्वेताम्बर, अजैन—हिन्दू, मुसलिम, सिख, ईसाई, ऊँच-नीच, दरिद्र-धनी, बाल-वृद्ध सभी कोटियों के इंसानों के लिए, उनकी सुखी जीवन यात्रा के लिए सन्मार्गी दिशादर्शन सहज उपलब्ध रहता है। इतना ही नहीं तिर्यंचगतिगामी अनेक पशुओं-पक्षियों के घटनात्मक संदर्भ उत्तम उदाहरण बन गए हैं, आचार्य श्री की वात्सल्य भावना और समभावी स्वभाव को पाकर। हिंसक से अहिंसक बन गए, क्रोधी से

सरल-परिणामी और खिन्न से बन गए प्रसन्न-सम्पन्न। ऐसा सम्यक्त्वी सान्निध्य सचमुच विरल ही कहा जाएगा, निरा दुर्लभ।

श्रमण संत सदा पदयात्री होते हैं। उनकी चर्या संयम और तप से अनुप्राणित होती है। चलते हैं तो वे ईर्या समिति के साथ, बोलते हैं तो भाषा समिति से समप्रेरित—कहने का तात्पर्य उनका प्रत्येक क्षण जाग्रत अवस्था में बीतता है फिर आचार्य श्री इस परम्परा के साधारणतया असाधारण व्यक्तित्व हैं।

अपनी सहस्रों मीलों की पदयात्रा में, देश के विभिन्न उपभागों में घूम-घूम कर तमाम-तमाम इन्सानों को भगवान् बनने की भूमिका से परिचय कराया, उन्हें बनने के लिए प्रेरित किया और इसका परिणाम यह हुआ कि उन सभी आदमियों का परावलम्बी जीवन स्वावलम्बी बन गया। संयम ही जीवन है उनकी धारणा बन गई। इस प्रकार उनकी चर्या सधने लगी और अनेक श्रमण साधक बन गए।

पारस पत्थर लोहे को छूकर सुवर्ण बनाता है पर आचार्य श्री का सान्निध्य पाकर कोई भी कदाचारी सदाचारी में परिणत हो जाता है। व्यक्ति सुधरा तो समझिए समाज सुधरा और उस सुधार की प्रभावना पूरे राष्ट्र-अन्तर्राष्ट्र को आलोकित किया करती है।

नजदीकी नजर को देखने से यह सहज में ही प्रमाणित हो जाता है कि आचार्य श्री की संघस्थ आचार-संहिता शाब्दिक भर नहीं है, उसका मूलाधार है चरण-आचरण। मुझे लगता है जहां और जब चरण सदाचरण में परिणत होते हैं, तब वहां मंगलाचरण का प्रवर्तन होता है। आचार्य श्री मंगलाचरण के प्रवर्तक हैं।

पहले पहिल मुझ अकिंचन को महाराज श्री का आशीर्वाद मिला जयपुर नगरी में। पूरा समुदाय और समाज का मान-सम्मान ही मिल उठा। जीवनचर्या में स्वाध्याय नैतिक अनुचर्या बन गई। नैतिक स्वाध्याय ने मेरे जीवन में आमूलचूल परिवर्तन ही कर दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि मैं नित्य ज्ञान-गोमती में अवगाहन करने का सुयोग पाने लगा। ज्ञानोदय हो उठा। ज्ञानोदय से आदमी सदा प्रसन्न रहता है।

ऐसे अद्भुत अद्वितीय आगमी-आलोक के आदित्य साकार अनन्वय अलंकार परमपूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज साहब के चरणों में शत-शत वंदन सादर समर्पित है।

—३६४ सर्वोदय नगर, आगरा रोड, अलीगढ़—२०२ ००१

जीव दया का प्रेरक प्रसंग

जब आचार्य श्री ने नागराज की रक्षा की

☐ श्री सूरजमल मेहता
[संयोजक—स्वाध्याय संघ (पल्लीवाल क्षेत्र)]

आज से २१ वर्ष पूर्व की यह आँखों देखी घटना है। आचार्य श्री का अलवर से देहली की ओर विहार हुआ। पहला विश्राम अलवर से १३ कि.मी. दूर ग्राम बहाला में हुआ। मध्याह्न का समय था, आचार्य श्री वैरागी बन्धु को पढ़ा रहे थे। सहसा, सामने से जोरों की आवाज आई "मारो-मारो"। सामने एक पुराने मकान में कुछ निर्माण कार्य चल रहा था। पुराने मकान की दीवार तोड़ते ही एक लम्बा और मोटा साँप निकला जिसे देखते ही वहां काम पर लगे मिस्त्री और मजदूर तथा अन्य लोग उसे मारने को तैयार हो गये। जैसे ही "मारो-मारो" की आवाज आचार्य श्री ने सुनी, आचार्य श्री तुरन्त वहां पहुँच गये और लोगों को साँप को मारने के लिये मना कर दिया तथा उसी क्षण अपना रजोहरण उसके पास रख दिया जिसमें वह लिपट गया।

आचार्य श्री अब रजोहरण में लिपटे साँप को लेकर ग्राम के बाहर चलने लगे। आगे-आगे आचार्य श्री और पीछे-पीछे बड़ी संख्या में ग्राम के लोग तथा हम अलवर के भाई। सब लोग जैन धर्म की एवं आचार्य श्री के जय के नारे लगा रहे थे। रास्ते में आचार्य श्री सर्प को हाथ से सहलाते हुए उसे शान्त रहने के लिये बोल रहे थे। जब ग्राम से बाहर आचार्य श्री आये और रजोहरण को नीचे किया तो सर्प रजोहरण से निकलकर आचार्य श्री के पैरों की तरफ बार-बार फन पटकने लगा, किन्तु आचार्य श्री किञ्चित् मात्र भी विचलित नहीं हुए और बार-बार पुनः रजोहरण में लेने का प्रयत्न करते रहे, किन्तु जब वह किसी तरह से रजोहरण में नहीं आया तो आचार्य श्री ने उसे हाथ से उठा लिया और उसे रजोहरण की डंडी पर रख लिया और फिर लेकर चलने लगे। जब गाँव से काफी आगे आगये तब आचार्य श्री ने साँप को एक तरफ छोड़ दिया और कहा—"अब तू उधर चला जा।"

आचार्य श्री के कहने की देर थी, साँप सरर करता हुआ जिस ओर आचार्य श्री का संकेत था, उसी ओर गाँव के दूसरी ओर चला गया। इस प्रकार आचार्य श्री ने नागराज के प्राणों की रक्षा की। धन्य है करुणा के सागर आचार्य भगवन् को, जिन्होंने नागराज के प्राणों की रक्षा के लिये अपने प्राणों की भी परवाह नहीं की। आज भी बहाला ग्राम में आचार्य श्री की इस करुणा की कहानी को लोग याद करते हैं।

—छाजूसिंह के दरवाजे के सामने, अलवर—३०१ ००१

व्यक्तित्व-विश्लेषण :
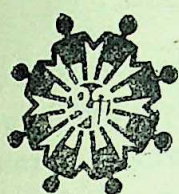
आदर्श विभूति का विरल व्यक्तित्व

☐ श्री चाँदमल कर्णावट

तीर्थपति भगवान् महावीर के बाद की सुदीर्घ आचार्य परम्परा। आचार्य श्री हस्ती का इसमें अपना एक महत्त्वपूर्ण स्थान। बीस वर्ष की लघुवय में संघ के आचार्य पद पर प्रतिष्ठित होने के पश्चात् से आपके द्वारा अपने उत्तरदायित्व का अत्यन्त कुशलता एवं गम्भीरता से परिपालन। अपने विरल व्यक्तित्व के कारण सम्पूर्ण जैन समाज में विशेषत: स्थानकवासी जैन समाज में आपके प्रति अगाध श्रद्धा एवं समादर का भाव विद्यमान। सामायिक एवं स्वाध्याय के उद्घोष के साथ इतिहास मार्तण्ड का उनका तेजस्वी रूप।

सौम्य मुख मण्डल—साधना के तेज से दीप्तिमान मुखमण्डल पर प्रसन्नता एवं सौम्यता की खेलती रेखाएँ। मुखमण्डल पर सूर्य की सी लाली–शीतल किरणें विकीर्ण करती हुईं। योगमुद्रा–ध्यान और स्वाध्याय साधना में लीन उनकी एकाग्र दृष्टि। घंटों आपके मुखमण्डल की ओर निहारते रहने पर भी दर्शक मन तृप्त नहीं होता। अनिमेष दृष्टि से उन्हें देखते रहना ही मन को भाता है। आपकी यह सौम्य मुखमुद्रा दर्शक को सदैव ऐसी ही सौम्यता एवं प्रसन्न बने रहने की प्रबल प्रेरणा प्रदान करती है।

हित मित और प्रिय भाषण—संस्कृत साहित्य की प्रसिद्ध उक्ति—'हितम् मनोहरि च दुर्लभं वच' अर्थात् ऐसे वचन दुर्लभ हैं जो हितकारी होने के साथ मधुर और मनोहारी भी हों। इस उक्ति के आदर्श रूप हैं—आचार्य श्री हस्ती। हितकारी और मनोहारी होने के साथ आपकी वाणी की एक अन्यतम विशेषता है—मितभाषिता। प्रत्येक दर्शनार्थी को जीवन का कल्याणकारी संदेश–स्वाध्याय सामायिक, व्यसन त्याग आदि के रूप में आपसे मिलता है, जो जीवन का परम-पाथेय होता है। यह संदेश छोटे-छोटे नियमों के रूप में जीवन के लिए कल्याण-कारी होने के साथ अत्यन्त मधुर होता है। लौकिक और पारलौकिक जीवन को सुखमय एवं शांतिमय बनाने वाला आपका यह संदेश बहुत थोड़े शब्दों में दिया जाने पर भी अत्यन्त हृदयस्पर्शी होता है। धार्मिक एवं आध्यात्मिक जीवन के बारे में पूछने एवं इन जीवन निर्माणकारी लघु नियमों का कथन करने के बाद आचार्यश्री पुन: अपने ध्यान, चिंतन-मनन एवं लेखन-पठन में संलग्न हो जाते हैं। उनके प्रसन्न मुद्रा में, मधुर और परिमित शब्दों में किये गये कथन दर्शक के मन पर स्थायी रूप से अंकित हो जाते हैं।

अप्रमत्तता—'आचारांग' सूत्र के अनुसार—'सव्वतो पमत्तस्स भयं, सव्वतो अपमत्तस्स, णत्थि भयं' अर्थात् प्रमादी को सब ओर से भय होता है, परन्तु

अप्रमत्त को नहीं । इस सूत्र के व्यापक अर्थों में अप्रमत्तता को अपनाकर आचार्य प्रवर ने निर्भयता को प्राप्त कर लिया है । मद, विषय, कषाय, निद्रा और विकथा से दूर रहते हुए प्रमाद को जैसे आपने विजय कर लिया है । अप्रमत्तता के स्थूल अर्थ में प्रमाद या आलस्य तो आपको छू तक नहीं सका है । ७६ वर्ष की वृद्धावस्था में भी प्रातःकाल से सायंकाल तक काष्ठपट्ट पर विराजे हुए आप चिंतन, मनन एवं लेखन-पठनादि कार्यों में सदा संलग्न रहते हैं । इसके साथ जीवन के एक-एक क्षण का सदुपयोग आचार्य श्री की एक अनुकरणीय विशेषता है । स्वल्प आहार आपकी इस अप्रमत्तता में सहायक रहता है ।

खण्डन-मण्डन से दूर—त्याग-वैराग्य से ओतप्रोत आपकी प्रवचनधारा श्रोतावर्ग के मन को निर्मल बनाती हुई अत्यन्त प्रियकारी अनुभव होती है । व्यापक अध्ययन से निसृत आपकी प्रवचनधारा गहराइयों को स्पर्श करती अनेक अनुभूतियों को अभिव्यक्ति देती और अनेक तथ्यों को उजागर करती हुई प्रवाहित होती है ।

आपके प्रवचन एकांततः आध्यात्मिक-नैतिक प्रेरणाओं से परिपूर्ण होते हुए खण्डन-मण्डन से दूर रहते हैं । कभी कोई कथन हुआ भी तो वह अन्तर्वेदना से प्रसूत और सद्भावना का ही द्योतक होता है । यह एक प्रमुख कारक है जिसके कारण आचार्य हस्ती अन्य-अन्य जैन-जैनेतर सम्प्रदायों में भी श्रद्धास्पद बने हुए हैं । आपके प्रति सभी सम्प्रदायों के संत-सती तथा श्रावक-श्राविका वर्ग श्रद्धा और समादर के भाव रखते हैं । आपका साहित्य भी प्रेम एवं सद्भावना से पूर्ण है ।

नवीन समाज-रचना में मुख्य भूमिका—समाज की वर्तमान दशा के प्रति आपके दिल में गहरी वेदना है । भौतिकता के बीच में फंसे समाज को आपने सामायिक और स्वाध्याय के दो महान् सन्देश दिये हैं । ये संदेश सम्पूर्ण मानव जाति के लिए महत्त्वपूर्ण हैं । आत्मजयी महान् आत्माओं के सन्देशों पर आधारित सद्ग्रन्थों के पठन-पाठन से व्यक्ति को ज्ञान का प्रकाश मिलता है और सामायिक या क्रिया के द्वारा उसका आचरण करके वह नवीन समाज—व्यसनमुक्त समाज रचना का स्वप्न साकार करने में समर्थ बनता है ।

आधुनिक समाज की विभिन्न समस्याओं का हल आपके स्वाध्याय एवं सामायिक के सन्देश में निहित है । आपकी सद्प्रेरणा से सैंकड़ों की संख्या में स्वाध्यायी वर्ग तैयार हुआ है जो सामाजिक, आध्यात्मिक जागरण के कार्य में जुटा हुआ है और नवीन समाज-रचना में अपना योगदान कर रहा है । आदर्श विभूति आचार्य हस्ती का यह विरल व्यक्तित्व हमें सदा सम्प्रेरित करता रहे, यही कामना है ।

—३५ अहिंसापुरी, उदयपुर (राज.)
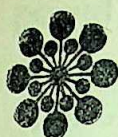
ACHARYA SHRI HASTIMALJI MAHARAJ —A SOURCE OF INSPIRATION

☐ **Rajeev Bhanawat**

Acharya Shri Hastimalji Maharaj was born on Chaturdashi of Pausha Shukla in V.S. 1967 in Village 'Pipad City' situated in Jodhpur state now a district of Rajasthan. His father Sh. Kewal Chandji Bohra died in plague few months before his birth. His mother Smt. Rupa Devi a religions lady brought him up with love and affection. She inculcated in him good virtues and religious bent of mind right from the very beginning.

As a result of this, child Hasti decided not to lead an ordinary worldly life and renounced the world to become Jain Shraman (Monk) at a young age of 10 years. Simultaneously his mother also renounced the world. Both child and mother became disciples of Acharya Shri Shobha Chandji Maharaj. Thus Shraman Hasti began his journey to overcome anger, pride, deceit, avarice and other internal weaknesses. He also started studying Sanskrit, Prakrit Grammar, Jain Agam, Philosophy, History, culture etc. along with strict observance of Panch Mahavrat the five tough vows of non-violence, truth, non-stealing, celibacy and non-possession. He, because of his extraordinary qualities, personality, knowledge and spiritual attainment was offered Acharya-ship at the young age of twenty years.

Acharya Shri gives equal importance to both 'Gyan' (Knowledge) as well as 'Kriya' (Conduct), According to him one without the other is meaningless and may prove to be dangerous. Inspired by teachings of Acharya Shri 'Samyak Gyan Pracharak Mandal' was established with an objective to publish and help to spread spiritual literature and right knowledge. This institution is bringing out this monthly magazine 'Jinwani' for the last 45 years regularly.

Acharya Shri is of the firm belief that a person or society can not be considered great due to monetary power alone. Strength of a society or a person lies in right education, good habits, and internal spiritual development. To fulfil these objectives Acharya Shri always inspires for setting up institutions which provide right education and help to preserve and propogate our cultural heritage. One such institution is 'Acharya Vinaychand Gyan Bhandar', Jaipur in which more than 25 thousand important manuscripts are preserved. Similarly

in Jodhpur, 'Shri Ratna Jain Pustakalya' has many rare printed books and manuscripts of literary traditions and cultural values. Another institution in the area of education set up due to inspiration of Acharya Shri is 'Shri Jain Sidhanta Shikshan Sansthan, Jaipur'. In this Sansthan students are given traditional and religions education along with formal education of college/university.

Acharya Shri believes that attainment of materialistic objective and physical comforts is not the aim of life. One must strive for development of qualities and virtues of selfcontrol, compassion, forgiveness, fearlessness, brotherhood, balance of mind, austerity etc. To spread this message he had Pad Yatras and Chaturmas throughout the country particulary in Rajasthan, Gujarat, Karnataka, Tamilnadu, Maharastra, Andhra Pradesh, Uttar Pradesh, Delhi, Madhya Pradesh and Haryana etc. He has also inspired more than 500 Swadhyayis to organise themselves under the banner of 'Swadhyaya Sangh'. These Swadhyayis who are house-holders and lead pure, simple and disciplined life, go to those places during Paryushan where people donot have privilege of Chaturmas of any Jain Saint, to spread the message of Bhagwan Mahaveer and Acharya Shri. They also motivate people to leave bad habits, addiction and propogate the message of vegetarianism. Acharya Shri has great feeling of respect and honour for women. He feels that by awakening women whole society and country can be awakened. With this object a separate organisation for women has been formed called 'Akhil Bhartiya Mahaveer Jain Shrawika Sangh.' It publishes, a monthly magazine 'Veer-Upasika' whose more than 7000 copies are sent free of cost to readers of different categories and walks of life.

Acharya Shri emphasises that one must learn and take inspiration from the past to make one's present and future happy. Our old religious and cultural traditions are very useful. Because of this one must study and analyse our history and culture. Under the guidance of Acharya Shri 'Jain Dharm Ka Maulik Itihas' has been written & published in four volumes.

On the auspicious occasion of his entering 60th year of Acharyaship on Akshaya Tratiya—Veshakh Shukla Teej V. S. 2046, we must vow to follow the path shown by Acharya Shri Hastimalji Maharaj. This would be a real tribute and honour to him.

—Dy. Manager (Marketing) R.C.D.F., Jaipur.
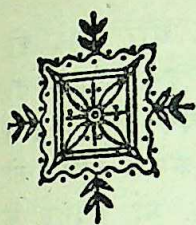
निर्विचारं गुरोवर्यः च

☐ प्रो० कल्याणमल लोढ़ा

आचार्य श्री के आचार्यत्व के ६०वें वर्ष पर मैं माघ के इस श्लोक से ही अपनी वन्दना प्रारम्भ करता हूँ।

तुङ्ग त्वमितरा नाद्रौ नेदं सिन्धवगाहता ।
शलतङ्घनीयता हेतुरूमयं तन्मनस्विनी ।।

समुद्र गहरा होता है, ऊँचा नहीं, शैलमाला उन्नत होती है पर गहरी नहीं, इन्हें मापा जा सकता है, पर उभय विशेषताओं से समन्वित होने के कारण महापुरुषों का जीवन अमाप्य है। आचार्य श्री का व्यक्तित्व मेरे लिए अमाप्य है। दूसरी ओर भगवान श्री महावीर ने 'स्थानांगसूत्र' में कहा है कि तीन व्यक्तियों से उऋण होना अत्यन्त कठिन है—पिता से पुत्र का, महाजन से अनाथ बालक का, आचार्य से शिष्य का किसी प्रकार सम्भव नहीं। आचार्य श्री का व्यक्तित्व यदि अमाप्य है तो उससे उऋण होना भी हमारे लिए असम्भव है। उनकी देन की महत्ता ही ऐसी है। महान् बनना कठिन है, अत्यन्त कठिन, पर व्यक्ति अपनी अनवरत साधना, ओजस्वी वाणी, अप्रतिम प्रज्ञा, अपरिमेय विद्वत्ता और ज्ञान, दर्शन व चारित्र की आदर्श प्रामाणिकता से विशिष्ट गौरवसम्पन्न और श्रद्धास्पद बन जीवन के सर्वोच्च शृंग पर चढ़कर दैदीप्यमान हो जाता है। कठिनतम है अपनी महानता और उज्ज्वलता को समाज के व्यापक जीवन के साथ संलग्न कर प्रत्येक व्यक्ति को, मानवीय संस्कृति की प्रत्येक कड़ी को, महानता की ओर, जीवन की उच्चतम भूमिका की ओर प्रेरित और अग्रसर करना, जिससे उसका भी जीवन उन्हीं गुणों से पूर्ण हो। आचार्य श्री के जीवन का प्रत्येक क्षण इसी व्यापक लोकमंगल की भावना से अनुप्रेरित रहा है। यदि किसी ने उनके अध्यात्म के अथाह सागर के कुछ जलकण भी प्राप्त किये हों तो वह उसका सौभाग्य है; क्योंकि

अनुगंतु सतांवर्त्म कृत्सनं यदि शक्यते ।
स्वल्पमप्युनु गन्तव्यं मार्गस्थो नावसीदति ।।

यदि महान पुरुषों के जीवन व कार्यों का पूर्णतः अनुगमन न भी कर सकें तो अत्यल्प ही सही, क्योंकि पथ पर चलता हुआ व्यक्ति एक न एक दिन अवश्य ही लक्ष्य तक पहुँच जाता है, विषयगामी नहीं होता।

आज चारों ओर भयंकर विभीषिका व्याप्त है । खरे और खोटे की पहचान भी दुष्कर हो गई है । मैथिलीशरण गुप्त के अनुसार हमारे देश में तो पाखण्डी भी तन में धूल लगाकर साधु बन जाते हैं, तनिक भी देर नहीं होती । उनकी कथनी और करनी के अन्तर को मन, वचन और कर्म के वैषम्य को पहचानना अत्यन्त कठिन हो जाता है पर जब भी मैंने किसी भी सद्गुरु के विषय में सोचा है, उसकी गुणवत्ता पर विचार किया है, मुझे श्रीमद् राजचन्द्र का यह कथन याद आता है कि आचार्य व गुरु तीन प्रकार के होते हैं—काष्ठ स्वरूप, कागज स्वरूप और प्रस्तर स्वरूप । इनमें काष्ठ स्वरूप ही सर्वोत्तम है क्योंकि वे ही संसार रूपी समुद्र को पार कर सकते हैं और औरों को भी करा सकते हैं । तत्त्वज्ञान के भेद, स्वस्वरूप के भेद, लोकालोक विचार और आत्मिक शक्ति का बोध सच्चे गुरु के बिना असम्भव है । ऐसे महान् आचार्य के लक्षण हैं—

आत्मज्ञान समदर्शिता, विचरे उदय प्रयोग ।
अपूर्व वाणी परम श्रुत, सद्गुरु लक्षण योग्य ।।

(श्रीमद् राजचन्द्र—आत्मसिद्धि की १०वीं गाथा)

जिनकी आत्मज्ञान में स्थिति है, जो परभाव की वांछा से रहित हैं तथा शत्रु-मित्र, हर्ष-विषाद, नमस्कार-तिरस्कार आदि में समता रखते हैं—वे ही परमोत्तम गुरु हैं । इनका विचरण, प्रवचन और उद्बोधन मनुष्य को शिव संकल्पमय करता है, अज्ञान व तिमिर को नष्ट कर, संयम और साधना की ओर प्रवृत्त करता है—वे ही विशिष्ट आचार्य और आराध्य हैं, वे ही लोकानुग्रह, परमार्थप्रकाश और आत्मविद् हो सकते हैं । यहीं मुझे 'उत्तराध्ययन' याद आता है । भगवान महावीर स्पष्ट कहते हैं कि पूर्व भव में मनुष्य उत्तम विभूति वाली देव योनियों में जन्म लेकर आयुष्य पूरा कर, फिर मनुष्य योनि में, उत्तम कुल में जन्म लेते हैं और दस गुणों से संयुक्त पूर्व जन्म के संस्कारों से पहले से ही वे विशुद्ध चारित्र की असामान्य मानसिक विभूतियों से सम्पन्न होकर व अनासक्त रहकर शुद्ध ज्ञान प्राप्त, संयम प्रधान मोक्ष मार्ग स्वीकार कर, तप से कर्मों को नष्ट कर शाश्वत सिद्धि प्राप्त करते हैं । उनके माहात्म्य का बोध प्रत्येक व्यक्ति को होता है । आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज साहब इसके प्रत्यक्ष प्रमाण हैं—

कास्तेऽत्र चित्रको रक्तः, कृष्णापुष्पः च कुत्रसा ।
शाकम्भर्याश्च लवणं, वज्रकन्दश्च कुत्र च ।।

कहां चित्रावली, कहां कृष्णा मुंडी, कहां सांभर का लवण और कहां वज्रकन्द ? गुरु गुण स्मरण सूत्र में हम स्पष्ट कहते हैं ।

पंचिदिय संवरणो तह नवविह बंभचेर मुक्ति धरो।
चउविह कसाय मुक्को इअ अटठारस गुणेहि संजुत्तो।
पंच महत्वय जुत्तो, पंचविहायार पालण समत्थो।
पंच समिश्रो तिगुत्तो, छत्तीस गुणो गुरु मज्झ।।

पाँचों इन्द्रियों को वश में करने वाले तथा नव प्रकार के ब्रह्मचर्य की गुप्तियों को धारण करने वाले, चार प्रकार के कषाय से मुक्त, इन अष्टादश गुणों में संयुक्त, पाँच महाव्रतों, पाँच आचार और पाँच समिति पालने वाले एवं तीन गुप्तियों से संयुक्त इन छत्तीस गुणों वाले साधु ही मेरे गुरु हैं।

मेरी यह धारणा है कि किसी भी धर्म की विशेषता उसके अनुपालक में विवेक व सात्विक बुद्धि के साथ श्रद्धा उदय करने की क्षमता में है। जैन धर्म विवेक व प्रज्ञा का धर्म है। विवेक, सद्बुद्धि और श्रद्धा का उदय सम्भव है स्वाध्याय और सामायिक से। आचार्य श्री जब भी इन पर बल देते हैं, मुझे यही लगता है, क्योंकि

यस्मातपवित्रं न हि किञ्चदस्ति, लोक त्रयेऽपीति वदन्ति वेदाः।
त देव नित्यं समुपासनीय, महो विवेकाख्यमहो महदिभः।।

वेद कहते हैं कि विवेक से अधिक कोई वस्तु तीनों लोकों में नहीं है। अतः महापुरुषों को विवेक की उपासना करनी चाहिए और उसकी प्राप्ति का उपाय। विवेक के बिना तप और उपासना सम्भव नहीं। विवेक रूप सूर्योदय शास्त्रों के अध्ययन (स्वाध्याय) से ही सम्भव है अतः विवेकशील होने के लिए निरन्तर शास्त्राध्ययन और स्वाध्याय आवश्यक है।

उपासनां नैव बिना विवेकम्, बिनागमं नैव विवेक भानुः।
ततो विवेकाय सदा गमानाम्, रहस्य लाभे सततोद्यय भीस्याः।।

कर सकें या नहीं, हमें यह तो मानना ही पड़ेगा कि सामायिक और स्वाध्याय आत्म-कल्याण की जीवित साधना है। 'आया समाइए आया सामाइस्स अट्ठे,' अविवेक को ही सामायिक का प्रथम दोष गिना है। स्वाध्याय तो स्वयं ही अन्यतम तप है, 'न विअत्थि न वियहोई, सज्झाएणं समं तवो कम्मं' स्वाध्याय में तो विवेक अवर दीख जाता है। श्रुति के अनुसार वे मौन रहकर अथवा उद्बोधन कर कहते हैं—

हिरण्यमये परे कोशेविरजं ब्रह्म निष्कलम्।
तऽच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिस्तद्, यदात्मविदोविदुः।।

हिरण्यमय कोश के परे एक आध्यात्मिक रत्नागार है। संसार का कोश सारहीन और द्युति विहीन है, पर वह रत्नागार निर्मल और निष्कलंक है। तुम क्यों इस सोने की चमक से चकाचौंध हो रहे हो, उसे देखो, जो शुभ्र है, ज्योतियों की ज्योति है। संसार-चक्र में फँसे हम इस खजाने को नहीं देख पाते। आत्मा को जानने वाले ही उसे देखते हैं, जानते हैं, जिसके सदृश अन्यत्र कहीं कुछ भी नहीं है। यह आत्मा सत्य के द्वारा, तप के द्वारा, ज्ञान के द्वारा, दर्शन और चारित्र के द्वारा और ब्रह्मचर्य के द्वारा ही द्रष्टव्य है। साधु राग-द्वेष आदि कषायों का क्षय करके ही उसे देखते हैं—यही 'देवयान पन्था' है। दिव्यनाद की ये सुधा-तरंगें हमें उद्वेलित और आन्दोलित करती हैं। मृष्मयता के भीतर चिन्मयता के संधान के लिए यही निर्मल ज्ञान का अक्षय स्रोत है। आचार्य हरिभद्र के अनुसार—

> न वीतरागादपरोस्ति देवो, न ब्रह्मचर्याद परंचरित्रम्।
> नाभीतिदानात् परमस्ति दानं, चारित्रिणो नापरमस्ति पात्रम्॥

न वीतराग से परे कोई देव है, न ब्रह्मचर्य से श्रेष्ठ आचार। अभय दान ही सर्वोत्तम है और चारित्र गुण सम्पन्न महान् सन्त से उन्नत कोई अन्य पात्र नहीं।

पूज्यपाद अपनी इसी महानता से हमें सदैव सत्य पथ पर अग्रसर करते रहें, यही प्रार्थना है। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि सियारामशरण की इन पंक्तियों के साथ ही मैं उन्हें अपनी प्रणति देता हूँ—

> पौ फटती धुंधली वेला में, मग में पथ में मन्द।
> गया न प्यान की गति में आयी, सुगति कहाँ स्वच्छन्द॥
> दिया प्रथम जिस प्रात पवन ने, नवगति का उद्बोध।
> हो कैसे जीवन में उसके, उस ऋण का परिशोध॥

—२ ए, देशप्रिय पार्क (पूर्व)
कलकत्ता—७०००२९

चिरस्मरणीय संस्मरण

इस स्तम्भ के लिए अपने तथा अपने सम्बन्धियों के चिरस्मरणीय प्रसंग/संस्मरण/अनुभव भेजिए। प्रत्येक प्रकाशित संस्मरण/प्रसंग अनुभव पर आपको पाँच पुस्तिकायें पुरस्कार में दी जायेंगी। अपने संस्मरण/प्रसंग/अनुभव इस पते पर भेजें :—

मंत्री,
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार, जयपुर-३०२००३

अहिंसा, करुणा व दया के सागर

☐ श्री हरिश्चन्द्र बडेर

परम श्रद्धेय परम पूज्य गुरुदेव आचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज के अनमोल जीवन व विलक्षण व्यक्तित्व के बारे में सम्पूर्ण व्याकरण के पास भी ऐसे विलक्षण विशषेण उपलब्ध नहीं हैं जो श्रद्धेय आचार्य श्री के असीम गुणों का वर्णन कर सकें, जिनके महान् जीवन का एक-एक पल आत्मसाधना में ही प्रकाश से महा प्रकाश की ओर अग्रसर हो रहा है। हर व्यक्ति, जो आप श्री के सम्पर्क में आता है, ऐसा महसूस किये बगैर नहीं रह सकता कि आचार्य श्री मात्र उसी के हैं जबकि आचार्य भगवन्त के अनेक भक्त हैं। हर भक्त के लिए आचार्य श्री की आत्मा में तीक्ष्ण अभिलाषा व चाह है कि हर प्राणी मुक्तिगामी बने, सामायिक व स्वाध्याय के द्वारा रागद्वेष से मुक्त हो। वृद्धावस्था में भी आचार्य श्री का यही प्रतिबोध है हर आत्मा के लिए :

" शुद्ध बुद्ध मैं हूं चिदरूप।
रोग शोक नहीं मेरा रूप " ।।

शरीर अस्वस्थ होते हुए भी कितना विलक्षण व असीम आत्म-बल आचार्य श्री की आत्मा में विद्यमान है! आचार्य भगवन्त से जिसने जीवन में आशीर्वाद प्राप्त कर लिया, समझ लो वह निहाल हो ही गया, क्योंकि कहा है :

"सन्तों की निगाहों में अजीब तासीर होती है,
और निगाहें हो जायें तो खाक अकसीर होती है ।।"

आचार्य श्री ने एक बार मुझे फरमाया 'क्यूं ससीम जीवन में असीम इच्छायें करते हो। यह दुर्लभ मानव भव फिर मिले या ना मिले, इसे सफल बना लो।'

आचार्य श्री सदैव फरमाते हैं "आलोचना अन्य की नहीं, स्वयं की करो, तभी कर्मों की सच्ची निर्जरा हो सकेगी।"

आचार्य श्री का अत्यन्त प्रिय भजन मैं बचपन से ही सुनता आ रहा हूँ :

" दयामय ऐसी मति हो जाय।
त्रिभुवन की कल्याण कामना,
दिन–दिन बढ़ती जाय।
औरों के दुःख को दुःख समझूं,
सुख का करूं उपाय ।।"

पर पीड़ा को देख कर आप श्री की महान् आत्मा द्रवित हो उठती है। बार-बार हम भक्तजनों को उपदेश देते रहते हैं कि शादी-विवाह व अन्य अवसरों पर फूलों की सजावट कर वनस्पति जीवों को अपने सुखों व आनन्द की खातिर कष्ट न पहुंचायें। फूलों से अधिक कोमल हृदय है आचार्य श्री का।

आप श्री सदैव फरमाया करते हैं कि समाज के कमजोर भाई-बहिनों को अपने भाई-बहिन समझोगे तभी उनकी सेवा कर सकोगे। इसी के परिणाम-स्वरूप आपके जयपुर चातुर्मास में 'भूधर धर्म बन्धु कल्याण कोष' की स्थापना हुई। यह कोष हम चाहते थे कि आचार्य श्री के नाम पर स्थापित हो परन्तु आचार्य भगवन्त को अपने नाम की किंचित् भी चाह नहीं। 'श्री अमर जैन मेडिकल रिलीफ सोसाइटी' चौड़ा रास्ता, जयपुर के अन्तर्गत 'फ्री चैरिटेबल वार्ड' की स्थापना के पीछे आप श्री का महान् आशीर्वाद मुझे सदैव मिलता रहा जिसके फलस्वरूप आज सताईस लाख की राशि संग्रह हो चुकी है। तीन साल के प्रयास से 'कण-कण से मण' संगृहीत हो ही गया।

अहिंसा, करुणा व दया के अपार सागर आचार्य श्री की आत्मा से सदैव एक ही पावन गंगा प्रवाहित होती है कि सब का मंगल हो, सबका कल्याण हो व सभी की स्वस्ती व मुक्ति हो। दशों दिशाओं के समस्त प्राणी पूर्ण सुखी हों। हर प्राणी राग, द्वेष व अभिमान से बचे, विभाव से स्वभाव की ओर लौटे तभी वह सच्ची शान्ति प्राप्त कर सकेगा। कुदरत का विधान ही ऐसा है। अच्छे से अच्छे पकवान खाते हुए यदि मलशुद्धि नहीं होती है तो सम्पूर्ण शरीर अस्वस्थ हो जाता है। ठीक उसी प्रकार परिग्रह-संचय करते हुए यदि व्यक्ति मलशुद्धि की भांति दान नहीं करता तो जीवन की प्राप्त सम्पदा का कोई मूल्य व महत्त्व नहीं रहता, वह वर्तमान में व कालांतर में सदैव अशान्ति ही अशान्ति पैदा करेगी व नवीन पुण्य संचय करने से महरूम रह जायेंगे। अतः यथाशक्ति खूब दान करें। नवीन पुण्य का संचय करें।

ऐसी भावनाओं का सागर हैं आचार्य श्री का महान् जीवन। आचार्य श्री के जितने भी भक्त हैं वे अमर्यादित व अशोभनीय प्रवृत्तियों से बचे हुए हैं, यह आज के युग में आचार्य श्री की कृपा का ही फल है। जिनेश्वर भगवन् से यही प्रार्थना हैं कि आचार्य श्री पूर्ण स्वस्थ व दीर्घायु बनें व अनेक आत्माओं को मुक्तिगामी बनाते हुए स्वयं भी पूर्ण मुक्तिगामी बनें। जन-जन के हृदयेश्वर आचार्य भगवन को मेरी व मेरे परिवार की विनम्र कोटि-कोटि वंदना।

१५, तख्तेशाही रोड, जयपुर ३०२००४

धारावाहिक उपन्यास [२]
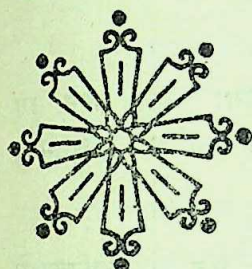
आत्म-दर्शन*

□ श्री धन्ना मुनि
[आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के सुशिष्य]

दाम्पत्य जीवन में प्रवेश के अनन्तर आषाढ़भूति अहर्निश ऐहिक सुखोपभोगों में निमग्न रहते। नाट्याधिराज के निर्देशानुसार आठों प्रहर विविध वाद्यों और संगीत की स्वर लहरियां दो सुर-सरिताओं की भाँति उस सुविशाल सदन में अपने पूरे प्रबल वेग के साथ प्रवाहित होने लगीं। नाट्याधिराज का अभिप्रेत था आषाढ़भूति को नाट्य-शास्त्र में निष्णात कर आर्यधरा का सर्वोत्कृष्ट-सर्वश्रेष्ठ नाट्यकार बनाना। अपने पिता के अभिप्रेतानुसार आषाढ़भूति की नवोढाएँ विविध वाद्ययंत्रों की सम्मोहक ताल के साथ अपने कोकिल कण्ठों और गीतों के माध्यम से अपने प्रियतम को संगीत-सागर में आकण्ठ निमग्न रख, प्रत्यक्ष रूप में आषाढ़भूति को संगीत का न केवल सच्चा उपासक ही अपितु स्रष्टा बनाने के प्रयास में निरत रहतीं। कुशाग्र बुद्धि के धनी आषाढ़भूति स्वल्प समय में ही संगीत-शास्त्र के पण्डित और नाट्य-शास्त्र के मर्मज्ञ बन गये। यह सब उनके आठों याम चारों ओर नाट्य एवं संगीत के वातावरण का परिणाम था।

नाट्यशालाधिराज नटराज की अन्तर्दृष्टि सदा आषाढ़भूति की दैनन्दिनी पर लगी रहती। एक दिन जब उन्होंने देखा कि उनके जामाता की मनोभूमि में एक सच्चे नाटककार के बीज अंकुरित हो चुके हैं तो उन्होंने आषाढ़भूति को अपने कक्ष में बुलवाया और अपने अन्तर हृद का स्नेह उडेलते हुए कहा—"वत्स! तुम्हें पाकर मैं कृतकृत्य हो गया हूँ। मुझ अपुत्र को सपुत्र बना मुझे निश्चिन्त कर दिया है। मैं पर्याप्तरूपेण वयोवृद्ध होता जा रहा हूँ, अपना घरबार, परिजन, परिवार सब कुछ तुम्हें सम्भलाकर अपना शेष जीवन ईश्वराराधन में व्यतीत करना चाहता हूँ। कार्यभार से निवृत्त होने से पूर्व मैं चाहता हूँ कि तुम्हें न केवल मगधेश से ही अपितु आर्यधरा के अन्यान्य सभी राज्यों के नरेश्वरों से परिचित करा दूं। कल प्रातःकाल तुम्हें मेरे साथ मगधेश्वर की राजसभा में चलना है। राजसभा में किस परिधान में उपस्थित होना

*मुनि श्री की डायरी से संकलित।

है, यह सब तुम्हारे परिचारक जानते हैं। मैंने उन्हें निर्देश दे दिया है कि वे सब तुम्हें उन परिधानों से प्रातः अर्ध-पौरुसी के अवसान से पूर्व ही सुसज्जित व समलंकृत कर दें।

"आपके आदेश का अक्षरशः पालन किया जायेगा" यह कहते हुए आषाढ़भूति ने मगधेश की राजसभा में उपस्थित होने को अपनी सहमति प्रदान की।

दूसरे दिन सूर्योदय से पूर्व आषाढ़भूति के परिचारक एवं परिचारिकाओं ने तैलाभ्यङ्गादि से मर्दनानंतर एवं मज्जनोपरांत उन्हें राजसभा में उपस्थित होने योग्य बहुमूल्य वस्त्रालंकारों से सुसज्जित किया। स्वयं नाट्यशालाध्यक्ष ने परिधान आदि का सूक्ष्म दृष्टि से निरीक्षण करने के उपरान्त आषाढ़भूति की पीठ को अपने दाहिने हाथ से थपथपाते हुये कहा—"अतीव सुन्दर, नाट्यकला के सर्वश्रेष्ठ कलाकार का मैं अभिवादन करता हूँ।" मगधेश्वर और उनकी राजसभा के सदस्य आज अपने भावी महान् कलाकार को देखकर परम प्रमुदित होंगे।

प्रातरशन करने के अनन्तर श्वसुर और जामाता अतीव सुन्दर व चपल चार अश्वों से वह्यमान रथ पर आरूढ़ हुए। सारथी के संकेत मात्र से चारों चपल अश्व वायु वेग से राजप्रासाद की ओर अग्रसर हुए। प्रशस्त राजपथ पर चतुष्पथों, शृंगाटकों को पीछे की ओर छोड़ता हुआ रथ नगाधिराज तुल्य गगनचुम्बी राजप्रासाद के सिंहद्वार में प्रविष्ट हुआ। समुचित स्थान पर रथ रुक गया। नाट्यशालाध्यक्ष अपने जामाता के साथ रथ से उतरकर राजसभा में प्रविष्ट हुए और अपने लिये राजसभा में सुनिश्चित आसन के पास ही दूसरे आसन की ओर संकेत करते हुए अपने जामाता को उस पर बैठने का निर्देश दिया तथा स्वयं भी अपने आसन पर आसीन हुए। कुछ ही क्षणों के अनन्तर गगनवेधी जयघोष के बीच मगध सम्राट् ने अपने मंत्रिमण्डल, महामात्यादि सदस्यों, अंगरक्षकों, सेनाध्यक्षों आदि के साथ राजसभा में प्रवेश किया। जयघोष के साथ ही राजसभा के सभी सदस्यों ने साञ्जलि शीश झुका मगधेश्वर को प्रणाम किया।

सबके अपने-अपने आसनों पर अवस्थित हो जाने के अनन्तर मगधाधीश ने अपने प्रजाजनों एवं समष्टि के लिए कल्याणकारी कार्यों पर सम्बन्धित मंत्रियों एवं विभागाध्यक्षों के साथ विचार विनिमय किया। प्रजा के प्रति मगधेश के इस आन्तरिक अगाध स्नेह को देखकर राजसभा के सभी सदस्य हर्ष विभोर हो उठे। मगध सम्राट ने नाट्यशालाध्यक्ष की ओर दृष्टि निपात करते हुए

कहा—क्या आज अपने उत्तराधिकारी को साथ लेकर मगध की नाट्यशाला के सूत्रधार मगध की राजसभा में उपस्थित हुए हैं ?

नाट्यशालाध्यक्ष ने करबद्ध एवं नतमस्तक हो विनय भरे स्वर में कहा—"हां, मगधेश्वर ! आज मैं अपने प्राणाधिक प्रिय जामाता को आपकी सेवा में लाया हूँ।"

मगधेश्वर ने हर्ष भरे स्वर में कहा—"बड़ा भाग्यवान् है मगध की नाट्यशाला का यह महान् यशस्वी सूत्रधार, जिसे इस प्रकार का सौम्य, सुन्दर और तेजस्वी जामाता प्राप्त हुआ है।"

मगधेश ने आषाढ़भूति की ओर इंगित करते हुए कहा—"वत्स ! क्या नाम है आपका ? आकृति ही बता रही है कि अनेक विद्याओं में पारंगत एवं उच्च कोटि की कलाओं में आप निष्णात हैं।"

जिसे कुछ ही समय पूर्व मगधेश ने अपने आत्मियों, परिजनों एवं पौरजनों के साथ नतमस्तक हो सभक्ति वंदन किया था, उसी आषाढ़भूति ने साञ्जलि शीश झुका मगधेश्वर को प्रणाम करते हुए कहा—"स्वामिन् ! सेवक को आषाढ़भूति के नाम से सम्बोधित करते हैं।" मगधेश्वर ने पुनः कहा "सौम्य ! हमने सुना है कि तुम अनेक अलौकिक अद्भुत गुणों के स्वामी हो। मेरे अन्तर में एक अभिलाषा अनेक वर्षों से घर किये हुए है कि मैं भारत देश के और इसके अन्यान्य मित्र देशों के राजाओं को मगध की नाट्यकला का चमत्कार दिखाकर मागधी कला की छाप संसार के महाराजाओं के हृदय पर अंकित करदूं। हमारे ईक्ष्वाकु क्षत्रिय वंश के मूल पुरुष और आर्यधरा पर मानव संस्कृति के तथा कर्मभूमि के आद्य प्रवर्तक भगवान् ऋषभदेव ने किस प्रकार भोग-भूमि के अबोध लोगों को कर्म-भूमि का पाठ पढ़ा असि, मसि, कृषि विषयक सभी कलाओं का परिज्ञान कराया। अब मैं अनुभव कर रहा हूँ कि मेरी उस आंतरिक अभिलाषा के पूर्ण होने का स्वर्णिम अवसर समीप आ गया है। आप जैसे असाधारण कलाकार के सुयोग से मेरी वह चिरकाल से अन्तर्मन में संजोयी हुई आकांक्षा पूर्ण होगी, इस बात का अब मुझे विश्वास हो गया है। अपनी इस आंतरिक उत्कट अभिलाषा की पूर्ति हेतु, मैं आपसे परामर्श कर एक रूपरेखा निर्धारित करना चाहता हूँ। राज-सभा के विसर्जन के अनन्तर इस सम्बन्ध में नाट्यशालाध्यक्ष आदि के साथ बैठकर विचार-विमर्श करूंगा।"

आषाढ़भूति ने अपने श्रमण-जीवन में तपश्चरण के साथ-साथ संस्कृत, प्राकृत आदि अनेक भाषाओं का और द्वादशांगी का गहन अध्ययन भी किया था। इस प्रकार बाह्याभ्यन्तर दोनों प्रकार के तप के प्रभाव से उन्हें छोटी-बड़ी

अनेक प्रकार की लब्धियाँ भी उपलब्ध हुई थीं। इन सिद्धियों की सहायता से वे अनेक प्रकार के असंभव समझे जाने वाले कार्यों को सहज ही निष्पन्न करने की क्षमता रखते थे। मगधेश्वर के इस प्रस्ताव से उनके अन्तर्मन में भी कभी न बुझने वाली उत्कट लालसा उद्भूत हुई कि वे अपनी उपलब्धियों अथवा सिद्धियों के बल पर सोचने लगे कि भोग-भूमि और कर्म-भूमि के संधिकाल की आर्य-धरा की दशा का चित्रण करने के अनन्तर कर्मयुग के सूत्रधार, धर्म के आदिकर्ता, तीनों नीतियों के प्रणेता, प्रथम राजा, प्रथम शिक्षक, धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष इन चारों वर्गों की साधना, सभी प्रकार की विद्याओं एवं कलाओं के आदि शिक्षक भगवान् आदिनाथ के परम पावन जीवन पर चिन्तन एवं उसके जन-जन के समक्ष चित्रण का इससे बढ़कर और कोई सुयोग कभी प्राप्त नहीं हो सकता। वे विचारने लगे कि इस स्वर्णिम सुयोग का पूर्णरूपेण लाभ उठाने में मैं किसी प्रकार की कोर-कसर नहीं रखूंगा। यह दृढ़ निश्चय कर आषाढ़भूति ने मन ही मन अपने भावी कार्यक्रम की रूपरेखा पर चिन्तन प्रारम्भ कर दिया।

मगधेश्वर के राजप्रासाद में कतिपय मास तक मगधेश्वर, नाट्यशालाध्यक्ष, महामात्य और आषाढ़भूति आदि का पारस्परिक परामर्शपूर्ण विचार-विमर्श चलता रहा। सभी ने इस विचार-विमर्श में यही अनुभव किया कि इस विषय में आषाढ़भूति का चिन्तन, मनन और परामर्श ही सर्वाधिक प्रामाणिक, माननीय, करणीय और महत्त्वपूर्ण है। अन्ततोगत्वा एक महान् नाटक के मंचन का निश्चय किया गया और इस विषय में सभी प्रकार की आवश्यक सामग्री एकत्र करने का निर्देश आषाढ़भूति को दिया गया। आषाढ़भूति ने अभिमञ्चित किये जाने वाले 'ऋषभायन' का प्रारूप लिखकर मगधेश के सम्मुख प्रस्तुत किया। उस प्रारूप को मगधेश और उनके मंत्रिमण्डल, विद्वत्मण्डल और कलाकाराग्रणियों ने मुक्त-कण्ठ से सराहा। आषाढ़भूति के परामर्शानुसार एक अति सुविशाल रंगमंच निर्मित किया गया, जिसमें सहस्रोंसहस्र दर्शक एक साथ बैठकर स्पष्टरूपेण देख-सुन सकते थे।

अभिनय हेतु विपुल महार्घ्य सामग्री अभिनवरूपेण आषाढ़भूति के परामर्शानुसार निर्मित एवं एकत्रित की गई। अभिनय हेतु अनेकों सर्वकला निष्णात् राजकुमारों एवं किशोरों आदि का आषाढ़भूति ने चयन कर व सभी आवश्यक कार्यों के सम्पन्न हो जाने के अनन्तर आषाढ़भूति ने अभिनय करने वाले पात्रों को 'ऋषभायन' के अभिमंचन की शिक्षा देना प्रारम्भ किया। रंगमंच व अभिनय के इस शिक्षा के परिणाम-स्वरूप एक अदृष्टपूर्व गंधर्वनगर का दृश्य राजगृह नगर के प्रान्त भाग में प्रस्तुत हुआ। विविध वाद्ययंत्रों, संगीत की

स्वरलहरियों, जात्यश्वों की हिनहिनाहट, मदोन्मत्त गजराजों की चिंघाड़ों और रथों की घड़घड़ाहट अहर्निश गुञ्जरित होने लगी।

समय-समय पर आषाढ़भूति के आमंत्रण पर मगधेश्वर अपने आत्मीय जनों, अमात्यवर्ग एवं नाट्यशाला के सूत्रधार के साथ रंगमंच में उपस्थित हो आषाढ़भूति द्वारा प्रस्तुत किये जाने वाले पावन पुरुषों के लोक-कल्याणार्थ जीवनवृत्त के अंशों का निरीक्षण भी करते। सभी को निरीक्षणकाल में ऐसा अनुभव होता मानों वे किसी अदृश्य शक्ति के द्वारा इस अवसर्पिणी काल के तृतीय आरक के अन्तिम भाग में उपस्थित कर दिये गये हों और कर्म-भूमि के साथ सही अर्थ में मानव सभ्यता का श्रीगणेश उनकी आंखों के समक्ष किया जा रहा हो।

अतीत का जो अद्भुत अंकन इस रंगमंच पर किया जा रहा है उसे सहज स्वरूप में प्रदर्शित करना, आषाढ़भूति की लब्धियों एवं सर्व कला निष्णातता का ही परिणाम था। इस बात को मगधेश के साथ-साथ सभी प्रत्यक्षदर्शियों ने आश्चर्याभिभूत मुद्रा में अभिव्यक्त किया। [क्रमशः]

□ □ □

धर्माचरण ही जीवन है

□ डॉ० प्रेमचन्द रांवका

मनुष्य की दैवी वृत्ति 'धर्म' है। यह वृत्ति/आचरण ही उसमें दया, दान, संतोष, संयम, करुणा, क्षमा आदि अनेक गुणों को उत्पन्न करती है। जितने अंशों में जहाँ-जहाँ यह धर्माचरण है, वहाँ-वहाँ उतने ही अंशों में सुख, शान्ति और वैभव का प्रभाव देखने को मिलता है। धर्माचरण की महत्ता के विषय में जैनाचार्य गुणभद्र कहते हैं—

"धर्मोवसेन्मनसि यावदलं स तावद्,
हन्ता न हन्तुरपि पश्य गतेऽथ तस्मिन्।
दृष्ट्वा परस्पर हतिर्जनकात्मजानाम्,
रक्षा ततोऽस्य जगतः खलु धर्म एव।।

अर्थात् जब तक मनुष्य के मन में 'धर्माचरण' रहता है, तब तक वह मारने वाले को भी नहीं मारता, किन्तु, देखो, जब यह धर्म मनुष्य के मन से निकल जाता है, तब औरों की कौन कहे—पिता-पुत्र को और पुत्र-पिता को मार डालता है। यह देखकर निश्चित ही कहा जा सकता है कि इस जगत् की रक्षा करने वाला केवल 'धर्म' ही है। मनुष्य को मनुष्य से मिलाने वाला धर्म ही है। दिलों को दिलों से जोड़ने वाली बुनियाद भी धर्म ही है जो सत्य, प्रेम और करुणा में निहित है।

व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन की सुरक्षा एवं सुख-शान्ति के लिये 'धर्माचरण' अपरिहार्य है। इसके बिना मानव-जीवन निरर्थक है। इसीलिये हमारे धर्माचार्यों ने "धर्मेण हीनाः पशुभिः समानाः" कह कर जीवन में धर्माचरण की आवश्यकता प्रतिपादित की है। वस्तुतः मनुष्य और पशु में यदि कोई अन्तर है तो वह केवल 'धर्म' का है। धर्म के कारण ही मानव मानवेतर प्राणियों में श्रेष्ठ गिना जाता है। उस धर्म का अर्थ है सदाचार, नैतिकता और विवेक। इनके अभाव में जीवन में अंधेरा ही अंधेरा है। विवेकहीन प्राणी स्वयं के साथ समाज के लिये भी भार-स्वरूप है। मनुष्य में से पशुता के निष्कासन का श्रेय धर्म को ही है। यह धर्माचरण ही जीवन है। जो उत्कृष्ट

मंगल स्वरूप है—वह अहिंसा, संयम एवं तप में है। जिसका मन इस धर्म में लगता है, देवता भी उसे प्रणाम करते हैं—

"धम्मो मंगल मुक्किट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।
देवा वि तं नमस्सन्ति, जस्स धम्मे सयामणो।।"

—दशवैकालिक सूत्र १/१

—१९१०, खेजड़े का रास्ता, जयपुर-१

व्यक्तित्व की विराटता

□ डॉ० इन्दरराज बैद

यह जानकर अत्यधिक प्रसन्नता हुई कि परम श्रद्धेय जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज साहब के आचार्य पद के ६० वर्ष के शुभ प्रसंग पर आपने 'जिनवाणी' का विशेषांक उनके तेजस्वी व्यक्तित्व को समर्पित करने की योजना बनायी है। इस पवित्र एवं महत् सारस्वत संकल्प के लिए आपको हार्दिक साधुवाद देता हूँ।

जैन समाज की समग्रता को अपने व्यक्तित्व की विराटता से प्रभावित करने वाले यशस्वी आचार्यों में आचार्यश्री का विशिष्ट स्थान है। उन्होंने विचार और आचार की एकरूपता को जीवन में प्रतिष्ठित करने की महती प्रेरणा प्रदान की है, स्वाध्याय के देवता को जगाकर ज्ञान की आराधना का मार्ग प्रशस्त किया है और आज के अर्थ प्रधान युग में अध्यात्म का अलख जगाते हुए धर्म के सही मर्म को उद्घोषित किया है। उनके सरल और साधु हृदय से निःसृत आशीर्वाद की अमृत लहरियों का परस पाकर सहस्रों मानस-कमल खिल चुके हैं। उनके आचार्य-पद की महान् ऐतिहासिक हीरक बेला में उनसे स्नेहाशीर्वाद पाने की विनम्र पात्रता मुझमें भी जगे, यही भावना है, मनोकामना है।

साभिवादन एवं साभार!

—कार्यक्रम अधिकारी, आकाशवाणी राष्ट्रीय प्रसारण सेवा
जवाहरलाल नेहरू स्टेडियम, नई दिल्ली-११० ००३

धारावाही लेखमाला [४]
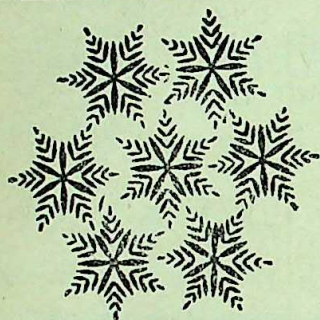
जैन संस्कृति में नारी का स्थान

□ श्री रमेश मुनि शास्त्री
[उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी के विद्वान् शिष्य]

भगवान ऋषभ देव के पश्चात् द्वितीय तीर्थंकर श्री अजितनाथ हुए। यह उल्लेखनीय ऐतिहासिक तथ्य है कि इन दोनों तीर्थंकरों के अवतरण के मध्य एक सुदीर्घकालीन अन्तराल रहा। द्वितीय तीर्थंकर अजितनाथ की माता का नाम विजया था और पिता का नाम जितशत्रु था। जब से राजकुमार अजित का जीव महारानी विजया के गर्भ में आया तब से ही एक विशेष प्रभाव यह हुआ कि पिता राजा जितशत्रु को कोई पराजित नहीं कर सका। वह अजित ही बना रहा। अतः इस पुत्र का नामकरण अजित किया।[1] इनके शासनकाल में श्रमणियों की संख्या तीन लाख तीस हजार थी[2] और पाँच लाख पैंतालीस हजार श्राविकाओं की उत्कृष्ट सम्पदा थी।[3] तीर्थंकर अजितनाथ की प्रथम शिष्या फलगू (भग्गू) थी।[4]

भगवान अजितनाथ के निर्वाण के पश्चात् दीर्घ अन्तराल व्यतीत होने पर तृतीय तीर्थंकर भगवान संभवनाथ हुए। आपके जन्म समय में समूचे संसार में आनन्द-मंगल की लहर फैल गई। जब से प्रभु का जीव गर्भ में आया तब से प्रभूत मात्रा में साम्ब और मूंग आदि धान्य की उत्पत्ति हुई। चारों ओर से देश की भूमि धान्य से लहलहाने लगी। अतएव माता-पिता ने पुत्र का नाम संभवनाथ

१—भगवम्मि समुप्पण्णे ण केणई जिओ, जणाउ त्ति कलि ऊण अम्मापितीहिं अजिओत्ति णामं कयं।
—चउवन्न महापुरिस चरियं पृष्ठ-५१

२—क–प्रवचन सारोद्धार—१७, गाथा ३३५-३६
ख–सत्तरिसयद्धार—१३, गाथा २३५-२३६

३—क–समवायांग सूत्र
ख–प्रवचन सारोद्धार—२५, गाथा ३६८-७२
ग–सत्तरिसयद्धार—११५, गाथा २४३-२४६

४—प्रवचन सारोद्धार—गाथा ३०७-६

रखा।[1] इनके पिता का नाम राजा जितारि और माता का नाम सेनादेवी था।[2] इनके शासन-काल में साध्वियों की उत्कृष्ट सम्पदा तीन लाख छत्तीस हजार थी।[3] प्रथम शिष्या का नाम श्यामा था[4] और छः लाख छत्तीस हजार श्राविकाएँ थीं।[5]

भगवान संभवनाथ के बाद प्रभु अभिनन्दन चतुर्थ तीर्थंकर हुए। भगवान अभिनन्दन का ज्योतिर्मय जीवन इस तथ्य का एक सुदृढ़ प्रमाण है कि महतो-महीयान् कार्यों के लिए पूर्व भवों की संचित पुण्यों की पराकाष्ठा अनिवार्य हुआ करती है। जिससे भव्य जीव महात्मा और क्रमशः परमात्मा का उच्चतम-गौरव प्राप्त कर लेता है।

तीर्थंकर अभिनन्दन के पिता का नाम महाराज संवर था और माता का नाम महारानी सिद्धार्था। जब से प्रभु का जीव माता के गर्भ में आया तब से सर्वत्र प्रसन्नता छा गई और जन-जन के मन में आनन्द-मंगल की लहरें हिलोरे लेने लगीं। अपनी प्रजा का अतिशय हर्ष अर्थात् अभिनन्दन देखकर माता-पिता को नवजात पुत्र के नामकरण का आधार मिल गया और पुत्ररत्न को 'अभिनन्दन' नाम से पुकारा जाने लगा।[6] आपके शासनकाल में श्रमणियों की संख्या छः लाख तीस हजार थी।[7] प्रथम शिष्या का नाम 'अजिया' था[8] और श्राविकाओं की उत्कृष्ट सम्पदा पाँच लाख सत्ताईस हजार थी।[9]

चौबीस तीर्थंकरों के क्रम में भगवान सुमतिनाथ का पंचम स्थान है। आप के द्वारा तीर्थंकरत्व की उपलब्धि में उत्कृष्ट पुण्य का आधार भी विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

१—चउवन्न महापुरिस चरियं पृष्ठ ७०२
२—तिलोयपन्नति (गाथा ५२६ से ५४९) में सुसेना नाम दिया है।
३—क-प्रवचन सारोद्धार १७, गाथा ३३५-३९
ख-सत्तरिसयद्धार ११३, गाथा २३५-२३९
४—सत्तरिसयद्धार १०४, गाथा २१६-२१७
५—क-समवायांग
ख-सत्तरिसयद्धार ११५, गाथा २४३-२४६
६—भगवम्मि गब्भत्थ कुलं रज्जं णगरं अभिणंदइ त्ति तेण जणाणि।
जणएहिं वियारिऊण गुणनिष्फण्णं अभिणंदणो ति णामं कयं॥
—चउवन्न महापुरिस चरियं, पृष्ठ ७५
७—सत्तरिसयद्धार ११३, गाथा २३५-२३९
८—प्रवचनसारोद्धार गाथा ३०७-९
९—समवायांग सूत्र—

आप श्री के पिता का नाम मेघ और माता का नाम मंगलावती था। इनके नामकरण का भी एक रहस्य है। पुत्ररत्न के गर्भ में आने के पश्चात् महारानी मंगलावती का बुद्धि वैभव विकसित होता चला गया। रानी ने ऐसी-ऐसी जटिल समस्याओं को सुलझा दिया, जो विगत दीर्घकाल से विकट होती जा रहीं थीं, वह अपनी प्रत्युग्र-प्रतिभा से विचित्र-विचित्र समस्याओं की गुत्थियों को सुगमता से हल कर देतीं। यह बौद्धिक-विकास इस राजकुमार के अस्तित्व का प्रतिफल था। इसीलिये नवजात राजकुमार का नामकरण सुमतिनाथ किया गया।[१]

तीर्थंकर सुमतिनाथ के युग में पाँच लाख तीस हजार साध्वियां थीं।[२] प्रथम शिष्या का नाम 'कासवी' था।[३] श्राविकाओं की संख्या पाँच लाख सोलह हजार थीं।[४]

भगवान् पद्मप्रभ छठे तीर्थंकर हुए। तीर्थंकरत्व की विशिष्ट योग्यता अन्य तीर्थंकरों की तरह ही प्रभु पद्मप्रभ ने भी राजा अपराजित के भव में उपार्जित की।

आपके पिता का नाम महाराजा 'धर' और माता का नाम 'सुसीमा' था। जब अपराजित का जीव रानी के गर्भ में स्थित हुआ, महारानी को पद्म (कमल) की शय्या में सोने का दोहद उत्पन्न हुआ और नवजात पुत्ररत्न के शरीर की प्रभा कमल के समान थी, इसलिये इसका नामकरण पद्मप्रभ किया गया।[५] आपके

१—गब्भगते भट्टारए माताए दोण्हं सत्तवीसं छम्मासितो ववहारो छिण्णो एत्थं असोगवर पादवे एस मम पुत्तो महामती छिंदि-हिति, ताए जावत्ति भणिताओ, इतरि भणिति एवं होतु पुत्तमाता णेच्छतित्ति णातूणं, छिण्णो एतस्स गब्भतस्स गुणेणंति सुमति जातो!
—आवश्यक चूर्णि पूर्व भाग, पृष्ठ १०।

२—सत्तरिसयद्वार ११३, गाथा २३५-२३६।

३—प्रवचन सारोद्धार, गाथा ३०७-६।

४—समवायांग सूत्र

५—क—पद्मशय्या दोहदोऽस्मिन् यन्मातुर्गभगेऽभवत्।
पद्माभश्चेत्यमुं पद्मप्रभ इत्याह्वय त्पिता॥
—त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित ३/४/५१

ख—गब्भत्थे य भगवम्मि जणणीए पउमसयणीयम्मि दोहलो आसि त्तितेण भगवओ जहत्थमेव पउमप्पभो त्ति णामं कयं।
—चउप्पन महापुरिस चरियं, पृष्ठ-८३

म—पद्मवर्णं पद्मचिन्हं, सा देवी सुषुवे सुतं॥
—त्रिषष्टि शलाका........३/४/३८

धर्म-परिवार में चार लाख बीस हजार साध्वियों की संख्या रही ।[१] प्रथम शिष्या का नाम 'रति' था[२] तथा पांच लाख पाँच हजार 'श्राविकाएँ थीं ।[३]

भगवान पद्मप्रभु के पश्चात् दीर्घकाल—तीर्थंकर की विद्यमानता से शून्य रहा और तदनन्तर सातवें तीर्थंकर सुपार्श्वनाथ हुए। प्रभु ने साधु-साध्वी, श्रावक-श्राविका रूप चतुर्विध तीर्थ की स्थापना की और भव्य-जीवों के कल्याण का व्यापक रूप से अभियान चलाया। इनके पिता का नाम महाराजा प्रतिष्ठसेन और माता का नाम पृथ्वी था। गर्भ-काल में माता के पार्श्व-शोभन रहने के कारण पुत्ररत्न का नाम सुपार्श्वनाथ रखा गया ।[४] कुमार सुपार्श्वनाथ पूर्व-पुण्य राशि के साथ जन्मे थे । वे अत्यन्त ही तेजस्वी थे । इनके शासनकाल में साध्वियों की उत्कृष्ट सम्पदा चार लाख तीस हजार थी ।[५] प्रथम शिष्या का नाम 'सोमा' था[६] और चार लाख तिरानवे हजार श्राविकाएँ थीं ।[७]

तीर्थंकर की समुज्ज्वल-परम्परा में आठवां स्थान भगवान चन्द्रप्रभ स्वामी का है। उन्होंने सुदीर्घ अवधि तक केवल-ज्ञान की पर्याय में लक्ष-लक्ष भव्य-जीवों को मोक्ष-मार्ग की ओर उत्प्रेरित किया और वे उत्कृष्ट तप और उत्कृष्ट संयम की निर्दोष-साधना कर सिद्ध-बुद्ध और कर्म-मुक्त हुए ।

आपके पिता का नाम महाराजा महासेन और माता का नाम लक्ष्मणा था। माता ने गर्भ-काल में चौदह स्वप्नों का दर्शन किया जो तीर्थंकर के आगमन के सूचक थे । उसने प्रफुल्ल-चित्तता के साथ गर्भावधि पूर्ण की और आभायुक्त पुत्ररत्न को जन्म दिया। महाराजा ने जन्म महोत्सव के पश्चात् नामकरण के लिये मित्रजनों को एकत्र कर कहा—नवजात पुत्र की माता ने चन्द्रपान की अपनी इच्छा को पूरा किया था[८] और इस बालक के शरीर की प्रभा चन्द्रमा के

१—समवायांग सूत्र

२—सत्तरिसयद्धार ११३, गाथा २३५-२३६ ।

३—क-समवायांग सूत्र

ख-प्रवचन सारोद्धार २५, गाथा ३६८-३७२ ।

४—भगवम्मि य गब्भगए जणणी जाया सुपासत्ति तओ भगवओ सुपासत्तिणामं कयं ।

—चउवन्न महापुरिस चरियं, पृष्ठ ८६

५—प्रवचन सारोद्धार १७, गाथा ३३५-३६

६—समवायांग

७—सत्तरिसयद्धार ११५, गाथा २४३-२४६

८—गर्भस्थेऽस्मिन् मातुरासच्चिन्द्रपानाय दोहदः ।

चन्द्राभश्चैष इत्याह्वच्चन्द्रप्रभममुं पिता ॥

—त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित, ३/६/४६

समान शुभ और दीप्तिमान है, अतएव इसका नाम चन्द्रप्रभ रखा जाता है।[१] आपके शासनकाल में साध्वियों की संख्या तीन लाख अस्सी हजार थी।[२] प्रथम शिष्या का नाम सुमना था[३] और चार लाख इकरानवें हजार श्राविकाएँ थीं।[४]

भगवान चन्द्रप्रभ के परिनिर्वाण के पश्चात् भगवान सुविधिनाथ नौवें तीर्थंकर थे। इन्होंने पुष्कलावती विजय के भूपति महापद्म के भव में संसार से विरक्त होकर मुनि जगन्नन्द के पास दीक्षा ग्रहण की और तप-साधना की उच्चता के आधार पर तीर्थंकर नाम कर्म का उपार्जन किया। अन्त समय में अनशनपूर्वक काल कर वे वैजयन्त विमान में अहमिन्द्र रूप में उत्पन्न हुए। वैजयन्त-विमान से निकल कर महापद्म का जीव माता रामादेवी की कुक्षी में गर्भ रूप में समुत्पन्न हुआ। गर्भकाल पूर्ण कर माता नें पुत्ररत्न को जन्म दिया। माता रामादेवी, पिता सुग्रीव और नरेन्द्र-देवेन्द्रों ने जन्मोत्सव की खुशियां मनाई। पिता सुग्रीव ने सोचा—बालक जब तक गर्भ में—अवस्थित रहा, रानी रामादेवी सर्वविधि कुशल रही। अतः इस पुत्ररत्न का नाम सुविधिनाथ रखा जाय और गर्भकाल में माता को पुष्प का दोहद उत्पन्न हुआ था अतएव शिशु का नाम पुष्पदन्त भी रखा गया।[५] इस प्रकार सुविधिनाथ और पुष्पदन्त प्रभु के ये दो नाम विश्रुत हुए।

तीर्थंकर सुविधिनाथ के धर्म-परिवार में साध्वियों की उत्कृष्ट सम्पदा एक लाख बीस हजार थी।[६] प्रथम-शिष्या का नाम 'वारुणी' था[७] और चार लाख बहत्तर हजार श्राविकाएँ थीं।[८]

तीर्थंकर भगवान सुविधिनाथ के पश्चात् श्री शीतलनाथ स्वामी का जन्म

१—पिउणा य चंदप्पहसमाणो ति कालिऊण चंप्पयहो त्ति णामं कयं भगवओ।

—चउवन्न महापुरिसचरियं—८८

२—सत्तरिसयद्धार ११३, गाथा २३५-२३६।

३—प्रवचनसारोद्धार—गाथा ३०७-९।

४—समवायांग।

५— कुशला सर्वविधिषु गर्भस्थेऽस्मिन् जनन्यभूत्।
पुष्पदोहदतो दन्तोद्गमोऽस्यसमभूदिति ॥
सुविधिः पुष्पदत्तश्चेत्यभिधानद्वयं विभोः।
महोत्सवेन चक्राते, पितरौ दिवसे शुभे ॥

—त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित ३/७/४९-५०

६—प्रवचनसारोद्धार १७, गाथा ३३५-३९

७—सत्तरिसयद्धार १०४, गाथा २१६-२१७

८—समवायांग सूत्र

दसवें तीर्थंकर रूप में हुआ। भद्दिलपुर के महाराजा दृढ़रथ इनके पिता और नन्दादेवी इनकी माता थी। गर्भकाल के पूर्ण होने पर माता नन्दा ने सुखपूर्वक पुत्ररत्न को जन्म दिया। महाराजा ने अपार उत्साह के साथ जन्मोत्सव मनाया।

महाराजा दृढ़रथ भयंकर दाह-ज्वर से अत्यन्त ग्रस्त थे। विभिन्न उपचारों से भी रोग शान्त नहीं हुआ। पर गर्भकाल में नन्दादेवी के सुकोमल हस्त स्पर्श मात्र से वह दारुण-वेदना शान्त हो गई और उन्हें अपार शीतलता का अनुभव होने लगा। अतएव नवजात पुत्ररत्न का नाम शीतलनाथ रखा गया।[1]

आप के धर्म-संघ में साध्वियों की संख्या एक लाख छः थी।[2] प्रथम शिष्या का नाम 'सुलसा' था[3] और श्राविकाओं की उत्कृष्ट सम्पदा चार लाख अट्ठावन हजार थी।[4] [क्रमशः]

१—राज्ञः सन्तप्तमण्यंगं नन्दास्पर्शेन शीत्यभूत्।
गर्भस्थेऽस्मिन्निति तस्य, नाम 'शीतल' इत्यभूत्॥
—त्रिषष्टि शलाका.......३/८/४७

२—प्रवचनसारोद्धार १७, गाथा ३३५-३३९

३—समवायांग

४—सत्तरिसयद्वार ११५, गाथा २४३-२४६

प्रेरक प्रसंग

सच्ची सहनशीलता

□ राज सौगानी

पूर्वभव में महात्मा बुद्ध जंगली भैंसे की पर्याय में थे। स्वभावतः जंगली भैंसा बड़ा भयंकर और क्रूर होता है, किन्तु महात्मा बुद्ध इस पर्याय में भी बहुत शान्त रहते। उनके शांत रहने के कारण एक बन्दर उन्हें बहुत परेशान किया करता था। कभी सींगों पर लटक जाता, कभी पूंछ खींचता और कभी पीठ पर उछलकूद करता।

एक दिन देवताओं ने उनसे कहा—"यह बन्दर आपको बहुत परेशान करता है, आप इसको सबक क्यों नहीं सिखा देते?"

भैंसे ने कहा—"लोग अपने से शक्तिशाली के अपराध तो मजबूर होकर सहन कर लेते हैं, किन्तु खूबी तो अपने से निर्बल का अपराध सहन करने में ही है। अतः मैं उसी का अभ्यास कर रहा हूँ।"

—स्टेशन रोड, भवानीमंडी-३२६५०२
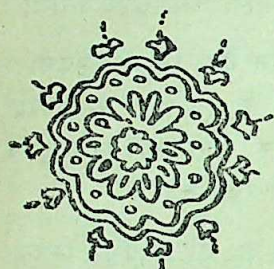
सम्यक् चारित्र●

□ प्रस्तोता श्री पी. एम. चौरड़िया

[१]

(१) **प्रश्न**—चारित्र क्या है ?

उत्तर—(१) पापाचरण से अलग रहना चारित्र है।

(२) आत्मा का अपना पुरुषार्थ, आत्मा अपना पराक्रम और आत्मा की अपनी दीर्घ शक्ति ही चारित्र है।

(३) आत्मा का निग्रह करना, मन, वचन और काया का नियमन करना और इन्द्रियों को अधिकार में रखना चारित्र है।

(४) 'सर्व सावद्य योगनां त्यागश्चरित्र क्रिष्यते' अर्थात् सभी पाप वृत्तियों के त्याग का नाम चारित्र है।

(२) **प्रश्न**—भाव चारित्र का अर्थ क्या है ?

उत्तर—स्वभाव में रमण करना, स्वभाव में लीन रहना ही भाव चारित्र है।

(३) **प्रश्न**—सदाचार किसे कहते हैं ?

उत्तर—संयम और चारित्र का दूसरा नाम ही सदाचार है।

[२]

(१) **प्रश्न**—आगार चारित्र और अनगार चारित्र में क्या अन्तर है ?

उत्तर—आगार चारित्र कुछ आगार खुले रखकर ग्रहण किया जाता है। यह चारित्र परिवार की जिम्मेदारी निभाते हुए भी श्रावक एवं श्राविकाएँ ग्रहण

●श्री एस. एस. जैन युवक संघ, मद्रास द्वारा आयोजित कार्यक्रम जिसमें स्वाध्याय संघ, युवक संघ एवं बालिका मंडल ने भाग लिया। —सम्पादक

कर सकते हैं। दूसरी ओर अनगार चारित्र साधु-साध्वी ही अंगीकार कर सकते हैं तथा उनके व्रतों में किसी प्रकार की छूट नहीं रहती। वे तीन करण एवं तीन योग से इस चारित्र को अंगीकार करते हैं तथा सारी उम्र उसका पालन करते हैं।

(२) **प्रश्न**—'सर्व विरति-चारित्र' का अधिकारी कौन हो सकता है ?

उत्तर—जो आत्मा संसार की असारता को भली-भांति समझ चुका हो, भव-भ्रमण से अपने आपको दुःखी समझता हो और विनयादि गुणों से युक्त हो, उसे ही सर्व विरति चारित्र के योग्य गिनना चाहिए।

(३) **प्रश्न**—अनगार चारित्र से १३ भेदों को किन तीन मुख्य भागों में विभाजित किया जा सकता है ?

उत्तर—(१) पाँच महाव्रत, (२) पाँच समिति, (३) तीन गुप्ति।

[३]

(१) **प्रश्न**—चर्चा ही चर्चा करे, धारण करे न कोय।
धर्म बिचारा क्या करे, धारे ही सुख होय।।

उपर्युक्त दोहे में कवि ने क्या सन्देश दिया है ?

उत्तर—विश्व में बहुत से ऐसे मानव हैं जो बड़ी-बड़ी बातें करते हैं, डींगें हाँकते हैं लेकिन अपने खुद के जीवन में उन्हें धारण नहीं करते, इसलिये वे ज्ञानी होते हुए भी दुःखी ही रहते हैं। कवि यह सन्देश दे रहा है कि जो व्यक्ति धर्म को जीवन में धारण करता है, वही वास्तव में सुखी बनता है।

(२) **प्रश्न**—गिरि से गिरकर जो गिरे, गिरे एक ही बार।
चारित्र गिरि से जो गिरे, बिगड़े जन्म हजार।।

उपर्युक्त दोहे का अर्थ बताइये।

उत्तर—यदि कोई पहाड़ से गिरता है तो उसको जो चोट लगती है, उसे केवल उसी जन्म में सहन करना पड़ता है लेकिन जो चारित्र रूपी पहाड़ से गिर जाता है, उसको हजारों जन्मों तक उसका फल भुगतना पड़ता है।

(३) **प्रश्न**—जीवन में उतरे बिना, धर्म न सम्यक् होय।
काया, वाणी, चित्त के, कर्म न निर्मल होय।।

उपर्युक्त दोहे में कवि ने आचरण के सम्बन्ध में क्या कहा है ?

उत्तर—जब तक धर्म जीवन के धरातल में नहीं आता, तब तक वह

मिथ्या है, सच्चा नहीं है। जीवन में धर्म आने पर ही मन, वचन और काया की शुभ प्रवृत्ति होती है और कर्म हल्के होने से आत्मा निर्मल होती है।

[४]

(१) **प्रश्न**—श्रावक के बारह व्रतों का अणुव्रत, गुणव्रत और शिक्षाव्रत के आधार से किस प्रकार वर्गीकरण किया गया है ?

उत्तर—श्रावक के बारह व्रतों में से पहले पाँच को अणुव्रत कहा जाता है, कारण कि वे महाव्रत की अपेक्षा से अणु अर्थात् बहुत छोटे हैं। बाद के तीन गुणव्रत कहलाते हैं, जो कि चारित्र के गुणों की पुष्टि करने वाले हैं और अन्तिम चार को शिक्षाव्रत कहा जाता है, ये आत्मा को साधु जीवन की शिक्षा देते हैं।

(२) **प्रश्न**—तीसरा स्थूल अदत्तादान-विरमण व्रत किस प्रकार लिया जाता है ?

उत्तर—यह व्रत निम्न प्रकार से लिया जाता है :—

(१) किसी के घर-दुकान में बाधा नहीं डालना।

(२) गाँठ खोलकर या पेटी-पिटारे को खोलकर किसी की चीज नहीं निकालना।

(३) डाका नहीं डालना।

(४) ताला खोलकर किसी की चीज नहीं निकालना।

(५) पराई चीज को अपनी नहीं बना लेना।

चोरी का माल नहीं रखना। चोरी को उत्तेजना देने वाला कोई काम नहीं करना। चोरी का माल रखना या चोर को उत्तेजन देना भी चोरी है, इसलिए इस व्रत को लेने वाले को उससे बचना चाहिए।

(३) **प्रश्न**—अनर्थदंड-विरमण व्रत किसे कहते हैं ?

उत्तर—विशिष्ट प्रयोजन या अनिवार्य कारण बिना जो हिंसा की जाये, वह अनर्थदंड कहलाती है। उससे बचने का व्रत अनर्थदंड-विरमण व्रत है।

[५]

(१) **प्रश्न**—"मन भर ज्ञान से एक सेर क्रिया अधिक है"।

उपर्युक्त विचार किसने व्यक्त किए हैं ?

उत्तर—मनु ने।

(२) **प्रश्न**—"The flighty purpose is never overtook unless the deed go with it".

अर्थ—मन में जो भव्य विचार या शुभ संकल्प उत्पन्न हो, उसे तुरन्त कार्यरूप में परिणत कर डालो, अन्यथा वह जिस तेजी से मन में आया है वैसे ही एकाएक गायब हो जायेगा।

उपर्युक्त उत्तम विचार किसने व्यक्त किये ?

उत्तर—शेक्सपियर ने।

(३) **प्रश्न**—"जब तक यह शरीर स्वस्थ है, जब तक वृद्धावस्था दूर है, जब तक इन्द्रियों की शक्ति नष्ट नहीं हुई है, जब तक आयु का क्षय नहीं हुआ है, तभी तक समझदार मनुष्य को आत्म-कल्याण के लिये महान् प्रयत्न कर लेना चाहिये, अन्यथा घर में आग लग जाने पर कुआ खोदने के लिये परिश्रम करने से क्या लाभ ?"

उपर्युक्त उत्तम विचार किसने व्यक्त किये ?

उत्तर—श्री भर्तृहरि ने।

[६]

(१) **प्रश्न**—छंदोपस्थापनीय चारित्र किन तीर्थंकरों के शासन में होता है तथा वर्तमान में इसका प्रचलित नाम क्या है ?

उत्तर—(१) प्रथम एवं अन्तिम तीर्थंकरों के शासन में।
(२) बड़ी दीक्षा।

(२) **प्रश्न**—यथाख्यात चारित्र किस गुणस्थान में होता है ?

उत्तर—यह ग्यारहवें गुणास्थान से चौदहवें गुणस्थान तक होता है।

(३) **प्रश्न**—सूक्ष्म सम्प्राय चारित्र किन्हें होता है ?

उत्तर—जिन अणगारों में किंचित् (नाम मात्र) संज्वलन का लोभ शेष हो, वे इस चारित्र को उपलब्ध होते हैं।

[७]

(१) **प्रश्न**—"ज्ञानस्य फलं विरति" इसका अर्थ बताइये ?

उत्तर—ज्ञान का फल त्याग है।

(२) **प्रश्न**—'चर्यते इति चारित्रम्'।

उपर्युक्त शब्दों का क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—जो चर्यमाण हो—वही चारित्र है। आचरण ही चारित्र है।

(३) **प्रश्न**—'आचार हीनं न पुनन्ति वेदा:'।

'मनुस्मृति' से लिए गए उपर्युक्त वाक्य का क्या अर्थ है ?

उत्तर—चरित्रहीन व्यक्ति चाहे जितने वेद पढ़ा हुआ हो, वे वेद उसे पवित्र नहीं कर सकते।

[८]

(१) **प्रश्न**—अष्ट-प्रवचन-माता किसे कहते हैं ?

उत्तर—शास्त्रों में पाँच समिति और तीन गुप्ति को अष्ट-प्रवचन-माता कहा गया है। इसका कारण यह है कि ये महाव्रत स्वरूप प्रवचन का पालन तथा रक्षण करने में माता जैसा काम करते हैं।

(२) **प्रश्न**—समिति तथा गुप्ति का अर्थ क्या है ?

उत्तर—समिति का अर्थ है सम्यक् क्रिया। गुप्ति का अर्थ है गोपन क्रिया अर्थात् निग्रह की क्रिया।

(३) **प्रश्न**—भाषा-समिति का अर्थ बताइये। इसमें कौनसे आठ नियमों का पालन करना होता है ?

उत्तर—भाषा-समिति का अर्थ है, साधु-पुरुष खूब सावधानी से बोलें। उसमें निम्न लिखे आठ नियमों का पालन करना होता है—

(१) क्रोध से नहीं बोलना।
(२) अभिमानपूर्वक नहीं बोलना।
(३) कपटपूर्वक नहीं बोलना।
(४) लोभ से नहीं बोलना।
(५) हास्य से नहीं बोलना।
(६) भय से नहीं बोलना।
(७) वाक्चातुरी से नहीं बोलना।
(८) विकथा नहीं करना।

साधु के लिए यह भी स्पष्ट आज्ञा है कि वह अति कठोर भाषा का प्रयोग न करे। किसी को बुलाना हो तो महानुभाव, महाशय, देवानुप्रिय, पुण्यवान आदि मधुर शब्दों का प्रयोग करे।

[९]

(१) **प्रश्न**— ।। **प्यारे त्यागी बनो** ।।

(तर्ज—तुमको लाखों प्रणाम..................)

शिव सुख पाना हो, तो प्यारे त्यागी बनो..............।

त्याग बिना कोई मोक्ष न पावे, त्याग किया पातक रुक जावे ।
पद निरंजन पाना हो, तो त्यागी बनो ।

त्यागी को सुर-नर नमते हैं, धरते चरण विघ्न टलते हैं,
गर्भ बीच नहीं आना हो, तो त्यागी बनो ।

उपर्युक्त स्तवन किसने लिखा ?

उत्तर—श्री चौथमलजी म. सा. ने ।

(२) **प्रश्न**—

आगे जाणो चेतनिया, साथे खरची ले लीजो ।
खरची लिया पहला ही, मनड़ो बस में कर लीजो ।।टेर।।

साथे चाले धर्म यां से, प्रीति कर लीजो,
शुभ कर्म कमाई चेतन, थैली भर लीजो । आगे.......

आतम शुद्धि रे खातिर थें तो, तपस्या कर लीजो ।
थें तो क्षमा करीने, माया मद ने हर लीजो । आगे.......

उपर्युक्त स्तवन किसने रचा !

उत्तर—श्री नाथू मुनि ने ।

(३) **प्रश्न**— ।। **आतमो में राचो** ।।

राचो-राचो-राचो निज आतमा ने राचो रे,
भूठी काया में कांई राचणो ।
राचो-राचो-राचो निज भावना में राचो रे,
भूठी काया में काँई राचणो ।
टांच जो सेवे तो पत्थर टांचणौ में सार है,
रैती रें ढिगला रो कांई टांचणो ।
बांध्योड़ी होवे तो डोरी खांचणौ में सार है,
टूट्योड़ी डोरी रो कांई खांचणो ।
हीरा-पन्ना हाथ आया, छांटणौ में सार है,
कचरा रै टुकड़ां रो कांई छांटणो ।

उपर्युक्त गीतिका के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—श्री गणेश मुनि ।

] १०]

(१) **प्रश्न**—

If wealth is lost, nothing is lost,
If health is lost, something is lost,
If character is lost, every thing is lost.

ऐसा क्यों कहा गया है ?

उत्तर—अगर धन खोया, तो कुछ भी नहीं खोया, स्वास्थ्य खोया तो कुछ खोया, किन्तु चारित्र खोया तो सब कुछ खो दिया, ऐसा इसलिए कहा गया है कि खोया हुआ धन तो कठोर परिश्रम से प्राप्त किया जा सकता है, विनष्ट स्वास्थ्य भी औषध एवं पथ्य आदि से पुनः प्राप्त हो सकता है किन्तु चरित्रभ्रष्ट व्यक्ति को पुनः चरित्र प्राप्त करना असम्भव नहीं तो अति कठिन है ।

(२) **प्रश्न**—"तुम्हारी संस्कृति दर्जी सीता है, जबकि हमारी संस्कृति का निर्माण चारित्र करता है ।"

उपर्युक्त विचार किसने व्यक्त किये ?

उत्तर—स्वामी विवेकानन्द ने ।

(३) **प्रश्न**—यदि चारित्र अन्तर में है, तो प्रकट क्यों नहीं होता ?

उत्तर—मोह के आवरण के कारण चारित्र प्रकट नहीं होता । सूर्य अत्यन्त प्रकाशमान है, पर बादल आ जाने से वह छिप जाता है ।

[११]

(१) **प्रश्न**—श्रावक के ऐसे कौन से धन्धे हैं जिन्हें करना वर्जित कहा गया है ?

उत्तर—

(१) **अंगार कर्म**—ऐसा धंधा जिसमें अग्नि का विशेष प्रयोजन पड़ता है ।
(२) **वन कर्म**—वनस्पतियों को काटकर बेचने का धंधा ।
(३) **शकट कर्म**—गाड़ी बनाकर बेचने का धंधा ।

(४) **भाटक कर्म**—पशुओं वगैरह को भाड़े पर देने का धंधा ।

(५) **स्फोटक कर्म**—पृथ्वी तथा पत्थर को फोड़ने का धंधा ।

(६) **दंत वाणिज्य**—हाथी दाँत वगैरह का व्यापार ।

(७) **लाक्षा वाणिज्य**—लाख वगैरह का धंधा ।

(८) **रस वाणिज्य**—दूध, दही, घी, तेल वगैरह का व्यापार ।

(९) **केश वाणिज्य**—मनुष्य तथा पशुओं का व्यापार ।

(१०) **विष वाणिज्य**—जहर और जहरीली चीजों का व्यापार ।

(११) **यंत्र पीलन कर्म** – अनाज, बीज तथा फलफूल पेल कर देने का काम ।

(१२) **लांछन कर्म** – पशुओं के अंगों को छेदने, दाग देने वगैरह का काम ।

(१३) **दवदान कर्म** – वन, खेत वगैरह में आग लगाने का काम ।

(१४) **जल शोषण कर्म**—सरोवर, तालाब वगैरह सुखाने का काम ।

(१५) **असती पोषण**—कुलटा या व्यभिचारिणी स्त्रियों का पोषण करने का काम, हिंसक प्राणियों को पाल कर इन्हें बेचने का काम ।

(२) **प्रश्न**—श्रेष्ठ श्रावक को शास्त्रों में दर्पण की उपमा क्यों दी गई है ?

उत्तर—दर्पण अपने सामने आये हुए दृश्य को प्रतिबिम्बित तो करता है पर उसे ग्रहण नहीं करता । दर्पण विकार ग्रस्त नहीं होता । इसी प्रकार श्रावक समाज में आदर्श रूप होता है । वह वीतराग वचनों को जैसा सुनता है, समझता है, उसी रूप में दूसरों को प्रेरित करता है । वह समाज को एकता के सूत्र में बांधता है तथा उसे निर्मल और स्वच्छ बनाता है ।

(३) **प्रश्न** – श्रावक पंचम-गुणस्थानवर्ती कब हो जाता है ?

उत्तर—देशचारित्र धारण करने पर ।

[१२]

(१) **प्रश्न**—कौन से व्रत का पालन कर संगम का जीव अगले भव में शालिभद्र बना एवं अपूर्व ऋद्धि-सिद्धि प्राप्त की ?

उत्तर—बारहवाँ अतिथि—संविभाग–व्रत । भक्तिपूर्वक आहार, वस्त्र, पात्र आदि का साधुओं को दान करना अतिथि-संविभाग व्रत है ।

(२) **प्रश्न**—"पर उपदेश कुशल बहुतेरे,
जे आचरहिं ते नर न घनेरे ।"

उपर्युक्त चौपाई का अर्थ बताइये।

उत्तर—दूसरों को उपदेश देने वाले तो संसार में बहुत मिल सकते हैं, किन्तु उस उपदेश के अनुसार चलने वाले थोड़े ही मिलेंगे।

(३) **प्रश्न**—१८ पापस्थानों में कितने पाप चारित्र से रुकते हैं ?

उत्तर—मिथ्या दर्शन शल्य को छोड़कर बाकी के १७ पाप चारित्र से रुकते हैं।

—89, Audiappa Naicken Street, 1st Floor
Sowcarpet, MADRAS-600 079

१०१ रुपये में १०८ पुस्तकें प्राप्त करें

अ. भा. जैन विद्वत् परिषद् द्वारा प्रारम्भ की गई "ज्ञान प्रसार पुस्तक-माला" के अन्तर्गत अब तक ५७ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। कुल १०८ पुस्तकें प्रकाशित करने की योजना है। प्रत्येक पुस्तक का फुटकर मूल्य दो रुपया है पर जो व्यक्ति या संस्था १०१ रुपये भेजकर ट्रैक्ट साहित्य सदस्य बन जायेंगे, उन्हें १०८ पुस्तकें निःशुल्क प्रदान की जायेंगी।

तपस्या, विवाह, जयन्ती, पुण्यतिथि पर प्रभावना के रूप में वितरित करने के लिए १०० या अधिक पुस्तकें खरीदने पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायेगा।

कृपया १०१ रुपये मनिआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा 'अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद्' के नाम सी-२३५ ए, तिलक नगर, जयपुर-३०२ ००४ के पते पर भेजें।

—**डॉ. नरेन्द्र भानावत**
सम्पादक-संयोजक

बाल कथामृत* (६८)

☐ १८ वर्ष तक के बच्चे इस कहानी को पढ़कर प्रश्नों के उत्तर १५ दिन में "जिनवाणी" कार्यालय को भेजें। उत्तरदाताओं के नाम पत्रिका में छापे जायेंगे। प्रथम, द्वितीय व तृतीय आने वालों को क्रमशः २५, २० व १५ रुपयों की उपहार राशि भेजी जायेगी। श्री राजेन्द्रप्रसादजी जैन, एडवोकेट भवानीमंडी की ओर से उनकी माताजी की पुण्य स्मृति में ११ रुपये का 'श्रीमती बसन्तबाई स्मृति पुरस्कार' चतुर्थ आने वाले को दिया जायेगा। प्रोत्साहन पुरस्कार स्वरूप १० बच्चों तक को "जिनवाणी" का सम्बद्ध अंक निःशुल्क भेजा जायेगा।

—सम्पादक
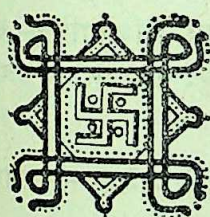
दो-बून्दें

☐ श्री ऋषभ जैन

हमेशा बर्फ से ढकी रहने वाली पहाड़ी चोटी की ढलान पर एक निर्झर अपना खुशी भरा झर-झर राग अलापता हुआ बहता रहता था। उसका पानी इन्द्र धनुष के सभी रंगों की छटा दिखाता हुआ तेजी से नीचे घाटी में जाता और नदी में जा मिलता।

एक बार इस निर्झर से दो बून्दें नदी में जा मिलीं। इनमें से एक बून्द आलसी तथा दूसरी मेहनती थी। आलसी बून्द यह नहीं समझ पा रही थी कि लहर उन्हें कहाँ बहाये लिये जा रही है और किस कारण पत्थरों से टकरा रही है। मेहनती बून्द अच्छी तरह से समझती थी कि उन्हें पहले से नियत किया हुआ अपना जो कर्तव्य निभाना है, उसे समझने के लिए बहुत कुछ सहन करना होगा।

"हम अपने आराम देह झरने से किसलिए अलग हुई?" आलसी बून्द ने ठिनकते हुए कहा।

* श्री राजीव भानावत द्वारा सम्पादित-परीक्षित स्तम्भ।

"अगर हम घाटी में नहीं पहुँचेगी तो लोग और पशु प्यास से मर जायेंगे तथा पेड़ और फूल-पौधे सूखकर मुरझा जायेंगे।" मेहनती बून्द ने जवाब दिया।

काहिल बून्द बुरा मानती हुई गिड़गिड़ायी :

"अगर इस वक्त खुद मेरी हालत इतनी बुरी हो रही है तो मुझे क्या लेना है लोगों के दु:ख-दर्दों से।"

"दूसरों को खुशी देने में ही हमारी खुशी है।" मेहनती बून्द ने उसे समझाया।

अरे! यह क्या हुआ? दोनों बून्दें एकाएक एक बुढ़िया की केतली में पहुँच गयीं जिसने नदी में से पानी भरा था। आलसी बून्द ने राहत की सांस ली।

"ओह! आखिर तो पानी के इन भयानक भंवर-चक्करों से जान बची......।"

किन्तु इसी समय पानी चूल्हे पर गर्म होने लगा। वह अधिकाधिक गर्म होता जाता था। मेहनती बून्द ने यह देखकर कि आलसी बून्द परेशानी से इधर-उधर देख रही है, उससे कहा—

"तुम ठिनकना नहीं! अगर बुढ़िया गर्म चाय नहीं पीयेगी तो उसकी प्यास कैसे बुझेगी?"

आलसी बून्द चिल्ला उठी—

"मुझे क्या लेना देना है बुढ़िया की कठिनाइयों से, मैं यह नहीं........।"

इसी क्षण पानी बहुत ज़ोर से उबलने लगा और हवा के बुलबुले ऊपर उठने लगे। पानी के इस तरह शोर मचाने और बुदबुदाने से दोनों बून्दों की आँखों के सामने अन्धेरा छा गया और वे एक दूसरे से अलग हो गईं।

मेहनती बून्द भाप बनकर केतली से बाहर चली गई और बड़े चैन से आसमान की नीलिमा में ऊपर जाने लगी।

"जरा रुक जाओ, मुझे भी अपने साथ ले चलो।" पीछे से आलसी बून्द की रुआंसी-सी आवाज सुनाई दी।

नीचे बहुत दूरी पर गाँवों, नगरों, नदियों और पर्वतों की झलक मिल रही थी। खेतों में खूब जोर-शोर से काम हो रहा था, किसान फसल बटोर रहे थे। आलसी बून्द खुश होती हुई मन ही मन सोच रही थी—"मैं तो बड़े मजे से

आकाश में तैरती जा रही हूँ ।" लेकिन दिन ज्यादा ठण्डे होते जा रहे थे । अचानक जोर का पाला पड़ा और उसने बून्दों को हिमकणों में बदल दिया । बड़ी सहजता से चक्कर काटती हुई ये दोनों बून्दें, जो अब हिमकण बन गई थीं, धरती की ओर उड़ती आ रही थीं और इसी वक्त एक छोटे से गाँव के नजदीक पहुँच कर और चूल्हे के करीब बैठकर पाँव सेंकती हुई बुढ़िया को देखकर उसका पारा और भी चढ़ गया ।

"तुमने खूब तंग किया है, अब मैं तुमसे बदला लूंगी ।" आलसी बून्द ने चिल्लाकर कहा । "अभी मैं तुम्हारी आग बुझा दूंगी ।"

पूरी तरह से अपनी सुधबुध भूलकर वह दहकते चूल्हे में जा गिरी, लेकिन अचानक भाप बनकर फिर आकाश में उड़ गई ।

मगर मेहनती बून्द अन्य बून्दों के साथ मिलकर जुते हुए खेत में जा गिरी ताकि अगली फसल के लिए जमीन को नम कर दे । मेहनती बून्द खेत में गिरने से पहले यह सोच रही थी कि शायद हमारी अगली मुलाकात तक आलसी बून्द यह समझ जायेगी कि प्रकृति द्वारा पानी के सभी रूप परिवर्तन का एक ही उद्देश्य है कि उनसे लोगों को लाभ हो, सभी प्राणियों को सुख और खुशी मिले ।"

—द्वारा, श्री दानमल जैन
७०६, महावीर नगर, टोंक रोड, जयपुर-१५

अभ्यास के लिए प्रश्न

उपर्युक्त कहानी को पढ़कर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

१. आलसी बून्द क्या समझ नहीं पा रही थी ?
२. 'दूसरों को खुशी देने में ही हमारी खुशी है ।' यदि मेहनती बून्द के स्थान पर आप होते तो क्या सोचते ?
३. आलसी और मेहनती बून्द में अन्तर स्पष्ट कीजिए ।
४. आलसी बून्द उत्तेजित क्यों हो उठी ?
५. 'प्रकृति द्वारा पानी के सभी रूप परिवर्तन का एक ही उद्देश्य है ।' इस कथन से क्या तात्पर्य है ?
६. मेहनत करने से होने वाले लाभ अथवा आलस्य से होने वाली हानियाँ पाँच पंक्तियों में लिखिए ।

७. आलसी बून्द मन ही मन क्या सोच रही थी ?

८. आप अपने जीवन की किसी ऐसी घटना का उल्लेख कीजिए जिससे स्पष्ट हो कि मेहनत का परिणाम मीठा होता है।

'जिनवाणी' के मार्च, १९८९ के अंक में प्रकाशित आचार्य श्री आनन्द ऋषिजी म. सा. की कहानी **'जीव के साथी'** (९६) के उत्तर जिन बाल पाठकों से प्राप्त हुए हैं, उन सभी को बधाई।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं के नाम

प्रथम—सुश्री अनिता श्रीश्रीमाल, बिड़ला महाविद्यालय, **भवानीमंडी**

द्वितीय—श्री शान्तिचन्द लोढ़ा, द्वारा श्री पारसचन्दजी लोढ़ा, खेरादियों का बास, साथीन की हवेली, **जोधपुर–३४२ ००१**

तृतीय—श्री महावीर जैन 'महान', द्वारा श्री रतनलालजी जैन, पो० **भदेसर**, जि० चित्तौड़गढ़ (राज०)

चतुर्थ—श्री गुलाब चौपड़ा, द्वारा श्री रामूलालजी सोहनराजजी बुरड़, बाबू राजेन्द्र मार्ग, मसुरिया, **जोधपुर** (राज०)

प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त उत्तरदाता

जिन्हें मई, १९८९ की **'जिनवाणी'** उपहार स्वरूप भेजी जा रही है—

१. सुश्री अंजु कर्णावट, द्वारा श्री अजीतराजजी कर्णावट, ४४८ रोड १-सी, सरदारपुरा, **जोधपुर** (राज०) ३४२ ००३

२. सुश्री कमला बोरदिया, अरिहन्त मण्डल, **रायपुर** (जिला–भीलवाड़ा) राज०

३. सुश्री दीप्ति जैन, द्वारा श्री बाबूलालजी जैन, बैंक ऑफ बड़ौदा के सामने, मनीष साड़ी सेण्टर, बजरिया, **सवाईमाधोपुर**

४. सुश्री सावित्री जैन, द्वारा श्री शान्ताप्रसादजी जैन, प्लाट नं. १२१, इन्द्रा कॉलोनी, मानटाउन, बजरिया, **सवाईमाधोपुर**

५. श्री किरणकुमार, द्वारा दुर्गा प्रिन्टिंग प्रेस, सब्जी मार्केट, **भवानीमंडी** (राज०)

श्री महावीर जैन धार्मिक पाठशाला, बजरिया, सवाईमाधोपुर से बीना जैन, रेखा जैन, रजनी जैन, पिंकी जैन, ममता जैन, विनीता जैन, दीपलता जैन,

सुमनलता जैन, राजेश जैन, विमल जैन, मुकेश जैन, नरेन्द्र जैन, **भवानीमंडी** से मुक्ता जैन, शिखा जैन, मनीषा जैन, मंगलसिंह, सपना जैन, विपिन श्रीश्रीमाल, हरीशकुमार अम्बोदिया, इन्द्रा कुमारी, गुरुमीतसिंह, तेजेन्द्र पाल, अल्पना अरोड़ा, शकुन्तला जैन, ममता जैन, सन्जू जैन, अरुण जैन, मनीष जैन, अनिल जैन, आशीष जैन, अमित जैन, **बम्बई** से कामिनी कुमारी जैन, **सूरवाल** से महावीरप्रसाद जैन, **नागौर** से नवरत्नमल बोथरा, विमलकुमार जैन, सुरेशकुमार जैन, **पीपाड़ शहर** से राजुल लूणावत, शोभा लूणावत, राजेश लूणावत, **भीलवाड़ा** से मीना कावड़िया, **बजरिया, सवाईमाधोपुर** से गौतमचन्द जैन, सतीश जैन, मनोजकुमार जैन 'रोहिल्या', मनोज जैन, **चित्तौड़गढ़** से दिनेशकुमार जैन, **सरदारशहर** से महेन्द्रकुमार श्यामसुखा, **भरतपुर** से बबली जैन, **भादसोड़ा** से मुकेश सांखला, **मेड़ता शहर** से दिनेश कोठारी, **मद्रास** से चंदनबाला कांकरिया, **जोधपुर** से मनीष कर्णाविट, विक्रांत कर्णावित, प्रशांत मेहता, निशांत मेहता, **प्रतापगढ़** से दिनेशकुमार भैरविया, **जामनेर** से दिनेशकुमार, **भदेसर** से विमल हिंगड़, **लोलावास** से पुखराज आबड़, **ऊटी** से धीरन, एस. महता, **कोसाना** से लालसिंह चांदावत, श्री जैन रत्न जवाहरलाल बाफना कन्या पाठशाला, **भोपालगढ़** से सविता चौरड़िया, मन्जुलता छाजेड़, प्रेमलता जैन, **वायपुर** से योगेशकुमार संकलेचा, शेषमल संचेती डाँवर, उत्तम सूर्या।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं द्वारा उल्लेखित ऐसे घटना-प्रसंग जिसमें धन का उपयोग दूसरों की भलाई के लिये किया गया हो—

[१]

दिल्ली में एक भद्र पुरुष रहते थे। उनका नाम था केदारनाथ। १६१० ई० में उनके आखिरी पुत्र का देहांत हो गया। पुत्र-वियोग ने उन्हें तोड़ दिया। इस पीड़ा को वे हिम्मत कर पी गये पर उनके पिता श्री रामजसराय को यह पीड़ा साल रही थी—अब क्या होगा इस घर, परिवार का। एक तरफ पुत्र वियोग दूसरी ओर पिताजी की चिन्ता, इसी असमंजस की हालत में लाला केदारनाथ को रोशनी की एक चिराग मिली। उन्होंने अपनी सारी सम्पत्ति विद्या दान में लगा दिल्ली में एक कॉलेज और पाँच हायर सैकन्ड्री स्कूल की स्थापना कर दी। उन्होंने अपने पिता रामजसराय के नाम पर रामजस कॉलेज सोसायटी की स्थापना की जिसके अन्तर्गत लड़के-लड़कियों के कई स्कूल, कॉलेज चल रहे हैं

ग्रौर इनके संचालन के लिये करोड़ों रुपयों का फंड है । इन सरस्वती मंदिरों में शिक्षा पा कई लड़के-लड़कियाँ ग्राज बड़े-बड़े पदों पर हैं ।

—ग्रनिता श्रीश्रीमाल, भवानीमंडी

[२]

यह घटना उस समय की है जब मैं ७वीं कक्षा में ग्रध्ययनरत था । मेरा एक सहपाठी था । वह बड़ा मेहनती था एवं कक्षा में प्रथम ग्राता था । पढ़ाई में उसकी रुचि बहुत थी लेकिन उसकी ग्रार्थिक स्थिति ठीक नहीं थी । उसके पिताजी जब वह ५ वर्ष का था, तभी गुजर चुके थे । उसकी माँ कुछ न कुछ काम करके गुजारा करती थी । एक दिन वह स्कूल नहीं ग्राया । ऐसा तीन चार दिन हुग्रा । मुझे चिन्ता हुई ग्रौर मैं उसके घर गया । घर पर सब कुछ सुनकर मालूम पड़ा कि उसने दो महीने की फीस नहीं दी एवं हैडमास्टर साहब ने चेतावनी दी है कि ग्रगर एक सप्ताह में फीस जमा नहीं करवाई तो उसे वार्षिक परीक्षा में नहीं बैठने दिया जाएगा । मैं घर ग्राया ग्रौर ग्रपने जेब खर्च से जमा की गई राशि को गिनकर देखा तो वह बराबर दो महीने की फीस थी । मैं तत्काल वह जमा राशि लेकर उसके घर गया ग्रौर कहा कि यह फीस स्कूल में जमा करादे । लेकिन उसने मना किया । मेरे बहुत कहने पर उसने वे रुपये ले लिए ग्रौर दूसरे दिन जमा करा दिये । इस प्रकार मैंने एक मित्र के नाते उसका एक साल बरबाद होने से बचा लिया ।

—शान्तिचन्द लोढ़ा, जोधपुर

[३]

घटना दो वर्ष पुरानी है । हमारे विद्यालय में एक निबन्ध प्रतियोगिता ग्रायोजित की गई । उसमें मैंने भी भाग लिया । मुझे द्वितीय घोषित किया गया व पुरस्कार में ५०) रु० मिले । उस दिन मैं ग्रपने मित्रों के साथ शाम को घर लौट रहा था । उस दिन सर्दी ग्रधिक थी । मैंने देखा—एक १० वर्ष का लड़का फुटपाथ पर खड़ा था । उसने केवल एक फटी कमीज व फटा नेकर पहन रखा था । वह सर्दी में ठिठुर रहा था । मैंने ग्रपने मित्रों को कहा कि मेरे पास ५०) रुपये हैं, तुम ५) रुपये ग्रौर उधार दे दो तो इस लड़के के लिए एक चद्दर खरीद कर दे दूँ । इस पर एक मित्र ने मुझे ५) रुपये दे दिये । ५५) रुपये से ग्रच्छी चद्दर खरीद कर उसे दे दी ।

—महावीर जैन "महान", भदेसर

[४]

बात उन दिनों की है जब मैं बारह वर्ष का था । मेरे घर में मेहमान ग्राए

थे। मेरे पिताजी ने मुझे १०) रुपये का नोट देकर सब्जी लाने को कहा। मैं घर से सब्जी लाने के लिए रवाना हो गया। सब्जी की दुकान के पास ही मुझे दो व्यक्ति बड़ी ही दुःखी और दीन अवस्था में मिले। वे भूख के कारण तड़प रहे थे। आस-पास में बैठे लोग उनकी अवस्था को तमाशा समझ हँस रहे थे। मुझे उन लोगों पर बड़ा क्रोध आया। मैं उन भूखे व्यक्तियों के पास गया। अन्य लोग यह देखकर हँसने लगे कि बड़ा दानी आया है। लेकिन मैंने उनकी बातों पर ध्यान नहीं दिया। तड़पते व्यक्तियों ने मुझे बताया कि उन्होंने कई दिनों से कुछ नहीं खाया है। मैंने जल्दी ही पास की दुकान से इन्हें कुछ फल इत्यादि लाकर दिये जिन्हें खाकर कुछ शांति अनुभव करने लगे। मैंने अपने पास के शेष बचे रुपये भी उन्हें दे दिये।

—गुलाब चौपड़ा, जोधपुर

[५]

आज से ३-४ माह पहले तक मैंने रुपये पैसे से किसी की मदद नहीं की, किन्तु "जिनवाणी" में बच्चों द्वारा की गयी भलाई की बातें पढ़ने से मेरे मन में भी आया कि मैं भी किसी गरीब की सहायता करूँ। तब मुझे याद आया कि मेरी कक्षा में एक गरीब लड़की पढ़ती है, पर उसके पास पढ़ने के लिये पाठ्य पुस्तकें तथा लिखने के लिये नोट-बुक नहीं है। तब मैंने अपनी जेब खर्च में से ५०) रु० निकाल कर उसे किताबें तथा नोट-बुक दिलवा दी। उसने महीने भर में इतनी अच्छी पढ़ाई कर ली कि वह अर्द्ध वार्षिक परीक्षा में सर्वप्रथम आयी। अध्यापिकाजी ने उसकी बहुत प्रशंसा की। इस पर उसने अपने प्रथम आने का कारण बताया तथा उसका श्रेय मुझे दिया।

—अंजु कर्णावट, जोधपुर

[६]

मेरे माता-पिता ने अठाई की तपस्या की थी। उसके उपलक्ष्य में पारणे के दिन एक विशाल प्रीतिभोज के आयोजन की चर्चा चली। मैंने विचार किया कि माता-पिता तो आठ दिन भूखे रहे, धर्म-ध्यान करते रहे अब सबको बुलाकर गरिष्ठ भोजन खिलाने से क्या लाभ? कितना अच्छा हो यदि इसमें लगने वाले पैसे का उपयोग किसी भले कार्य में किया जाय। मैंने अपने विचार उनके सामने रखे। वे बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने अरिहन्त मण्डल, रायपुर में लगने वाले ध्यान, शिक्षण व स्वाध्याय शिविर में भाग लेने वाले शिविरार्थियों को साहित्य वितरित कर उस पैसे का सदुपयोग किया।

—कमला बोरदिया, रायपुर

समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियां आना आवश्यक है।
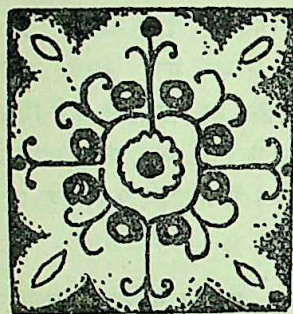
साहित्य-समीक्षा

☐ डॉ. नरेन्द्र भानावत

१. **उठो! बढ़ो**—प्रवर्तक श्री उमेश मुनि 'अणु' प्र. पूज्य श्री नन्दाचार्य साहित्य समिति, मेघनगर, (झाबुआ)-४५७७७९, पृ. ३१६, मू. ८.०० ।

प्रवर्तक श्री उमेश मुनि 'अणु' जैन आगम साहित्य और तत्त्व ज्ञान के मर्मज्ञ तथा विशिष्ट व्याख्याता हैं। प्रस्तुत पुस्तक में सन् १९८४ के थांदला चातुर्मास में पर्युषण के दिनों में 'अन्तगडदशा सूत्र' पर दिये गये मुनिश्री के ८ व्याख्यान संकलित हैं। इनमें 'अन्तगड सूत्र' में आये हुए आत्म-साधकों की आध्यात्मिक साधना का विवेचन करते हुए धर्म के स्वरूप, धर्म-साधना के साधक-बाधक कारण, सम्यक्दर्शन, ज्ञान, चारित्र, क्षमा, समता, तप, संयम, त्याग, व्रत-प्रत्याख्यान, अपरिग्रह, अनासक्ति आदि जीवन मूल्यों पर आत्म-स्पर्शी प्रकाश डाला गया है। अपने विवेचन में मुनि श्री धार्मिक, आगमिक, लौकिक कथाओं, दृष्टान्तों, उदाहरणों का प्रयोग करते चले हैं जिससे सभी प्रवचन अत्यन्त रोचक, प्रेरक और जीवन-उत्थान में मार्ग-दर्शक बन गये हैं। इन प्रवचनों का सन्देश है—मोहनिद्रा से जागो और आत्मचेतना के पथ पर निरन्तर बढ़ते रहो। स्वाध्यायियों के लिए यह पुस्तक विशेष उपयोगी और मार्गदर्शिका है।

२. **लहर की प्यास**—मुनि श्री राजेन्द्र 'रत्नेश', प्र. मुनि कुमुद सेण्टर ऑफ जैन कल्चर, सीतामऊ (म. प्र.) पृ. १३६, मू. २०.०० ।

मुनि श्री 'रत्नेश' साहित्य, दर्शन और मनोविज्ञान के गूढ़ अध्येता और ओजस्वी व्याख्याता हैं। इनके चिन्तन में मौलिकता और अभिव्यक्ति में कवित्व के दर्शन होते हैं। प्रस्तुत पुस्तक में ४१ निबन्ध संकलित हैं जिनमें धर्म और दर्शन के विविध पक्षों को व्यक्ति और समाज के संदर्भ में विवेचित किया गया है। 'लहर की प्यास' शीर्षक इस सत्य को व्यंजित करता है कि लहर अपने अहं को

मिटाकर ही सागर बन पाती है। जब तक जीवन में विभाव और विकार हैं जीवन लहर की तरह ऊपरी सतह पर उत्तेजना में जीता है। पर जब जीवन अन्तर्मुखी होकर अन्तःस्तल में पैठता है, तब आत्म-चेतना से साक्षात्कार होता है और तभी खण्ड से अखण्ड, भेद से अभेद की अनुभूति होती है। इसी जीवन-सत्य को मुनि श्री ने अपने निबन्धों में अभिव्यक्ति दी है। भाषा, प्रांजल, परिष्कृत और शैली काव्यात्मक है जो सीधे हृदय को छूती है।

३. **खण्डेलवाल जैन समाज का वृहद् इतिहास** - डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल, प्र. जैन इतिहास प्रकाशन संस्थान, ८६७, अमृत कलश, किसान मार्ग, बरकत नगर, जयपुर-३०२०१५, पृ. ३६६. मूल्य १००.०० ।

जैन धर्म और संस्कृति में जाति-पांति को महत्त्व नहीं दिया गया है। जैन आचार्यों ने सात्विक एवं शुद्ध जीवन जीने का उपदेश जिस क्षेत्र में भी वे गये, वहाँ अवश्य दिया। परिणामस्वरूप व्यसन-विकारों को छोड़कर बड़ी संख्या में लोगों ने अपने जीवन का रूपान्तरण किया और इस दृष्टि से कई नयी जातियाँ बनीं, जिनमें ओसवाल, श्रीमाल, खण्डेलवाल, पोरवाल, पल्लीवाल, जैसवाल, बघेरवाल आदि प्रमुख हैं। इन जातियों का राष्ट्र के सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं सांस्कृतिक जन-जागरण में उल्लेखनीय योगदान रहा है। खण्डेलवाल जाति दिगम्बर जैन समाज की प्रमुख जाति है। राजस्थान के खण्डेला गाँव से उद्भूत होकर भी इसका विस्तार पूरे देश में हुआ है। इसका व्यवस्थित इतिहास अब तक नहीं लिखा गया था। जैन साहित्य और इतिहास के सुप्रसिद्ध शोध विद्वान् डॉ. कस्तूरचन्द कासलीवाल ने बड़े परिश्रम, निष्ठा व लगन से प्रस्तुत ग्रंथ में खण्डेलवाल जैन जाति के उद्भव, विकास, इससे सम्बद्ध विभिन्न गोत्रों के इतिहास, आचार्य, मुनि एवं भट्टारकों, पंच-कल्याणक प्रतिष्ठान, महोत्सवों, शासन-प्रशासन, साहित्य-सृजन, सामाजिक जन-जागरण, कला एवं संस्कृति के उन्नयन आदि क्षेत्रों में खण्डेलवाल जैन समाज के बहु-आयामी योगदान का विवरण प्रस्तुत किया है। इस प्रस्तुतीकरण में डॉ. कासलीवाल ने पट्टावलियों, प्रशस्ति लेखों, शिला लेखों, मूर्ति लेखों आदि ऐतिहासिक स्रोतों का व्यापक उपयोग किया है। इस ग्रंथ द्वारा शोध की कई नई दिशायें स्पष्ट होती हैं। इस ग्रंथ का महत्त्व केवल जैन समाज तक सीमित नहीं है। मध्यकालीन भारतीय सामाजिक इतिहास के अध्ययन की दृष्टि से भी यह ग्रंथ विशेष उपयोगी है।

४. **प्राचीन जैन साहित्य में आर्थिक जीवन—एक अध्ययन**—डॉ. कमल जैन, प्र. पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान, आई. टी. आई. रोड, वाराणसी-२२१ ००५, पृ. २२४, मू. ६०.०० ।

यद्यपि जैन धर्म अहिंसा, संयम और तप प्रधान धर्म है तथापि सामाजिक चेतना के विकास में भी इस धर्म की प्रभावकारी भूमिका रही है। तीर्थंकर जिस चतुर्विध संघ की स्थापना करते हैं, उसमें गृहस्थ वर्ग भी सम्मिलित है। यही कारण है कि प्राचीन जैन आगम एवं उसके व्याख्या-साहित्य में आर्थिक चिन्तन और आर्थिक जीवन के विविध पक्षों पर पर्याप्त उल्लेख मिलते हैं। लेखिका ने इस शोध प्रबन्ध में ईस्वी पूर्व तीसरी शती से लेकर ईसा की सातवीं शती तक के साहित्य को आधार बनाकर ८ अध्यायों में मौर्यकाल से लेकर गुप्तकाल तक के आर्थिक जीवन का उत्पादन के साधनों, कृषि और पशुपालन, उद्योग धन्धे, विनिमय, वितरण, राजस्व व्यवस्था, भोजन, वेशभूषा, आवास, मनोरंजन, शिक्षा, स्वास्थ्य एवं चिकित्सा आदि के संदर्भ में प्रामाणिक विवेचन-विश्लेषण किया है। इसके अध्ययन से तत्कालीन जैन समाज की समृद्धि और जैन श्रावकों की राष्ट्र को आर्थिक देन विषयक अच्छी जानकारी मिलती है।

५. **आत्मवल्लभ स्मारिका**—सं० गरिण श्री जगच्चन्द्र विजय, मरिणश्री नित्यानन्द विजय, संयोजक नरेन्द्रप्रकाश जैन, सुदर्शन कुमार जैन, प्र. आत्मबल्लभ संस्कृति मन्दिर, २०वां कि मी., जी. टी. करनाल रोड, अलीपुर, दिल्ली-११००३६, पृ. २६०।

विजयबल्लभ स्मारक अंजनशलाका प्रतिष्ठा महोत्सव एवं अ. भा. श्वे. जैन कान्फ्रेन्स के रजत अधिवेशन (८, ९ व १० फरवरी, १९८९) के स्वर्णिम अवसर पर प्रकाशित यह स्मारिका अपनी बहुरंगी आकर्षक साज-सज्जा, दुर्लभ रंगीन चित्रों, जैन-दर्शन, इतिहास, तीर्थ एवं कला संबंधी विशिष्ट सामग्री आदि के कारण अब तक प्रकाशित स्मारिकाओं की शृंखला में अपनी अलग पहचान बनाये हुए है। यह स्मारिका चार खण्डों में विभक्त है। प्रथम खण्ड **'हमारे हृदय सम्राट् विजयवल्लभ'** में श्रीमद् विजयबल्लभ सूरि के महिमामय व्यक्तित्व एवं कृतित्व के विविध पक्षों पर प्रेरणादायक रचनाएँ संकलित हैं। द्वितीय खण्ड **'जैन तीर्थ एवं कला-वैभव'** में देश के प्रमुख तीर्थों पर सचित्र आलेख हैं। तृतीय खण्ड **'जैन दर्शन और इतिहास'** में विश्व शान्ति, राष्ट्रीय एकता, जैन साहित्य, लोक-कथा, शाकाहार, समता, अनेकान्त, ध्यान-योग आदि बहुविध विषयों पर विशिष्ट रचनाएँ समाहित हैं। चतुर्थ खण्ड **'बल्लभ स्मारक नींव से शिखर तक'** में वल्लभ स्मारक की साहित्य-संस्कृति एवं अन्य जनहितकारी प्रवृत्तियों के परिचय के साथ-साथ स्मारक की स्थापना से लेकर आज तक के विकास की कथा निबद्ध है। स्मारिका में प्रकाशित रचनाएँ हिन्दी, अंग्रेजी और गुजराती तीनों भाषाओं में हैं। स्मारिका का प्रत्येक पृष्ठ साहित्य, कला और जीवन-दर्शन की गहरी पकड़ और जीवन्तता लिये हुए है। इस प्रकार की पठनीय, आचरणीय एवं संग्रहणीय स्मारिका के प्रकाशन के लिये हार्दिक बधाई।

६. **प्रकाश पथ**—इकराम राजस्थानी, प्र. शिल्पी प्रकाशन, लालजी सांड का रास्ता, चौड़ा रास्ता, जयपुर-३, पृ. ११२, मू. ४०.०० ।

इकराम राजस्थानी हिन्दी और राजस्थानी के प्रमुख गीतकार और संवेदनशील कवि हैं । प्रस्तुत कृति में कुरानशरीफ के २९वें और ३०वें अध्याय की सूरतों की भावभूमि पर राजस्थानी काव्य के माध्यम से जिस 'प्रकाश पथ' का संकेत किया गया है, वह विश्व मानवता का प्रकाश पथ है जिस पर चलकर हर पथिक सब प्रकार के तमस-अंधकार-विकार से मुक्त हो सकता है । कवि का यह प्रयास भावात्मक एकता एवं धर्म के विश्वजनीन स्वरूप को प्रकट करने में सराहनीय कदम है । प्रकाशन भव्य एवं आकर्षक है ।

□ □ □
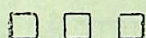
यह 'जिनवाणी' अंक आपको कैसा लगा ?

अपनी राय भेजिए

'जिनवाणी' आप ही के लिये प्रकाशित की जाती है । हम पूरी-पूरी कोशिश करते हैं कि "जिनवाणी" का प्रत्येक अंक आपकी रुचि के अनुसार रहे और उससे आपको अधिक से अधिक संतोष हो और यह आपकी प्रिय पत्रिका बनी रहे ।

कृपया हर अंक पर अपनी राय भेजिए । कौन सी रचना आपको पसन्द आई ? आप किन-किन विषयों पर लेख आदि पढ़ना पसन्द करेंगे ? हम आपकी राय और सुझावों का स्वागत करेंगे ।

—मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार, जयपुर-३०२ ००३

समाज-दर्शन

श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, कोसाणा की अपील

माननीय धर्म प्रेमी बन्धुओ !

असीम पुण्यों के उदय से हमारे यहाँ पर करुणा के सागर, बाल ब्रह्मचारी, चारित्र चूड़ामणि, स्वाध्याय एवं सामायिक के प्रबल प्रेरक, परम पूज्य गुरुदेव श्री १००८ श्री आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. आदि ठाणा का इस वर्ष का चातुर्मास हमारे गाँव कोसाणा, जिला : जोधपुर (राजस्थान) में होना निश्चित हुआ है। आध्यात्मिक जगत् के इस पावन पुरुष का चातुर्मास वास्तव में आप सबके शुभ कर्मों का फल है, जिसका लाभ हमारे गांव कोसाणा को मिल रहा है। भगवंत इस सदी के महानतम आचार्य हैं। इस अवसर पर आप सपरिवार पधारकर श्रीसंघ को सेवा का मौका दें। आपके पधारने से वास्तव में संघ अपने आपको गौरवान्वित समझेगा। धर्म ध्यान के इस महाकुंभ पर आपका पधारना एक महत्त्वपूर्ण घटना होगी।

अपने सक्रिय सहयोग, चिन्तन पूर्ण मार्गदर्शन एवं अनुभव से संघ को लाभान्वित करें।

आपके पधारने की अग्रिम सूचना संघ को भिजावें ताकि समुचित व्यवस्था की जा सके। इस विषय में विस्तृत जानकारी के लिये आप नीचे लिखे पते पर पत्र व्यवहार करें—

धन्यवाद !

आपका,
एस. लालचन्द बाघमार
अध्यक्ष
चातुर्मास व्यवस्था समिति

पत्र व्यवहार का पता—
एस. लालचन्द बाघमार
पो. कोसाणा
जिला : जोधपुर-३४२६०६ (राज.)

मद्रास का पता :
एस. लालचन्द बाघमार
८०, आदियप्पा नायकन स्ट्रीट
मद्रास-६०० ०७९
फोन : ३२०६६, ३२६०५,
६६३२७१, ६६६२२३

धार्मिक प्रचार-प्रसार यात्रा

अलवर :—स्वाध्याय संघ (पल्लीवाल क्षेत्र) के संयोजक श्री सूरजमल मेहता की विज्ञप्ति के अनुसार २६ मार्च से ३१ मार्च तक पोरवाल क्षेत्र के सवाईमाधोपुर, बजरिया, आलनपुर, कुण्डेरा, श्यामपुरा, कुस्तला, पचाला, चोरू, अलीगढ़, देई, जरखोदा, खातोली, देवली, दूनी, समीधि, बाबई आदि स्थानों में जाकर वहाँ के धर्मप्रेमी बन्धुओं, स्वाध्यायी श्रावकों आदि से सम्पर्क कर नियमित सामायिक-स्वाध्याय करने की प्रेरणा दी गई। फलस्वरूप कई स्थानों पर स्थानक में आकर साप्ताहिक सामूहिक सामायिक-स्वाध्याय करने के संकल्प किये गये। पर्युषण में स्वाध्यायी के रूप में सेवा देने के लिए भी १७ भाई तैयार हुए। कुस्तला, पचाला, खातोली, इन स्थानों पर एक अप्रेल, ८९ से धार्मिक पाठशालाएँ प्रारम्भ करने का निश्चय किया गया। डांगरवाड़ा, समिधि, अलीगढ़, देई व देवली में स्वाध्यायियों ने स्थानीय शिविर लगाने की मांग की। इस प्रचार-प्रसार कार्यक्रम में श्री फूलचन्द मेहता (उदयपुर), श्री प्रकाश सालेचा (जोधपुर), श्री निहालचन्द जैन (देई), श्री गोपीलाल जैन, श्री चौथमल जैन, श्री कपूरचन्द जैन, श्री रिद्धिचन्द जैन, श्री राजूलाल जैन (सभी सवाई-माधोपुर) ने भाग लिया।

दिनांक ६ से १४ अप्रेल तक पल्लीवाल क्षेत्र में प्रवास कार्यक्रम रखा गया जिसमें श्री फूलचन्द मेहता, सूरजमल मेहता, श्री धर्मचन्द जैन (जोधपुर) श्री हरिप्रसाद जैन (मंडावर), श्री कजोड़ीलाल जैन (खेरली) ने भाग लिया। प्रवास यात्रा अलवर से आरम्भ हुई। बडेर, हरसाना, लक्ष्मणगढ़, खोह, सहाडी, खेरली, नदबई, भरतपुर, गोपालगढ़, पहरसर, डेहरा मोड़, मई, मंडावर, रसीदपुर, हिण्डौन, बरगमा, कंजोली, गंगापुर सिटी तथा नसियां, कुल २० गाँवों-शहरों में सामायिक-स्वाध्याय की प्रेरणा दी गई। अलवर में महासती श्री चारित्रप्रभाजी आदि ६ व रसीदपुर में तपस्वी श्री लाभ मुनिजी का सान्निध्य प्राप्त हुआ। इस प्रवास-यात्रा में कई भाई-बहिनों ने जैन तत्त्वज्ञान के प्रति विशेष रुचि दिखाई। २७ नये स्वाध्यायी पर्युषण में सेवा देने के लिए तैयार हुए। एक मई से धार्मिक पाठशालाएँ प्रारम्भ करने, १ से १५ जून तक धार्मिक शिक्षण शिविर लगाने आदि के कई महत्त्वपूर्ण निर्णय लिये गये।

छात्रों के लिए स्वर्ण अवसर

[१]

श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान, जयपुर

श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान, जयपुर की स्थापना परम श्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. की प्रेरणा से सन् १९७३ में हुई। अब तक

इस संस्थान में रहकर अनेक छात्रों ने जैन दर्शन, प्राकृत एवं संस्कृत भाषा के साथ-साथ राजस्थान विश्वविद्यालय की स्नातक एवं स्नातकोत्तर परीक्षायें उच्च श्रेणी में विशेष योग्यता के साथ उत्तीर्ण की हैं। संस्थान में शिक्षण आधुनिकतम पद्धति से वैज्ञानिक शैली में दिया जाता है। यह संस्थान छात्रों के भविष्य को उज्ज्वल बनाने का स्वर्ण अवसर प्रदान करता है। यहाँ अध्ययन करने वाले छात्रों के लिए व्यावहारिक जीवन में आत्म-निर्भर बनने के अनेक मार्ग खुले रहते हैं।

नियम :—संस्थान के प्रमुख नियम इस प्रकार हैं :—

१. संस्थान में मेधावी, प्रतिभा सम्पन्न, परिश्रमी, सुशील, जरूरतमंद व सेवाभावी उन छात्रों को प्रवेश दिया जाता है, जिन्होंने सैकेण्डरी, हायर सैकेण्डरी या इनके समकक्ष परीक्षा दी हो / उत्तीर्ण की हो।

२. संस्थान में प्रविष्ट छात्रों के लिए भोजन व आवास की निःशुल्क व्यवस्था है, तथापि जो छात्र पूर्ण या आंशिक खर्च संस्थान को देना चाहें, दे सकते हैं।

३. संस्थान में प्रविष्ट छात्र राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर से सम्बद्ध कॉलेजों एवं स्थानीय अन्य महाविद्यालयों में अपनी रुचि के अनुसार कला, वाणिज्य अथवा विज्ञान संकाय में प्रवेश ले सकते हैं। प्राथमिकता कला के छात्रों को दी जाती है।

४. छात्रों के लिए विशेष प्रशिक्षण के लिए ग्रीष्मकालीन अवकाश में विशेष व्यवस्था की जाती है।

५. संस्थान की ओर से निर्धारित पाठ्यक्रम का अध्ययन करना आवश्यक है।

६. प्रवेश प्राप्त छात्रों को संस्थान के नियमों का पालन करना अनिवार्य है।

इच्छुक छात्र अथवा आवेदन पत्र निम्नांकित पते पर १० जून, १९८९ तक भेज दें।

—कन्हैयालाल लोढा
अधिष्ठाता, श्री जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान
ए–९, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर
जयपुर–३०२०१७ (राज.)

[२]

श्री महावीर जैन स्वाध्याय विद्यापीठ, जलगाँव

समाज चिन्तामणि श्री सुरेशकुमारजी जैन, विधायक एवं चेयरमैन, नगर-पालिका जलगाँव द्वारा संस्थापित श्री महावीर जैन स्वाध्याय विद्यापीठ, विगत १० वर्षों से स्थानकवासी जैन धर्म के विद्वान् तैयार करने में कार्यरत है । इस संस्था की दोनों योजनाओं में से किसी में भी प्रवेश लीजिये ।

(१) न्यूनतम योग्यता :—सैकण्डरी उत्तीर्ण, चार वर्ष तक भोजन, आवास व अध्ययन की निःशुल्क व्यवस्था के साथ २००/– रुपये प्रति माह छात्रवृत्ति तथा भविष्य में ८००/– रुपये प्रति माह पर सर्विस की गारन्टी, व्यावहारिक शिक्षण की छूट ।

(२) न्यूनतम योग्यता :—पाँचवीं कक्षा से आठवीं कक्षा उत्तीर्ण, ७ से १० वर्ष तक आवास, भोजन, अध्ययन (धार्मिक व स्कूल कॉलेज का पूरा खर्च) यूनीफार्म व सभी आवश्यक खर्च संस्था की ओर से किया जावेगा ।

आवेदन की अन्तिम तिथि २० मई, १९८९ व साक्षात्कार की तिथि १५ जून, १९८९ रखी गई है ।

अधिक जानकारी के लिए सम्पर्क करें :—

—प्रकाशचन्द जैन
प्राचार्य, श्री महावीर जैन स्वाध्याय विद्यापीठ
श्री भीकमचन्द जैन नगर, पिंपाला रोड
जलगाँव–४२५ ००१ (महाराष्ट्र)

[३]

श्री का० शि० ओसवाल जैन बोर्डिंग, जलगाँव

इस संस्था में आवास, भोजन, पुस्तकालय, धार्मिक शिक्षण तथा व्यवसाय मार्ग-दर्शन की उत्तम व्यवस्था है तथा जलगाँव शहर में एम. ए., एम. एस-सी., एम. कॉम., बी. एड, डी. एड, डिप्लोमा तथा डिग्री (इन्जीनियरिंग) फार्मेसी, एल. एल. बी., डी. टी. एल., एम. बी. ए., आई. टी. आई. आदि शैक्षणिक सुविधायें उपलब्ध हैं । समाज के सुयोग्य, होनहार छात्रों को विशेष आर्थिक सुविधायें दी जाती हैं । आवेदन पत्र ५/– रुपये भेजकर निम्न पते से प्राप्त कर ३० मई तक भरकर भेज देवें ।

इसी बोर्डिंग हाउस के लिये एक सुशिक्षित एवं अनुभवी गृहपति की आवश्यकता है । संस्था में महाविद्यालयों के करीब ७५ छात्रों के आवास की व्यवस्था है । छात्रों के भोजनादि की व्यवस्था करना, उन्हें अनुशासन में रखना, जैन तत्त्वज्ञान की शिक्षा देना, संस्था तथा छात्रों के हिसाब रखना, पत्र व्यवहार करना आदि सभी जिम्मेदारियाँ गृहपति को निभानी होती हैं । इच्छुक उम्मीदवार २५ मई, १९८९ तक अपने आवेदन पत्र वेतन, योग्यता और अनुभव का उल्लेख करते हुये निम्न पते पर भेजें ।

—दलीचन्द हस्तीमल चौरड़िया
जनरल सेक्रेटरी
का. शि. ओसवाल जैन बोर्डिंग हाउस
जलगाँव–४२५००१ (महाराष्ट्र)

साहित्य निःशुल्क मंगायें

पूज्य कानजी स्वामी की जन्म शताब्दी के उपलक्ष्य में श्री रवीन्द्र पाटनी फेमिली चेरिटेबल ट्रस्ट, बम्बई की ओर से जिन मन्दिरों, मुनिराजों, त्यागियों, वाचनालयों एवं विद्वानों को "अध्यात्म रत्नत्रय" (समयसार गाथा ३२०, प्रवचनसार गाथा ११४ एवं समयसार गाथा २७१ पर आध्यात्मिक सत्पुरुष पूज्य कानजी स्वामी के प्रवचन (मूल्य ५/– रुपये पृष्ठ २१२) एवं डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल द्वारा रचित नवीनतम समयसार पद्यानुवाद (मूल्य १ रुपया पृष्ठ ९६) तथा स्व. श्रीमती चम्पादेवी जैन पारमार्थिक ट्रस्ट, नागपुर की ओर से "योगसार एवं परमानन्द स्तोत्र" (पृष्ठ ६४) स्वाध्यायार्थ भेंट दी जा रही हैं । इच्छुक महानुभाव एक रुपया पैंसठ पैसे के डाक टिकट निम्न पते पर भेजकर उक्त पुस्तकें मंगा सकते हैं । ध्यान रहे—डाक टिकट भेजने की अन्तिम तिथि ३० जून, १९८९ है ।

पता :—निःशुल्क पुस्तक वितरण विभाग
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए–४, बापू नगर, जयपुर-३०२ ०१५ (राज.)

महावीर जयन्ती पर विविध कार्यक्रम सम्पन्न

भगवान महावीर की २५८७वीं जयन्ती १८ अप्रेल को देश के विभिन्न क्षेत्रों में तप-त्याग एवं धर्म-ध्यानपूर्वक सानन्द सम्पन्न हुई । इस अवसर पर समग्र जैन समाज द्वारा सामूहिक प्रभातफेरी, शोभा-यात्रा, सार्वजनिक प्रवचन सभा

आदि के आयोजन किये गये । हमें विभिन्न स्थानों से जो समाचार मिले हैं, उनका संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है—

जयपुर—यहाँ लालभवन में परम श्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा., पं. र. श्री मानमुनिजी, पं. र. श्री हीरामुनिजी आदि ठाणा के सान्निध्य में महावीर जयन्ती तप-त्यागपूर्वक मनाई गई। आचार्यश्री आदि सन्तों ने भगवान महावीर के सिद्धान्तों को जीवन में उतारने की प्रेरणा दी ।

जैन श्वेताम्बर संघ, जवाहर नगर द्वारा आयोजित कार्यक्रम में स्वामी पूज्यानन्दजी व राजस्थान आवासन मण्डल के अध्यक्ष श्री श्रीराम गोटेवाला ने अपने विचार रखे ।

आदर्श नगर, जयपुर के जैन स्थानक में श्री राजेन्द्र मुनि 'रत्नेश' के सान्निध्य में 'महावीर के सिद्धान्त' विषय पर त्रिदिवसीय कार्यक्रम आयोजित किया गया ।

राजस्थान जैन सभा के तत्त्वावधान में १४ से १८ अप्रैल तक भक्ति संध्या, आध्यात्मिक कवि-सम्मेलन, 'समता-सह-अस्तित्व समन्वय और भगवान महावीर' विषयक विचार गोष्ठी, सांस्कृतिक समारोह एवं सार्वजनिक सभा आदि कार्यक्रम सम्पन्न हुए । सार्वजनिक सभा को मुख्यमन्त्री श्री शिवचरण माथुर, शिक्षामन्त्री श्री बी० डी० कल्ला आदि ने सम्बोधित किया । इस अवसर पर १२३ व्यक्तियों ने रक्तदान किया तथा सैंकड़ों ने नेत्रदान के संकल्प पत्र भरे ।

१८ अप्रैल को सायं ७.२५ से ७.४५ तक दूरदर्शन केन्द्र से 'भगवान महावीर आधुनिक सन्दर्भ में' विषय पर परिचर्चा प्रसारित की गई, जिसमें श्री कमलकिशोर जैन, डॉ० हुकमचन्द भारिल्ल, डॉ० नरेन्द्र भानावत एवं डॉ० कमलचन्द सोगानी ने भाग लिया ।

नई दिल्ली—यहाँ भगवान महावीर के २५००वें निर्वाण महोत्सव पर आरम्भ की गई 'महावीर वनस्थली' का उद्घाटन भारत के प्रधानमन्त्री श्री राजीव गांधी ने किया । उन्होंने इस बात को रेखांकित किया कि हमारी विदेश नीति भगवान महावीर के सिद्धान्तों पर आधारित है और पर्यावरण सन्तुलन के लिए पशु-पक्षी व पौधों की सुरक्षा करना जरूरी है । उन्होंने जैन समाज द्वारा सामाजिक विज्ञान के क्षेत्र में व स्वयंसेवी संगठनों के माध्यम से देश के विकास में दिये गये योगदान का भी उल्लेख किया । इस अवसर पर भारी संख्या में जैन समाज के प्रतिनिधि उपस्थित थे ।

चित्तौड़गढ़—यहाँ महावीर जैन मण्डल द्वारा १६ अप्रैल को आयोजित महिला सम्मेलन को इन्दौर की श्रीमती कमला माताजी एवं वीर-बालिका कॉलेज, जयपुर की प्रिंसिपल डॉ० शान्ता भानावत ने सम्बोधित किया। महासती श्री सिद्धकंवरजी ने महिलाओं को धार्मिक, सामाजिक कार्यों में आगे आने की प्रेरणा दी, फलस्वरूप 'जैन महिला संगठन' गठित किया गया। इस अवसर पर आयोजित विचार गोष्ठी में मुख्य वक्ता के रूप में डॉ० नरेन्द्र भानावत ने भगवान महावीर के अहिंसा, संयम एवं तप रूप धर्म की आधुनिक संदर्भ में विवेचना की। श्री फूलचन्द मेहता ने आत्म तत्त्व पर प्रकाश डाला। जयपुर के डॉ० प्रेमचन्द रांवका ने भी अपने विचार रखे। संगोष्ठी की अध्यक्षता प्रमुख समाज सेवी श्री जोधराजजी सुराणा ने की। मण्डल के अध्यक्ष श्री घनश्याम जैन एवं सचिव श्री इन्द्रमल सेठिया ने मण्डल की प्रवृत्तियों पर प्रकाश डाला।

उदयपुर—समस्त जैन समाज की प्रतिनिधि संस्था श्री महावीर जैन परिषद् द्वारा ओसवाल भवन में आयोजित सार्वजनिक सभा को सम्बोधित करते हुए डॉ० नरेन्द्र भानावत ने महावीर की धार्मिक-सामाजिक, बौद्धिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में की गई क्रांति की वर्तमान सन्दर्भ में विवेचना की। अहमदाबाद के डॉ० शेखर जैन ने महावीर के मानवतावाद पर प्रकाश डाला। सभी की अध्यक्षता राजस्थान कृषि महाविद्यालय के अधिष्ठाता डॉ० आर० सी० मेहता ने की। संयोजन किया एडवोकेट श्री जसवंतसिंह मेहता ने। प्रातःकाल विशाल शोभा यात्रा निकाली गई।

भीलवाड़ा—'भारत जैन महामण्डल' की भीलवाड़ा शाखा के तत्त्वावधान में आयोजित कार्यक्रम में महासतीजी श्री मैनासुन्दरीजी, शांताकंवरजी, चांद-कंवरजी, सौम्यप्रभाजी आदि ने आत्म-जागृति और जीवन-सुधार की प्रेरणा दी। कार्यक्रम संयोजक थे श्री शांतिलाल पोखरना।

मद्रास—'श्री एस० एस० जैन युवक संघ' द्वारा १६ अप्रैल को 'सत्संग' विषय पर प्रश्नमंच कार्यक्रम आयोजित किया गया। संचालक थे श्री पी० एम० चौरड़िया एवं अर्थ-सहयोगी थे—श्री सोहनलाल चौरड़िया। १८ अप्रैल को मिठाई एवं नमकीन के १० हजार पैकेट बच्चों एवं जरूरतमंदों में वितरित किये गये। विधायक श्री रहमान खान के मुख्य आतिथ्य में सैन्ट्रल जेल में एक समा-रोह आयोजित किया गया। संघ मंत्री मनोहरराज कांकरिया ने संयोजन किया।

वाणीभूषण श्री रतन मुनिजी के सान्निध्य में **यवतमाल** में, श्री श्वे० स्था० जैन रत्न युवक मण्डल द्वारा **सवाईमाधोपुर** में, **छोटी कसरावद** में 'एकता दिवस' के रूप में, श्री सौभाग्य मुनिजी 'कुमुद' के तत्त्वावधान में भारत जैन महामण्डल' की ओर से **ब्यावर** में महावीर जयन्ती पर विविध कार्यक्रम आयो-जित किये गये।

संक्षिप्त–समाचार

टोंक—जीव दया मंडल ट्रस्ट के मन्त्री श्री जसकरण डागा की विज्ञप्ति के अनुसार आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के धर्मोपदेश से प्रभावित होकर निवाई तहसील के गांव मुण्डिया स्थित बंजारी देवी मन्दिर में रामनवमी को पाड़े की दी जाने वाली बलि इस बार नहीं दी गई और वह हमेशा के लिए बन्द कर दी गई है।

जयपुर—प्रसिद्ध लेखक एवं शोध विद्वान् डॉ० कस्तूरचन्द कासलीवाल द्वारा लिखित पुस्तक 'खण्डेलवाल जैन समाज का वृहद् इतिहास' का विमोचन श्री त्रिलोकचन्द कोठारी द्वारा ९ अप्रैल को सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर डॉ० रामचन्द्र द्विवेदी, डॉ० नरेन्द्र भानावत, पं० भंवरलाल न्यायतीर्थ, श्री नाथूलाल जैन आदि वक्ताओं ने पुस्तक की विशेषताओं पर प्रकाश डालते हुए जैन समाज द्वारा किये जा रहे विविध शोध कार्यों एवं डॉ० कासलीवाल के योगदान पर विशेष प्रकाश डाला।

धमतरी—यहाँ विदुषी साध्वी श्री इन्द्रकंवरजी के सान्निध्य में धार्मिक प्रश्नमंच स्पर्धा का विशेष आयोजन किया गया, जिसमें ३-३ सदस्यीय ९ ग्रुपों में २७ विदुषी महासतियों ने भाग लिया। साध्वी श्री मंजुलाजी का ग्रुप सबसे आगे रहा। विभिन्न क्षेत्रों से उपस्थित भाई-बहिनों को इस आयोजन से धार्मिक ज्ञानार्जन एवं स्वाध्याय की विशेष प्रेरणा मिली।

दुर्ग—श्री जैन युवा मंच एवं रेडक्रास सोसायटी दुर्ग के संयुक्त तत्त्वावधान में ९ अप्रैल से १४ अप्रैल तक निःशुल्क 'जयपुर पैर शिविर एवं विकलांग उपकरण शिविर' का आयोजन वर्धमान जैन स्थानक भवन में किया गया, जिसमें ९० जयपुर पैर, १०० ट्राई साईकिल्स, ३०० कैलीपर्स, १०० जोड़ी वैशाखी एवं ५० श्रवण यंत्र वितरित किये गये।

मैसूर—उपाध्याय श्री केवलमुनि जी ने यहाँ चातुर्मास के लिए स्वीकृति फरमायी है। आपकी सुशिष्या श्री शांताकंवरजी आदि ठाणा ५ का चातुर्मास तिरुवल्लुर नगर के लिए स्वीकृत हुआ है।

पीतमपुरा : दिल्ली—यहाँ के एस० एस० जैन संघ के तत्त्वावधान में ६ अप्रेल को मुनि श्री रामकृष्णजी म० सा० की प्रेरणा से 'मुनि मायाराम जैन पब्लिक स्कूल' का उद्घाटन सम्पन्न हुआ। श्री सुभद्र मुनिजी एवं साध्वी श्री सुशीलाजी ने विशेष उद्बोधन दिया।

कोसेलाव, स्टेशन फालना—यहाँ १६ मई से २ जून तक 'श्री सुशील भक्ति ललित हर्ष कन्या शिक्षण शिविर' का प्रथम बार आयोजन किया जा रहा है। इसमें १४ से ४० वर्ष की बहिनों को प्रवेश दिया जायेगा। शिविरकाल में धार्मिक शिक्षण एवं जैन तत्त्व ज्ञान का विशेष अध्ययन कराया जायेगा।

कलकत्ता—'जिनवाणी' के मार्च, ८६ के अंक में पृष्ठ ४७ पर 'साहित्य-समीक्षा' के अन्तर्गत 'इतिहास की अमरबेल ओसवाल (प्रथम खण्ड) ले० मांगीलाल भूतेड़िया, पुस्तक का मूल्य–१२५-०० असावधानीवश छप गया। इसका वास्तविक मूल्य १००.०० है। कृपया पाठक नोट कर लेवें।

मद्रास—द. भारत श्वे. स्था. जैन उपाश्रय (भवन) निर्माण समिति के अन्तर्गत स्थापित श्री जैन साधना और सेवा ट्रस्ट द्वारा मद्रास से ३२ किलो मीटर दूर टन्डलम् में सैकेंड भगवान महावीर श्री जैन साधना सेवागृह' (हाइवे रेस्ट हाउस) का उद्‌घाटन श्री मेघराज साकरिया द्वारा सम्पन्न हुआ।

भीलवाड़ा—जैन युवा परिषद् समिति के अध्यक्ष श्री गौतमचन्द नागौरी ने श्री वर्धमान जैन युवा स्वाध्याय केन्द्र समिति में श्री बसन्तीलाल रांका को संयोजक व श्री अशोककुमार जैन को उपसंयोजक मनोनीत किया है। समिति सुभाष नगर में 'स्वाध्याय केन्द्र' के निर्माण के लिए प्रयत्नशील है।

नन्दुरबार—आचार्य श्री नानेश के सुशिष्य श्री सम्पतमुनिजी एवं श्री नरेन्द्रमुनिजी के सान्निध्य में १२ मार्च से २४ मार्च तक धार्मिक शिक्षण शिविर में ८० शिविरार्थियों ने भाग लिया। यहाँ क्षेत्रिय महिला सम्मेलन भी आयोजित किया गया।

रणकपुर तीर्थ—यहाँ आचार्य गुणरत्न सूरीश्वरजी म० सा० के सान्निध्य में ३१ मई से १० जून तक निःशुल्क आध्यात्मिक ज्ञान शिविर आयोजित किया गया है, जिसमें १४ से २५ वर्ष तक के मिडिल से एम० ए० तक के विद्यार्थी भाग ले सकेंगे।

पूना—यहां सिद्धाचलम् आनन्द गुरुकुल में कक्षा १ से ५ तक के बच्चों को प्रवेश दिया जा रहा है। गुरुकुल के साथ 'अमृतकुंज' भी प्रारम्भ किया जा रहा है, जिसमें दहेज, व्यसन या अन्य कारणों से पीड़ित तथा विधवा महिलाओं को सम्मानपूर्ण स्वावलम्बी जीवन जीने का प्रशिक्षण दिया जायेगा। सम्पर्क सूत्र–

—सिद्धाचलम् चैरिटेबल ट्रस्ट, ए-३/६, इन्दिरा पार्क,
नगर रोड, पुणे-४११००६ (महाराष्ट्र)

जयपुर—संयुक्त मंच के तत्त्वावधान में २९ अप्रैल को प्रमुख विद्वान् श्री रणजीतसिंह कूमट की नव प्रकाशित पुस्तक **'मुझे मोक्ष नहीं चाहिये'** पर आयोजित विचार गोष्ठी में डॉ० लक्ष्मीमल सिंघवी, डॉ० रामचन्द्र द्विवेदी, डॉ० विश्वम्भरनाथ उपाध्याय, डॉ० मण्डन मिश्र आदि ने अपने विचार व्यक्त करते हुए इस बात को रेखांकित किया कि श्री कूमट ने इस पुस्तक में धर्म की सामाजिक चेतना और उसके लोक-कल्याणकारी पक्ष को उजागर करते हुए 'कर्म-सिद्धान्त, सामायिक-साधना, ध्यान-योग आदि का लक्ष्य आत्म-जागृति के साथ-साथ लोकहित माना है। वे सच्चा मोक्ष वैयक्तिक सुख-शान्ति में न मानकर सामाजिक सौहार्द, मानव-कल्याण व विवेक-पूर्ण जीवन यापन में मानते हैं। संगोष्ठी की अध्यक्षता प्रो० कल्याणमल लोढ़ा ने की। उन्होंने मानव-चेतना के चरम विकास के रूप में मोक्ष की अवधारणा प्रतिपादित की। कार्यक्रम का संयोजन डॉ० राघवप्रकाश ने किया।

लासलगाँव—यहाँ के महावीर जैन विद्यालय के छात्रावास में पाँचवीं कक्षा से लेकर एम. कॉम तक के छात्रों के लिए प्रवेश चालू है। छात्रावास की देखभाल के लिए सेवानिवृत्त अनुभवी गृहपति की आवश्यकता है। सम्पर्क सूत्र—मन्त्री, श्री महावीर जैन विद्यालय, लासलगाँव (नासिक) महाराष्ट्र।

देवली—यहाँ आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०, पं. रत्न श्री हीरामुनि आदि ठाणा ८ का होली चातुर्मास विविध त्याग, व्रत, पच्चखाण आदि के साथ सम्पन्न हुआ। आचार्यश्री की प्रेरणा से यहाँ जीव दया कमेटी की स्थापना के साथ-साथ जैन शिक्षण संघ, जयपुर की उपशाखा भी कायम हुई। सम्पर्क सूत्र—श्री जितेन्द्र कोठारी, अधिशासी अभियन्ता, III/३, बीसलपुर परियोजना कॉलोनी, देवली (राज.)

हैदराबाद—महावीर जयन्ती पर युवाचार्य डॉ० शिवमुनिजी के सान्निध्य में आयोजित सार्वजनिक सभा में प्रस्ताव पारित कर केन्द्रीय एवं प्रान्तीय सरकारों से निवेदन किया गया कि टी. वी., सिनेमा, रेडियो आदि के माध्यम से मांस, मछली एवं अण्डों के सेवन का प्रचार और विज्ञापन तुरन्त बन्द किया जाय। जैन समाज की अहिंसा प्रधान भावनाओं को इससे ठेस पहुँचती है। स्कूलों और कॉलेजों में विभिन्न स्तरों पर निर्धारित पाठ्य-पुस्तकों में अण्डे, मछली और मांस सेवन के जो प्रसंग हैं, वे शीघ्र हटाये जाएँ। क्योंकि इनके सम्बन्ध में जो बातें लिखी गई हैं, उन्हें वैज्ञानिकों और डॉक्टरों ने असत्य प्रमाणित कर दिया है। स्वास्थ्य के लिए वे हितकर नहीं हैं।

निम्बाहेड़ा—यहाँ आचार्य श्री नानेश ने वैराग्यवती कुमारी कल्पना छाजेड़, कुमारी रेखा दर्डा एवं श्रीमती शोभा तातेड़ को ११ मई को जैन भागवती दीक्षा प्रदान की।

बालोतरा—यहाँ ग्राचार्य श्री नानेश के सुशिष्य तपस्वी श्री सेवन्त मुनिजी के सान्निध्य में वैराग्यवती कु. विमला बाघमार, कु. पुष्पा गणधर चौपड़ा एवं कु. कंकू चौपड़ा की भागवती दीक्षा ११ मई को सानन्द सम्पन्न हुई। तपस्वीराज श्री चम्पालालजी म. सा. के नेश्राय में सुश्री मंजू कुमारी की भागवती दीक्षा श्री प्रकाश मुनिजी के मुखारविन्द से महासती श्री भीखमकंवरजी के सान्निध्य में १७ मई को सम्पन्न हुई।

ग्रहमदनगर—यहाँ ग्राचार्य श्री ग्रानन्दऋषि जी म० के मुखारबिन्द से १९ मई को राजस्थान में सियाट निवासी वर्तमान में कोयम्बटूर निवासी श्री पारसमलजी सिंघी की सुपुत्री वैराग्यवती संतोषकुमारी की भागवती दीक्षा १९ मई को सम्पन्न हुई।

विल्लीपुरम-बंगलौर—ग्राचार्य श्री नानेश की ग्राज्ञानुवर्तिनी महासती श्री नानुकंवरजी ठाणा ३५ के सान्निध्य में वैराग्यवती चन्द्रकुमारी एवं पुष्पाकुमारी की भागवती दीक्षा ११ मई को सानन्द सम्पन्न हुई।

दुर्ग--श्री श्वे० संघ के तत्त्वावधान में ग्राचार्य श्री उदय सागर सूरीश्वर जी म० सा० के सान्निध्य एवं महासती श्री मोहरकंवरजी की निश्रा में कुमारी रूपलता मरोटी सुपुत्री श्री सोनकरणजी मरोटी की भागवती दीक्षा १७ मई को सम्पन्न हुई।

जयपुर—उच्च स्तरीय ग्रध्ययन-ग्रनुसंधान संस्थान एवं राजस्थान संस्कृत ग्रकादमी के संयुक्त तत्त्वावधान में राजस्थान के जैन दार्शनिकों एवं कवियों का संस्कृत को योगदान विषयक संगोष्ठी २९ व ३० ग्रप्रैल को ग्रायोजित की गई जिसका उद्‌घाटन सुप्रसिद्ध विद्वान् प्रो० कल्याणमल लोढ़ा ने किया। विशिष्ट ग्रतिथि थे डॉ० हुकमचन्द्र भारिल्ल। ग्रध्यक्षता राजस्थान वि० वि० के कुलपति डॉ० एस० एन० सिन्हा ने की। इस संगोष्ठी में कई विद्वानों ने ग्रपने शोधपत्र प्रस्तुत यिये।

पाली—यहाँ के प्रतिष्ठित सुश्रावक ८३ वर्षीय श्री उत्तमचन्द लुंकड़ ने ग्रपने शरीर की ग्रस्वस्थता को ध्यान में रखते हुए समस्त चतुर्विध संघ से ग्रपनी प्रत्यक्ष-ग्रप्रत्यक्ष त्रुटियों के लिए क्षमायाचना की है।

जयपुर—यहाँ 'महावीर इन्टरनेशनल' में २९ ग्रप्रैल को डॉ० नरेन्द्र भानावत ने 'भगवान महावीर की देन ग्रौर वर्तमान सन्दर्भ' विषय पर ग्रपना विशेष व्याख्यान दिया। ग्रध्यक्षता श्री तेजकरण डंडिया ने की।

कोसाना संघ के चुनाव

कोसाना—दिनांक २१-४-८९ को श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की मीटिंग सानन्द सम्पन्न हुई। इसमें स्थानीय कोसाना के श्रावक, बाहर प्रवास के एवं मद्रास से पधारे हुए श्रावकगण उपस्थित थे। निम्न प्रकार पदाधिकारी चुने गये :—

संघपति— श्री किशनचन्दजी मूथा
अध्यक्ष— श्री झूमरलालजी बाघमार
उपाध्यक्ष — श्री एस० लालचन्दजी बाघमार
श्री देवराजजी नाहर
मन्त्री— श्री घीसूलालजी बाघमार
उपमन्त्री— श्री सम्पतराजजी बाघमार
श्री जवाहरलालजी बाघमार
कोषाध्यक्ष— श्री धर्मचन्दजी बाघमार
श्री देवराजजी नाहर (मद्रास के लिए कोषाध्यक्ष)

चातुर्मास स्वीकृति

आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० ने निम्न चातुर्मास के लिए स्वीकृति फरमाई है—

पं. र. श्री मान मुनिजी आदि ठाणा, **ब्यावर**
साध्वी प्रमुखा प्रवर्तिनी महासती श्री बदनकंवरजी म० सा०,
विदुषी महासती श्री मैनासुन्दरीजी म. सा. आदि ठाणा, **जोधपुर**
महासती श्री सुशीला कंवरजी म० सा० आदि ठाणा, **दूणी**
महासती श्री सायरकंवरजी म० सा० आदि ठाणा, **नसीराबाद**
महासती श्री संतोषकंवरजी म० सा० आदि ठाणा, **ब्यावर**
महासती श्री तेजकंवरजी म० सा० आदि ठाणा, **हरमाड़ा**

सस्नेह निमन्त्रण

जिनवाणी परिवार में शामिल होकर अपना सहयोग दीजिये

जिनवाणी - प्रचार - प्रसार : योजना

'जिनवाणी' प्रचार-प्रसार योजना के अन्तर्गत एक आजीवन सदस्यता का

शुल्क २५१) रु. अथवा पाँच वार्षिक शुल्क २०)रु. प्रति व्यक्ति अर्थात् १००)रु. वर्ष के भेजकर एक वर्ष की **'जिनवाणी'** सदस्यता निःशुल्क प्राप्त कर सकते हैं।

आप सदस्यों को अलग-अलग या आप के नगर से बाहर भिजवाना चाहें तो शुल्क राशि के साथ ही उनके नाम पते भी लिख भेजें ताकि उनके नाम की रसीद जारी करके अंक सीधे उन्हें बुक पोस्ट डाक से भेजे जा सकें।

उपहार प्रति किस नाम पते पर भेजी जाये, इसका उल्लेख अलग से करें।

मन्त्री
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार, जयपुर

अक्षय तृतीया पर विशेष समारोह

मदनगंज (किशनगढ़) दिनांक ८ मई, १९८९ को जैनाचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० के सान्निध्य में अक्षय तृतीया का पावन पुनीत पर्व त्याग-तप-दान के साथ सानन्द सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर १५ भाई-बहिनों के पिछले एक वर्ष तक निरन्तर एक दिन छोड़ एक दिन (एकान्तर) उपवास तप के पारणक हुए। श्री रिखबराजजी कांकरिया, मद्रास ने तपस्वी भाई-बहनों को अ०भा० जैन विद्वत् परिषद् द्वारा प्रकाशित ट्रैक्ट साहित्य भेंट किया और उन्हें अपनी ओर से आजीवन ट्रैक्ट साहित्य सदस्य बनाया। आस-पास के ग्राम-नगर-शहरों के हजारों भाई, बहिन उपस्थित थे। अ० भा० जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से विशिष्ट समाजसेवियों का सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया।

आचार्यश्री के आचार्य पद ग्रहण दिवस को हीरक जयन्ती के रूप में मना कर भक्तों ने अपने आराध्य आचार्य प्रवर की संयम-साधना, साहित्य-आराधना और उनके व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर प्रकाश डाला एवं उनके दीर्घायु जीवन की कामना की।

आचार्य श्री की सद्प्रेरणा से निर्धन एवं होनहार छात्रों के अध्ययन की व्यवस्था के लिए श्री घीसूलालजी बम्ब ने एक लाख रु. अपनी ओर से देकर एक ट्रस्ट बनाने की घोषणा की।

अक्षय तृतीया पर आचार्यश्री के आज्ञानुवर्ती संतों-सतियों के प्रभावशाली प्रवचन हुए। बहुत से भाई-बहिनों ने त्याग-तप के नियम स्वीकार किये।

समारोह की अध्यक्षता डॉ० सम्पतसिंह भांडावत ने की और विशिष्ट अतिथि थे श्री मोफतराजजी मुणोत, बम्बई। स्थानीय संघ अध्यक्ष श्री रतनलाल जी मारू ने आगन्तुकों का स्वागत किया।

जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के सान्निध्य में भागवती दीक्षा सानन्द सम्पन्न

सुश्री विमलेश जैन

मदनगंज-किशनगढ़—मण्डावर-महुआ रोड के श्री मदनमोहनजी जैन एवं श्रीमती शकुन्तला जैन की सुपुत्री **सुश्री विमलेश जैन** ने आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के सान्निध्य में ११ मई, १९८९ को जैन भागवती दीक्षा अंगीकार की।

सुश्री विमलेश का पूरा परिवार सुशिक्षित है। आपके भाई अजय एवं विजय एम. एस-सी. तथा संजय बी. एस-सी. हैं। आपकी दो बहिनें श्रीमती कमलेश एवं मिथिलेश जैन समृद्ध परिवार में विवाहित हैं। एक बहिन अंजू हायर सैकण्डरी है। आपने सैकण्डरी परीक्षा पास की है। आपको बचपन से ही धार्मिकता की ओर विशेष रुचि रही है व कई सूत्र, स्तवन व थोकड़े आपको कंठस्थ हैं।

समारोह की अध्यक्षता कलकत्ता विश्वविद्यालय के पूर्व प्रो० कल्याणमल जी लोढ़ा ने की एवं मुख्य अतिथि थे राजस्थान सरकार के खनिज सचिव श्री डी. आर. मेहता। हजारों लोगों ने विरक्ता बहिन की शोभा-यात्रा में उत्साह-पूर्वक भाग लिया। प्रातः १०.३५ बजे आचार्यश्री ने दीक्षा पाठ पढ़ाया। विरक्ता बहिन का एवं उनके माता-पिता का संघ की ओर से सार्वजनिक अभिनन्दन किया गया। प्रो० कल्याणमलजी लोढ़ा और श्री डी. आर. मेहता ने विरक्ता बहिन को विशिष्ट संयम-साधक आचार्य प्रवर की श्रमण-परम्परा में चारित्र धर्म की साधना में गति करने को एक साहसिक कदम बताया। समारोह में संत-सतियों के प्रवचन एवं आचार्य श्री का उद्बोधन पाकर कई लोगों ते व्रत-नियम स्वीकार किये। उपस्थित जन समुदाय ने विरक्ता बहिन तथा नव दीक्षिता महासती को हृदय की असीम श्रद्धा से वन्दन कर वीरांगना की तरह संयम मार्ग में गति करने की मंगल कामना की।

शोक-श्रद्धांजलि

बिलाड़ा—यहाँ के धर्मप्रेमी निष्ठावान सुश्रावक श्री पारसमलजी खींवसरा का १८ फरवरी को ५६ वर्ष की अवस्था में नाकोड़ा तीर्थ स्थान पर हृदयगति रुक जाने से आकस्मिक निधन हो गया। आप आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० एवं तपस्वीराज श्री चम्पालालजी म० सा० के श्रद्धावान् भक्त थे। ३६ वर्ष की अवस्था में ही आपने सजोड़े शीलव्रत अंगीकार कर लिया था। आप प्रतिदिन कम से कम पाँच सामायिक नियमित रूप से करते थे। महीने में दो उपवास व प्रतिदिन एकासना आप काफी समय से करते थे। ८, ११ व १५ की तपस्याएँ आपने कई बार कीं। मानव-कल्याण एवं जीवदया की प्रवृत्तियों में आप तन, मन, धन से सहयोगी थे। पर्युषण पर्व में स्वाध्यायी के रूप में बाहर जाकर आप अपनी सेवाएँ देते थे। बिलाड़ा, बाणगंगा गौशाला के आप संस्थापक थे। विगत १० वर्षों से आप इसके प्रति पूर्ण सर्मपित थे।

गुडूर (आंध्र प्रदेश)—यहाँ श्री शांतिलालजी नाहर का २७ मार्च को ५० वर्ष की आयु में हृदय गति रुक जाने से आकस्मिक निधन हो गया। आप श्री धर्मचन्दजी नाहर के छोटे भाई थे और मूल निवासी कोसाणा के थे। आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के प्रति आपकी अनन्य श्रद्धाभक्ति थी। आप प्रतिदिन सामायिक स्वाध्याय करते थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं।

दुर्ग—यहां की वयोवृद्ध धर्मपरायण श्राविका श्रीमती सोनीबाई देशलहरा का १०१ वर्ष की आयु में १५ अप्रैल को संथारा त्याग पच्चखाण-पूर्वक निधन हो गया। आपका जीवन अत्यन्त सरल, मृदु एवं तपनिष्ठ था। प्रतिवर्ष सावन भादवा में एकान्तर, कभी बेले–२ व कभी तेले–२ करती थीं। ८, ११ व १५ की आपने कई तपस्याएं कीं। आपने स्व० श्रीमद् जवाहराचार्य, श्री गणेशाचार्य, पं० र० श्री समरथमलजी म० एवं वर्तमान आचार्य श्री नानेश आदि अनेक सन्त-सतियों की सेवाएँ कीं। आप स्व० श्री हंसराजजी देशलहरा की धर्मपत्नी थीं। दुर्ग के मूलचन्दजी देशलहरा, पूर्व अध्यक्ष मध्य प्रदेश कांग्रेस कमेटी की आप मातुश्री थीं। आप अपने पीछे पाँच पीढ़ियों का भरा-पूरा परिवार छोड़कर गयी हैं।

जयपुर—स्व० श्री गाढ़मलजी मुणोत की धर्मपत्नी श्रीमती सुन्दर-देवी मुणोत का २२ अप्रैल को ७८ वर्ष की आयु में संथारापूर्वक निधन हो गया। आप धार्मिक वृत्ति की महिला थीं। सुबोध कॉलेज के प्रिंसीपल एवं

वरिष्ठ स्वाध्यायी डॉ० पदमचन्द मुणोत की आप माताजी एवं प्रसिद्ध जीवदया प्रेमी, प्राणी मित्र श्री चुन्नीलालजी ललवानी की आप सास थीं।

बीकानेर—प्रमुख समाजसेवी स्व० रामरतनजी कोचर की पुत्रवधू एवं श्री कर्णसिंहजी कोचर की धर्मपत्नी श्रीमती भगवन्ती देवी का १२ अप्रैल को दुःखद निधन हो गया। आप कैन्सर से पीड़ित थीं। वीर बालिका कॉलेज, जयपुर की संस्कृत प्राध्यापिका तथा जैन, धर्म, दर्शन की प्रमुख विदुषी कु० सरोज कोचर की आप माता थीं।

जयपुर—उदयपुर के मूल निवासी प्रमुख सामाजिक कार्यकर्ता श्री जवाहरलालजी बरड़िया का सड़क दुर्घटना में लगभग ६० वर्ष की आयु में दुःखद निधन हो गया। आप बड़े सरल स्वभावी, मिलनसार और धर्म-परायण व्यक्ति थे।

जोधपुर—शास्त्र मर्मज्ञ सुज्ञ श्रावक श्री मदनराजजी मेहता (बिनाइकिया) का ७० वर्ष की आयु में २२ अप्रैल, १९८९ को देहावसान हो गया। आप आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के अनन्य भक्त एवं श्रद्धालु श्रावक थे। आप कई बोल, थोकड़ों और शास्त्रों के ज्ञाता थे। आप संत-सतियों व विरक्ता बहिन-भाइयों और श्रावक-श्राविकाओं को धार्मिक अध्ययन कराने में विशेष रुचि रखते थे। आप वरिष्ठ स्वाध्यायी थे। सामायिक और स्वाध्याय-साधना के साथ निरन्तर अपनी आत्मा का चिन्तन करना और राग-द्वेष की प्रवृत्ति कम हो, इसका सदा लक्ष्य रखते थे। नगर परिषद् जोधपुर में सेवारत रहते हुए आप नियमित सामायिक प्रतिक्रमण आदि धार्मिक क्रियाएँ करते थे और सेवा-निवृत्ति के बाद तो आपका अधिकतर समय ज्ञान-ध्यान और आत्म-चिन्तन में ही बीतता था। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं। आपके सुपुत्र श्री पुष्पराज जी, श्री गौतमराजजी एवं श्री विजयराजजी की धार्मिक भावना प्रशंसनीय है।

कानपुर—११ अप्रैल, १९८९ को सरल हृदय सुश्रावक श्री सज्जन-राजजी बाफणा सुपुत्र स्व० सुश्रावक श्री जवाहरलालजी बाफणा एवं सुपौत्र स्व० सुश्रावक श्री जोगीदासजी बाफणा का हृदयाघात से असामयिक निधन हो गया। आप आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म० सा० के अनन्य भक्त थे। आप प्रमुख दाल मिलर व अग्रणी उद्योगपति थे। आप समाज-सेवी सुश्रावक श्री भँवरलालजी बाफणा (मंत्री, अ० भा० श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ ट्रस्ट) के अनुज थे।

जोधपुर—भोपालगढ़ निवासी सुश्रावक श्री बादलचन्दजी बाफणा सुपुत्र स्व० श्री जोगीदासजी बाफणा का दिनांक १ अप्रेल, १९८९ को असामयिक निधन हो गया। आप आचार्यप्रवर श्री हस्तीमलजी म० सा० के अनन्य भक्त एवं जीवदया के लक्ष्य को समर्पित कर्मठ समाजसेवी थे। आपने भोपालगढ़ में श्री जीवदया समिति के अध्यक्ष के रूप में कार्य-संचालन एवं अमरबकरा शाला को नूतन रूप प्रदान करने में तन, मन, धन से अविस्मरणीय सेवा दी।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति हम सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 'जिनवाणी' एवं अ० भा० जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए शोक-विह्वल परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

—सम्पादक

साभार प्राप्ति स्वीकार

२४७८. श्री विजय राइस मिल्स, कोप्पल
२४७९. मैसर्स यू. यू. एण्टरप्राइजेज, मद्रास
२४८०. मैसर्स मेरीकोर इलैक्ट्रिकल्स, मद्रास
२४८१. मैसर्स अशोक कटपीस सेन्टर, वादरावाड़ी
२४८२. श्री विमलकुमारजी जैन, कानपुर
२४८३. श्री सुरेशचन्दजी मोहनलालजी मेहता, सोलसुम्बा
२४८४. श्री नेमीचन्दजी श्रीमाल, जयपुर
२४८५. श्री सम्पतराजजी स्वरूपचन्दजी बाफणा द्वारा—मैसर्स एस० सी० बाफणा एण्ड कम्पनी, सूरत (गुजरात)

"जिनवाणी" को सहायतार्थ भेंट

१,०००/- श्रीमती सम्पत देवी बम्ब एवं समस्त बम्ब परिवार जयपुर की ओर से
पूज्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी म० सा० के बम्ब सदन, जयपुर में दर्शन हेतु असीम कृपा करने के उपलक्ष में भेंट।

२५१/- श्री रत्न हितैषी श्रावक संघ, कोसाणा (जोधपुर)
परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर पूज्य १००८ श्री हस्तीमलजी म० सा० के वर्ष २०४६ का चातुर्मास कोसाणा में करने की स्वीकृति प्रदान करने की खुशी में भेंट।

२५१/– श्री भँवरलालजी कल्याणमलजी बाफणा, भोपालगढ़ (जोधपुर)
भाई श्री सज्जनराजजी बाफणा की पावन स्मृति में भेंट ।

२५१/– श्री कांतिलालजी सुमतिचन्दजी बाफणा, भोपालगढ़ (जोधपुर)
पूज्य पिताजी श्री बादलचन्दजी बाफणा की पावन स्मृति में भेंट ।

५१/– श्री मूलचन्दजी नोरतनलालजी देशलहरा, दुर्ग (म० प्र०)
अपने पूज्य माताजी स्व० श्रीमती सोना बाई की पुण्य स्मृति में भेंट ।

५१/– श्रीमती कंचन बाईजी मेहता, उदयपुर
अपने सुपौत्र श्री मनीष मेहता (सुपुत्र श्री कर्णसिंहजी मेहता) का शुभ विवाह सौ. कां. वर्षा के साथ सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में भेंट ।

५१/– मैसर्स फूलचन्द मानकचन्द एण्ड कम्पनी, चौपदा (जलगाँव)
चि. प्रवीणचन्दजी सुपुत्र श्री आनन्दराजजी का शुभ विवाह सौ. कां. प्रभा सुपुत्री श्री भँवरलालजी कोचर के साथ सानन्द सम्पन्न होने की खुशी में भेंट ।

५०/– मैसर्स वेताला कोनवान्स कम्पनी, मद्रास
श्रीमती मंजु झाबक की पुण्य स्मृति में भेंट ।

११/– श्री उच्छबरायजी जैन सुपुत्र श्री लक्ष्मीचन्दजी जैन, अलीगढ़, रामपुरा (टोंक)
७२ घंटे तक नवकार मंत्र का जाप एवं सुपुत्र श्री बाबूलालजी, पुत्र-वधू श्रीमती सुशीला देवी के तेले करने के उपलक्ष में भेंट ।

११/– श्री दानमलजी कांकरिया, जोधपुर
पूज्य पिताजी श्री विजयराजजी सा० कांकरिया की पुण्य स्मृति में भेंट ।

११/– श्रीमती गुणवंती सुखलेचा, जयपुर
पूज्य पिताजी श्री विजयराजजी सा० कांकरिया की पुण्य स्मृति में भेंट ।

५०१/– रु. साहित्य प्रकाशन के आजीवन सदस्यता हेतु

३४७. श्रीमती कमला कुमारी खाबिया, भोपाल (म० प्र०)
३४८. श्री सम्पतराजजी उमरावमलजी बाफणा, जोधपुर

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर

आपके लिए उपयोगी साहित्य जो उपलब्ध है

क्र.सं.	नाम पुस्तक		लेखक/सम्पादक/अनुवादक	मूल्य
१.	गजेन्द्र व्याख्यान माला भाग–१, ३, ६	:	”	४.५०,५.०० व ७.००
२.	उत्तराध्ययन सूत्र भाग-१–२	:	”	१५.०० ३५.००
३.	व्रत प्रवचन संग्रह	:	पं. र. श्री हीरामुनिजी	४.००
४.	जैन संस्कृति और राजस्थान	:	डॉ० नरेन्द्र भानावत	१५.००
५.	स्वाध्याय स्तवनमाला	:	सम्पतराज डोसी	११.००
६.	सप्त चरित्र संग्रह भाग–२	:	”	५.००
७.	आनुपूर्वी	:		०.२५
८.	सामायिक सूत्र	:		१.००
९.	आध्यात्मिक पाठावली	:	पं० शशिकान्त झा	१.००
१०.	दीक्षा कुमारी का प्रवास	:	अनु० लालचन्द्र जैन	१५.००
११.	प्रथमा पाठ्यक्रम	:	पार्श्वकुमार मेहता	२.००
१२.	जैनदर्शन : आधुनिक दृष्टि	:	डॉ. नरेन्द्र भानावत	२०.००
१३.	जैन विवाह विधि	:	जशकरण डागा	१.००
१४.	कर्म सिद्धान्त	:	डॉ. नरेन्द्र भानावत	४०.००
१५.	कर्म ग्रन्थ	:	सं. केवलमल लोढ़ा	८.००
१६.	उपमिति भवप्रपंच कथा	:	सिद्धर्षिगणि	१५०.००
१७.	श्रमण आवश्यक सूत्र	:	पार्श्वकुमार मेहता	२.००
१८.	स्वाध्याय शिक्षा (भाग १ से ६)	:	श्रीचन्द सुराना 'सरस'-ज्ञान वृद्धि हेतु	अमूल्य
१९.	निर्ग्रन्थ भजनावली	:	गजसिंह राठौर	२०.००
२०.	अन्तगड दसा सुतं	:	श्री धर्मचन्द जैन	२०.००
२१.	श्रावक सामायिक प्रतिक्रमण सूत्र (मूल)	:	श्री पार्श्वकुमार मेहता	१.००
२२.	जैन तमिल साहित्य और तिरुक्कुरल	:	डॉ. इन्दरराज बैद	२०.००
२३.	अपरिग्रह : विचार और व्यवहार	:	डॉ. नरेन्द्र भानावत	५०.००
२४.	श्रावक धर्म और समाज	:	डॉ० नरेन्द्र भानावत	१५.००
२५.	जैन बाल शिक्षा	:	कन्हैयालाल लोढ़ा	१.००
२६.	ज्ञान-प्रसार पुस्तकमाला (ट्रेक्ट साहित्य) भाग ३१ से ५२	:	विविध लेखक प्रत्येक का मूल्य	२.००

अपनी बात :
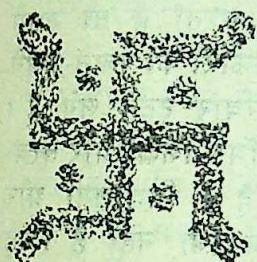
स्कूल-कॉलेजों में जैन तत्त्व-ज्ञान का शिक्षण

□ डॉ० नरेन्द्र भानावत

विगत वर्षों में वैज्ञानिक क्षेत्र में विशेष तकनीकी का विकास होने के कारण भौतिक, रासायनिक आदि क्षेत्रों में अप्रत्याशित तरक्की हुई है। इसका प्रभाव जीवन-यापन के विभिन्न साधनों पर पड़ा है और उपभोक्ता संस्कृति का नित-नूतन विकास हो रहा प्रतीत होता है। पर इसके साथ-साथ जीवन में सुख-शान्ति और संप के विकास और अनुभव की मांग भी बढ़ती जा रही है। यह माँग वस्तु या पदार्थ से कभी पूरी होने वाली नहीं है। इसका सम्बन्ध मानसिक चेतना और जीवन के प्रति नई दृष्टि के उन्मेष से है। चेतना के विकास और दृष्टि के उन्मेष के लिए सही तत्त्व-ज्ञान और सम्यक् श्रद्धा की आवश्यकता है। भारतीय दार्शनिक तत्त्व-ज्ञान और चिन्तन की परम्परा इस ज्ञान को पूरा करने में सक्षम है। शुष्क बौद्धिकता और पश्चिम के आयातीत क्षणवादी चिन्तन ने भारतीय चिन्तन की तेजस्विता और अखण्ड, अक्षय, अव्यावाध आनन्दानुभूति को बाधित किया है। आज आवश्यकता इस चिन्तन-प्रवाह को सही प्ररिप्रेक्ष्य में जानने-परखने की है।

जैन तत्त्व-ज्ञान भारतीय चिन्तन-धारा का महत्त्वपूर्ण पक्ष है। इसको समझने और हृदयंगम करने का तरीका मुख्य रूप से पारम्परिक ही रहा है। नव-जागरण के परिणामस्वरूप ज्ञान-विज्ञान की जो नई शाखा-प्रशाखाएँ प्रस्फुटित हुई हैं, इनके परिप्रेक्ष्य में जैन तत्त्व-ज्ञान को समझना आवश्यक है। दूसरे शब्दों में सामाजिक और सांस्कृतिक संदर्भों में जैन धर्म-दर्शन की व्याख्या-विवेचना आवश्यक है।

स्वतन्त्रता के बाद व्यावहारिक शिक्षण का जिस ढंग से द्रुत विकास हुआ है और गैर-सरकारी शिक्षण-संस्थाओं को जिस ढंग से सरकारी अनुदान मिलने लगा है, उसके परिणाम-स्वरूप धर्म निरपेक्षता के नाम पर धार्मिक और नैतिक शिक्षण का स्रोत अवरुद्ध ही नहीं हुआ, प्रत्युत् सूख सा गया है। इसके परिणाम-स्वरूप ज्ञान को आचरण में उतारने की सम्भावनाएँ कम हो

गई हैं, मिट सी गई हैं जिससे हर क्षेत्र में कथनी-करनी के अन्तर और द्वैत व्यक्तित्व का विकास हुआ है।

धर्म और नैतिकता का चिन्तन जब अन्तर को स्पर्श करता है तो उससे आन्तरिक व्यक्तित्व की बुनावट पक्की होती है, सद्-संस्कारों को फलने-फूलने का अवसर मिलता है। आर्थिक दबाव के कारण संयुक्त परिवार टूटने लगे हैं। दादी, नानी आदि बुजर्गों के द्वारा कथा रूप में जो धार्मिक शिक्षा और तत्त्व-ज्ञान मिला करता था, वह परम्परा आज टूट सी गई है। विद्यालयों और महाविद्यालयों में इस प्रकार के शिक्षण की कोई व्यवस्था नहीं है। यह चिन्तनीय है।

जैन परम्परा में ज्ञान-दान का विशेष महत्त्व है। शायद ही कोई कस्बा और नगर ऐसा हो जहाँ जैन समाज द्वारा संचालित छोटा-बड़ा शिक्षण संस्थान न हो। जब से इन संस्थाओं को सरकारी अनुदान मिलने लगा है वहाँ धार्मिक शिक्षण प्रतिबन्धित सा हो गया है। शिक्षा देना गणतन्त्रात्मक राज-व्यवस्था में मुख्यत: सरकार का दायित्व है। सरकारी शिक्षण-संस्थाओं से गैर-सरकारी शिक्षण-संस्थाओं में जो वैशिष्ट्य रहा है, वह अनुशासन, सदाचरण, नियम-बद्धता और चारित्र निर्माण का वैशिष्ट्य है। यह वैशिष्ट्य नैतिक शिक्षण और भारतीय तत्त्व-ज्ञान की सांस्कृतिक चेतना से जुड़ाव होने पर ही बना रह सकता है। समाज द्वारा शिक्षण-व्यवस्था में जो धन लगाया जाता है, उसका परिणाम व्यक्तित्व-निर्माण में लक्षित होना चाहिए। उसके लिए शिक्षण संस्थाओं के व्यवस्थापकों और अधिकारियों को इस प्रकार का सार्वजनीन पाठ्यक्रम बनाना चाहिये जो रुचिशील छात्रों को जैन तत्त्व-ज्ञान सिखा सके। यदि समय-चक्र (टाइम-टेबल) में इसके लिये व्यवस्था न बैठती हो तो 'जीरो पीरियड' लगाकर जैन तत्त्व-ज्ञान का शिक्षण कराना चाहिये। सर्टिफिकिट और डिप्लोमा कोर्स इस प्रकार का बनाया जाये जो तात्त्विक ज्ञान, जैन इतिहास, संस्कृति और समाज का परिचय कराने के साथ-साथ जीवन को व्यसन मुक्त, संयमपूर्ण, सादगीनिष्ठ और सदाचारी बनाने में प्रेरक बने। संस्था से सम्बद्ध छात्रों के अतिरिक्त यदि कोई अन्य छात्र भी इस पाठ्यक्रम में सम्मिलित होना चाहें तो उन्हें छूट हो। उनकी त्रैमासिक अथवा अर्द्धवार्षिक परीक्षाएँ निश्चित हों। इन परीक्षाओं में जो छात्र उत्तीर्ण हों उन्हें प्रमाण-पत्र दिये जाएँ और समाज से सम्बद्ध विभिन्न नियुक्तियों में उन्हें वरीयता दी जाये। इससे वैज्ञानिक दृष्टि का विकास होगा और नव-अध्यात्मवाद की प्रेरणा मिलेगी। स्वयं का जीवन तो सादा, सरल और सदाचारनिष्ठ होगा ही।

पराए घर का मोह क्यों ?

□ श्री देवीचन्द भंडारी

जन्म और मरण के बीच के काल में जो चीजें अपनी नहीं, अपने हित में नहीं, उनके मोह में पड़कर प्राणी उसी में ऐसा लीन हो जाता है कि अपनी आत्मा को ही भूल जाता है, अपना कर्तव्य भूल जाता है। गलत मार्ग पर चलकर अपने कष्टों को और बढ़ा लेता है। अपना जन्म-मरण का चक्र बढ़ा लेता है।

अपनी आत्मा के गुणों का, उसके रूप का एवं उसके सही मार्ग-दर्शक प्रभु का विचार करने से चित्त के सब विकार दूर होंगे, चित्त निर्विकार और निर्मल बनेगा। मानव ने भौतिक जड़ वस्तुओं से जो ममत्व बढ़ाया है वह कम होगा। वैराग्य प्रवृत्ति बढ़ेगी। समभाव आत्मा में प्रकट होगा। इससे जड़ भौतिक वस्तुओं के संयोग- वियोग में दुःख-सुख के अनुभव से आत्मा मुक्त होगी। प्रतिपल वह आत्मिक सुखानुभव होगा, जिसकी किसी जड़ पदार्थ से प्राप्त सुखाभास से तुलना नहीं की जा सकती। मीरा आदि संतों को इस श्रेणी में रख कर देखा जा सकता है। स्थायी आनन्द तो प्रभु मिलन में ही है, प्रभु को एक मात्र अपना मानने में ही है।

प्रभु ही अपना है। हम दुःख में उसी को याद करते हैं परन्तु सुख में याद न करने से दुःख पाते हैं। कवि ने ठीक ही कहा है

दुःख में सुमिरन सब करें, सुख में करे न कोय।
सुख में सुमिरन जो करे, तो दुःख काहे को होय।

पर पदार्थों को अपना मानना या उन पर मोह-ममत्व रखना ही दुःख का कारण है। 'स्व' में रमण करते हुए प्रभु-भजन में लीन रहने में ही सच्चा आनन्द है।

घर-घर में स्वाध्याय मन्दिर बनाइये

—श्री चैतन्यमल ढढ्ढा

बढ़ते जा रहे शिक्षा प्रसार, बौद्धिक क्षमता एवं वैचारिक संक्रमण काल के इस युग में बोध दृष्टि का अभाव मनुष्य में भ्रान्ति का मुख्य कारण है। परिणाम-स्वरूप आज के विकसित युग का व्यक्ति बहुत कुछ जानकर पढ़ लिखकर भी जीवन और जगत् की सामान्य सी समस्याओं के निराकरण में अपने आपको असहाय अनुभव करता है।

जब व्यक्तिगत जीवन में लोगों का पठन पाठन और तद्जन्य चिन्तन मनन अवरुद्ध हो जाता है तो व्यक्ति में भ्रम संशय जन्य विकार हावी होने लगते हैं। यह मानसिक व्याधि अन्य सभी कष्टों से बढ़कर है। स्वाध्याय की परम्परा विछिन्न होने से समाज में अन्ध-विश्वास, अन्ध-श्रद्धा, अविवेक जन्य धारणाओं को बल मिलने लगता है। लोग शास्त्रोक्त मार्ग से अलग होकर मनमाना व्यवहार करने लगते हैं। मनमाना धर्म पढ़ा जाने लगता है। यह बौद्धिक संकरता, व्यक्ति और समाज को आत्मघाती प्रवृत्तियों की ओर अग्रसर करती है।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल अपने प्रकाशित साहित्य के अध्ययन, चिन्तन मनन पर जोर देकर उसके प्रवाह को अक्षुण्ण रखने की प्रेरणा देता है।

अतएव आपसे नम्र निवेदन है कि प्रत्येक परिवार में एक स्वाध्याय कक्ष का होना अन्य आवश्यकताओं से अधिक महत्त्वपूर्ण है। छोटासा पारिवारिक पुस्तकालय, घरेलु लाइब्रेरी, स्वाध्याय मन्दिर, परिवार जनों के मानसिक विकास जीवन शोधन, लोक व्यवहार की पात्रता हासिल करने के लिये महत्त्वपूर्ण आधार है। अच्छे साहित्य का संकलन भी आज के प्रचार-प्रसार–विज्ञापनबाजी के युग में बड़ा कठिन है।

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल अपने सदस्यों को अच्छे साहित्य की जानकारी और उपलब्धि में सहयोग के लिये तत्पर है तथा इस ज्ञान यज्ञ में सीमित साधन से अनुष्ठान रत है। इसे अधिक व्यापक एवं जन-जन तक पहुँचाने के लिए सभी ज्ञान-निष्ठ, उदार हृदय व्यक्तियों के सहयोग का आह्वान है। उन सभी उदारमना सदस्यों को सादर आमन्त्रण है जो इस पुण्य कार्य में अपना स्वेच्छया सहयोग देना चाहते हैं।

मंत्री

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल,

जयपुर,

प्रवचनामृत :
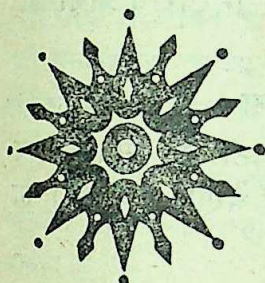
श्रावक की साधना*

□ आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा.

धर्म के दो भेद किये गये हैं (१) आगार धर्म (गृहस्थों का) और (२) अनगार धर्म (मुनियों का)।

जैसा कि 'स्थानांग सूत्र' में कहा है—

दुविहे धम्मे पण्णत्ते आगार धम्मे चेव अणगार धम्मे चेव।

आगार धर्म के कई दर्जे हैं। जिससे साधना करने के उत्सुक सभी श्रेणी के लोग लाभान्वित हो सकते हैं।

गृहस्थ संसार की प्रापंचिक लीलाओं में फंसा हुआ रहता है। इनमें साधारण लोग तो आगे बढ़ना चाहते ही नहीं फिर भला वे किस प्रकार बढ़ सकते हैं जो लोग अज्ञान के पर्दे में बन्द हैं—उन्हें आत्म-हित की उत्कण्ठा नहीं होना स्वाभाविक है। हाँ, जिन्हें कुछ मिला है, जिनके मोहनीय कर्म की प्रकृतियों का क्षयोपशम हुआ, उन्हीं को ज्ञान के प्रकाश की एवं जीवन में साधना की ओर प्रेरित होने की अभिलाषा होती है।

कभी-कभी ऐसा भी होता है कि मन चलता है, पर टट्टू नहीं चलता। इन सब प्रकार के साधकों की सुविधा के लिए भगवान ने साधकों की तीन श्रेणियां बना दी हैं।

(१) जघन्य, (२) मध्यम और (२) उत्कृष्ट।

हम श्रावकों का श्रेणी-विभाजन कर रहे हैं। आज तीनों प्रकार के श्रावकों के कर्त्तव्यों का दिग्दर्शन किया जायेगा। जो आपके लिए उपयोगी सिद्ध होगा, ऐसा मेरा विश्वास है।

१. जघन्य श्रावक

जघन्य श्रावक में निम्नलिखित ३ बातें होनी आवश्यक हैं :—

*आचार्य श्री के प्रवचन से संकलित।

अउट्टि थूल हिंसाई, मज्जमंसाइ चाइओ ।
जहन्नओ सावओ होइ, जो नमुक्कार-धारओ ।

(१) स्थूल हिंसा का त्याग, अर्थात् जान-बूझ कर निरपराध प्राणी की हत्या नहीं करना ।

(२) मदिरा, मांस. अण्डे आदि का सेवन नहीं करना ।

(३) नमस्कार मन्त्र का धारक होना, पंच परमेष्ठी के सिवाय अन्य किसी को वंदनीय नहीं मानना । ऐसा श्रावक सबसे छोटी श्रेणी (जघन्य) का श्रावक है ।

२. मध्यम श्रावक

मध्यम श्रावक की आहार-शुद्धि अनिवार्य है क्योंकि आहार-शुद्धि विचार-शुद्धि का मूल है और विचार-शुद्धि होने पर ही आचार-शुद्धि सम्भव है ।

विचार-शुद्धि के बिना आचार-शुद्धि बनावटी है जो टिकाऊ नहीं होती । वैसी आचार-शुद्धि सर्कस के शेर की तरह होती है । जैसे सर्कस का शेर बकरी के साथ रहता है, किन्तु वह विचारों की शुद्धता के कारण नहीं, किन्तु केप्टिन के कोड़े के डर के कारण ऐसा करता है । यह शुद्धि चिरस्थायी कभी नहीं हो सकती ।

इसी प्रकार यदि आप लोक-लाज से, राजा के भय से या गुरुजनों की फटकार के भय से आचार-शुद्धि रखते हैं—उसमें आपके मनोयोग का समर्थन नहीं है तो ऐसी आचार-शुद्धि बालू के ढेर पर बने हुए महल के समान है जो न जाने कब ढह जाय ।

आहार-शुद्धि विचार-शुद्धि का पाया है । कभी-कभी अपवाद भी संभव है, कुछ तामसिक आहार भोगी भी दयालु मिल जाते हैं—किन्तु इससे इसको सिद्धान्त रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता और न वह मूल-तासीर में ही रद्दोबदल कर सकता है ।

मध्यम श्रावक में निम्नलिखित ३ बातें होनी आवश्यक हैं :—

(१) जो धर्म योग्य २१ गुणों[1] का धारक हो । (२) जो नित्य षट

---

१. इक्कीस गुणों के नाम इस प्रकार हैं—
(१) पाप से लज्जित होने वाला, (२) दयालु, (३) प्रशांत, (४) प्रतीतिवंत. (५) पर दोष को ढकने वाला, (६) परोपकारी, (७) सौम्य दृष्टि, (८) गुणग्राही, (९) शिष्टपक्षी, (न्यायपक्षी), (१०) मिष्टवादी. (११) दीर्घविचारी, (१२) विशेषज्ञ: (१३) रसज्ञ, (१४) तत्वज्ञ, (१५) धर्मज्ञ, (१६) न दीन, (१७) न [illegible], (१८) [illegible] [illegible], (१९) सहज विनीत, (२०) पाप क्रिया से अतीत, (२१) लब्ध लक्ष्य ।

कर्म[1] की साधना करने वाला हो और (३) जो बारह व्रतों[2] का धारक हो।

(३) उत्कृष्ट श्रावक

उत्कृष्ट श्रावक को पडिमाधारी श्रावक कहते हैं। वैष्णव परिभाषा में पडिमाधारी श्रावक को "वानप्रस्थाश्रमी" कहा जाता है। वह गृहस्थ होते हुए भी संन्यास जीवन व्यतीत करता है। दूसरे शब्दों में संन्यासी-जीवन या त्यागी-जीवन का अभ्यास करता है।

श्रावक के उत्कृष्ट आचारों का वर्णन करने के प्रसंग में प्रतिमाधारी श्रावक आनन्द का वर्णन किया गया है। श्रावक की ११ प्रतिमायें निम्न प्रकार हैं :—

(१) दंसण सावए, (२) कयव्वयकम्मे. (३) सामाइयकडे, (४) पोसहोवासनिरए, (५) दिवा बंमयारी रत्ति परिमाण कडे, (६) दियाविराओ वि बंमयारी, (७) सचित्त परिण्णाए, (८) आरंभ परिण्णाए, (९) पेस परिण्णाए, (१०) उद्दिट्ठभत्त परिण्णाए, (११) समणभूए।

उत्कृष्ट श्रावक के लक्षणों का संकेत करके मध्यम श्रावक के वर्णन में षट्कर्मों की ओर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहता हूँ।

देव आराधना, स्मरण, भजन और ध्यान के द्वारा वीतराग स्वरूप का चिन्तन या आज्ञा पालन ही निर्दोष देवभक्ति है। गुरु सेवा का समझना आवश्यक है।

स्वाध्याय का अर्थ कभी-कभी अखबार, उपन्यास पढ़ना या शास्त्र मात्र पढ़ लेना समझा जाता है। किन्तु इतने से ही स्वाध्याय का अर्थ समीचीन नहीं होगा। स्वाध्याय शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार है :—

(१) सु + आ + अध्याय = अर्थात् चारों ओर के अच्छे विचारों का अध्ययन करना।

---

१. षट्कर्मों के नाम इस प्रकार हैं —
(१) देव भक्ति (देव आराधना), (२) गुरु सेवा, (३) स्वाध्याय, (४) संयम, (५) तप और (६) दान।

२. बारह व्रतों के नाम ये हैं :—
(१) अहिंसा. (२) सत्य, (३) अचौर्य, (४) ब्रह्मचर्य, (५) अपरिग्रह, (६) दिशिव्रत, (७) उपभोग-परिभोग, (८) अनर्थदण्ड, (९) सामायिक, (१०) देशावकासिक, (११) पडिपुन्नपौषध, (१२) अतिथि संविभाग।

(२) स्व + अध्याय = अपना अध्ययन करना ।

यहाँ प्रश्न उठ सकता है अपना अध्ययन क्या ? और उसे कैसे करना ?

आप लोग 'पर' का अध्ययन तो सदैव करते ही हैं, किन्तु जरा अपने को पढ़ना सीखें । सोचें, जहां आप खड़े हैं और लोग जैसा आप को समझते हैं, क्या ठीक वैसे ही आप हैं ? या लोग आपको समझने में धोखा खा रहे हैं ?

यह है स्वाध्याय । आप महाजन हैं । बनिये हैं । मारवाड़ की एक कहावत है :—

अग्गम बुद्धि बाणिया. पाछए बुद्धि जट्ट ।

आप आगे की सोचने वाले बनिये हैं । खेद है कि आप लोग पीछे की बात सोचने वाले हो गये हैं ।

हमारे पुरखे श्रेणिक, संप्रति और भामाशाह थे, सीता और चन्दनबाला थीं । परन्तु हम क्या हैं, और क्या बनने जा रहे हैं, इधर जरा ध्यान भी दिया जाता है ?

यह विवेक-जागृति या स्वाध्याय तभी संभव है, जब बचपन से ही ज्ञान की गंगा में अवगाहन करने का अभ्यास हो ।

इसी प्रकार संयम के अभ्यास के रूप में प्रतिदिन वृत्तियों का निग्रह करना चाहिये । तप भी प्रतिदिन होना ही चाहिये । ऊनोदरी तप करने से आप स्वस्थ भी रहेंगे और तप भी होगा । किसी विगय अथवा रस का त्याग तो अनायास ही किया जा सकता है । संयम और तप के द्वारा अपनी आवश्यकता कम होने से द्रव्य भी बचाया जा सकेगा । इस प्रकार सहज ही प्रतिदिन कुछ न कुछ दान करने का रास्ता भी निकल आयेगा ।

ये छह दैनिक कर्म सच्चे श्रावक के लिये अनिवार्य हैं । इनकी साधना से ही श्रावक १२ व्रतों को निर्मल रूप से पाल सकेगा ।

□□

धारावाही लेखमाला [५]
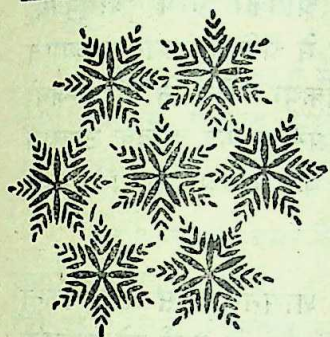
जैन संस्कृति में नारी का स्थान

□ श्री रमेश मुनि शास्त्री
[उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी के विद्वान् शिष्य]

तीर्थंकर की गौरवपूर्ण परम्परा में प्रभुवर श्रेयांसनाथ का ग्यारहवाँ स्थान है। आपने भव्य जीवों को अक्षय-आनन्द के उद्गम कल्याणकारी मार्ग पर आरूढ़ कर उसे गतिशील बना दिया। प्रभु ने अपने नाम को चरितार्थ किया।

महाराजा विष्णु सिंहपुरी नगरी में राज्य करते थे। उनकी महारानी का नाम विष्णुदेवी था। यह राज्य दम्पति तीर्थंकर श्रेयांसनाथ के अभिभावक थे। यथा समय रानी विष्णुदेवी ने पुत्ररत्न को जन्म दिया। तीर्थंकर के जन्म से जगत् की उग्रता समाप्त हो गई। सर्वत्र सुख, शान्ति और हर्ष का साम्राज्य फैल गया। बालक अत्यन्त ही तेजस्वी था, मानो व्योम-सीमा से बाल-रवि का उदय हुआ हो। इस सुकोमल शिशु का माता के गर्भ में प्रवेश होते ही समूचे राज्य में धार्मिक प्रवृत्ति प्रबल हो गई थी। नीतिशीलता में वृद्धि हो गयी थी। राज-परिवार और सारे राष्ट्र का श्रेय-कल्याण हुआ। अतएव माता-पिता ने इन समस्त प्रभावों के आधार पर नवजात बालक का गुण-सम्पन्न नाम 'श्रेयांसनाथ' रखा।[१]

आपके धर्म-परिवार में साध्वियों की उत्कृष्ट सम्पदा एक लाख तीन हजार थी।[२] प्रथम अन्तेवासिनी का नाम 'धारणी' था[३] और श्राविकाओं की संख्या चार लाख अड़तालीस हजार थी।[४]

१—जिनस्य माता-पितरा वुत्सवेन महीयसा।
आभिधां श्रेयसि दिने, श्रेयांस इति चक्रतुः॥

—त्रिषष्टिशलाका–४-१-८६

२—प्रवचनसारोद्धार—१७, गाथा–३३५–३९

३—समवायांग सूत्र—

४—सत्तरिसयद्धार—११५, गाथा—२४३–२४६

भगवान श्रेयांसनाथ के परिनिर्वाण के पश्चात् भगवान् वासुपूज्य स्वामी बारहवें तीर्थंकर हुए। आपके पिता महाराजा वसुपूज्य और जयादेवी माता थीं। महाराजा वसुपूज्य के पुत्ररत्न होने के कारण आपका नाम 'वासुपूज्य' रखा गया। तीर्थंकर वासुपूज्य के जन्म से समूचे राज्य में अतिशय आनन्द व्याप्त हो गया। पिता वसुपूज्य ने विराट उत्सव आयोजित किया और नागरिक-जनों ने महाराजा की पावन सेवा में नाना प्रकार की भेंट प्रस्तुत कर हार्दिक उल्लास को व्यक्त किया। नवजात बालक शारीरिक-सौन्दर्य से परिसम्पन्न था। उसकी भव्य आकृति से कान्ति विकीर्ण होती थी।

पिता की आन्तरिक उत्कण्ठा थी कि युवराज शासनसूत्र संभालें, किन्तु युवराज ने कहा—मैं आत्म-कल्याण हेतु अध्यात्म-साधना के मार्ग को अपनाना चाहता हूँ। कुमार के सुदृढ़ संकल्प को देखकर माता-पिता निराश एवं दुखित हुये। अन्ततः विवश होकर राजा-रानी ने राजकुमार को दीक्षा ग्रहण करने को आज्ञा प्रदान की। उन्होंने छद्मस्थ दशा में रहकर सुदीर्घ-तप की आराधना की, कठोर साधनाएँ कीं। प्रभु ने चार घाति कर्मों का क्षय कर केवल ज्ञान–केवल दर्शन प्राप्त किया।

प्रभु ने अपनी प्रथम देशना में अपार जन-समुदाय को मोक्ष का मंगलमय मार्ग समझाया और चतुर्विध संघ की स्थापना की। वे भाव तीर्थंकर की अनुपम गरिमा से विभूषित हुए।

आपके धर्मसंघ में साध्वियों की संख्या एक लाख रही थी।[1] प्रथम अन्तेवासिनी का नाम 'धरणी' था[2] तथा श्राविकाओं की उत्कृष्ट-सम्पदा चार लाख छत्तीस हजार थीं।[3]

भगवान् वासुपूज्य के निर्वाण के पश्चात् तेरहवें तीर्थंकर भगवान् विमलनाथ हुये। इन्होंने तीर्थंकर नाम-कर्म के उपार्जन के लिये धातकी खण्ड की महापुरी नगरी में महाराजा पद्मसेन के रूप में वैराग्य प्राप्त किया और सर्वगुप्त आचार्य से दीक्षा प्राप्त की। आपने निर्मल भाव से संयम की अत्युत्कृष्ट-आराधना की और तीर्थंकर नामकर्म का उपार्जन किया। अन्त में समाधिपूर्वक आयु पूर्ण कर आठवें सहस्रार-कल्प में ऋद्धिमान देव के रूप में समुत्पन्न हुये। पद्मसेन का जीव सहस्रार देवलोक से निकल कर माता श्यामा

१—प्रवचनसारोद्धार—१७, गाथा—३३५–३३९

२—समवायांग सूत्र

३—सत्तरिसयद्धार ११५, गाथा—२४३–२४६।

की कुक्षि में उत्पन्न हुआ। इनकी जन्म-भूमि कंपिलपुर की। वहां के महाराजा कृतवर्मा आपके पिता थे।

माता ने गर्भ-काल में शुभ सूचक चौदह दिव्य स्वप्न देखे और उनका फल जानकर अत्यन्त प्रमुदित हो उठी। उसने यथा-समय सुख-पूर्वक सुवर्ण कान्ति वाले एक तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया।

महाराजा कृतवर्मा ने नामकरण के लिये पारिवारिक-जनों और मित्र-जनों को एकत्र किया। गर्भ की अवधि में माता तन एवं मन से निर्मल बनी रही, अतः नवजात बालक का नाम विमलनाथ रखा गया।[1]

आपके चतुर्विध संघ में श्रमणियों की उत्कृष्ट सम्पदा एक लाख आठ सौ थी।[2] प्रथम अन्तेवासिनी का नाम 'धरा' था[3] तथा चार लाख चौबीस हजार श्राविकाएँ थीं।[4]

भगवान् विमलनाथ के निर्वाण के बाद चौदहवें तीर्थंकर भगवान् अनन्तनाथ हुये। अयोध्या नगरी के महाराजा सिंहसेन आपके पिता और महारानी सुयशा माता थीं। सुयशा पितृकुल और पतिकुल इन दोनों के समुज्ज्वल यश की अभिवृद्धि करती थी। इस राज-दम्पति की सन्तान भगवान् अनन्तनाथ थे।

महारानी सुयशा ने यथा-समय एक अत्यन्त तेजस्वी पुत्र को जन्म दिया। बालक के जन्म से समूचे राज्य में प्रसन्नता का वातावरण छा गया। जन्मोत्सव मनाने के उपरान्त नामकरण करते समय चिन्तन किया—बालक की गर्भावधि में आक्रमणार्थ आये हुये अतीव उत्कट शत्रु-सेना पर मैंने विजय प्राप्त की। उसे परास्त कर दिया था। अतएव तेजस्वी पुत्र का नाम अनन्तकुमार रखा गया।[5]

१—गर्भस्थे जननी तस्मिन् 'विमला' यदजायत।
ततो विमल इत्याख्यां तस्य चक्रे पिता स्वयम्॥ —त्रिषष्टिशलाका—४-३-४८

२—सत्तरिसयद्वार ११३, गाथा—२३५—२३६।

३—प्रवचनसार, गाथा ३०७—६।

४—समवायांग सूत्र।

५—गर्भस्थेऽस्मिन् जितं पित्रानन्तं परबलं यतः।
ततश्चक्रेऽनन्तजिदित्याख्यं परमेशितुः॥ —त्रिषष्टिशलाका—४-४-४७
गब्भत्थे य भगवम्मि पिउणा अणं तं परबलं जियं ति तओ।
जहत्थं अणन्तइजिणोऽत्ति कामं कयं भुवण गुरुणो॥
—चउवन्नमहापुरिस चरियं, पृष्ठ—१२६

आपके धर्म-परिवार में साध्वियों की संख्या बासठ हजार थी ।[१] प्रथम अन्तवासिनी का नाम 'पद्मा' था[२] तथा श्राविकाओं की उत्कृष्ट सम्पदा चार लाख चौदह हजार थी ।[३]

भगवान् अनन्तनाथ के परिनिर्वाण के पश्चात् श्री धर्मनाथ पन्द्रहवें तीर्थंकर हुये ।

एक पावन प्रसंग है कि धातकी खण्ड के अन्तर्गत पूर्व विदेह में स्थित भद्धिलपुर के महाराजा सिंहरथ अत्यन्त ही पराक्रमी और विशाल साम्राज्य के अधिपति होकर भी धर्म में दृढ़-प्रतिज्ञ थे । उन्होंने शाश्वत आनन्द की खोज में निस्पृह भाव से इन्द्रिय सुखों का त्याग कर मुनि विमलवाहन के पास दुर्लभतम चारित्र धर्म को स्वीकार किया । तप और संयम की विशिष्ट साधना करते हुये तीर्थंकर-नामकर्म की योग्यता अधिगत की । उन्होंने समता की योग की माता और तितिक्षा को जीवन-सहचरी माना । वे दीर्घकाल की आध्यात्म साधना के पश्चात् समाधि पूर्वक आयु पूर्ण कर वैजयन्त विमान में अहमिन्द्र रूप में समुत्पन्न हुये । यही सिंहरथ का जीव धर्मनाथ तीर्थंकर हुआ ।

आपके पिता का नाम महाराज भानु और माता सुव्रता थी । महारानी सुव्रता ने गर्भ-काल में शुभ सूचक महामंगलकारी चौदह स्वप्नों को देखा और वह अत्यन्त ही हर्ष-विभोर हो गई । कुमार जब गर्भ में स्थित थे तो माता के अन्तर्मन में उत्तम कोटि की धार्मिक साधना का दोहद उत्पन्न हुआ । इस कारण महाराजा भानु ने पारिवारिक-जनों और मित्र-जनों को सम्बोधित करते हुये कहा— बालक गर्भ में रहते माता को धर्म-साधना के श्रेष्ठतम दोहद समुत्पन्न होते रहे और उसकी भावना धर्ममय बनी रही । अतएव इस तेजस्वी शिशु का नाम 'धर्मनाथ' रखा जाता है ।[४]

१—प्रवचनसारोद्धार १७ गाथा—३३५–३६ ।

२—समवायांग सूत्र ।

३—सत्तरिसयद्धार ११५ गाथा—२४३–२४६ ।

४—क–अम्मापितरो सावगधम्मे भुज्जो चुक्के खलंति, उववण्णे दढव्वताणि ।

—आवश्यक चूर्णि पूर्व भाग, पृष्ठ–११

ख–गर्भस्थेऽस्मिन् धर्मविधौ, यन्मतुर्दोहदोऽभवत् ।
तेनास्य धर्म इत्याख्याभकार्षीत् भानुभूपतिः ।।

—त्रिषष्ठिशलाका—४-५-४६

ग–सगवाम्मि गब्भत्थे अतीव जणणीए धम्मकरण दोहलो ।
आसि त्ति तओ धम्मो त्ति नामं कयं तिहुयण गुरुणो ।।

—चउवन्न महापुरिसचरियं, पृष्ठ–१३३

भगवान् धर्मनाथ के श्री संघ में साध्वियों की संख्या बासठ हजार चार सौ थी ।[१] प्रथम शिष्या का नाम शिवा[२] था तथा चार लाख तेरह हजार श्राविकाएँ थीं ।[३]

भगवान् धर्मनाथ के परिनिर्वाण के वाद सोलहवें तीर्थंकर शान्तिनाथ हुये । आपका समग्र जीवन सर्व-जन हिताय था । आपकी तप: साधना को उपलब्धियाँ आत्म-कल्याणपरक ही नहीं, अपितु लोकाहितकारिणी थीं ।

आपके पिता का नाम महाराजा विश्वसेन और माता अचिरा थीं । माता ने गर्भ धारणा की रात्रि में ही मंगलकारी चौदह शुभ स्वप्न भी देखे और इसके फल से अवगत होकर कि उसकी कुक्षि से तीर्थंकर का जन्म होगा—वह हर्ष-विभोर हो उठी । इनके जन्म से सम्पूर्ण लोक में आलोक फैल गया । महाराजा ने अनुपम प्रमोद के साथ जन्म-महोत्सव मनाया ।

माता अचिरादेवी के गर्भ में प्रभु का आगमन होते ही महामारी का भयंकर प्रकोप शान्त हो गया । अत: आपका नाम शान्तिनाथ रखा गया ।[४]

आपके शासन-काल में साध्वियों की उत्कृष्ट संख्या इकसठ हजार छः सौ थी[५] और प्रथम शिष्या का नाम 'सूर्या' था[६] तथा तीन लाख तिरानवे हजार श्राविकाएँ थीं ।[७]

भगवान् शान्तिनाथ के निर्वाण के पश्चात् श्री कुन्थुनाथ सत्रहवें तीर्थंकर हुये । कुरुक्षेत्र में एक राज्य था—हस्तिनापुर नगर । सुख, शान्ति और समृद्धि के लिये उस काल में यह राज्य अति विश्रुत था । सूर्य के समान तेजस्वी नरेश शूरसेन वहाँ के नीतिमान शासक थे और उनकी महारानी का नाम श्रीदेवी था । ये ही तीर्थंकर कुन्थुनाथ के माता-पिता थे ।

१—प्रवचन सारोद्धार १७ गाथा—३३५-३९ ।

२—समवायांग सूत्र ।

३—सत्तरिसयद्धार ११५ गाथा—२४३-२४६ ।

४—गब्भत्थेण य भगवया सव्वदेसे संती समुप्पण्णा त्ति काऊण सन्तित्तिणामं अम्मापीतिहिं कयं ।

—चउवन्न महापुरिसचरियं, पृष्ठ—१५०

५—प्रवचन सारोद्धार ।

६—समवायांग सूत्र ।

७—सत्तरिसयद्धार—११५ गाथा—२४३-२४६ ।

महारानी श्रीदेवी ने जब गर्भ धारण किया तब श्रावण कृष्णा नवमी का दिन और कृत्तिका नक्षत्र का शुभ योग था। उसी रात्रि में रानी ने तीर्थंकर के गर्भागमन का द्योतन करने वाले चौदह मंगलकारी स्वप्नों का दर्शन किया। गर्भावधि पूर्ण होने के बाद उसने एक अनुपम तेजस्वी पुत्ररत्न को जन्म दिया। कुमार जब गर्भ में था तो माता ने कुन्थु नामक रत्न की राशि देखी थी। इसी को नामकरण का आधार मानकर बालक का नाम कुन्थुनाथ रखा गया।[1]

आपके धर्म-परिवार में साध्वियों की उत्कृष्ट सम्पदा साठ हजार छः सौ थी[2] और प्रथम अन्तेवासिनी का नाम 'अंजुया' था[3] तथा श्राविकाओं की उत्कृष्ट संख्या तीन लाख इक्यासी हजार थी।[4] □ [क्रमशः]

१—सुमिणे य थूमं दठ्ठूण जणणी विउद्धत्ति, गब्भगये य कुंथुसयाणा सेसपडिवक्खा दिठ्ठत्ति काऊण कुंथुत्तिणामं कयं भगवओ।

—चउवन्नमहापुरिसचरियं, पृष्ठ—१५२

२—प्रवचनसारोद्धार १७ गाथा—३३५—३६।

३—समवायांग सूत्र।

४—सत्तरिसयद्धार—११५ गाथा २४३—२४६।

धारावाहिक उपन्यास (३)

आत्म-दर्शन•

□ श्री धन्ना मुनि
[आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के सुशिष्य]

अनेक मास तक आषाढ़भूति के तत्त्वावधान में रंगमञ्च पर 'ऋषभायन' के प्रस्तुतिकरण विषयक प्रशिक्षण एवं अभिनय का कार्य अहर्निश प्रगति पर चलता रहा। आवश्यक प्रशिक्षण के सम्पन्न हो जाने के अनंतर आषाढ़भूति ने अपने श्वसुर के साथ मगधेश्वर की राजसभा में उपस्थित हो मगधाधीश से निवेदन किया—"राज राजेश्वर! आप श्री की इच्छा के अनुरूप सुरतरु ने विशाल रूप धारण कर लिया है। वह सुचारु रूप से पुष्पित-पल्लवित हो जाने के अनंतर अब अमृतोपम सुमधुर फल देने के लिये समुद्यत है। इस संबंध में समय आदि जो भी निश्चित करना चाहें, वह आप कर सकते हैं। 'ऋषभायन' के रंगमंच पर प्रस्तुत करने के सभी कार्य हमारी ओर से सुचारु ढंग से सम्पन्न हो चुके हैं। जहाँ तक ऋषभायन के अभिमञ्चन का प्रश्न है, आप जब चाहेंगे तभी प्रारम्भ करेंगे।"

मगधेश, महान् कलाकार आषाढ़भूति के विनम्र निवेदन को सुनकर हर्ष विभोर हो उठे। उन्हें ऐसा अनुभव हुआ मानों उनका यह मानव जीवन सफल हो गया है। अपनी राजसभा के सदस्यों से परामर्श के अनंतर मगधेश ने 'ऋषभायन' के मञ्चन का समय सुनिश्चित कर अपने विशाल साम्राज्य के सुदूरस्थ नगरों एवं ग्रामों में निवास करने वाले प्रजाजनों के साथ-साथ अपने सभी सम्बन्धी राजा-महाराजाओं, पड़ौसी राजाओं, आर्यावर्त के उच्च कोटि के कलाकारों, विद्वानों, श्रेष्ठिवरों और अपने अनेक विदेशी मित्र महाराजाओं को भी 'ऋषभायन' के अभूतपूर्व अभिमञ्चन को देखने के लिये आमंत्रित किया।

ऋषभायन के अभिमञ्चन का निश्चय हो जाने के अनंतर तो आषाढ़भूति अत्यधिक व्यस्त रहने लगे। न उन्हें रात का ध्यान रहा और न दिन का। केवल अभिमञ्चन को उत्कृष्ट कोटि का, अत्यद्भुत, अलौकिक एवं चमत्कार पूर्ण बनाने के चिंतन, मनन, अभिमञ्चन एवं शिक्षण संबंधी कार्यों में ही वे डूबे से

•मुनि श्री की डायरी से संकलित

रहते । उन्हें अनेक बार अनेक रातें रंगशाला में ही व्यतीत करनी पड़ती थीं । एक दिन वे अपनी पत्नियों से चार-पांच दिन तक रंगशाला में व्यस्त रहने और घर न लौटने की बात कहकर अपने भव्य प्रासाद से प्रस्थित हुए ।

मगध जैसे एक सुविशाल साम्राज्य के नाट्यशास्त्र निष्णात महान् राजकीय कलाकार के घर में लक्ष्मी और भोगोपभोग की सामग्री की कमी की कल्पना तक नहीं की जा सकती । ऐहिक सुखोपभोगों की सामग्री का वहां अम्बार लगा रहता था । उसके आवास के एक-एक कण में लक्ष्मी के नूपुरों की झंकार प्रतिध्वनित होती थी । इस सबके उपरान्त जब से आषाढ़भूति ने ऋषभायन के अभिमञ्चन के कतिपय अंश मगध सम्राट् को दिखाने प्रारम्भ किये तब से तो राजकीय नाट्यशाला के सूत्रधार के घर पर स्वर्ण, मणि, माणिक्य, हीरकादि की एक प्रकार से अनवरत वृष्टि होनी प्रारम्भ हो गई थी । इस घर का प्रत्येक सदस्य इस वसुन्धरा की वृष्टि से पुलकित एवं प्रफुल्लित था । नीतिकारों ने अति को अनर्थकारी बताने की दृष्टि से ही संभवत: कहा—"अति सर्वत्र वर्जयेत् ।" लक्ष्मी की अत्यधिक कृपा भी कभी-कभी अनर्थकारी सिद्ध हो जाती है ।

अपने प्रियतम के चार-पाँच दिन तक घर न लौटने की बात सुनकर आषाढ़भूति की दोनों पत्नियों के मन में मधुसेवन की ललक जाग्रत हो उठी । रात्रि के समय उन्होंने विशिष्ट प्रकार के अतिस्वादिष्ट आसव का पान किया । आषाढ़भूति के इस भवन में आगमन के पश्चात् बड़े लम्बे समय से मिले आसव सेवन के इस अवसर का उन्होंने जी भर आनन्द लूटने का निश्चय किया । जिस समय दोनों बहनों के मादक मधु के सेवन का क्रम चल रहा था ठीक उसी समय आषाढ़भूति सहसा किसी कारणवशात भवन में आ उपस्थित हुआ । संगीत की सुधा सुमधुर स्वर लहरियों के साथ-साथ मादक मधु के दौर में आत्म विस्मृत पत्नियों को देखकर आषाढ़भूति कुछ क्षण अवाक् खड़ा रहा । उसके अन्तर में प्रगाढ़ निद्राधीन वैराग्य जाग्रत हुआ । वह तीव्र गति से अपनी पत्नियों के समक्ष जा खड़ा हुआ ।

अपने पति के अप्रत्याशित आगमन को देख दोनों बहिनें शोक के पाताल-कूप में गिरने के समान दु:ख का अनुभव करती हुई चित्रलिखित सी रह गईं । मादक मधु का प्रभाव तत्क्षण कपूर की तरह उड़ गया । अपनी मूर्खता पर उन्हें घोर पश्चात्ताप हुआ और अपने पति के मुख पर उभरते हुए विरक्ति के रंग को देख कर तो उन्हें ऐसा अनुभव हुआ मानो उनका सर्वस्व लूटा जा रहा है अथवा उनके प्राणों को भयंकर विषधारी सर्प डस गया हो ।

घनरव गंभीर सुदृढ़ स्वर में आषाढ़भूति ने कहा—"अब अपने संयोग की अवधि समाप्त हुई । आसव सेवन न करने की प्रतिज्ञा को भंग कर तुम दोनों ने

सत्पथ से भटके हुए मुझ पथिक को पुनः सुपथ पर आरूढ़ करने का उपकार किया है।" आषाढ़भूति के मुख से निस्रत शब्दों के एक-एक अक्षर ने दोनों वहिनों के रोम-रोम में प्रलयाग्नि तुल्य ज्वालाएँ प्रज्वलित कर दीं। स्वर्गतुल्य संसार के शून्य होने की कल्पना ने उन दोनों के अन्तर को प्रलयानिल के समान झकझोर दिया। हठात् वे दोनों वायुवेग से टूटी हुई चम्पक वृक्ष की शाखाओं के समान आषाढ़भूति के चरणों पर गिर पड़ीं। जिस प्रकार जंजीर में किसी व्यक्ति के पैरों को बांध दिया जाता है, उसी प्रकार उन दोनों बहिनों ने अपने बाहुपाशों में आषाढ़भूति के पादयुगल को आबद्ध कर दिया। अपने मस्तक को अपने पति के चरणों पर रखकर दोनों फफक-फफक कर रोने लगीं।

आषाढ़भूति ने अपने को उन दोनों से मुक्त कराने का प्रयास करते हुए कहा—"मैंने अपने गुरु के परामर्शानुसार अपना अटल निश्चय प्रथम मिलन के समय ही बता दिया था, कि यदि इस घर में अभक्ष्य भोजन एवं मधु सेवन होगा तो मैं इस घर का परित्याग कर दूँगा। तुमने मेरे इस कथन को स्वीकार करते हुए कभी मद्यसेवन न करने की प्रतिज्ञा की थी। पर आज अपनी प्रतिज्ञा को भंग कर परोक्ष रूप में तुमने मुझे इस घर से सदा सर्वदा के लिए चले जाने के लिए बाध्य कर पुनः विरक्ति के पथ का पथिक बना दिया है।"

इस पर दोनों बहिनों ने आषाढ़भूति के चरणों को दुगुनी शक्ति से जकड़ते हुए कहा—"नहीं-नहीं नाथ! यह इस जन्म में तो क्या, जन्मजन्मान्तरों में भी संभव नहीं हो सकेगा। हमारा अपराध क्षमा करो। हम स्वयं इस अपराध की अग्नि में भस्मसात हो रही हैं, अन्तर मन से पश्चात्ताप कर रही हैं। अब जीवन में कभी इस प्रकार की त्रुटि नहीं होगी।" उन दोनों बहिनों ने अश्रुओं की वर्षा से आषाढ़भूति के दोनों चरणों का पुनः-पुनः प्रक्षालित किया।

एक ओर तो करुणा रस की प्रतिमूर्ति महिलायें और उस पर विशेषता यह कि अपने समय के एक उच्च कोटि के नाट्यकला कुशल नाटककार की आत्मजायें। इस प्रकार की स्थिति में उनका करुण विलाप कितना प्रभावकारी रहा होगा, इसका अनुमान लगाना बड़ा कठिन है। अस्तु, इन दोनों युवतियों के अश्रुप्रवाह पूर्ण विलाप ने आषाढ़भूति को उनके निश्चय से विचलित कर दिया। उनके अन्तर्हृदय में उद्भूत वैराग्य अश्रुओं की बाढ़ में बह गया। अपने दृढ़ संकल्प से स्खलन की ओर अग्रसर होते हुए उन्होंने कहा—"यद्यपि तुमने वचन भंग कर मेरे विश्वास को भयंकर आघात पहुँचाया है तथापि मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि पश्चात्ताप की अग्नि में तुमने अपने इस अपराध को जला दिया है, अतः मैं तुम्हारी प्रार्थना स्वीकार कर पुनः इस घर में रहने के लिये सहमत हो सकता हूँ। आगे फिर कभी यदि इस प्रकार की स्थिति उत्पन्न हुई तो मैं इस

घर के साथ-साथ तुम सभी का जीवनपर्यन्त परित्याग कर दूंगा और पुनः इस घर की ओर नहीं देखूंगा।"

दोनों बहिनों ने अश्रुपूरित युगल लोचनों से आषाढ़भूति की ओर निहारते हुये कहा—"नाथ ! आपकी अनुचरियाँ भविष्य में कभी इस त्रुटि की पुनरावृत्ति नहीं करेंगी।" आषाढ़भूति ने सान्त्वना भरे स्वर में कहा—"उठो ! अपने आवश्यक कार्य में व्यस्त हो जाओ।" आषाढ़भूति के इस आश्वासन से वे दोनों बहिनें आश्वस्त हुईं और दोनों बहिनों ने ठीक उसी प्रकार अतिशय आनन्द का अनुभव किया जिस प्रकार मध्याह्न की खुली धूप से उठाकर विशाल जलाशय में छोड़ी गयीं मछलियां। आषाढ़भूति का दाम्पत्य जीवन पूर्व की भांति ही राग-रंग एवं ऐहिक भोगोगपभोग में व्यतीत होने लगा। आषाढ़भूति पुनः पूर्ण मनोयोग से ऋषभायन के अभिमञ्चन में व्यस्त हो गये।

रंगशालाध्यक्ष के हर्ष का पारावार न रहा। उसके जामाता की यशोकीर्ति दिगदिगन्त में व्याप्त हो रही थी। जहाँ तक धन का प्रश्न है, जामाता के आगमन से पूर्व भी उस पर लक्ष्मी की पूर्ण कृपा थी। किन्तु अब तो घर में कृष्णा कावेरी आदि दशों दिशाओं से स्वर्ण उड़ेल रही थीं। ऋषभायन के अभिमञ्चन में प्रत्येक पात्र के न केवल अभिनय को ही अपितु प्रत्येक भाव-भंगिमा को तन्मयता पूर्ण एकाग्रता के साथ बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि से रंगशालाध्यक्ष ने प्रत्येक शब्द के प्रभाव को बड़ी सावधानी के साथ सुना था। ऋषभायन के मंचन में उसके जामाता ने नाट्यकलाधिष्ठात्री देवी को मानो स्वर्ग से साकार रूप में उतार कर मृत्युलोक के मानवों के समक्ष प्रस्तुत कर दिया। मगध जैसे विशाल साम्राज्य का लोकमान्य महान् कलाकार ऋषभायन के दर्शन में अपने जामाता की लौकिक लब्धियों के प्रभाव से अद्‌भुत चमत्कारपूर्ण अभिनय को देखकर अनेक बार यह अभिमत व्यक्त करता था कि—"उसने आज तक इस प्रकार के उच्चकोटि के अभिनय को कहीं नहीं देखा। यह वस्तुतः मानव के लिये नितान्त असंभव कृत्य ही समझा जाता रहा है। उस असंभव को संभव बनाकर मेरे जामाता ने असंभव के अभेद्य दुर्ग को तोड़कर असंभव को संभव ही नहीं अपितु सहज–सुकर कर दिया है।"

ज्यों-ज्यों ऋषभायन के मञ्चन का समय सन्निकट चला आ रहा था त्यों-त्यों मगध साम्राज्य के नाटककार-नाट्यशालाध्यक्ष का हर्ष महोच्च गगन की उच्चतम ऊंचाई को चूमने लगा। न केवल मगध की अपितु आर्यधरा के इस छोर से उस छोर तक के ग्रामों एवं नगरों के सहस्रों नागरिक, सम्पूर्ण भारत और समुद्र पार के विभिन्न देशों के बड़े-बड़े कलामर्मज्ञ तथा परम समृद्धिशाली राज्याधिराज, धनकुबेर, नगर श्रेष्ठि, राष्ट्र श्रेष्ठि आदि ऋषभायन को देखने के लिये बहुत बड़ी संख्या में उपस्थित होंगे। वह कल्पना कर रहा था कि

ऋषभायन के मंचन पर मुग्ध हो जिस समय मणि, माणिक्य, स्वर्ण, रत्न एवं रत्नजटित अलंकाराभरणों की मेरे जामाता पर वृष्टि प्रारम्भ करेंगे, उस समय मेरे समग्र कोषागार और धनधान्य के भण्डार तक भी स्वर्णरत्नादि से परिपूर्ण हो जायेंगे। मणि माणिक्य मौक्तिकादि के सुविशाल ढेरों को मुझे खुले आंगन में ही रखना पड़ेगा। अहो! मैं आज इस पृथ्वी का सबसे बड़ा भाग्यशाली मानव हूँ। वस्तुतः मेरी पुत्रियां बड़ी ही सौभाग्यशालिनी हैं। अब तो वे विपुल धन वैभव सम्पन्ना, वर्चस्वशालिनी और ऐश्वर्यशालिनी रमणियां हो जायेंगी।

[क्रमशः]

□ □ □

सच्चा प्रेमी

□ श्री दीपक जैन

कली ने कांटे से कहा—"कैसा निर्दयी है तू! वह बेचारा मानव मुझ से प्रेम करने मेरे समीप आया। उसने मेरा कोमल स्पर्श पाने का प्रयास भी किया, पर तू उसकी अंगुली में ऐसा चुभा कि उस पर खून की एक बूँद चमक उठी। यदि इस दुनिया में तेरा जन्म न हुआ होता तो कौनसा प्रलय आ जाता?

उत्तर में काँटे ने कहा—"बहिन कली! प्रेम का पथ सदा कण्टकाकीर्ण होता है। काँटों से डरने वाला सच्चा प्रेमी नहीं हो सकता। फिर अभी तुम्हारा बचपन है। अभी तो तुम्हें विकसित होना है। अविकसित अवस्था में प्यार करने वाले विकास में बाधा डालते हैं। सच्चा प्रेमी वही हो सकता है जो अपने प्रेमपात्र के विकास में बिल्कुल बाधक न हो।

इस दृष्टि से वह मनुष्य, जो अपनी अंगुली की चुभन से व्याकुल हो गया और भाग गया, वह सच्चा प्रेमी न होने से दण्डनीय था। तुम्हारे विकास में बाधा डालने वाले मनुष्य से तुम्हें सहानुभूति नहीं रखनी चाहिए। उस झूठे प्रेमी के फन्दे से रक्षा करने के लिए ही मेरा जन्म हुआ है। मैं तुम्हारा सच्चा प्रेमी हूँ; क्योंकि मैं तुम्हें विकसित देखना चाहता हूँ।"

यह सुनकर कली अपनी भूल समझ गई।

—706, महावीर नगर, टोंक रोड, जयपुर–15

आत्म-निरीक्षण :

महावीर-मार्ग और हम

□ श्री धनपतसिंह मेहता

जैन शब्द "जिन" से बना है, जिसका एक अर्थ है ज्ञान, पूर्वज्ञान अथवा केवलज्ञान, अर्थात् ऐसा ज्ञान जिससे व्यक्ति आत्म-साक्षात्कार कर "परम तत्त्व" को प्राप्त कर लेता है। वह जीवन की ऐसी चरमावस्था है जिसे प्राप्त कर व्यक्ति संसार कें समस्त कषाय-कल्मष से मुक्त होकर सहजावस्था को प्राप्त हो जाता है। वह एक ऐसी भावभूमि है जहां पहुँच कर मानवात्मा सांसारिक विषय-वासना एवं विकार से सर्वथा शून्य हो जाती है—शुद्ध, बुद्ध, निर्मल।

आत्म-साक्षात्कार जैन धर्म का मूल मंत्र है। उसके बिना मुक्ति या मोक्ष संभव नहीं। मानव-जन्म से लेकर मृत्यु-पर्यन्त विषय-भोगों में डूबा हुआ केवल शरीर की सावना में ही लगा रहता है। क्रोध, मान, माया, लोभ आदि षड्रिपु उसे दिन-रात घेरे रहते हैं जिससे वह दिग्भ्रमित हो पथ-भ्रष्ट हो जाता है। फलतः वह अपने जीवन में आत्मानुभूति के चिरन्तन एवं शाश्वत सत्य को भुला देता है। उससे जीवन का चरम लक्ष्य ओझल हो जाता है। मानव-जीवन की यह कैसी विडम्बना है कि चेतन आत्मा की उपासना के स्थान पर जड़ शरीर की साधना में ही सारी आयु खप जाती है। यह उसकी कैसी दुर्भाग्यपूर्ण नियति है कि आत्मा की अमरता का बोध कर दिव्यानन्द की अनुभूति के स्थान पर नश्वर जीवन की उधेड़बुन में, सुख-सुविधा जुटाने में सारा जीवन गुजर जाता है। जीवन की यह कैसी दुःखद परिणति है कि जहाँ हमें आत्म-साक्षात्कार कर आवागमन के दुष्चक्र से सदा के लिये मुक्त हो जाना चाहिए वहाँ हम कुटिल कर्म विपाक के चक्रव्यूह में फँसकर निरन्तर कर्म के कठोर बन्धन में बँधते चले जाते हैं जिसके फलस्वरूप पुनरपि जन्मन्, पुनरपि मरणम् का अन्तहीन क्रम चलता रहता है।

आज के युग में भोगवाद का प्रबल झंझावात चल रहा है। व्यक्ति, परिवार और समाज से लेकर समूचे विश्व का परिवेश उससे आन्दोलित है। आज तो जीवन का चरम लक्ष्य ही बन गया है 'खाओ, पीओ और मौज मनाओ।' कल किसने देखा है? मरने के बाद क्या होता है, कौन जाने?

जानते इतना अवश्य हैं कि तब यह जड़ शरीर भस्मीभूत होकर कण-कण में बिखर जायेगा । माटी की काया माटी में मिल जायेगी । तब फिर सुखोपभोग का यह स्वर्णिम अवसर हाथ से क्यों जाने दें ? कैसो आत्मा ? कौन परमात्मा ? सब छल है, धोखा है । सत्य तो केवल कुछ वर्षों का यह जीवन है जो हमें मिला है। तब फिर छककर उसका मजा क्यों न लिया जाय ? चार्वाक दर्शन इसी सत्य को स्वीकारने का उद्घोष करता है और उसका प्रबल समर्थन । वह इसे ही जीवन का तथ्य एवं शाश्वत सत्य मानता है और यही दर्शन आज फलीभूत हो रहा है । येन, केन-प्रकारेण इन्द्रिय-सुख की अन्धी दौड़ चारों ओर चल रही है । अध्यातम के क्षेत्र के लिये जीवन की यह बहुत बड़ी चुनौती है जो हर काल में रही है और रहेगी । पर चार्वाक का यह दर्शन जड़वादी होने से आत्मघाती है । यह दर्शन हमें, परमानन्द, सच्चे सुख एवं असीम आनन्द की ओर नहीं ले जा सकता है । पश्चिम की जीवन-पद्धति इस तथ्य की सबल साक्षी है । वहाँ का मानव विपुल विलास के अनेकानेक उपकरणों से घिरा हुआ भोग के महासागर में आकण्ठ डूबा हुआ है । फिर भी वास्तविक सुख एवं शान्ति उसके लिये मृग-मरीचिका है । उसके जीवन में अशान्ति है, असंतोष है और तनाव है । वह तथाकथित भोग-सुख से छटपटा रहा है । अपार सम्पदा एवं सुख-सुविधाओं से भरपूर पश्चिम के देशों में जितनो हत्याओं और आत्म-हत्याओं का दौर चल रहा है, वह अपने आप में बेजोड़ है । जितने विक्षिप्त एवं अर्द्ध-विक्षिप्त लोग वहाँ हैं, अन्यत्र नहीं मिलेंगे । यह है आनन्द—भोग का अभिशाप । 'मरा हुआ जीवन भी रीता का रीता' । जीवन की यह कैसी बिडम्बना है । क्या यह इस तथ्य का ज्वलन्त प्रमाण नहीं कि वास्तविक सुख भोग-विलास में नहीं है । सच तो यह है कि यह इन्द्रिय-सुख तो आदमी का स्वनिर्मित मकड़ी जैसा जटिल ताना-बाना है जिसे वह फैलाता जाता है, अन्ततः उसी में छटपटा कर मर जाने के लिये ।

भोग से उत्पन्न अवसादपूर्ण एवं त्रासदायी स्थिति में हमें सुस्थिर एवं शांतचित्त होकर सोचना होगा कि आखिर जीवन का सत्य क्या है ? वह कौनसा राजमार्ग है जिस पर चलकर हम सच्चे सुख एवं असीम शांति के चरम लक्ष्य तक पहुँच सकते हैं ? वह कौनसा अवलम्ब है जिसके सहारे हम परमानन्द को प्राप्त कर सकते हैं ? वह कौनसी साधना-प्रणाली है जिसका आश्रय लेकर हम अपने जीवन को उस असीम आनन्द-लोक में ले जा सकते हैं जहाँ पहुँच कर फिर कुछ पाना शेष नहीं रह जाता ? वह है आत्मा की साधना, असीम आनन्द की साधना, चिरशांति की साधना । ऐसी साधना जिससे जीवन सर्वथा विकार-शून्य होकर अपनी सहजावस्था को प्राप्त हो जाता है ।

प्रश्न यह उभरता है कि ऐसी साधना का रूप, स्वरूप क्या है ? पद्धति और प्रक्रिया क्या है ? श्रमण महावीर ने इसके लिये पंच महाव्रत का अधिष्ठान किया। वह अधिष्ठान अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य एवं अपरिग्रह के रूप में था । क्रमशः तिलतिल कर व्यक्ति-साधना के सर्वोच्च शिखर पर पहुँचकर उस कालजयी तीर्थंकर ने हमारे समक्ष जीवन का ऐसा तत्त्वज्ञान प्रस्तुत किया जो हर युग एवं हर काल का अमर एवं शाश्वत सत्य बनकर सामने आया। हम धन्य हुये, जीवन धन्य हुआ, काल धन्य हुआ उस परम तत्त्व की प्राप्ति से, जिसकी सतत साधना-परिणाम है असीम आनन्द, दिव्य आनन्द, परम आनन्द। यही जीवन की चरम परिणति है, उसका शाश्वत सत्य है । शेष सब मिथ्या है, झूठ है, प्रवंचना है । ससीम, मिथ्या और क्षणिक आनन्द नहीं चाहिये बल्कि चाहिये असीम, सच्चा एवं चिरन्तन आनन्द । वह आनन्द जड़ शरीर की साधना में नहीं है, क्षणिक एवं नश्वर सांसारिक सुखोपभोग में नहीं है, बल्कि वह है आत्मा की उपासना में। वह भोग में नहीं त्याग में है, असत्य में नहीं सत्य में है, हिंसा में नहीं अहिंसा में है, अब्रह्मचर्य में नहीं ब्रह्मचर्य में है, स्तेय में नहीं अस्तेय में है, परिग्रह में नहीं, अपरिग्रह में है । आत्मा की साधना का यही दिव्य रूप है । जिसे इस सत्य, परम सत्य का साक्षात्कार हो जाता है वह मानव जीवन की अर्थवत्ता को, उसके मर्म को समझ कर पूर्णता को प्राप्त हो जाता है । उसी का जीवन धन्य है, उसी का जीवन सार्थक है।

पंच महाव्रत के रूप में भगवान महावीर ने जीवन का ऐसा सुन्दर, सुगढ़ तत्त्व-ज्ञान प्रस्तुत किया है जिसके अवलम्बन से हम सहज ही मुक्ति मार्ग के पथिक बनकर धीरे-धीरे अपनी साधना के बल पर अपने गन्तव्य तक पहुँच सकते हैं, मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं। पर यह प्रश्न युग-युग से, काल का सुदीर्घ अन्तराल पार कर आज तक चला आया है कि हम उस सत्पथ के राही कहाँ हो पाए ? हम आत्मा की अमरता की साधना कहाँ कर पाए ? हम पंच महाव्रती कहां बन पाए ? हम तो माया, मोह के दलदल में आज भी आकण्ठ फँसे हुए हैं, वासना के क्रीत दास हैं, दम्भी, पापी एवं अधर्मी हैं। हम आये दिन पंच महाव्रत की बातें तो बहुत करते हैं, पर हैं हम उससे कोसों दूर । वह हमारे लिए एक दिवा स्वप्न से अधिक कुछ नहीं है । हम शब्दों का खेल खेलकर मानसिक भाव-विलास तो बहुत करते हैं, पर उस साधना-मार्ग पर दो कदम चलना भी हमारे लिये अत्यधिक कष्टसाध्य है। अधिक से अधिक कर्मकाण्ड का आश्रय लेकर हम धर्म-साधना का दम भले ही भर लें। देव-दर्शन, सामायिक, प्रतिक्रमण, व्रत, उपवास आदि का अवलम्ब लेकर हम आत्म-साधना की बात भले ही कर लें। पर यह धर्म नहीं, उसकी छलना है, प्रवंचना है । इसलिए नहीं कि उसका धर्म-साधना में कोई महत्त्व नहीं । वह तो निर्विवाद रूप से है। पर वह भी

जब तोता रटंत बन जाता है, निरी औपचारिकता का रूप ले लेता है, तब वह धर्म के मर्म को स्पर्श नहीं कर पाता। वह केवल सतही होने से साधना की गहराई में हमें नहीं उतार पाता। ऐसे कर्मकाण्ड से आत्म-साक्षात्कार की बात करना बेमानी, निरर्थक एवं सारहीन है।

आज लाखों की संख्या में जैन धर्म के अनुयायी हैं। धर्म में उनकी प्रबल आस्था भी है। देव दर्शन, तीर्थ यात्रा, व्रत, उपवास आदि बड़ी मात्रा में उनके द्वारा सम्पादित होते हैं। साधु, साध्वियों के सतत सान्निध्य लाभ के अतिरिक्त उनके सुदीर्घ चातुर्मास का आयोजन भी होता है जिसमें प्रवचन, उपदेश एवं धर्म देशना की लम्बी प्रक्रिया चलती है। पर हमारे व्यक्तिगत जीवन में वही 'ढाक के तीन पात' वाली कहावत चरितार्थ होती है। इतने तामझाम के उपरान्त भी हमारे जीवन का संस्कार-परिष्कार कहाँ हो पाता है? उसमें सात्विकता कहाँ, पवित्रता कहाँ? विपरीत इसके हम में अधिकाधिक गिरावट की दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति दृष्टिगोचर होती है। हमारे रात-दिन के जीवन में सत्य कहाँ, अहिंसा कहां, ब्रह्मचर्य कहाँ, अस्तेय कहाँ और अपरिग्रह कहाँ? सच्चाई तो यह है कि हम जितना धर्म का नाम लेकर उसकी दुहाई देते हैं, उतने ही उससे दूर भागते हैं। लगता है जैसे धर्म का जयघोष करने एवं उसके विधि-विधानों की अनुपालना से धर्म की इति श्री हो जाती है। तब फिर हमारे लिए किसी आलोचक का यह व्यंग्य कितना सटीक है—"Indians are God intoxicated persons," एक अफीमची की तरह हम भी धर्म का नशा करते हैं जिसकी खुमारी उतरते ही हम पुनः कषाय-कल्मष के निम्न धरातल पर उतर आते हैं और धर्म का नाम जपते-जपते निरर्थक ही जिन्दगी निःशेष कर जाते हैं।

यह हमारी धर्म-साधना नहीं, धर्म का स्वांग भर है। जैन जगत् की मनःस्थिति एवं मानसिक संरचना को देखकर भय लगता है। बात हम बढ़-चढ़ कर सत्य और अहिंसा को करेंगे, पर हमारा दिन-रात का जीवन निपट असत्याचरण एवं हिंसा का भयावह रूप प्रस्तुत करता है। मनसा, वाचा, कर्मणा झूठ, बेईमानी, छल, प्रपंच, स्वार्थ-परायणता एवं पर-पीड़ा के ताने-बाने से बुना हुआ हमारा जीवन तामसी है। चाहे व्यक्तिगत जीवन हो, चाहे पारिवारिक, सामाजिक, चाहे व्यावसायिक जीवन हो, चाहे राजनीतिक, प्रशासनिक सर्वत्र आचार-विचार एवं कर्म का अत्यन्त निकृष्ट एवं गर्हित रूप सामने आता है। हम सिद्धान्त एवं आदर्श के धरातल पर कितने ही ऊँचे खड़े हों, पर हमारे कर्म का धरातल निम्न कोटि का है।

महावीर द्वारा प्रतिपादित ब्रह्मचर्य आज के युग में भोग की भयंकर आँधी में कहाँ टिके? चारों ओर विलास का परिवेश है, बचपन से लेकर बुढ़ापे

तक । खाना, पीना, पहनना, ओढ़ना एवं दूसरे तरीके सब अधिकाधिक व्यय साध्य एवं विलासपूर्ण हैं । दिन-रात इन्द्रिय-साधना ही चलती रहती है । हर पल यही चेष्टा रहती है कि हमारी वासना की प्रचण्ड भूख कैसे मिटे । इस हेतु अधुनातन साधन जुटाने की पागल स्पर्धा चल रही है । सम्पन्नता एवं विलास के विविध उपकरण हमारी उच्चता के मापदण्ड बन गये हैं । कहाँ है सादगी ? कहाँ है सरलता ? कहाँ है सात्विकता ? समूचा जीवन कृत्रिम एवं आडम्बरयुक्त हो गया है । इन्सानियत का चमकदार मुखौटा हम भले ही लगाएँ, पर इन्सान की पहचान हम खो चुके हैं । हम बाहर से जितने उजले लगने की चेष्टा करते हैं, भीतर उतने ही काले हैं ।

पंच महाव्रत के अंग 'अस्तेय' की तो धज्जियाँ ही उड़ रही हैं । दूसरों को लूटकर उनका अधिकाधिक शोषण कर अपना घर भरने का महानाटक अहर्निश चल रहा है । 'राम नाम जपना, पराया माल अपना' जैसे हमारे जीवन का मूलमंत्र बन गया है । कम से कम मेहनत कर अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करना चाहते हैं । जिन श्रमिकों के बलबूते पर इतना उत्पादन होता है, उनके श्रम का कोई मूल्य और महत्त्व नहीं । उन्हें कम में कम पारिश्रमिक देकर अधिकांश मुनाफा हम स्वयं हड़प रहे हैं । किसी व्यापारी या उद्योगपति की आज यही मनःस्थिति है । दूसरों के अधिकारों को कुचल कर, उन्हें भूखा मार कर, अपने घर में दौलत का अम्बार लगा लेना क्या चोरी नहीं है ? और ऐसा करके क्या हम उस तीर्थंकर के पावन उपदेश को झुठला नहीं रहे हैं ? समाजव्यापी भयंकर आर्थिक विषमता एवं विपन्नता इसका ज्वलंत प्रमाण है । कहाँ है महावीर का समत्व योग ? शोषण का भयंकर विषधर आठों प्रहर फुँकार मार रहा है । मजा यह है कि शोषण के नाम पर बने लखपति एवं करोड़पति श्रीमंत धर्म के नाम पर कर्मकाण्ड एवं बाह्याचार में उदारता से पैसा खर्च कर वाहवाही लूटकर समाज में झूठी प्रतिष्ठा प्राप्त कर लेते हैं । लगता है जैसे पैसे से सब खरीदा जा सकता है, धर्म भी, ईमान भी, सम्मान भी । ऐसी स्थिति में क्या यह सच नहीं है कि धर्म हमारे मानसिक विलास एवं मनोरंजन का साधन बनकर रह गया है । अन्यथा चालीस करोड़ इन्सानों की जिन्दगी से हम ऐसा भयानक खेल नहीं खेलते जो गरीबी की रेखा के नीचे जी रहे हैं ।

और अब आइये पंच महाव्रत के अन्तिम अंग अपरिग्रह पर । वहाँ तो अनर्थ का अकाण्ड ताण्डव हो रहा है । अपरिग्रह का अर्थ है संचय न करना, आवश्यकता से अधिक अपने पास न रखना । अगर धनोपार्जन अधिक हो जाये तो उसे दान-पुण्य, परोपकार में लगा दिया जाये । उसे अपने पास रखना पाप है, अधर्म है । पर दुर्भाग्य से हमारे दैनिक जीवन का आधार यह है कि हम

अहर्निश पाप की कमाई में लगे हैं और उसका संचय करते जा रहे हैं। काला बाजार, मिलावट करना व कम नाप-तोल की घृणित हरकतें, तथा सेवा में रिश्वतखोरी और हरामखोरी से प्राप्त धनराशि को अधिकाधिक बढ़ाने में संलग्न हैं। धन के प्रति अनन्त वासना एवं असीम अनुराग का नग्न रूप प्रतिपल नजर आता है। लगता है जैसे द्रव्य की उपासना हमारे जीवन का मूल मंत्र है और हमारा सारा प्रयत्न-पुरुषार्थ उसी के इर्द-गिर्द घूमता है। कितना खोखला एवं सारहीन है हमारा अपरिग्रह का दर्शन एवं चिन्तन। हम केवल शब्दों का खेल खेलते हैं और आदर्श की दुहाई भर देते हैं पर अपरिग्रह का पावन आदर्श एवं तत्त्वज्ञान हमारे अन्तरतम का स्पर्श नहीं कर पाता। तब उसकी सार्थकता कहाँ? हमारे विचार और कर्म में साम्य कहाँ? वह केवल छलावा मात्र है।

क्या यह युग-सत्य नहीं कि आज देश के धनाधीशों में जैनियों की संख्या विपुल मात्रा में है। स्पष्ट है कि यह सब परिग्रह का घिनौना खेल है। पैसे के प्रति हमारी आसक्ति, हमारा राग, हमारा मोह हमें मार रहा है। विलासपूर्ण जीवन एवं दिखावा उस सम्पदा की सहज परिणति है। उससे भी अधिक धन राशि हो तो वह तिजोरियों या बैंक खाते में पहुँच जाती है, परमार्थ हेतु उसका उपयोग नहीं हो पाता। उस परम वीतरागी, इतिहास-पुरुष महावीर पर जरा दृष्टि डालें। त्याग एवं अपरिग्रह के चरम बिन्दु पर पहुँचा अद्भुत है वह ज्योति पुरुष। त्याग, तितिक्षा एवं वैराग्य का इतना ऊँचा आदर्श दुनिया के इतिहास में और कहीं नहीं मिलता। महावीर इसमें अद्वितीय हैं। एकाकी हैं, अलग खड़े हैं ज्योति-स्तम्भ के रूप में अद्भुत प्रकाश विकीर्ण करते हुए। और हम उनके अनुयायी? क्या शर्म से सिर झुकने की स्थिति नहीं है? लगता है जैसे उस महान् विभूति का प्रेरणा-स्रोत आज सूख चुका है। उसका हमारे जीवन पर कोई नियमन नहीं, नियन्त्रण नहीं। वह केवल छल है, आडम्बर है, दिखावा है। धर्म आज अपनी अर्थवत्ता लगभग खो चुका है। बिडम्बना यह है कि जो जितना सम्पन्न एवं धनाधिपति है, स्तेय और परिग्रह का जो जितना आश्रय लिये हुए है, समाज में उसका उतना ही वर्चस्व एवं सम्मान है क्योंकि वह अवसरवादी एवं चतुर है। वह मन्दिर बना देता है, संघ निकाल देता है, तीर्थ यात्रा करा देता है एवं विशिष्ट अवसरों पर सैंकड़ों-हजारों लोगों को मुफ्त भोजन करा देता है। लगता है जैसे धर्म को भी पैसे से खरीदा जा रहा है। जो धर्म हमें वितृष्णा व विरक्ति सिखाता है वही उसका क्रीत दास बन कर रह गया है। धर्म जैसी पवित्र थाती का इससे बड़ा अवमूल्यन और क्या होगा?

तो यह है हमारे जैन जगत् की आज की तस्वीर, दिल हिला देने वाली, घोर तामसिकता से ओत-प्रोत । हमारी कथनी और करनी में विकट विरोधाभास है । लगता है जैसे हम धर्म के मूल स्वरूप को विस्मृत कर एक व्यामोह की स्थिति में पहुँच निविड़ अंधकार में भटक कर दिशाहीन हो गये तो यह है कि हमारा आज का धर्म केवल बाह्याचार, उपासना और कर्मकाण्ड तक ही सीमित है और उसी के द्वारा हम आत्म-परिष्कार एवं जीवन संस्कार की भूल-भुलैया में पड़े हैं । हम केवल कुछ घड़ी की उपासना-प्रक्रिया और विधि-विधानों को धर्म की इतिश्री समझ बैठे हैं जबकि हमारा दिन-रात का जीवन पापाचार में डूबा रहता है । वह धर्म कैसा जो जीवन का संस्कार-परिष्कार नहीं कर पाये ? वह धर्म कैसा जो हमारी अन्तर की ज्योति को प्रज्वलित न कर सके ? वह धर्म कैसा जो जड़ शरीर की साधना से मुक्ति दिला कर, इन्द्रियों की दासता से छुटकारा दिला कर, त्याग एवं तितिक्षा की क्रमिक अनुभूति के द्वारा आत्म-साक्षात्कार एवं मुक्ति के राज-मार्ग पर अग्रसर न कर सके ? वह धर्म कैसा जो हमें क्षणिक एवं नश्वर इन्द्रिय-सुख भोग से ऊपर उठाकर आत्मानन्द की शाश्वत एवं अमर अनुभूति न करा सके ?

आवश्यकता है कठोर आत्म-निरीक्षण कर सन्मार्ग पर आने की । भूल-भुलैया का खेल हम बहुत खेल चुके । अब तो हमें बाह्याचारों द्वारा धर्म को झुठलाने एवं आत्म-प्रवंचना के आत्मघाती नाटक को विवेक, कठोरता एवं दृढ़ संकल्प से बन्द करना होगा । भगवान् महावीर हमें सुबुद्धि दें, इसी पुनीत कामना के साथ उस ज्योति-पुरुष को शतशत नमन ।

—रामझरोखा, ७९३, केनरा बैंक की गली
चौपासनी रोड, जोधपुर (राज०)

चिरस्मरणीय संस्मरण

इस स्तम्भ के लिए अपने तथा अपने सम्बन्धियों के चिरस्मरणीय प्रसंग/संस्मरण/अनुभव भेजिए । प्रत्येक प्रकाशित संस्मरण/प्रसंग अनुभव पर आपको पाँच पुस्तिकायें पुरस्कार में दी जायेंगी । अपने संस्मरण/प्रसंग/अनुभव इस पते पर भेजें :—

मंत्री,
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार, जयपुर—३०२००३

मंत्र-माहात्म्य :

नवकार मंत्र संकट दूर कैसे करता है ?

□ श्री सूरजमल मेहता

महामंत्र नवकार १४ पूर्व का सार है। यह मंत्र शाश्वत है। इस मंत्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह मंत्र धर्म, देश, सम्प्रदाय, व्यक्ति, जाति आदि सभी भेदभावों से दूर है, इसमें सिर्फ गुणों की पूजा है। यह सब पापों का नाश करने वाला है, सब मंगलों में श्रेष्ठ मंगल है, जगत् में या लोक में यही मन्त्र शरणदाता है। यही मंत्र संकट दूर करता है, संकट दूर ही नहीं करता वरन् सिद्ध, बुद्ध, मुक्त पद भी दिलाता है, इसलिये इसे महामंत्र नवकार कहते हैं। जैनजगत् में यह सर्वोत्कृष्ट मंत्र माना जाता है। यह मंत्र निम्न प्रकार से हमारे संकट दूर करता है :—

(१) जब कभी किसी भी प्रकार का संकट हमारे समक्ष उपस्थित होता है और हम शीघ्र ही नवकार मंत्र का स्मरण करते हैं तो हम अपने आपको इतना सुरक्षित समझते हैं कि मानों हमारे चारों ओर वज्र की ऊँची-ऊँची दीवारें खड़ी हुई हैं और उसमें संकट हमें कष्ट पहुँचाना तो दूर, हमारे नजदीक पहुँचने को भी समर्थ नहीं है। वह इसी प्रकार असमर्थ हो जाता है जैसे कि जेल की ऊँची और मजबूत दीवारों को देखकर जेल में रहा हुआ कैदी छूटकर भागने में अपने को असमर्थ समझता है।

(२) संभव है हमारी शक्ति से भी अधिक शक्ति आने वाले संकट की हो जो हमें दुःख पहुँचाना चाहता हो। जिस समय हम नवकार मंत्र का स्मरण करते हैं, तब हम अपना सम्बन्ध अरिहन्तों, सिद्धों, आचार्यों, उपाध्यायों एवं सब साधुओं से जोड़ लेते हैं। आज देखने में आता है कि यदि हमारा सम्बन्ध राज्य के मुख्य मंत्री से हो तो राज्य में, और भारत के प्रधान मंत्री से हो तो भारत में हमें हानि पहुँचाना तो दूर, हमारी ओर कोई आँख उठाकर भी नहीं देख सकता। जब एक मुख्यमंत्री या प्रधानमंत्री के सम्बन्ध में इतनी शक्ति है तो फिर जिसका सम्बन्ध कम से कम दो करोड़ अरिहन्तों से, अनन्त सिद्धों से और कम से कम दो हजार करोड़ साधुओं से हो रहा हो, उसके आगे साधारण तो क्या बड़े से बड़े

संकट का भी जोर नहीं चल सकता। सुदर्शन सेठ की सूली का सिंहासन बन जाना, श्रीपालजी का कोढ़ का रोग दूर होकर कंचन काया बन जाना तथा उसके कष्ट दूर होना, सीता सती का अग्नि कुण्ड जल कुण्ड बन जाना, द्रौपदी का चीर बढ़ना, सोमा सती के हाथ में सर्प का फूल माला बनना आदि अनेक महापुरुषों के संकटों के उदाहरण हैं जो नवकार मंत्र के स्मरण से दूर हो गये और संकट दूर ही नहीं हुए, वे सुखरूप और मंगलरूप बन गये। इसीलिये तो माधव मुनि जी म० सा० ने सिद्ध स्तवन में कहा है :—

सिद्ध प्रभु को सुमरण जग में, सकल सिद्धि दातार।
मन वांछित पूरण सुर तरु सम, चिन्ता चूरण हार।।
सेवो सिद्ध सदा जयकार, जासे होवे मंगलाचार।

और यही बात 'बृहदालोयण' में श्री रणजीतसिंह जी ने भी कही है :—

पंच परमेष्ठि देव को, भजनपूर पहिचान।
कर्म अरि भाजे सभी, होवे परम कल्याण।।

नवकार मंत्र के स्मरण से तो संकट दूर होता ही है, उसके नाम में भी संकट से बचाने की शक्ति देखने को मिलती है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण है कि सभी चक्रवर्ती छह खण्ड के अधिपति होते हैं किन्तु सुभूम चक्रवर्ती ने सातवें खण्ड को विजय करने का विचार किया जिसके लिये सभी अधीनस्थ देवों ने मना किया, किन्तु वह नहीं माना और सातवें खण्ड को विजय करने के लिये नाव में बैठकर समुद्र में जाने लगा तो सब अधीनस्थ देवों ने उसका साथ छोड़ दिया। तब उसने देवों से कहा कि 'देखो, मेरी नाव तुम्हारे सहारे के बिना भी जा रही है।' देवों ने कहा कि 'तुम्हारी नाव में नवकार मन्त्र लिखा हुआ है जिसके कारण यह चल रही है।' इस पर सुभूम चक्रवर्ती ने नाव में लिखा नवकार मंत्र मिटा दिया, मंत्र मिटते ही सुभूम चक्रवर्ती नाव सहित पानी में डूबकर मर गया।

(३) संकट दूर होने का तीसरा उपाय यह है कि जब हम नवकार मंत्र का स्मरण करते हैं तो हम इतने सशक्त हो जाते हैं कि संकट आने पर हम घबराते नहीं हैं, वरन् धैर्य एवं शांतिपूर्वक उसे सहन करते हैं। हम यह सोचते हैं कि जिसे हमने स्वयं ने बोया है, उसे काटना भी तो हमें ही पड़ेगा। जब कर्म हमने किया तो उसके फल को हमें ही भोगना पड़ेगा। जब हमने हँसते-हँसते कर्मबन्ध किया तो अब भोगने के समय रोना क्यों? अब भी हमें धैर्य और शांति के साथ इसे भोगना चाहिये। इस प्रकार नवकार मंत्र के स्मरण से संकट को सहन करने की शक्ति हमें प्राप्त हो जाती है।

(४) जैसा कि ऊपर बताया गया है नवकार मंत्र के स्मरण से सब प्रकार के संकट दूर हो जाते हैं। यदि पंच परमेष्ठि का अथवा अरिहन्त, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और सर्व साधु इनमें से किसी भी एक पद की स्तुति करते-करते उत्कृष्ट रसायन आ जावे तो तीर्थंकर गोत्र का उपार्जन हो जाता है। इसका भावपूर्वक स्मरण करने से अपार सुख-शान्ति मिलती है और आत्मा अजर-अमर बन जाती है, जैसा कि अशोक मुनि ने भी 'नवकार मंत्र स्तवन' में कहा है :—

'नित नई वधाई सुने कान, लक्ष्मी वरमाला पहनाती है।
'अशोक मुनि' जय-विजय मिले, शान्ति, प्रसन्नता बढ़ जाती है।।
सन्मान मिले, सत्कार मिले, भव-जल से नैया तारी है।

—छाजूसिंह के दरवाजे के सामने, अलवर

कविता :

और हम कल्मष जलाएँ

□ श्री देवेन्द्र भट्ट

हम टटोलें खुद को पहले,
और इतना जान लें।
जो तिमिर भीतर हमारे,
उसको अपना मान लें।।

दूसरों का दोष-दर्शन,
दृष्टि अपनी छीनता है।
खुद बड़े औ' अन्य छोटे,
मान लेना हीनता है।।

क्यों करें परिवाद पर का,
और अपना स्वर गलाएँ।
पावक बनें सद्कर्म अपने,
और हम कल्मष जलाएँ।।

—कुमुद कुटीर, कुराबड़ (उदयपुर)-३१३ ७०३

बाल कथामृत* (६९)

☐ १८ वर्ष तक के बच्चे इस कहानी को पढ़कर प्रश्नों के उत्तर १५ दिन में "जिनवाणी" कार्यालय को भेजें। उत्तरदाताओं के नाम पत्रिका में छापे जायेंगे। प्रथम, द्वितीय व तृतीय आने वालों को क्रमशः २५, २० व १५ रुपयों की उपहार राशि भेजी जायेगी। श्री राजेन्द्रप्रसादजी जैन, एडवोकेट भवानीमंडी की ओर से उनकी माताजी की पुण्य स्मृति में ११ रुपये का 'श्रीमती बसन्तबाई स्मृति पुरस्कार' चतुर्थ आने वाले को दिया जायेगा। प्रोत्साहन पुरस्कार स्वरूप १० बच्चों तक को "जिनवाणी" का सम्बद्ध अंक निःशुल्क भेजा जायेगा।

—सम्पादक
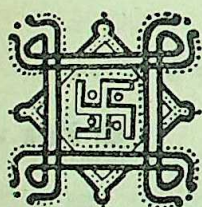
सन्तोषी सदा सुखी

☐ श्री बलवन्तसिंह हाड़ा

एक गाँव में एक गरीब व्यक्ति रहता था। वह नित्य एक महात्मा के आश्रम पर जाया करता था। महात्मा ने उसकी सेवा से प्रसन्न होकर उसे भगवान् की आराधना का मंत्र दिया। वह श्रद्धा से भगवान् का नित्य जाप करता रहा। एक दिन प्रातः जब आराधना कर रहा था, सर्व समर्थ भगवान् उसके सामने प्रकट हो गये और बोले—"मैं तेरी प्रार्थना से प्रसन्न हूँ, तेरी जो भी इच्छा हो माँगले।" गरीब आदमी असमंजस में पड़ गया, उससे कुछ माँगते न बना। उसने कहा—"भगवन्! कल सुबह मांगूँगा।" भगवान् अन्तर्धान हो गये।

गरीब आदमी ने सोचा कि मेरे रहने को घर नहीं है, पहले घर माँगा जाय, फिर सोचा कि गाँव का पटेल सब पर रौब गाँठता है, पटेल बना जाय, लेकिन उसने सोचा कि पटेल तो तहसीलदार के सामने दबा दबासा रहता है। तहसीलदार बना जाय, लेकिन उसको तुरन्त विचार आया कि तहसीलदार तो

* श्री राजीव भनावत द्वारा सम्पादित–परीक्षित स्तम्भ।

कलक्टर की आरजू विनती करते देखा जाता है। क्यों न कलक्टर ही बना जावे। इस प्रकार एक-एक कर नई-नई इच्छाएँ उसके मन में जाग्रत होती रहीं और दूसरा सवेरा हो गया।

भगवान् प्रकट हो गये और उसकी इच्छा के बारे में पूछा। तब उसने कहा—"भगवन्! आप दयालु हैं। मुझे कुछ देना ही चाहते हैं अतः मुझे कुछ ऐसी वस्तु माँगने का एक दिन का अवसर और दीजिए ताकि मैं उस वस्तु के लिए सोच सकूँ। मैं कल प्रातः आपसे निवेदन कर दूँगा।" भगवान् पुनः अदृश्य हो गये।

गरीब आदमी पुनः सोच में पड़ गया। उसको रात में भी नींद नहीं आई। प्रातः भगवान् पुनः प्रकट हुए। गरीब आदमी ने सोचा कि अभी तो मुझे कोई वस्तु मिली नहीं, उसकी प्राप्ति की आशा में दो दिन से परेशानी उठा रहा हूँ। यदि वे वैभव मुझे मिल गये तो मेरी क्या दशा होगी? उसने भगवान् के चरणों पर गिरकर प्रार्थना की "भगवन्! मुझे तो मैं जैसा हूँ, वैसा ही रहने दीजिए। मुझे कुछ नहीं चाहिए। मुझे तो आप अपना नाम स्मरण करते रहने का आशीर्वाद दीजिए।" भगवान् उसकी बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। उसके सिर पर हाथ रख कर कहा—"तुम्हें जीवन में कभी किसी चीज की कमी न रहेगी।" सच है, आत्म-संतोष का गुण सबसे बड़ी दौलत है। कहा भी जाता है—"संतोषी सदा सुखी।"

—खाल की हवेली, झालावाड़ (राज०)

अभ्यास के लिए प्रश्न

उपर्युक्त कहानी को पढ़कर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

१. महात्मा ने प्रसन्न होकर गरीब व्यक्ति को क्या दिया?
२. श्रद्धापूर्वक जाप करने से उसे क्या लाभ हुआ?
३. उसने भगवान् से कोई वरदान क्यों नहीं माँगा?
४. 'इस प्रकार एक-एक कर नई-नई इच्छाएँ उसके मन में जाग्रत होती रहीं।' इसका क्या कारण था?
५. 'उसको रात में भी नींद नहीं आई?' इसका क्या कारण था?
६. यदि आप उस व्यक्ति के स्थान पर होते तो भगवान् से क्या माँगते?
७. भगवान् के दुबारा प्रकट होने पर उसने क्या सोचा?
८. इस कहानी से क्या शिक्षा मिलती है?

९. 'आत्म-सन्तोष का गुण सबसे बड़ी दौलत है।' इस कथन को स्पष्ट करने वाला कोई प्रसंग लिखिए।

१०. आप कैसे कह सकते हैं कि 'सन्तोषी सदा सुखी।' कोई उदाहरण दीजिए।

'जिनवाणी' के अप्रैल, १९८९ के अंक में प्रकाशित राज सौगानी की कहानी **'गुरु की खोज'** (६७) के उत्तर जिन बाल पाठकों से प्राप्त हुए हैं, उन सभी को बधाई।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं के नाम

प्रथम—श्री पंकज कर्णावट, द्वारा श्री जसवंतराजजी एडवोकेट, सिंघवी मौहल्ला, **सोजत सिटी** (जि० पाली) राज०।

द्वितीय—श्री सुरेशकुमार जैन, द्वारा श्री सम्पतराजजी बोथरा, गाँधी बाड़ी, पो० **नागौर–३४१ ००१** (राज०)।

तृतीय—सुश्री ब्रजेश कुमारी भाटी, द्वारा श्री लक्ष्मीनारायणजी भाटी, रेल्वे फाटक के बाहर, पुलिस चौकी के पास, **चौमहल्ला** (झालावाड़)।

चतुर्थ—सुश्री अंजु कर्णावट, द्वारा श्री अजीतराजजी कर्णावट, ऋषभायतन, ४४०, रोड १-सी, सरदारपुरा, **जोधपुर**

प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त उत्तरदाता

जिन्हें जून, १९८९ की **'जिनवाणी'** उपहार स्वरूप भेजी जा रही है :—

१. श्री सुनीलकुमार भाटी, द्वारा श्री लक्ष्मीनारायणजी भाटी, रेल्वे फाटक के बाहर, पुलिस चौकी के पास, **चौमहल्ला** (जि० झालावाड़)।

२. सुश्री मंजु सिंघवी, द्वारा मगन भाई मार्केट, पोरवाल धर्मशाला के पास, **भवानीमंडी–३२६ ५०२**

३. श्री मनोजकुमार सिंघवी, द्वारा श्री दोलेचन्दजी सिंघवी, क्षेत्रपाल रोड, औदिच्यवाड़ा, **बाँसवाड़ा** (राज०)।

अन्य उत्तरदाता

आलनपुर–सवाईमाधोपुर से सावित्री जैन, **भादसोड़ा** से सुनीलकुमार खैरोदिया, रमेश एम० पोखरणा, **झालरापाटन** से अजयकुमार जैन, **भरतपुर** से संतोषकुमार जैन, **नागौर** से विमलकुमार जैन, नवरत्नमल बोथरा, **नीमच**

से सुदर्शना चौरड़िया, **श्री महावीर जैन धार्मिक पाठशाला, बजरिया सवाई-माधोपुर** से आशीष जैन, अमित जैन, **भवानीमंडी** से मनीषा श्रीश्रीमाल, शिक्षा श्रीश्रीमाल, **श्रीरामपुर (महाराष्ट्र)** से शिल्पा सुरेशचन्द बोकड़िया, **जोधपुर** से मनीष कर्णावट, **गंगापुर सिटी** से शैलेन्द्रकुमार जैन, **मदनगंज-किशनगढ़** से जितेन्द्र कोठारी।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं के चुने हुए वे घटना-प्रसंग जिसमें अपना काम अपने हाथ से करने की बात है—

[१]

करीब डेढ़ साल पूर्व की बात है। मैंने कक्षा ९ में प्रवेश लिया था। तब मुझे व मेरे दोस्तों को क्रिकेट खेलने का बड़ा शौक था, लेकिन स्कूल के मैदान में पिच नहीं था व खेल के मैदान में कुछ छोटी-छोटी झाड़ियाँ भी थीं। मैंने सभी दोस्तों को साथ लेकर प्रधानाध्यापकजी के पास जाकर निवेदन किया कि वे मैदान को साफ करवाने की व्यवस्था करें। लेकिन प्रधानाध्यापकजी ने कहा कि उनके पास चपरासियों की कमी है। तब फिर मैंने अपने दोस्तों से कहा कि हम सब मिलकर चार-पाँच दिन में स्कूल के समय के बाद प्रतिदिन २ या ३ घण्टे श्रम करें तो यह मैदान साफ हो सकता है। सभी मित्रों ने मुझे सहयोग दिया और मैदान एक सप्ताह में साफ हो गया।

फिर हमने पिच बनाने की सोची। हमारे में से एक के पिताजी जो ठेकेदार हैं उनके पास सड़क कूटने का इंजन था। हमने उनसे निवेदन किया कि अगर आप हमारा पिच तैयार करवा दें तो हम आपके सदा आभारी रहेंगे। उन्होंने इस बात को स्वीकार करते हुए एक दिन इंजन उपलब्ध करवा कर पिच तैयार करवा दिया। इस प्रकार हमारे हाथ की मेहनत रंग लाई। उसके बाद हम सभी ने साल भर खेलने का आनन्द लिया।

—**पंकज कर्णावट**, सोजत सिटी

[२]

एक रेल्वे स्टेशन पर एक बंगाली डॉक्टर औषधियों का एक छोटा-सा बैग पास में रखे हुए, खड़ा-खड़ा किसी कुली को पुकार रहा था। बैग बहुत छोटा था, इसलिए कोई कुली उसके पास नहीं गया। यहाँ सवाल बैग के भार का नहीं,

डॉक्टर की प्रतिष्ठा का था। एक डॉक्टर होकर भला कोई बैग कैसे उठा सकता है?

पास ही खड़े एक युवक ने डॉक्टर की इस परेशानी को समझ लिया। उसने डॉक्टर साहब का बैग उठा कर उन्हें सड़क तक पहुँचा दिया। युवक को डॉक्टर साहब ने एक चवन्नी दी। युवक ने हँसते हुए उसे लौटा कर कहा—बैग में कुछ भार तो था ही नहीं, फिर मजदूरी कैसी? दूसरी बात यह है कि दूसरों की सहायता के बदले मैं कोई धन स्वीकार नहीं करता। मुझे ईश्वरचन्द्र विद्यासागर कहते हैं। इस प्रकार युवक का नाम सुनकर डॉक्टर बहुत शर्मिन्दा हुआ। ईश्वरचन्द्रजी को प्रणाम करने के बाद उसने स्वयं अपना बैग उठा लिया और भविष्य में अपना काम स्वयं करने की प्रतिज्ञा उनके समक्ष की।

—**सुरेशकुमार जैन**, नागौर

[३]

एक बार गाँधीजी से मिलने एक सज्जन आये। बातों के दौरान गांधीजी की नजर उन सज्जन के कोट पर पड़ी। उनका कोट थोड़ा फटा हुआ था। गाँधीजी बोले—क्यों भाई! आप फटा हुआ कोट पहन कर क्यों आए? इसे सीकर पहनते तो अच्छा रहता। सज्जन ने जवाब दिया—बापू, आज दर्जी काम पर नहीं आया, इसलिए मजबूरी में फटा हुआ ही पहनना पड़ा। उनकी बात सुनकर गाँधीजी बोले—लाओ, अपना कोट उतार कर मुझे दो। मैं अभी सिए देता हूँ। उनके मना करने के बावजूद गाँधीजी ने अपने हाथ से कोट सीकर उन्हें दिया और बोले—देखो भाई! जब हम अपना काम स्वयं करने की क्षमता रखते हैं तो हमें किसी पर निर्भर नहीं रहना चाहिये और अपना काम स्वयं करना चाहिए। आत्म-निर्भरता ही जीवन की सफलता है। गाँधीजी की बात सुनकर वे सज्जन लज्जित हुए और भविष्य में उन्होंने अपना काम अपने हाथ से करने की प्रतिज्ञा की।

—**ब्रजेशकुमारी भाटी**, चौमहल्ला

[४]

हमारे परिवार में एक बर्तन साफ करने वाली हमेशा आती रही है। पर कुछ महिनों पहले वह बीमार हो गयी। दूसरी चौका बर्तन साफ करने वाली नहीं मिली तो हम दोनों बहनों ने यह काम अपने जिम्मे ले लिया और तब से मैं झाड़ू लगाकर घर साफ करती हूँ, पौंचा लगाती हूँ और कभी-कभी जब मेरी बहिन टाइप करने जाती है तो बर्तन भी साफ कर लेती हूँ। हाथ से काम करने में तकलीफ नहीं बल्कि मजा आता है।

—**अंजु कर्णावट**, जोधपुर

[५]

डॉ० जाकिर हुसैन तब बिहार के राज्यपाल थे। बाहर के छात्रों का एक दल उनसे मिलने आया। वे छात्रों से बड़े प्यार से मिले तथा चाय पर कई प्रश्न पूछते रहे। एक छात्र ने उन्हें बताया कि वह अपनी विद्यालय यूनियन में स्वास्थ्य मंत्री है। यह पूछने पर कि मंत्री की हैसियत से वे क्या काम करते हैं तो छात्र ने बताया कि वह कक्षाओं और विद्यालय के अन्य कक्षों की सफाई की जाँच करता है तथा जहाँ गंदगी होती है उसे साफ करवाता है। सब बातें सुनने के बाद जाकिर हुसैन ने पूछा—"क्या आप झाड़ू लगाना जानते हैं और क्या स्वयं झाड़ू लगाते हैं?" लड़के का उत्तर नकारात्मक था। जाकिर हुसैन ने कहा—"तब आपको कैसे अन्दाजा हो सकता है कि सफाई ठीक हुई या नहीं? जब तक कोई आदमी स्वयं काम नहीं जानता हो तब तक उसकी निगरानी कैसे कर सकता है? मंत्री उसे बनना चाहिये जो संबंधित काम की सही जानकारी रखता हो तथा उसे अपना काम अपने आप करने का अभ्यास हो। उसे अपना काम अपने हाथों से करना चाहिये।"

डॉ० जाकिर हुसैन की बात सुनकर वह छात्र बहुत शर्मिंदा हुआ और बोला—"अब मैं अपना काम अपने हाथों से करूँगा।"

—**सुनीलकुमार भाटी**, चौमहल्ला

१०१ रुपये में १०८ पुस्तकें प्राप्त करें

अ. भा. जैन विद्वत् परिषद् द्वारा प्रारम्भ की गई "ज्ञान प्रसार पुस्तक-माला" के अन्तर्गत अब तक ५७ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। कुल १०८ पुस्तकें प्रकाशित करने की योजना है। प्रत्येक पुस्तक का फुटकर मूल्य दो रुपया है पर जो व्यक्ति या संस्था १०१ रुपये भेजकर ट्रैक्ट साहित्य सदस्य बन जायेंगे, उन्हें १०८ पुस्तकें निःशुल्क प्रदान की जायेंगी।

तपस्या, विवाह, जयन्ती, पुण्यतिथि पर प्रभावना के रूप में वितरित करने के लिए १०० या अधिक पुस्तकें खरीदने पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायेगा।

कृपया १०१ रुपये मनिआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा 'अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद्' के नाम सी-२३५ ए, तिलक नगर, जयपुर-३०२ ००४ के पते पर भेजें।

—**डॉ. नरेन्द्र भानावत**
सम्पादक-संयोजक

प्रश्नमंच कार्यक्रम [३१]
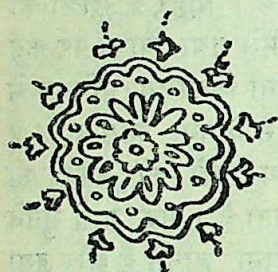
सम्यक् तप•

□ प्रस्तोता श्री पी. एम. चौरड़िया

[१]

(१) **प्रश्न**—तप क्या है ?

उत्तर—(१) 'कर्मणां तापनात् तपः'

जो कर्म को तपावे, वह तप। यहाँ तपाने का आशय नाश एवं क्षय करने से है।

(२) 'इच्छा निरोधस्तपः'

स्वेच्छा से, समभावपूर्वक, विवेक से इच्छाओं को विविध विषयों से रोकना तप है।

(३) 'तप्यते कर्माणिमलाः निवार्येन तत् तपः।'

जो कर्म मल को तपा कर आत्मा से अलग करदे, वह तप है।

(४) 'साहीणे चयइत्ति तवो।'

भोगोपभोग की वस्तुओं के प्राप्त होने पर उसे अपनी स्वेच्छा से, बिना किसी दवाव या भय से त्याग करे, वह तप है।

(२) **प्रश्न**—तप, ताप और संताप में क्या अन्तर है ?

उत्तर—जो तप के नाम पर अज्ञान व कषाय से स्वयं को व दूसरों को क्लेशित करे, वह ताप है। जो स्वार्थ या मोह से, अपमान आदि से शारीरिक कष्ट सहे वह संताप है, किन्तु जो मात्र कर्मक्षय हेतु विवेकपूर्वक विषय, कषाय व आहार का निग्रह करे, वह सच्चा तप है।

•श्री एस. एस. जैन युवक संघ, मद्रास द्वारा आयोजित कार्यक्रम जिसमें स्वाध्याय संघ, युवक संघ एवं बालिका मंडल ने भाग लिया। —सम्पादक

(३) **प्रश्न**—अल्प भाषण तप के कौनसे भेद में आता है ?

उत्तर—'ऊनोदरी तप में'

[२]

(१) **प्रश्न**—तप के तीन प्रकार—कायिक, वाचिक और मानसिक भी किये जा सकते हैं। इनमें कायिक तप क्या है ?

उत्तर—शौच, आर्जव, मार्दव, ब्रह्मचर्य आदि का पालन करना कायिक तप है।

(२) **प्रश्न**—वाचिक तप क्या है ?

उत्तर—प्रिय, हितकर, सत्य और अनवद्य बोलना, स्वाध्याय में रत रहना, वाचिक तप है।

(३) **प्रश्न**—मानसिक तप किसे कहते हैं ?

उत्तर—आत्म-निग्रह, मौन भाव, सौम्यता आदि मानसिक तप है।

[३]

(१) **प्रश्न**—सकाम निर्जरा कब से शुरू होती है ?

उत्तर—समकित प्रकट होने पर सकाम निर्जरा होती है। समकित बिना की गई सब अकाम निर्जरा मानी जाती है।

(२) **प्रश्न**—साधु की भिक्षाचरी को शास्त्रों में कहीं-कहीं 'मधुकरी' क्यों कहा गया है ?

उत्तर—साधु की भिक्षाचरी या गोचरी को मधुकरी वृत्ति से तोला गया है। श्रमण को मधुकर 'भँवरे' की उपमा दी गई है। जैसे भँवरा फूलों पर घूमता हुआ थोड़ा-थोड़ा उनका रस पीता जाता है, फिर उड़ जाता है, और फिर किसी अन्य फूल पर जाकर उसका थोड़ा सा रस पी लेता है, इसी प्रकार साधु गृहस्थ के घर में सहजरूप से बने हुए भोजन आदि में से थोड़ा-थोड़ा ग्रहण कर अपना जीवन निर्वाह भी कर लेता है और गृहस्थ को भी कोई कष्ट नहीं होता। इसलिए साधु की भिक्षाचरी को शास्त्रों में कहीं-कहीं 'मधुकरी' कहा गया है।

(३) **प्रश्न**—चन्दनबाला तप किस प्रकार किया जाता है ?

उत्तर—तेला करके पारणे में उड़द के बाकले व कोई रुक्ष नीरस वस्तु ग्रहण करना। यह तप चन्दनबाला के तेले की स्मृति में किया जाता है।

[४]

(१) **प्रश्न**—करोड़ वर्ष तक तप कियो, नहीं समकित है पास ।
अन्न नहीं उगियो खेत में, कोरी उगी घास ।।

उपर्युक्त दोहे में कवि ने क्या दर्शाया है ?

उत्तर—बिना सम्यक् ज्ञान एवं दर्शन के तपस्या की कोई कीमत नहीं है, वह केवल बाल तप है चाहे करोड़ वर्ष तक भी तप क्यों न किया जाए। जिस प्रकार बिना जानकारी एवं विवेक से की गई खेती से अन्न नहीं उत्पन्न होता, केवल घास ही उत्पन्न होती है, उसी प्रकार बिना समकित की गई तपस्या से कर्म का क्षय व निर्जरा शीघ्र गति से नहीं होती।

(२) **प्रश्न**—अनजी नाचे, अनजी कूदे, अनजी करे गहर का ।
आज अनजी पेट नहीं है, भूल गया मटर का ।।

उपर्युक्त दोहे में कवि क्या कहना चाहता है ?

उत्तर—जब तक हम अन्न ग्रहण करते हैं तब तक हमारी इन्द्रियाँ एवं मन अत्यधिक चंचल रहते हैं, लेकिन जिस दिन से अन्न ग्रहण नहीं किया जाता, हमारा मन और इन्द्रियाँ शांत हो जाती हैं, इन पर अंकुश लग जाता है।

(३) **प्रश्न**—वह सोना किस काम का, जिससे टूटे अंग ।
'मिश्री' तप वह क्यों करे, जाहि समाधि भंग ।।

उपर्युक्त दोहे में कवि क्या कहना चाहता है ?

उत्तर—उस विश्राम (सोने) का कोई लाभ नहीं होता, जिसको करने से हमारे शरीर के अंग-अंग में पीड़ा हो। उसी प्रकार वह तपस्या भी हितकर नहीं है जिससे हमें मानसिक अशान्ति मिले। अर्थात् जब तक साता हो, समाधि भंग न हो, तब तक तपस्या करो।

[५]

(१) **प्रश्न**—तप को अग्नि किस अपेक्षा से कहा गया है ?

उत्तर—कर्मों को सूखे घास की उपमा से उपमित करने के कारण उसको जलाने के लिये तप को अग्नि कहा गया है।

(२) **प्रश्न**—भगवान महावीर के जीव ने 'नन्दन भव' में कितने मास-खमणों की तपस्या की ?

उत्तर—११ लाख ६० हजार

(३) **प्रश्न**—भिक्षाचरी का एक नाम है 'वृत्ति संक्षेप'। वृत्तिसंक्षेप की व्याख्या कीजिए।

उत्तर—साधुओं को गोचरी में मन इच्छित आहार प्राप्त नहीं हो सकता। कभी गर्म आहार की आवश्यकता होने पर ठंडा आहार मिल जाता है और कभी मधुर आहार की आवश्यकता होने पर रूखा सूखा नीरस आहार मिलता है, किन्तु साधु इसमें संतोष करता है, अपनी इच्छा का, वृत्ति का, संकोच करता है। इस कारण इसे 'वृत्ति संक्षेप' कहा गया है।

[६]

(१) 'स्वर्ग के सात द्वारों में पहला द्वार तप है' यह किस महान् ग्रन्थ में कहा गया है ?'

उत्तर—'महाभारत' में।

(२) **प्रश्न**—तप को किस सूत्र में समाधि का नाम दिया है ?

उत्तर—'दशवैकालिक सूत्र के नवमें अध्ययन में।

(३) **प्रश्न**—'तपस्या धर्म का पहला और आखिरी कदम है।' उपर्युक्त विचार किसने प्रकट किए !

उत्तर—महात्मा गांधी ने।

[७]

(१) **प्रश्न**—केश लोच करना, ग्रामानुग्राम विचरना, शीत-उष्ण आदि २२ परिषह सहन करना आदि किस तप के अन्तर्गत आते हैं ?

उत्तर—काया क्लेश तप के अन्तर्गत।

(२) **प्रश्न**—उपवास, बेला, तेला इत्यादि तपस्या करना साधक का मूल गुण है अथवा उत्तर गुण ?

उत्तर—उत्तर गुण।

(३) **प्रश्न**—लौकिक परम्परा में तीन प्रकार के तप बतलाये गए हैं—(१) तामस तप, (२) राजस तप, (३) सात्विक तप।

सात्विक तप के विषय में बताइये।

उत्तर—जो तप किसी प्रकार की फलाकांक्षा रखे बिना (मात्र कर्म निर्जरा हेतु) परम श्रद्धा से मन, वचन व काया से किया जाता है, वह सात्विक तप कहलाता है। यह आत्म-शुद्धि हेतु होता है।

[८]

(१) **प्रश्न**—'तवसा धुणइ पुराण पावगं'

इसका अर्थ बतलाइये।

उत्तर—तप से पुराने पाप भी नष्ट हो जाते हैं।

(२) **प्रश्न**—'धम्मो मंगल मुक्कीट्ठं, अहिंसा संजमो तवो।'

—दशवै. अ. १ गा. १

सूत्र की उपर्युक्त वाणी का अर्थ बताइये।

उत्तर—अहिंसा, संयम व तप रूप धर्म उत्कृष्ट मंगल हैं।

(३) **प्रश्न**—'सद्दा बीजं तपो वुट्ठि'

उपर्युक्त शब्दों का अर्थ कीजिए।

उत्तर—श्रद्धा मेरा बीज है, तप मेरी वर्षा है।

[९]

(१) **प्रश्न**—प्रायश्चित्त शब्द का सन्धि-विच्छेद कर उसकी परिभाषा कीजिए।

उत्तर—प्रायश्चित्त शब्द दो शब्दों से मिल कर बना है। प्रायः + चित्त। प्रायः का अर्थ है—अपराध और चित्त का अर्थ है—शोधन-संशोधन, मार्जन-मंथन। अतः वह क्रिया जिसको करने से अपराध का शुद्धिकरण हो, प्रायश्चित्त है।

(२) **प्रश्न**—मंत्र का जाप करना, पाठ करना, स्तोत्र आदि पढ़ना—यह सब स्वाध्याय के कौनसे भेद में आते हैं?

उत्तर—'परिवर्तना'। जप आदि में मंत्र-पाठ का बार-बार चिन्तन करना होता है, इसलिये इन्हें परिवर्तना स्वाध्याय के भेद में लिया गया है।

(३) **प्रश्न**—'जिस प्रकार कछुआ सब ओर से अपने अंगों को समेट कर शांत-गुप्त होकर बैठता है, वैसे ही साधक सांसारिक विषयों से अपनी इन्द्रियों

को सब प्रकार से समेट लेता है, तब उसकी प्रज्ञा-धर्म बुद्धि स्थिर हो जाती है।'
—गीता २/५८

जैन धर्म में कौनसे तप की आराधना करने से उपर्युक्त फल मिलता है ?
उत्तर—प्रतिसंलीनता तप से।

[१०]

(१) **प्रश्न**—

विनय धर्म

(तर्ज—जिया बेकरार है·······)

विनय धर्म आचार है, मानव का श्रृंगार है।
विनय भाव से तुच्छ भी, बन जाता सरदार है।।टेर।।

पंखा, पानी, झूला झुककर, फिर ऊँचा उठ जाए जी।
जो जितना नीचे झुकता है, उतना आदर पाए जी।।

आशीर्वाद-स्नेह मिलता है, विनय सभी को प्यारा हो।
'अर्जुन' को जय मिली विनय से, और दुर्योधन हारा हो।।

उपर्युक्त स्तवन किसने लिखा ?

उत्तर—'उपाध्याय केवल मुनिजी ने।'

(६) **प्रश्न**—

तप री महिमा

(तर्ज—तेजाजी·······)

धारो धारो धारो थें, तप धारो भाई रे।
तप री महिमा अपरम्पार है।।टेर।।

तप चिंतामणि रत्न, ज्ञानी फरमायो रे।
ऋद्धि-सिद्धि तो देवे मोटकी।।१।।

तप रूप अग्नि में, कर्म जलाओ रे।
आतमा उज्ज्वलता थांरी होवसी।।२।।

जन्म जरा रा सब दुःख मिट जासी रे।
चेतन जासी रे शिव लोक में।।३।।

उपर्युक्त स्तवन के रचयिता कौन हैं ?

उत्तर—श्री धर्मेश मुनिजी ।

(३) **प्रश्न**—

तप महान् है

(तर्ज—जिया बेकरार है.......)

तप एक धर्म महान् है, करता जो कल्याण है ।
तप शक्ति से आत्मा, बन जाता भगवान है ।।

तप शक्ति की अद्भुत महिमा, सभी शास्त्र बतलाते हैं ।
तप से कोटि-कोटि जन्मों के, पाप दग्ध हो जाते हैं ।।

'तवसा निज्जरिज्जइ कम्मं', वीर प्रभु की वाणी है ।
जगत पूज्य बन जाता जग में, तप से पामर प्राणी है ।।

जप और तप को छोड़ छाड़, जो काया पुष्ट बनाते हैं ।
रोग, शोक और मौत आये तब, कर मल-मल पछताते हैं ।।

उपर्युक्त स्तवन के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—कीर्ति मुनिजी ।

[११]

(१) **प्रश्न**—'घी खायो छानो कोनी रैवे ।' —एक राजस्थानी कहावत

तपस्या के सम्बन्ध में इसका क्या अर्थ है ?

उत्तर—घी खाया हुआ छिपता नहीं है, शरीर पर अपने आप उसका तेज दमकने लगता है, वैसे ही तप भी तपा हुआ छुपता नहीं है । तपस्वी की ऋद्धि, तेज और प्रभाव अपने आप ही बोलने लग जाते हैं ।

(२) **प्रश्न**—'जे नमे ते गमे' एक कहावत

उपर्युक्त कहावत कौनसे तप की ओर इंगित करती है ?

उत्तर—विनय ।

(३) **प्रश्न** 'दिवस भर चरा पण एकादशी करा ।'

उपर्युक्त विचार किस धर्म में व्यक्त गिये गये हैं ?

उत्तर—वैष्णव धर्म में।

[१२]

(१) बाह्य तप और आभ्यन्तर तप में क्या अन्तर है ?

उत्तर—बाह्य तप में शरीर से सम्बद्ध और आँखों से देखे जा सके, वैसे सभी नियमन आ जाते हैं, जबकि आभ्यन्तर तप में जीवन-शुद्धि के सभी आवश्यक नियम आ जाते हैं। बाह्य तप क्रियायोग है जबकि आभ्यन्तर तप ज्ञानयोग की पुष्टि के लिए है।

(२) **प्रश्न**—शास्त्रों में चार परम दुर्लभ वस्तुओं में मानव जन्म को परम दुर्लभ माना है, उसे चिंतामणि रत्न की उपमा दी है और दूसरी ओर शरीर को कष्ट व क्लेश (काया-क्लेश) की बात कही गई है। इन विचारों में परस्पर यह विरोध क्यों ?

उत्तर—शरीर को कष्ट देने का अर्थ शरीर का नाश करना नहीं, किन्तु उसका सदुपयोग करना है। शरीर हमारा शत्रु नहीं है, किन्तु सेवक है। शत्रु का नाश किया जाता है किन्तु सेवक को सदा प्रोत्साहित करके उससे काम लिया जाता है। शरीर आत्मा का सेवक है, आत्मा को धर्म की साधना कराने में उपयोगी है। अतः शरीर को बनाये रखते हुए आवश्यकतानुसार उसका पोषण करें तथा त्याग, तप, जप, ध्यान, कायोत्सर्ग कर उस शरीर का सदुपयोग करें।

(३) **प्रश्न**—'ताव कायं ठाणेणं, मोणेणं, झाणेणं, अप्पाणं बोसिरामि।' उपर्युक्त शब्दों का अर्थ उताइये।

उत्तर—ताव—तब तक

कायं—काया को

ठाणेणं—स्थिर करके

मोणेणं—मौन रहकर

झाणेणं—ध्यान धर कर

अप्पाणं—अपनी आत्मा को (कषाय आदि से।

वोसिरामि—अलग करता हूँ।

—89, Audiappa Naicken Street, 1st Floor
Sowcarpet, MADRAS-600 079

ज्ञानामृत–१० :

आत्म-चिन्तन से स्थिर बुद्धि

□ डॉ० प्रेमचन्द रांवका

कोऽहं कीदृग्गुणः क्वत्यः किं प्राप्यः किं निमित्तिकः ।
इत्यूहं प्रत्यहं नो चेदस्थाने हि मतिर्भवेत् ।।

आचार्य वादीभसिंह अपने 'क्षेत्रचूड़ामणिलंकार' के उक्त श्लोक में—आत्मालोचन की प्रतिदिन की आवश्यकता का प्रतिपादन करते हुए कहते हैं—मैं कौन हूँ, मुझमें क्या गुण है, मैं कहाँ से आया हूँ, मुझे यहाँ क्या प्राप्त करना है; उसकी प्राप्ति का साधन क्या है?—आदि बातों पर यदि विचार न किया जाये तो बुद्धि उन्मार्ग में प्रवृत्त हो जाती है।

हम संसारी जीव दिन-रात अन्यान्य चिन्ताओं में तो लगे रहते हैं; किन्तु उक्त बातों का विचार एक क्षण भी नहीं करते जबकि ये बातें ही हमारे लिये आवश्यक हैं; अन्य नहीं।

उक्त श्लोक में आचार्य का कथ्य है कि जो मनुष्य प्रातः और रात्रि को सोते समय प्रतिदिन अपने ध्यान में उक्त तथ्यों का चिन्तन-मनन करते हैं; उनकी मति कभी अन्यथा नहीं होती। आज का मनुष्य अपनी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति में इतना संलग्न हो गया है कि इन आवश्यकताओं की तुलना में वह अपने आपको भी भूल जाता है। ऐसी स्थिति में जब उसकी ये सांसारिक/भौतिक/क्षणभंगुर इच्छाएँ पूर्ण नहीं होती हैं तो वह अन्यमनस्क हो अस्थिर चित्त हो जाता है; और परिणामतः नाना दुःखों को आमंत्रित करता है। क्योंकि इच्छाओं का अन्त नहीं।

यद्यपि गृहस्थ-संचालन के लिये मनुष्य को सांसारिक प्रयत्न करने पड़ते हैं; पर ये कार्य ही सब कुछ नहीं होते हैं। शरीर के लिये भोजन की आवश्यकता के समान आत्म-चिन्तन-परक विचार-क्रिया भी आवश्यक है। आत्म-विचार-क्रिया से ही मानव-मन-मस्तिष्क स्थिर होता है। स्थिति-प्रज्ञ व्यक्ति ही अपना और समाज का हित कर सकता है, इससे आत्म-बल जो मिलता है। अतः प्रत्येक मानव को प्रतिदिन उक्त प्रकार से अवश्य ही आत्म-चिन्तन-मनन करना चाहिये।

—१९१०, लेजड़े का रास्ता, जयपुर-१ (राज०)

समय न चूकत चतुर नर :
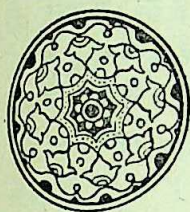
समय को कितना पहचानते हैं आप ?

□ श्री दुर्गाशंकर त्रिवेदी

स्व० काका कालेलकर जैसे सफल जीवनशास्त्री को गये अभी कुछ अधिक समय नहीं हुआ। वैसे मेरी उनसे कोई विशेष जान-पहचान या घनिष्ठता नहीं थी। फिर भी मेरी उनसे एक बार जो संक्षिप्त बातचीत हुई थी, वह कभी नहीं भुला पाने वाली बात हो गई। बात यह थी कि मुझे एक विशिष्ट पत्रिका ने उनके पास साक्षात्कार के लिये भेजा था। इसलिये चरण-स्पर्श कर, परिचय देकर आशीर्वाद के वचन सुन उस सफेद संन्यासी से मैंने पहला प्रश्न किया। वह था—"काकाजी ! आपने जीवन के कई पहलू देखें हैं। जीवन में ऊँचा उठने के लिये किसी को क्या-क्या चाहिये शिक्षा, मस्तिष्क, धन या शक्ति ?"

हल्की सी मुस्कान बिखेर कर दाढ़ी हिलाते हुए उन्होंने कहा—"भाई ! ये सभी चीजें तो ऊँचा उठाने में सहायक जरूर हो सकती हैं पर ये अनिवार्य तत्त्व नहीं हैं। मेरे अपने विचार से एक चीज का महत्त्व जीवन में सबसे अधिक है और वह है उचित समय की सही माने में परख।" मैंने पैन्सिल डायरी पर टिकाकर उनकी तरफ जिज्ञासापूर्वक कहा—"क्या कहा काकाजी ?"

"सही समय की सही माने में परख। हर चीज का एक समय होता है। कोई काम करने का या नहीं करने का। इसी तरह से कोई बात कहने की या चुप रहने की। कोई काम हाथ में लेने का या नहीं लेने का। अधिकांश लोग समय को नहीं परख पाने से दुःखी बने रहते हैं, असफल रहते हैं। मैं जीवन में समय को ही सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण मानता हूँ।"

घड़ी की कुछ तो सुनें :

सफलता की चोटी पर अल्प समय में ही चढ़ जाने में समर्थ अभिनेता चार्ल्स कोवर्न ने एक प्यारी बात कही थी—प्रायः हम खूब अच्छी तरह समझते हैं और मेरा विश्वास है कि जीवन की कुंजी भी वह है। अगर आपने विवाह, आजीविका और अपने व्यवहार आदि में समय को परखने की कला सीख ली है तो आपको किसी भी खुशी या सफलता की खोज में मारे-मारे फिरने की कोई जरूरत नहीं है। वह खुद आकर आपका द्वार खटखटाया करेगी।

बात यह है कि समय को देखने, समझने और व्यावहारिकता में कबूलने में बड़ा ही मीठा फल प्राप्त हो सकता है। यदि आप सही-सही वक्त आने पर उसे परखना और बीत जाने के पहले उससे लाभ उठाना सीख लेते हैं तो जीवन की करीब-करीब सभी समस्याओं का व्यापक हल ढूँढ़ निकालते हैं। हमारे घर में लगी घड़ी, हाथ में बंधी घड़ी, टिक-टिक के साथ ही साथ हमें कुछ न कुछ कहती ही है। हम उसे सुनें या नहीं सुनें। व्यावहारिक रूप से कुछ उपलब्ध करने के लिये जरूरी है कि हम समय को पकड़ने-परखने की कला सीखें।

जीवन की रेल-पेल में जो लोग लगातार असफल होते रहते हैं, वे अक्सर प्रतिकूल परिस्थितियों को भला-बुरा कहने लगते हैं। वे यह कभी नहीं सोच पाते कि यह समय कैसा था ? बस वे तो बारम्बार अपनी उसी धुन में बेवक्त हाथ-पैर पीटा करते हैं। दरअसल उनके सामने असली समस्या दुर्भाग्य की नहीं, बल्कि समय को गलत समझने की होती है। घड़ी हमें वक्त को समझने, उसे मुट्ठी में कैद करने को कहती रहती है। जरूरी है कि हम वक्त की गरिमा को समझें। समय हाथ से फिसल कर गया है, फिर पकड़ में कहाँ आ पाता है। समय को तो नदी की धार समझिए। उस पर बाँध बना कर उसे रोक लिया तो ऊर्जा का एक सहज स्रोत आपके पास सुरक्षित हो ही गया समझो।

यदि वो समय को परख लें :

बातों ही बातों में एक दिन काव्य-प्रतिभा के धनी विद्वान् न्यायाधीश श्री सोहनराज कोठारी से टूटते, बिखरते, दाम्पत्य परिवेश पर चर्चा चल उठी। बढ़ते हुए तलाकों और उसके कारण पैदा हुई समस्याओं पर वे काफी भुन-भुनाते रहे थे। उस दिन भावुकता ही प्रधान थी उनमें। पर वे बड़े ही गम्भीर होकर बोले थे—"मुझको इन झगड़ालू दम्पतियों पर सचमुच ही तरस आने लगा है। कितना अच्छा होता यदि वे समझ पाते कि हर व्यक्ति के क्षोभ, उत्तेजना आदि की एक विशेष सीमा होती है। कोई भी अपनी आलोचना या टीका-टिप्पणी पसन्द नहीं करता है। होता तो यहाँ तक भी है कि कभी-कभी तो कोई सही राय तक भी नहीं सुनना पसन्द करता। यदि वे समय को परख लें तो बात बड़ी सहजता से बन सकती है। यदि नव विवाहिता स्त्री-पुरुष एक दूसरे की मनः स्थितियों को समझने, भावात्मक पक्ष को पहचानने और उचित अवसर देख कर अपनी परेशानियाँ बताने या प्रेम प्रकट करने की ही तकलीफ गवारा कर सकें तो तेजी से आ रही तलाकों की बाढ़ जो भयंकर बाढ़ है, सहज ही नष्ट हो सकती है। परिस्थितियाँ और समय में सामंजस्य बिठाने पर सारी बात नया परिवेश ले उठती है।"

इस तरह से जीवन की कला के चिन्तन ने जो बात कही थी उसको न्याय

की तुला के पारखी ने भी सही निरूपित किया था। अधिकांश दम्पतियों में अनावश्यक तनावों की जो मन:स्थिति बनती है वह सिर्फ इसलिये बनती है कि वह स्त्री उस वक्त अपनी परेशानियों की रामायण खोल बैठती है जबकि पति हारा, थका, भूखा, प्यासा लौटता है। उन्हें जरा सा भी सब्र नहीं होता कि अपनी भड़ांच निकालने के बारे में वे धैर्य तो रक्खें। वे उसे ठीक तरह से भोजन तक भी नहीं करने देती हैं। बात-बेबात शिकायत पुराण की परम्परा शुरू हो उठती है।

लगभग यही बात बाल-बच्चों के लालन-पालन के सम्बन्ध में लागू होती है। उनको डांटना-डपटना है—आप सिर्फ इतना ही जान लें तो समझ लीजिए कि जिन्दगी मात्र से जीने की आधी समस्या तो आपने हल कर ली। बच्चों से जरूरत से ज्यादा अपेक्षाएँ रखने और उन्हें एक डण्डे से हांकने की कोशिशों में सन्तानों में कटुता उत्पन्न होनी शुरू होती है। बच्चों की टीम कोई मशीनों का समूह तो होती नहीं। वह कभी थका, कभी चंचल और कभी परेशान रहता है। साथ ही सभी में एक जैसी कुशाग्रता, एक जैसा गुण भी होता नहीं। अत: उनकी भावनाओं और समय को परख कर ही उनके प्रति कुछ व्यवस्थित नीति अपनानी चाहिये।

समय को सही रूप में परखने की कला भी एक कौशल है। वैसे यह ईश्वर प्रदत्त जन्म-जात गुण ही होता है। परन्तु जीवन में अन्य कलाओं की भाँति इसे भी विकसित किया ही जा सकता है। यह कोई कठिन काम नहीं है। जरूरी यह है कि हम स्थिति का पूरा-पूरा जायजा लें और अपनी क्षमताओं के अनुरूप समय को फलीभूत करें। अपनी पत्रकारिता से संबद्ध यायावर जीवन में मैं कई ऐसे लोगों के सम्पर्क में आया हूँ जो इस जीवन में बहुत कम-सुविधाएँ, साधन पाकर भी महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ हासिल कर सकें हैं। उनके सत्संग और जीवन-प्रणाली को देख-परख कर जो तथ्य हाथ लगे वे इस प्रकार हैं। ये संकेत या ऐसी ही मनोभूमि निर्मित करके जीवन को व्यावाहारिक रूप में सफल जीवन बना सकते हैं।

निर्णायक क्षण को पकड़ें :

सफलता आपकी चेरी होकर रहेगी। हमेशा हमें यह ध्यान रखना ही होगा कि लोगों के जीवन में कई बार ऐसे क्षण आते हैं जो निर्णायक क्षण होते हैं। हमें उन क्षणों में अपने को लाने की स्थिति बनाना, उन्हें परखना और पकड़ना आना चाहिये। महाकवि शेक्सपीयर ने कहा है—"प्रत्येक व्यक्ति के जीवन-व्यवहार में ऐसा क्षण (ज्वार भाटा) भी आता है, जबकि यदि वह उस आवेग को या प्रवाह को रोक ले तो अपनी तस्वीर बदल सकता है।"

हम में से अधिकतर लोग ऐसे क्षणों को या तो पहचान ही नहीं पाते हैं या फिर पकड़ नहीं पाते हैं। इसलिये यदि एक बार आपने इन क्षणों का पूरा-पूरा महत्त्व आंक लिया तो समझ लीजिए कि आपने एक काम तो निश्चित रूप से कर ही डाला। इसे सजग दृष्टि से करने–कराने पर निगाहें केन्द्रीभूत जरूर करते चलिए।

मनोवेग पर काबू कीजिए :

जीवन में सफलीभूत होने का दूसरा महत्त्वपूर्ण सूत्र है आप अपने मन में इस बात का पूरा-पूरा निश्चय कर लीजिए कि आप क्रोधित होंगे तब भय, दुःख, ईर्ष्या, द्वेष आदि आवेगों के चक्कर में फंसे होंगे, तब कोई भी काम नहीं करेंगे। उत्तेजक क्षणों में बोलेंगे या फैसला तक भी नहीं करेंगे। ऐसे में निश्चय करना और उस पर अमल करते रहना दोनों ही बड़े कठिन हैं। पर मनोवेगों पर काबू कर लिया गया तो हर वक्त आपके लिये स्वर्णिम भविष्य को लेकर उपस्थित रहेगा। सदैव ध्यान रखिए कि आवेगों के ये जालिम मरोड़ समय परखने वाली एक विकसित मशीन को नष्ट भ्रष्ट कर डालते हैं। अच्छे से अच्छे समझदार संयत और मनस्वी को भी उन्मत्त कर देते हैं। इसलिये काबू कीजिए इनकी उद्दाम मनोवेगीय मनःस्थितियों पर।

आशावादी बनिए :

किसी भी व्यवसाय में हों आप। आपका भविष्य कोई एकदम अंधकारमय या निराशा भरा नहीं है। भावी संभावनाओं का सही-सही अनुमान लगाइये और आशावादी बनकर कुछ कीजिए। कल अधिक अच्छा संदेश लेकर आ रहा है, यह आस्था पालकर आप आज को और भी महत्त्वपूर्ण बना ही सकते हैं। रोजमर्रा की समस्याओं को, परेशानियों को कम किया जा सकता है। आशावादी बनिए और एक सार्थक दृष्टिकोण अपनाइए उसके बारे में।

धैर्य भी जरूरी है :

जीवन में हम सफल लोगों की तरफ देखें तो पाएँगे कि वे सदैव धैर्य को महत्त्व देते रहे हैं। होता यह है कि जब लोग अपने सामने कोई उपयुक्त अवसर नहीं देखते हैं तो फौरन मन में धार लेते हैं कि सब कुछ हाथ से चला गया। अब कभी भी अच्छा अवसर शायद आने का नहीं। फिर वे जल्दबाजी में, नासमझी में अपना सब कुछ चौपट कर बैठते हैं। डिजरायली ने कहा है—'कोई भी व्यक्ति अगर कुछ देर प्रतीक्षा कर सके तो—तो उसे सब कुछ प्राप्त हो सकता है।'

हर व्यक्ति की परिस्थिति या आवश्यकतानुसार इस "धैर्य" या "प्रतीक्षा" की अवधि अलग-अलग हो सकती है। वर्ष, माह, मिनट, सैकिण्ड कुछ भी। यह

आप पर निर्भर करता है कि प्राप्य को प्राप्त करने के लिये आप धैर्य कितना रख पाते हैं।

अन्तर्मुखी ही मत बने रहिए :

अन्तर्मुखी बनकर मनुष्य अपने आपकी कमजोरियों को देखे, परखे और सुधारे तो ठीक है, पर अन्तर्मुखी ही बने रहना भी गलत है। आप अपने आप में से बाहर निकलना सीखें। एक-एक क्षण महत्त्वपूर्ण होता है। हर प्राणी उसे अपने-अपने हिसाब से वसूलना चाहता है। अतः दूसरे उसे कैसे सदुपयोग में लाएँगे यह इस तथ्य पर निर्भर करता है कि वह दूसरों को कैसा लगता है। इसलिये हम अपने कमरे से जरा बाहर निकल कर परिवेश के अनुरूप अपने आपको ढालने की कोशिश करें तो स्थिति में क्रान्तिकारी परिवर्तन आ सकता है।

पूरी शक्ति से लगें :

समय को परखना और उसे पकड़ना ही जरूरी नहीं है, पूरी शक्ति से उसे वसूलने के लिये प्रयत्न करना भी उतना ही जरूरी है। महात्मा गाँधी की यह राय इस सन्दर्भ में वरेण्य है। तुमने देखा होगा कि अच्छे गवैये स्वर को नीचा या ऊँचा वहीं पकड़ते हैं जहाँ वे अच्छी तरह निभा सकें। उस पर अपना सारा जोर लगा देते हैं, तभी उनके गाने में पूरी मिठास और लोच आती है। काम छोटा किया जाय या बड़ा, वह तो अपनी-अपनी शक्ति पर निर्भर है। परन्तु जिस कार्य को अंगीकार किया जाए उस पर अपने मन, बुद्धि और शरीर की पूरी ताकत लगा देने से ही वह अच्छी तरह पूरा हो पाता है।

इसलिये जिस किसी भी काम में आप लगें, पूरी ताकत से लगें। पूरी शक्ति से लगेंगे तभी समय पकड़ने-परखने का कुछ लाभ मिल पाएगा।

निर्णय शक्ति बढ़ाइये :

कई लोग निर्णय-अनिर्णय की झूलते रहने वाली मनःस्थिति में जीते हैं। वे वक्त को गालियाँ देते रहेंगे। पर जो सही-सही निर्णय सही वक्त पर ले लेते हैं उन्हें किसी भी तरह का व्यवधान नहीं उठाना पड़ता। आप अपने आप की निर्णय शक्ति को पूरी तरह विकसित कर लीजिए। आप पाएँगे कि सफलता आपके नजदीक खुद ही चली आ रही है।

वस्तुतः समय की परख का कोई एक खास फारमूला तो है नहीं। वह सजगता, आत्म-संयम, आशा, धैर्य, कल्पना आदि कई गुणों का मिक्सचर होता है। जो समय को परखने में सक्षम है वह जीवन जीने की कला का पारंगत पारखी है। इसलिये समय को पहचानने की पुरजोर कोशिश जारी रखिए।

—बी-११६, विजय पथ, तिलक नगर, जयपुर—३०२००४ (राज०)

चिंतन और व्यवहार (१४)
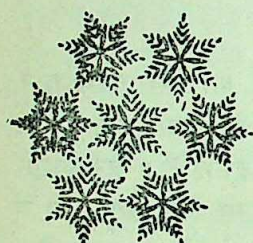
निष्ठावान् कार्यकर्ताओं का अभाव--जिम्मेदार कौन ?

☐ श्री चंचलमल चौरड़िया

किसी भी संस्था का विकास उसके समर्पित कार्यकर्ताओं पर निर्भर रहता है। कार्यकर्ता संस्था में धुरी के समान होते हैं। वृक्ष के बीज एवं नींव के पत्थर की भांति उनकी भूमिका एवं उपयोगिता स्पष्ट दृष्टिगत नहीं होती है। निष्ठावान कार्यकर्ता के बिना किसी भी संस्था का दीर्घकालीन न तो विकास ही हो सकता है, और न ही उद्देश्यों की प्राप्ति जिसके कारण उसका निर्माण हुआ हो। भले ही वह राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक, स्वयंसेवी अथवा अन्य किसी भी प्रकार की संस्था/संगठन क्यों न हो। **गत चंद वर्षों से मानवीय मूल्यों में जो गिरावट निरन्तर आ रही है, जीवन में आध्यात्मिकता एवं सुसंस्कारों की उपेक्षा होने से परोपकार, सेवा, करुणा, त्याग, समर्पण, सहिष्णुता, कर्तव्य-परायणता जैसे आवश्यक गुणों का लोप होता ही जा रहा है, मानव का दृष्टिकोण संकुचित एवं निज स्वार्थ तक ही सीमित होता जा रहा है, धर्म, समाज, राष्ट्र एवं प्राणी मात्र के प्रति हमने अपने उत्तरदायित्वों को भुला दिया है। हम अपने कर्तव्यों को भुलाये, बिना कुछ अर्पण किये, अपना बहुत कम देकर अधिक से अधिक प्राप्त करना चाहते हैं। हमारी कथनी-करणी, आचरण एवं व्यवहार में एकरूपता नहीं है। हम सदैव अधिकारों की बात करते हैं, परन्तु कर्तव्यों के प्रति निष्क्रिय होते जा रहे हैं। सामूहिक जीवन विकास की कल्पनाएँ खंडित हो रही हैं। सुख-दुःख में एक-दूसरे के सहयोगी बनने की भावनाएँ क्षीण होती जा रही हैं, फलतः संस्थाओं, संगठनों के बीच रहते हुए भी अपने आपको अकेला अनुभव कर रहे हैं। हमारी दूसरों से अपेक्षाएँ बहुत हैं, परन्तु दूसरों के लिए त्याग नगण्य है। ऐसी परिस्थितियों एवं बदलते चिंतन के युग में निष्ठावान कार्यकर्ताओं का अभाव होना स्वाभाविक है।**

निष्ठावान सक्रिय कार्यकर्ताओं को कैसे तैयार किया जाये, और जो पहले से सेवा भावी हैं, उन्हें सम्बन्धित संस्थाओं/संगठनों के साथ कैसे जोड़ा जावे, प्रायः सभी संस्थाओं की ज्वलंत समस्या है, जिन पर सम्यक् चिंतन आवश्यक है।

निष्ठावान् कार्यकर्ता तैयार करने के लिए नीति-निर्माताओं को वर्तमान शिक्षा-प्रणाली में युवकों को सुसंस्कारित करने पर ध्यान देना होगा। विद्यालयों में अध्यापकों और घर में अभिभावकों को बच्चों में सेवा, परोपकार, त्याग, समर्पण, कर्तव्यनिष्ठा व नैतिकता जैसे मानवीय गुणों को विकसित करने की नियमित निरन्तर प्रेरणा देनी होगी। इन गुणों के महत्त्व को समझना होगा। जिस प्रकार पढ़ाई, खेलकूद व अन्य बातों को प्रोत्साहित करने हेतु पुरस्कार दिये जाते हैं, सुसंस्कृत छात्रों को भी पुरस्कृत करना होगा। इन्हें आदर देना होगा, तभी अन्य छात्र इन गुणों को विकसित करने का मानस बना सकेंगे। सुसंस्कारों के अभाव में हमारा विकास सभी प्रभावों के बावजूद भी अधूरा रहेगा।

दूसरी तरफ संस्था में पदाधिकारियों को अपने आचरण एवं व्यवहार में एकरूपता लानी होगी। जो नि:स्वार्थ रूप से सेवायें दे रहे हैं, या देना चाहते हैं, उनके स्वाभिमान की रक्षा कर भावनाओं का आदर करना होगा। निर्णय लेते समय उनके सुझावों को ध्यान में रखना होगा। उचित समस्याओं का समाधान करना होगा एवं बिना सोचे-समझे व्यक्तिगत आक्षेप लगाने की प्रवृत्तियों को हतोत्साहित करना होगा। कार्यकर्ताओं में पूर्ण विश्वास रखना और ऐसा आभास करना होगा कि उनकी क्षमताओं का संस्थाओं के हित में सदुपयोग हो रहा है, जिससे उनके अन्दर उत्साह बना रहे व संस्थाओं को अपनी सेवाएँ प्रमोद-भाव से देते रहें।

संस्थाओं के स्वरूप, कार्यप्रणाली और उद्देश्यों के अनुरूप कार्यकर्ताओं की भूमिका अलग-अलग होती है। उनकी पदाधिकारियों व संस्था के अन्य सदस्यों से क्या अपेक्षायें हैं, संस्था कार्यकर्ताओं से क्या अपेक्षायें रखती है? उन बिन्दुओं पर व्यापक दृष्टिकोण से चिंतन आवश्यक है, ताकि निष्ठावान् कार्यकर्ताओं के अभाव की समस्या का समाधान ढूंढा जा सके।

आजकल चन्द संस्थायें कुछ व्यक्तियों द्वारा अपने स्वार्थ पोषण हेतु भी खड़ी हो रही हैं, क्योंकि जब उन्हें अन्य संस्थाओं में अपेक्षित पद, मान-सम्मान नहीं मिलता तो वे नवीन संस्थाओं का गठन कर उसमें पदाधिकारी बन जाते हैं। **ऐसी संस्थाओं का न तो दीर्घकालीन अस्तित्व ही होता है, न ही मौलिक उद्देश्य। इन संस्थाओं/संगठनों के पदाधिकारी अथवा नेतागण अपनी स्वार्थपूर्ति हेतु गिरगिट की भांति अपना रूप बदल कर जनसाधारण को मूर्ख बनाने का असफल प्रयास करते हैं। वे ऊँचे-ऊँचे आदर्शों और सिद्धान्तों की बातें अवश्य करते हैं, अच्छे-अच्छे उद्देश्यों का प्रचार-प्रसार कर जन-साधारण को अपनी संस्थाओं से जोड़ने का प्रयास करते हैं, परन्तु उद्देश्यों के अनुरूप न तो स्वयं**

आचरण करते हैं, न ही अन्य सदस्यों को आचार-संहिता का पालन करने की प्रेरणा ही दे सकते हैं। ऐसी संस्थाओं में पदाधिकारियों का एकमात्र उद्देश्य होता है, अपने पद पर बने रहना। जैसा चल रहा है, चलने देना, उद्देश्यों के प्रतिकूल आचरण करने वालों की अनदेखी कर अपना कार्यकाल पूरा करना। उनमें आत्मविश्वास और दृढ़ मनोबल का अभाव होने से सदस्यों की क्षमताओं का न तो पूर्णरूपेण सदुपयोग ले पाते हैं, न ही अपने दायित्वों का ईमानदारी-पूर्वक निर्वाह ही कर पाते हैं। जिन संस्थाओं में सिद्धान्तों और उद्देश्यों के प्रति निष्ठा ही नहीं, ऐसी संस्थाओं में निष्ठावान कार्यकर्ताओं की कल्पना कैसी ? जैसे-जैसे वास्तविकता प्रकट होती जावेगी वैसे-वैसे जन सहयोग समाप्त होता जावेगा। ऐसी संस्थाओं और संगठनों का प्रभाव व अस्तित्व धीरे-धीरे स्वतः ही समाप्त हो जाता है, भले ही उसको कितने ही सिद्धांतहीन प्रभावशाली व्यक्तियों का सहयोग और समर्थन भी क्यों न प्राप्त हो।

चंद संगठन व्यापारिक, व्यावसायिक अथवा कर्मचारियों के हितों की रक्षा हेतु गठित होते हैं। जिनके न तो व्यापक उद्देश्य होते हैं, न ही नियमित कार्यक्रम। उनका कार्यक्षेत्र अपने हितों की रक्षा करना और विकास हेतु सेमीनार, विचार चर्चायें, प्रदर्शनियों का आयोजन करना व नीति निर्माताओं को अपने प्रभाव और शक्ति से अवगत कराना, ताकि निर्णय लेते समय उनके हितों की उपेक्षा न हो। ऐसी संस्थाओं की आवश्यकतानुसार गतिविधियां संचालित होती रहती हैं, तथा कार्यकर्ताओं की विशेष भूमिका नहीं होती। फिर भी सामूहिक कार्यक्रमों के आयोजनों एवं आंदोलनों के समय सफलता हेतु सक्रिय निष्ठावान् कार्यकर्ताओं की भूमिका से नकारा नहीं जा सकता।

इसी प्रकार कुछ संस्थायें पर्व विशेष का आयोजन करने अथवा समान उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिये गठित होती हैं। जैसे ही उद्देश्यों की प्राप्ति हो जाती है, अथवा पर्व का आयोजन समाप्त हो जाता है, वे संस्थायें निष्क्रिय हो जाती हैं। ऐसी संस्थाओं के उद्देश्यों की प्राप्ति में भी निष्ठावान् कार्यकर्ताओं की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

परन्तु अधिकांश राजनैतिक, धार्मिक, सामाजिक या स्वयंसेवी संस्थाओं का गठन कुछ न कुछ मौलिक उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए होता है, और उनका स्वरूप क्षेत्र विशेष में न होकर राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय स्तर तक फैला हुआ होता है। उनकी केन्द्रीय एवं क्षेत्रीय स्तर पर सैंकड़ों शाखायें, उपशाखायें होती हैं और हजारों सदस्य तथा कार्यकर्ता उनसे सम्बन्धित होते हैं। अधिकांश संस्थाओं का स्वरूप जनतन्त्र पर आधारित होने से प्रत्येक कार्य में बहुमत की भावना का खयाल रखा जाता है। ऐसी संस्थाओं में नियमित निरन्तर प्रगति

हेतु अनुभवी परामर्शदाताओं, पदाधिकारियों, कार्यकर्ताओं व अन्य सदस्यों के विचारों में एकरूपता, आपस में सहयोग व विश्वास की भावना तथा संस्था के उद्देश्यों के प्रति समर्पण की भावना आवश्यक है। **पदाधिकारियों का अनुकूल स्वास्थ्य, व्यापक दृष्टिकोण, तनाव रहित प्रभावशाली व्यक्तित्व, समयानुकूल निर्णय लेने का मनोबल, प्रशासनिक क्षमता और पद की गरिमा के अनुरूप आचरण आवश्यक है। यदि उनमें रुचि, नियमितता, सरलता और मुस्कराहट जैसे गुण हों तो सैकड़ों निष्ठावान् कार्यकर्ताओं को संस्था से जोड़ने में सफल होते हैं, जिससे संस्था का विकास निश्चित रूप से तीव्र गति से होगा। जितना-जितना इन मापदंडों का ध्यान रखा जावेगा, उतने-उतने संस्था को सेवाभावी सक्रिय पदाधिकारी उपलब्ध होंगे।**

परन्तु प्रायः पदाधिकारियों का चयन करते समय पद एवं पैसों को इतना अधिक महत्त्व दे दिया जाता है कि अन्य आवश्यक मापदंडों की उपेक्षा करने से संस्था उपयुक्त पदाधिकारियों के नेतृत्व से वंचित रह जाती है। **आजकल संस्थाओं में अधिकांश प्रमुख पदाधिकारी इतने ज्यादा व्यस्त होते हैं कि उनको इस बात का भी ध्यान नहीं रहता कि वे किन-किन संस्थाओं में कौन-कौन से पदों का दायित्व लिये हुए हैं। न तो उनमें संस्थाओं के प्रति विशेष रुचि ही दिखायी देती है, और न ही वे संस्थाओं के कार्यों को प्राथमिकता देने की आवश्यकता समझते हैं।** उनको सभा में उपस्थित होने के लिये पुनः-पुनः स्मरण कराना पड़ता है, फिर भी कुछ न कुछ व्यस्तता का बहाना ढूँढ प्रायः उपस्थित नहीं होते। आवश्यक सभाओं में उनकी उपस्थिति न होने से संस्था को उनका मार्गदर्शन नहीं मिल पाता, फलतः कार्यकर्ताओं का हतोत्साहित हो जाना स्वाभाविक है। **जो स्वयं निष्ठावान् और सक्रिय न हों तो वे दूसरों को सक्रिय बनाने में कैसे प्रेरणा देंगे?**

प्रायः संस्थाओं का वार्षिक प्रतिवेदन प्रस्तुत करते समय ऐसा अनुभव कराया जाता है कि संस्था ने बहुत अधिक लक्ष्य प्राप्त कर लिये हैं। छोटी-छोटी उपलब्धियों को बढ़ा-चढ़ा कर दर्शाया जाता है। **हम स्वयं इस बात की समीक्षा तक नहीं करते कि हमारा विकास संस्था के स्वरूप और क्षमता के अनुपात में कितना सन्तोषजनक है? क्या हम मायावी आंकड़े प्रस्तुत नहीं कर रहे हैं? क्या हम संस्थाओं में बिना रुचि जबर्दस्ती कार्य करने का एहसास तो नहीं दिखा रहे हैं? क्या हमें संस्थाओं की मूल परम्पराओं एवं सिद्धांतों की जानकारी है? हमारा संस्था के प्रति क्या उत्तरदायित्व है, और उसको कितना निभा रहे हैं? संगठन, कार्यकर्ताओं और जनसाधारण की हमसे क्या अपेक्षायें हैं व हमने उनको कितना पूर्ण किया है? हमारे आचरण और व्यवहार से अन्य सदस्य संस्था के प्रति उदासीन तो नहीं हो रहे हैं? हमने प्रगति के क्या लक्ष्य निर्धा-**

रित किये हैं, व कितनी सफलता प्राप्त की ? हमारा दृष्टिकोण स्वार्थमय, संकुचित एवं पूर्वाग्रहों से ग्रस्त तो नहीं है ? क्या हमने अन्य सदस्यों को विश्वास में ले उनकी क्षमताओं का संस्था के हित में उपयोग लेने का प्रयास किया ? जनसाधारण संस्था के प्रति इतनी उपेक्षावृत्ति क्यों अपनाये हुए हैं, इस बात का चिंतन किया ? पदाधिकारियों को संस्था के हित में उपर्युक्त बिन्दुओं पर चिंतन कर अपनी भूमिका का आत्म-निरीक्षण करना होगा। सदस्यों को भी प्रमुख पदाधिकारियों का चयन करते समय योग्यता के आवश्यक मापदंडों का निर्वाह करना होगा। जितनी-जितनी इन मापदंडों की उपेक्षा होगी, उतना ही संस्था का विकास अवरुद्ध होगा, विकास की गति भी धीमी होती जावेगी और निष्ठावान् कार्यकर्ता संस्थाओं से अलग होते जावेंगे।

आज के युग में पद और पैसों के प्रभाव को नकारा नहीं जा सकता। संस्था की अधिकांश योजनाओं की क्रियान्विति में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका है, अतः जन-साधारण का उससे प्रभावित हो पदाधिकारियों के चुनाव में प्राथमिकता देना स्वाभाविक है। विशेष रूप से प्रायः धार्मिक और सामाजिक संस्थाओं में ऐसा आभास कराया जाता है कि पदाधिकारी दायित्व लेने को तैयार नहीं होते, उन्हें जबरदस्ती नेतृत्व सौंपा जाता है। ऐसे व्यक्तियों पर नैतिक दृष्टि से आक्षेप लगाना अथवा अपेक्षायें रखना कहाँ तक उचित है ? यद्यपि बिना स्वीकृति एवं इच्छा से कोई पदाधिकारी नहीं चुना जाता है। भले ही बाहर से वे कुछ भी कहें। पद स्वीकारने के पश्चात् वे संस्था की कितनी सुध लेते हैं, उसकी समीक्षा तो वे स्वयं ही करें। हमारी दृष्टि भी सभाओं में उपस्थित चंद व्यक्तियों से आगे सभी सदस्यों की योग्यताओं पर विशेष रूप से नहीं जाती है। चंद पूर्वाग्रहों व मापदंडों से आगे चिंतन नहीं चलता। हम यह भूल जाते हैं कि व्यक्ति का पदाधिकारी के रूप में चयन कर संस्था ने उस पर विश्वास व्यक्त किया है, उसकी प्रतिष्ठा बढ़ायी है और जो व्यक्ति पद की गरिमा के अनुरूप दायित्वों को नहीं निभाता उसको संस्था के हित में पद का मोह नहीं रखना चाहिये और सदस्यों के आग्रह के बावजूद पद नहीं स्वीकारना चाहिये। पद ग्रहण करने के पश्चात् उत्तरदायित्वों की उपेक्षा करने से अच्छा होता ऐसा पद रिक्त रह जावे, ताकि जनसाधारण संस्था के विकास की अपेक्षा ही न करे। संस्था में बिना रुचि, समय का नियमित योग न देने वाले व्यस्त पदाधिकारियों का चयन कर, जो संस्था के कार्यों को प्राथमिकता न दे सकें, हमने संस्थाओं का न केवल अवमूल्यन ही किया है, अपितु विकास की गति को अवरुद्ध कर सदस्यों की क्षमताओं का पूर्ण उपयोग भी नहीं कर पा रहे हैं। सेवाभावी सदस्यों की सेवायें लेने में किसको आपत्ति हो सकती है, आपत्ति तो सेवक कहलाकर अपेक्षानुसार सेवा न करने वालों से है। हमें वास्तविकता को स्वीकारना होगा व दृष्टिकोण को

बदलना होगा । हजारों ऐसे प्रभावशाली व्यक्ति हैं, जिनमें पद और पैसों के साथ-साथ अन्य आवश्यक अतिरिक्त योग्यताएँ भी हैं । यदि उन्हें नेतृत्व सौंपा जावे तो समाज के लिए अत्यधिक उपयोगी होंगे । अतः संस्था के प्रमुख पदाधिकारियों का चयन करते समय पद व पैसों के साथ-साथ उनकी रुचि, स्वास्थ्य की अनुकूलता, व्यस्तता, अनुभव, संचालन-क्षमता और आचरण का सदस्यों को सजगता पूर्वक खयाल रखना होगा । चयन करने के पश्चात् उनमें पूर्ण विश्वास व्यक्त कर अपेक्षित सहयोग देना होगा । उनको स्वविवेक से कार्य करने की छूट देनी होगी, और छोटी-छोटी बातों में हस्तक्षेप रोकना होगा, जिससे पदाधिकारी अपनी क्षमताओं का अधिकाधिक उपयोग संस्था के हित में कर सकें और निष्ठावान् कार्यकर्ताओं को जोड़ सकें ।

वर्तमान युग में मानव का दृष्टिकोण बदल रहा है । पारिवारिक, सामाजिक, आध्यात्मिक व राष्ट्रीयता की भावनाएँ खंडित हो रही हैं । सामूहिक दायित्वों को हम भूलते ही जा रहे हैं । संस्थाओं के उद्देश्यों के प्रति आस्था होने के बावजूद स्वार्थपूर्ति न होने से उनसे नहीं जुड़ पा रहे हैं । बाह्य जगत् में चंद भौतिक उपलब्धियाँ प्राप्त करने वाले **प्रभावशाली व्यक्ति संस्थाओं में तब तक उनकी वरीयता एवं सम्पदा के अनुरूप पद मान-सम्मान और आग्रह के साथ सर्वसम्मति से न दिया जावे । बिना पद संस्था की गतिविधियों में रुचि लेना प्रायः अपनी प्रतिष्ठा के विरुद्ध मानते हैं । अपने अभिमान का व्यापक हित में मोह नहीं त्याग पाते** और न संस्था को अहम् पोषण के माध्यम से अधिक कुछ समझते हैं । ऐसे व्यक्तियों को अपेक्षित पद न मिलने से उनकी दृष्टि संकुचित हो जाती है । वे सदैव संस्थाओं की असफलताओं व कार्यकर्ताओं के दोनों का ही खयाल रखते हैं । वे विवेकपूर्ण अपना मार्गदर्शन भी नहीं देते हैं और न ही सहयोग, परन्तु अपनी प्रतिक्रियाओं से जनसाधारण को अपने अस्तित्व का समय-समय पर आभास कराते रहते हैं । **आज हजारों ऐसे प्रभावशाली व्यक्ति हैं, जो अपेक्षित पद न मिलने से अपने आपको संस्थाओं से अलग किये हैं । उनके अमूल्य समय, श्रम, साधनों और क्षमताओं का संस्था के व्यापक हित में कैसे उपयोग किया जावे, प्रायः अधिकांश विकासशील संस्थाओं की ज्वलन्त समस्या है, तथा संस्थाओं के विकास की गति अवरुद्ध किये हुए है ।**

संस्था में प्रमुख पदों की संख्या नियमानुसार सीमित होती है, और सभी प्रभावशाली व्यक्तियों की अपेक्षाओं को कैसे पूरा किया जावे, चिंतन का विषय है । संतजनों की प्रेरणा ही उनको जोड़ने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है । जब वह वर्ग बिना किसी अपेक्षा अपना कर्तव्य समझ संस्थाओं की दैनिक गतिविधियों में नियमित रुचि लेगा और क्रियात्मक सहयोग देगा तो अपने प्रभाव के कारण सैकड़ों निष्ठावान कार्यकर्ताओं के लिये प्रेरणा स्रोत बन जावेगा ।

परन्तु यह कार्य इतना सरल नहीं है जितना हम सोचते हैं। ऐसे वर्ग को संस्था में संरक्षक, परामर्शदाता या आर्थिक समितियों में अनुभव एवं आवश्यकतानुसार चयन कर उनकी अपेक्षाओं को कुछ हद तक पूर्ण किया जा सकता है। परन्तु प्रमुख पद तो सबको देना कैसे सम्भव हो सकता है ?

पदाधिकारियों की भांति कार्यकर्ताओं की निष्ठा का मापदंड क्या हो ? समाज की उनसे क्या अपेक्षाएँ हैं ? वे संस्था के व्यापक हित का खयाल रखें या परामर्शदाताओं एवं पदाधिकारियों की भावना को प्राथमिकता दें ? संस्था के विकास में बाधक मायावी प्रवृत्तियों को रोकें अथवा जैसा चल रहा है, चलने दें, जो हो रहा है होने दें। उस पर निष्क्रिय बन उपेक्षा कर दें। प्रायः सदस्यों के उद्देश्यों के अनुरूप आचार संहिता की आवश्यकता जैसे विषयों पर जब कभी चर्चा का प्रसंग आता है—सभाओं में क्यों भूचाल आ जाता है ? हमारा सद्-विवेक उस समय न मालूम कहाँ चला जाता है और खुले आम उसका विरोध कर रहे हैं ? ऐसा व्यवहार हमारी स्वार्थ मनोवृत्ति एवं मायावी प्रवृत्ति का खुला प्रदर्शन है, जो हमारे इरादों को स्पष्ट करता है। हमें मौलिक सिद्धांतों और नियमों के विरुद्ध विवादास्पद आचरण क्यों सहन हो रहे हैं ? हम क्यों भ्रमित हो सेवा के नाम पर जनसाधारण को गुमराह कर संस्था के साथ विश्वासघात कर रहे हैं ? यदि संस्थाओं का संचालन इसी प्रकार करना है तो निष्ठावान् कार्यकर्ताओं का मोह त्यागना होगा।

निष्ठावान् कार्यकर्ताओं से अपेक्षा है, कि संस्था के पदाधिकारी पद की गरिमा के प्रतिकूल आचरण न करें। संस्थाओं की प्राथमिकता निश्चित हो। सिद्धांतहीन लोकप्रियता से बचा जावे। संस्था को अहम् पोषण व स्वार्थ सिद्धि का माध्यम न बनाया जावे। उनकी क्षमताओं का अधिकाधिक उपयोग हो, अनावश्यक हस्तक्षेप रोका जावे। बिना विचारे उन पर अविश्वास अथवा आक्षेप न लगाये जावें। उनके स्वाभिमान की रक्षा हो। नीति सम्बन्धी निर्णय लेते समय व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाया जावे न कि थोपा जावे। परामर्श-दाता पूर्वाग्रह छोड़ व्यापक, व्यावहारिक दृष्टिकोण अपना, मायावी प्रवृत्तियों को प्रोत्साहन न दें। योग्यता के मापदंडों को ध्यान में रख उपयुक्त पदाधिकारियों का चयन कराने में मदद दें, व्यर्थ प्रपंचों से अपने आपको अलग रखें तथा नीति सम्बन्धी विषयों को छोड़ दैनिक गतिविधियों में हस्तक्षेप कम करें। ऐसा अभिमान न करें कि समाज एवं संस्थायें उनके ही बलबूते पर चलती हैं. एवं जैसा वे सोचते हैं करवाने में सक्षम हैं। कार्यकर्ताओं में इतना विश्वास हो कि सारा संगठन संस्था के व्यापक हित में उनके साथ है, एवं आवश्यकता पड़ने पर अपनी क्षमतानुसार उनको सहयोग करेंगे। यदि संस्थाओं के सदस्य कार्यकर्ताओं की इन भावनाओं का ध्यान रखेंगे तो किसी भी संस्था को निष्ठावान् कार्यकर्ताओं

का अभाव अनुभव नहीं होगा। जितनी-जितनी इन अपेक्षाओं की पूर्ति होगी सक्रिय कार्यकर्ता जुड़ते जावेंगे और जितनी-जितनी उपेक्षा होगी कार्यकर्ता अलग होते जावेंगे। अतः प्रत्येक संस्था को अपने कार्य प्रणाली की समीक्षा करनी पड़ेगी और उन परिस्थितियों को सुधारना होगा जो कार्यकर्ताओं को निष्ठापूर्वक कार्य करने के मार्ग में बाधक बनी हुई है तब ही निष्ठावान् कार्यकर्ताओं का अभाव मिट सकेगा।

—चौरड़िया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर-३४२००३

अगतिरोध

☐ डॉ० सत्यपाल चुघ

हमारी निराशा की
निशा का सन्नाटा
अब बढ़ गया है इतना
कि यही सनसनाता
करने लगा विरोध,
तब हुआ यह बोध,
इसी में गर्भित प्रात-सा
हर वाद का प्रतिवाद
रहता है साथ-साथ
फिर कैसा गतिरोध ?
पर इसकी प्रक्रिया में
प्रत्यूषी प्रगति-सा
हमने भी तप-खप के
कतना दिया है योग ?

—१०, स्टॉफ क्वार्टर्स,
किरोड़ीमल कॉलेज, दिल्ली-११०००७

विशिष्ट स्वाध्यायी [४]

शांत एवं सरल स्वभावी
श्री सरदारचंद भण्डारी

□ श्री चंचलमल चौरड़िया

शांत एवं सरल स्वभावी श्री सरदारचंद भंडारी का जीवन अपने आप में विशेष गुणों से ओतप्रोत है। जोधपुर निवासी, पुस्तकों एवम् स्टेशनरी के प्रमुख व्यापारी श्री भंडारी स्वर्गीय श्री मुकनराज भंडारी के सुपुत्र हैं। बाल्यकाल में ही आपके पिता श्री का देहावसान हो जाने से अपनी शिक्षा बीच में ही समाप्त कर आपको पारिवारिक जिम्मेदारियों का बोझ उठाना पड़ा।

बाल्यकाल से ही आपको धर्म के सुसंस्कार मिले एवं आपका साधु-संतों से निरन्तर नियमित संपर्क रहा। फलतः आपने प्रतिक्रमण, पच्चीसबोल, नव तत्त्व, भक्तामर आदि का अध्ययन किया। सद्साहित्य पढ़ने में आपकी विशेष रुचि होने से आप धार्मिक साहित्य भी बेचते हैं। बच्चों को सु-संस्कारित करने के लिए जोधपुर में चलने वाली धार्मिक पाठशालाओं में लंबे समय तक अध्ययन कराया। मुझे भी उनका शिष्य रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ।

सादा जीवन, उच्च विचारों के धनी, कथनी-करनी में एकरूपता संजोये आप अपने व्यापार में पूर्णरूपेण नैतिकता का ध्यान रखते हैं। सामाजिक कार्यों में भी आपकी विशेष रुचि है। 'वर्द्धमान रिलीफ सोसायटी' एवं 'चक्षु सेवा समिति' में आप लंबे समय से जुड़े हुए हैं। संस्थाओं में आपका आचरण नींव के पत्थर के समान है। स्व-प्रशंसा से दूर सामाजिक कार्यों में जन अपेक्षाओं से बहुत अधिक मुक्त हस्त से आर्थिक सहयोग देते हैं।

आप सन् १९६० से १९७० तक स्वाध्याय संघ के संयोजक रहे एवं स्वाध्यायी के रूप में सन् १९६२ से समाज को अपनी सेवाएँ नियमित रूप से प्रदान कर रहे हैं। जिनमें प्रमुख क्षेत्र हैं—रणसीगाँव, बिलाड़ा, सारंगपुर, लूणी, जालोर, खण्डाला, दुन्दाड़ा, लवेरा, सेलावास, पाचोरा, बाड़मेर, सेलावास, कोसाणा, भोपालसागर, भिण्डर, फालना, पलासनी, खजवाना।

आपका जीवन नियमित एवम् साधना से ओतप्रोत है। महापुरुषों से संबंधित प्रेरणा प्रसंगों की जानकारी का आपके पास संकलन है। किस दिन का क्या महत्त्व है, आपसे मालूम किया जा सकता है।

साहित्य में रुचि होने के कारण वर्तमान में घोड़ों के चौक में स्थित जैन

पुस्तकालय का संचालन आप ही कर रहे हैं। पावटा (जोधपुर की उपबस्ती) क्षेत्र के जैन पुस्तकालय को सुव्यवस्थित करने में आपकी विशेष भूमिका रही है। श्री जैन रत्न पुस्तकालय सिंहपोल से भी आप काफी समय तक सम्बन्धित रहे।

पर्व के दिनों और अवकाश के दिनों में आप नियमित रूप से दया, संवर, सामायिक द्वारा साधना करते हैं। आपका जीवन सभी स्वाध्यायियों एवम् जन साधारण के लिए प्रेरणा स्रोत है।

आप शतायु हों, चिरायु हों एवं स्वाध्यायियों के प्रेरणास्रोत बन जिन-शासन की सेवा करें, यही मंगल भावना है।

आचरण का प्रभाव

□ सीमा कुचेरिया

अनेक बार केवल उपदेश अधिक प्रभावकारी सिद्ध नहीं हो पाते, जबकि आचरण सीधा प्रभाव छोड़ जाता है—एक छोटा-सा प्रसंग है—

डॉ० जाकिर हुसैन जब राष्ट्रपति नहीं थे तब की बात है। उनके घर में एक नौकर था। वैसे काम करने में तो वह कुशल था, ईमानदार भी था, किन्तु था जरा आलसी। सुबह बहुत देर से उठता था, इससे घर वालों को असुविधा होती थी। उन्होंने डॉ० साहब से इस बात की शिकायत की।

जाकिर हुसैन बड़े भारी विद्वान् थे। चाहते तो उसे आलस्य करने की बुराइयों पर लगातार एक सप्ताह तक उपदेश देते चले जा सकते थे किन्तु उन्होंने ऐसा कुछ नहीं किया।

उन्होंने क्या किया कि सुबह उठकर उस नौकर के पास गये। वह सो रहा था। उसे जगाकर बोले—

"मालिक ! उठिये, मैं आपके लिये मुँह-हाथ धोने के लिए पानी लाया हूँ।"

नौकर ने एकाध करवट ली, सोचा कि वह सपना देख रहा होगा, और फिर सो गया।

थोड़ी देर बाद डॉ० साहब चाय लेकर उस नौकर के पास गये—"मालिक ! अब तो उठिये, मैं आपके लिये चाय लेकर आया हूँ।" अब उसकी नींद खुली, मारे शर्म के वह पानी-पानी हो गया। फिर उसने कभी आलस्य नहीं किया।

इस प्रकार उपदेश की बजाय आचरण का प्रभाव सीधा और स्थायी पड़ा।

—द्वारा श्री पारसमल कुचेरिया, म. नं. २०३३, रामललाजी का रास्ता पीतलियों का चौक, जौहरी बाजार, जयपुर—३०२ ००३

समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियां आना आवश्यक है ।
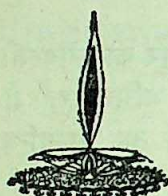
साहित्य-समीक्षा

☐ डॉ. नरेन्द्र भानावत

१. **मुहूर्त चिन्तामणि** :—पं० केदारदत्त जोशी, प्र० मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–११०००७, पृ. ६५२, मू. ९५.०० (सजिल्द), ६५.०० (अजिल्द)।

अनुकूल व प्रतिकूल समयों को जानकर प्रतिकूल वातावरण से बचने और अनुकूल वातावरण का उपयोग करने में सामान्यत: मानव मुहूर्त का चिन्तन करता रहा है। मुहूर्त का विचार ज्योतिष शास्त्र का महत्त्वपूर्ण अंग है। मुहूर्त सम्बन्धी मुहूर्त कल्पद्रुम, मुहूर्त दीपक, मुहूर्त मार्तण्ड, मुहूर्त भास्कर, मुहूर्त मंजरी, मुहूर्त संग्रह आदि अनेक ग्रन्थों की रचना हुई है। 'मुहूर्त चिन्तामणि' का मुहूर्त ज्योतिष ग्रन्थों में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसकी रचना दैवज्ञ श्री रामाचार्य ने सन् १५५० में संस्कृत में की थी। सन् १६०३ में दैवज्ञ श्री गोविन्द ने इस पर संस्कृत में 'पीयूष धारा' नाम की विशद टीका लिखी। यह टीका ज्योतिष शास्त्र-जगत् में अत्यन्त समादृत है। इसमें श्रुति, स्मृति और पुराणों के साथ-साथ न्याय, व्याकरण, मीमांसा, धर्मशास्त्र और ज्योतिषशास्त्र का सुन्दर समन्वय है। मुहूर्त चिन्तामणि के तेरह प्रकरणों में तिथि, वार, नक्षत्र, योग, करण, लग्न, नामकरण, उपनयन संस्कार, गृहारम्भ, गृह-प्रवेश, देश-विदेश यात्रा, राज्याभिषेक, अभियान आदि के लिए शुभ मुहूर्त देखने की विधि बताई गई है। प्रसिद्ध ज्योतिषशास्त्री पं. केदारदत्त जोशी ने इस पर 'पीताम्बरा' नाम से हिन्दी में व्याख्या-विवेचना की, जिससे यह कृति सर्व-साधारण के लिए उपयोगी हो गई है। प्रस्तुत प्रकाशन में मूल ग्रन्थ व पीयूष धारा टीका के साथ-साथ हिन्दी व्याख्या भी दी गई है। एक साथ तीनों का प्रकाशन कर प्रकाशक ने ज्योतिष-शास्त्र एवं हिन्दी जगत् की महान् सेवा की है।

२. **सिद्धान्त शिरोमणेः गोलाध्याय** :—व्याख्याकार पं. केदारदत्त जोशी, प्र. मोतीलाल बनारसीदास, बंगलो रोड, जवाहर नगर, दिल्ली–११०००७, पृ. ७२०, मू. १६०.०० (सजिल्द), १२०.०० (अजिल्द)।

खगोलविज्ञान के क्षेत्र में भारतीय ज्योतिषशास्त्र का अपना चिन्तन और योगदान रहा है। भास्कराचार्य (सन् ११४४–१२२३) द्वारा रचित 'सिद्धान्त शिरोमणि' इस क्षेत्र का अद्वितीय ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ चार भागों में विभक्त है—

१. लीलावती (अंकगणित) २. बीजगणित ३. ग्रहगोलाध्याय ४. ग्रहगणिताध्याय। इनमें ग्रहगोलाध्याय का विशेष महत्त्व है। इसके १४ प्रकरणों में आकाश में पृथ्वी की स्थिति, स्वरूप, व्यास, क्षेत्रफल, पृष्ठफल, घनफल, पृथ्वी में आकर्षण शक्ति, कालसौर, चान्द्र, नक्षत्र आदि अनेक खगोलीय बिन्दुओं पर विवेचन है। भास्कराचार्य ने स्वरचित पद्यात्मक गणित सिद्धान्तों को स्पष्ट करने के लिए 'वासना भाष्य' नाम से इसकी व्याख्या की। श्री मुनीश्वर (सन् १६०३) ने 'मरीची-भाष्य' नाम से इसकी विस्तृत टीका की। पं. केदारदत्त जोशी ने हिन्दी में उस पर 'सौपत्तिक केदारदत्त आख्यान' लिखा। प्रस्तुत ग्रन्थ में मूल ग्रन्थ व वासना भाष्य, मरीची भाष्य संस्कृत टीका के साथ पं. केदारदत्त की हिन्दी व्याख्या देकर प्रकाशक ने खगोलवेत्ताओं के लिए भारतीय चिन्तन परम्परा का दुर्लभ खगोल ज्ञान सुलभ करा दिया है। प्रारम्भ की लगभग १०० पृष्ठों की भूमिका में पं. जोशीजी ने भारतीय खगोल विज्ञान एवं खगोलवेत्ताओं के सम्बन्ध में महत्त्वपूर्ण जानकारी दी है।

३. **STUDY OF JAINISM** :—डॉ. टी. जी. कलघटगी, प्र. प्राकृत भारती अकादमी, ३८२६, यती श्यामलालजी का उपासरा, मोतीसिंह भोमियों का रास्ता, जयपुर—३, पृ. २५०, मू. १००.००।

डॉ. कलघटगी जैनदर्शन और मनोविज्ञान के अधिकारी विद्वान् हैं। यह पुस्तक उनके व्यापक अध्ययन और गहन चिन्तन का परिणाम है। पुस्तक दो भागों में विभक्त है। प्रथम भाग के चार अध्यायों में जैन धर्म की आर्य पूर्व धर्म के रूप में विवेचना करते हुए तीर्थंकर ऋषभदेव और तीर्थंकर वर्धमान महावीर के योगदान पर व्यापक चर्चा की है। अन्य तीर्थंकरों पर सामान्य रूप से प्रकाश डाला गया है। द्वितीय भाग के पाँच अध्यायों में जैनतर्कशास्त्र, ज्ञान-मीमांसा, तत्त्वमीमांसा, कर्म सिद्धान्त और जैन आचार का बिवेचन किया गया है। अपने विवेचन में लेखक की दृष्टि तटस्थ, स्पष्ट और प्रामाणिक रही है। इतिहास-बोध, मनोविज्ञान और तुलनात्मक पद्धति का सहारा लेने से यह पुस्तक शोधार्थियों के लिए विशेष उपयोगी बन पड़ी है। अंग्रेजी भाषा में इसका अपना विशिष्ट स्थान है।

४. **लग्न की वेला** :—उमेश मुनि 'अणु', प्र. पूज्य श्री नन्दाचार्य साहित्य समिति, मेघनगर (झाबुआ), पिनकोड—४५७७७९, पृष्ठ ३८०, स्वल्प मू. ४.००।

श्री उमेश मुनि 'अणु' आगमज्ञ विद्वान् और तत्त्व-विवेचक हैं। इस कृति में उनका सरस उपन्यासकार रूप उभरकर सामने आया है। लोक-परम्परा से प्राप्त कथा को अपनी आकर्षक भाषा-शैली में प्रस्तुत कर लेखक ने इस

उपन्यास में राग से विराग की ओर बढ़ने की प्रेरणा दी है। अरुण और स्वयंप्रभा लग्न की वेला में एक दूसरे का वरण करने के लिए माला लिए खड़े हैं, पर जाति स्मरण ज्ञान होने से दोनों का लक्ष्य बदल जाता है। धनपति और धनवती के रूप में अपना पूर्व भव जानकर वे अपने दाम्पत्य सम्बन्ध को सबके सामने इस ढंग से प्रस्तुत करते हैं कि पूरा विवाह का माहौल वैराग्य में बदल जाता है और दोनों दीक्षा ग्रहण कर लेते हैं। स्थूल काम भाव दिव्य वैराग्य भाव में बदल जाता है। यह उपन्यास संयम-साधना और दिव्य प्रेमभाव का उपन्यास है।

५. **THE JAIN** :—कार्यकारी सम्पादक डॉ. नटु भाई शाह, प्र. जैन समाज यूरोप, ६९, रोवली फिल्डस् एवेन्यू, लेस्टर (Leicester) LE3 2ES (UK), पृ. २५०।

यह प्रसन्नता का विषय है कि व्यावसायिक उद्देश्यों को लेकर भारत से बाहर यूरोप, अमेरिका आदि देशों में जो जैन धर्मानुयायी भारतीय गये हैं, उनका ध्यान अब सांस्कृतिक-क्षेत्र की ओर गया है और वे वहाँ जैन धर्म, दर्शन में निहित सर्व-हितकारी मानव-मूल्यों की प्रतिष्ठा और उसके प्रचार-प्रसार में अपना योगदान देने लगे हैं। इस दिशा में जैन केन्द्र के विकास के रूप में लेस्टर में जैन समाज के चारों समुदायों द्वारा एक ही परिसर में मन्दिर व स्थानक बनाये गये हैं जिनका प्रतिष्ठा महोत्सव २० जुलाई, १९८८ को वहाँ सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर जैन विश्व सम्मेलन आयोजित किया गया जो जैन एकता, सौहार्द्र और समन्वय भावना का ज्वलन्त प्रतीक बना। चारों समुदायों के जैन प्रतिनिधि इस अवसर पर एकत्र हुए। सबने मिलकर यूरोप व अन्य देशों में जैनत्व के व्यापक प्रचार-प्रसार की सम्भावनाओं पर विचार किया। इस अवसर पर 'The Jain' नाम से जो सोविनियर (स्मारिका) प्रकाशित किया गया है, इसमें अंग्रेजी, गुजराती और हिन्दी में जैन धर्म, जैन साहित्य, जैन-कला, जैन धर्म और पश्चिमी जगत्, जैन संस्कृति, कर्म सिद्धान्त, जैन धर्म में ईश्वर और आत्मा सम्बन्धी अवधारणा, शाकाहार का महत्त्व आदि विषयों पर रोचक और सचित्र रचनाएँ प्रकाशित की गई हैं। लेस्टर में संचालित जैन केन्द्र एवं जैन समाज यूरोप का परिचय भी दिया गया है। मुद्रण कलात्मक, भव्य और उच्चकोटि का है।

□ □

समाज-दर्शन

चातुर्मास-स्वीकृति और संत-विहार

श्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. ने कुछ और चातुर्मास निम्न प्रकार से घोषित किये हैं—

कोसाणा—आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा., श्री हीरा मुनि जी, श्री बसंत मुनिजी, श्री महेन्द्र मुनिजी, श्री गौतम मुनिजी, श्री कैलाश मुनिजी. श्री अर्हदास मुनिजी ठाणा ७।

ब्यावर—पं. र. श्री मान मुनिजी, श्री शुभेन्द्र मुनिजी, श्री प्रकाश मुनि जी, श्री प्रमोद मुनिजी, श्री दया मुनिजी ठाणा ५।

बून्दी—श्री शीतल मुनिजी, श्री धन्ना मुनिजी ठाणा २।

अलीगढ़-रामपुरा—श्री चम्पक मुनिजी, श्री नन्दीषेण मुनिजी ठाणा २।

किशनगढ़—श्री ज्ञान मुनिजी, श्री हरीश मुनिजी, श्री राम मुनिजी ठाणा ३।

आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. आदि ठाणा किशनगढ़ से अजमेर पधारे। वहाँ से पुष्कर, थाँवला होते हुए मेड़ता सिटी की ओर बिहार संभावित है। श्री शीतल मुनिजी भिणाय विराज रहे हैं। श्री चम्पक मुनिजी डिग्गी-मालपुरा पहुँच गये हैं। महासती श्री सायरकंवर जी, महासती श्री मैनासुन्दरीजी, आदि का पुष्कर होते हुए गोविन्दगढ़ की ओर विहार हुआ है। महासती श्री शांति-कंवरजी आदि ठाणा का सरवाड़ से धनोप की ओर विहार हुआ है। महासती श्री संतोषकंवरजी आदि ठाणा का पुष्कर होते हुए गोविन्दगढ़ की ओर, महासती श्री सुशीलाकंवरजी आदि ठाणा का किशनगढ़ से टाँटोटी की ओर, महासती श्री तेजकंवरजी आदि ठाणा का बोरावड़ की ओर विहार सम्भावित है।

प्रवर्तिनी श्री सज्जन श्री जी म. सा. का भव्य अभिनन्दन

जयपुर—आर्यारत्न प्रवर्तिनी श्री सज्जन श्री जी म० सा० का सार्वजनिक अभिनन्दन समारोह २० मई को श्री जैन श्वे० खरतगच्छ संघ के तत्त्वावधान में गणिवर्य श्री मणिप्रभ सागर जी म० सा० की निश्रा तथा प्रधान पद विभूषिता श्री अविचल श्री जी म० सा० के सान्निध्य में आयोजित किया गया। समारोह

की अध्यक्षता न्यायाधिपति श्री गुमानमल लोढ़ा ने की । मुख्य अतिथि थे महामहिम राज्यपाल श्री सुखदेवप्रसाद । इस अवसर पर साध्वी श्री जी को अभिनन्दन ग्रंथ भेंट किया गया, जिसमें साध्वी श्री जी के जीवन, व्यक्तित्व और कृतित्व के अतिरिक्त जैन धर्म, दर्शन साहित्य, इतिहास और संस्कृति सम्बन्धी विशिष्ट रचनाएँ संकलित हैं । यह अभिनन्दन साध्वी श्री के ८२वें वर्ष प्रवेश एवं दीक्षा स्वर्ण-जयन्ती के उपलक्ष में किया गया । संयोजक श्री पुखराज लूणिया द्वारा अहिंसक विश्व की एकता में एकजुट होकर कार्य करने तथा जैन एकता व समाजोत्थान सम्बन्धी प्रस्ताव सर्वानुमति से पारित किये गये । इस अवसर पर 'सज्जन सेवा संस्थान' की स्थापना की घोषणा की गई । जिसके द्वारा सर्व-हितकारी सेवा कार्य किये जायेंगे । इस अवसर पर विद्वानों एवं समाजसेवियों को भी सम्मिलित किया गया । समारोह के क्रम में ही १८ मई को राजकोट के आध्यात्मिक वक्ता श्री शशिकान्त भाई मेहता का 'नवकार-महामंत्र' पर विशेष प्रवचन हुआ । १९ मई को सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किया गया । वक्ताओं ने साध्वी श्री जी के संयमी-जीवन पर प्रकाश डालते हुए उनके दीर्घायु जीवन की कामना की । खरतरगच्छ संघ के मंत्री श्री उत्तमचन्द बडेर ने कार्यक्रम का संयोजन किया ।

पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान, वाराणसी की सूचनाएँ

(१) पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर यहाँ प्राकृत एवं जैन विद्या में स्नातकोत्तर कक्षायें प्रारम्भ करने का जो संकल्प किया गया था, आगामी जुलाई ८९ से क्रियान्वित किया जा रहा है । इस सम्बन्ध में श्री भूपेन्द्रनाथजी, श्री नृपराजजी और प्रो० सागरमलजी बम्बई में श्री दीपचंद जी गार्डी से मिले और उन्हें संस्थान की वर्तमान स्थिति से अवगत कराया । गार्डी जी ने इस पुनीत कार्य के लिये प्रति वर्ष पौने दो लाख रुपये पांच वर्षों तक देने की घोषणा की । साथ ही विद्या के मुख्य भवन के दूसरी मंजिल के निर्माण के लिये भी पांच लाख रुपये देने का अभिवचन दिया । विश्वविद्यालय से कक्षाओं की सम्बद्धता हेतु भी प्रयत्न प्रारम्भ किये जा चुके हैं । इच्छुक छात्र इस सम्बन्ध में निदेशक, पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान, आई० टी० आई० रोड, बी० एच० यू०, वाराणसी–५ से सम्पर्क स्थापित करें ।

(२) पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान में शोधाधिकारी एवं सह-शोधाधिकारी के पद विज्ञापित किये गये हैं । अन्तिम तिथि ३० जून है । इच्छुक व्यक्ति इस सम्बन्ध में मंत्री, पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान, आई. टी. आई. रोड, बी. एच. यू., वाराणसी–५, को ५) रु. का डाक टिकट एवं अपने पते सहित लिफाफा भेजकर आवेदन फार्म मंगा सकते हैं ।

गोंडलगच्छ पाट महोत्सव का आयोजन

मलाड-बम्बई—यहाँ वाणीभूषण श्री गिरीशचन्द्र जी म. सा. एवं साध्वी श्री तरुलता बाई आदि टाणा के सान्निध्य में २६ फरवरी से ५ मार्च तक गोंडल-गच्छ के संस्थापक आचार्य श्री डूंगरसिंहजी म. सा. के द्विशताब्दी समारोह पर अष्टाह्निका आराधना तपोत्सव का आयोजन किया गया, जिसमें ५०० आराधक भाई-बहिनों ने साधना का लाभ लिया। आचार्य श्री के ३६ गुण होने से ३६ आगम पोथियों की दान, शील, तप और भावना रूप नौ-नौ बोलियाँ संपन्न हुई। महिला सम्मेलन व अन्य सामूहिक धर्माराधना के कार्यक्रम भी हुए।

अक्षय तृतीया पर वर्षीतप के पारणे संपन्न

अक्षय तृतीया ८ मई को देश के विभिन्न भागों में पूज्य आचार्यों एवं सन्त-सतियों के सान्निध्य में वर्षीतप के सामूहिक पारणे संपन्न हुए। कार्यालय में प्राप्त सूचना के आधार पर **जावद** में आचार्य श्री नानेश के सान्निध्य में ६६ तपस्वियों के पारणे सम्पन्न हुए। युवाचार्य डॉ. शिवमुनि जी के सान्निध्य में जैन संघ **रामकोट** (हैदराबाद) की ओर से १७ तपस्वियियों का अभिनन्दन किया गया। मुख्य अतिथि थे २४ वर्षों से निरन्तर एकान्तर तप करने वाले धर्मनिष्ठ तपस्वी श्री हस्तीमल जी मुणोत **रायपुर (भीलवाड़ा)** में श्री सौभाग्य मुनिजी 'कुमुद' एवं महासती श्री प्रेमवतीजी के सान्निध्य में ३७ भाई-बहिनों के पारणे संपन्न हुए। एस. एस. जैन संघ, **कोयम्बटूर** की ओर से महासती श्री अजितकंवरजी के सान्निध्य में तीन तपस्वी बहिनों के पारणे संपन्न हुए। **मणिनगर अहमदाबाद** में खंभात सम्प्रदाय के आचार्य श्री कांति ऋषि जी के सुशिष्य श्री कमलेश मुनि जी के सान्निध्य में २३ वर्षीतप के पारणे संपन्न हुए। **खाचरताद** (म. प्र.) में श्री अजितमुनि जी के सान्निध्य में सामूहिक पारणा महोत्सव संपन्न हुआ।

विविध धार्मिक स्वाध्याय-शिविर

मद्रास में अ. भा. सुधर्म श्रावक संघ दक्षिण शाखा की ओर से २१ अप्रैल से ३० अप्रैल तक स्वाध्याय-शिविर पं. र. श्री विचक्षण मुनि जी के सान्निध्य में आयोजित किया गया। शिविर में लगभग ११०० शिविरार्थी और ४० स्वाध्यायी सम्मिलित हुए। शिविर-काल में विविध प्रकार की प्रेरणादायक धर्माराधना हुई। **अहमदनगर** में आचार्य श्री आनन्दऋषि जी म. सा. के सान्निध्य में २६ मई से ३१ मई तक स्वाध्यायियों के लिए शिविर आयोजित किया गया, जिसमें 'जैन स्वाध्याय प्रवेश', 'जैन स्वाध्याय परिचय' और 'जैन स्वाध्याय प्राज्ञ' की कक्षाओं में स्वाध्यायियों को सम्मिलित कर धार्मिक तत्वज्ञान का प्रशिक्षण

दिया गया । **जलगाँव** में आचार्य नानेश के सुशिष्य श्री सम्पतमुनि जी के सान्निध्य में १ मई से ८ मई तक स्थानीय संघ द्वारा जैन धार्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें ३० बालक-बालिकाओं एवं २० भाई-बहिनों ने भाग लिया ।

भागवती दीक्षाएँ सम्पन्न

अहमदनगर में आचार्य श्री आनन्दऋषि जी म. सा. के सान्निध्य एवं महासती श्री पुष्पकंवर जी के नेश्राय में कोयम्बटूर निवासिनी विरक्ता बहिन संतोषकुमारी संघवी की भागवती दीक्षा १९ मई को संपन्न हुई । **मदुरान्तकम्** में पं. र. तपस्वी श्री सुमति प्रकाश जी म. एवं उपाध्याय श्री विशालमुनि जी की निश्रा में बैंगलोर निवासी मुमुक्ष श्री जयन्तीलाल भाई की दीक्षा ११ मई को संपन्न हुई । **कुचेरा** में तपस्वी श्री मोहन मुनि जी, उ. प्र. की विनय मुनि जी के सान्निध्य एवं महासती श्री मनोहरकंवर जी आदि सतियों की निश्रा में कुचेरा निवासी स्व. सेठ श्री तेजराज जी आबड़ की सुपौत्री कु. सविता की भागवती दीक्षा ११ मई को सानन्द सम्पन्न हुई । आपकी माता जी श्रीमती मनोहरदेवी वर्तमान में साध्वी मनीषा जी के रूप में साधनारत हैं ।

चातुर्मास–स्वीकृति

जोधपुर—प्रवर्तक श्री रमेश मुनिजी ।

अजमेर—श्री प्रकाश मुनिजी (श्री सुदर्शन मुनिजी के शिष्य) ।

भवानीमण्डी—विदुषी साध्वी श्री छगनकंवरजी म. सा. ।

नगरी (म. प्र.)—विदुषी महासती श्री ताराकंवरजी म. सा. ।

होसपेट—महासती श्री शीतलकंवरजी म. सा. ।

जोधपुर में सामूहिक विवाह 20 नवम्बर '89 को

आज के इस महंगाई के युग में अधिकांश व्यक्तियों को परिवार के भरण-पोषण में भी कठिनाई का सामना करना पड़ता है, वहाँ शादी-ब्याह जैसे प्रसंगों में अपनी आर्थिक सीमा को लांघ कर लोग प्रदर्शन व दिखावे में इस तरह दौड़ लगा रहे हैं जैसे कोई बड़ी प्रतियोगिता में सफल रहना हो । आज शादी-समारोहों के समय टेन्ट, रोशनी, अतिथिसत्कार आदि पर हजारों ही नहीं लाखों रुपयों का व्यय एक आयोजन में कर दिया जाता है । इस तरह के अनावश्यक व्यय से प्रायः परिवार का आर्थिक ढांचा चरमरा जाता है । अतः आज समय की मांग के अनुसार सामूहिक विवाह अति आवश्यक हो गया है जिससे इस बढ़ते हुये रोग व सामूहिक कुरीति पर कुछ हद तक अंकुश लग सके तथा लोगों को कुछ

राहत मिल सके। इस सामूहिक बुराई को मद्दे नजर रखते हुये "जैन ब्रिगेड़, जोधपुर" द्वारा २० नवम्बर, १६८६ को महावीर काम्पलेक्स, जोधपुर में सामूहिक विवाह का विशाल आयोजन किया जा रहा है। अतः जैन समाज से निवेदन है कि इस महायज्ञ में अपने पुत्र/पुत्री की शादी हेतु सम्मिलित होकर इसे सफल बनाने में अपना योगदान देवें। इसमें सामूहिक स्वागत, सामूहिक चंवरी, वर-वधू के माता-पिता का बहुमान आदि कार्यक्रम आयोजित किये जायेंगे।

डॉ. पी. एम. कुम्भट, संयोजक, सामूहिक विवाह समिति,
श्रद्धा, 1017, नेहरू पार्क रोड, जोधपुर

संक्षिप्त-समाचार

पूना—यहाँ रोजाना हजारों की संख्या में गैर कानूनी और बिना कारण पशुओं की हत्या होती है। इन अबोल और असहाय प्राणियों को छुड़ाकर उन्हें अभयदान देने के लिए "पशु-पक्षी पुनर्वसन केन्द्र" की स्थापना कानिफनाथ महादेव मंदिर के पास २२५ एकड़ भूमि पर की जा रही है। इसके लिए २० लाख राशि की जरूरत है। जीवदया प्रेमी आवश्यक राशि "श्री जीव दया महामण्डल, पूना" के नाम ३६४, रविवारपैठ. भगवान् आदिनाथ चौक, पूना—४११००२ के पते पर भेजें। यह राशि आयकर अधिनियम की धारा ८०-जी के अन्तर्गत कर मुक्त है।

नई दिल्ली—अहिंसा इन्टरनेशनल के महासचिव श्री सतीशकुमार जैन की विज्ञप्ति के अनुसार १६८८ का १५०००/— का "डिप्टीमल जैन स्मृति पुरस्कार" सागर के प्रसिद्ध विद्वान् डॉ. पन्नालाल जैन को घोषित किया गया है। संस्थान की ओर से विकलांग व्यक्तियों के लिए सहायता शिविर आयोजित कर लगभग २०० विकलांग व्यक्तियों को १ लाख ३० हजार रुपये के विस्थापन-उपकरण वितरित किये गये।

बाहुबली—अनेकान्त शोधपीठ बाहुबली के निदेशक डॉ. हरीन्द्रभूषण जैन की विज्ञप्ति के अनुसार शोधपीठ की व्यवस्थापन समिति की बैठक में ८८-८६ की प्रगति का विवरण एवं आगामी वर्ष का बजट प्रस्तुत किया गया। बाहुवली विद्यापीठ परिसर में शोधपीठ का स्वतन्त्र भवन बनकर तैयार हो गया है। शोधपीठ द्वारा पी. एच. डी. करने वाले शोधार्थियों को आवश्यक सहायता एवं मार्गदर्शन प्रदान किया जाता है।

भवानीमंडी—श्री राजेन्द्रप्रसाद जैन, एडवोकेट की, प्रेरणा से श्री कैलाशजी बोहरा ने 'बालकथामृत' स्तंभ के प्रचार के लिए दस बालकों को 'जिनवाणी' का अंक अपनी ओर से भिजवाया है।

सवाईमाधोपुर--यहाँ पं. र. श्री मानमुनि जी, शुभमुनि जी आदि ठाणा ७ के पधारने पर सामूहिक दया का विशेष आयोजन रखा गया, जिसमें ३५१ दयाव्रत हुए। प्रत्येक साधक ने कम से कम ११ सामायिक की। प्रत्येक माह के प्रथम सोमवार को दयाव्रत दिवस के रूप में मनाने का भी निर्णय लिया गया।

नई दिल्ली—यहाँ की प्रसिद्ध संस्था जैन सभा के पंच दिवसीय स्वर्ण जयन्ती समारोह का समापन समारोह रक्षामंत्री श्री कृष्णचन्द्र पंत के मुख्य आतिथ्य एवं प्रसिद्ध समाज-सेवी श्री दीपचन्द गार्डी की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। इस अवसर पर ३० महानुभावों को उल्लेखनीय सेवाओं के लिए सम्मानित किया गया।

टोंक—अनाथ, अपंग, दीन-दुःखी, संकटग्रस्त भाई-बहिन परामर्श व सहायतार्थ अपना पूरा विवरण लिखते हुए सम्पर्क करें—मंत्री, जीवदया मंडल ट्रस्ट, डागा सदन, संघपुरा, टोंक–३०४००१।

जोधपुर—श्री किंग सिटी क्लब द्वारा 'दहेज मानव के लिए अभिशाप है' विषय पर निबन्ध प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है। प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय आने वाले निबन्धों को पुरस्कृत किया जायेगा। निबन्ध इस पते पर भेजें– मनोज कुमार जैन, सुधर्म प्रचार मण्डल, सिटी पुलिस, जोधपुर।

राणावास—श्री व. स्था. जैन छात्रावास में प्रवेश के लिए ५ रुपये भेजकर आवेदन-पत्र व नियमावली मंगवा लें। प्रवेश कार्य २५ जून से १५ जुलाई तक चालू रहता है। यहाँ मरुधर केशरी सीनियर उच्च मा. विद्यालय में कला एवं वाणिज्य के शिक्षण की व्यवस्था है।

जयपुर—'रोटरी क्लब' में ६ अप्रैल को 'धर्म और पर्यावरण' विषय पर तथा १७ मई को 'थियोसोफिकल सोसायटी' के अन्तर्गत 'मानवता और धर्म' विषय पर डॉ. नरेन्द्र भानावत के विशेष व्याख्यान हुए। अन्त में प्रश्नोत्तर भी हुए। डॉ. भानावत ने आवश्यकताएँ सीमित करने एवं संवेदनशीलता जगाकर मानव-सेवा में प्रवृत्त होने को सच्चा मानव धर्म बताया।

आबू पर्वत—यहाँ श्री वर्धमान महावीर केन्द्र में अनुयोग प्रवर्तक पं. र. मुनि श्री कन्हैयालाल जी म. 'कमल' के सान्निध्य में आयम्बिल ओली तप की आराधना संपन्न हुई। महासती श्री मुक्तिप्रभा जी की प्रेरणा से डॉ. बी. डी. जैन ने 'आनन्द अनुपमा गर्ल्स हॉस्टल' प्रारम्भ किया है। इसमें बालिकाओं के रहने एवं शिक्षण आदि की सुन्दर व्यवस्था है।

दुर्ग—यहाँ महावीर स्वाध्याय भवन में २१ दिवसीय धार्मिक ज्ञान संस्कार-शिविर का आयोजन नरेन्द्र भाई कामदार के संचालन में किया गया, जिसमें ५० छात्र-छात्राओं ने भाग लिया।

जयपुर—डॉ. ताराचन्द जैन, बक्षी भवन, न्यू कॉलोनी, जयपुर की विज्ञप्ति के अनुसार 'स्वतंत्रता संग्राम में जैनियों का योगदान' विषयक एक ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है। इससे सम्बन्धित सामग्री जिनके पास उपलब्ध हो, वे तुरन्त भेजें। श्री अखिल विश्व जैन मिशन की स्मारिका का भी प्रकाशन किया जा रहा है। इसके लिए भी सभी शाखाओं के पदाधिकारियों व सदस्यों से सामग्री आमन्त्रित है। २७ मई को जैन मिशन के संस्थापक डॉ. कामताप्रसाद जैन का स्मृति दिवस मनाया गया। मिशन द्वारा प्रकाशित शाकाहार, चरित्र निर्माण आदि पुस्तकें, विवाह योग्य लड़कों की सूची, जैन मिशन बुलेटिन एवं प्रचार सामग्री, दो रुपये के डाक टिकिट भेजकर प्राप्त की जा सकती है।

भोपाल—सुप्रसिद्ध आध्यात्मिक गीतकार श्री राजमल पवैया द्वारा रचित 'पूजांजलि' के ७वें संस्करण एवं आध्यात्मिक काव्य संग्रह 'समकित-तरंग' का विमोचन मुख्यमंत्री श्री मोतीलाल बोरा द्वारा ११ मई को सम्पन्न हुआ।

शोक-श्रद्धांजलि

सेवाभावी श्री जितेन्द्र मुनिजी का स्वर्गवास

बीकानेर—आदर्श त्यागी सेवाभावी श्री जितेन्द्र मुनिजी का १६ मई को देहावसान हो गया। आप सरल स्वभावी, निर्मल, निश्छल अन्तःकरण के धनी थे। आप बीकानेर के धर्मनिष्ठ सोनावत परिवार से सम्बन्धित थे। सं० २०१६ में माघ सुदी १३ को आपने अपने पुत्र, पुत्री एवं धर्मपत्नी सहित आचार्य श्री नानेश के चरणों में जैन भागवती दीक्षा अंगीकृत की जो वर्तमान में क्रमशः विजय मुनिजी, साध्वी विजयप्रभाजी एवं साध्वी भंवर-कंवरजी के रूप में साधनारत हैं।

स्थविर पद विभूषिता महासती श्री लाडकंवरजी का स्वर्गवास

ब्यावर—आचार्य श्री नानेश की आज्ञानुवर्तिनी स्थविर पद विभूषिता महासती श्री लाडकंवरजी का ७६ वर्ष की आयु में देहावसान हो गया। आपने ४६ वर्ष तक निरतिचार संयमपर्याय का पालन किया। सं० २०००

की चैत्र कृष्णा १० को आपने बीकानेर में भागवती दीक्षा अंगीकार की थी। आप कुछ समय से ब्यावर में स्थिरवास कर रही थीं। आप अत्यन्त सरलस्वभावी आगमज्ञ विदुषी साध्वी थीं।

उदयपुर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री मनोहरसिंहजी गिलुंडिया की धर्मपत्नी श्रीमती दौलतकंवर का ७२ वर्ष की आयु में ४ मई, ८९ को निधन हो गया। आप शान्त प्रकृति की धर्मनिष्ठ सेवाभावी महिला थीं।

कानोड़—श्री जवाहर विद्यापीठ के पूर्व संचालक एवं मंत्री, आदर्श शिक्षक, समाज-सेवी श्री नाथूलालजी जारोली का ८ मई, ८९ को ६५ वर्ष की आयु में ब्रेन-हैमरेज से उदयपुर में आकस्मिक निधन हो गया। आपने आदर्श शिक्षक के रूप में आजीवन अपनी सेवाएँ जवाहर विद्यापीठ को दीं। पं० उदय जैन के बाद आपने संचालक के रूप में समस्त शैक्षणिक प्रवृत्तियों का कुशलतापूर्वक संचालन किया। वहाँ से सेवा-निवृत्त होने के बाद कार्यालय सचिव के रूप में आपने अपनी सेवाएँ अ० भा० साधुमार्गी जैन संघ, बीकानेर को दीं। आप मिलनसार, धर्मनिष्ठ, कुशल प्रबन्धक और आदर्श शिक्षक थे। आपके सुपुत्र श्री गौतम जारोली युवा वैज्ञानिक के रूप में भारत-सरकार द्वारा सम्मानित हो चुके हैं। आपके निधन से एक आदर्श शिक्षक एवं कुशल प्रबन्ध-संचालक की अपूरणीय क्षति हुई है।

मालेगाँव—प्रतिष्ठित श्रावक श्री पृथ्वीराज जी मालू का ७८ वर्ष की आयु में १९ मई को सामायिक सहित समाधि मरण हो गया। आप खीचन के मूल निवासी थे और बहुश्रुत पं० र० श्री समरथमलजी म० सा० की प्रेरणा से आपको जैन धर्म की शिक्षा और तत्त्व की जानकारी प्राप्त हुई थी। गत २५ वर्षों से आपके चारों खन्द व स्नान के त्याग थे। आप नित्यप्रति पौरसी सहित १४ नियम स्मरण कर कम से कम द्रव्य लगाते थे। आपको आयुर्वेद चिकित्सा का अच्छा अनुभव था। सन्त-सतियों व सांसारिक रोगियों की निरवद्य चिकित्सा में आप रुचि लेते थे। तन, मन, धन से आप दीन-दुखियों की सेवा एवं जीवदया में सहयोग करते थे। आप अ० भा० जैन संस्कृति रक्षक संघ एवं सुधर्म प्रचार मंडल के उपाध्यक्ष थे। आपका त्याग-प्रत्याख्यान युक्त सादा जीवन सबके लिए प्रेरणादायक था।

कानोड़—यहाँ स्व. श्री कारूलालजी भानावत की धर्मपत्नी श्रीमती घीसीबाई का ७५ वर्ष की आयु में ११ मई, ८९ को निधन हो गया। आप धार्मिक वृत्ति की सरल स्वभावी महिला थीं।

थांवला (म. प्र.)—यहाँ के श्रावक श्री गेंदालालजी शाह की धर्म-

पत्नी श्रीमती सम्पतबाई का ६५ वर्ष की आयु में १९ मई को संथारे सहित निधन हो गया। आप कैंसर रोग से पीड़ित थीं, पर समभाव से वेदना सहन करती रहीं। आप धर्मपरायण, सरल-स्वभावी महिला थीं।

जयपुर—यहाँ स्व. श्री किस्तूरचन्दजी पंसारी की धर्मपत्नी श्रीमती तीजांबाई का ८१ वर्ष की आयु में २२ मई को निधन हो गया। आप श्री विमलचन्दजी पंसारी की माताजी एवं श्री वीरबालिका शिक्षण संस्थान के कोषाध्यक्ष रत्न व्यवसायी श्री महावीरजी श्रीमाल की दादी माँ थीं। आप सरल स्वभावी, धर्म-परायण महिला थीं।

पचपहाड़—यहाँ के स्था. जैन संघ के अध्यक्ष श्री माणकचन्दजी बोहरा के नवासे श्री पारसमलजी सुपुत्र श्री बाबूलालजी बाफना का २७ वर्ष की अल्प आयु में ४ मई को उज्जैन में दु:खद निधन हो गया।

कानोड़—स्व. श्री गोपाललालजी वया की धर्मपत्थी श्रीमती नजर-बाई का ८० वर्ष की आयु में २१ मई को निधन हो गया। आप धार्मिक वृत्ति की सरल स्वभावी महिला थीं और कई प्रकार के व्रत-प्रत्याख्यान ले रखे थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गई हैं।

जोधपुर—धर्मनिष्ठ श्रावक स्व. श्री सनरूपमलजी लोढ़ा की धर्म-पत्नी श्रीमती मनोहरकंवर लोढ़ा का ९१ वर्ष की आयु में १९ मई को निधन हो गया। आप धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थीं। आप ने दो वर्षीतप, तीन उपधान, वर्धमान तप की कई ओलियां, अठाइयां आदि तपस्याएँ कीं। आपके कई व्रत प्रत्याख्यान थे। आप प्रतिदिन कम से कम ५-६ सामायिक करती थीं। आप संसार पक्ष में श्री शीतल मुनि जी की नानी थीं। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गई हैं।

भवानीमण्डी—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री तिलोकचन्दजी जैन का १७ मई को निधन हो गया। उनके पुत्र श्री राजकुमारजी इस वियोग को सहन न कर पाये और वे श्मशान में ही बेहोश हो गये। वहाँ से उन्हें अस्पताल पहुँचाया गया, जहाँ मृत्यु से संघर्ष करते हुए २२ मई को इनका देहान्त हो गया। मृत्यु से पूर्व अमेरिका से आये अपने लघु भ्राता श्री श्रीचन्द जी से उन्होंने चेतनावस्था में आधी-अधूरी बातचीत की। उनकी रुग्णावस्था में समाज के सभी बन्धु अहर्निश उनकी सेवा-परिचर्या में लगे रहे, पर वे बच न सके। भाई श्रीचन्दजी एवं उनके परिवार ने समाज द्वारा की गई सेवा-शुश्रूषा के प्रति आभार प्रकट करते हुए नये स्थानक निर्माण में दिवंगत आत्माओं की स्मृति में ११ हजार रुपये भेंट करने की घोषणा की। आपके

परिवार से महासती श्री त्रिशलाजी एवं रचनाजी तथा श्री धन्ना मुनिजी दीक्षित हैं।

जयपुर—यहाँ श्रीमती मोहनदेवी बाबेल का ७८ वर्ष की आयु में ५ जून को निधन हो गया। आप कानोड़ निवासी प्रतिष्ठित श्रावक स्वर्गीय श्री शोभालालजी बाबेल की धर्मपत्नी थीं। आप धार्मिक वृत्ति की सरल स्वभावी महिला थीं। आपके कई व्रत-नियम थे। आप श्री विजयसिंहजी बाबेल की माताजी थीं।

जयपुर—श्री पारसलालजी पाटनी के सुपुत्र श्री प्रकाशजी पाटनी का ६ जून को दुखद निधन हो गया। आप जन-सम्पर्क निदेशाल में सहायक निदेशक थे। स्वभाव से मिलनसार होने के साथ-साथ समाज-सेवा एवं जैन धर्म के प्रचार-प्रसार में आपकी विशेष रुचि थी।

अलवर—श्री सूरजमलजी मेहता की माताजी श्रीमती धनदेवी जी का स्वर्गवास शुक्रवार दिनांक 9 जून, 1989 को हो गया। आप धार्मिक वृत्ति की सरल स्वभावी महिला थीं।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति हम सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 'जिनवाणी' एवं अ. भा. जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए शोक-विह्वल परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

—सम्पादक

दो मुक्तक

☐ श्री प्रेमचन्द्र जैन 'गोखरु'

जिन्होंने जीत लिए थे, बाहर के नहीं, भीतर के युद्ध,
जिन्होंने बनाली थी, जीवन में भावनाएँ शुद्ध।
वो बन गये निर्लेप-निरंजन-निराकारी जग में,
नाम दिए थे दुनिया ने जिनको महावीर और बुद्ध ॥ १ ॥

जिन्होंने आँसुओं से सुदामा के पाँव धो डाले,
जिन्होंने आँसुओं से जटायु के घाव धो डाले।
ऐसे श्याम और राम की पावन धरती पर
समझ नहीं आता इन भक्तों के मन क्यों है 'काले ॥ २ ॥

C/o श्री रामनिवास जी माहुर
न्यू कालोनी, बस स्टेण्ड के पीछे, देवली (जिला : टोंक)

साभार प्राप्ति स्वीकार

२५१/- रु. "जिनवाणी" के आजीवन सदस्यता हेतु प्रत्येक

२४८६. श्रीमती गुलाबदेवीजी जैन, बम्बई
२४८७. श्री अनिलकुमारजी मोगरा, जयपुर
२४८८. श्री महावीरजी मुनोत, मद्रास
२४८९. मैसर्स प्रकाश ट्रेडिंग कम्पनी, इन्दौर (म.प्र.)
२४९०. श्री मदनलालजी कोठारी, मद्रास
२४९१. श्री सुनीलजी देवड़ा द्वारा–मै. स्टील स्टोन सप्लायर्स, उज्जैन (म.प्र.)
२४९२. श्री सुलतानमलजी सुराणा, इन्दौर (म.प्र.)
२४९३. शाह श्री चम्पालालजी खींवराजजी बोहरा, पाली मारवाड़
२४९४. श्री सोहनसिंहजी कानुगो, नागौर (राज.)
२४९५. श्री अजीतमलजी सुराणा, नागौर (राज.)
२४९६. श्री महावीरचन्दजी चौधरी, नागौर (राज.)
२४९७. श्री पदमचन्दजी पींचा, मद्रास
२४९८. श्री अभयकुमारजी रिखबचन्दजी कुचेरिया, धुलिया

"जिनवाणी" को सहायतार्थ भेंट

२५१/- रु. श्री मोतीलालजी यशवन्तराजजी सांखला, बैंगलोर
अपनी सुपुत्री सौ. कां. किरण के विवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

२५१/- रु. श्री कन्हैयालालजी पारसमलजी बम्ब, बैंगलौर
अपनी भाणजी किरण के विवाह के उपलक्ष्य में भेंट।

२५०/- रु. श्री भंवरलालजी लोढ़ा, हीरादेसर (जोधपुर)
स्वर्गीय श्री मिश्रीमलजी सा. लोढ़ा हीरादेसर वालों की पुण्य स्मृति में भेंट।

१५०/- रु. श्री सोनकरन राजेन्द्रकुमारजी मरोटी, दुर्ग (म.प्र.)
कुमारी रूपलता मरोटी की दीक्षा के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१/- रु. श्री सन्तोषचन्दजी सुकलेचा, जयपुर
अपनी धर्मपत्नी की पुण्य स्मृति में भेंट।

१०१/- रु. श्रीमती चन्दन बालाजी मोदी धर्मपत्नी श्री सुनीलनाथजी मोदी, जोधपुर, अपनी पूज्य सासूजी श्रीमती शान्तिदेवीजी धर्मपत्नी

श्री सुमेरनाथजी मोदी के दूसरा वर्षीय तप की तपस्या व उनके आजीवन ब्रह्मचर्य पालने की खुशी में भेंट।

१०१/- रु. श्री जौहरीमलजी सा. खींवसरा, जोधपुर
उनकी धर्मपत्नी श्रीमती बिसनकंवरजी खींवसरा की पुण्य स्मृति में भेंट।

१०१/- रु. श्री गौतमचन्दजी विमलचन्दजी मालु, मालेगांव (नासिक)
पूज्य पिताजी श्री पृथ्वीराजजी सा. का सामायिक युक्त समाधि मरण हुआ उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

१०१/- रु. श्री हुकमसिंहजी मेहता, जयपुर
श्रीमती सन्तोष कंवरजी पत्नी स्व. श्री दौलतसिंहजी मेहता, मांडल गांव निवासी का दिनांक ८.५.८९ को स्वर्गवास हुआ, उनकी पुण्य स्मृति में भेंट।

१०१/- रु. श्री अनिलकुमारजी तलेरा, मन्दसौर
स्व. श्री कमलकुमारजी की पुण्य स्मृति में भेंट।

५१/- रु. श्री गेंदालालजी शाह, थांदला (झाबुआ)
धर्मपत्नी श्रीमती सम्पतबाईजी की पुण्य स्मृति में भेंट।

५०/- रु. श्री भंवरलालजी सुन्दरलालजी बोथरा, दुर्ग (म.प्र.)
श्री सुन्दरलालजी बोथरा की पुण्य स्मृति में भेंट।

२१/- रु. श्री सौभागमलजी जागीदार, भवानीमंडी
अक्षय तृतीया के पावन पर्व पर आचार्य श्री हस्तमलजी म. सा, मदनगंज में मंगल प्रवेश एवं उनके ६०वें आचार्य पद ग्रहण दिवस की खुशी में भेंट।

"स्वाध्याय शिक्षा" को सहायतार्थ भेंट

१०१/- रु. श्रीमती कमलाबाईजी खाबिया, भोपाल (म.प्र.)

साहित्य-प्रकाशन को सहायतार्थ भेंट

५०००/- रु. श्रीमती सूआबाईजी भंडारी द्वारा—श्री सुगनचन्दजी भंडारी, जोधपुर, आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. के जीवन-चरित्र के लिए भेंट।

५०००/- रु. श्री प्रेमराजजी गांधी (थांवला वाले) जोधपुर
आचार्य श्री हस्तीलमजी म. सा. के जीवन-चरित्र के लिए भेंट।

—मंत्री, सम्यक्ज्ञान प्रचारक मण्डल

□ □ □

यह शरीर नौका रूप है, जीवात्मा उसका नाविक है और संसार समुद्र है। महर्षि इस देह रूप नौका के द्वारा संसार-सागर को तैर जाते हैं। उत्तराध्ययन २३/७३

अपनी बात :

खमतखामणा : क्यों और कैसे ?

☐ डॉ. नरेन्द्र भानावत

'खमतखामरणा' पारिभाषिक शब्द होते हुए भी लोक-जीवन और लोक-व्यवहार में बहु प्रचलित है। प्रतिक्रमरण के बाद और विशेष तौर से संवत्सरी के दिन प्रतिक्रमरण के बाद 'खमतखामरणा-खमतखामरणा' की ध्वनि गूंजती रहती है। पर कितने लोग ऐसे हैं जो इसके मर्म को समझ कर इस शब्द का उच्चाररण और प्रयोग करते हैं ?

यह शब्द 'खमत'+'खामरणा' से मिलकर बना है। 'खमत' का अर्थ है—क्षमा प्रदान करना और 'खामरणा' का अर्थ है—क्षमायाचना करना। प्रश्न उठता है कि क्षमा का आदान-प्रदान जीवन में क्यों आवश्यक है ? उत्तर सहज है कि कोई भी व्यक्ति हमेशा पूरे समय के लिए क्रोध में, अहंकार में, छल-छद्म में और लोभ-लालच में नहीं रहना चाहता, न रह सकता है। यह व्यक्ति की स्वाभाविक स्थिति या दशा नहीं है। व्यक्ति की स्वाभाविक स्थिति और दशा है—शांति, विनय, सरलता और संतोष। यही व्यक्ति को अभीष्ट है और यही जीवन का लक्ष्य है।

पर इस स्थिति और लक्ष्य को पाना सहज, सरल नहीं है। सभ्यता के विकास के साथ-साथ मानव-मन जटिलता में, ग्रंथि-बंधन में उलझता रहा है। इन्द्रिय-सुख-भोग की प्राप्ति में वह अपने इर्द-गिर्द जो वस्तु, व्यक्ति और परि-स्थिति है, उसके प्रति प्रतिक्रियात्मक और आक्रमरणात्मक व्यवहार करता रहा है। कभी क्रोध में आकर, कभी अहंकार में फूल कर, कभी माया-जाल में उलझ कर और कभी लोभ-चक्र में फँसकर। इसके परिरणामस्वरूप मन में तनाव बढ़ा है, परिवार में विग्रह बढ़ा है, समाज में विघटन की प्रवृत्ति उभरी है। इनसे निपटने के लिए एक ओर कानून और दण्ड की व्यवस्था है तो दूसरी ओर व्यक्ति का स्वयं का आत्मानुशासन है, अन्तर-निरीक्षरण है और भूल को भूल समझने की विवेक-शक्ति है। अनुभूति के इसी धरातल पर 'खमतखामरणा' का फूल खिलता है।

संस्कृत के महान् कवि आचार्य क्षेमेन्द्र ने लिखा है कि 'मनुष्य का भूषरण रूप है, रूप का भूषरण गुरण है, गुरण का भूषरण ज्ञान है और ज्ञान का भूषरण क्षमा है।' आज ज्ञान की प्राप्ति के लिए बड़ी भाग-दौड़ मची हुई है। अच्छे स्कूल

और कॉलेजों में प्रवेश के लिए भीड़ लगी रहती है, ऊँची-ऊँची फीस ली जाती है, 'होमवर्क' के रूप में खूब तैयारी की जाती है, मोटी-मोटी संदर्भ-पुस्तकें खरीदी और पढ़ी जाती हैं। इतनी तैयारी के बाद भी ज्ञान का परिणाम उच्च श्रेणी उत्तीर्ण करने में और अच्छी नौकरी प्राप्त करने में सीमित हो गया है। यदि सावधानी न बरती जाए तो ज्ञान, हिंसा, अपराध और भ्रष्टाचार का साधन बनकर रह जाता है। आज ज्ञान प्रदूषित बनकर रह गया है। इसे जीवन का, जगत् का आभूषण बनाने के लिए क्षमा भाव को प्रकटाना आवश्यक है।

कहा जाता है कि दूसरे तीर्थंकर से लेकर तेइसवें तीर्थंकर तक के समय के लोग 'ऋजुप्राज्ञ' थे अर्थात् सरल और विवेकवान् थे। जब कभी कोई भूल होती तो तुरन्त भूल को भूल मानकर खमतखामणा कर लेते थे। प्रतिदिन देवसी और रायसी प्रतिक्रमण करने का विधान नहीं था, परन्तु प्रथम और अंतिम तीर्थंकर के समय प्रतिक्रमण करने का निश्चित विधि-विधान था। कारण कि प्रथम तीर्थंकर के समय के लोग 'ऋजु जड़' थे अर्थात् स्वभाव से सरल थे, पर जड़ थे। इसके विपरीत अंतिम तीर्थंकर महावीर के समय के लोग 'वक्र जड़' थे। सरलता का स्थान तर्क ने ले लिया, 'बाल में खाल निकालने' की प्रवृत्ति बढ़ गई।

आचार्यों ने जीवन में सम्प, स्नेह और शांति के लिए यह व्यवस्था की कि साधक दिन भर के कार्य का निरीक्षण कर उसमें हुई भूलों के लिए दिन के अंतिम भाग में 'देवसी प्रतिक्रमण' कर ले और रात में हुए कार्यकलापों का निरीक्षण कर रात के अन्तिम भाग में अपनी भूलों के लिए 'रायसी प्रतिक्रमण' कर ले। भूल को भूल स्वीकार करने से मन-मस्तिष्क का बोझ हलका हो जाता है और दुबारा ऐसी भूल न हो, इस प्रकार की संकल्प-शक्ति विकसित होती है। इससे दुःख की जड़ कटती है, अशांति मिटती है, जीवन में स्थिरता आती है।

आज आचार्यों द्वारा निर्धारित प्रतिक्रमण का यह विधान मिट सा गया है। जहाँ कहीं प्रचलन में है, वहाँ भी रूढ़ि रूप में निर्जीव बनकर। उसकी सप्राणता और तेजस्विता ओझल हो गई है। आवश्यकता है उसे फिर से सप्राण करने, संजीवित करने की।

आज औसत आदमी तनाव में जीता है। यदि उसे 'खमतखामणा' की विधि सही रूप में हाथ लग जाए तो वह शांति और आनन्द से भरपूर जीवन का अनुभव कर सकता है। क्षमा के दो पक्ष हैं—एक पक्ष है—'क्षमा मांगना'। यह अपेक्षया सरल है। जब कभी शांत चित्त हो, अपने कृत्य पर विचार करें तो भूल को भूल समझने में आसानी रहती है। क्रोध कम होने पर, गलती पर पछतावा होने लगता है, अन्दर ही अन्दर गन्दगी को बुहारने का भाव जागृत होता है, तब जिसके प्रति भूल या अपराध हो गया है, उसके सामने जाकर क्षमा

मांगने की प्रक्रिया चालू होती है। यह प्रक्रिया तब पूरी होती है जब मन में विनय, प्रायश्चित, ग्लानि के भाव जागते हैं। सामने वाला क्षमा करे या न करे, पर अपनी ओर से कृत पापों को पश्चाताप की आग में दग्ध कर देना क्षमा-याचक का सबसे बड़ा गुण है, धर्म है। आगे से ऐसी गलती फिर न हो, इस तरह का प्रत्याख्यान व्यक्तित्व-विकास में बड़ा सहायक होता है।

क्षमा का दूसरा पक्ष है—अपराधी के अपराध को क्षमा कर देना। यह क्षमा मांगने की अपेक्षया अधिक कठिन है। जब अहंकार विगलित होता है, हृदय में करुणा, प्रेम और मैत्री की भाव धारा बहने लगती है, क्षमाप्रार्थी को अपने बराबर समझने की भावना उद्भूत होती है, तभी अपराधी को उसके अपराध के लिए क्षमा दी जा सकती है। जो सहनशील है, साहसी है, शक्ति-शाली है, सहिष्णु है, निर्भीक है, वही क्षमा प्रदान कर सकता है। क्षमा प्रदान करने पर किसी प्रकार का द्वेष और वैर-भाव नहीं रहता, शत्रु भी मित्र बन जाता है इस धरातल पर। बदला लेने की बजाय ऐसा क्षमाशील व्यक्ति स्वयं अपनी जीवन दृष्टि को बदल लेता है। जिसमें आंतरिक शक्ति नहीं, वह क्षमा नहीं कर सकता।

आदर्श स्थिति तो यह है कि प्रतिदिन अपने हृदय-कक्ष को खमतखामणा की झाड़ू से बुहार लिया जाय। यदि प्रतिदिन सम्भव न हो तो पन्द्रह दिन में एक बार हृदय के पूरे कचरे को बाहर फेंक दिया जाए। यदि कषाय की वृत्ति तीव्र है तो चार माह में एक बार दिल की सफाई कर ली जाए और यदि कषाय अधिक प्रबल है तो वर्ष में एक 'सांवत्सरिक-प्रतिक्रमण' कर हृदय-शुद्धि अवश्य कर लेनी चाहिए। जो ऐसा नहीं कर पाता, वह साधक नहीं, विराधक है, उसकी साधना साधना नहीं, विराधना है।

'खमतखामणा' का भाव उन्माद नहीं है, जो अचानक पैदा हो जाए। इसके लिए बराबर तैयारी करते रहना जरूरी है। हृदय-कक्ष से विकारों का कचरा बाहर निकले, यह तो आवश्यक है ही, पर वह सद्गुणों से सजे-संवरे, यह भी आवश्यक है। ज्यों-ज्यों सरलता, कोमलता, नम्रता की भावना जागृत होती जाती है, त्यों-त्यों हृदय-कक्ष सबके सत्कार के लिए, सम्मान के लिए खुलता जाता है। इसके लिए क्षमा-कार्ड खरीदकर लाना, उन्हें हाथ से लिखकर, उन पर डाक टिकिट लगाकर लेटर बॉक्स में डालना पर्याप्त नहीं। यह तो क्षमा की द्रव्य तैयारी मात्र है। यह तैयारी बेमानी है यदि इसके साथ भाव तैयारी की शक्ति और स्फूर्ति नहीं है। भाव तैयारी के लिए हम निरन्तर सावचेत और जागरूक रहें। बराबर यह देखते रहें कि हमारे क्रोध, मान, माया और लोभ के भाव कितने कम हुए हैं, पतले पड़े हैं। इनकी गांठों को हम खोलते रहें। तभी 'खमतखामणा' के माध्यम से हम अपने जीवन में शुद्धता, स्थिरता, समता और शांति का अनुभव कर पायेंगे।

वन्दना-गीत :

जिन-वचन की वन्दना

☐ वर्षा सिंह

आओ करें आराधना !

श्री जिन–चरण की अर्चना,
श्री जिन–वचन की वन्दना।
आओ करें आराधना ।।

उपवास–व्रत से शुद्ध कर
मन्दिर बनायें देह को,
मानस के अंत:–कक्ष में
पूजित करें प्रभु–नेह को,

सत् कर्म की नित साधना,
श्री जिन–वचन की वन्दना।
आओ करें आराधना ।।

विश्वास करुणा पर रखें
सबको सदा देकर क्षमा,
दीपक दया का हम जला
उज्ज्वल करें दु:ख की अमा,

"वर्षा" करें नित प्रार्थना,
श्री जिन–वचन की वन्दना।
आओ करें आराधना ।।

—एफ-३६, एम.पी.ई.बी. कॉलोनी, मकरोनिया, सागर-४७० ००४ (म.प्र.)

'जिनवाणी' का अहिंसा विशेषांक

परम श्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के आचार्यत्व के ६०वें वर्ष के उपलक्ष्य में शीघ्र ही 'जिनवाणी' का **'अहिंसा विशेषांक'** प्रकाशित किया जा रहा है जिसमें अहिंसा सम्बन्धी शास्त्रीय निबन्धों के साथ-साथ अहिंसा और प्रशासन, अहिंसा और पर्यावरण, अहिंसा और स्वास्थ्य तथा अहिंसा और उद्योग सम्बन्धी विशेष लेख रहेंगे। उच्च स्तरीय, मौलिक, चिन्तन प्रधान लेख प्रबुद्ध लेखकों से आमंत्रित हैं।

—डॉ. नरेन्द्र भानावत, सम्पादक

सोचें और करें [४]

जरा पैदल चलने की आदत डालिये—रोगों से निवृत्ति

□ चैतन्य मल ढढ्ढा
मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

आप यह स्वयं अनुभव करेंगे कि जब से आपने पैदल चलना छोड़ दिया है और जरा-जरा सी दूरी के लिए अन्धाधुन्ध वाहनों का प्रयोग करने लग गये हैं, तभी से शारीरिक तथा मानसिक बीमारियों को आने का निमन्त्रण दे रहे हैं। यदि आप दीर्घ काल तक स्वस्थ रहना चाहते हैं तो उचित खान-पान तथा उचित रहन-सहन के साथ जरा पैदल चलने की आदत डालनी होगी। यह मेरा निजी अनुभव है कि यह हजारों दवाओं की एक दवा तथा सब श्रेणी के लोगों के लिए श्रेष्ठ प्राकृतिक व्यायाम है। यदि प्रतिदिन सुबह या शाम एक घंटा खुली हवा में टहलने की आदत बना लेते हैं तो आपको निश्चित स्वास्थ्य सुधारने के लिए किसी अन्य व्यायाम या दवा की आवश्यकता नहीं रहेगी।

आप केवल यह नहीं समझें कि पैदल चलने से केवल पैर ही मजबूत होंगे लेकिन वास्तव में टहलना एक आसान और साधारण साधन है जो कि शरीर के लिये लाभप्रद तथा अच्छा व्यायाम है। यह शरीर को सुदृढ़ बनाने के साथ समस्त शरीर को मजबूत बना. कर अन्दर और बाहर स्वस्थ रखता है। संभवतः यह आपको पता ही होगा कि आपका हृदय एक मिनट में ७२ बार धड़कता है लेकिन तेजी से पैदल चलते समय इसकी धड़कन बढ़कर ८० से ऊपर हो जाती है। प्रत्येक धड़कन में हृदय २५ ग्राम खून फेंकता है इसलिए साधारणतया तेजी से पैदल चलते समय हृदय द्वारा प्रत्येक मिनट में लगभग २५० ग्राम खून अधिक संचारित होता है, इस प्रकार एक घंटे में लगभग १५ किलो ग्राम। इस क्रिया के अतिरिक्त टहलते समय अधिक हवा नाक द्वारा फेंफड़ों में जाती है, जिससे अधिक ऑक्सीजन प्राप्त होने के कारण खून शुद्ध करने का अधिक अवसर मिलता है। इस प्रकार टहलने से दो काम साथ-साथ होते हैं—एक तो खून अधिक ठीक

से साफ होता है, दूसरा पूरे शरीर से खून का संचार तीव्रतर होता है। इसके अतिरिक्त तेजी से टहलने के कारण पसीना अधिक निकलता है, साथ ही शरीर के अन्दर की काफी गन्दगी भी। इस प्रकार पैदल चलने से खून साफ और ताजा हो जाता है और उसका संचार भी बढ़ जाता है।

आप यह भी अनुभव करते होंगे कि पैदल चलने से सिर से लेकर पैर तक लगभग २०० मांसपेशियों का हल्का-हल्का व्यायाम होता है। इसमें अन्य किसी भी व्यायाम की अपेक्षा शरीर की मांसपेशियां अधिक गतिशील रहती हैं और वह भी लगातार तथा समान रूप से। वस्तुत: पैदल चलने से शरीर के अधिकांश अंग सक्रिय हो जाते हैं।

यह मेरा स्वयं का अनुभव है कि हृदय रोग से पीड़ित होने वाले के लिए तो पैदल चलना अत्यधिक लाभप्रद है। क्योंकि इससे फेंफड़ों का व्यायाम होता है तथा उन पर अधिक जोर भी नहीं पड़ता है। अन्य व्यायामों में हृदय पर अधिक जोर पड़ता है। यही कारण है कि हृदय-रोगियों को पुन: स्वस्थ बनाने के लिये चिकित्सक पैदल चलने की सलाह देते हैं। भविष्य के लिए हृदय रोग से बचने के लिए भी डाक्टर प्राय: पैदल चलने की राय देते हैं।

पैदल चलने से विचार-शक्ति बढ़ती है क्योंकि इससे मस्तिष्क को भी अधिक ऑक्सीजन मिलती है। अतएव दिमागी काम करने वालों को जिन्हें शारीरिक श्रम करने का मौका नहीं मिलता है, प्रतिदिन पैदल चलने की आदत डालना आवश्यक है।

बैठकर काम करने वालों, अधिक उम्र वालों तथा विशेषकर कमजोर लोगों के लिये टहलना बहुत ही उचित व्यायाम है।

परीक्षणों द्वारा भी यह सिद्ध हो चुका है कि टहलना मधुमेह के रोगियों के लिये अत्यन्त लाभकारी है।

पैदल चलकर शारीरिक वजन को आसानी से नियन्त्रण में रखा जा सकता है। यदि खान-पान पर ध्यान देते हुए पैदल चलने की आदत डालें तो आपका शरीर पहले की अपेक्षा अधिक चुस्त, फुर्तीला तथा स्वस्थ रहेगा।

वास्तव में पैदल चलना शरीर को स्वस्थ रखने का सर्वोत्तम तरीका है। इससे वजन कम होता है, काम करने में मन लगता है, पाचन-शक्ति बढ़ जाती है, कब्ज की शिकायत नहीं रहती, पूरे दिन शरीर में ताजगी रहती है, तथा रात्रि को अच्छी नींद आती है। यदि आप प्रति दिन टहलने का अभ्यास रखेंगे तो आप अपना शरीर हल्का, ताजा तथा फुर्तीला महसूस करेंगे और रोगों से बचाव कर दीर्घ जीवन प्राप्त कर सकेंगे। □

प्रवचनामृत :
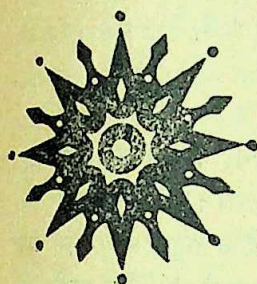
आत्म-साधना*

□ आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा.

लभंति विउला भोए,
लभंति सुर संपया ?
लभंति पुत्त मित्ताणि,
एगो धम्मो सु दुल्लहो ।।

सभी धर्मों के शास्त्र साधन के सम्बन्ध में विवेचन करते हैं । मैं भी साधन के सम्बन्ध में कहता आ रहा हूँ । आखिर ऐसा क्यों ? क्या लाभ है साधन से ? इसे समझना भी अत्यन्त आवश्यक है । कोई भी बात उपयोगिता के बिना हृदय में जगह नहीं करती । संसार का प्राणी विविध प्रकार की साधना करता है । तन की साधना, परिवार की साधना, राज एवं समाज की साधना और न जाने क्या-क्या ?

आपको सधा हुआ रूप अच्छा लगता है । बिना सधे शांति नहीं मिलती । तन सधा हुआ हो तो आबहवा, खान-पान और स्वप्न-जागृति की विषम परिस्थितियाँ दुःखदायी नहीं होतीं । उसे जल्दी जुकाम का भय नहीं होता । बच्चा भी यदि सधा हुआ हो तो आपको अच्छा लगता है । यदि वह आपका कहना न माने, मेहमानों के सामने जैसा चाहा वैसा उत्तर दे दे या शरारत कर बैठे तो वह आपको असह्य हो जायगा और आपका दिल-दिमाग बिगड़ जायगा । पशु भी आप सधा हुआ ही पसन्द करेंगे । घोड़ा चाबुक के इशारे को समझने वाला हो । लगाम के इंगित के साथ ही अपनी चाल बनाने वाला घोड़ा आपको और चालक को प्रिय लगता है ।

ये सब साधना के परिणाम हैं । आप हर क्षेत्र में साधना को महत्त्व देते हैं फिर भला आप आत्मा की साधना को पसन्द क्यों नहीं करते ? यदि जीवन

*आचार्य श्री के प्रवचन से संकलित ।

सधा हुआ नहीं रहा तो शांति या आनन्द कैसे प्राप्त होगा ? चलते, फिरते, दौड़ते, घूमते सर्वत्र अर्थ-साधन करते हैं । फिर भला आत्म-साधना क्यों न करें ?

'उत्तराध्ययन' सूत्र में इसी बात को यों व्यक्त किया गया है—

"वरं मे अप्पादंतो संजमेण तवेण य ।"

आत्म-साधना का लक्ष्य-संयम और तप द्वारा आत्मा को शांत एवं दांत बनाकर साध लेना ही है । प्रश्न होता है आत्मा को कैसे साधना ? क्या यह एक टॉनिक है ? या कोई वह ऐसी मात्रा है जिसे लेना चाहिये । बहुत से लोग तन साधना को ही आत्म साधना समझते हैं । पर यह भूल है, क्योंकि शरीर से आत्मा भिन्न है । जैसे म्यान में तलवार और तिल में तेल समाया रहता है इसी प्रकार शरीर में आत्मा अभिन्न रूप से रहकर भी भिन्न है । अब सोचना यह है कि आत्मा की साधना क्या है ? वह तो बनी बनाई है । अनियन्त्रित को नियन्त्रित करना, स्वभाव से उन्मुख को स्वभावाभिमुख करने का नाम ही साधना है । हमारी आत्मा विषय, कषाय और अज्ञान-मोह से गुमराह है और इसी से शांति प्राप्त नहीं होती । जब आत्मा शांत, स्वच्छ, निर्मल और स्वरूपनिष्ठ रहती है तो साधना की सिद्धि कही जाती है । आत्मा सधी हुई होने पर आकुलता, वियोग और हर्ष-शोक आदि में सुख-दुःख का अनुभव नहीं होगा ।

सधे हुए व्यापारी को हजारों का नफा-नुकसान हो जाने पर भी जैसे उसकी सूरत पर उतार-चढ़ाव दृष्टिगत नहीं होता । पता चलने पर यदि कोई पूछ ही बैठा तो कहता है—"यह तो व्यापार है, चलता ही रहता है ।" ऐसे ही लोग सिल्वर किंग आदि के नाम सें मशहूर होते हैं । कोई Cotton King के नाम से पुकारा जाता है । नफा-नुकसान होने पर यदि बाहर असर नहीं आया तो लोग समझते हैं पूंजी गहरी है और उसकी साख बैठ जाती है । साहसी व्यक्ति धंधे में विजय पाता है । इसी प्रकार आत्म-साधना में भी साहस की जरूरत होती है ।

ए मानव ! तुझमें तो अनन्त शक्ति है । वह शक्ति बिखरी होने के कारण ही तू भयभीत रहता है अतः तू अपनी शक्ति को समेट । तू जो चाहे वही हो सकता है । आत्म-साधना के तीन लाभ हैं :—

(१) ज्ञान-प्राप्ति ।

(२) वीतरागता ।

(३) परम शान्ति की प्राप्ति

आप एक घण्टे की ही साधना आरम्भ करिये। आपको शांति का अनुभव होने लगेगा। प्राकृतिक दृश्यों में जो लोग लीन हो जाते हैं, उन्हें भी अपूर्व आनन्द की अनुभूति होती है। तो फिर भला साधना द्वारा आत्मा के अनन्त बल और आनन्द रूप का दर्शन करने वाला अपूर्व आनन्द प्राप्त करे तो आश्चर्य ही क्या है? ज्ञान, वीतरागता और आनन्द तो साधना के फल हैं। आनन्द श्रावक ग्यारह प्रतिमा पूर्ण करता है। तब उसे ज्ञान, वीतरागता और आनन्द की अनुभूति होती है।

एक व्यक्ति मोटर में बैठा है। उज्जैन से इन्दौर जाता है। बड़ी प्रसन्नता भी है। चालक की असावधानी या होनहार के कारण मोटर में खराबी आ गई तो क्या वह व्यक्ति उसी मोटर से चिपका रहेगा? और उस मोटर को छोड़कर दूसरी मोटर में बैठने में उसे क्या दुःख का अनुभव होगा? नहीं, तो इसी प्रकार साधना द्वारा स्वरूप समझ लेने पर एक देह छोड़कर जाने में भी साधक को खेद का अनुभव नहीं होगा।

तन मोटरकार है। और आप उसमें यात्री हैं। यदि मोटर आपकी ही है तो आपको ममता से छोड़ने में कष्ट होगा, किन्तु आपकी न होने पर आपको खेद नहीं होगा। इसी प्रकार यदि शरीर को आपने अपना अविभाज्य अंग मान लिया तो शरीर को छोड़ने में आपको दुःख होगा। क्योंकि दुःख ममता में है। आनन्द ने तप के द्वारा तन को कृश बना लिया किन्तु मनोबल और आत्म-बल की अभिवृद्धि हो गई। विवेकपूर्वक तप करने पर ही मनोबल और आत्म-बल बढ़ता है। आनन्द ने चौदह वर्ष तक श्रावक रह कर अन्तिम पाँच वर्षों में प्रतिमा की साधना की। आनन्द श्रावक का जीवन इतना शांत और आनन्दित हो गया कि उसे जीवन-मरण का, हर्ष-शोक का बिलकुल ध्यान नहीं रहा। मन नियन्त्रित होकर उसका आज्ञानुवर्ती हो गया। मन की चंचलता को एक साधक ने इस प्रकार व्यक्त किया है :—

मना तोने कई बार समझायो।
हाथी हो तो पकड़ मंगाऊँ, पाँव जंजीर डलाऊँ।
महावत होकर ऊपर बैठूं, अंकुश दे दे चलाऊँ।
अजहु बार नहीं आयो ।। मना ।।

साधना करने वाले को मन को ही साधना पड़ता है। आनन्द ने तन को साधकर मन को साधा। काम, क्रोध, मद, मोह को जीता। जीवन की पवित्र चादर पर ये धब्बे हैं। उसका साहस टूटा नहीं। साहस का टूटना भी कमी की निशानी है। इसीलिए नीति में कहा है—

कुछ मत सीखो, सबसे पहले सीखो दृढ़ इच्छा करना ।
बनना सफल यदि हो तो उस उद्यम में अचल मगन मरना ।

हजार बाधा हो तो भी अपने बढ़े कदम पीछे नहीं हटाना । यदि संकल्प दृढ़ हो तो दुनिया की कोई ताकत तुम्हें मोड़ नहीं सकेगी । तुम्हारा पराक्रम तोड़ न सकेगी । बाधाएँ झेलने से जीवन में बल बढ़ता है । समझो, बाधाएँ जीवन बनाने वाली हैं । आज वंदनीय राम, राम नहीं होते यदि वे बाधाओं में घबरा जाते । आनन्द को अपने प्रिय तन की भी चिन्ता नहीं है । उसने राग-द्वेष का शमन कर रखा है । राग दसवें गुणस्थान तक उदय में, ग्यारहवें में सत्ता में रहता है । इस राग को जीतना हँसी-ठट्ठा नहीं है । और तो क्या अपने तन का मम भाव भी साधक की साधना में रुकावट डाल देता है । आत्मार्थी सोचता है कि भौतिक साधना का तो क्षणिक लाभ है किन्तु आत्म-साधना का लाभ तो अनन्त गुणा अधिक है ।

धन, पुत्र आदि तो नाशवान होने से इसी जीवन में परिसमाप्त हो जाते हैं किन्तु आत्म-साधना का लाभ तो अनन्त काल तक आत्मा को सुखी बनाये रखता है । महावीर के जीवन में क्या कम कष्ट आये ? यदि उन कष्टों को नहीं सहते तो महावीर परम ज्ञानी नहीं बनते । भगवान् को तुच्छ से तुच्छ व्यक्ति ग्वाले जैसे ने कष्ट दिये और बड़े से बड़े इन्द्र ने सहयोग की प्रार्थना की परन्तु भगवान् महावीर समभाव में रहे । यह भगवान् की साधना का ही परिणाम है ।

व्रत, नियम आदि आत्म-साधना के साधन हैं । साध्य-सिद्धि में साधनों का भी स्थान है । दो तपस्वी नदी के दोनों किनारों पर तपस्या करने को बैठे । आषाढ़ मास आ गया, बादल आते किन्तु पानी नहीं आता । श्रावण मास लग गया । फिर भी पानी नहीं आया । लोगों ने समझा ये तापस तपस्या कर रहे हैं इसी से पानी नहीं आ रहा है । लोग इकट्ठे हुए और उन तापसों पर हमला करने लगे । तापसों ने तपस्या तो की किन्तु वृत्ति पर अंकुश नहीं था । एक तापस ने कहा—"वर्षतु मेघाः" दूसरे ने कहा "मूसलाधारया" फिर पहला बोला—"अहोरात्रम्" तो दूसरा बोला "शतमहोरात्रम् ।" अब क्या था ? तापसों ने तपस्या तो की थी किन्तु विवेक न होने से जल प्रलय हो गया और जनता दुःखी हो गई । विवेकहीन साधना नरक का साधन बन गई ।

आत्म-साधना के लिए वृत्ति साधना आवश्यक है । मीठा तुम खाओगे तो कड़वे का स्वाद कौन चखेगा ? और कड़वे के स्वाद के बिना मीठे स्वाद का महत्त्व ही क्या है ? मान जहाँ मिलता है वहाँ अपमान भी मिलेगा । किसी ने तारीफ की तो वह गिरा देगा । निन्दा तुम्हें कड़वी लगेगी किन्तु यह सब होगा जब

तुम मन को साध लोगे वरना तुम गुमराह हो जाओगे। तारीफ करने वाला तुम्हारा भला नहीं करता। निन्दा करने वाला अपने को चाहे भारी करले तुम्हारा तो कल्याण ही करता है। मन को न साधने से कुरुड़-मुरुड़ तापसों की दशा हो जाती है। दो बांस आपस में घिसकर आग पैदा कर देते हैं और सारे वन को भस्मीभूत कर देते हैं। नारियल के हजार वृक्षों से भी वन को खतरा नहीं, हाँ, बांस के पच्चीस झाड़ भी खतरनाक हैं, क्योंकि बाँस के झाड़ अपने आपको संभाल नहीं सकते।

दो भाई टकरा जाते हैं तो सारा परिवार तबाह हो जाता है। दो नेता टकरा जाते हैं तो सारा देश तबाह हो जाता है। आज क्या हो रहा है? पूर्व-पश्चिम विज्ञान के मद में टकराने को तैयार बैठे हैं। कब क्या होगा? कह नहीं सकते। तपस्या की शक्ति प्राप्त की किन्तु विवेक का अभाव है। भौतिक उन्नति होने पर भी अध्यात्म का लक्ष्य नहीं है। इसलिए हम सामायिक साधना पर जोर देते हैं। सामायिक साधना से व्यक्ति का सुधार हो जाता है। व्यक्ति-सुधार से, समाज-सुधार और समाज-सुधार से देश-सुधार तथा देश-सुधार से विश्व-सुधार हो सकेगा। सामायिक-साधना से ऊँच-नीच की विषमता दूर होगी, और विश्व-शांति स्थापित हो सकेगी। दुनिया बाहरी विषमता मिटाना चाहती है। मानलो आप धन बराबर बांट सके फिर बुद्धि का क्या होगा? कक्षा में छात्र बराबर कैसे हो सकते हैं? शरीर के रंग एक जैसे कैसे बनेंगे? और उम्र की विषमता कैसे मिटाओगे? महावीर ने इसका समाधान निकाला है। धन वाला अहंकार न करे और गरीब को निराश न करे। लखपति धन का अधिपति न बने, वह गरीबों की मदद करे।

इसी प्रकार ज्ञानी ज्ञान का मद न करे और अज्ञानी ज्ञानी से ज्ञान प्राप्त करे तथा ज्ञानी की विनय करे। इस प्रकार महावीर ने साम्यवाद की जगह समतावाद को महत्त्व दिया। यदि तुम्हें सम्पत्ति मिली, ज्ञान मिला और देश की दशा नहीं सुधारी तो सब व्यर्थ है। इसलिए आत्म-साधना द्वारा स्वयं साधित होकर जगत् का कल्याण करो। इस भव और पर भव में सुखी ही जाओगे।

□ □ □
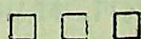
आत्म-स्वरूप में लगा हुआ चित्त बाह्य विषयों की इच्छा नहीं करता, जैसे कि दूध में से निकला घी फिर दुग्ध भाव को प्राप्त नहीं होता।

—शंकराचार्य

धारावाही लेखमाला [७]
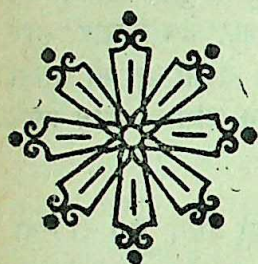
जैन संस्कृति में नारी का स्थान

□ श्री रमेश मुनि शास्त्री
[उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी के विद्वान् शिष्य]

भगवान् पार्श्वनाथ के परिनिर्वाण के पश्चात् चौबीसवें और प्रवर्तमान अवसर्पिणी काल में भरत क्षेत्र के अन्तिम तीर्थंकर भगवान् महावीर हुए। प्रभु ने घोर परिषहों और घोर उपसर्गों को अलौकिक साहस, अनुपम धैर्य, एवं अद्भुत समभाव के साथ सहन कर समूचे संसार के समक्ष एक अभिनव कीर्तिमान प्रतिष्ठापित किया।

जैन धर्म यह नहीं मानता है कि कोई तीर्थंकर ईश्वर का अंश होकर अवतार लेता है। जैन धर्म का स्पष्टत: उद्घोष है कि प्रत्येक आत्मा परमात्मा बनने की योग्यता रखती है और विशिष्ट साधना एवं उच्चतम आराधना के माध्यम से उसका तीर्थंकर रूप से उत्तार-जन्म होता है। किन्तु परमात्मा कर्म मुक्त होने से पुन: मानव रूप में अवतार नहीं लेते हैं। तथ्य यह है कि—जैन उत्तारवादी है अवतारवादी नहीं। भगवान् महावीर के जीव ने नयसार के भव में सत्कर्म का बीज डालकर क्रमश: सिंचन करते हुए नन्दन राजा के भव में तीर्थंकर नाम कर्म का बन्ध किया एवं अन्त में दो मास का अनशन कर समाधिभाव में आयु पूर्ण की। पच्चीसवें भव में प्राणत स्वर्ग के पुष्पोत्तर विमान में देवरूप से समुत्पन्न हुए। प्राणत स्वर्ग से निकलकर छब्बीसवें भव में नयसार का जीव ब्राह्मण कुण्ड ग्राम के ब्राह्मण ऋषभदत्त की जलंधर गोत्रीया पत्नी देवानन्दा की कुक्षि में गर्भ रूप से समुत्पन्न हुए।[1] देवानन्दा ने चौदह मंगलकारी शुभ सूचक स्वप्न देखे और ऋषभदत्त के पास आकर स्वप्न-दर्शन की जानकारी दी। उसी समय शक्रेन्द्र ने सम्पूर्ण जम्बूद्वीप को अवधिज्ञान से देखते हुए श्रमण प्रभु महावीर की देवानन्दा ब्राह्मणी की कुक्षि में समुत्पन्न हुए देखा। इन्द्र ने जब अवधिज्ञान से देवानन्दा की कुक्षि में प्रभु महावीर के गर्भ रूप से उत्पन्न होने की बात जानी तो उनके अन्तर्मन में यह विचार उद्बुद्ध हुआ—अर्हत्, चक्रवर्ती, बलदेव

१. (क) समवायांग सूत्र, समवाय १३४ पत्र ९८ (१)
(ख) समवायांग सूत्र, अभयदेववृत्ति पत्र ९८

और वासुदेव सदा उग्रकुल आदि विशुद्ध एवं प्रभावशाली वंशों में ही जन्म लेते आये हैं, कभी भी अंत, प्रांत, तुच्छ अथवा भिक्षुक कुल में समुत्पन्न नही हुए हैं और न भविष्य में होंगे ! फिर भी प्राक्तन कर्म के उदय से भगवान् महावीर देवानन्दा ब्राह्मणी की कुक्षि में उत्पन्न हुए हैं, यह आश्चर्यजनक बात है। मेरा परम कर्तव्य है कि अंत, प्रांत आदि कुलों से उनका उग्र आदि विशुद्ध कुल में साहरण करवाऊँ। ऐसा विचार कर इन्द्र ने हरिणगमैषी देव आदि को बुलाया और उसे भगवान् महावीर को सिद्धार्थ राजा की पत्नी त्रिशला के गर्भ में साहरण करने का आदेश दिया।[1] गर्भ परिवर्तन जैसी घटना लोक में आश्चर्य भूत है।[2] गर्भ साहरण के बाद देवानन्दा यह देखकर कि उसके चौदह मंगलकारी शुभ सूचक स्वप्न उसके मुखमार्ग से बाहर निकल गये हैं, वह तत्क्षण जाग उठी और शोकाकुल हो विलाप करने लगी कि उसके गर्भ का अपहरण कर लिया गया है।[3] इन्द्र के आदेश से हरिणगमैषी देव ने महावीर का देवानन्दा की कुक्षि से महारानी की कुक्षि में साहरण किया। रानी को उसी रात में उन चौदह महामंगलकारी स्वप्नों के दर्शन हुए। वह जागृत हो महाराजा सिद्धार्थ के पास गई। महाराजा ने निमित्त शास्त्रज्ञों को ससम्मान बुलाकर चौदह स्वप्नों का फल पूछा। स्वप्न पाठकों ने कहा—ये स्वप्न परम प्रशस्त हैं। महारानी को तीर्थंकर जैसे महान् भाग्यशाली पुत्ररत्न का लाभ होगा। महारानी ने जिस समय प्रभु महावीर को अपने गर्भ में धारण किया, उसी समय से महाराज सिद्धार्थ के राज्य भण्डार को हिरण्य-सुवर्ण आदि से भरना प्रारम्भ कर दिया। विपुल मात्रा में धन-धान्यादि ऋद्धियों से महती वृद्धि होने लगी।[4] महारानी ने गर्भकाल पूर्ण कर चैत्र शुक्ला त्रयोदशी को मध्यरात्रि के समय एक अत्यन्त तेजस्वी पुत्ररत्न को जन्म दिया। प्रभु के जन्म लेते ही समूचे लोक में अलौकिक उद्योत और परम शांति का वातावरण परिव्याप्त हो गया। दस दिनों तक जन्म-महोत्सव मनाये जाने के पश्चात् राजा सिद्धार्थ ने स्वजनों, बान्धवजनों को आमन्त्रित

---

१. कल्पसूत्र सूत्र—९१

२. स्थानांग सूत्र भाग—२, सूत्र—७७७, पत्र—५२३—२

३. (क) त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित्र पर्व—१०, सर्ग—२, श्लोक—२७, २८।
   (ख) महावीर चरित्र—गुणचन्द्र सूरि—पत्र—२१२ (२)

४. जद्दिवसं च भयवं····तिसलाए देवीए उदरकमल मइगओ तद्दिवसाओऽवि सुरवइवयणेण तिरियजंभगा देवा विविहाइं महानिहाणाइं सिद्धत्थतरिंद भुवणंमि भुज्जो-भुज्जो परिखिवंति, तं पि नायकुलं धणेणं धन्नेणं····बादमभिवड्ढइ····

—महावीर चरित्र पत्र—१४४ (१)

आचार्य गुणचन्द्र।

करते हुए कहा—जब से यह तेजस्वी पुत्ररत्न हमारे कुल में ग्राया है तब से धन, धान्य, कोष, बल, वाहन ग्रादि समस्त राजकीय साधनों में ग्रभूतपूर्व ग्रद्‌भुत ग्रभिवृद्धि होने लगी है। ग्रतएव मेरी सम्मति में इस नवजात बालक का नाम 'वर्द्धमान'[1] रखना उपयुक्त जँचता है। उपस्थित महानुभावों ने राजा की हार्दिक भावना का समर्थन किया, फलतः त्रिशला-नन्दन का नाम 'वर्द्धमान' रखा गया ग्रौर परिषहों ग्रौर उपसर्गों में निर्भय एवं ग्रचल रहने से देवताग्रों द्वारा गुण सम्पन्न दूसरा नाम 'महावीर'[2] रखा गया।

श्रमण भगवान् महावीर ने गर्भकाल में ही माता त्रिशला के ग्रपार वात्सल्य को देखकर ग्रभिग्रह कर रखा था कि जब तक माता-पिता जीवित रहेंगे तब तक मैं दीक्षा ग्रहण नहीं करूँगा। माता-पिता को प्रसन्न रखने के इस ग्रभिग्रह के कारण ही महावीर को विवाह करना पड़ा[3], इस बन्धन में बँधना पड़ा। प्रभु महावीर राजसी भोग के ग्रनुकूल साधन पाकर भी उनसे ग्रलिप्त रहे थे। वे कमलपत्र की भाँति निर्लेप थे। ग्रापके संसारवास का प्रधान कारण था—कृतकर्म का उदय भोग ! ग्रौर बाह्य कारण था—माता-पिता का ग्रपरिमित स्नेह। माता-पिता ने जब ग्रन्तिम समय निकट समझा तो उन्होंने ग्रात्म-शुद्धि के लिए ग्रर्हत्, सिद्ध ग्रौर ग्रात्मा की साक्षी से कृत पापों का प्रायश्चित्त किया तथा डाभ के संथारे पर बैठकर चतुर्विध ग्राहार का त्याग किया। मरणान्तिक संलेखना से भूषित शरीर वाले काल के समय में कालकर बारह स्वर्ग में देव रूप से समुत्पन्न हुए।[4] ये स्वर्ग से च्युत हो महाविदेह में उत्पन्न होंगे ग्रौर सिद्धि प्राप्त करेंगे।

भगवान् महावीर, माता-पिता के स्वर्गवास के पश्चात् दो वर्ष से कुछ ग्रधिक काल तक विरक्त भाव से घर में रहे, पर सचित्त जल ग्रौर रात्रि भोजन का उपयोग नहीं किया। ब्रह्मचर्य का त्रिकरण-त्रियोग से पालन किया।[5] तीस वर्ष की ग्रायु होने पर ज्ञातपुत्र महावीर की हार्दिक भावना सफल हुई। प्रभु ने शुभ

---

१. कल्पसूत्र सूत्र १०३

२. कल्पसूत्र सूत्र १०४

३. (क) ग्राचारांग सूत्र
   (ख) कल्पसूत्र
   (ग) ग्रावश्यक निर्युक्ति गाथा—७८, ७९, पृष्ठ—२५९

४. ग्रावश्यक चूर्णि—भाग—१, पृष्ठ—२४९

५. ग्रविसाहिए दुवेवासे सीतोदगमभोच्चा णिक्खंते, ग्रफासुगं ग्राहारं राइभत्तं च ग्रणाहरितो ग्रविसाहिए [illegible] ग्रावश्यक चूर्णि पृष्ठ—२४९।

समय में निर्जल दो उपवास की तपस्या से दीक्षा ग्रहण की और सर्वत्र आनन्द की लहर फैल गई[1]। भगवान् महावीर को अनुत्तर ज्ञान, अनुत्तर दर्शन और अनुत्तर चारित्र से अपनी आत्मा को भावित करते हुए साढ़े बारह वर्ष पूरे हो गये। तेरहवें वर्ष के मध्य में ग्रीष्म ऋतु के दूसरे मास और चतुर्थ पक्ष में, वैशाख शुक्ला दशमी के दिन, पिछले प्रहर में, छट्ठ भक्त की निर्जल तपस्या से उन्होंने क्षपक श्रेणी का आरोहण कर शुक्ल-ध्यान के द्वितीय चरण में मोहनीय, ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अन्तराय इन घाती कर्मों का क्षय किया एवं केवलज्ञान—केवल दर्शन की उपलब्धि की। अब भगवान् महावीर सर्वज्ञ सर्वदर्शी बन गये। प्रभु ने श्रमण, श्रमणी, श्रावक और श्राविका रूप चतुर्विध संघ की स्थापना की एवं स्वयं भाव तीर्थंकर कहलाये।

भगवान् महावीर के शासन में साध्वियों की उत्कृष्ट सम्पदा छत्तीस हजार थी[2] और श्रमणी संघ की प्रवर्तनी राजकुमारी साध्वीरत्न चन्दनबाला बनी[3] तथा तीन लाख अठारह हजार श्राविकाएँ थीं।[4]

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि चौबीसों तीर्थंकरों के श्रमण-श्रमणी, श्रावक-श्राविकाओं की संख्या के तुलनात्मक अध्ययन से तो ऐसा स्पष्ट रूप से उजागर होता है कि श्रमणों की अपेक्षा श्रमणियों की तथा श्रावकों की अपेक्षा श्राविकाओं की संख्या अधिक रही है। वस्तुस्थिति यह है कि अनादिकाल से तीर्थंकर तीर्थ-संस्थापना के समय पुरुष वर्ग के समान महिला वर्ग को भी साधना-क्षेत्र का सुयोग्य और समर्थ अधिकारी समझ कर चतुर्विध धर्मसंघ रूप तीर्थ की स्थापना करते आये हैं। यदि महिला वर्ग को इस अमूल्य अधिकार से वंचित रखा जाता तो जैन शासन में चतुर्विध तीर्थ के स्थान पर श्रमण और श्रावक वर्ग के रूप में द्विविध धर्म तीर्थ ही होता। [क्रमशः]

—सौजन्य—श्री शांतिलाल तलेसरा, जसवन्तगढ़ (उदयपुर)
वाया–गोगुन्दा

१. आवश्यक चूर्णि प्रथम भाग पृष्ठ–२६२
२. प्रवचन सारोद्धार–१७ गाथा–३३५–३९
३. (क) समवायांग सूत्र
   (ख) कल्पसूत्र
४. (क) सत्तरिसय द्वार–११५ गाथा–२४३–२४६
   (ख) समवायांग सूत्र
   (ग) प्रवचन सारोद्धार–३५ गाथा–३[illegible]

सन्त-सान्निध्य से अज्ञान-हरण

□ डॉ. प्रेमचन्द रांवका

सन्त-पुरुषों का सान्निध्य प्राणिमात्र के मिथ्यात्व/अज्ञान निवारण में सबसे प्रबल सहायक है। अज्ञान-अंधकार से हटाकर ज्ञान-ज्योति में प्रवेश कराने वाले सन्तगण ही होते हैं। सत्-सान्निध्य के अमृत-प्रवाह से मनुष्यों के हृदय में ज्ञान-लक्ष्मी प्रवेश करती है। मनुष्यों के मन में विद्यमान अनादिकालीन अन्धकार सतसंग रूपी दीपक समूह से खण्डित होता हुआ नष्ट हो जाता है।

यदा किञ्चिज्ज्ञोऽहं द्विप इव मदान्धः समभवं,
तदा सर्वज्ञोऽस्मीत्यभवदलिप्तं मम मनः।
यदा किञ्चित्किञ्चिद् बुधजन सकाशादवगतं,
तदा मूर्खोऽस्मीति ज्वर इव मदो मे व्यपगतः ।।

'नीतिशतक' के इस छन्द में महाराज भर्तृहरि कहते हैं—जब मैं थोड़ा सा ज्ञान प्राप्त कर हाथी के समान मदान्ध हो रहा था, उस समय मेरा मन "मैं ही सर्वज्ञ हूँ"—ऐसा सोच कर घमण्ड में चूर था। परन्तु जब विद्वानों के पास रह कर कुछ-कुछ ज्ञान प्राप्त किया तो "मैं मूर्ख हूँ"—ऐसा समझने के कारण ज्वर के समान मेरा दर्प दूर हो गया।

यह निश्चित है कि गुणीजनों/सन्तपुरुषों के सान्निध्य/दर्शनमात्र से अहं/दर्प का दलन सहज ही हो जाता है और ज्ञान-ज्योति की निर्मल किरणों से मानव-मन प्रकाशमान हो अपने अस्तित्व की अनुभूति करने लगता है। इसलिये भर्तृहरि के अन्तस्तल से यह विवेक प्रकट हुआ।

जाड्यं धियो हरति सिञ्चति वाचि सत्यं,
मानोन्नतिं दिशति पापमपा करोति।
चेतः प्रसादयति दिक्षु तनोति कीर्तिं,
सत्संगतिः कथय किं न करोति पुंसाम् ।।

सन्तपुरुषों का सान्निध्य बुद्धि की जड़ता को हरता है। वाणी में सत्य का संचार करता है, सम्मान बढ़ाता है, पाप को दूर करता है, चित्त को आनन्द प्रदान करता है, समस्त दिशाओं में कीर्ति को विस्तृत करता है। वस्तुतः सन्त-सान्निध्य क्या नहीं करता ? अतएव

तत्वं चिन्तय सततं चित्ते, परिहर चिन्तां नश्वर वित्ते।
क्षण मिह सज्जन सङ्गतिरेका, भवति भवार्णव तरणे नौका ।।

चित्त में निरन्तर तत्त्व चिन्तन करो, नाशवान् धन की चिन्ता छोड़ दो। सज्जनों की एक क्षण की संगति भी संसार, सागर से तैरने के लिये नौका रूप हो जाती है।

प्रेरणा-प्रतिलेखना

धर्मस्थानक ज्ञानाराधना के केन्द्र बनें !

□ श्री अजित मुनि 'निर्मल'

मैं मई, ८६ में नागदा जंक्शन [म.प्र.] आया। व्याख्यान हॉल के पाटे पर बैठा। सामने की दीवार में बने आले की ओर दृष्टि गई। लगा कि कोई पुस्तक रखी हुई है। हॉल में, पाटे पर, दीवारों पर, किवाड़ों पर एवं आलों में भी धूल अपने स्वरूप के दर्शन करा रही थी। यह हम मुनिजनों का आम रूप से अनुभव रहा है कि कोई धर्मस्थानक ही प्रतिलेखना से परिपूर्ण (स्वच्छ) मिलेगा। मुनियों के पहुँचने के बाद ही धूल की गुलाल झटक-फटक के साथ उठाई जाती है। बहुत से स्थानों पर तो महीनों से भरे मकड़ी-जाले भी अपनी छवि के प्रदर्शन में पीछे नहीं रहते।

मैंने पाटे से हटकर देखा कि आले में ऊपर किसी के पैरों का वापरा हुआ नीले रंग का मोजे का जोड़ा रखा है। मोजे के नीचे 'अमर भारती' (मासिक पत्र) सितम्बर १९६९ का पर्युषण पर्व विशेषांक है। इसी के नीचे 'जिनवाणी' मई १९८० का अंक धूल से सना है।

मैं देखता रह गया इस स्थिति को। हार्दिक दुःख हुआ ऐसी स्थिति देख कर। यह कैसी प्रज्ञा ! यह कैसा विवेक ! क्या इसे ज्ञान का अजीर्ण कहूँ ? क्या यह ज्ञानाराधना का मौलिक स्वरूप है ?

पैरों के मोजे के नीचे दो विचार-धर्मदर्शन प्रधान विशिष्ट जैन पत्रकों का यह मूल्यांकन ? जैन पत्रों को इस प्रकार किसी ने भी रखे हों किन्तु उसके इस व्यवहार से मेरे चिंतन की गति को झटका ही लगा।

उक्त जैन पत्रों में आगम वाणी है। विद्वद् मनीषियों के बोध-वचन हैं। जीवन-दिशा की ओर अग्रसर करने वाली महत्त्वपूर्ण सामग्री है। क्या हमारी सूझबूझ इतनी भौंटी/भौंथरी हो गई है कि हमारा मानस आगम-वाणी के सर्वोपरि सत्य को नकार चुका है। 'लब्धितणा भंडार' गणधर इन्द्रभूति गौतम के जीवन के शास्त्रीय-अंकन से क्या हमने आँखें मूंद ली हैं ? तीर्थंकर और महासती के पावन स्मरण का क्या रहा ?

मुझे अत्यधिक क्षोभ रहा कि सम्यक्ज्ञान। सम्यक्दर्शन/सम्यक् चारित्र के पलड़े से दूसरों को तोलने की प्रवृत्ति वालों की यह कैसी छिछली मानसिकता है? रत्नत्रयाराधना की बघार लगाने वाले पहले अपने मसाले को देख लिया करें। जहाँ ज्ञान की ज्योति ही नहीं है वहाँ दर्शन, चारित्र को किस प्रकार से जीवंत-रसवंत बनाया जा सकेगा, जबकि आगम का आघोष है—

'पढमं नाणं तओ दया।'

यदि आप में ज्ञान-विनय की क्षमता नहीं है, तो आप ज्ञान की आशातना करने की अनधिकृत चेष्टा भी न करें। ज्ञानावरणीय कर्म का उपार्जन ऐसे ही कुप्रयासों से होता है। दासता का रुदन नहीं, मुक्ति के माधुर्य की ओर हमारी गति/मति का संकल्प रहे, ज्ञान-प्रभावना में सहयोगी बनने की भावना की फसल सदा लहलहाए, हम स्वयं को श्रुत ज्ञानाराधना के लिए समर्पित करें।

—सौजन्य—जैन उपासना गृह, देवास-४५५००१ (म.प्र.)

स्वार्थ-चक्र :

शांति-सम्मेलन ?

☐ श्री अभयप्रकाश जैन

कई देशों के राजनयिक, प्रधान मंत्री, राष्ट्रपति और विचारक, विश्व-शांति एवं निशस्त्रीकरण सम्मेलन में सम्मिलित हुए और युद्ध का विरोध किया गया।

अस्त्र-शस्त्रों के निर्माता चौंके।

फौजी अफसरों को अपनी उन्नति और भविष्य की चिन्ता हुई।

रणदुंदभि ने कहा—"जब तक मेरा अस्तित्व है, युद्ध तो होते ही रहेंगे, तुम इन सम्मेलनों की चिन्ता न करो।" "और राजनयिक एवं विचारक?" रणदुंदभि हँसी "इनकी आवाज मेरी पहली ही गूँज में इस तरह खो जायेगी जैसे बादलों की गड़गड़ाहट में मच्छरों की आवाजें खो जाती हैं।"

अस्त्र-शस्त्र और बारूद बनाने वाली फैक्टरियाँ आश्वस्त हो—जहरीला धुआँ उगलने लगीं और फौजें फिर से अपनी कदमताल में जुट गयीं।

—एन-१४, चेतकपुरी, ग्वालियर (म.प्र.)
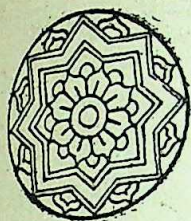
युवा पीढ़ी में धर्म की आभा विद्यमान है मगर......

□ श्री पारसमल जैन, IAF

भारत प्रारम्भ से ही धर्मप्रधान देश रहा है। इस देश में समय-समय पर अनेक सभ्यताओं एवं संस्कृतियों ने जन्म लिया पर प्रत्येक में धार्मिकता की प्रधानता रही। इस धर्म-भावना के कारण यह देश विश्व में 'ऋषि-मुनियों का देश' के नाम से सुविख्यात हुआ है एवं दूसरों के लिए धर्मगुरु बना रहा है।

भारत की धार्मिक विविधताओं में जैन धर्म एक प्रमुख धर्म है। प्राचीन समय में भी इस धर्म के लाखों अनुयायी थे और वर्तमान में भी हैं, पर भूत और वर्तमान की धार्मिक परिस्थितियों एवं भावनाओं में अब काफी अन्तर दृष्टिगोचर होता है। यदि हम वर्तमान एवं भूतकाल के युवावर्ग की धार्मिक आस्था एवं भावनाओं की तुलना करें तो हमें ज्ञात होगा कि इसमें बहुत अन्तर है। आज का युवक अपने मन में धर्म के प्रति उतना श्रद्धाभाव नहीं रखता, जितना कि पहले के युवकों में था। आज के युवकों में धर्माचरण की उतनी तीव्र इच्छा नहीं जितनी कि पहले के युवकों में थी। आज युवावस्था में धर्म करने का विचारमात्र ही हास्य का कारण बन जाता है। जहाँ पूर्व में महावीर, बुद्ध, जम्बूकुमार आदि ने युवावस्था के सभी सुखों का त्याग कर संयम का मार्ग अपनाया था, वहीं आज का युवक मौज, शौक में इतना लीन है कि उसे धर्माराधना का विचार ही नहीं आता। वर्तमान में नवयुवक पाश्चात्य सभ्यता की नकल करने में गौरव का अनुभव करते हैं। आधुनिकता के नाम पर मादक द्रव्यों का सेवन एवं यौन मुक्ताचार बढ़ता जा रहा है। इन सबका परिणाम क्या है? बढ़ती हुई मानसिक अशान्ति। शान्ति की खोज में पूर्व पश्चिम की ओर भाग रहा है और पश्चिम पूर्व की ओर। परन्तु इस प्रकार से शान्ति प्राप्त करने का प्रयास मृगतृष्णा के समान व्यर्थ ही जा रहा है।

यदि कोई युवक पूर्व के आदर्शों को अपनाकर यौवनावस्था में धर्म की आराधना करता है तो जग हँसाई का पात्र बनता है। उसे श्रद्धा और यश नहीं मिलता। वह पिछड़ेपन का अनुभव करने लगता है। क्या कारण है कि आज का युवक यौवनावस्था में धर्म एवं वैराग्य के बारे में विचार तक नहीं करता? वृद्ध समुदाय में ही धर्म का बीज दिखाई देता है। क्या कारण है कि एक ही समाज, खानदान एवं वंश का होते हुए भी युवावर्ग अपने से बड़ों का अनुकरण नहीं करता? वह पूर्वजों की बातों के अनुकरण को अन्धानुकरण की संज्ञा देता है। अन्ततः इतने बदलाव का क्या कारण है?

यह सत्य है कि भूत और वर्तमान में बहुत अन्तर है। समय और परिस्थितियों के साथ-साथ मानव के सोचने व समझने के ढंग में आमूल परिवर्तन हुआ है। धर्म के युवकों के उपेक्षात्मक दृष्टिकोण के लिये युवकों को ही दोष देना ठीक नहीं है। आज के वैज्ञानिक युग में अत्यधिक परिवर्तन हुए हैं जिनका प्रभाव वर्तमान युवापीढ़ी पर सर्वाधिक पड़ा है। अन्धविश्वास एवं रूढ़िवादिता के दुष्परिणामों को देख व सुनकर आज का युवक अन्धानुकरण की पद्धति को अपनाना नहीं चाहता। जब युवक धर्म के नाम पर नर-हत्या, लूटपाट एवं दंगों आदि के बारे में सुनता है तो उसके मन में धर्म-विमुखता बढ़ती जाती है। पद-लोलुपता व धर्म के नाम पर चन्दा खाते देखकर उसके मन में धर्म के प्रति श्रद्धा समाप्त हो जाती है। जब नवयुवक यह देखता है कि अधिकांशतः सामायिक या प्रतिक्रमण धारण किये हुए भी माँ-बहिनें इकट्ठी हो जाने पर धर्मध्यान की अपेक्षा अपनी घर-गृहस्थी का रोना रोने लगती हैं, पुरुष वर्ग को धर्मोपदेश श्रवण करते समय भी अपने व्यापार-धन्धों की बातों से ही फुरसत नहीं मिलती, ऐसे समय एवं स्थान पर भी उन्हें निन्यानवे के फेर में देखकर उसके हृदय में धर्म के प्रति अश्रद्धा एवं अलगाव सहज ही पैदा हो जाता है।

यह बात नहीं है कि वर्तमान में युवक धर्म के प्रति श्रद्धा नहीं रखते। यदि उनके मन में धर्म के प्रति अश्रद्धा के कुछ भाव हैं तो उसके लिए वर्तमान परिस्थितियाँ ही जिम्मेदार हैं। धार्मिक अन्धानुकरण के दुष्परिणामों को देखते हुए आज युवक धर्म को नये परिवेश में देखना चाहता है और उसका यही परिवर्तन का भाव लोगों की दृष्टि में धर्म के प्रति विद्रोह की भावना होती है। आज की युवापीढ़ी कहने में नहीं करने में विश्वास करती है। उसका ध्यान रचनात्मक कार्यों की ओर अधिक रहता है। वह धर्म को किसी सम्प्रदाय या नीति के बन्धन में जकड़ा हुआ नहीं वरन् व्यापक परिवेश में देखना चाहती है। नव-युवक चाहता है कि कोई विशेष धर्म किसी विशेष जाति या सम्प्रदाय की धरोहर/सम्पत्ति बन कर न रहे। धर्म में व्यापकता आनी चाहिये। संकीर्णता के दायरे को त्याग कर धर्म व्यापक रूप से 'सर्व जन हिताय सर्वजन सुखाय' बने। केवल उपदेशों, भाषणों एवं धार्मिक ग्रन्थों का ही अम्बार न लगे वरन् उसका क्रियात्मक रूप भी दृष्टिगोचर हो।

यदि नवीन पीढ़ी के इन विचारों एवं दृष्टिकोणों को धार्मिक समाज हृदय से स्वीकारता है तो कोई कारण नहीं कि धर्म से विमुख आज का नवयुवक पुनः महावीर एवं बुद्ध के आदर्शों को न अपनाये। आज भी युवकों में धार्मिक भावना एवं प्राचीन गरिमा की आभा विद्यमान है मगर आवश्यकता है, उसे जाग्रत करने की।

—जोधपुर

□ □ □

नेत्रदान अभियान से जुड़ा प्रेरक लेख :

उन्हें उजाला दो

☐ श्री विमल मूथा

उन फूलों का खिलना व्यर्थ है, जो कि बगिया को अपनी भीनी-भीनी खुशबू से सुरभित न कर सकें। उन बादलों का गरजना व्यर्थ है, जो कि झूमते हुए बरसकर, धरती की ज्वाला को बुझा न सकें। उन दीपशिखाओं का जलना व्यर्थ है, जो कि अंधकार को मिटाकर, रोशनी न फैला सकें। उन इन्सानों का जीना व्यर्थ है, जिन्हें पराये दुःख-दर्द व पीड़ा की पहचान नहीं है। हम तो केवल बाहरी आँखो से दुनिया के नजारे देखते रहते हैं, मगर कौन जानता है कि इन नेत्रहीनों के प्राणों में—भारतमाता के इन कलेजे के टुकड़ों के अरमानों में, कितनी पीड़ा कसक रही है। इन हँसते हुए नाजुक फूलों की मूक वेदना को महसूस करने की, इनकी छाती में छिपे हुए घावों पर मलहम लगाने की, इनके आह भरे, उबलते हुए आँसुओं को पोंछने की आज किसे फुरसत है?

हृदयारोपण, गुर्दा प्रत्यारोपण, रक्तदान या नेत्र ज्योति के अभाव में जिन माताओं के सिन्दूर-सुहाग उजड़ चुके हैं, जिनकी जवानी आज तिल-तिल करके जल रही है, जिन माँ-बहिनों के माथे की रोली मिट चुकी है, जिनकी किस्मत की चिता जल चुकी है, जिनका जीवन मरुस्थल बन गया है—उस रेगिस्तान को चमन बनाने का बीड़ा उठाया है मानवता के उस दिव्य मुकुट ने। धन्य हैं वे धर्मनिष्ठ करुणासागर श्री मोतीलालजी देवड़ा एवं श्रीमती स्वरूप रानी देवड़ा औरंगाबाद निवासी—जो वर्ण भेद से दूर रहकर, दीप से दीप जलाने के लिए, नेत्रहीनों के दिलों की आग को बुझाने के लिए गंगा बनकर निकल पड़े हैं। इनके चरणों में मेरा भावभरा सादर वन्दन....!

भारतमाता के वीर लाड़लो! नेत्रहीनों की आँखों के तारो! अंधकार में दीप जलाने के लिए, नेत्रहीन तुम्हें निहार रहे हैं। देवड़ा दम्पति ने शंख फूँक दिया है। नवयुवकों को भारतमाता खुला निमंत्रण दे रही है—उठो! देशभक्ति के इस महा यज्ञ में जो भी संभव हो—रक्त, गुर्दे, नेत्र, हृदय, तन, मन, धन, सर्वस्व अर्पण कर दो। नेत्रहीनों की काली रातों के अभिशाप को मिटाकर उजाले का वरदान देकर मानवता के दीप जलाओ। हम अपने समाज में फैली

हुई कुरीतियों का जैसे—दहेज प्रथा, साता बींटी, मायरा, घूंघट प्रथा, मृत्युभोज, पल्ला प्रथा, भोंडे नृत्य, आदि बाहरी आडम्बरों का, कुप्रथाओं का डटकर मुकाबला करना है।

भवानीमंडी वाले उत्साही समाजसेवी श्री राजेन्द्रप्रसाद जी जैन एडवोकेट के प्रेरक बोल कानों में गूंज रहे हैं—

"वस्तुतः मानवता के मंगल से जुड़े इस अभियान से मैं ऐसे आत्मिक आनन्द की अनुभूति कर रहा हूँ कि उसकी अभिव्यक्ति शब्दों में संभव नहीं। मैं अन्तर्मन से चाहता हूँ कि यह अभियान, हर गाँव, हर नगर, मोहल्ले व घर में पहुँचे। मैं अपने सभी भाई-बहिनों से विनम्र निवेदन करता हूँ कि वे आगे आवें और नेत्रविहीन जिन्दगी की अँधेरी राहों में, उजालों के आशा भरे दीप जलाने में सक्रिय सहयोग दें। आप मरणोपरान्त अपनी आँखें दान देने की घोषणा कर उसकी सूचना "टाइम्स ऑफ रिसर्च फाउण्डेशन" को भेजें। मैं आभारी रहूँगा यदि आप "टाइम्म ऑफ रिसर्च फाउण्डेशन" के साथ ही इस अनुपम दान की सूचना, नेत्रदान अभियान में संलग्न श्रद्धेय देवड़ा साहब के साथ मुझे भी देने की कृपा करें।"

हमें जीवन में ऐसे पृष्ठ जोड़ने हैं, ताकि हमारे जाने के बाद भी हमारे आदर्श, दुनिया को राह दिखा सकें। हर एक घर के चिराग में उजियाला हो। भारतमाता के किसी भी दीपक का प्रकाश मन्द न हो। श्रद्धा और दृढ़ संकल्प के साथ, अपने यशस्वी महापुरुषों के पग-चिह्नों पर चलते हुए, हमें महाकवि "लांगफैलो" की निम्न पंक्तियों को सार्थक करते हुए, मानव जीवन को सफल बनाना चाहिए—

> सभी महापुरुषों के जीवन—हमें याद दिलायें,
> बनायें हम भी अपना जीवन, गौरवपूर्ण महान।
> और जाते हुए दुनिया से, छोड़ जायें,
> समय की रेत पर अपने पैरों के निशान॥

—अरिहन्त टैक्सटाइल्स, ६७, बाजार स्ट्रीट
पल्लिपेट—६३१ २०७ (तमिलनाडु)

○ • ○

धारावाहिक उपन्यास (५)
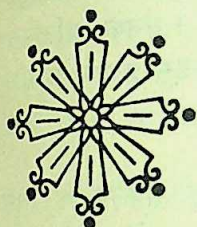
आत्म-दर्शन•

□ श्री धन्ना मुनि

इन सारी घटनाओं को अभिनय के माध्यम से आषाढ़भूति ने रंगमंच पर इस प्रकार प्रस्तुत, प्रदर्शित किया कि दर्शक अपने आप को प्रथम आरक से लेकर आज तक के सुदीर्घ काल के कालक्रमानुगत घटना-चक्र का प्रत्यक्ष अनुभव करने लगे।

भगवान ऋषभदेव के शैशव काल की मनोहारिणी लीलाओं का अभिमञ्चन देखकर तो आबालवृद्ध दर्शक समूह आनंद सागर में आकण्ठ निमग्न हो अनिर्वचनीय आनंद का अनुभव करने लगा। भगवान ऋषभदेव के किशोर वय में पदार्पण करते-करते, कल्पवृक्षों ने एक प्रकार से यौगलिकों को जीवन निर्वाह के लिए परमावश्यक सामग्री का देना भी बंद कर दिया था। जठराग्नि की ज्वालाओं से अभिभूत यौगलिकों के विशाल समूह सभी दिशाओं व विदिशाओं से नाभि कुलकर के समक्ष उपस्थित हो, अपनी जठराग्नि की भीषणता एवं दुःसह्यता का वर्णन करते हुए करुण क्रंदन करने लगे। वे पुनः-पुनः साञ्जलि शीश झुका नाभिराज से निवेदन करने लगे—"नाभिराज! कृपा कर जितना शीघ्र हो सके हमारे उदर की इस आग को शांत करने का उपाय बताइये। हमारे प्राण निकल रहे हैं। हमारे अंग-प्रत्यंग व रोम-रोम शिथिल एवं निस्सत्व हो रहे हैं।" इस हृदयद्रावी दृश्य को देखकर दर्शकगण में भी करुणा जाग उठी। उनके नयनों से अनवरत अश्रु धाराओं के प्रपात नाभिराज के प्रासाद के आंगन को आप्लावित करने लगे। दया से द्रवीभूत नाभिकुलकर को यौगलिकों के इस दुःसह्य दुःख मिटाने का जब कोई उपाय दृष्टिगोचर नहीं हुआ तो उन्होंने जिज्ञासा भरी दृष्टि से अपने पार्श्व में ही विराजमान ऋषभकुमार की ओर दृष्टिनिपात किया। महाराज नाभि ऋषभकुमार के अद्भुत अलौकिक गुणों से पूर्णतः परिचित थे। शैशव काल से ही उनके असाधारण बुद्धिकौशल, सूझ-बूझ, अनुपम शारीरिक एवं आध्यात्मिक शक्ति के परम प्रभावकारी चमत्कारों

•मुनि श्री की डायरी से संकलित।

ने महाराज नाभि के मन, मस्तिष्क और हृदय पर अमिट छाप अंकित कर दी थी। कुमार की ओर दृष्टि निपात का यही तात्पर्य था कि इस प्रकार के प्राकृतिक परिवर्तन जन्य संक्रान्ति काल में नितरां असहाय मानवता के प्राण-संकट को दूर करने में केवल एक (ऋषभकुमार) ही समर्थ हैं। उनके अतिरिक्त और कोई ऐसा दृष्टिगोचर नहीं होता जो मानवता का इस प्रकार के घोर संकट से त्राण कर सके।

अपने पितृदेव की आंतरिक इच्छा की पूर्ति हेतु दृढ़ संकल्प के साथ ऋषभकुमार ने साञ्जलि शीश झुकाते हुए अतीव विनम्र स्वर में नाभिराज से निवेदन किया—"तात! अब प्रकृति करवट बदल रही है। उसी प्रयास के पूर्व की यह अंगड़ाई मात्र है। पितृदेव यह दो महान् युगों का संधिकाल है। कर्म-युग अब पद-निक्षेप करना चाहता है। इसी कारण भोग-युग अपने सभी प्राकृतिक साधनों को समेट रहा है। भोग-युग में मानव को अपने असन-वसन-पानादि की प्राप्ति के लिए किसी प्रकार का प्रयास नहीं करना पड़ता। इसके विपरीत कर्मयुग में अपने जीवन निर्वाह हेतु सामग्री की प्राप्ति कें लिए मानव को प्रयास करना पड़ेगा। भोग-युग में अनायास मानव की सभी प्रकार की आवश्यकताओं की पूर्ति प्रकृति प्राकृतिक कल्पवृक्षों के माध्यम से कर देती है पर कर्म-युग में बिना कर्म-पौरुष अथवा प्रयास के जीवनोपयोगी कोई सामग्री अवाप्त नहीं हो सकती। प्रकृति की इस करवट को आपने अपने जीवन में अनुभव भी किया है और देखा भी है। आपके किशोर काल से इस अवस्था तक प्रकृति ने कितने परिवर्तन-कारी स्वरूप धारण किए हैं, इसके प्रमाण स्वयं पितृचरण हैं। इस युग परिवर्तन की स्थिति में अब प्रत्येक मानव को आने वाले कर्म-युग के अनुरूप अपने आप को ढाल कर कटिबद्ध हो कर्म-क्षेत्र में उतरना होगा। इस घोर संकट से रक्षा का अब एक मात्र यही उपाय है। क्योंकि भोग-युग के स्तंभ-स्वरूप साधन कल्पवृक्ष अब त्वरित गति से तिरोहित हो रहे हैं, अब तो सब को कर्म करने के लिए कटिबद्ध हो कर्म-क्षेत्र में उतरना ही पड़ेगा।"

महाराज नाभि ने प्रश्न भरी दृष्टि से समुपस्थित यौगलिकों के विशाल समूह की ओर दृष्टिनिपात किया। सहसा सहस्र-सहस्र कण्ठों से एक गगन भेदी घनरव गंभीर घोष गुंजरित हो उठा—"नाभिराज! हम कुमार के प्रत्येक इंगित पर अपने प्राणों तक को न्यौछावर कर देने की अटल प्रतिज्ञा करते हैं।"

ऋषभकुमार ने पितृचरणों में नमन करते हुए निवेदन किया—"देव! यदि आप आज्ञा प्रदान करें तो मैं भोग-युग के इन सरलमना भोले मानवों को कर्म-भूमि का पहला पाठ सक्रिय रूप से सिखा, भोग-युग से कर्म-युग में पदार्पण करने का पथ प्रदर्शित करूं।"

महाराज नाभि ने अभूतपूर्व आनंद की अभिव्यक्ति के साथ अनुज्ञा प्रदान की और कहा—"वत्स ! तुम्हारे गर्भावतरण के समय से ही हमें विश्वास हो गया था कि विश्व के कल्याण के लिए आदि गुरु, आदि राजा, आदि शास्ता, आदिनाथ के रूप में आपका अवतरण होने जा रहा है। अब वह समय आ गया है कि प्राकृतिक परिवर्तन के इस संक्रांति काल में लोगों का त्राण कर लोक गुरु के विरुद को सार्थक सिद्ध करो : बस, यही मेरी शुभ कामना है।"

रंगमञ्च पर भगवान ऋषभदेव के आद्य गुरु के स्वरूप का दिग्दर्शन कराते हुए सूत्रधार आषाढ़भूति ने दर्शकों को दिखाया—यौगलिकों के एक सुविशाल समूह के साथ ऋषभकुमार वन की ओर प्रस्थित हुए। सघन वन में पहुँच कर्म-युग का पहला पाठ पढ़ाते हुए वन्य स्वतः संभूत शस्य की ओर इंगित किया—"यह वन्य धान्य है, भविष्य में इस प्रकार के धान्य को उत्पन्न करने के लिए कठोर श्रम करना पड़ेगा। क्या और किस तरह तुम्हें करना होगा इन सब तथ्यों से मैं तुम्हें समय पर समुचित रूप से अवगत करा दूंगा। यह वन्य तण्डुल है, ये गोधूम (गेहूँ) और यह व्रीहि (जव) है। इनकी बालियों को तोड़कर और दोनों करतलों के बीच मसलकर धान्य का फूस से पृथक्करण किया जाय। यह वन्य धान्य अभी कच्चा है और है मीठा, इसके खाने से तुम्हारे उदर की अग्नि शांत हो जायेगी।" इसी प्रकार ऋषभकुमार ने कर्म-युग के कर्तव्यों से नितान्त अनभिज्ञ उन भोग भूमि के अनजान व भोले समाज को उस समय उस वन में विद्यमान सभी प्रकार के धान्यों का परिचय करवाया।

ऋषभकुमार से पेट की ज्वाला को शांत करने के उपाय को सुनकर यौगलिकों ने वन्य धान्य की बालियों को तोड़, करतलों से मसल और फूस हटाकर कच्चे वन धान्यों को खाना प्रारंभ किया। इस प्रकार कुछ ही क्षणों में उनकी जठराग्नि शांत हुई और उन यौगलिकों ने फुल्लारविंद तुल्य अपने आयत लोचनों से ऋषभकुमार की ओर एकटक देखते हुए उन पर कृतज्ञता का सागर उडेलना प्रारंभ कर दिया। ऋषभकुमार ने अनेक प्रकार के सुस्वादु फलों से लदे वृक्षों का परिचय कराते हुए बताया—"ये अमुक-अमुक नाम से अभिहित किये जाने वाले फल हैं। इनसे क्षुधा और तृषा दोनों का उपशमन होता है।" धान्यों और फलों का बोध देने के अनंतर ऋषभकुमार ने वन्य कन्दों, मूलों और फलों का भी परिचय उन्हें कराया और कहा—अन्न और फलों की भांति ये कन्दमूल फूलादि भी क्षुधा की अग्नि को शांत करने वाले हैं। अपनी-अपनी रुचि के अनुसार आप लोग इन अमुक-अमुक भांति के धान्यों, फलों, कन्दमूलों आदि से अपनी क्षुधा को शांत कर सकते हैं।" कर्म युग के इस प्रथम पाठ का उपसंहार करते हुए ऋषभकुमार ने कहा—"हे कर्मवीरो ! दो युगों के इस संधिकाल से निवर्तमान भोग युग का प्रभाव अभी कुछ अंशों में कुछ

और समय तक प्रभावी रहेगा क्योंकि अभी तक कर्म युग के पल्लवन का परिपक्व समय नहीं आया है। ये वन्य धान्य फल पुष्प कंदमूलादि सदा सभी ऋतुओं में स्थिर अथवा उपलब्ध नहीं होते। आप लोगों के अपने परिश्रम से इन धान्यादि के बीजों से इनकी उपज करनी होगी, उसे आवश्यकतानुसार बढ़ानी होगी, और सञ्चित भण्डार रखने होंगे। समय-समय पर आपको सभी उपयोगी कर्तव्यों से अवगत कराता रहूंगा।"

ऋषभकुमार के पद-चिह्नों पर चलते हुए जब यौगलिक नाभिराज के सम्मुख उपस्थित हुए तब सभी पूर्णतः प्रसन्न वदन थे। सब के अंग-अंग और रोम-रोम से संतोष के साथ-साथ आनंद की ऊर्मियाँ प्रकटित हो रही थीं। कुमार के साथ यौगलिकों के विशाल जनसमूह को सर्वथा संतुष्ट और पूर्णतः प्रसन्न देखकर नाभिराज के हर्ष का पारावार न रहा। वे स्वयं अपने आप में इस वात पर आश्वस्त हुए कि मानवता पर आया हुआ एक घोर संकट उनके सुपुत्र देवतुल्य ऋषभकुमार ने संभवतः सदा के लिये टाल दिया है।

ऋषभकुमार ने नाभिराज के समक्ष उपस्थित हो उन्हें वस्तुस्थिति से अवगत कराते हुए निवेदन किया—"तात! मैंने आपका आदेश शिरोधार्य कर इन भोगयुगीन यौगलिकों को कर्म युग का प्रथम पाठ सिखाते हुए उन्हें अपनी क्षुधा शांत करने का उपाय बता दिया है।" हर्ष विभोर हो नाभिराज ने यौगलिक समूह पर जिज्ञासापूर्ण दृष्टिनिपात किया। अपने आंतरिक आह्लाद को प्रकट करते हुए यौगलिकों ने समवेत स्वर में कहा—"महाराज! कुमार ने न केवल हमारी क्षुधा तृप्ति की बरन् जठराग्नि के प्रज्वलित होने पर तत्काल उसे शांत कर देने का अमोघ उपाय भी बता दिया है।"

रंगमञ्च पर कर्म भूमि के प्रथम सूत्रपात की घटना का सांगोपांग विवरण देखकर दर्शकों ने अनुभव किया कि सुदीर्घ अतीत मानो उनके समक्ष आज पुनः अपने पूर्ण रूप में आ उपस्थित हुआ है।

कुछ समय तक इस प्रकार यौगलिकों का जीवन वन्य धान्यों, फलों, पुष्पों एवं कंदमूलों के सहारे सुख पूर्वक व्यतीत होता रहा। एक दिन एक छोटा सा समूह कुमार के समक्ष उपस्थित हुआ और अपनी व्यथा को सुनाते-सुनाते रोने लगा। ऋषभकुमार ने रोने के कारण को भांपते हुए कहा—"अब धान्य कुछ पकने लग गये हैं, अब उन्हें अपने करतलों से मसल कर और कुक्षि आदि से कुछ ताप पहुँचाने के पश्चात् खाया जाय।" यौगलिकों ने कुमार को अपना विधाता समझते हुए उनके आदेश का अक्षरशः पालन किया। अब धान्य पूर्णतः पकने लगे थे। कुमार ने वन्य धान्यों को काट-पीटकर धान्य संग्रह का यौगलिकों को

परामर्श दिया। पके हुये धान्य को कुमार के निर्देशानुसार यौगलिकों ने काट-पीट एवं साफ कर उसका भूमि में मुंवारे खोद संचय किया।

प्रकृति अब अंगड़ाइयां लेने के अनंतर अठखेलियां करने के लिये समुद्यत हो चुकी थी। वायु के झोकों से दो बासों का परस्पर घर्षण हुआ, घर्षण के परिणाम स्वरूप अग्नि उत्पन्न हुई और वन धांय-धांय कर जल उठा। इस अदृष्टपूर्व दृश्य को देखकर यौगलिक भागते हुए सीधे ऋषभकुमार के समक्ष उपस्थित हुए। मतिश्रुतावधित्रिविध ज्ञान के धारक कुमार ऋषभ ने समझ लिया कि अब अग्नि के प्रादुर्भाव के साथ ही साथ कर्मभूमि के अनुरूप ही प्राकृतिक वातावरण बनने वाला है। कुमार ने यौगलिकों के साथ जाकर उन्हें दावाग्नि को बुझाने के उपाय बताये। कुमार के निर्देशानुसार आग की बढ़ती हुई लपटों को रोकने के लिये चारों ओर के वन को घास-फूस आदि से तत्काल साफ कर डाला। सहस्रों हाथों से एक साथ फेंकी गई मिट्टी ने दावाग्नि को थोड़ी ही देर में शांत कर दिया। कुमार ने अग्नि प्रज्वलित करने के अनेक उपाय भी यौगलिकों को बताये।

अब तो कर्म युग के स्वागत हेतु सभी ओर अनेक प्रकार की तैयारियां प्रारम्भ हो गईं। ऋषभकुमार ने सर्वप्रथम अशनपानादि के रखरखाव, सञ्चय आदि के लिये मृद्पात्र बनाने की कला यौगलिकों को सिखाई और इस कला में पारंगत लोगों को प्रजापति की उपाधि से अलंकृत किया। □ [क्रमशः]

मन-विवेचन

'उत्तराध्ययन सूत्र' में प्रतिपादित मन का स्वरूप

□ डॉ० महेन्द्रनाथ सिंह

'उत्तराध्ययन सूत्र' जैन धर्म का प्रसिद्ध ग्रन्थ है। यह अर्धमागधी प्राकृत भाषा में निबद्ध जैन आगम साहित्य का एक भाग है। इसकी गणना मूल सूत्रों में होती है। इसमें कुल ३६ अध्ययन हैं, जिनमें से १६५६ पद्य तथा ८९ गद्य सूत्र हैं। इनमें कुछ अध्ययन शुद्ध दार्शनिक सिद्धान्तों का तथा कुछ उपदेशात्मक, साधु के आचार एवं नीति का विवेचन करते हैं। कुछ कथा एवं संवाद-रूप हैं तथा कुछ मनोवैज्ञानिक तथ्यों का विवेचन करते हैं। बौद्धधर्म में चित्त, मन और विज्ञान को प्राय: एक ही अर्थ का माना गया है। जैन दृष्टिकोण के अनुसार जो मनन करता अथवा जिसके द्वारा मनन किया जाता है वह मन है।[1] (मन: मनन, मन्यते अनेन वा मन:) मन भी एक प्रकार का द्रव्य है। मन के द्वारा ही सुख-दु:ख आदि की अनुभूति होती है। आत्मा स्वयं किसी वस्तु का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं प्राप्त करती। इसमें मन अथवा मनस् का सहयोग आवश्यक है। जब इन्द्रियों को संवेदन होता है तब इसका प्रत्यक्ष ज्ञान आत्मा को मन के माध्यम से होता है। दूसरे शब्दों में, इन्द्रियों और आत्मा के बीच की कड़ी मन है। मन के माध्यम से ही जीवात्मा प्रत्यक्ष ज्ञान प्राप्त करता है। किसी विशेष इन्द्रिय द्वारा किसी वस्तु विशेष का ज्ञान तब तक नहीं होता जब तक मन का आधार नहीं मिलता। मन इन्द्रिय-विशेष से प्राप्त होने वाले वस्तु विशेष का ज्ञान आत्मा तक पहुँचाता है। इस प्रकार मन के माध्यम से वस्तु का प्रत्यक्ष ज्ञान होता है। इसके अतिरिक्त विचार और भाव सम्बन्धी अनुभव भी आत्मा को मन के ही द्वारा होते हैं। सोच-विचार करना आत्मा का नहीं मन का कार्य है। इस प्रकार जैन मनोविज्ञान यह मानता है कि आत्मा समस्त अनुभवों का आधार है और मन अनुभव प्राप्त करने का माध्यम है।[2]

डॉ० सागरमल जैन[3] का कथन है कि जैन-दर्शन में मन मुक्ति के मार्ग का प्रवेश द्वार है। वहाँ केवल समनस्क प्राणी ही इस मार्ग पर आगे बढ़ सकते हैं। अमनस्क प्राणियों को तो इस राजमार्ग पर चलने का अधिकार ही प्राप्त

नहीं है। सम्यग्दृष्टि केवल समनस्क प्राणियों को ही प्राप्त हो सकती है और वे ही अपनी साधना के द्वारा मोक्षमार्ग की ओर बढ़ने के अधिकारी हैं। सम्यग्दर्शन को प्राप्त करने के लिए तीव्रतम क्रोधादि आवेगों का संयमन आवश्यक है, क्योंकि मन के द्वारा ही आवेगों का संयमन सम्भव है। इसलिए कहा गया है कि सम्यग्दर्शन की प्राप्ति के लिए की जाने वाली ग्रन्थ-भेद की प्रक्रिया में यथा प्रवृत्तिकरण तब होता है जब मन का योग होता है । 'उत्तराध्ययन' सूत्र में महावीर कहते हैं कि मन की समाधि से एकाग्रता की प्राप्ति होती है और जब एकाग्रता की प्राप्ति हो गयी तब यह जीव ज्ञान के पर्यायों को प्राप्त करता है अर्थात् मति, श्रुति आदि ज्ञानों को तथा ज्ञान की अन्य शक्तियों को प्राप्त कर लेता है। तात्पर्य यह है कि उसका ज्ञान अति निर्मल हो जाता है। इस प्रकार ज्ञान के पर्यायों को प्राप्त करके यह जीव सम्यक्त्व को विशुद्ध कर लेता है, क्योंकि ज्ञान के निर्मल होने से उसके अन्तःकरण में शंका आदि दोषों की उत्पत्ति नहीं होती तथा सम्यक्त्व की विशुद्धि होने पर मिथ्यात्व का विनाश अवश्यम्भावी है, इसलिए यह जीव सम्यक्त्व की विशुद्धि के साथ ही मिथ्यात्व का विनाश भी कर डालता है।[४] इस प्रकार अज्ञान का निवर्तन और सत्य दृष्टिकोण की उपलब्धि जो निर्वाण की अनिवार्य शर्त है, बिना मनः शुद्धि के सम्भव नहीं है। अतः जैन धर्म में मन मुक्ति का आवश्यक हेतु है। शुद्ध संयमित मन निर्वाण का हेतु बनता है, जबकि अनियन्त्रित मन ही अज्ञान अथवा मिथ्यात्व का कारण होकर, प्राणियों के बन्धन का हेतु है।

अब प्रश्न यह उठता है कि मन को ही बन्धन और मुक्ति का कारण क्यों माना गया? बन्धन के कारण राग, द्वेष, मोह आदि मनोभाव आत्मिक अवश्य माने गये हैं लेकिन बिना चेतन सत्ता के ये उत्पन्न नहीं होते हैं। इसलिए यह कहा गया है कि मन ही बन्धन और मुक्ति का कारण है। जैन दर्शन इस बात से पूर्णरूपेण सहमत है कि बन्धन का कारण अविद्या है। प्रश्न यह है कि इस अविद्या का वास स्थान क्या है? अविद्या का वास स्थान मन को ही माना जा सकता है जो जड़ तथा चेतन की योजक कड़ी है। अतः मन में ही अविद्या निवास करती है और मन का निवर्तन होने पर शुद्ध आत्म-दशा में अविद्या की सम्भावना किसी भी स्थिति में नहीं हो सकती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि 'उत्तराध्ययन सूत्र' में वर्णित मन जैन दर्शन का केन्द्र बिन्दु है। मन को नैतिक जीवन के लिए अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना गया है। उनके अनुसार मन ही नैतिक उत्थान और नैतिक पतन का महत्त्वपूर्ण साधन है। इसलिए जैन दर्शन में मन के संयम के ऊपर जोर दिया गया है।

जैन दर्शन में इच्छा निरोध या वासनाओं के दमन का स्वर काफी मुखरित हुआ है।

डॉ० सागरमल जैन के अनुसार[५] जैन दर्शन के अधिकांश विधि-निषेध इच्छाओं के दमन से सम्बन्धित हैं। इच्छाएँ तृप्ति चाहती हैं और तृप्ति बाह्य साधनों पर निर्भर है। यदि बाह्य परिस्थिति प्रतिकूल हो तो अतृप्त इच्छा मन में ही क्षोभ उत्पन्न करती है और इस प्रकार चित्त-शान्ति या आध्यात्मिक समत्व भंग हो जाता है। अतः यह माना गया कि समत्व के नैतिक आदर्श की उपलब्धि के लिए इच्छाओं का दमन करना अत्यन्त आवश्यक है। मन ही इच्छाओं एवं संकल्पों का उत्पादक है। अतः इच्छा-निरोध का अर्थ मनोनिग्रह भी मान लिया गया है। उत्तराध्ययन सूत्र में भी इच्छा-निरोध और मनोनिग्रह के प्रत्यय को स्वीकार किया गया है। 'उत्तराध्ययन' सूत्र में कहा गया है कि यह मन दुष्ट अश्व है जो कि बड़ा रौद्र और उन्मार्ग में ले जाने वाला है,[६] अतः साधक संरम्भ (मैं इसको मार दूँ, ऐसा मन में विचार करना), समारम्भ (किसी को पीड़ा देने के लिए मन में संकल्प करना तथा किसी को उच्चाटनादि के लिए ध्यान करना) और आरम्भ (अत्यन्त क्लेश से परजीवों के प्राण हरण करने के लिए अशुभ ध्यान का अवलम्बन) में प्रवृत्त होते हुए इस मन का निग्रह करे,[७] क्योंकि मन की एकाग्रता में संयम स्थापित करने से चित्त का निरोध होता है और जीव को मोक्ष की प्राप्ति होती है।[८] भगवान् महावीर कहते हैं कि मनोगुप्ति से जीव एकाग्रता को प्राप्त होता है।[९] इसलिए इन्द्रियों के सुमनोज्ञ विषयों में मन को कभी भी संलग्न न करें। आधुनिक मनोविज्ञान भी इच्छाओं के दमन एवं मनोनिग्रह को मानसिक समत्व का हेतु न मानकर उसके ठीक विपरीत उसे चित्त-विक्षोभ का कारण मानता है। दमन, निग्रह, निरोध आज की मनोवैज्ञानिक धारणा में मानसिक सन्तुलन को भंग करने वाले माने गये हैं।[१०]

अतएव जैन दृष्टि में विकास का सच्चा मार्ग वासनाओं का दमन करना नहीं बल्कि उसका क्षय करना है। जैन दृष्टिकोण के अनुसार औपशमिक मार्ग वह मार्ग है, जिसमें मन की वृत्तियों यानी निहित वासनाओं को दबाकर साधना के क्षेत्र में आगे बढ़ा जाता है। इच्छाओं के निरोध का मार्ग ही औपशमिक मार्ग है। आधुनिक मनोविज्ञान की भाषा में यह दमन का मार्ग है। अतएव मन व्यक्ति के अन्तर में एक प्रकार का साधन है जिसके द्वारा वह अपने बाह्य संसार को ग्रहण करता है। मन एक प्रकार की इन्द्रिय नहीं वरन् एक चेतना के रूप में इसे स्वीकार किया जाता है। यदि यह एक इन्द्रिय के समान होता तो शरीर में इसके लिए कोई निश्चित स्थान पाया जाता इसलिए मन को जैन मनोवैज्ञानिक अनिन्द्रिय मानते हैं। डॉ० मोहनलाल मेहता[११] ने अपनी पुस्तक 'जैन मनोविज्ञान' में यह स्पष्ट किया है कि मन एक प्रकार की चेतन क्रिया है जो आत्म प्रेरित होती है और जिसके द्वारा आत्मा का सम्बन्ध तथा कार्यव्यवहार संसार में होता है। मन के विषय में दार्शनिकों में बड़ा मतभेद है। सामान्यतः यह माना जाता है कि मन की सहायता से आत्मा को ज्ञान

होता है। नैयायिकों ने तो मन को आत्मा की भाँति एक स्वतंत्र द्रव्य माना है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जैन परम्परा में 'उत्तराध्ययन' सूत्र के अन्तर्गत मन के सन्दर्भ में गहन चिन्तन किया गया है। मन इन्द्रियों की भाँति पौद्गलिक है। मन के द्वारा आत्मा बाह्य पदार्थों के विषय में विचारता है। यह मन दो प्रकार का होता है—एक द्रव्य मन, दूसरा भाव मन। द्रव्य मन शरीर के अन्दर खिले हुए आठ पत्तों वाले कमल के आकार का होता है। यह द्रव्य मन गुण-दोष के विचार की ओर उन्मुख आत्मा की सहायता करता है। आत्मा में विचारने की शक्ति एवं प्रवृत्ति को भाव मन कहते हैं। द्रव्य मन पुद्गल के परमाणुओं से निर्मित होने से पौद्गलिक है तथा भाव मन पुद्गल की अपेक्षा से होने से पौद्गलिक है। इसको सर्वार्थग्राही इन्द्रिय, अनिन्द्रिय, अन्तःकरण तथा सूक्ष्म इन्द्रिय कहते हैं।[१२]

संदर्भ-संकेत :

१. जैन दर्शन : मनन और मीमांसा, मुनि नथमल, पृ० ४८७।

२. मनोविज्ञान की ऐतिहासिक रूपरेखा, डॉ० सीताराम जायसवाल, पृ० ५९-६०।

३. जैन, बौद्ध और गीता के आचार दर्शनों का तुलनात्मक अध्ययन, भाग-१, पृ० ४८२।

४. उत्तराध्ययन, २९/५७।
मणसमाहारणयाए णं एगग्गं जणयइ।
एगग्गं जणइत्ता नाणपज्जवे जणयइ।
नाणपज्जवे जणइत्ता सम्मत्तं विसोहेइ, मिच्छत्तं च निज्जरेइ।

५. जैन, बौद्ध और गीता के आचार दर्शनों का तुलनात्मक अध्ययन, भाग १, पृ० ४८५-८७।

६. वही, २३/५८।
मणो साहसिओ भीमो दुट्ठस्सो परिधावई।
तं सम्मं निगिण्हामि धम्मसिक्खाए कन्थगं॥

७. वही २४/२१।
संरम्भं-समारम्भे आरम्भे य तहेव य।
मणं पवत्तमाणं तु नियतेज्ज जयं जई॥

८. वही, २९/२६।
एगग्गमणसंनिवेसणयाए णं भन्ते ! जीवे किं जणयइ ?
एगग्गमणसंनिवेसणाएणं चित्त निरोहं करेइ॥

९. वही, २९/५४ ।
मरगुत्तयाए णं भन्ते जीवे किं जणयइ ?
मणगुत्तयाए णं जीवे एगग्गं जणयइं ।
एगग्गचित्तेणं जीवे मणगुत्ते संजमाराहए भवइ ।

१०. वही ३२/२१ ।
जे इन्दियाणं विसया मणुन्ना
न तेसु भावं निसिरे कयाइ ।
न याऽमणुन्नेसु मणं पि कुज्जा
समाहिकामे समणे तवस्सी ।

११. जैन साइकोलाजी, मेहता, मोहनलाल, पृ० ११४-११७ ।

१२. जैन दर्शन, महेन्द्रकुमार न्यायाचार्य, पृ० २५५ तथा भगवती सूत्र, १३/७/४९४ ।

—कमरा नं० १४, डालमिया होस्टल, बी० एच० यू०, वाराणसी–५

चोर से भी सहानुभूति

☐ श्री बलवन्तसिंह हाड़ा

एक सज्जन कपड़े के दुकानदार थे । अवसर पाकर एक चोर कुछ कपड़ा चुरा कर ले गया । एक दिन वे अपने मित्र की दुकान पर बैठे थे, तभी एक व्यक्ति कपड़ा बेचने आया तो दुकानदार ने उसकी शक्ल देखकर कहा कि कपड़ा तुम्हारा है या चोरी का, इसका क्या पता ? यदि कोई सज्जन तुमको पहचानता हो तो उसकी साक्षी दिला दो । दुकानदार मित्र ने चोर को पहचान लिया और उसकी चोरी की बात कहना ही चाहते थे, परन्तु उनके हृदय में दया आ गई कि क्या पता यह चोरी इसने किसी कारण की हो । वे अपने मित्र से बोले—"अरे, इसे तो मैं अच्छी तरह जानता हूँ, यह तो ईमानदार गरीब आदमी है ।" दुकानदार ने कपड़ा लेकर उसको रकम दे दी ।

जब उक्त सज्जन अपनी दुकान पर पहुँचे तो वह चोर हाथ जोड़कर उनसे क्षमा मांगने लगा । उसने कहा—आप चाहते तो मुझे पकड़ा सकते थे । आप मुझे जो भी सजा देना चाहें, मैं स्वीकार करता हूँ । दुकानदार ने कहा कि मैं तो इतना ही कहता हूँ कि मेहनत कर कमाओ, चोरी कभी मत करना ।

चोर को क्षमादान मिला, साथ ही जीवन में एक परिवर्तन की सीख । डॉ० नरेन्द्र भानावत ने अपने दोहे में ठीक ही कहा है—

क्षमा बुहारे आतमा, निरमळ दर्पण होय ।
आप तणो आपो मिटै, सब जग आतम जोय ।।

—खाल की हवेली, झालावाड़ (राज०)

पंडितमरण और उसके भेद

☐ डॉ० रज्जन कुमार

जैनागमों में मृत्यु या मरण पर विस्तार से चर्चा की गई है। इनमें मरण के विभिन्न स्वरूपों पर विस्तृत विवेचन मिलता है। यद्यपि जैनागमों में मरण के सत्रह प्रकार की चर्चा है, फिर भी मुख्य रूप से मृत्यु के दो स्पष्ट विभाजन किए गये हैं। ये हैं—बालमरण और पंडितमरण। बालमरण अज्ञानियों और मूर्खों को होता है तथा वे जीवन और मृत्यु के अन्तर को ठीक से नहीं समझते हैं, जबकि ज्ञानियों तथा जीवन और मृत्यु के अंतर को समझने वालों के मरण को पंडितमरण कहा जाता है। इसे संल्लेखना, संथारा, समाधिमरण आदि नामों से जाना जाता है।

विवेक सहित जो मरण होता है उसे ही पंडितमरण कहा जाता है। 'उत्तराध्ययन सूत्र' में पंडितमरण के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए लिखा गया है कि जो जीव विषयों से अनासक्त होकर जीवन और मरण दोनों ही परिस्थितियों में समान भाव रखता है अर्थात् वह जीने का भी कांक्षी नहीं है तथा न ही मृत्यु से भयभीत होता है, ऐसे ही जीवों के मरण को पंडितमरण कहते हैं।[1] पंडितमरण के तीन भेद हैं—(१) भक्त प्रत्याख्यान मरण, (२) इंगिनी मरण और (३) प्रायोपगमन मरण।[2]

१. भक्त प्रत्याख्यान मरण

चारों प्रकार के आहार का त्याग करके समभावपूर्वक प्राण त्यागने को भक्त प्रत्याख्यान मरण कहते हैं। क्योंकि 'भक्त' का अर्थ 'भोजन' तथा 'प्रत्याख्यान' का अर्थ 'त्याग' होता है। इस मरण को स्वीकार करने वाला जीव (व्यक्ति) मृत्यु के प्रतीक्षा-काल में अपने शरीर की सेवा-शुश्रूषा स्वयं भी करता है और दूसरों से भी करवाता है।[3] आचार्य शिवार्य ने इस मरण के सविचार

१. उत्तराध्ययन सूत्र, ५/२, ३
२. आचारांग सूत्र, पृ० २७८, समवायांग सूत्र, पृ० ५३, मूलाचार पृ० ६४, भक्तपरिज्ञा प्रकीर्णक गाथा ६, भगवती-आराधना पृ० ४१, गोम्मटसार (कर्मकाण्ड), गाथा ५६, समाधिमरणोत्साह दीपक पृ० ८।
३. स्थानांग सूत्र, २/४/४१/४, भगवती-आराधना पृ० ४७१, गोम्मटसार (कर्मकाण्ड), गाथा ६०, समाधिमरणोत्साह दीपक, पृ० ६।

और अविचार दो भेद किये हैं ।[१] जिनकी आयु अत्यन्त अल्प नहीं हुई है तथा किसी तरह के उपसर्ग की संभावना नहीं रहने पर व्यक्ति जो भक्त प्रत्याख्यान मरण करता है वह सविचार होता है । इसका पूर्ण समय बारह वर्ष का होता है।[२] विविध कारणों के फलस्वरूप आकस्मिक मृत्यु की संभावना होने पर अविचार भक्त प्रत्याख्यान मरण ग्रहण किया जाता है ।[३]

सविचार भक्त प्रत्याख्यान मरण—सविचार भक्त प्रत्याख्यान मरण का विवेचन चालीस अधिकार सूत्र पदों की सहायता से किया गया है ।[४] चालीस पदों का संक्षिप्त परिचय यहाँ दिया जा रहा है ।[५]

(१) **अरिहे**—इसका अर्थ योग्य होता है ।
(२) **लिंगे**—इसके द्वारा व्यक्ति का लिंग जाना जाता है ।
(३) **सिक्खा**—इसका अर्थ होता है श्रुत का अध्ययन करना ।
(४) **विणय**—इसका अर्थ है मर्यादा ।
(५) **समाधी**—मन को एकाग्र करना ।
(६) **अणियद विहार**—अनियत क्षेत्र में विहार करना ।
(७) **परिणाम**—अपने कर्तव्य की आलोचना करना ।
(८) **उपाधिजहणा**—परिग्रह का त्याग करना ।
(९) **सिदी**—श्रेणि या सोपान अर्थात् क्रम ।
(१०) **भावणाओ**—बार-बार एक ही चीज का अभ्यास ।
(११) **सल्लेहणा**—काय और कषाय को कृश करना ।
(१२) **दिसा**—आचार्यों द्वारा मोक्ष मार्ग का उपदेश देना ।
(१३) **खामणा**—क्षमाग्रहण करना ।
(१४) **असिसिट्ठ**—शास्त्रानुसार शिक्षा देना ।
(१५) **परगण चरिया**—दूसरे संघ में जाना ।
(१६) **मग्गण**—समाधिमरण कराने में समर्थ आचार्य की खोज करना ।
(१७) **सुट्ठिय**—परोपकारी आचार्य ।

१. भगवती-आराधना, गाथा ६४ ।
२. वही. गाथा ६४ ।
३. वही. गाथा २००५ ।
४. वही. पृ० १०५ ।
५. वही. पृ० १०५, १०६, १०७, १०८ ।

(१८) **उवसंपया**—आचार्य के पास जाना।

(१९) **पडिक्षा**—आराधक के संयम की परीक्षा करना।

(२०) **पडिलेहा**—स्थान विशेष का अन्वेषण करना।

(२१) **आपुच्छा**—संघ की अनुमति लेने के लिए सदस्यों से मंत्रणा करना।

(२२) **पडिच्छणा**—एक आचार्य द्वारा एक समय में एक ही क्षपक को समाधिमरण कराना।

(२३) **सालोयणा**—क्षपक द्वारा गुरु के समक्ष अपने समस्त दोषों को प्रकट करना।

(२४) **गुणदोसा**—आलोचना के गुण-दोष प्रकट करना।

(२५) **सेज्जा**—आराधक का रहने का स्थान।

(२६) **संथार**—क्षपक आराधना के लिए जिस आसन का उपयोग करता है, वह संथार होता है।

(२७) **णिज्जवग्गा**—आराधक के समाधिमरण में सहायक मुनि या आचार्य।

(२८) **पयासणा**—आराधक के सामने अन्तिम आहार का प्रकाशन।

(२९) **हाणी**—क्षपक की आहार में आसक्ति को दूर करना।

(३०) **पच्चखाण**—तीनों प्रकार के आहार का त्याग।

(३१) **खामण**—क्षमायाचना करना।

(३२) **खमण**—समस्त प्राणियों को क्षमा प्रदान करना।

(३३) **अणुसठ्ठि**—शुद्ध भाव से समाधि में अग्रसर होना।

(३४) **सारणा**—दुःख से पीड़ित होकर बेहोश हुए चेतना रहित आराधक को सचेत करना।

(३५) **कवच**—दुःख दूर करना।

(३६) **समदा**—समत्व भाव को अपनाना।

(३७) **ज्झाणे**—ध्यान में लीन होना।

(३८) **लेस्सा**—कषाय से अनुरक्त मन-वचन-काय की प्रवृत्ति को लेश्या कहते हैं।

(३९) **फल**—आराधना के पश्चात् परिणाम की प्राप्ति।

(४०) **विजहणा**—क्षपक के देह त्याग के बाद उसके दाह-संस्कार एवं अन्य क्रिया कर्म को विजहणा कहते हैं।

अविचार भक्त प्रत्याख्यान मरण—'भगवती-आराधना' में कहा गया है कि सर्प, आग, व्याघ्र, भैंसा, हाथी, रीछ, शत्रु, चोर, म्लेच्छ, मूर्छा या विसूचिका आदि रोग से तत्काल मरण का कारण उपस्थित हो जाये तब जीव (व्यक्ति) को अविचार भक्त प्रत्याख्यान मरण करना चाहिए।[1] इसके तीन भेद हैं[2]— (१) निरुद्ध, (२) निरुद्धतर और (३) परम निरुद्ध।

(१) **निरुद्ध**—तत्काल मरण का कारण उपस्थित हो जाने पर अपनी सामर्थ्य भर व्यक्ति स्वयं ही अपने कार्यकलापों को पूर्ण करता है, अन्यथा किसी अन्य की सहायता लेता है। ऐसी स्थिति में वह जो भक्त प्रत्याख्यान मरण करता है वह निरुद्ध भक्त प्रत्याख्यान मरण कहलाता है।[3]

(२) **निरुद्धतर**—तत्काल मरण का कारण उपस्थित होने पर क्षपक (व्यक्ति) अपने गुरु के समक्ष अपने गुण-दोषों को प्रकट करता है तथा शक्ति से हीन होने पर अपने निवास स्थान पर ही शरीर त्याग करता है। व्यक्ति का यह मरण निरुद्धतर भक्त प्रत्याख्यान मरण कहलाता है।[4]

(३) **परम निरुद्ध**—सहसा मरण का कारण उपस्थित हो जाने पर तथा व्यक्ति की वाणी भी नष्ट हो जाए तो ऐसे व्यक्ति के मरण को परम निरुद्ध भक्त प्रत्याख्यान मरण कहते हैं। 'परम' शब्द यहां वाणी नष्ट होने के लिए प्रयुक्त हुआ है।[5]

२. इंगिनीमरण

इंगिनीमरण का अर्थ है अपने (आत्मा) को इंगित करना अर्थात् अपनी शक्ति भर स्थित होकर प्रवृत्ति करते हुए मरण स्वीकार करना। इसमें व्यक्ति एक क्षेत्र नियत कर लेता है तथा ऐसी प्रतिज्ञा ले लेता है कि इस नियत क्षेत्र की सीमा से बाहर नहीं जाऊँगा। इस मरण व्रत को स्वीकार करने वाला साधक अपने शरीर की वैयावृत्य (सेवा) स्वयं करता है, दूसरों से नहीं करवाता है।

---

१. बालग्गिवग्घमहिसगयरिंछपडिणीय तेण मिच्छेहिं।
मूच्छा विसूचियादीहिं होज्ज सज्जो हु वावत्ती॥
भगवती-आराधना, २०१२

२. वही. पृ० २००६।

३. वही. पृ० २००७, २००६।

४. वहीं, पृ० २०१४।

५. वही. पृ० २०१६, २०१७।

क्योंकि इंगिनीमरण के प्रतिज्ञासूत्र में दूसरों के द्वारा ली गई सेवा का निषेध किया गया है।[१]

'गोम्मटसार कर्मकांड' में लिखा गया है कि इंगिनीमरण स्वीकार करने वाला व्यक्ति अपने शरीर की सेवा-शुश्रूषा स्वयं करता है, उसे किसी तरह की व्याधि या कष्ट होता है तो उसका उपचार भी स्वयं करता है, किसी अन्य से इसका निदान नहीं कराता है।[२]

'भगवती-आराधना' में इंगिनीमरण पर विस्तार से चर्चा की गई है। इस ग्रंथ के अनुसार इस मरण को स्वीकार करने वाला व्यक्ति अपने परिचितों को इसकी सूचना दे देता है तथा अपने मन में यह निर्णय कर लेता है कि मैं इंगिनी-मरण करूँगा। तत्पश्चात् वह अपने उत्तरदायित्वों को पूर्ण करके किसी निर्जन स्थान पर मन को एकाग्र रखने के लिए प्रस्थान करता है।[३]

निर्जन स्थान में व्यक्ति एक क्षेत्र विशेष की सीमा अंकित कर लेता है और मन को शुभ ध्यान में लगाता है तथा क्रम से आहार का त्याग करता है।[४] 'आचारांग सूत्र' में कहा गया है कि व्यक्ति आहार बिना स्वाद का रसास्वादन किये ही ग्रहण करता है। उसमें लिखा गया है कि व्यक्ति को अपना आहार मुँह में रखकर जल्दी से निगल जाना चाहिए तथा मुँह में उसे (भोजन) लाड़ना नहीं चाहिए।[५] अंततः क्षपक आहार लेना भी बन्द कर देता है। विभिन्न तरह के तपों का अभ्यास करते हुए सभी तरह के क्लेशों से मुक्त होकर व्यक्ति अपना जीवन सफल कर लेता है।

३. प्रायोपगमन मरण

प्रायोपगमन मरण में व्यक्ति अपनी संपूर्ण क्रियाओं का निषेध कर देता है। वह अपने शरीर की सेवा न तो स्वयं करता है और न किसी अन्य से करवाता है।[६] इस मरण को कहीं पादोपगमन या पादपोपगमन मरण तो कहीं पादोगमन मरण भी कहा जाता है।[७]

---

१. समवायांग सूत्र, पृ० ५३, भगवती-आराधना, पृ० ४७२, गोम्मटसार कर्मकाण्ड, गाथा ६१, समाधिमरणोत्साह दीपक पृ० ९।
२. गोम्मटसार कर्मकाण्ड, गाथा ६१।
३. भगवती-आराधना, गाथा २०२६–२०२८।
४. भगवती-आराधना, पृ० २०३३।
५. आचारांग सूत्र, प्रथम श्रुतस्कन्ध, पृ० ५९५, १८/६/२१६।
६. स्थानांग सूत्र २/४/४१४, समवायांग सूत्र, पृ० ५४–५५। भगवती-आराधना, गोम्मटसार, कर्मकाण्ड, गाथा ६१। समाधिमरणोत्साह दीपक, पृ० ९।
७. औपपातिक वृत्ति, पृ० ७१, आचारांग सूत्र, पृ० ६०४।

'समवायांग'[१] में इस मरण की व्याख्या करते हुए लिखा गया है कि पादप नाम वृक्ष का है, जैसे वायु आदि के प्रबल वेग से वृक्ष जड़ से उखड़ कर भूमि पर जैसा पड़ जाता है, उसी प्रकार पड़ा रहता है, इसी प्रकार जो महासाधु भक्तपान का यावज्जीवन परित्याग कर स्व-पर की वैयावृत्य का भी त्याग कर, कायोत्सर्ग, पद्मासन या मृतकासन आदि किसी आसन से आत्म-चिन्तन करते हुए तदवस्थ रहकर प्राण त्याग करता है, उसके मरण को पादपोपगमन मरण कहते हैं।

'भगवती-आराधना' में प्रायोपगमन मरण पर प्रकाश डालते हुए कहा गया है कि इस मरण में व्यक्ति किसी तरह के संथारे का प्रयोग नहीं करता है। व्यक्ति पेड़ की डाल की तरह एक स्थान पर पड़ा रहता है। वह समस्त सांसारिक क्रियाओं से अपने को विरत कर लेता है। यदि कोई उसका अभिषेक करता है तो वह न तो मना ही करता है और न ही ऐसा करने के लिए कहता है। अगर कोई उसे उठाकर ऐसे स्थान पर रख देता है जहाँ कि हिंसक पशु निवास करते हैं तो वह वहाँ समभावपूर्वक पड़ा रहता है।[२] यह मरण वही व्यक्ति ग्रहण करता है जिसकी आयु अल्प रहती है।[३]

यद्यपि पंडित मरण ग्रहण करने वाले व्यक्ति को मुख्य रूप से पाँच तरह के अतिचारों से बचने का निर्देश किया गया है तथापि 'आचारांग सूत्र' में प्रायोपगमन मरण करने वालों को सात बातों का विशेष रूप से ध्यान रखने के लिए कहा गया है[४]—(क) निर्धारित स्थान से स्वयं चलित नहीं होना। (ख) शरीर का सर्वथा व्युत्सर्ग करना। (ग) परिषहों और उपसर्गों से जरा भी विचलित नहीं होना। (घ) इहलोक और परलोक संबंधी काम भोगों में आसक्ति नहीं रखना। (ङ) सांसारिक वासनाओं और लोलुपताओं को नहीं अपनाना। (च) शासकों या दिव्य भोगों के स्वामियों द्वारा भोगों के लिए आमंत्रित किये जाने पर लालच नहीं करना। (छ) सभी तरह के पदार्थों से अनासक्त होकर रहना।

पंडित मरण के उपर्युक्त तीन भेदों की चर्चा के बाद इसके मुख्य अंतरों पर भी जैनाचार्यों ने प्रकाश डाला है और इन्हीं अंतरों के आधार पर इन तीनों

१. समवायांग सूत्र, पृ० ५४-५५।
२. भगवती-आराधना, पृ० २०५८–२०६०।
३. वही. पृ० ८८५।
४. आचारांग सूत्र एवं वृत्ति पत्रांक पृ० २९४-२९५।
उद्धृत आचारांग सूत्र, प्रथम श्रुतस्कन्ध, संपा० मधुकर मुनि।

की विशिष्टता का भी निर्णय किया जाता है। वस्तुतः पंडित मरण विशिष्ट मरण ही है, लेकिन संयम एवं मर्यादा की अपेक्षा से इन तीनों की विशिष्टता एक दूसरे से कुछ भिन्न-भिन्न हो जाती है। इन तीनों ही प्रकार के मरण के अंतर को आचार्य आत्मारामजी ने इस प्रकार स्पष्ट किया है—भक्त प्रत्याख्यान में मात्र आहार एवं कषाय का त्याग होता है, इसमें साधक एक स्थान से दूसरे स्थान में आ-जा सकता है, परन्तु इंगिनी मरण में भूमि की मर्यादा होती है, वह मर्यादित भूमि (निर्धारित सीमा क्षेत्र) से बाहर आ-जा नहीं सकता है। प्रायोपगमन में शौच आदि आवश्यक क्रियाओं के अतिरिक्त शारीरिक अंग-उपांगों के संकोच-विस्तार एवं हलन-चलन आदि सभी क्रियाओं का पूर्णतः त्याग किया जाता है।[1] जहाँ तक विशिष्टता की बात है, साधना और संयम की दृष्टि से भक्त प्रत्याख्यान मरण-श्रेष्ठ, इंगिनीमरण श्रेष्ठतर तथा प्रायोपगमन मरण-श्रेष्ठतम है।

—पार्श्वनाथ विद्याश्रम शोध संस्थान, आई० टी० आई० रोड,
वाराणसी–२२१ ००५

१. श्री आचारांग सूत्र, प्रथम स्कन्ध पृ० ६१३, अनु. आत्मारामजी, इसी तरह की व्याख्या श्री कैलाशचन्द्रजी ने भगवती-आराधना के अपने अनुवाद में भी की है। भगवती-आराधना, पृ० ८८३।

प्रश्नमंच कार्यक्रम [३३]

क्षमा●

□ प्रस्तोता **श्री पी. एम. चौरड़िया**

[१]

(१) **प्रश्न**—क्षमा का अर्थ बताइये ।

उत्तर—क्षमा अर्थात् सहनशीलता रखना, क्रोध को पैदा न होने देना और क्रोध उत्पन्न हुआ हो तो विवेक-बल से उसे निष्फल बना डालना ।

(२) **प्रश्न**—क्षमा के पर्यायवाची शब्दों के नाम बताइये ?

उत्तर—तितिक्षा, सहिष्णुता, बरदाश्त करना, सहनशीलता, ग़म खाना आदि ।

(३) **प्रश्न**—साधना की दृष्टि से क्षमावान पुरुष के तीन भेद कौन से किए जा सकते हैं ?

उत्तर—(१) **क्षमावादी**—जो क्षमा को सिद्धान्त रूप में स्वीकार करता है, पर जीवन में नहीं अपनाता ।

(२) **क्षमाधारी**—जो क्षमा धारण करता है अर्थात् जीवन में उसे अपनाता है ।

(३) **क्षमामय**—जिसका जीवन क्षमा से परिपूर्ण है अर्थात् जिसका क्षमा ही सर्वस्व है ।

[२]

(१) **प्रश्न**—समभाव तथा क्षमा का क्या सम्बन्ध है ?

●यह कार्यक्रम स्व. युवाचार्य श्री मधुकर मुनिजी की सुशिष्याएँ महासती श्री कानकंवरजी, चम्पाकंवरजी एवं कंचनकंवरजी के सान्निध्य में मद्रास में २१ जनवरी, १९८९ को आम श्रोताओं में आयोजित किया गया । —सम्पादक

उत्तर—इन दोनों का गहरा सम्बन्ध है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं, एक के बिना दूसरा अपूर्ण है।

(२) **प्रश्न**—क्षमा करने से निर्भयता कैसे प्राप्त होती है?

उत्तर—क्षमायाचना करने से हृदय का पश्चात्ताप और क्लेश-कलह मिट जाता है तथा हृदय में प्रसन्नता एवं प्राणीमात्र के प्रति मैत्री भावना उत्पन्न होती है। इस प्रकार क्षमा द्वारा प्रसन्नता और मैत्री भावना प्रकट हो जाने के फलस्वरूप किसी प्रकार का भय नहीं रह जाता और निर्भयता प्राप्त हो जाती है।

(३) **प्रश्न**—क्षमा और अक्रोध में क्या फर्क है?

उत्तर—अपराधी के प्रति प्रतिकार करने की भावना उत्पन्न होने के बाद विवेक आदि से उसे दबाकर अपराध को सह लेना क्षमा है, जबकि प्रतिकार की भावना का उत्पन्न न होना अक्रोध है। क्षमा में व्यक्ति सहनशील होता है जबकि अक्रोध में व्यक्ति क्रोध से विहीन होता है। अक्रोध में व्यक्ति परमहंस की स्थिति प्राप्त कर लेता है, जबकि क्षमा उस स्थिति तक पहुँचने का सोपान है।

[३]

(१) **प्रश्न**—क्या 'जैसे को तैसा' की नीति क्षमा की परिचायक है?

उत्तर—कदापि नहीं! 'जैसे को तैसा' की नीति कलह की जड़ है। इससे विद्वेष भावना पनपती है। प्रारम्भ में पारस्परिक छींटाकशी ही होती है, किन्तु बाद में वही विकराल रूप धारण कर लेती है।

(२) **प्रश्न**—'क्षमा करो और भूलो'

इसका अर्थ बताइये।

उत्तर—क्षमा करो और कटुता को भूल जाओ।

(३) **प्रश्न**—'To err is human, to forgive is divine'.

अर्थ—गलती करना इन्सान का काम है, उसे क्षमा करना देवता का।

उपर्युक्त अंग्रेजी कहावत का क्या तात्पर्य है?

उत्तर—यह सही है कि गलती करना मनुष्य का स्वभाव है, किन्तु दूसरों की ग़लतियों को क्षमा करना दैवीय गुण है।

[४]

(१) **प्रश्न**—क्षमा शोभती उस भुजंग को, जिसके पास गरल हो ।
उसको क्या जो दंत-हीन, विष-रहित विनीत सरल हो ।।

उपर्युक्त पंक्तियाँ किसने लिखीं ?

उत्तर—कवि दिनकर ने ।

(२) **प्रश्न**—क्षमा वीर में बळ घणो, काटे मन री गांठ ।
बल़बल़ती लुंवां सहै, हिये न राखै आंट ।।

उपर्युक्त क्षमा का दोहा किसने लिखा ?

उत्तर—डॉ. नरेन्द्र भानावत ने ।

(३) **प्रश्न**—घृणा-घृणा से वैर-वैर से, कभी शान्त हो सकते क्या ?
कभी खून से सने वस्त्र को, खून ही से धो सकते क्या ?

क्षमा हृदय की दिव्य ज्योति है, क्षमा सृष्टि का मोती है ।
इसको पा कुछ शेष न पाना, वसुधा दिव्य चमकती है ।।

उपर्युक्त गीतिका किसने लिखी ?

उत्तर—उपाध्याय कवि श्री अमर मुनिजी ने ।

[५]

(१) **प्रश्न**—धरती माता (पृथ्वी) का दूसरा नाम क्षमा क्यों रखा गया है ?

उत्तर—धरती पर लोग कूड़ा करकट डालते हैं, उसको हल, फावड़ा, ट्रैक्टर इत्यादि से काटते हैं, सब प्रकार के अत्याचार प्राणी धरती पर करते हैं, परन्तु पृथ्वी माता सब सहन करती है । सहन ही नहीं करती, बल्कि उपकार करती है । नाना प्रकार के अन्न, फल, फूल, वनस्पति उत्पन्न कर प्राणीमात्र का पालन पोषण करती है, इसलिये पृथ्वी का नाम 'क्षमा' है ।

(२) **प्रश्न**—क्षमा का उत्तम और श्रेष्ठ रूप क्या है ?

उत्तर—अपराधी के अपराध को भूलकर उसके प्रति मंगलकामना करना, प्रभु से उसके उत्कर्ष और विकास की प्रार्थना करना ही वास्तविक, उत्तम और श्रेष्ठ क्षमा है ।

(३) **प्रश्न**—क्षमा को ज्ञान का सार किस प्रकार कहा जा सकता है ?

उत्तर—क्षमा के बिना ज्ञान सम्भव नहीं। ज्ञान की उपलब्धि के लिए चाहिए नम्रता, विनयशीलता, सरलता और इन सभी का क्षमा से आगमन होता है। अहंकारी को ज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता।

(१) **प्रश्न**—सत्थं परेण परं, नत्थि असत्थं परेण परं।

अर्थ—शस्त्र एक से एक बढ़कर है, परन्तु अशस्त्र (क्षमा) एक से एक बढ़कर नहीं है अर्थात् क्षमा की साधना से बढ़कर श्रेष्ठ दूसरी कोई साधना नहीं है।

उपर्युक्त शास्त्र की वाणी किस सूत्र से ली गई है?

उत्तर—आचारांग सूत्र १–३–४।

(२) **प्रश्न**—'खंति परमं तपो तितिक्खा।'

अर्थ—क्षमा (सहिष्णुता) परम तप है।

उपर्युक्त उत्तम वाणी किस ग्रन्थ से ली गई है?

उत्तर—धम्मपद १४/६।

(३) **प्रश्न**—क्षमा ब्रह्म, क्षमा सत्यं, क्षमा भूतं च भाविच।
क्षमा तपः क्षमा शौच, क्षमापदे धृतं जगत्॥

अर्थ—क्षमा ब्रह्म है, सत्य है, भूत और भविष्य है। क्षमा ही तप है, क्षमा ही शुद्धि है, क्षमा ने ही इस जगत् को धारण कर रखा है।

उपर्युक्त उत्तम विचार किस ग्रन्थ से लिये गये हैं?

उत्तर—महाभारत २/६/३७।

[७]

(१) **प्रश्न**—यदि कोई व्यक्ति अपने अपराधों के लिए दूसरों से क्षमा-याचना करता है, लेकिन दूसरा व्यक्ति उसे क्षमा नहीं देता, तो ऐसी स्थिति में क्या करना चाहिए?

उत्तर—वह व्यक्ति अपनी ओर से क्षमायाचना करले। दूसरा खमाता है या नहीं, यह देखने की आवश्यकता नहीं।

(२) **प्रश्न**—क्षमा को दण्ड से अधिक पुरुषोचित एवं वीरोचित क्यों कहा गया है?

उत्तर—अपराध का दण्ड देने से शत्रुता के भाव हृदय से नहीं जाते। संसार में ऐसी गलतियाँ एवं अपराध कम हैं, जिन्हें हम चाहें और क्षमा न कर सकें। दूसरों की भूलों को विस्मरण कर देना भी क्षमा करने जितना ही श्रेयस्कर है। अतः क्षमा को दण्ड से अधिक पुरुषोचित एवं वीरोचित कहा गया है।

(३) **प्रश्न**—क्षमाशील व्यक्ति की परीक्षा कब होती है ?

उत्तर—जब मन थोड़े से प्रतिकूल कारणों के मिलने पर उछल पड़ता है, सिर गर्म हो जाता है और हाथ-पैर फूल जाते हैं, ऐसे समय में भी मन-वचन को संतुलित रखकर किंचिन्मात्र भी विकार जागृत नहीं होने देते, वे वास्तव में क्षमा वीर हैं। यही उनकी परीक्षा की घड़ी होती है।

[८]

(१) **प्रश्न**—निम्नलिखित विचार किसने प्रकट किए ?

"क्रोध पर विजय पाना अच्छा है, किन्तु उसके पास न जाना और भी अच्छा है।"

उत्तर—चाणक्य ने।

(२) **प्रश्न**—"जो गुस्सा पी जाते हैं और लोगों को माफ कर देते हैं, अल्लाह ऐसी नेकी करने वालों को प्यार करता है।"

उत्तर—पैगम्बर मुहम्मद साहब ने।

(३) **प्रश्न**—"बिना क्षमा का जीवन रेगिस्तान है और यह मैंने प्रत्यक्ष जीवन में अनुभव किया है।"

उत्तर—पंडित जवाहरलाल नेहरू ने।

[९]

(१) **प्रश्न**—खामेमि सव्वे जीवा, सव्वे जीवा खमंतु मे।
मित्ति में सव्व भुएसु, वेरं मज्झं न केणई ।।

उपर्युक्त पंक्तियों का अर्थ बताइये।

उत्तर—मैं समस्त जीवों से क्षमा-याचना करता हूँ। सब जीव मुझे क्षमा करें। सभी जीवों के प्रति मेरा मैत्री भाव है, मेरा किसी भी जीव के साथ वैर-विरोध नहीं है।

(२) **प्रश्न**—समणं संजयं दंतं, हणिज्ज कोई कत्थइ।
नत्थि जीवस्स नासुत्ति, एवं पेहिज्ज संजए॥

उपर्युक्त पंक्तियों का अर्थ कीजिए।

उत्तर—संयमी और दान्त श्रमण को कोई पीटे तो वह ऐसा चिन्तन करे कि आत्मा का नाश नहीं होता, यह सोचकर सहन करे और प्रतिशोध की भावना नहीं लावे।

(३) **प्रश्न**—"सवस्स समण संघस्स भगवओ अंजलि करिअसी से।
सव्व खमा वइता, खमामि सव्वस्स अहअंपि॥"

उपर्युक्त पंक्तियों का सार क्या है?

उत्तर—मैं समग्र श्रमण संघ से विनीत भाव से खमतखामणा करता हूँ। सभी मुझे क्षमा करें। करें या ना करें, मैं आप सबसे हृदय से क्षमा मांगता हूँ।

[१०]

(१) **प्रश्न**—क्षमा की महिमा।

क्षमा बड़न को चाहिये, छोटन को उत्पात।
कहा विष्णु को घटि गयो, जो भृगु मारी लात॥

भली-भली सब कोई कहे, भली क्षमा का रूप।
जाकै मन हि क्षमा नहीं, सो बूड़ै भव कूप॥

करगस सम दुर्जन वजन, रहे संतजन टारि।
बिजली पड़े समुद्र में, कहा सकेगी जारि॥

खोद खाद धरती सहै, काटकूट बनराय।
कुटिल वचन साधु सहै, और से सहा न जाय॥

जहाँ दया तहाँ धर्म है, जहाँ लोभ तहाँ पाप।
जहाँ क्रोध तहाँ काल है, जहाँ छिमा तहाँ आप॥

उपर्युक्त दोहों के रचनाकार कौन हैं?

उत्तर—संत कबीरदास।

(२) **प्रश्न**—कपट छोड़ो।

(तर्ज—रिमझिम बरसे बादलवा.......)
दिल सूं कपट हटावो रे, भावां ने शुद्ध बनावो,
फिर थें खमावो आवो फिर थें खमावो॥टेर॥

आज समय की चाल बताऊँसा–बताऊँसा,
दिल में कपट ऊपर से कहे, खमाऊँसा–खमाऊँसा ।
यो कैसो खमावो रे, ज्ञानी कुछ ज्ञान लगावो ।।
दिल ने समझावो........आवो........।

वीर प्रभु संदेश जरा, चित्त लाइए, लाइए,
प्राणी मात्र पर क्षमा भाव, दरसाइए, दरसाइए ।
राग–द्वेष हटावो रे, अवसर यो आछो आयो ।।
इण ने अपनाओ........आवो ।।

उपर्युक्त गीतिका के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—श्री जीतमल चौपड़ा ।

(३) **प्रश्न**—संप कीजिये ।

(तर्ज—चुप–चुप खड़े हो जरूर........)

मेरे मित्रो ! फूट को विदा कर दीजिये ।
अब प्रेम कीजिए जी, अब प्रेम कीजिए ।।

मोर नृत्य करके पैर को निहारता ।
अपनी कुरूपता पै चार आँसू डालता ।।

लड़ चुके खूब अब संप कर लीजिए........।

सच बोलो कब तक ऐसे बने रहोगे ?
कब तक इसी तरह तने–तने रहोगे ?

तानने से टूटती है, तान मत कीजिये........।

उपर्युक्त स्तवन के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—उपध्याय श्री केवलमुनि ।

[११]

(१) **प्रश्न**—क्षमा के अभाव में मनुष्य के मन एवं शरीर पर क्या असर पड़ता है ?

उत्तर—क्षमा के अभाव में मनुष्य का मन व्याकुल रहता है, उसकी निद्रा विलुप्त हो जाती है तथा उसे शय्या पर शूल चुभते हुए प्रतीत होते हैं । अहंकार

मनुष्य को क्षमा से दूर हटाकर, उसे कठोर बना देता है तथा उसके मस्तिष्क में दूषित संस्कार उत्पन्न कर देता है, जो उसके शरीर और मन को दुर्बल एवं जर्जर करते रहते हैं। क्षमा के अभाव में उत्पन्न कुण्ठाएँ मनुष्य में अनेक स्नायविक एवं शारीरिक रोगों को जन्म देती हैं। क्षमा रहित मन अपराधी तथा भीरू होकर मनुष्य की उन्नति में बाधक बनता है।

(२) **प्रश्न**—क्षमा की कसौटी क्या है?

उत्तर—सहनशीलता।

(३) **प्रश्न**—गौतम स्वामी ने भगवान् महावीर से पूछा कि प्रभु! क्षमा धारण करने से क्या लाभ होता है? इस पर भगवान् महावीर ने क्या उत्तर दिया?

उत्तर—"खंतिएणं जीवे परिषह जणयइ।"

अर्थात् क्षमा से प्राणी परिषह को जीत लेता है।

[१२]

(१) **प्रश्न**—भारतीय इतिहास में एक ऐसे हिन्दू राजा का वर्णन आता है, जिसने अपने शत्रु को, १७ बार पराजित किया और बन्दी बनाया, लेकिन उसके अपराधों को क्षमा कर दिया और हर बार उसे मुक्त कर दिया।

उस क्षमाशील राज्य नरेश का नाम बताइये?

उत्तर—"पृथ्वीराज चौहान।"

(२) **प्रश्न**—मुनियों के दस धर्मों में क्षमा कौनसा धर्म है?

उत्तर—प्रथम।

(३) **प्रश्न**—क्षमा का द्वार कब खुलता है?

उत्तर—जब अहं गलता है, तब क्षमा का द्वार खुलता है।

—P. M. CHORDIA & Co., Chartered Accountants,
89, Audiappa Naicken St., MADRAS-600 079.
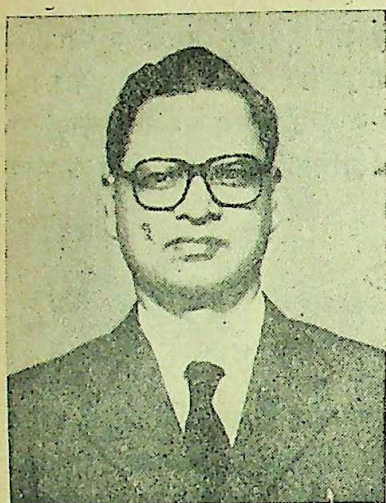
प्रबुद्ध विचारक श्री पी. एम. चौरड़िया

□ श्री चंचलमल चौरड़िया

सादा जीवन उच्च विचारों के धनी प्रबुद्ध विचारक लेखक, प्रखर वक्ता, सरल स्वभावी, समन्वय की भावना से ओतप्रोत प्रमुख समाज सेवी, उदार हृदयी एवं प्रश्न मंच कार्यक्रम के सफल संचालक, स्वाध्यायी श्री प्रकाशमल चौरड़िया, मद्रास जैन समाज में अपना विशिष्ट स्थान रखते हैं।

आपका जन्म जोधपुर शहर में १७ अगस्त, १९३९ में हुआ। आप स्वर्गीय श्री कल्याणमलजी चौरड़िया के सुपुत्र एवं विशिष्ट श्रावक श्री कनकमलजी चौरड़िया के लघुभ्राता एवं मेरे बड़े भ्राता हैं।

बचपन से ही माता-पिता के सुसंस्कार मिलने से ज्ञानार्जन एवं समाज-सेवा में आपकी रुचि पैदा हो गई, परिणामस्वरूप बाल्यकाल में ही प्रतिक्रमण एवं पच्चीस बोल कंठस्थ हो गये। व्यावहारिक शिक्षण में आपने सी० ए० (चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट्स) करके वर्तमान में 'पी० एम० चौरड़िया एण्ड कम्पनी' नाम से मद्रास में कर-सलाहकार का कार्य कर रहे हैं। समाज सेवा में रुचि होने से आपने मद्रास में संचालित एस० एस० जैन युवक संघ, श्री गणेशीबाई गेलड़ा हायर सैकण्ड्री स्कूल, श्री एस० एस० जैन कन्या विद्यालय, श्री एस० एस० जैन महिला विद्या संघ, स्वाध्यायी समिति, इण्डियन वेजीटेरियन कांग्रेस आदि संस्थाओं के प्रमुख पदों पर अनेक वर्षों तक कार्य किया। साथ ही आप 'दी राजस्थान यूथ एसोसिएशन', 'दी जैन एज्यूकेशनल सोसायटी', 'दी जैन मेडिकल रिलिफ सोसायटी', 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा', 'भगवान् महावीर अहिंसा प्रचार संघ', 'रिसर्च फाऊण्डेशन फॉर जैनोलोजी', 'भारतीय विद्या भवन तमिलनाडु ब्रांच', 'एस० एस० जैन संघ मद्रास', 'श्री राजस्थानी श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन एसोसिएशन मद्रास', एनीमल वेलफेयर बोर्ड, एसोसिएशन ऑफ मोरल एण्ड सोशियल हाइजिन इन इण्डिया, श्री वर्द्धमान जैन सेवा समिति, श्री

बाल निकेतन, जोधपुर, अखिल भारतीय एस० एस० जैन कान्फ्रेन्स न्यू दिल्ली, भारत जैन महामण्डल बम्बई, अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद्, जयपुर आदि संस्थाओं के सदस्य हैं।

मद्रास में आपका अच्छा वर्चस्व एवं प्रभाव है। सामाजिक कार्यों को आप भार नहीं समझते, अपितु कर्तव्य समझ कर करते हैं। वृद्धों एवं युवकों को साथ लेकर सभी की भावनाओं को ध्यान में रख, युवकों में विशेष धर्म रुचि जागृत करने के उद्देश्य से गत तीन वर्षों से प्रश्नमंच कार्यक्रम की रूपरेखा बनाई एवं आज तक उसका सफल संचालन कर रहे हैं। साथ ही आपकी ज्योतिष में अच्छी रुचि है एवं हस्तरेखा विशेषज्ञ आपसे परामर्श करते हैं।

लगभग २०० धार्मिक ट्रस्टों की स्थापना करके आपने सैकड़ों परिवारों की आय को सुकृत कार्यों में लगाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया है।

आपने अपने मौलिक चिन्तन से दो पुस्तकें (१) क्षमा व (२) मृत्युचिंतन लिखी हैं जिनका प्रकाशन अ० भा० जैन विद्वत् परिषद्, जयपुर द्वारा किया जा चुका है। 'जिनवाणी' पत्रिका जयपुर में ३३ प्रश्नमंच अब तक प्रकाशित हो चुके हैं।

आज के भौतिकवादी युग में युवा एवं शिक्षित वर्ग को धर्माभिमुख करने में आपकी विशेष प्रेरणा रही है आप जहाँ भी जाते हैं अपने ज्ञान व प्रवचन शैली की अनुपम छाप वहाँ अवश्य छोड़ते हैं। पर्युषण पर्व में पिछले ११ वर्षों से टिण्डीवनम्, चिंचवड, वरोरा, विजयवाड़ा, जबलपुर, चालिसगाँव, ब्रजराज नगर, भोपाल आदि क्षेत्रों में आपने अपनी सेवायें प्रदान की हैं। आपका नवीन चिंतन युवापीढ़ी के लिए प्रेरणादायक सिद्ध हुआ है।

आप दीर्घायु हों, चिरायु हों, शतायु हों ताकि संघ एवं समाज आपके नवीन मौलिक एवं व्यावहारिक चिंतन से अधिकाधिक लाभान्वित हो सके, इसी मंगल मनीषा के साथ—

—सचिव, स्वाध्याय संचालन समिति, जोधपुर

साधुओं की तरह गृहस्थी भी स्वाध्याय करके अन्य गृहस्थों का उपकार कर सकता है, उन्हें ज्ञान की भगवद् वाणी की बातें सिखा सकता है, समझा सकता है।

—आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा.

प्रेरक व्यक्तित्व :
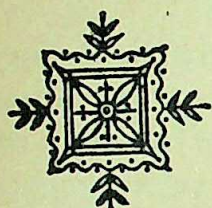
आदर्श सुश्राविका श्रीमती धनदेवी मेहता

□ श्री सूरजमल मेहता

धर्मपरायणा, सुश्राविका श्रीमती धनदेवी पत्नी स्व० श्री उमरावसिंहजी जौहरी, माता श्री सूरजमल मेहता अलवर एवं सांसारिक दादी श्री प्रमोद मुनि जी म० सा० का ८९ वर्ष की अवस्था में संथारा सहित दिनांक ९ जून, ८९ को स्वर्गवास हो गया।

श्रीमती धनदेवी का जन्म अजमेर में हुआ। आपके पिता धर्मनिष्ठ सुश्रावक स्व० श्री जोरावरमलजी चोरड़िया एवं माता श्रीमती तेजकंवर बाई थीं। पुत्री के जन्म के साथ ही डरबी की लाटरी से विपुल धनराशि प्राप्त होने के कारण आपका नाम धनदेवी रखा गया। माता-पिता की धार्मिक प्रवृत्ति होने से तथा इनकी मौसी श्री राजकंवरजी के दीक्षित होने के कारण इनके जीवन में भी धार्मिक संस्कार पल्लवित होने लगे। आपका पाणिग्रहण श्री उमरावसिंह जी वैद मेहता अलवर वालों के साथ हुआ। श्री उमरावसिंहजी देहली में जवाह-रात का व्यवसाय किया करते थे एवं देहली में आप उच्चकोटि के जौहरी गिने जाते थे। आप बड़े प्रभावशाली थे, साथ ही धर्म की जानकारी भी आपको इतनी उच्चकोटि की थी कि साधु-साध्वी भी आपको आदर की दृष्टि से देखते थे। धार्मिक क्षेत्र में आपकी जानकारी एवं साधु-संतों की सेवा के कारण श्रीमती धनदेवी भी धर्मनिष्ठ सुश्राविका बन गईं।

श्री १००८ श्री आचार्य हस्तीमलजी म० सा० के प्रति आपकी अनन्य श्रद्धा एवं भक्ति थी, जिनके दर्शन एवं सेवा का समय-समय पर लाभ लेती रहीं। ४२ वर्ष की अल्पायु में ही आपको पति वियोग का दारुण दुःख देखना पड़ा किन्तु आपने इस असह्य दुःख को बड़े धैर्य एवं साहस के साथ सहन किया। आपके कोई सन्तान नहीं थी अतः श्री उमरावसिंहजी सा० के शान्त होने पर आपकी माताजी ने आपसे घर उठाकर अजमेर चलने को कहा, जिसके लिए आपने इन्कार कर दिया, जिससे मालूम होता है कि आपमें निर्भीकता एवं स्वाभिमानता का कितना महान् गुण था। इस दुःख की बेला में इनके जीजाजी श्रीमान् पूनमचन्द जी सा० डागा भोपाल तथा जीजी श्रीमती सूलकंवर बाई का पूरा सहयोग रहा

जिन्होंने इनकी सेवा में रहने के लिए पहले अपने सुपुत्र श्री सज्जनसिंहजी डागा को तथा उनके स्थान पर बाद में श्री सूरजमल डागा उम्र १२ वर्ष को इनके पास छोड़ दिया तथा सन् १९४७ में इन्हें गोद भी दे दिया, जिसकी शिक्षा, विवाह आदि सब इनके द्वारा ही सम्पन्न हुए ।

सामायिक के साथ स्वाध्याय की भी आपको विशेष रुचि थी । ८९ वर्ष की अवस्था में भी आप शास्त्र तथा धार्मिक पुस्तकें पढ़ लेती थीं । वर्षों से आप रात्रि का चौविहार किया करती थीं । साधु-साध्वियों की सेवा की भावना भी आपमें कूट-कूट कर भरी हुई थी, यहाँ तक कि विहार में आप अनेकों बार अलवर से देहली, जयपुर, अजमेर आदि स्थानों तक साध्वियों के साथ जाया करती थीं ।

आपका जीवन सात्विकता से इतना ओतप्रोत था कि गत ४५ वर्ष की अवधि में आपको किसी प्रकार का कोई रोग नहीं हुआ । क्षमा का गुण आपके जीवन में विशेष रूप से इतना उतर चुका था कि चाहे आपको कोई कुछ भी कह देता, तब भी आप बड़े शान्तभाव से उसे सुन लेतीं, सामने वालों को कुछ प्रत्युत्तर तक नहीं देतीं । जीवन के अन्तिम दिनों में आपको पक्षाघात हुआ अवश्य, किन्तु उस वेदना को आपने जिस समभाव-समाधि के साथ सहन किया, वह आश्चर्यचकित करने वाली थी । पारिवारिक जन अथवा अन्य कोई भी व्यक्ति जब आपकी सुख-शांति की पृच्छा करता तो आपका सहज यही जवाब होता कि "मैं अच्छी हूँ, मुझे कोई तकलीफ नहीं है, मुझे साता है ।" वेदना को समभाव से सहते हुए ९ जून, १९८९ को प्रातः ११.३० बजे संथारापूर्वक आपने अपने प्राण त्याग दिये । आप अपने पीछे भरा पूरा परिवार छोड़कर गई हैं । जिस समय आपने प्राण त्याग किये जब से मध्याह्न ३.३० बजे तक धूप में काफी तेजी थी, किन्तु जब आपकी महाप्रयाण यात्रा प्रारम्भ हुई, तब तेज धूप के स्थान पर आकाश मेघाच्छादित होने लगा और ठण्डी हवा के साथ हल्की सी बून्दाबान्दी भी हुई, जिससे सभी लोग कह उठे "महान् धर्मात्मा एवं पुण्यशाली आत्मा का पार्थिव शरीर जा रहा है, जिसने अपने जीवन काल में ही नहीं, मरणोपरान्त भी किसी को कोई कष्ट नहीं पहुँचाया ।" ऐसी धर्मनिष्ठ सुश्राविका के निधन से न केवल अलवर की अपितु भारत भर की महिलाओं के बीच से एक ऐसी निर्भीक, स्वावलम्बी एवं धर्मपरायणा महिला उठ गई है जिसकी क्षतिपूर्ति निकट भविष्य में होना सम्भव नहीं है ।

—छाजूसिंह के दरवाजे के सामने, अलवर

○ ○ ○

PRINCIPLES OF JAINISM*

☐ Brahmachari Sital Prasad

(1) This universe is eternal without beginning and end. It is nothing but the sum-total of substances which have been existing always and will go on existing for ever. No substance is created and no substance is destroyed. Only there are modifications of substances. These modifications take birth and cease to be. An old one dies; and a new one is born, e. g., a human soul loses boyhood, and acquires youth or old age. When old age is born, boyhood dies. Or a gold bangle is broken to be made into a ring.

(2) All the substances of this universe are primarily Living (Jivas) and non-living Animal.

Broadly speaking, life is that which has consciousness. All else is life-less, unconscious. non-living, non-soul.

(3) Non-living substances are of five kinds. They are—(1) Matter in forms of atoms and molecules—Pudgala (2) Space—Ākāśa, (3) Time—Kāla, (4) Medium of motion—Dharmāstikāya, (5) Medium of rest—Adharmāstikāya.

Thus, in all, there are six kinds of substances of which this universe is composed.

(1) The conscious immaterial substance is soul. There are infinite souls.

(2) Matter is material, possessed of touch, taste, smell and colour. Its atoms and molecules are numerable, innumerable, and infinite in number.

(3) Space is one grand infinite immaterial substance. It gives space to all other five substances.

(4) Time is an immaterial substance which is an auxiliary cause in bringing about modifications of and in all the substances.

*Shri L. C. Jain Published this article in 1925.

The number of time-units or instants or time atoms (Kalānus) is innumerable. Each Time-atom occupies one point of space, thus the space of universe, which has innumerable spatial points, is covered entirely by time atoms.

(5) The medium of motion is one immaterial substance. It is co-extensive with the universe and is an auxiliary cause for the motion of souls and matter.

(6) The medium of rest is one immaterial substance. It is co-extensive with the universe and is an auxiliary cause for the rest of souls and matter.

Only two substances, soul and matter, are the chief actors and perform mainly four actions i. e., they occupy space, undergo change, and are at motion or at rest. Every action must have two causes, one principal primary or root-cause, and the other the auxiliary cause. The primary and essential cause of a gold-ring, is the gold of which it is made : but the auxiliary or secondary causes are several e. g., fire, the goldsmith's tools, etc., etc. So the primary causes of these above four actions of soul and matter are the soul and matter themselves, but the auxiliary causes are the above said four immaterial substances. Thus this universe is composed of six real, uncreated substances (Dravyas), and all the manifestations of this universe are due to modifications of soul and matter with the help of the other four substances.

(4) Jaina philosophy deals with seven principles Tattvas. They are :—(1) Soul (Jiva) (2) Non-soul (Ajiva) of this, ordinary matter is an obvious example; and Karmic matter; the finest form of fine invisible matter, is of the utmost significance in life; (3) Inflow of Karmic matter into soul—(Āsrava), (4) Bondage of soul by Karmic matter, or rather union with and assimiliation of the new inflowing Karmic matter by the old Karmic matter with which the embodied soul is already in combination—(Bandha), (5) checking of inflow. (Samvara). (6) shedding off of Karmic matter already bound with the soul—(Nirjarā), (7) Liberation, final and complete separation of all kind of matter from the soul.—(Môkṡa).

The two categories, soul and non-soul, include all the six substances (Dravyas). The embodied souls are in combination with matter. They are impure and transmigrating in many different mundane exis-

tences from eternity. They have got a fine Karmic body—a body of meritorious and de-meritorious Karmic matter; in which every moment new Karmic molecules inflow and the old ones are cast off. Thus though these molecules inhere in the soul only for a limited time, yet they always keep the soul in an impure condition, until it gets totally rid of that fine body by its practice of self-realisation and self-concentration.

Inflow—Coming in of Karmic molecules by the activity of mind, body and speech. Activity of a good kind attracts meritorious, while activity of a bad kind attracts demeritorious Karmic matter.

Bondage—The union of Karmic matter with soul. It lasts for a limited time according to the intensity of passions, present at the time of inflow. During this time of union, the Karmic matter produces good or bad effects and having borne its proper fruit falls off gradually; just as food and medicine once taken in, produce effects for sometime, till their full matter has gone out of the body gradually.

Checking—It is to prevent inflow of Karmic matter by control of mind, body and speech. Checking of wrong activity will not bring Karmic matter which would have come through that wrong activity. Desires of sense, pleasures and passions of anger, pride, deceit and greed produce the evil results of injury (Himsā), lie, (Asatya), theft (Steya), unchastity (Abrahmacharya), and attachment (Parigraha) which bring de-meritorious Karmic matter. Control of all these will check such matter from inflowing into the soul.

Shedding off.—Getting rid of the Karmic matter which is bound to the soul, before its maturing and falling off after fruition. This shedding is a kind of artificial and prematuring fruition of Karmas. It is achieved by means of desirelessness and penances producing Pure Self-realisation and concentration.

Liberation.—Total freedom from all Karmic matter. Thus the soul reaching a pure and blissful state of Grand Soul for ever remains pure and absorbed in its own true and perfect nature of all-knowledge, all perception, infinite power, and infinite bliss etc.

(5) Way to liberation is the threefold path of Right Belief (Samyak-darśana), Right Knowledge (Samyakjnana), Right Conduct (Samyak-chāritra).

Thse three are called the three jewels (Trayi rata) of Jainism.

There are two points of lôoking at things; one real and the other practical. The latter is an auxiliary cause for the real. They are called Niśchaya and Vyavahāra nayas or points of view. From the practical points of view; right belief of one's own soul's true and real pure nature is real right belief. Knowledge of the above seven prin-clples is practical right knowledge. Knowledge of the true real, and pure nature of one's own soul is real right knowledge. Due obser-vance of five vows of non-injury (Ahinsā), truthfulness (Satya), non-theft (Achourya), chastity (Brahmcharya) and non-attachment (Aparigraha) is practical right conduct.

When perfect real conduct with perfect knowledge and perfect pure belief accrues, the soul is liberated and is then called Parmātmā, God, Iśwara and Siddha.

(6) Practical right conduct is of two kinds; one for laymen and the other for the saints. The latter is the direct cause of liberation.

Saints follow in full the above said five vows of non-injury etc. They therefore give up all their possessions, become simple like little children without clothes, eat once a day by going to the house of a pious layman and pass their time in self-meditation in lonely places, reading pure sacred books and preaching to the world the doctrines of the Jinas, the Conquerors of Karmic effects. They have control over their desires and passions.

Laymen follow the above said five vows partially only. They gradually improve their pursuit of the vows, till they also become Saints. An ordinary layman of the lowest degree should follow the five vows in the following manner.

(1) He should not uselessly injure any living being. Useless injury is due to wrong belief as to animal sacrifice, flesh eating, hunting, cruel sport, fashions in leather, fur, plumage, skins, bones etc., etc. As a means of livelihood, he can pursue the profession of a soldier, banker, agriculturist, trader, merchant, servant. Although he cannot avoid some injury (Himsā) incidental to the above occupations, yet he should be careful to avoid it as much as possible in these, as also in cooking, walking, speaking, respiration, and other essential acts of

human life as an individual and as a member of society. He should not eat meat, honey or such things as involve destruction of animal life, and should not drink intoxicating liquors.

(2) He should speak truth. not cheat others by false speech and actions.

(3) He should not take what is not given. Only common things such as water(things which are owned by no one) etc., may be taken freely.

(4) He should be content with his own wife.

(5) He should put a limit to his property. He may have a desire of lacs, but it should be limited to some extent. Limitless ambition is Greed. Gambling is also prohibited to a layman. He should drink clean water free from all taint of animal life and try to confine taking food between sunrise and sunset. There are eleven stages for a layman to rise in his performance of the five vows. After passing them, the layman becomes a saint.

(6) Real right conduct i. e., self–realisation is acquired by Saints and laymen by following their respective six essential daily duties.

The six essential daily duties for the saints are :—

Equañimity i. e., the condition of mind free from worldly love and hatred, penitence for past faults, intention not to commit faults in future, raising the Holy Persons, bowing to the Holy Ones, and renunciation of bodily attachment.

The six essential duties of the laymen are :—

(1) Worship of the Holy Ones—tl. conquerors of Karmas—by their name and representations, and by presents and by praising their spiritual qualities.

The idols of Arhats represent the feature of self-contemplation thus impressing on the worshipper's mind the pure nature of the Self.

(2) Service to the Preceptors and listening to their preachings.

(3) Reading Holy Books.

(4) Some minor vows for control of mind and seases such as:— To-day I shall refrain from going to the theatre : I shall have only two meals during the day : shall not take anything sweet; shall not use scents; etc., etc. These are small self-denials to strengthen self control and to speed one on to the realisation of self-absorption.

(5) Contemplation—i. e. Twice a day, morning and evening or only once, sitting in a lonely place and meditating upon the nature of Holy Ones, or one's own soul, thereby acquiring equanimity by renouncing attachment and hatred to worldly things during the time devoted to contemplation.

(6) Charity—Practise charity of food, medicine, knowledge and fearlessness.

The six daily duties induce pare thought in Saints and laymen and enable them to reach Self-absorption—a state where real right belief, right knowledgc and right conduct are present in one interfused condition.—It is the path of shedding off much Karmic dirt and making the soul pure and free.

Jainas recite the following incantation mantra in all their religious duties—It consists of 35 letters in Prakrit; its occult significance also is great if it is understood perfectly—and intelligently.

I Namo Arhantānam.—I salute the Worshipful, the Conquerors of four soul-destructive Karmas : viz. knowledge-obscuring, conation-obscuring, deluding and obstractive Karmas and the Possessors of Infinite knowledge, Infinite Conation. Infinite Bliss and Infinite Power, having a pure body and discoursing to the public on tenets and glory of true religion and eternal truth.

II. Namo Siddhānam.—I salute the Perfect Pure souls free from body and all Karmic dirt, enjoying true natural bliss and knowledge etc.

III. Namo Ayiriyanam.—I salute the Saints who are the Leaders of the groups of Saints, following the three-jewels-path to Liberation,

IV. Ñamo Uvajjhāyānam.—I salute the Saints who are the teachers of scriptures to others for acquiring the path of the three jewels.

V. Namo Loey Savva Sahunam.—I salute all the Saints wherever found in the universe on the path of Salvation.

This mantra is helpful in acquiring Pure thought-activity.

Note.—In brief these essential Jaina principles. Jainism puts all responsibility upon the embodied soul for his advancement or degeneration or rise of fall in life. By observing right rules of life he can improve himself. This improvement means enjoyment of True bliss, increase of Soul-Power, equanimous spirit in adversity and lessening of the burden of de-meritorious Karmas. It puts the soul in favourable and good circumstances here and in after life. The Jainas worship all who have become Pure and Perfect, for the sake of putting an ideal before their minds and following it.

The Bright Beacon-light and Pole-stars of spirituality in this cycle of time are the 24 Great Proclaimers of Truth or Tirthankaras who flourished at different intervals of time. The first was Rishabhadeva, second was Ajitnatha, the 8th was Chandraprabha, the 16th was Shantinātha. the 20th was Munisuvratanatha, 22nd was Neminātha the contemporary of Krishna, Baldeva and the Pandavas and the cousin of Shri Krishna, 23rd was Parasanātha, 2800 years ago, and the 24th was Mahāvira 2500 years ago.

★ Courtesy : Shri Vipin Jaroli
Jawahar Vidhyapeeth, Kanore (Udaipur) Raj.

कवित्त

☐ छंदराज 'पारदर्शी'

जैसा हम चाहते हैं, वैसा दूसरों का सोचें,
जीओ और जीने दो में, सभी धर्म सार है।
राम-कृष्ण-महावीर, ईसा-मूसा-गॉड-पीर,
नाना रूप धार-धार आते अवतार हैं।
अन्याय के मुकाबिल, लड़ें सब हिलमिल,
सत्य की विजय होती, मानता संसार है।
'पारदर्शी' गृहस्थी को, एक पाठशाला मान,
बोयेगा तू जैसा प्राणी, फल वो तैयार है।

२६१, तावांवती मार्ग, उदयपुर-३१३००१

बाल कथामृत* (७१)

☐ १८ वर्ष तक के बच्चे इस कहानी को पढ़कर प्रश्नों के उत्तर १५ दिन में "जिनवाणी" कार्यालय को भेजें। उत्तरदाताओं के नाम पत्रिका में छापे जायेंगे। प्रथम, द्वितीय व तृतीय आने वालों को क्रमशः २५, २० व १५ रुपयों की उपहार राशि भेजी जायेगी। श्री राजेन्द्रप्रसादजी जैन, एडवोकेट भवानीमंडी की ओर से उनकी माताजी की पुण्य स्मृति में ११ रुपये का 'श्रीमती बसन्तबाई स्मृति पुरस्कार' चतुर्थ आने वाले को दिया जायेगा। प्रोत्साहन पुरस्कार स्वरूप १० बच्चों तक को "जिनवाणी" का सम्बद्ध अंक निःशुल्क भेजा जायेगा।

—सम्पादक

'महाभारत' का मर्म

☐ श्रीमती गिरिजा 'सुधा'

संस्कृत और तमिल भाषा के प्रकांड पंडित श्री विल्लिपुत्तुरार आशु कवि थे। जन-मन को छूने वाली उनकी काव्य कल्पना की वजह से लोग उनका बहुत ही आदर करते थे। अनेक ग्रन्थों का सरस काव्यमय अनुवाद करके उन्होंने साहित्य पारखियों से पर्याप्त प्रशंसा पाई थी।

उनके पिता की मृत्यु के बाद उनमें और उनके छोटे भाई में पुश्तैनी जायदाद के बंटवारे को लेकर मनमुटाव हो गया। कई लोगों ने बीच में आकर बंटवारा करना चाहा, पर दोनों ही उस बंटवारे की हिस्सेबाजी में अपने आपको घाटे में ही पाते। इधर बंटवारा नहीं हो पाया तो एक दिन दोनों ने ही निर्णय किया कि हम विल्लिपुत्तर के नरेश के सामने अपना प्रकरण पेश करें ताकि वे फैसला कर दें। वे जो भी बंटवारा करेंगे वह दोनों को ही स्वीकार होगा।

* श्री राजीव भानावत द्वारा सम्पादित—परीक्षित स्तम्भ।

एक दिन कविवर विल्लिपुत्तुरार राजा के पास गये। राजा ने पूछा—"कविवर ! आपने आज कैसे यहाँ पधारने की कृपा की ?"

तब कवि ने बंटवारे की बात कहते हुए सारी स्थिति की विस्तृत जानकारी दी। राजा को आश्चर्य हुआ। वे इस बात पर चकित थे कि ऐसा सहृदय भाई कवि भी भाई से बंटवारे की शिकायत लेकर आया है, जिसकी कविता से न जाने कितनों की जीवनधारा, सोचने की शैली बदल डाली। वे बोले—"कविवर, इस समस्या का हम उचित समाधान अवश्य ही करेंगे, किन्तु इससे पहले आपको इस मुकदमे की फीस चुकानी होगी ?"

"वह फीस क्या होगी, अन्नदाता ?"

"अरे, फीस क्या होगी, जो भी सोची है वह आपकी गरिमा के अनुरूप है। आप महर्षि वेदव्यास कृत 'महाभारत' नाम के संस्कृत भाषा में लिखे बड़े ग्रंथ का काव्यमय अनुवाद कर दीजिये। यह अनुवाद पूरा होते ही आपकी जायदाद के बंटवारे का फैसला भी हो ही जायेगा।"

उन्होंने अनुवाद कार्य शुरू कर दिया। बड़े सुन्दर गेय पदों में महाभारत की अनूदित काव्य रचना पूरी हुई तो उनके मन में एक सवाल उभरा। यह सवाल बार-बार उनको परेशान करने लगा। वे सोचने लगे थे कि विश्व में अनेक श्रेष्ठ ग्रन्थों का अम्बार लगा है। जब मैं अपने छोटे भाई के विरुद्ध जायदाद के बंटवारे का मुकदमा ले कर न्याय करवाने उनके पास गया तो महाराजा ने 'महाभारत' के ही काव्यमय अनुवाद का काम क्यों सौंपा !

जब यह सवाल बार-बार मस्तिष्क में आया तो स्वयं उन्होंने ही इसका समाधान भी कर लिया कि 'महाभारत' का काव्यमय अनुवाद कराने का नरेश का उद्देश्य यही रहा है कि मेरे मन से मेरे भाई के प्रति उत्पन्न कड़वाहट दूर हो जाये। यदि ऐसा न हुआ तो एक और छोटा 'महाभारत' मेरे घर में ही रचे जाने की हालत बन जायेगी।

यह विचार जब तरह-तरह से बार-बार आने लगा तो वे तुरन्त अपने छोटे भाई के पास गये और उसे और उसकी पत्नी को स्नेह से अपने पास बैठाया और बोले—"अरे, हम लोग भी क्या जरा सी जायदाद के लिये कुल की इज्जत, परिवार की प्रतिष्ठा दाँव पर लगा रहे हैं। पिताजी की जायदाद में तुम्हें जो भी कुछ चाहिये उतना तुम प्रेमपूर्वक ले लो। जो बचे, वह मुझको दे दो। तुम्हें उचित हिस्सा पाते देख मुझे बहुत ही प्रसन्नता होगी। न्याय महाराजा या कोई न्यायाधीश या पंच नहीं, मेरा अपना सगा भाई और बेटी जैसी बहू करेंगे।"

इतना सुन कर दोनों द्रवित हो उठे। भाई की पत्नी बोली—"आप तो हमारे लिये पिता तुल्य हैं। गलती तो हमारी अपनी ही थी कि जायदाद के बंटवारे की बात की और घर की इज्जत राजा के दरबार तक ले गये। आप पहले अपना हिस्सा ले लें। जो भी शेष रहेगा, वह हम स्वीकार कर लेंगे। आप बड़े हैं, अपना बड़प्पन कम करने का पाप हमें मत करने दीजिये।"

बंटवारे के नाम पर दोनों भाइयों के प्रेम में पड़ी दरार अब मिट गयी थी। दोनों ने प्रेम से मिल कर सारी जायदाद का उचित बंटवारा कर लिया। सांप भी मर गया और लाठी भी नहीं टूटी।

कवि विल्लिपुत्तुरार जब 'महाभारत' का काव्यानुवाद महाराजा के पास लेकर गये तो वे बोले—"महाराज! इस काव्यानुवाद के कार्य ने तो हमें अग्रिम रायल्टी प्रदान कर दी है।"

"कैसे कविवर?"

"हुआ यह कि अनुवाद के दौरान ही मेरी चिंतन-दृष्टि बदल गयी। हम दोनों भाइयों की बातें हुईं। बातों ही बातों में एकता, प्रेम, एक दूसरे की भावना की रक्षा और सहमति के प्रति नई दृष्टि मिली है।"

"हाँ, मेरा उद्देश्य भी यही था कि कविवर अपने काव्य की प्रेरणा से खुद भी तो लाभ उठावें। मुझे खुशी है कि आपने 'महाभारत' के मर्म को न केवल पढ़ा, अनुवाद किया बल्कि उसका उपयोग भी किया। ज्ञान वही सार्थक है, जो जीवन को जीने योग्य बनाने में मदद करे।"

—बी-११६, विजय पथ, तिलक नगर, जयपुर-३०२ ००४

अभ्यास के लिए प्रश्न

उपर्युक्त कहानी को पढ़कर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

१. कवि विल्लिपुत्तुरार और उनके छोटे भाई में मनमुटाव का कारण क्या था?

२. राजा ने कवि से फीस के रूप में 'महाभारत' का काव्यमय अनुवाद करने की बात क्यों कही?

३. काव्य-अनुवाद पूरा होने पर कवि के मन में क्या सवाल उठा?

४. 'बंटवारे के नाम पर दोनों भाइयों के प्रेम में पड़ी दरार अब मिट गयी थी।' यह दरार कैसे मिटी?

५. 'महाभारत' के काव्यानुवाद ने कवि को अग्रिम रायल्टी किस रूप में प्रदान कर दी ?

६. संस्कृत में 'महाभारत' की रचना किसने की ? यह युद्ध किन-किन के बीच हुआ और उसका क्या परिणाम रहा ?

७. युद्ध से होने वाली हानियों पर १० पंक्तियाँ लिखिए ।

८. 'ज्ञान वही सार्थक है जो जीवन को जीने योग्य बनाने में मदद करे ।' इस कथन में निहित भाव को स्पष्ट कीजिए ।

९. आप कोई ऐसा घटना-प्रसंग लिखिए जिसमें न्यायालय से मुकदमा हटाकर आपसी प्रेम-व्यवहार और बातचीत द्वारा सुलह की गई हो ।

'जिनवाणी' के जून, १९८९ के अंक में प्रकाशित श्री बलवन्तसिंह हाड़ा की कहानी **'सन्तोषी सदा सुखी'** (६९) के उत्तर जिन बाल पाठकों से प्राप्त हुए हैं, उन सभी को बधाई ।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं के नाम

प्रथम—श्री सुनीलकुमार भाटी, द्वारा श्री लक्ष्मीनारायणजी भाटी, रेलवे फाटक बाहर, पुलिस चौकी के पास, **चौमहल्ला** (जि. झालावाड़) ।

द्वितीय—सुश्री ब्रजेशकुमारी भाटी, द्वारा श्री लक्ष्मीनारायणजी भाटी, रेलवे फाटक बाहर, पुलिस चौकी के पास, **चौमहल्ला** (जि. झालावाड़) ।

तृतीय—श्री विमलेशकुमार जैन, द्वारा जैन स्टडी सर्कल, बोथरा हाउसेज, पो. **नागौर–३४१ ००१** ।

चतुर्थ—सुश्री पिंकी जैन, द्वारा श्री बाबूलाल जैन, घोड़ी बावड़ी के सामने, **आलनपुर, सवाईमाधोपुर** ।

प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त उत्तरदाता

जिन्हें अगस्त, १९८९ की 'जिनवाणी' उपहार स्वरूप भेजी जा रही है—

१. श्री सुरेशकुमार जैन, द्वारा श्री सम्पतराजजी बोथरा, गांधीबाड़ी, **नागौर–३४१ ००१** ।

२. श्री चंचल जैन, द्वारा बॉम्बे ड्रेसेज, जैन मार्केट, पो. **बल्लारी–५८३ १०१** (कर्नाटक) ।

३. सुश्री सुजाता जैन, द्वारा श्री महावीरप्रसादजी जैन, महावीर आयरन एण्ड टिम्बर मर्चेन्ट, बैंक ऑफ बड़ौदा के सामने, **बजरिया, सवाईमाधोपुर।**

अन्य उत्तरदाता

गंगापुर सिटी से अरविन्दकुमार जैन, नवीनकुमार जैन, वीरेन्द्रकुमार जैन, **भदेसर** से महावीर जैन, **बालेसर** से संजय चौपड़ा, **जोधपुर** से नेमीचन्द रांका, बसन्त डोसी, मनोजकुमार एस. जैन, **कोसाणा** से ज्ञानचन्द बाघमार, **आलनपुर** से सुनयना जैन, **सिंगोली** से जिनेन्द्रकुमार, **जामनेर** से दिनेशकुमार बी. डांगी, **श्रीपुर** से आर. सी. पार्टे, **बंगलौर** से पूजा आर. कर्णावट, **जलगाँव** से दिनेशकुमार भैरविया, दीपक भैरविया, प्रियंका भैरविया, **डाबला** से सुनीलकुमार बोरदिया, **नागौर** से नवरत्नमल बोथरा, **शोरापुर** से किरणकुमारी सुराणा, मोहिनीकुमारी सुराणा।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं के चुने हुए वे घटना-प्रसंग जिसमें 'सन्तोषी सदा सुखी' की बात है—

[१]

एक बार बुखारा के सुलतान 'नूहीइब्न मंसूर' बीमार पड़ गये। दूर-दूर से उच्चकोटि के हकीम बुलवाकर इलाज करवाया गया पर कोई लाभ न हो सका। एक दिन एक आदमी राजमहल में आया और एक किशोर हकीम के चमत्कारों की कहानी सुनाने लगा। सुलतान मंसूर ने सिपाही भेज कर आदर सहित उस किशोर हकीम को राजमहल में बुलाया और खूब स्वागत किया। उसी दिन से किशोर हकीम, नूहीइब्न मन्सूर की चिकित्सा में लग गया और कुछ ही दिनों में सुलतान मन्सूर ठीक हो गये।

अब किशोर हकीम को इनाम देने की बारी आयी। सुलतान मन्सूर ने उससे कहा—"जो तुम्हारी इच्छा हो, माँगलो। जो माँगोगे, वही मिलेगा। तुमने मुझे मौत के मुँह से निकाल लिया है। मैं तुमसे खुश हूँ।" किशोर हकीम मन से उदार एवम् सन्तोषी थे। उन्हें सुलतान की धन-दौलत का जरा भी मोह या लोभ नहीं था। वे जानते थे कि सुलतान मन्सूर के राज महल में बहुत बड़ा पुस्तकालय है। पुस्तकालय अच्छी-अच्छी पुस्तकों का खजाना है। उन्होंने निवेदन किया—"यदि आप सचमुच मुझ पर प्रसन्न हैं और मुझे कुछ देना चाहते

हैं तो अपने पुस्तकालय की पुस्तकें पढ़ने की स्वीकृति दे दीजिए।" सुलतान उसकी छोटी-सी माँग को सुनकर हैरान रह गये। उन्होंने किशोर हकीम से एक बार फिर कहा—"हकीम! तुमने माँगा ही क्या? कुछ धन-दौलत तो माँगो।" किशोर हकीम ने फिर हाथ जोड़कर विनम्रतापूर्वक कहा—"हुजूर, इस संसार में ज्ञान और संतोष से बढ़कर कोई धन-दौलत नहीं है! मैंने जो कुछ माँगा है वही दीजिए।" यही किशोर हकीम बड़ा होकर "इब्ने सिना" नामक प्रसिद्ध गणितज्ञ एवम् दार्शनिक हुआ।

—सुनीलकुमार भाटी, चौमहल्ला

[२]

बात उस समय की है जब स्वामी विवेकानन्द ने बी. ए. की परीक्षा समाप्त की थी। उन्हीं दिनों उनके पिता की अचानक मृत्यु ने उन्हें विपदाजनक स्थिति में ला पटका। आर्थिक संकट उत्पन्न हो गया और उन्हें कोई काम न मिला। अत्यन्त कातर स्वर में उन्होंने अपनी मनोव्यथा अपने पूज्य गुरु रामकृष्णजी के सम्मुख रखी और याचना युक्त स्वर में बोले—"गुरुदेव, मेरी माता और भाई-बहनों के भरण-पोषण की उचित व्यवस्था के लिए आप माँ काली से प्रार्थना कर दीजिये।" हँसकर श्री रामकृष्ण ने कहा—"तू स्वयं क्यों नहीं माँग लेता? सच्ची निष्ठा से किये गये अनुरोध को माँ काली कभी ठुकराएगी नहीं।" साहसकर विवेकानन्द काली की मूर्ति के सामने खड़े हुए परन्तु उनका मन तो आत्म-सन्तोष से भरपूर था। इसी सन्तोष के वशीभूत होकर उन्होंने काली माँ से केवल ज्ञान, भक्ति और वैराग्य माँगा। श्रीरामकृष्ण परमहंस ने उन्हें तीन बार अन्दर भेजा और तीनों बार वे वही ज्ञान, भक्ति और वैराग्य माँग कर लौट आए। तब श्री रामकृष्ण उनसे बहुत प्रसन्न हुए और बोले कि तेरा मन संतोष से भरा है, इसलिए तेरा कल्याण होगा। कुछ दिन बाद उन्हें ईश्वर चन्द्र विद्यासागर के स्कूल में अध्यापन कार्य मिल गया।

—ब्रजेशकुमारी भाटी, चौमहल्ला

[३]

एक पति पत्नी से कह रहा था कि घर का खर्च दिन पर दिन बढ़ता जा रहा है। लड़कों की शादी करनी है, उनकी पत्नियों के लिए गहनों-कपड़ों का संग्रह करना है। लड़कियाँ शादी के लायक हो गई हैं। इनके लिए वरों की तलाश करनी है। व्यापार में कोई विशेष लाभ नहीं हो रहा है, ऐसी हालत में ये सारे काम कैसे पूरे होंगे, यह सुनकर पत्नी ने कहा कि आपको तो कुछ भी दुःख नहीं है। मेरा दुःख सुनिये। मुझे पन्द्रह लाख रोटियाँ बनानी हैं—पन्द्रह हजार बार घर बुहारना है—पन्द्रह हजार क्विटल पानी खींचना है, पन्द्रह टन गेहूँ बीनना है, पच्चीस टन दालें दलनी हैं। यह सब मैं कैसे करूँगी?

पति ने जवाब दिया—"लेकिन यह सब उसे आज ही नहीं करना है।" पत्नी बोली—"तो आपको कहाँ सारे काम आज करने हैं।" पति यह सुनकर हँस पड़ा। पत्नी ने उसका दुःख मिटा दिया। उसने आगे कहा—जिसका मन-सन्तुष्ट है, उसके लिए सर्वत्र सम्पत्ति और सुख है। जिसके पाँव जूतों में छिपे हैं, उसके लिए सारी पृथ्वी चमड़े से मढ़ी हुई ही है।

—विमलेशकुमार जैन, नागौर

[४]

प्राचीन समय की बात है। एक व्यक्ति सन्त एकनाथ को 'पारस' सौंपकर तीर्थ यात्रा के लिये चला गया। सन्त ने पारस को पांडुरंग के मन्दिर के एक कोने में रख दिया। उनके सेवक उद्धव ने पत्थर समझ कर बासी फूलों के साथ पारस को गोदावरी में डाल दिया। तीर्थ यात्रा से लौटकर उस व्यक्ति ने अपना पारस मांगा। सन्त एकनाथ ने उसे ढूँढ़ा। उद्धव ने कहा कि उसे पत्थर समझ कर मैंने गोदावरी में डाल दिया था। यात्री के साथ सन्त नदी तट पर गये। पानी में हाथ डालकर बहुत से पारस निकाल कर बिखेर दिये और बोले कि जो पारस तुम्हारा हो, उसे ले लो। यात्री ने अपना पारस पहचान कर उठा लिया। शेष पारस पत्थर उठाकर पुनः सन्त ने नदी में डुबो दिये ; कारण पूछने पर उन्होंने बताया कि प्रभु नाम का पारस जब मेरे पास है, तब इन चमकीले पत्थरों का क्या मूल्य ? सन्तोष ही सच्चा पारस है।

—पिंकी जैन, आलनपुर, सवाईमाधोपुर

[५]

एक सेठानी के द्वारा उदासी का कारण पूछे जाने पर सेठजी ने कहा—"आज आय और जमा पूंजी का हिसाब देखने पर पता चला कि इक्कीस पीढ़ियों तक खाने-पीने की व्यवस्था हो चुकी है, परन्तु बाइसवीं पीढ़ी क्या खायेगी ? इस चिन्ता से मेरे चेहरे पर उदासी छा गई है। सेठानी ने कहा कि ब्राह्मणों को भोजन कराना चाहिए, जिससे विशेष पुण्यार्जन हो।

सेठजी ने स्वीकृति दे दी। सेठानी ब्राह्मणों को बुलाने चली गई। आधे घण्टे में लौटकर आई। ब्राह्मण कोई नहीं आया था। सेठानी ने कहा कि जिस ब्राह्मण को बुलाने गयी थी, उसका आज अन्यत्र निमन्त्रण है। सेठजी ने कहा कि उसे कल के लिए आमन्त्रित क्यों नहीं किया ? सेठानी बोली कि मैंने ऐसा कहा था कि कल हमारे घर भोजन के लिए अवश्य पधारें। इस पर ब्राह्मण ने उत्तर दिया—"मैं कल के खाने की चिन्ता नहीं करता।"

तीर ठीक निशाने पर लगा। सेठजी ने समझ लिया कि कहाँ वह ब्राह्मण, जो कल की चिन्ता भी नहीं करता और कहाँ मैं जो बाइसवीं पीढ़ी के खाने की चिन्ता में घुला जा रहा हूँ। तत्काल निश्चिन्त, प्रसन्न और सन्तुष्ट हो गये।

—सुरेशकुमार जैन, नागौर

समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियाँ भेजें :

साहित्य-समीक्षा

□ डॉ० नरेन्द्र भानावत

१, **जिनतत्त्व भाग-३**—डॉ० रमणलाल ची० शाह, प्र० श्री बम्बई जैन युवक संघ, ३८५, सरदार वी० पी० रोड, बम्बई-४००००४, पृ० १८०, मू० २०.०० ।

डॉ० रमण भाई शाह जैन धर्म-दर्शन के प्रखर तत्त्व चिन्तक, गुजराती भाषा और साहित्य के विशिष्ट विद्वान् और 'प्रबुद्ध जीवन' के सम्पादक हैं। आपकी अध्यक्षता में प्रति वर्ष बम्बई में बिड़ला क्रीड़ा केन्द्र में पर्युषण व्याख्यान-माला का आयोजन होता है। इस व्याख्यानमाला में स्वयं रमण भाई ने जैन पारिभाषिक विषयों पर कई व्याख्यान दिये हैं, उनमें से आठ व्याख्यान इस पुस्तक में संकलित हैं। उनके नाम हैं—१. समयं गोयम मा पमायए, २. धर्म-ध्यान, ३. प्रतिक्रमण, ४. दानधर्म, ५. स्वाध्याय, ६. जातिस्मरण ज्ञान, ७. संयमनी महिमा, ८. शीलविद्यातक परिवलो। ये व्याख्यान गुजराती भाषा में हैं। इनमें संबंधित विषय के अर्थ, स्वरूप, महत्त्व, भेदोपभेद पर प्रकाश डालते हुए शास्त्रीय एवं लोकदृष्टि से सुन्दर विवेचन-विश्लेषण किया गया है। गूढ़ विषय को भी सहज-सरल, सुबोध बनाकर प्रस्तुत करना रमणभाई की विशेषता है।

२. **चौपट**—उपाध्याय श्री केवल मुनि, प्र० श्री जैन दिवाकर दिव्य ज्योति कार्यालय, महावीर बाजार, ब्यावर, पृ० १६८, मू० ८.०० ।

इसमें लेखक के आधुनिक जीवन से संबंधित सामयिक समस्याओं पर आधारित सात आदर्शोन्मुखी एकांकी संकलित हैं। 'अपने-पराये' में पारिवारिक एकता, 'सीधी राह पर' में विवेकपूर्ण समझदारी, 'ऐसे भी लोग हैं' में वैवाहिक आदर्श, 'आँख खुली' में स्त्री-शिक्षा, 'फिर मिले' में पश्चात्ताप और क्षमा-भाव, 'चौपट' में जुआ और शराब के दुष्परिणाम तथा 'नया कदम' में नशा-मुक्ति का आदर्श चित्रित किया गया है। सभी एकांकी सरल, सरस और शिक्षाप्रद हैं।

३. **दो रूप**—उपाध्याय श्री केवल मुनि, प्र० वही, पृ० १६०, मू० ८.०० ।

इस उपन्यास में मानव जीवन के दो रूप शुभ एवं अशुभ वृत्तियों के

परिप्रेक्ष्य में चित्रित किये गये हैं। अशुभ वृत्ति के प्रतीक हैं—रूपकुमार और श्यामकुमार दो भाई, जो धन के अहंकार में क्रूर, कठोर और मायावी बनकर पथभ्रष्ट होते हैं। शुभवृत्ति का प्रतीक है देवकुमार, जो सदाशयता, सहयोग, सेवा-भावना और दान के आधार पर अपने प्रतिकूल भाग्य को भी अनुकूल बना लेता है। यह उपन्यास उदात्त मानव मूल्यों की रूपकात्मक अभिव्यक्ति करने में सफल बन पड़ा है।

४. **आनन्दघन चौबीसी**—विवेचनकार—मुनि सहजानन्दघन, सं. भंवर लाल नाहटा, प्र. प्राकृत भारती अकादमी, जयपुर एवं श्रीमद् राजचन्द्र आश्रम, हम्पी-५८३२३६, पृ. २२५, मू. ३०.०० ।

'चौबीसी' संज्ञक रचनाओं में आनन्दघन की 'चौबीसी' अत्यन्त लोकप्रिय रचना है। आनन्दघन उच्चकोटि के अध्यात्मयोगी सन्त थे। इस रचना में उन्होंने २४ तीर्थंकरों की स्तुति करते हुए आगम एवं अनुभव का सार-तत्त्व समाहित कर दिया है। इस चौबीसी पर आचार्य ज्ञानविमलसूरी, सन्त ज्ञानसार, आचार्य बुद्धिसागरसूरी, श्री मोतीचन्द गिरधर कापड़िया आदि ने गुजराती एवं हिन्दी में टीका-विवेचना लिखी है। उक्त टीका-विवेचना का अवलोकन कर मुनि सहजानन्दघन ने आत्मानुभूति से 'चौबीसी' के १७ स्तवनों का चिन्तन-परक दार्शनिक विवेचन किया है, जो आत्म-साधना में लीन साधकों के लिए विशेष प्रेरक और उपयोगी है। इस पुस्तक में उनका यह विवेचन और शेष स्तवन मूल रूप में संकलित है। अन्त में सहजानन्द कृत 'चैत्यवन्दन चौबीसी' और 'चौबीस जिन स्तुति' भी दी गई है। प्रारम्भ में प्रसिद्ध गवेषक विद्वान् श्री भंवरलाल नाहटा की विस्तृत शोधपूर्ण प्रस्तावना है, जो कई तथ्यों पर मौलिक प्रकाश डालती है।

५. **नयन पथ गामी भवतु मे**—मूल कविवर भागचन्दजी, हिन्दी अनुवाद—श्री भवानीप्रसाद मिश्र, राजस्थानी अनुवाद—श्री विपिन जारोली, प्र. हीराभैया प्रकाशन, ६५, पत्रकार कॉलोनी, इन्दौर-१, पृ. २०, मू. ३.०० ।

संस्कृत में पं. भागचन्द द्वारा रचित 'महावीराष्टक' अत्यन्त लोकप्रिय स्तोत्र काव्य है। इस लघु पुस्तक में उक्त हिन्दी अनुवाद मुक्तक छन्द में है। राजस्थानी अनुवाद अत्यन्त सरल और सटीक बन पड़ा है। 'अस्या वीरजी नैण-पंथ सूं, हिवड़े म्हारै आप पधारो' पंक्ति भक्त हृदय में बराबर गूंजती रहती है। चित्र बड़ प्रभावी और प्रेरक हैं।

□□□

समाज-दर्शन

श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, कोसाणा-३४२ ६०१ (राज०)

❀ आमंत्रण पत्र ❀

हमारे संघ के असीम पुण्योदय से हमें अखण्ड बालब्रह्मचारी, चारित्र चूड़ामणि, सामायिक-स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक, परम श्रद्धेय **आचार्य प्रवर श्री १००८ श्री हस्तीमल जी म० सा०**, आगमज्ञ पं० रत्न श्री हीरा मुनिजी म० सा० आदि ठाणा ७ के वर्षावास का लाभ प्राप्त हुआ है।

प्रातः ६ बजे प्रार्थना, प्रातः ९ से १० तक शास्त्र वाचन, दोपहर २ से २.३० तक प्रवचन, सायं ७.३० बजे प्रतिक्रमण एवं रात्रि १० बजे तक धर्म-चर्चा, प्रश्नोत्तर आदि कार्यक्रम नियमित रूप से चल रहे हैं।

आपसे विनम्र निवेदन है कि पूज्य गुरुदेव के दर्शनार्थ पधार कर जिनवाणी श्रवण एवं संत-सेवा का लाभ लेवें तथा हमारे संघ को सेवा का अवसर प्रदान करें। कृपया अपने पधारने की पूर्व सूचना उक्त पते पर करें। दर्शनार्थियों के भोजन एवं आवास की व्यवस्था कोट में रखी गयी है। कोसाणा पहुँचने के लिए जोधपुर, पीपाड़, गोटन, मेड़ता, ब्यावर, अजमेर व जयपुर से रेल/बस सेवाएँ उपलब्ध हैं।

विनीत
घीसूलाल बाघमार
मंत्री

आचार्य श्री द्वारा धर्म-जागरण एवं मंगल प्रवेश

परम श्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० अपने शिष्य समुदाय सहित मेड़ता से विहार कर सातलास, इन्दागढ़, गगराना, पुरलू होते हुए खवासपुरा पधारे। यहाँ आपका तीन दिन विराजना हुआ। जैन-जैनेतर बन्धुओं ने प्रवचन-श्रवण का विशेष लाभ लिया। कई प्रकार के त्याग-प्रत्याख्यान हुए। श्री लालचन्द जी मोहनलाल जी कोठारी की ओर से घर-२ में प्रभावना वितरित की गई। यहाँ से चोकरी कलां, श्री नारायण जी गोप जी की ढाणी होते हुए

१३ जुलाई को आप कोसाणा पधारे। गाँव की हर कौम—जैन, विश्नोई, वनमाली, चौधरी, आदि सभी लोग धर्मसभा में उपस्थित हुए। श्री गौतम मुनि जी ने सम्बोधित करते हुए कहा कि एक साधारण गृहस्थ के यहाँ भी जब कोई मेहमान आता है तो वह समागत अतिथि का पूर्ण स्वागत-सत्कार करता है। सन्त भी मेहमान तुल्य हैं, पर इन्हें माल-मसाले, पकवान आदि की जरूरत नहीं। संतों को जरूरत है धर्माराधना की, आध्यात्मिक यज्ञ में ज्ञान एवं क्रिया की। अतः सब एकजुट होकर आचार्य श्री के सामायिक एवं स्वाध्याय के मिशन को पूरा करें।

पं० र० श्री हीरा मुनि जी ने प्रेरणादायक शब्दों में कहा कि आपको आचार्य श्री के दूसरी बार चातुर्मास का लाभ मिला है। आप ज्ञान, दर्शन एवं चारित्र की उन्नति में अपने जीवन को लगाएँ तभी इस चातुर्मास की सार्थकता है। संघ मंत्री श्री घीसूलालजी बाघमार एवं मधुर गायक श्री जवाहरलाल जी बाघमार ने हर्ष विभोर होकर आचार्य प्रवर का भावपूर्ण शब्दों में स्वागत किया।

आचार्य श्री ने भाव विभोर होकर कहा कि स्व० आचार्य श्री रत्नचंद्र जी म० सा० का कृपापात्र क्षेत्र होने एवं न जाने कैसा संयोग एवं आकर्षण होने से दूसरा चातुर्मास करने को मुनि मंडल आपके गाँव में आया है। बड़े-बड़े नगर एवं पूंजीपति क्षेत्रों की विनतियाँ आईं पर वहाँ नहीं गये। कोसाणा एक छोटा सा गाँव है। यहाँ वर्षावास केवल महाजनों को देखकर ही नहीं किया है, बल्कि समस्त 'अहिंसा समाज' को ध्यान में रखकर किया है। अहिंसा समाज में यहाँ तीन समाज वनमाली, विश्नोई और चौधरी मुख्य हैं। इनके अहिंसा के प्रति आदर भाव व मेरी वृद्धावस्था में साधना के अनुकूल अवसर मिल सके, इस दृष्टि को लेकर कोसाणा में चातुर्मास करना पसन्द किया। आप संतों के पदार्पण का लाभ लेने का लक्ष्य रखें, नवयुवकों का अच्छा संगठन बनावें, अपने जीवन को साधना के द्वारा ऊँचा उठावें। आप ऐसा वातावरण बनावें एवं यह बता दें कि यह गाँव पूर्णतया व्यसनमुक्त है। सब मिलकर प्रेम से रहें, पीड़ित भाइयों, असहाय भाइयों की सेवा करें, पशुओं के प्रति दया भावना रखें। सावण-भादवे में रात्रि भोजन का त्याग रखें। पर्व तिथियों में पशुओं से काम न लेवें। जैन समाज व अहिंसक समाज दोनों मिलकर सुन्दर ढंग से जीवनयापन करें और सत्संग का पूरा लाभ उठावें।

आचार्य श्री के इस प्रेरणाप्रद उद्बोधन ने सभी भाई-बहिनों के हृदय में धर्म जागृति की नई लहर पैदा कर दी। इस मंगल प्रवेश पर श्री घीसूलाल जी दुलीचन्द जी बाघमार ने शुभ कार्यों हेतु २१ हजार रु० की घोषणा की।

कोसाणा में तपस्याओं की अभूतपूर्व लहर

परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के कोसाणा ग्राम में मंगल प्रवेश के साथ ही भाइयों एवं बहनों में तपस्या की होड़ सी लग गयी है। ११, ८, ५ आदि की बड़ी तपस्याओं के साथ दया, उपवास, बेला, तेला, आयंबिल आदि तपस्याएँ नियमित चल रही हैं। श्री सायरचन्द जी बाघमार ने १८–७–८९ को अठाई की तपस्या के प्रत्याख्यान किये। अपने सुपुत्र की ११ की तपस्या के उपलक्ष्य में श्री सायरचन्द जी बाघमार ने सपत्नीक आजीवन शीलव्रत अंगीकार किया। साथिन निवासी श्री चम्पालालजी कांकरिया ने भी सपत्नीक शीलव्रत के प्रत्याख्यान किये। स्थानीय संघ की ओर से तपस्वी भाई एवं शीलव्रत अंगीकार करने वालों का चातुर्मास व्यवस्था समिति के अध्यक्ष श्री एस० लालचन्द जी बाघमार ने साफा, चूनड़ी एवं माल्यार्पण द्वारा अभिनन्दन किया। तपस्वी भाई के परिजनों ने विभिन्न संस्थाओं को शुभ कार्यों हेतु अर्थ सहयोग की घोषणा की। पं० रत्न श्री हीरा मुनिजी म० सा० एवं श्री महेन्द्र मुनिजी म० सा० ने धर्म सभा को संबोधित किया। प्रवचन के पश्चात् प्रभावना वितरण की गयी।

दि० २३–७–८९ को स्व० श्री हस्तीमल जी नाहर के सुपुत्र श्री नथमल जी नाहर ने ९ करके ११ के पचक्खाण पूज्य गुरुदेव के मुखारविन्द से किये। तत्पश्चात् श्रीमती पानीदेवी धर्मपत्नी श्री शिवराज जी नाहर तथा श्रीमती विमलादेवी धर्मपत्नी श्री हंसराज जी बाघमार पुत्र श्री धर्मचन्द जी बाघमार ने भी अठाई के प्रत्याख्यान किये।

श्रीमती मंजूदेवी धर्मपत्नी श्री सुरेशचन्द जी बाघमार पुत्र श्री जवाहरलाल जी बाघमार ने भी अठाई की तपस्या पूर्ण कर ली है। इसके अलावा श्री अखेराज जी बाघमार, श्री झूमरलाल जी बाघमार एवं श्रीमती सम्पतदेवी धर्मपत्नी श्री रेखचन्द जी बाघमार के भी ७, ८ और ९ की तपस्याएँ चल रही हैं। अभी आगे बढ़ने के भाव हैं।

यहाँ बच्चों की धार्मिक पाठशाला भी चल रही है, जिसमें १५-२० बच्चे बच्चियाँ सामायिक, प्रतिक्रमण आदि का अभ्यास कर रहे हैं। श्री राजेन्द्रकुमार जी जैन बच्चों को अध्यापन करा रहे हैं। दि० २४–७–८९ से भाइयों की ओर से अखण्ड शान्ति जाप भी चल रहे हैं। देश के कोने-कोने से दर्शनार्थियों का आवागमन जारी है। स्थानीय संघ आगत अतिथियों की सेवा का भरपूर लाभ ले रहा है। आँखों के ऑपरेशन के पश्चात् पूज्य गुरुदेव के स्वास्थ्य में पूर्ण समाधि है, नेत्र ज्योति में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है।

—राजेन्द्रकुमार जैन

पर्युषण पर्वाराधन हेतु स्वाध्यायियों को आमन्त्रित कीजिये

जोधपुर—श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ, जोधपुर संत-सतियाँ जी म० सा० के चातुर्मास से वंचित क्षेत्रों में पर्वाधिराज पर्युषण पर्व के पावन प्रसंग पर प्रवचन, शास्त्र वाचन, चौपाई, प्रार्थना, प्रतिक्रमण आदि विभिन्न धार्मिक प्रवृत्तियाँ करवाने हेतु विगत ४५ वर्षों से योग्य एवं अनुभवी स्वाध्यायी बन्धुओं को भेजकर जिनशासन एवं समाज-सेवा में कार्यरत है।

इस वर्ष भी जिन-जिन क्षेत्रों में संत-सतियाँ जी के चातुर्मास नहीं हो सके हों, वे क्षेत्र निम्न जानकारी के साथ अपना आवेदन शीघ्रातिशीघ्र भिजवाने की कृपा करें :—

(१) शहर अथवा गाँव का नाम, जिला, प्रांत आदि सहित।

(२) जैन घरों की संख्या।

(३) स्थानकवासी जैन घरों की संख्या।

(४) संघ के अध्यक्ष/मंत्री का नाम व पूरा पता।

(५) रेल तथा बस से पहुँचने का सुगम मार्ग।

(६) विशेष जानकारी।

—चंचलमल चौरड़िया
सचिव
स्वाध्याय संचालन समिति
चौरड़िया भवन, जालोरी गेट के बाहर
जोधपुर—३४२ ००३

फोन : २१८७१, २०१९६
तार : चौरड़ियाको

बंगलौर—पूज्य मुनिराजों एवं महासतियाँ जी के चातुर्मास से वंचित कर्नाटक प्रांत के समस्त श्री संघों से सादर निवेदन है कि पर्युषण महापर्व की आराधना हेतु कर्नाटक जैन स्वाध्याय संघ के स्वाध्यायियों को आमंत्रित कर अपूर्व निर्जरा एवं शासन सेवा का लाभ लेवें। कृपया आवेदन-पत्र के साथ अपने संघ के स्थानक एवं अध्यक्ष/मंत्री का पता तथा स्थानकवासी जैन घरों की संख्या आदि की जानकारी यथा शीघ्र भिजवावें।

पत्र व्यवहार का पता—**शान्तिलाल बोहरा**
संयोजक, कर्नाटक जैन स्वाध्याय संघ
६१, नगरथ पेठ, बैंगलोर-२

फोन : २२२४४३

मद्रास—श्री दक्षिण भारत जैन स्वाध्याय संघ द्वारा विगत १० वर्षों से दक्षिण के हर प्रांत में पर्युषण पर्व पर योग्य अनुभवी स्वाध्यायी भेजकर धर्माराधना करायी जाती है। इस वर्ष भी जो क्षेत्र चातुर्मास से वंचित हैं, वे अपनी मांग स्वाध्याय संघ के पते पर तुरंत भेजें जिससे उचित व्यवस्था की जा सके। स्वाध्याय संघ को निम्न जानकारी सहित आवेदन करें।

जैन घरों की संख्या, स्थानकवासी घरों की संख्या, आने-जाने का मार्ग, मंत्री व अध्यक्ष का नाम व पता।

—मंत्री, श्री दक्षिण भारत जैन स्वाध्याय संघ
३४८, मिन्ट स्ट्रीट, मद्रास–७९

गुलाबपुरा—संत-सतियों के चातुर्मास से वंचित क्षेत्रों में श्री श्वे० स्था० जैन स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा स्वाध्यायी श्रावकों को पर्युषण पर्व में शास्त्र वाचन, तत्वचर्चा आदि के लिए भेजकर वि० सं० १९९४ से ही समाज की निरन्तर सेवा कर रहा है। जो भी संघ स्वाध्यायी सदस्यों को आमंत्रित करना चाहें, वे अपना प्रार्थना पत्र मंत्री, श्री स्वाध्यायी संघ **गुलाबपुरा पिन ३११ ०२१** के पते पर भिजवा देवें। प्रथम बार ही प्रार्थना पत्र भेजने वालों को वहाँ पहुँचने के मार्ग का व स्थानकवासी जैन परिवारों की कुल संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिए।

—मंत्री, श्री स्वाध्यायी संघ, गुलाबपुरा

अ० भा० समग्र जैन चातुर्मास सूची प्रकाशन परिषद्

१०५, तिरुपती अपार्टमेन्ट, आकुर्ली क्रॉस रोड नं० १

कांदिवली [पूर्व] बम्बई–१०१

स्थानकवासी जैन चातुर्मास सूची १९८९ का प्रकाशन

आपको यह तो भलीभाँति विदित ही है कि परिषद् द्वारा स्थानकवासी एवं समग्र जैन समुदायों [श्वे० मूर्तिपूजक, स्थानकवासी, तेरापंथी एवं दिगम्बर समुदाय] के लगभग दस हजार जैन साधु-साध्वियों के प्रतिवर्ष होने वाले चातुर्मासों की "समग्र जैन चातुर्मास सूची" का प्रकाशन विगत दस वर्षों से निरन्तर प्रकाशित किया जाता रहा है। आज समग्र जैन समाज की यही एक मात्र प्रामाणिक एवं पूर्ण सूची है जिसे आज समग्र जैन समाज के हर वर्ग ने एक स्वर से स्वीकारा भी है। इस सूची से आज सारा जैन समाज काफी लाभान्वित हो रहा है। यह सूची समाज के लिए काफी उपयोगी सिद्ध हुई है।

परन्तु इस सूची के प्रकाशन कार्य में स्थानकवासी समाज के अलावा अन्य जैन समुदायों का हमें बिलकुल भी आर्थिक सहयोग प्राप्त नहीं हुआ है। परिषद् की आर्थिक स्थिति काफी कमजोर होने एवं अन्य जैन समुदायों से बिलकुल भी आर्थिक सहयोग प्राप्त नहीं होने के कारण परिषद् ने यह निर्णय लिया है कि इस वर्ष सिर्फ स्थानकवासी समुदायों के साधु-साध्वियों के चातुर्मासों की "स्थानकवासी जैन चातुर्मास सूची १९८९" एवं चार्ट का ही प्रकाशन किया जाये और यह कार्य आरम्भ भी किया जा चुका है।

अतः आपसे नम्र निवेदन है कि आपके शहर/नगर/गाँव में जिन-जिन सम्प्रदायों के साधु-साध्वियों के चातुर्मास स्वीकृत हुए हैं, उन सभी समुदायों की निम्नलिखित जानकारियां शीघ्र से शीघ्र भिजवाने की कृपा करें ताकि हम यह चातुर्मास सूची शीघ्र से शीघ्र प्रकाशित कर सकें—

(१) सभी संत-सतियों के पूरे ठाणाओं के नाम।

(२) सम्प्रदाय का नाम

(३) चातुर्मास-स्थल का नाम, पता, आवास-व्यवस्था एवं यातायात साधन।

(४) नवदीक्षित संत-सतियों के नाम, दीक्षा स्थल एवं तारीख।

(५) कालधर्म [देहावसान] पाने वाले संत-सतियों के नाम, स्थल व तारीख।

(६) अन्य महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ।

नोट : **इस वर्ष सभी संत-सतियों के पूरे ठाणाओं के नाम प्रकाशित किये जायेंगे।**

विनीत :

सुखलाल कोठारी
अध्यक्ष

मुन्नालाल लोढ़ा "मनन"
महामंत्री

बाबूलाल जैन "उज्ज्वल"
संयोजक-संपादक

क्या आप बेरोजगार हैं ?

यदि आप बेरोजगार हैं तो हम आपको एक उपाय बताते हैं, जिससे आप रोजगार पा सकते हैं और ज्ञानवर्धक पत्रिका "जिनवाणी" एवं अन्य लघु पुस्तकों का प्रचार-प्रसार करके धर्मप्रेमी बन्धुओं की सेवा भी कर सकते हैं।

उपाय यह है कि आप केवल ३०) रु० का मनीआर्डर हमारे पते पर भेजकर "जिनवाणी" के इस अंक की तथा ट्रैक्ट साहित्य की (लघु पुस्तकों) की दस-दस प्रतियां मंगालें। हम अपने डाक खर्च से आपको भेज देंगे। धीरे-धीरे "जिनवाणी" अथवा सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के अन्य प्रकाशित साहित्य की मांग आने पर आप हमें सूचित करते जावें तथा स्थायी ग्राहकों के नाम व पते भेजते जावें ताकि अगले अंक भिजवा सकें। आप जो भी पत्रिका या साहित्य मंगाना चाहें उनके नाम सूचित करें और धन राशि का २५% कमीशन कम करके अपने आदेश के साथ भेजें। कृपया वी० पी० से भेजने के लिए न लिखें।

—मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, बापू बाजार, जयपुर–३

सेवा योजना "जीवन प्रकाश" द्वारा स्थानकवासी जैन समाज लाभ उठावें

अ० भा० श्वे० स्थानकवासी जैन कान्फ्रेन्स दिल्ली के अन्तर्गत स्थानकवासी जैन समाज के निम्न मध्यमवर्गीय भाई-बहनों को चिकित्सा और शिक्षा के क्षेत्र में विशेष सहयोग हेतु "जीवन प्रकाश" योजना प्रारम्भ की गयी है। कैंसर, किडनी, हार्ट, जैसी खर्चीली बीमारियों के इलाज में इस योजना द्वारा स्थानकवासी जैन भाई-बहनों को आर्थिक सहयोग तथा उच्च अध्ययन हेतु छात्रवृत्तियाँ दी जायेंगी। कान्फ्रेंस के सदस्य-संघों के अध्यक्ष/मंत्री की सिफारिश के साथ आये आवेदन पत्रों पर विचार कर सहयोग दिया जायेगा। कान्फ्रेंस के सदस्य बनने वाले स्थानकवासी संघों को रियायती आधे शुल्क अर्थात् दो सौ इक्यावन रुपयों में आजीवन सदस्यता प्राप्त होगी।

"जीवन प्रकाश" योजना में समाज के औद्योगिक प्रतिष्ठानों, ट्रस्टों या व्यक्तियों से सहयोग राशि आमंत्रित है। घोषित सहयोग राशि एक मुश्त अथवा तीन वर्षों में तीन किश्तों के रूप में दी जा सकती है। सहयोगी उद्योग, ट्रस्ट अथवा व्यक्ति का फोटो सहित परिचय "जैन प्रकाश" पत्र में प्रकाशित किया जायेगा एवं कान्फ्रेंस द्वारा उनका सार्वजनिक सम्मान भी होगा। सहायता प्राप्त करने वालों में सहयोगदाता का नाम, पता भी दिया जायेगा। आशा है, समाज के सम्पन्न व्यक्ति इस योजना में उदारतापूर्वक सहयोग करेंगे।

संघीय सदस्यता के लिए दिल्ली कार्यालय अथवा अध्यक्षीय कार्यालय से एवं सहायता आवेदन के लिए अध्यक्षीय कार्यालय से सम्पर्क करें।

दिल्ली कार्यालय :
अ. भा. श्वे. स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस
जैन भवन, १२, शहीद भगतसिंह मार्ग
नई दिल्ली–११० ००१

अध्यक्षीय कार्यालय :
पुखराजमल एस. लुंकड़
अध्यक्ष, अ. भा. श्वे. स्था. जैन कान्फ्रेंस
६६, ओल्ड प्रभादेवी रोड
बम्बई–४०० ०२५

डॉ० भानावत के बम्बई में पर्युषण-व्याख्यान

"जिनवाणी" के सम्पादक डॉ० नरेन्द्र भानावत के पर्युषण व्याख्यान-माला के अन्तर्गत ३१ अगस्त को अणुव्रत सभागार में 'समभाव की साधना—सामायिक' पर तथा बम्बई जैन युवक संघ द्वारा एक सितम्बर को प्रातः बिड़ला क्रीड़ा केन्द्र, चौपाटी में 'तनाव मुक्ति का साधन—प्रतिक्रमण' विषय पर व्याख्यान आयोजित किये गये हैं।

स्वाध्यायी मुफ्त मंगावें

अनुयोग प्रवर्तक मुनि श्री कन्हैयालाल जी "कमल" द्वारा नई शैली से सम्पादित आचारांग प्रथम श्रुतस्कन्ध मूल गुटका आगमों के स्वाध्यायियों को "श्री अमरचन्द मारू चैरिटेबल ट्रस्ट दिल्ली" द्वारा मुफ्त भेजा जा रहा है। जो मंगाना चाहें वे पैकिंग खर्च और पोस्टेज खर्च के लिए दो रुपये के टिकिट भेजें।

आयारदशा (दशा श्रुतस्कन्ध) कप्पसुत्तं (बृहत्कल्प सूत्र) व्यवहार सूत्र—तीनों का कुल मूल्य ५०/- रु०, मूल, हिन्दी अनुवाद एवं विवेचन सहित प्रकाशित है। वे दीपावली तक अर्धमूल्य २५/- रु० व पोस्टेज खर्च के १०/- रु० कुल ३५/- रु० में भेजे जा रहे हैं। जो मँगाना चाहें वे शीघ्र पत्र देवें।

—राजेश भण्डारी

श्री वर्धमान महावीर केन्द्र, आबू पर्वत (राज०)–३०७५०१

डाक टिकट भेजकर निःशुल्क पुस्तकें मंगावें

श्री रवीन्द्र पाटनी फेमिली चैरिटेबल ट्रस्ट, बम्बई की ओर से जिन मंदिरों, मुनिराजों, त्यागियों, वाचनालयों एवं विद्वानों को पूज्य श्री कानजी स्वामी की जन्म शताब्दी के उपलक्ष्य में पण्डित प्रवर श्री दौलतरामजी कृत छहढाला की चौथी ढाल पर श्री कानजी स्वामी के प्रवचन **"वीतराग विज्ञान भाग ४"** पृष्ठ १९८, मूल्य पाँच रुपये तथा डॉ० हुकमचन्द भारिल्ल द्वारा आचार्य कुन्दकुन्द के पंच परमागमों में से शुद्धात्म से सम्बन्धित चुनी हुई १०१ गाथाओं का पद्यानुवाद **"शुद्धात्म शतक"** पृ० ३२, मूल्य ५० पैसे स्वाध्यायार्थ भेंट दी जा रही है। इच्छुक महानुभाव एक रुपया बीस पैसे के डाक टिकट निम्न पते पर भेजकर उक्त पुस्तकें मँगा सकते हैं। ध्यान रहे—डाक टिकट भेजने की अंतिम तिथि ३० सितम्बर, १९८९ है।

पता :—निःशुल्क पुस्तक वितरण विभाग
पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट
ए-४, बापूनगर, जयपुर–३०२०१५ (राज०)

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल की कार्यसमिति की बैठक

जयपुर—१५ जुलाई, ८६ को मण्डल कार्यालय में मण्डल के अध्यक्ष श्री डी० आर० मेहता की अध्यक्षता में उक्त बैठक सम्पन्न हुई। इसमें मंडल द्वारा प्रकाशित किये जाने वाले साहित्य, स्वाध्याय-स्मारिका और "जिनवाणी" के "अहिंसा-विशेषांक" के सम्बन्ध में आवश्यक निर्णय लिये गये और तत्संबंधी विज्ञापन एकत्र करने का निश्चय किया गया। वात्सल्य सेवा के ऋण प्रार्थना-पत्रों पर विचार कर निर्णय लेने के लिए एक समिति का गठन किया गया। यह भी तय किया गया है कि यह जानकारी प्राप्त की जाए कि अब तक दिये गये ऋण से लोगों को कैसा व कितना लाभ हुआ है। चातुर्मास काल में "लाल भवन" में साहित्य विक्रय केन्द्र स्थापित करने, चल-पुस्तकालय चलाने, जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान में अध्ययनरत छात्रों की अध्ययन प्रगति आदि के सम्बन्ध में भी विचार-विमर्श कर निर्णय लिये गये। यह भी तय किया गया कि "स्वाध्याय शिक्षा" का प्रकाशन जयपुर से हो। इसके संपादन का कार्य व्याख्याता श्री धर्मचन्द जैन को सौंपा गया।

संक्षिप्त समाचार

जयपुर—उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री कुसुमवती जी की शिष्या श्री चारित्रप्रभा जी की शिष्या साध्वी श्री दर्शनप्रभा जी को राजस्थान वि० वि० ने "आचार्य हरिभद्र का जैन धर्म और साहित्य को योगदान" विषयक शोध प्रबन्ध पर पी-एच० डी० की उपाधि प्रदान की है। हार्दिक बधाई। आपका चातुर्मास मदनगंज-किशनगढ़ में हुआ है।

बैंगलौर—यहाँ कर्नाटक जैन स्वाध्याय संघ की ओर से २३ जून से २५ जून तक स्वाध्याय शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें २० महिलाओं एवं ४८ स्वाध्यायी बन्धुओं ने भाग लिया। उद्घाटन संघ अध्यक्ष श्री फूलचंदजी लूणिया ने किया। अध्यापन कार्य में सहयोगी थे—श्री फूलचन्द जी मेहता, श्री शांतिलालजी वनमाली शेठ, श्री रिखबराजजी कर्नावट, श्री शांतिलालजी गुलेछा एवं श्री शांतिलाल जी बोहरा। शिविर का संचालन श्री प्रकाशचन्दजी पटवा ने किया।

जयपुर—श्री जैन शिक्षण संघ द्वारा संचालित जैन पाठशाला के ४८ बालकों ने त्रिलोक रत्न जैन धार्मिक परीक्षा बोर्ड की "सामायिक" परीक्षा दी, जिसमें ४ बालक प्रथम श्रेणी में, २१ बालक द्वितीय श्रेणी एवं शेष तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुए। इसी बोर्ड की "प्रतिक्रमण" परीक्षा में १४ बालक बैठे, जिसमें एक प्रथम श्रेणी में, ४ द्वितीय श्रेणी में व अन्य तृतीय श्रेणी में उत्तीर्ण हुए।

मद्रास—जैन धर्म पढ़ाने में अभिरुचि रखने वाले हिन्दी भाषा-भाषी योग्य, अनुभवी शिक्षित अध्यापक की आवश्यकता है, जो स्थानकवासी समाज के स्वाध्यायी बन्धुओं एवं बालक-बालिकाओं को पढ़ा सके। इच्छुक व्यक्ति अपने अनुभव धार्मिक एवं व्यावहारिक योग्यता के उल्लेख सहित शीघ्र आवेदन करें—

—मंत्री, श्री दक्षिण भारत जैन स्वाध्याय संघ
३४८, मिन्ट स्ट्रीट, मद्रास–३०० ०७९

जयपुर—यहां "श्री ओसवाल मैरिज ब्यूरो" की स्थापना की गई है। इच्छुक व्यक्ति अपने अविवाहित पुत्र-पुत्रियों के रजिस्ट्रेशन के लिए सम्पर्क करें—

—होशियारसिंह सिंघवी, बी-७४, बजाजनगर, जयपुर-३०२ ०१७

जसवन्तगढ़ (उदयपुर)—उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी एवं उपाचार्य श्री देवेन्द्र मुनिजी अपने शिष्य समुदाय सहित उदयपुर से विहार कर मदार, गोगुन्दा, सेमटार, नांदेशमा, ढोल, कमोल. सेमड़, सिंघाड़ा, सायरा, पदराड़ा, तिरपाल आदि गाँवों को अपने धर्मोपदेश से लाभान्वित करते हुए चातुर्मासार्थ १३ जुलाई को जसवन्तगढ़ पधारे। गोगुन्दा में उपाध्याय श्री की ६६वीं दीक्षा जयन्ती धर्म-ध्यानपूर्वक मनाई गई। आपके जन्म स्थान सेमटार के सरपंच श्री शंकर-लालजी शर्मा ने आप जैसे अध्यात्म योगी, महान् साधक के इस गाँव में पदार्पण के उपलक्ष्य में सेमटार गाँव का नाम पुष्करनगर रखने की घोषणा की।

लेस्टर (इंगलैण्ड)—डॉ० नटुभाई शाह के संयोजन में हेमचन्द्राचार्य की नवमीं जन्म शताब्दी "जैन समाज यूरोप" के तत्त्वावधान में विविध कार्यक्रमों के साथ मनाई जा रही है। इस सिलसिले में १५ व १६ जुलाई को गुजरात के प्रमुख जैन विद्वान् और साहित्यकार डॉ० कुमारपाल देसाई ने हेमचन्द्राचार्य के जीवन एवं साहित्य पर लन्दन, मैनचेस्टर एवं लेस्टर में अपने विशेष व्याख्यान दिये।

उज्जैन—यहाँ अ० भा० श्वे० जैन वैवाहिक सूचना केन्द्र की स्थापना की गई है। केन्द्र की ओर से "दिनेश वर-वधू दर्शिका" का प्रकाशन किया जा रहा है। इच्छुक व्यक्ति सम्पर्क करें—

—श्री दिनेशचन्द्र गोरेचा द्वारा मैसर्स दिनेश परिधान,
३६, भोज मार्ग, फ्रीगंज, उज्जैन-४५६ ००१

जयपुर—वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ की ओर से २ अगस्त को विदुषी साध्वी डॉ० मुक्तिप्रभाजी एवं डॉ० दिव्यप्रभाजी के सान्निध्य में आचार्य श्री आनन्द ऋषिजी म० सा० की ९० वीं जयन्ती तप त्यागपूर्वक मनाई गई। समारोह की अध्यक्षता सुप्रसिद्ध सर्वोदयी विचारक श्री सिद्धराज जी ढड्ढा ने की। प्रमुख वक्ता थे डॉ० नरेन्द्र भानावत एवं श्री गुमानमल चौरड़िया। प्रति रविवार को डॉ० दिव्यप्रभाजी के भक्तामर स्तोत्र पर विशेष व्याख्यान हो रहे हैं।

शोक - श्रद्धांजलि

बम्बई—प्रमुख समाजसेवी, उद्योगपति एवं धर्मपरायण सुश्रावक दानवीर सेठ श्री चम्पालालजी कोठारी का ६६ वर्ष की आयु में १४ जुलाई, ८६ को असामयिक निधन हो गया। आपका जन्म पीपाड़ शहर में १६२३ में हुआ। अपने पिता श्री हरकचन्दजी कोठारी एवं माता श्रीमती जतनबाई से जो धार्मिक संस्कार मिले, वे उत्तरोत्तर बढ़ते ही गये। आप बम्बई के प्रसिद्ध भवन-निर्माताओं में से थे। अहमदाबाद एवं पूना में भी आपके व्यावसायिक प्रतिष्ठान हैं। धार्मिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक प्रवृत्तियों में आप सदैव अग्रणी रहे। 'श्री चम्पालाल कोठारी पब्लिक चेरिटेबल ट्रस्ट' की स्थापना कर आपने धार्मिक, सामाजिक प्रवृत्तियों को विशेष सहयोग दिया। अपने पूज्य पिताजी की स्मृति में आपने 'श्री हरकचन्द कोठारी हॉल' एवं वालकेश्वर बम्बई में अपनी माताजी की स्मृति में 'श्रीमती जतनबाई हरकचन्द कोठारी जैन स्थानक' का निर्माण कराया। दीन-दुःखियों के प्रति आपके मन में सदैव करुणा और प्रेम का भाव रहा। जीव-दया के क्षेत्र में भी आपने सराहनीय कार्य किया। पीपाड़ से 'श्री हरकचन्द कोठारी गौशाला' के संचालन में आपका पूरा सहयोग रहा। आप बड़े मिलनसार, निराभिमानी, उदारमना, सौम्य स्वभावी व्यक्ति थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं।

मद्रास—श्री एस. एस. जैन एजूकेशनल सोसायटी के संस्थापक सदस्य एवं प्रमुख कार्यकर्ता श्री जबरचन्दजी गेलड़ा का ८४ वर्ष की आयु में निधन हो गया। आप कुचेरा के मूल निवासी थे। आपका जीवन सादगीमय था। जरूरतमन्द लोगों की सहायता करने में आप सदा तत्पर रहते थे। आप जैन-शास्त्रों के अच्छे जानकार थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं। आपके सुपौत्र श्री अशोक गेलड़ा उत्साही युवा सामाजिक कार्यकर्ता हैं।

अहमदाबाद—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रद्धालु श्रावक एवं समाजसेवी श्री छोटमलजी मेहता का ६ जुलाई को आकस्मिक निधन हो गया। आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के प्रति आपकी अनन्य श्रद्धा-भक्ति थी। आप नियमित स्वाध्यायी और धर्म-परायण व्यक्ति थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं।

बीजापुर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री अम्बालालजी भागीरथजी रूणवाल का ६८ वर्ष की आयु में ४ जुलाई को बम्बई में आकस्मिक निधन हो गया। आप सरल स्वभावी, मिलनसार और सक्रिय समाजसेवी थे। आप स्थानीय नगरपालिका के कई वर्षों तक सदस्य रहे। बीजापुर गौशाला के सचिव के रूप में आपने जीव-दया के क्षेत्र में सराहनीय कार्य किया। आपने अपने प्रभाव एवं प्रयत्नों से बीजापुर की २ प्रमुख सड़कों के नाम भ० महावीर रोड और भ० पार्श्वनाथ रोड कराये। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं।

बिलाड़ा—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री चम्पालालजी खींवसरा का २० जून को असामयिक निधन हो गया। आप धर्म-श्रद्धालु और सेवा-भावी व्यक्ति थे। आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के प्रति आपकी अगाध श्रद्धा-भक्ति थी।

मनमाड़—यहाँ के प्रमुख श्रावक श्री पुशमलजी सिंघी का २८ जून को संथारा सहित निधन हो गया। आप १२ व्रतधारी श्रावक थे। समाज में धार्मिक शिक्षा एवं नैतिक संस्कारों के निर्माण के लिए आपने विभिन्न स्थानों पर जा-जाकर कई शिविर आयोजित किये। आप स्थानीय श्रावक संघ के मंत्री एवं जैन पाठशाला के अध्यक्ष थे। श्री सुधर्म प्रचार मण्डल, महाराष्ट्र शाखा के आप संयोजक थे।

जयपुर—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक एवं समाज-सेवी श्री शिखरचंदजी पालावत का ७ जुलाई को निधन हो गया। आप मिलनसार, कला और पुरातत्त्व प्रेमी, धर्म-परायण व्यक्ति थे। जैन श्वेताम्बर तपागच्छ संघ जयपुर के अध्यक्ष के रूप में आपकी विशेष सेवाएँ रहीं।

अजमेर—यहाँ श्रीमती कमलाबाई बोहरा का असामयिक निधन हो गया। आप धर्म-परायण श्राविका थीं। सन्त-सतियों की सेवा में सदा अग्रणी रहती थीं। आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के प्रति आपकी अगाध श्रद्धा-भक्ति थी।

दुर्ग—यहाँ श्रीमती मिजोबाई धर्मपत्नी श्री नथमलजी संचेती मघानिया वालों का ६ जून को संथारा सहित ८५ वर्ष की आयु में निधन हो गया। आप धार्मिक प्रवृत्ति की तपस्विनी महिला थीं।

रायपुर (म० प्र०)—यहाँ "जैन सन्देश" के सह-संपादक डॉ० कन्छेदीलाल जैन की ५ जुलाई को असामाजिक तत्त्वों द्वारा हत्या करदी गई। आप जैन धर्म-दर्शन के प्रसिद्ध विद्वान् थे।

जयपुर—यहाँ श्री फतेहचन्दजी जामड़ किशनगढ़ वालों का एक अगस्त को लगभग ७५ वर्ष की आयु में आकस्मिक निधन हो गया। आप सरल स्वभावी धर्म-प्रिय व्यक्ति थे।

निम्बाहेड़ा—यहाँ श्री भंवरलालजी चपलोत का २१ जुलाई को संथारापूर्वक निधन हो गया। आप धर्म-परायण, सरल-स्वभावी प्रमुख श्रावक थे।

कोटा—यहाँ श्रीमती सुन्दरबाई धर्मपत्नी स्वर्गीय श्री लक्ष्मीचंदजी बरला का ८५ वर्ष की आयु में ३० जुलाई को निधन हो गया। आप धर्म-परायण, सरल-स्वभावी महिला थीं। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गई हैं। राजस्थान विश्वविद्यालय के अर्थशास्त्र विभाग के अध्यक्ष एवं प्रोफेसर डॉ० सी० एस० बरला की आप माताजी थीं।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति हम सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, "जिनवाणी" एवं अ० भा० जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित करते हुये शोक-विह्वल परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं। □ सम्पादक

लेखकों से निवेदन

- 'जिनवाणी' में जैन धर्म, दर्शन, साहित्य एवं संस्कृति तथा नैतिक उन्नयन व सामाजिक जागरण सम्बन्धी रचनाएँ प्रकाशित की जाती हैं।
- रचनाएँ मौलिक, अप्रकाशित, प्रेरणादायक एवं संक्षिप्त हों।
- रचना भेजते समय उसकी प्रतिलिपि अपने पास अवश्य रख लेवें। अस्वीकृत रचना वापस करना सम्भव नहीं है।
- रचना कागज के एक ओर स्पष्ट अक्षरों में लिखी हुई अथवा टाइप की हुई हो।

—सम्पादक

पाठकों के पत्रांश
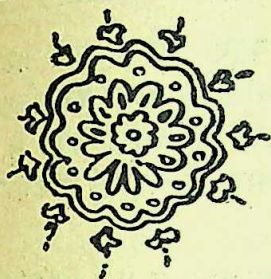
['जिनवाणी' में प्रकाशित सामग्री के विषय में प्राप्त पाठकों के पत्रों के अंश यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं]

"जिनवाणी" में प्रकाशित संपादकीय लेख, संतों के प्रवचन, प्रश्न मंच कार्यक्रम और 'समाज-दर्शन' में प्रकाशित सामग्री शिक्षाप्रद एवं समाज-जागृति में प्रेरक होती है। अन्य पत्र-पत्रिकाओं की अपेक्षा 'जिनवाणी' का जो वार्षिक शुल्क रखा है, वह भी कम है। इसके सुन्दर प्रकाशन के लिए बधाई।

—प्रेमराज तेजराज कुचेरिया, मानोरा—४४४४०४ (महाराष्ट्र)

मुझे 'जिनवाणी' बहुत ही अच्छी लगी। इसमें प्रकाशित व्याख्यान, कविताएँ आदि सुन्दर, सरल ढंग से हृदय को छूने वाली बात कहते हैं। मेरी तरह प्रत्येक व्यक्ति को इसे पढ़कर सुखद शांति की अनुभूति हुई होगी। 'प्रश्न-मंच कार्यक्रम' के प्रश्नोत्तर में भजन और स्तवन देखकर आप रचयिताओं के नाम पूछते हैं यह अच्छा है। मेरा अनुरोध है कि आप भजन को पूरा छापें।

—सुनील बुच्चा, १२१, कीका स्ट्रीट, गुलाबबाड़ी, बम्बई—४

'जिनवाणी' सभी वर्ग के पाठकों के लिये उपयोगी पत्रिका है। पर यह समय पर नहीं मिलती और हमें इसकी प्रतीक्षा करनी पड़ती है। अतः समय पर भिजवायें। इसमें वैवाहिक विज्ञापन भी छापने की कृपा करें।

—सुरेन्द्रसिंह जैन, आर. पी. एस. कॉलोनी, रावत भाटा—३२३३०५

'जिनवाणी' के जून अंक में नवकार मंत्र का अनुभव एवं 'बाल कथामृत' स्तंभ में बृजेशकुमारी भाटी द्वारा दिया गाँधीजी का उदाहरण बहुत अच्छा लगा। वैसे सभी लेख अच्छे लगते हैं।

—किशनलाल कोठारी, जामनेर—४२४२०६

'जिनवाणी' के जून अंक में श्री धनपतसिंह मेहता का लेख 'महावीर मार्ग और हम' सर्वोत्तम लगा। सम्पादक को भी लेखक के साथ बधाई।

—डॉ. एन. एच. साम्तानी, काश्यप संस्थान, सारनाथ—२२१००७

'जिनवाणी' का जून अंक हमेशा की तरह प्रभावपूर्ण रहा। इसमें प्रकाशित लेखों की भाषा सहज, रसयुक्त व सरल होती है जो पढ़ने वालों को रुचिकर प्रतीत होती है। 'बाल कथामृत' स्तंभ 'जिनवाणी' की महत्त्वपूर्ण कड़ी है। इसके द्वारा बालकों में सहज ज्ञानवृद्धि होती है व विषय को गहराई से समझने के भाव जागृत होते हैं।

—कुमारी आशा जैन, छोटी कसरावद (खरगोन, म. प्र.) ४५१२२८

'जिनवाणी' का 'विशिष्ट स्वाध्यायी' स्तंभ उचित नहीं लगा। मेरी विनम्र सम्मति में यह 'जिनवाणी' की स्थापित परम्पराओं और उसके गौरव के अनुकूल नहीं लगता। यह व्यक्ति-पूजा की सीमा तक जा सकता है............... एक आचार्य हस्ती का जीवन ही वटवृक्ष की तरह काफी है जिसका गौरव-गान कर हम कृत-कृत्य होते रहते हैं। 'चिंतन एवं व्यवहार' स्तंभ में प्रकाशित सामग्री लेखक की क्षमता के अनुसार कथ्य एवं उसके विश्लेषण की दृष्टि से प्रायः अच्छी होती है एवं उसकी उपयोगिता भी असंदिग्ध है। पर यह स्तंभ एक ही व्यक्ति से न लिखवाया जाकर ऐसी ज्वलंत समस्याओं पर अन्य को भी लिखने का अवसर क्यों न प्रदान करें?

—धनपतसिंह मेहता, ७९३, केनरा बैंक की गली, चौपासनी रोड, जोधपुर

['चिंतन और व्यवहार' स्तंभ के लिए अन्य लेखकों के विचार भी आमंत्रित हैं। ☐ **सम्पादक**]

सच्चा सुख

☐ श्री देवीचन्द भण्डारी

दुनिया में दुःख है और इन दुःखों का कारण है वासना, यानी तरह-तरह के सुख और ऐश-आराम भोगने की इच्छा। इसी वासना और इच्छा के कारण मनुष्य जन्म लेता और मरता है। जब यह वासना या जीवन का मोह मनुष्य में नहीं रहता, तब वह जन्म-मृत्यु के चक्कर से दूर हो जाता है और उसकी आत्मा को निर्वाण मिल जाता है, मनुष्य को असली सुख प्राप्त होता है। इन वासनाओं को दूर करने के लिये देह-पीड़न की जरूरत नहीं है, इसके लिये अच्छे कर्मों को अपनाने की जरूरत है। इन अच्छे कर्मों के लिये आठ बातों पर ध्यान रखने की आवश्यकता है :—

१. सच्ची बात ही मानें। २. सच्चे भाव रक्खें और दूसरों का बुरा न सोचें। ३. सच बोलें। ४. सच्चे काम करें। ५. सच्चे रास्ते को अपनायें। ६. अपने कार्यों में सच्चाई बरतें। ७. वासना को दूर कर सच्चे विचारों को अपने दिमाग में रक्खें और ८. हमेशा सच्चाई की ओर ही ध्यान दें। ☐

साभार प्राप्ति स्वीकार

२५१) रु० "जिनवाणी" की आजीवन सदस्यता हेतु प्रत्येक

२५०७. श्री सुनीलकुमारजी जैन, कलकत्ता ।
२५०८. श्री विमलचन्दजी विपुलकुमारजी जैन, जयपुर ।
२५०९. श्री जैन धार्मिक पाठशाला, सिवाना (बाड़मेर) ।
२५१०. श्री प्रसन्नचन्दजी कोठारी, मद्रास ।
२५११. श्री झूमरलालजी माधोलालजी मूथा, चौकड़ी कला (जोधपुर) ।
२५१२. श्री भंवरलालजी दुलीचन्दजी बोहरा, मद्रास ।
२५१३. श्री मनोहरलालजी जैन, हैदराबाद ।
२५१४. श्री उगमराजजी नाहर, मद्रास ।
२५१५. मैसर्स किस्तूरचन्द भैंरूलाल जैन, चौथ का बरवाड़ा (सवाईमाधोपुर) ।
२५१६. कमल बाई तलेसरा, पाली-मारवाड़ ।
२५१७. श्री तनसुखदासजी मेवाड़ा, पाली-मारवाड़ ।
२५१८. श्रीमती पुष्पाबाई एवं प्रकाशचन्दजी रेड, पाली-मारवाड़ ।
२५१९. ममताबाई मूथा, द्वारा पुखराजजी मूथा, पाली-मारवाड़ ।
२५२०. सायराबाई एवं हस्तीमलजी रेड, पाली-मारवाड़ ।
२५२१. डॉ. बी. प्रेमचन्दजी, मद्रास ।
२५२२. श्री उम्मेदमलजी बाफना, मद्रास ।

जिनवाणी को सहायतार्थ भेंट

१०००) रु० श्री कान्तिलालजी सी कोठारी, बम्बई
दानवीर धर्म प्रेमी स्व० सेठ साहब श्री चम्पालालजी हरकचन्दजी कोठारी साहब की पुण्य स्मृति में भेंट ।

५०१) रु० श्री निहालचन्दजी कोठारी, बम्बई
सौ. कां. सुनिता का शुभ विवाह चि. विक्रम सुपुत्र श्री राजेन्द्र कुमारजी मोलेचा के साथ सम्पन्न होने की खुशी में भेंट ।

२५१) रु० श्री शिवराजजी नथमलजी नाहर, कोसाणा (जोधपुर)
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के कोसाणा ग्राम में चातुर्मास प्रवेश करने के उपलक्ष में भेंट ।

२५१) रु० श्री घीसूलालजी दलीचन्दजी बाघमार एवं परिवार, मद्रास
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के कोसाणा ग्राम में चातुर्मास प्रवेश करने के उपलक्ष में भेंट ।

२५१) रु० श्री झूमरलालजी राजेन्द्रकुमारजी बाघमार, कोसाणा (जोधपुर)
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के कोसाणा ग्राम में चातुर्मास हेतु मंगल प्रवेश के उपलक्ष में भेंट ।

२५१) रु० श्री रेखचन्दजी बाघमार, कोसाणा (जोधपुर)
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. की आँख के सफल ऑपरेशन के उपलक्ष में भेंट ।

२५१) रु० श्री शिवराजजी देवराजजी नाहर, कोसाणा (जोधपुर)
श्रीमती पानीदेवी धर्मपत्नी श्री शिवराजजी नाहर के अठाई के प्रत्याख्यान व एक वर्ष के शीलव्रत अंगीकार करने तथा श्री नथमलजी नाहर के ग्यारह की तपस्या के उपलक्ष में भेंट ।

२५१) रु० श्री मोहनलालजी सोहनलालजी संचेती, रायचूर
सौ. कां. विद्याकुमारी सुपुत्री श्री सोहनलालजी के शुभ विवाह के उपलक्ष में भेंट ।

२०१) रु० श्री बादलचन्दजी गौतमचन्दजी कांकरिया, मद्रास
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के चौकड़ी गाँव में पधारने के उपलक्ष में भेंट ।

२०१) रु० श्री खेतमलजी लूणिया, सुपुत्र श्री चुन्नीलालजी लूणिया, रत्नागिरी (म. रा.)
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के इन्द्रावड़ में सपरिवार दर्शन करने एवं सजोड़े आजीवन शीलव्रत पालने के उपलक्ष में भेंट ।

२००) रु० श्री अमोलकचन्दजी भंवरलालजी वीनायकीया, मद्रास
श्री मोतीलालजी के शुभ विवाह के उपलक्ष में भेंट ।

२००) रु० श्री पारसमलजी महावीरचन्दजी मंडोरा, बैंगलोर
श्री सुरेश की शादी के उपलक्ष में भेंट ।

१०१) रु० श्री मनेशकुमारजी मेहता, ग्रहमदाबाद
दिवंगत आत्मा श्री छोटमलजी साहब गांग मेहता की स्मृति में भेंट ।

१०१) रु० श्री जे. ग्रशोकजी गेलड़ा, मद्रास
पूज्य दादा सा. श्री जबरचन्दजी गेलड़ा की पुण्य स्मृति में भेंट ।

१०१) रु० श्री ग्रखेराजजी गौतमचन्दजी बाघमार, कोसाणा (जोधपुर)
पूज्य ग्राचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. का कोसाणा ग्राम में चातुर्मास मंगल प्रवेश के उपलक्ष में भेंट ।

१०१) रु० श्री जवाहरलालजी प्रेमचन्दजी बाघमार, कोसाणा (जोधपुर)
पूज्य ग्राचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. का कोसाणा ग्राम में चातुर्मास प्रवेश के उपलक्ष में भेंट ।

१०१) रु० मैसर्स सम्पतलाल एण्ड ब्रादर्स, जबलपुर
ग्राचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. का कोसाणा ग्राम में पदार्पण के उपलक्ष में भेंट ।

१०१) रु० श्री सायरचन्दजी रिखबचन्दजी बाघमार, कोसाणा (जोधपुर)
ग्राचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. का कोसाणा ग्राम में चातुर्मास हेतु मंगल प्रवेश के उपलक्ष में भेंट ।

१०१) रु० श्री पुखराजजी प्रकाशचन्दजी बाघमार, मद्रास
पूज्य ग्राचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के कोसाणा ग्राम में चातुर्मास हेतु मंगल प्रवेश के उपलक्ष में भेंट ।

१०१) रु० श्री एस. लालचन्दजी बाघमार, कोसाणा (जोधपुर)
ग्राचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के ग्राँख का सफल ग्रॉपरेशन के उपलक्ष में भेंट ।

१०१) रु० श्री पारसमलजी डागा, जोधपुर
पूज्य ग्राचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. की सेवामें कोसाणा ग्राम में दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट ।

१०१) रु० श्री प्यारचन्दजी रांका एवं परिवार, सैलाना (म. प्र.)
ग्राचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के ग्राँख के सफल ग्रॉपरेशन कोसाणा ग्राम में होने के उपलक्ष में भेंट ।

१०१) रु० श्री जवाहरलालजी प्रेमचन्दजी बाघमार, कोसाणा (जोधपुर)
श्रीमती मंजु देवी धर्मपत्नी, चि. सुरेशकुमार बाघमार सुपुत्र श्री जवाहरलालजी बाघमार के ग्रठाई व तेले की तपस्या के उपलक्ष में भेंट ।

१०१) रु० श्री सिमरथमलजी सायरचन्दजी बाघमार, कोसाणा (जोधपुर)
अपने सुपुत्र चि. गणपत बाघमार की अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

१००) रु० श्री शान्तिलालजी खिवसरा, बैंगलोर
सौ. कां. निर्मला कुमारी सुपौत्री स्व. श्री पारसमलजी सुपुत्री श्री शान्तिलालजी खिवंसरा का शुभ विवाह चि. सुशीलकुमारजी सुपुत्र श्री मदनलालजी पलाव के साथ होने की खुशी में भेंट।

५१) रु० श्री प्रकाशजी जैन, इन्दौर
जिनवाणी को सहायतार्थ।

५१) रु० श्री पदमराजजी भंडारी, जोधपुर
पूज्य पिताजी श्रीमान् अजीतराजजी साहब भंडारी की ११वीं पुण्य स्मृति में भेंट।

५१) रु० श्री कांतिलालजी जीवनकुमार रूणवाल, मैसर्स भागीरथ अंबालाल रूणवाल, वीजापुर
पूज्य पिताजी श्री अंबालालजी रूणवाल की पुण्य स्मृति में भेंट।

५१) रु० श्री रतनलालजी रिखबचन्दजी प्रसन्नचन्दजी कोठारी, खवासपुरा,
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के खवासपुरा में पधारने के उपलक्ष में भेंट।

५१) रु० श्री धर्मचन्दजी बाघमार, कोसाणा (जोधपुर)
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के कोसाणा ग्राम में चातुर्मास हेतु मंगल प्रवेश के उपलक्ष में भेंट।

५१) रु० श्री धर्मीचन्दजी हीरालालजी नाहर, कोसाणा (जोधपुर)
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के आँख के सफल ऑपरेशन कोसाणा ग्राम में होने के उपलक्ष में भेंट।

५१) रु० श्री लालचन्दजी मोहनलालजी कोठारी, खवासपुरा,
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के खवासपुरा पधारने के उपलक्ष में भेंट।

५१) रु० श्री सुकनचन्दजी चौरड़िया, जामनेर,
भाणजे श्री झूमरलालजी बाघमार, कोसाणा निवासी के अठाई के उपलक्ष में भेंट।

५१) रु० श्री धर्मचन्दजी पुतरमलजी बाघमार, कोसाणा (जोधपुर)
अपने पुत्र चि. हंसराजजी धर्मपत्नी श्रीमती विमलादेवी के अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

३१) रु० श्री जगदीशमलजी कुमट्ट एवं श्रीमती पुष्पाजी कुमट्ट, जोधपुर
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. की सेवामें दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट एवं चार मास के शीलव्रत अंगीकार करने के उपलक्ष में भेंट।

२१) रु० श्री प्रेमकुमारजी सिंघवी, बारनी खुर्द (जोधपुर)
महासती श्री मैनासुन्दरीजी म. सा. के बारनी खुर्द में पधारने के उपलक्ष में भेंट।

२१) रु० श्रीमती एवं श्री दलपतराजजी ललवानी, बम्बई
श्रद्धेय भैया मुनि श्री नरेशकुमारजी के अष्ठम दीक्षा दिवस के उपलक्ष में भेंट।

२१) रु० श्री नारायणरामजी सुखारामजी चौधरी, कोसाणा
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के चातुर्मास प्रवेश के पूर्व ढाणी में विराजने के उपलक्ष में भेंट।

२१) रु० श्री लालचन्दजी आनन्दमलजी कांकरिया, मद्रास
पूज्य श्री विशालमुनिजी म. सा. का चातुर्मास मद्रास में होने की खुशी में भेंट।

११) रु० श्री मथुरालालजी जैन, सवाईमाधोपुर
सुश्रावक धर्म प्रेमी श्री मथुरालालजी जैन, सवाईमाधोपुर के सुपुत्र चि. गोपाललाल जैन का शुभ विवाह खेरली निवासी सुश्रावक श्री ताराचन्दजी जैन (पल्लीवाल) की सुपुत्री सौ. कां. माया के साथ महावीरजी में सादगी के साथ होने की खुशी में भेंट।

११) रु० श्री मोतीलालजी राजेन्द्रकुमारजी जैन, आलनपुर
चि. राजेन्द्रकुमार के सुपुत्र गौरव को पूज्य आचार्य प्रवर एवं अन्य संतों के कोसाणा में प्रथम बार दर्शन एवं मांगलिक श्रवण करने के उपलक्ष में भेंट।

मण्डल को सहायतार्थ भेंट

२५१) रु० श्री मेवारामजी बांठिया, द्वारा मैसर्स हरकचन्द एण्ड कम्पनी, अहमदाबाद
अपनी धर्मपत्नी श्रीमती सुकीदेवीजी बांठिया की पुण्य स्मृति में भेंट।

५०१) रु० साहित्य प्रकाशन की आजीवन सदस्यता हेतु

३५४. डॉ. प्रेमचन्दजी, मद्रास

४. द्रव्यानुयोग—सम्पादन हो रहा है।

जीव द्रव्य और अजीव द्रव्य की सभी वर्गणाओं के आगम पाठों का हिन्दी अनुवाद सहित संकलन। कर्म, लेश्या, आत्मा, पुद्गल आदि सभी विषयों की जानकारी।

स्वाध्याय प्रेमियों के लिए सुनहरा अवसर :

सम्पूर्ण अनुयोग सेट जिसके बड़ी साइज के लगभग ६००० पृष्ठ होंगे एवं मूल्य १,२५०) रु. होगा। वर्तमान में ४००० पृष्ठ छप गये हैं, वे ८५२) रु. कीमत के हैं। **यह पूरा सेट आधे से कम मूल्य में सिर्फ ५००) रु. में "१५ सितम्बर, १९८९ तक"** घर बैठे प्राप्त हो रहा है। १५ सितम्बर के बाद ७५०) रु. सदस्यता की राशि हो जायेगी।

अतः जिज्ञासु शीघ्र ५००) रु. का **आगम अनुयोग ट्रस्ट, अहमदाबाद** के नाम का ड्राफ्ट भेजकर मंगवालें। पं. रत्न मुनि श्री कन्हैयालालजी म. 'कमल' के ४० वर्ष के परिश्रम के फलस्वरूप ये ग्रन्थ प्राप्त हो रहे हैं। प्रतियाँ सीमित हैं अतः विलम्ब न करें।

पुस्तक विक्रेताओं को भी २० प्रतिशत कमीशन पर पुस्तकें प्राप्त हो सकती हैं।

धर्मकथानुयोग का गुजराती प्रकाशन भी हो गया है।

ड्राफ्ट निम्न पते पर भेजें :
आगम अनुयोग ट्रस्ट
१५, स्थानकवासी सोसायटी,
नारायणपुरा क्रॉसिंग के पास,
अहमदाबाद—३८० ०१३

निवेदक :
श्री बलदेवभाई डोसाभाई पटेल
श्री हिम्मतमल शामलदास शाह
श्री जयन्तिभाई संघवी

विशेष जानकारी के लिए :
राजेश भण्डारी, श्री वर्धमान महावीर केन्द्र,
सब्जी मण्डी के सामने, आबू पर्वत—३०७ ५०१

यह शरीर नौका रूप है, जीवात्मा उसका नाविक है और संसार समुद्र है। महर्षि इस देह रूप नौका के द्वारा संसार-सागर को तैर जाते हैं। उत्तराध्ययन 23/73

अपनी बात

तनाव-मुक्ति का साधन : प्रतिक्रमण

□ डॉ० नरेन्द्र भानावत

विज्ञान द्वारा विभिन्न क्षेत्रों में जो तकनीकी विकास हुआ है, उससे इन्द्रिय-भोग और भौतिक सुख-सुविधाओं के साधनों में आशातीत वृद्धि हुई है। इसके परिणामस्वरूप औसत व्यक्ति की आवश्यकतायें भी निरन्तर बढ़ती जा रही हैं। एक आवश्यकता की पूर्ति होते ही दूसरी आवश्यकता जन्म लेती है और आवश्यकताओं का जाल नई-नई इच्छायें उत्पन्न कर व्यक्ति को तनावग्रस्त कर देता है। यह तनाव शरीर और मन को बुरी तरह व्याकुल, व्यग्र बनाये रखता है तथा कुण्ठा, अवसाद, निराशा, दैन्य, हीनता की ग्रन्थियों को पैदा करता है। आकांक्षा और उपलब्धि का अन्तर व्यक्ति को हर स्तर पर अभावग्रस्त बनाये रखता है। परिणामस्वरूप वह जीवित रहते हुए भी जड़ बना रहता है। तनाव के दबाव को असह्य समझ कर उससे छूटने के लिए व्यक्ति मादक द्रव्य एवं नशीले पदार्थों की ओर लपकता है। चरस, गांजा, अफीम, शराब आदि के साथ-साथ विविध ड्रग्स के प्रयोग से व्यक्ति क्षणिक सुख का अनुभव कर विस्मृति में लौट जाता है और कुछ समय के लिए तनाव और दबाव से अपने को मुक्त अनुभव करने लगता है। पर तनाव मुक्ति की यह प्रक्रिया व्यक्ति की स्वाभाविक ऊर्जा को सोख लेती है, उसकी चेतना नष्ट होने लगती है और वह निसत्व बनकर अपनी स्वाभाविक प्राणवत्ता एवं संवेदना को खो बैठता है। अन्ततः वह जीवन की बाजी हार जाता है और अपने को निरर्थक, बेमानी समझने लगता है। जीवन उसके लिए बोझ, नीरस और अभिशापयुक्त बन जाता है।

तन, मन पर बढ़ते हुए इस तनाव और दवाव से छूटने का एक मनोवैज्ञानिक साधन है "प्रतिक्रमण"। "प्रतिक्रमण" का अर्थ है—पाप से पीछे हटने की क्रिया। दूसरे शब्दों में विभाव से स्वभाव में आने की प्रक्रिया। विभाव हैं—क्रोध, मान, माया, लोभादि विकार, दोष। व्यक्ति इन्द्रियों के सुख भोग के लिए सामग्री जुटाने में नाना प्रकार के दुष्कृत्य करता है। अनुकूल के प्रति राग और प्रतिकूल के प्रति द्वेष करके वह अपनी आत्मा को मलीन करता रहता है। अपने निज ज्ञान का अनादर कर वह विषय-वासना वर्धक ज्ञान में उलझा रहता है। मन, वचन और कर्म की अशुभ प्रवृत्तियों में भटकता फिरता है। अपने दोषों

को भी वह गुण समझने लगता है और दूसरों के गुणों को भी दोष समझने लगता है। इस विपरीत वृत्ति के कारण उसकी स्वाभाविक शक्ति का ह्रास होता रहता है। प्रतिक्रमण द्वारा व्यक्ति शान्त चित्त होकर अपने दोषों को देखने का अवसर पाता है। निज ज्ञान का आदर करने की भावना उसमें जागृत होती है। अपने प्रत्येक कार्य को वह सजग होकर देखने लगता है। तब वह क्रोध से क्षमा में, अहंकार से विनय में, माया से सरलता में और लोभ से संतोष में लौटने लगता है।

"प्रतिक्रमण" का भाव तभी जागता है, जब अन्दर से सरलता जागती है। सरलता में ही समता स्थित होती है। सरल चित्त संतुलित बना रहता है, उसमें कथनी और करनी का व भीतर और बाहर का भेद नहीं रहता है। ज्योंही भूल, भूल मालूम होती है, वह उसे स्वीकार कर लेता है और आगे वह भूल फिर न हो, उसके लिए संकल्पबद्ध होता है। यदि व्यक्ति प्रतिदिन के पूरे कार्यों पर दिन के अन्त में और रात के पूरे कार्यों पर रात के अन्त में चिन्तन-मनन कर ले और उनमें रही हुई कमियों, त्रुटियों को देख ले, समझ ले तो उस पर दिन और रात के कार्यों का दबाव और बोझ नहीं रहता। जिस प्रकार घर की सफाई नियमित करने से वह साफ रहता है, उसी प्रकार अपने कृत कार्यों का प्रतिलेखन करते रहने से मन साफ होता है, उसमें गाँठें नहीं पड़तीं। "प्रतिक्रमण" मन की गांठों को खोलने का सरल विधान है।

हम प्रतिदिन जो भी प्रवृत्ति करते हैं, यदि उसमें कोई दोष रहता है तो अपने मानसिक चिन्तन द्वारा हम उस दोष को धोते रहते हैं। दोष का निरन्तर प्रक्षालन होते रहने से मैल जमा नहीं होता और धीरे-धीरे मैल जमने के कारण भी मिटने लगते हैं। दूसरे शब्दों में हमारी क्रिया इतनी सधी हुई और विवेक सम्मत होने लगती है कि वह पाप-ग्रंथि का कारण नहीं बनती। हम चलते हैं पर इस प्रकार कि दूसरों को चलने में कोई बाधा नहीं हो। हम मन में उठे हुए विचारों को अभिव्यक्त करते हैं पर इस प्रकार कि उनसे किसी के मन को ठेस न लगे। हम जीवित रहने के लिए आवश्यक भोजन, पानी व अन्य सामग्री का उपभोग-परिभोग करते हैं पर इस प्रकार कि दूसरों को उनसे वंचित न करें। आवश्यकता न होने पर हम उनका अनावश्यक संग्रह न करें। हम अपने पूरे परिवेश को शुद्ध और स्वच्छ रखें पर दूसरों के परिवेश और वातावरण को दूषित और मलीन बनाकर नहीं। यह उपयोग दृष्टि प्रतिक्रमण करते रहने से बनी रहती है।

"प्रतिक्रमण" जीवन में स्वस्थता और शुद्धि लाने के साथ-साथ समता और स्वावलम्बन का भाव जगाता है। जब हम अपने खूँटे पर आ जाते हैं, तब

हमारा केन्द्र मजबूत हो जाता है। बाहरी भटकन में जो शक्ति नष्ट होती है, वह भीतर के जुड़ने से संचित होने लगती है। उस शक्ति को बचाकर तभी रखा जा सकता है जब सबके प्रति प्रेम, करुणा और क्षमा का भाव हो। "प्रतिक्रमण" द्वारा हम अपने कृत दोषों की निन्दा कर हल्के हो जाते हैं। यह हलकापन हमें वर्तमान जीवन जीने में शक्ति और भावी जीवन को निर्दोष बनाने में रोशनी देता है। यह शक्ति और रोशनी तभी बनी रह सकती है जब हम भावना और संवेदना के स्तर पर बड़ी सच्चाई के साथ प्रतिक्रमण करें। इस स्थिति में इन्द्रिय-भोगों में सुख है, यह भ्रान्त धारणा स्वतः मिटती जायेगी और संयम व त्याग का मार्ग उन्नत होता जायेगा। ज्यों-ज्यों हम चेतना के उच्च स्तर की ओर प्रयाण करेंगे, त्यों-त्यों संयम का सुख बढ़ता जायेगा। सौधर्म, ब्रह्मलोक, सहस्रारकल्प जैसे दिव्य लोक को पार करते हुए हम ऐसी स्थिति पर पहुँच जायेंगे, जो अच्युत है, जहाँ से कोई च्युत नहीं होता। यह स्थिति भद्र, सुभद्रमय होकर सुमानस में सुप्रतिबद्ध होकर यशोधर बन जायेगी और तब मान और अहंकार से रहित होकर ऐसे सम्मान को प्राप्त करेंगे, जहाँ किसी को पराजित करना शेष नहीं रहता, जहाँ कोई शत्रु नहीं रहता। सबके प्रति प्रेम, सबके प्रति क्षमा, सबके प्रति मैत्री। यह अवस्था सर्वार्थ सिद्ध अवस्था है। जहाँ कुछ 'करना' शेष नहीं रहता, जहाँ 'होना' ही होना है। तनाव 'करने में' रहता है, 'होने में' नहीं। 'होना' तनाव रहित अवस्था है, जो प्रतिक्रमण की प्रक्रिया से संभव है।

साधक के लिए प्रातः सायं "प्रतिक्रमण" का विधान है। पर सामान्य व्यक्ति यदि ऐसा न कर सके तो १५ दिन में एक बार प्रतिक्रमण करे। यदि ऐसा न हो सके तो चार माह में एक बार प्रतिक्रमण करे और यदि यह भी न हो सके तो वर्ष में एक बार सांवत्सरिक प्रतिक्रमण अवश्य करे। प्रतिक्रमण एक प्रकार का आय-व्यय का रिटर्न भरना है। जो ऐसा नहीं कर पाता, वह दण्ड का भागी होता है। रिटर्न का अर्थ वापिस लौटना है और यही प्रतिक्रमण है।

जीवन पथ में चालताँ, ठोकर जो लग जाय।
ठोक-पीठ कर देख लो, भूल फूल बण जाय।।

तन-मन में गांठां घणी, रस सोखे दिन-रात।
प्रतिक्रमण री धार सूँ, फूटे प्रेम-प्रपात।।

सांवत्सरिक क्षमायाचना

हम अपनी प्रत्यक्ष एवं परोक्ष भूलों के लिए 'जिनवाणी' के सभी पाठकों, सदस्यों, लेखकों, दानदाताओं एवं हितैषियों से मनसा, वाचा, कर्मणा से क्षमायाचना करते हैं।

'जिनवाणी परिवार'

हम क्या हैं ? क्या चाहते हैं ?

□ श्री लालचन्द जैन

विषय अधिक जटिल लगता है लेकिन समाधान उतना पेचीदा नहीं, बहुत ही सरल है।

हमें ठंडक के लिये शीतल जल चाहिये, उसे मिट्टी के घड़े में, शर्बत में, दूध में से प्राप्त न कर, फ्रिज में पड़ी बासी बोतलों, बीयरों और अति अधिक आधुनिकता के शब्दों में कहें तो स्कॉच की बेसेफ बोतलों से प्राप्त करने का प्रयास कर रहे हैं।

हम आदर्श माँ, बेटी और बहू की कामना करते हैं और प्रतिदिन अर्धनग्न केबरों के चलचित्र, विज्ञापन, क्लब और अति आधुनिकता की भाषा में कहें तो ब्लू फिल्म हमारे मनोरंजन के साधन बन रहे हैं।

इन सभी कटु सत्यों से मेरा अभिप्राय यह नहीं कि हमारे में गुण हैं ही नहीं। हम सर्वगुण सम्पन्न हैं लेकिन उसका दायरा मात्र एक बिन्दु सा बन गया है। जिसकी न कोई लम्बाई है, न चौड़ाई, न ऊँचाई। हमारी स्थिति उस पनि-हारिन की तरह है जो अपने घड़े में ही पूर्ण गंगा समझ रही है, जिसे वह अपने सर पर रखे हुए है। आवश्यकता है नेत्र की विशालता की, बिन्दु के क्षेत्र को वृत एवम् पूर्ण सृष्टि बनाने की।

हमारे तीर्थंकरों के पास क्या नहीं था फिर भी उन्हें शान्ति न मिली। शान्ति के लिये उन्होंने सबका त्याग कर दिया और आत्म-चिन्तन में लीन हो गये। जब कुछ पाया तो मार्गदर्शन हेतु उपदेश दिये। दुःख है, आज हम उनका सद्-उपयोग नहीं कर पा रहे।

एक आचार्य देव की डायरी पढ़ रहा था। अगस्त १९५० के एक दिन में अंकित है "यदि इन्सान में पूर्ण इन्सानियत आ जाये तो देव व मानव तो क्या पत्थर तक उसकी आज्ञा का उल्लंघन नहीं कर सकता।" यह पूर्ण सत्य है। आज विश्व का कोई धर्म, कोई प्राणी इस सिद्धान्त का खण्डन नहीं करता कि—

"जैसा तुम अपने लिये चाहते हो उसी की चाहना सभी के लिये करो।"

"जैसा तुम अपने लिये नहीं चाहते हो उसकी चाहना किसी के लिये न करो।"

यही सच्ची इन्सानियत है। यदि उसी मार्ग पर हम सब चलेंगे तो कल सभी तरफ मंगल ही मंगल होगा, हमें पूर्ण वास्तविक शान्ति की प्राप्ति होगी और अधिक प्रयत्न करेंगे तो कंकर से शंकर और नर से नारायण बनने में भी समय नहीं लगेगा, अन्यथा काल हमें इसी नरक में सड़ने से नहीं रोक पायेगा।

[illegible], विज्ञान नगर, कोटा-३२४००५

प्रवचनामृत :

ज्ञान : मुक्ति का सोपान•

□ आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०

भगवान् महावीर का शासन चल रहा है। प्रभु महावीर ने चतुर्विध संघ को लक्ष्य कर, अपने पूर्ण ज्ञान से प्राप्त अनुभव का कल्याण मार्ग बतलाया। सूयगडांग सूत्र के प्रथम श्लोक में कहा है कि—

"बुज्झिज्ज त्ति उट्टिजा, बंधणं परिजाणिया।
किमाह बंधण वीरे, किं वा जाणं ति उट्टइ।"

अर्थात् "बोध करो" और बन्धन को काटो। बिना ज्ञान के बन्धन का काटना असम्भव है। बन्धन के लिए भले ही ज्ञान की जरूरत नहीं हो, पर उसे खोलने के लिए तो बन्ध की जानकारी आवश्यक है।

सभा में बैठी बहनों को चरखा कातने का कभी प्रसंग आया होगा तो यह भी देखने का मौका मिला होगा कि कभी बच्चे ने खेलते-खेलते ही कोकड़ी उठाली और उसे उलझा दी। परन्तु उस उलझी हुई कोकड़ी को बच्चा खोल नहीं सकता, भले ही वह उसे तोड़ दे किन्तु खोलने के लिए तजुर्बा—जानकारी चाहिए। बुनकर या चतुर बाई आसानी से उसे सुलझा लेगी। यह हुई द्रव्य बन्धन की बात। द्रव्य गांठ यदि नहीं खुली तो कोई खास हानि नहीं किन्तु भाव गांठ—कर्म के साथ जीव के गठ-बन्धन को खोलने के लिए साधक मात्र का लक्ष्य रहता है और रहना ही चाहिए।

आप सब इस सभा में अपना व्यवसाय धन्धा छोड़कर क्यों आये? और क्यों बैठे हैं? हम क्यों बोल रहे हैं? क्या मनोरंजन के लिए? यदि हां, तो मनोरंजन की बातें तो अन्य स्थान पर या सिनेमाघरों में भी सुनने को मिल सकती हैं। रेडियो पर भी बड़े-बड़े आकर्षक-मनोरंजक कार्यक्रम चलते रहते हैं फिर भी आप यहाँ तक आये तो व्यापार या शृंगार की बातें सुनने को नहीं आये हैं। निश्चय ही आप भव-बन्धन काटने के उपाय सोचने को आये हैं। हम भी अपनी

• आचार्य श्री के प्रवचन से संकलित।

निर्जरा के हेतु और आप सुनने वालों की कर्म निर्जरा के हेतु बोल रहे हैं। इस प्रकार ज्ञान का लाभ यह सत्संग का तात्कालिक फल है।

कर्म का आत्मा के साथ बन्धन कब और कैसे पड़ा तथा उसके कारण क्या हैं? यह जानकर पीछे उसे खोलो। सुधर्मा स्वामी ने कहा—जम्बू! सोचो, भगवान् ने बन्धन किसे कहा और उसे जानकर कैसे काटा जा सकता है?

भगवान् महावीर की सेवा में शिवानन्दा भी पहुँची। उस समय धर्म सभा की व्यवस्था निराले ढंग की थी। उस समय राजमाता हो या किसान बहिन, समवसरण में सभी खड़ी-खड़ी अमृतरस पान करतीं। कहा जाता है कि चातक एक मेघ का ही पानी पीता है। तालाब, नदी, नाले के पानी से उसकी प्यास नहीं बुझती। वह गंगा के पवित्र जल को भी पेय और अपेय समझता है। चातक की प्यास स्वाती के मेघ की बून्दों से ही मिटती है, वह सीधी मेघ बून्दों को ही ग्रहण करता है अन्यथा जीवन गंवा देता है।

शिवानन्दा भी चातक की तरह तन्मय होकर प्रभु के मुखारविन्द से निकली उपदेशप्रद वाणी का श्रवण कर रही है। भगवान् की देशना और शिवानन्दा के श्रुत-ग्रहण को लेकर शास्त्रकार कह रहे हैं कि—उस वाणी में, देशना में, मुख्य दो बातें होती हैं। इसकी झांकी पूर्णतया उववाई सूत्र में देखनी चाहिये।

धर्म का स्वरूप बतलाने के पहले भगवान् वस्तु स्वरूप बतलाते हैं। जो पदार्थ संसार में हैं उस अस्तिभाव को अस्तिरूप से और नास्तिभाव को नास्तिरूप से बतलाते हैं। इसका अभिप्राय साधक के मन में श्रद्धा उत्पन्न करना है। जो आत्मा, अनात्मा, बन्ध-मोक्ष और पुण्य-पाप आदि को नहीं मानते, वे श्रावक धर्म को अंगीकार कैसे करेंगे?

सम्यग्दर्शन के छः स्थान बतलाये हैं और कहा है कि सर्व प्रथम यह विश्वास करो कि जीव द्रव्य शाश्वत है, त्रिकाल सत्ता अबाधित है। ऐसा कोई काल नहीं था, नहीं है और नहीं होगा जिसमें जीव द्रव्य नहीं हो। गत काल में जीवन धारण किया, अभी जीवित है और भविष्य में जीवित रहेगा। इस प्रकार का विश्वास पहला स्थान है।

दूसरी बात जीव-चेतना लक्षण है। यह घड़ी बोलती है, चलती है, जोर की आवाज भी दे सकती है फिर भी उसे जीव क्यों नहीं कह सकते? चलती मोटर भी है और चलता बैल भी। एक जड़ है, दूसरा चेतन। एक की गति कई गुना अधिक है फिर भी वह जड़ है। मोटर का ईन्जन या घड़ी का पुर्जा टूट गया तो वह यह भी नहीं बता सकती कि मैं बिगड़ गई हूँ। बैल अपने फिसले-टूटे पैर

को संभालने की शक्ति भर कोशिश करेगा। यदि संयोगवश ऐसा नहीं कर सकेगा तो खूब जोरों से चिल्लायेगा, जिससे दूसरे उसकी ओर ध्यान दे सकें। चेतना के कारण ही वह वैसा कर पाता है। मोटर चलती है किन्तु अजीव है, चेतनाहीन है। सही और गलत को वह नहीं समझ सकेगी। रेकार्ड की चूड़ी गांधीजी का संदेश या किसी नेता का प्रवचन और गायन सुनाती है। एक तो रेकार्ड बोलता है और दूसरा आप बोलें तो इन दोनों के बोलने में अन्तर होगा या नहीं? गीता या गांधी प्रवचन आदि की रेकार्ड वैसे ही बोलेगी जैसे उनका वक्ता बोलता है। उसकी चाल या शब्द तेज या मंद ऊँचे-नीचे आदि बोलने वाले के अनुकूल ही होंगे यहाँ तक कि बीच में बोलते हुए उसे खांसी भी आ जाय, तो वे सारी बातें रेकार्ड में वैसी ही ध्वनित होंगी। किन्तु आपने पढ़ते-पढ़ते भी यदि देख लिया कि यह गलत छपा है तो उसे सुधार लेंगे। सजीव अपनी चेतना को भूल जाय, यह बात अलग है, अन्यथा कोई कमजोरी-गलती भी आ गई तो उसे समझ कर वह सम्भाल लेगा।

भगवान महावीर ने शिवानन्दा के सम्मुख देशना में फरमाया कि सुख-दुःख, पुण्य-पाप के परिणाम हैं। यदि दुःख से बचना चाहते हैं तो दुःख के कारणों से बचो। क्योंकि कारणों के रहते हुए दुःख रूप कार्य कैसे खत्म हो सकता है?

राष्ट्रीय प्रार्थना में ठीक ही कहा है—

उठ जाग मुसाफिर भोर भई, अब रैन कहां जो सोवत है।
नादान भुगत करनी अपनी, ओ पापी पाप में चैन कहां,
जब पाप की गठरी शीश धरी, फिर शीश पकड़ क्यों रोवत है?
उठ जाग०

इसके मूल वचन के तौर पर आगम में सूत्र मिलता है, "उट्ठिए नो पमायए" अनन्त काल तक निगोद वनस्पति में सोकर अब जगे हो अगर अब भी प्रमाद करोगे, तो आगे क्या होगा?

यह निद्रा भी अनन्त पुण्यवानी के बिना नहीं टूटती। जिसके कर्म के दल हलके होते हैं, पुण्य बंध अधिक होता है, वही पुरुषार्थ के द्वारा मोह और अज्ञान की निद्रा को दूर कर जागृत हो सकता है। द्रव्य निद्रा की बात भी ऐसी ही है। आप कहीं की यात्रा कर रहे हों और आपके पास बक्स और गठड़ी हो और ऐसी स्थिति में आपको नींद आ जाय तो क्या आपका सामान सुरक्षित रह सकेगा? क्या आपका माल चालाक और उचक्के नहीं ले लेंगे, जो केवल गफलती और प्रमादी की टोह में ही लगे रहते हैं। इस तरह थोड़ी देर की भी यह द्रव्य निद्रा आपके लिए कितनी दुःखदायी बन जायेगी।

यदि हम आत्मा की शुद्धि और बुद्धि की संभाल न रखेंगे तो जीवन-यात्रा सफल कैसे होगी ? जैसे कोई गारुड़ी अच्छे ढंग से पुंगी बजावे तो उसकी धुन पर छिपा सांप भी बाहर निकल आता है और नाचने लगता है । वैसे ही भगवान की अमृतमयी वाणी सुन कर आत्मा की सोयी शक्ति भी जाग जाती है । आवश्यकता है कि श्रोता तन्मयता और लगन पूर्वक वाणी का श्रवण करे । यदि कोई भव्य प्राणी जग जाय तो वह कदम पीछे नहीं रखता । अपने स्वरूप एवं कर्तव्य का भान होते ही, वह आगे बढ़ने को मचल उठता है ।

शिवानंदा की आत्मा में भी बल प्रगट हुआ, वह सोचने लगी कि आज तक जो मैं यह समझ बैठी थी कि कोई बाहरी शक्ति हमारा नियन्त्रण करती है, वह ठीक नहीं है । भगवान के वचन से स्पष्ट पता चलता है कि "तारने वाला या डुबाने वाला मेरे भीतर बैठा है । यह आत्मा ही परमात्मा है और यही शुद्ध, बुद्ध और आनन्द रूप है ।" कहा भी है—

"अप्पा कामदुहा घेणु, अप्पा में नंदणं वणं ।"

इसी भाव को किसी गुजराती कवि ने इस प्रकार कहा है—

"न भरवा भूलना भारा, समझवा सत्यना धारा ।
खरूं हित हाथ मां त्हारा, विचारी चाल जो वहाला ।।
कठिन छे कालनी करणी, विषय संसारनी सरणी ।"

अर्थात्—हे मित्र ! संसार की यात्रा में सोच विचार कर चल, पहले तो यह सोच कि गुनाह का भार तो सिर पर नहीं लाद रहा हूँ, और दूसरा सत्य की धारा को भूल तो नहीं रहा हूँ । ये दोनों बातें ध्यान में रही तो बन्धन कहां रहेंगे ? अपनापन या गर्व-अहंकार की मात्रा बढ़ाकर यदि अपनी बात रखना चाहेगा तो निश्चय बन्धन बढ़ायेगा किन्तु वीतराग-वाणी के ग्रहण करने से बंधन ढीला होगा और अन्त में मंजिल हाथ लग जायेगी ।

शिवानन्दा के अन्तर पुलकित हो उठे, उसके रगरग में खुशी भर गयी । वह भगवान के चरणों में प्रार्थना करने लगी कि "हे प्रभु ! आपके प्रवचन पर मैं श्रद्धा, प्रतीति एवं रुचि करती हूँ, पर मेरी इतनी शक्ति नहीं कि मैं साध्वीपन स्वीकार करूँ । अतः मुझे श्राविकापन ग्रहण करने की स्वीकृति देवें ।" शिवानंदा दर्शक नहीं ग्राहक थी, जैसे दुकान को देखने वाले हजारों होते हैं, मगर माल लेने वाले थोड़े ही होते हैं । व्यवसायी को दर्शक से कुछ लाभ नहीं, लाभ तो माल लेने वालों से ही मिलता है । वैसे संतों की सभा में संख्या का महत्त्व नहीं, महत्त्व इस बात का है कि जो कोई संतवाणी से कुछ अपनायेगा, वह अपना भी लाभ और उपदेशक के श्रम को भी सार्थक करेगा ।

चिन्तन :
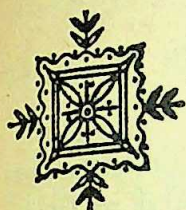
संस्कार की जड़ें

☐ उपाध्याय श्री केवल मुनि

एक भाई दर्शन करने आया ! मैंने पूछा "क्यों भाई ! तुम्हारे गाँव में प्रार्थना का कार्यक्रम ठीक ढंग से तो चल रहा है न ?"

उसने कहा—"गुरुदेव ! अब चलता नहीं, घिसट रहा है ?"

मैंने पूछा—"क्या मतलब ?"

वह सज्जन बोला—"महाराज ! आप थे, तब तो छोटे-छोटे बच्चे भी प्रार्थना में दौड़कर आते थे, पर्युषण जैसा रंग जमता था, मगर आपके विहार करते ही उधर सब विहार कर गये । अब तो सिर्फ पाँच-सात व्यक्ति आते हैं ।"

मैंने सोचा, क्या बात है ? मुनिजन आते हैं, तो धूमधाम मच जाती है, लोग दौड़े-दौड़े आते हैं, ऐसा लगता है—गाँव का बच्चा-बच्चा धर्म रंग में रंगा है, लेकिन सन्तों के विहार करते ही तो रंग ऐसे उड़ जाता है, जैसे धूप लगते ही हल्दी का रंग ।

चिन्तन से एक बात समझ में आई । भगवान महावीर ने कहा—**"अणुसोओ संसारी"** संसार अनुस्रोत में चलता है, प्रवाह में बहता है, समाज एक भेड़ चाल है । अपना चिन्तन या अपना संस्कार नहीं है । जब तक संस्कार गहरे नहीं होते, तब तक धर्म का बीज अंकुरित नहीं होता । प्रवाह आता है, चला जाता है, भीतर नमी नहीं पहुँचती । बीज जड़ें नहीं पकड़ता ।

पानी जब धरती पर बरसता है, तो जो बंजर धरती होती है, वहाँ अंकुर नहीं उगते !

साधारण धरती पर कुछ घास उग आती है, जो दो-तीन महीने हरी रहती है, फिर समाप्त !

अच्छी मुलायम, उपजाऊ भूमि पर मक्का, ज्वार, गेहूँ उगता है, जो चार-छह महीने बाद समाप्त हो जाता है, किन्तु रसदार भूमि पर नारियल, आम, नीम, इमली, उगते हैं, इनकी जड़ें धरती में गहरी चली जाती हैं तो ये बरसों तक टिके रहते हैं, बड़े होने पर ऊपर से पानी मिले या न मिले, वे अपना पोषण स्वयं खींच लेते हैं और वर्षों फलते-फूलते हैं ।

ठीक यही दशा सन्तों के नगर में आने पर होती है । कुछ लोग पत्थर या बंजर भूमि के समान होते हैं, पानी बरसा तो क्या और न बरसा तो क्या, उनके

जीवन में कोई अन्तर नहीं । सन्त आयें तो क्या और न आयें तो क्या, उन्हें कुछ फर्क नहीं पड़ता ।

कुछ लोग जो भावुक होते हैं, मगर संस्कारी नहीं होते, वे घास की तरह जल्दी बढ़ते हैं, और दो-तीन महीने बाद सूख जाते हैं । संवत्सरी हुई कि सन्तों के दरवाजे बन्द । संवत्सरी तक माला, सामायिक, प्रार्थना आदि चलते हैं !

कुछ लोग गेहूँ, ज्वार की खेती की तरह चौमासे भर धर्म ध्यान, जप-तप-उपवास, प्रतिक्रमण करते हैं । सन्तों का विहार हुआ कि बस, स्थानक में आना-जाना भी बन्द !

चौथे प्रकार के कुछ लोग होते हैं, जो आम और नारियल के वृक्ष की भांति सदा हरे-भरे लहलहाते हैं । साधु नगर में आवे या न आवे, उनकी धर्म-साधना, सामायिक क्रिया, प्रतिक्रमण, पौषध आदि चलते रहते हैं, उनमें धर्म के संस्कार गहरे जमे होते हैं, उनकी श्रद्धा व ज्ञान की जड़ें गहरी होती हैं ।

मुझे याद आता है, एक शेर; मस्जिद में नमाजी को देखकर एक शायर ने विचारों को अपने शब्दों में यूँ कहा है—

दिल खुश हुआ है, मस्जिदें वीरान देखकर,
मेरी तरह खुदा का भी खाना खराब है ।

समाज में जब तक धार्मिक चिन्तन की, धर्म, श्रद्धा और संस्कार की जड़ें गहरी नहीं होंगी, बालकों व युवकों के मन में संस्कार नहीं बनेंगे, तब तक धर्म, प्रवाह का रूप ही लेकर रहेगा । ज्यादा से ज्यादा घास-पात की फसल की तरह दो-चार मास तक सत्संग का प्रभाव रहेगा, लेकिन अन्न-धान्य व फलदार वृक्षों की फसल की भांति संस्कारों में स्थायित्व नहीं आयेगा, अत: आज गाँव-गाँव में संस्कार जगाने की, संस्कारों को गहराने की आवश्यकता है, ताकि धर्म की, नैतिकता की फसल हो; वह फलदार वृक्षों की तरह अपनी जड़ें गहरी, बहुत गहरी जमा सकें ।

हाँ, एक बात और सोचता हूँ, संस्कारों की जड़ें गहरी जमाने के लिए भी प्रयत्न होना चाहिए, इसमें इस क्रम से चला जा सकता है, सर्वप्रथम घर का, परिवार का वातावरण धर्ममय हो, परिवार का रहन-सहन, व्यवहार, बोल-चाल, सभी नैतिक मर्यादा व धार्मिकता से जुड़े हों, फिर बच्चों को उसी प्रकार का साहित्य पढ़ने को दिया जाय । वातावरण और पुस्तकें संस्कार जगाने में सर्वाधिक सहायक होती हैं । इसके साथ शिक्षण-शिविर, विद्यालयों में नैतिक शिक्षण तथा अन्य प्रभावी माध्यमों से संस्कार-शुद्धि का प्रयास होना चाहिए ।

संस्कार एक दिन में नहीं बदलते, धीरे-धीरे यह परिवर्तन होगा, लेकिन प्रयास आज से ही प्रारम्भ कर देना चाहिए । □

भौतिक विज्ञान और अध्यात्म-अनुभव

□ प्रवर्तक श्री रमेश मुनि

वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में आज भौतिक विज्ञान के विकास के चरण बढ़ते चले जा रहे हैं। उसका कार्य-क्षेत्र और कर्म-क्षेत्र आशातीत व्यापक हो चुका है। नित्य नये-नये आविष्कारों और अनुसंधानों ने सचमुच मानव जगत् को चमत्कृत कर दिया है। यही कारण है कि—आज हर एक गाँव, नगर, प्रांत, राज्य, देश, समाज उन नये-नये आविष्कारों (भौतिक विज्ञान) के साथ जुड़कर आगे बढ़ने के लिए लालायित है। आज का प्रगतिशील तथा अप्रगतिशील समाज न वैज्ञानिक साधन-प्रसाधनों से अपने को अलग-थलग रखना चाहता है और न अपने को उनसे वंचित ही।

क्योंकि—"प्रत्यक्षे किं प्रमाणम्।" के अनुसार आज भौतिक-विज्ञान की अनेक विशेषताएँ प्रत्यक्ष हो चुकी हैं। कृत कार्यकलापों की अच्छी या बुरी प्रतिक्रिया उपस्थित करने में वह देर नहीं करता। एक सैकण्ड में हजारों-हजार बल्बों में विद्युत् तरंगें तरंगित होने लगती हैं। कुछ ही मिनटों-घंटों में हजारों मील का फासला तय करवा देता है। आँख की पलक झपकते इतने समय में हजारों मील दूर रहते हुए वे गायक, वक्ता, चित्र के रूप में ही नहीं, आँखों के सामने नाचते-घूमते-दिखने लग जाते हैं। गुरुतर संख्या वाले गणित के हिसाबों को देखते-देखते कम्प्यूटर सही-सही आँकड़ों में सामने ले आता है। हजारों मील दूर बैठे व्यक्तियों से टेलीफोन के माध्यम से बातें हो रही हैं। उपग्रह अनंत आकाश में उड़ानें भर रहा है। उसका नियंता धरती पर बैठा-बैठा निर्देशन दे रहा है, नियंत्रण कक्ष (कन्ट्रोल-रूम) को संभाले बैठा है। बीस-पच्चीस कदम दूर बैठा मानव रिमोट कन्ट्रोल के माध्यम से टी० वी० को चालू कर रहा और बन्द भी, बीच में कोई माध्यम जुड़ा हुआ नहीं है।

वैज्ञानिक साधनों के कारण आज जल, थल और नभ मार्गों की भयावनी यात्राएँ सुगम-सुलभ एवं निर्भय सी बन गई हैं। कई वैज्ञानिक उपकरण शरीर के अवयवों के स्थान पर कार्यरत हैं। एक्स-रे मशीन शरीरस्थ बीमारियों को प्रत्यक्ष बता देती है। आज ऐसे भी संयंत्र उपलब्ध हैं, जो शारीरिक संतुलन को ठीक बनाये रखने में सहायता करते एवं हलन, चलन, कम्पन, स्पन्दन, धड़कन

गति को बताने में सक्षम हैं। वैज्ञानिक साधनों के आधार पर यह पता लगा लिया जाता है कि—अमुक खनिज भण्डार, धातु-गैस, रसायन या तरल पदार्थ अमुक स्थान पर धरती के गर्भ में समाहित हैं। हजारों मानव या पशु जगत् जिस गुरुतर काम को करने में महिनों पूरे कर देते हैं, उसे कुछ समय में ही पूर्ण करने की क्षमता विज्ञान में निहित है। ऐसे भी साधन उपलब्ध हैं—जिनका यथास्थान उपयोग करने पर बहरा व्यक्ति सुनने, अन्धा देखने और लंगड़ा-अपंग मानव चलने-फिरने, घूमने लग जाता है। मारक और हानिकारक उपकरण के बटन को दबाया कि—हजारों-लाखों मानवों, पशु-पक्षियों, जानवरों का जीवन खतरे के बिन्दु को छूने की तैयारी में हो जाता है। उनके मस्तक पर मौत मंडराने लगती है।

ऐसे यंत्रों का भी वैज्ञानिक परीक्षण हो चुका है जिनका यथास्थान समय पर उपयोग करने पर प्राणियों के स्वभाव और आदतों में तत्काल परिवर्तन-परिवर्धन देखा जा सकता है। अब स्वभाव बदलने की बात असंभव नहीं रही। मानवों पर प्रयोग हो रहे हैं। पशुओं पर अनेक प्रयोग-परीक्षण हो चुके हैं। बन्दरों, मेढकों, चूहों और पेड़-पौधों पर प्रयोग हुए और हो रहे हैं। शरीरस्थ उन केन्द्रों का ठीक-ठीक पता लगाया जा चुका है, जिन्हें उत्तेजित करने पर प्राणी के स्वभाव में परिवर्तन आ जाता है।

दो बिल्लियाँ हैं—एक के सिर पर इलेक्ट्रोड लगाकर उसके भूख-केन्द्र को शांत कर दिया गया। दोनों के सामने भोजन रखा गया। एक बिल्ली तत्काल उसे खाने लगी और दूसरी शांत बैठी रही।

बन्दर के हाथ में केला दिया, वह खाने की तैयारी में था कि—इतने में उसके सिर पर इलेक्ट्रोड लगाकर उसके भूख-केन्द्र को शांत कर दिया गया। उसने तत्काल केला नीचे डाल दिया। आहार, भय, निद्रा और वासनाजन्य केन्द्रों को विद्युत् झटके देकर शान्त कर दिया जाता है। विज्ञान ने उन सभी केन्द्रों को खोज निकाला है।

चूहे और बिल्ली का पारस्परिक जन्मजात वैर रहा है, परन्तु दोनों के मस्तक पर इलेक्ट्रोड लगा दिये गये। बस, न बिल्ली के मन में वैर, न चूहे के मन में भय पैदा हुआ। चूहा और बिल्ली दोनों सप्रेम आपस में खेलने लग गये। इस तरह स्वभाव परिवर्तन आज सम्भव हो गया है।

अमेरिका ने एक ऐसे मकान का निर्माण किया है, जिसमें अलग-अलग चार कमरे हैं। चारों में यंत्र लगाये गये हैं। प्रथम यंत्र को चालू करने पर उस कक्ष में वायु भर जाती है। दूसरे यंत्र को चालू करने पर उसमें कृत्रिम

बादल छा जाते हैं। तीसरे यंत्र को प्रारम्भ करने पर बिजली-गर्जना और चौथे यंत्र के बटन दबाने पर वर्षा होने लगती है।

अमेरिका में प्रातःकाल जो हरी घास थी, वह छः बजे से नौ बजे के बीच में मशीन द्वारा कागज के रूप में और प्रेस में छपकर अखबारों के रूप में दुनिया के सामने आ जाती है। केवल तीन घंटे के अन्दर घास का अखबार के रूप में आ जाना विज्ञान की कितनी बड़ी करामात है।

इलेक्ट्रोनिक "रॉबोट" नाम के मानव का निर्माण किया गया है। यद्यपि उसमें आत्मा (Soul) का सद्भाव नहीं है परन्तु कृत्रिम आत्मा रूपी विद्युत् का उसमें संचार है। जिसके सहारे वह कई काम करता हुआ मानव की बड़ी सहायता करने में तत्पर है।

यह निर्विवाद सत्य है कि—इलेक्ट्रोनिक जगत् आविष्कार और अनुसंधान के तौर पर काफी ऊँचाइयों को छूने लगा है। कल्पनातीत करिश्मे-करतब उपस्थित कर रहा है। आज विज्ञान ने भौतिक, रासायनिक व जीव विज्ञान आदि सभी क्षेत्रों में काफी प्रगति की है, तथापि निष्पक्ष दृष्टि से अगर चिंतन करें तो हम उसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि—आज प्रत्येक राष्ट्र और प्रत्येक मानव समाज पूर्वापेक्षा अत्यधिक अशांत, उद्विग्न और आकुल-व्याकुल की स्थिति में है। विषमता, अनैतिकता से दम घुटता जा रहा है। क्लेष, द्वेष, वैर, विरोध, विश्वासघातमय प्रदूषणात्मक विषैली गैस से आज सभी भयाक्रांत हैं। इस इलेक्ट्रोनिक युग में आज सभी अपने को विनाश से अरक्षित पा रहे हैं। समता-सहिष्णुता, सद्भावना, धीरता, गंभीरता की पर्याप्त कमी महसूस कर रहे हैं। स्नेह, शांति, समर्पण भावों की तरंगें कम होती जा रही हैं। घर-घर और गाँव-गाँव में शुभ मंगल स्वराज का मधुमास क्यों नहीं खिलता? जबकि भौतिक सुख-साधनों की सभी क्षेत्रों में प्रचुरता परिलक्षित हो रही है। पग-पग और डग-डग पर साधन उपलब्ध हैं। कुछ भी हो, भौतिक विज्ञान का सर्वोपरि विकास हो जाने पर भी विज्ञान अपने आप में अपूर्ण और अधूरा ही रहने वाला है। वह इसलिए कि भौतिक विज्ञान प्राणी जगत् के शारीरिक, मानसिक, वाचिक, इन्द्रिय, मन विषयक एवं पेट, परिवार, पद, प्रतिष्ठाओं की क्षणिक पूर्ति करने तक ही सफल रहा है। माना कि—उसने संसार को कुछ सुख-सुविधा के लिए तीव्रगामी वाहनों का विकास कर, यात्रा की अनुकूलता दी, तरंगों पर कन्ट्रोल कर एक ज्वलंत समस्या का समाधान खोज निकाला, राकेट—उपग्रह शक्तियों की शोधकर भूगोल, खगोल सम्बन्धी जानकारियाँ दीं और टेलीफोन, टी० वी० का आविष्कार करके हजारों मील दूर रहे समाचारों से अवगत किया, कराया।

दूसरे पहलू से देखा जाय तो भौतिक विज्ञान से प्राणी जगत् की कहानियाँ कम नहीं हुई हैं। विकास और विनाश दोनों पहलू भौतिक विज्ञान के रहे हैं। एक बाजू विकास और सुख-सुविधा का सरसब्ज बाग का लेबल लगा है तो दूसरी ओर विनाश और दुविधा का ज्वालामुखी छिपा हुआ है।

हिटलर ने साम्राज्य-लिप्सा से प्रेरित होकर कितनी तबाही मचाई? लाखों मानवों का संहार करवाया। यूरोप और रूस की धरती रक्त रंजित हुई। विज्ञान द्वारा शोधित नये-नये संहारक शस्त्रों, बमवर्षक विमानों और विषैली गैसों द्वारा जल, स्थल, नभ में विनाश लीला का कितना वीभत्स दृश्य उपस्थित किया? हिरोशिमा और नागासाकी पर एटम बम के विस्फोट ने कितना प्रलय मचाया था? उस विनाश लीला को आज दिन तक संसार भूला नहीं है।

भोपाल में घटित गैस काण्ड के घाव अभी तक भरे नहीं हैं। विषाक्त गैस रिसने ने हजारों नर-नारियों, बालकों की ज्योति को बर्बाद कर दिया, साथ ही पशु-पक्षी जगत् भी उससे बच नहीं पाया।

वस्तुतः वैज्ञानिक सुविधाजन्य प्रवृत्तियों से आज मानव समाज सुविधा-भोगी, अधिक आरामी तक अवश्य बना है किन्तु जीवन में निष्क्रियता-निष्कर्मण्यता का विस्तार हुआ है, साथ ही मानव परापेक्षी पंगु बनता हुआ व्यसन और फैशन की चकाचौंध में अपने को भूलता जा रहा है। यह सब क्या है? इसे विज्ञान की ही देन समझना चाहिए। इस दृष्टिकोण से विज्ञान मानव-समाज के लिए वरदान नहीं अभिशाप रूप बनता जा रहा है।

विज्ञान में तथ्य है, सुन्दरता है किन्तु मूल तत्त्व शिव अर्थात् कल्याण का अभाव रहा है। प्रकृति का अन्वेषण-अनुसंधान करना, नाशवान वस्तुओं का परिवर्तन-परिवर्धन एवं नव निर्माण करने तक ही विज्ञान का ध्येय है। एक सीमित क्षेत्र के घेरे में आबद्ध रहा है यह। इस तरह भौतिक विज्ञान की अगणित उपलब्धियां हस्तगत होने पर भी आज सामाजिक, राष्ट्रीय और पारिवारिक जीवन निराशा के झूले ही झूल रहा है। इन्द्रियजन्य सुख-सुविधा के साधनों की विपुलता ही सब कुछ नहीं है; चिरस्थायी शान्ति एवं आत्मानन्द-आत्मधन आत्म-विकास सम्बन्धी समस्या का समाधान भौतिक विज्ञान में खोजने का मतलब होगा—'रिक्तता से रिक्तता की ओर लक्ष्यविहीन अंधी दौड़ लगाने जैसी स्थिति।

वस्तुतः यथार्थ आत्म शान्ति के लिए प्रत्येक पिपासु मानव को अध्यात्म विज्ञान के दरवाजे खटखटाने होंगे। अध्यात्म विज्ञान के उद्गमदाता, द्रष्टा व स्रष्टा भ० ऋषभदेव से महावीर प्रभृति व राम, कृष्ण, गौतम, बुद्ध आदि

महात्माओं ने अध्यात्म-विज्ञानोदधि में अवगाहन किया, शनैः-शनैः साधना-उपासना की गहराइयों में उनकी चेतना पहुँची, चिंतन का मंथन हुआ, अंत में सर्वोपरि सर्वोत्तम आत्म-विकास का साध्य फल मोक्ष प्राप्त किया और कई करेंगे।

अध्यात्म विज्ञान (Soul Science) का कार्य-क्षेत्र, कर्म-क्षेत्र उभय जीवन अर्थात्—लौकिक और लोकोत्तर जीवन को अन्तर्मुखी और ऊर्ध्वारोहण की ओर बढ़ने की प्रेरणा देता है। अध्यात्म विज्ञान विकास के अवरोधक इन्द्रियों और मन के विषयों—शब्द, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श पर नियंत्रण पाने के लिए ध्यानी-ज्ञानी प्रवृत्तियों और योगासन का विधान करता है। अहिंसा भगवती की अर्चा से सुख-शान्ति के स्रोतों का प्रस्फुटन, संयमीवृत्ति से अनैतिकता का अन्त, तपाराधना से शुभाशुभ कर्म-वर्गणा का आत्म स्वरूप से पृथक्करण होना और उतने-उतने रूप में आत्म-स्वरूप में निखार आता चला जाता है। इस तरह सुप्त आत्मिक शक्तियों को जागृत होने का, आत्मिक ऊर्जा-उष्मा के उद्गम केन्द्रों को सक्रिय होने का अवसर मिलता है।

आत्म-विज्ञान की अपनी अनूठी विशेषता भास्कर की भांति तेजस्विता-प्रखरता का प्रतीक रही है। जिसमें "सत्यं-शिवं-सुन्दरम्" इन तत्त्वों का समन्वित रूप ही उसकी सार्थकता, सम्पूर्णता और शाश्वतता स्वयं सिद्ध है। आत्म-विज्ञान जितना सत्य है, उतना ही सुन्दर और जितना सुन्दर है उतना ही शिवदायक रहा है। यह विशेषता भौतिक विज्ञान में कहां ? अध्यात्म विज्ञान ने बताया—तू आत्मा है। जो तेरा स्वभाव है, वही तेरा धर्म है। जो कभी मिथ्या नहीं होता। तीनों काल में सत्य ही सत्य रहता है। चित् का अर्थ—चैतन्य रूप, ज्ञान का प्रतीक, जो कभी जड़त्व में नहीं बदला, और आनन्द रूप जो कभी दुःख में परिवर्तित नहीं हुआ। आत्मा का अपना धर्म यही है। आत्मा से भिन्न विजातीय कर्म के मेल के कारण ही यह सब दृश्यमान मिथ्या प्रपंच है। यही कारण है कि—संसारी सभी आत्माओं में पर्याय की दृष्टि से विभिन्नता परिलक्षित होती है। विभिन्नता का अन्त ही अभिन्नता है। वही आत्मा का सर्वोपरि विकास है और उस विकास की बुनियाद रही है—अध्यात्म विज्ञान।

अध्यात्म विज्ञान ने जिस तरह जीव विद्या विज्ञान का विश्लेषण प्रस्तुत किया है, उसी तरह जड़ जगत् का भी अति सूक्ष्म रीति से शोधन-अनुसंधान कर हेय-उपादेय का प्रतिपादन किया है। इतना ही नहीं ,अध्यात्म-विज्ञान की दूसरी विशेषता यह रही है कि—वह पुनर्जन्म, परलोक, स्वर्ग-अपवर्ग, आत्मा-परमात्मा, पुण्य-पाप, संसार-मोक्ष, धर्म-कर्म दृष्टि, ध्यान-ज्ञान, योग-अनुष्ठान, जीव-अजीव और जगत् इस तरह अध्यात्म एवं भौतिक विषयों का तलस्पर्शी अनुसंधान-अन्वेषण करता हुआ, वस्तुस्थिति का यथार्थ दिग्दर्शन प्रत्यक्ष रूप से करा देता

है। यही नहीं, आत्मा के उन अज्ञात सभी गुण-शक्तियों के केन्द्रों को उजागर में ले आता है।

साधक आत्मा नहीं चाहती कि—मुझे भौतिक संपदा की प्राप्ति हो तथापि घास-फूस न्यायवत् अध्यात्म-साधना की बदौलत अनायास कई लब्धियों के अज्ञात केन्द्र खुल जाते हैं। साधक के चरणों में कई सिद्धियाँ लौटने लगती हैं। जैसे पाँचों इन्द्रियाँ—श्रोत, चक्षु, घ्राण, रसना और स्पर्शन एक-एक विषय को अपना ग्राह्य बनाती रही हैं किन्तु जब आत्म-विज्ञ साधक आत्मा को 'संभिन्न-श्रोत' नामक लब्धि की प्राप्ति हो जाती है, तब शरीर के वे अज्ञात केन्द्र स्वतः खुल जाते हैं और वह साधक-आत्मा सभी इन्द्रियों से सुनने, देखने, सूंघने लगती है, अर्थात् इन लब्धि वाले साधक को रूप, रस, गंध और स्पर्शन का ज्ञान-अनुभव किसी भी इन्द्रिय से हो जाता है। उक्त विशेषता भौतिक विज्ञान में कहाँ?

प्राणघातक बीमारियाँ जैसे—जलोदर, भगंदर, कुष्ठ, दाह, ज्वर, अक्षी-शूल, दृष्टि-शूल और उदर-शूल इत्यादि रोग लब्धिधारी साधक के मुँह का थूंक (अमृत) लगाने मात्र से मिट जाते हैं। चौदह पूर्व जितना लिखित अगाध साहित्य आगम वाङ्मय को यदि कोई सामान्य जिज्ञासु स्वाध्याय करने में पूरा जीवन खपा दे तो भी सम्पूर्ण स्वाध्याय नहीं कर पावेगा किन्तु वे लब्धि प्राप्त साधक केवल ४८ मिनट में सम्पूर्ण १४ (चौदह) पूर्व का अनुशीलन-परिशीलन करने में सफल हो जाते हैं। ऐसी एक नहीं अनेक सिद्धियाँ भ० महावीर के ज्येष्ठ अन्तेवासी गौतम-सुधर्मा गणधर के अलावा और भी अनेकों महामुनियों को प्राप्त थीं।

अध्यात्म-विज्ञान-साधना की पृष्ठभूमि जब उत्तरोत्तर शुद्ध- शुद्धतर बनती चली जाती है, निखार के चरम बिन्दु को छूने लगती है, वहीं आत्म-परिष्कार की सर्वोत्तम कार्य-सिद्धि हो जाती है, तब आत्मा शनैः-शनैः मध्यस्थ राहों का अतिक्रमण करती हुई सम्पूर्ण विकास की सीमा तक पहुँच जाती है। सदा-सदा के लिए कृत-कृत्य हो जाती है। भूत, भविष्य, वर्तमान के समस्त गुण पर्यायों की ज्ञाता-दृष्टा बनकर सर्वज्ञ सर्वदर्शी प्रभु रूप हो जाती है।

विज्ञान के भी फूल,
वज्र बनकर छूटते, शुभ धर्म अपना भूल।

—रामधारीसिंह दिनकर

धारावाही लेखमाला [८]
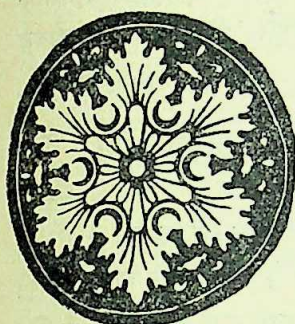
जैन संस्कृति में नारी का स्थान

□ श्री रमेश मुनि शास्त्री
[उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी के विद्वान् शिष्य]

जैन साहित्य का गहराई से अनुशीलन-परिशीलन करने पर विदित होगा कि अनेक साध्वियों का ज्योतिर्मय जीवन सविस्तृत रूप से प्राप्त होता है। मैं यहाँ पर केवल उनके नामों का निर्देश कर रहा हूँ जिससे साध्वियों की एक प्रलम्ब स्वर्णिम श्रृंखला का परिबोध हो सकेगा।

भगवती ब्राह्मी—साध्वी रत्न ब्राह्मी प्रवर्तमान अवसर्पिणी काल के आद्य तीर्थंकर ऋषभदेव की ज्येष्ठ पुत्री और चक्रवर्ती भरत की बहन थी। इनका जीवन विलक्षण-विशेषताओं के समन्वय का एक अद्भुत आदर्श उदाहरण है। इन्होंने मोक्ष पद को प्राप्त कर अपना जीवन सर्वथा सार्थक किया।[1]

वैराग्यमूर्ति सुन्दरी—सती श्रेष्ठा सुन्दरी भी तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की ही कन्यारत्न थीं, जिनके पवित्र नाम का श्रवण मात्र से भव्य जीवों का कल्याण हो जाता है। ब्राह्मी और सुन्दरी सौतेली बहनें थीं और ये दोनों अविवाहित थीं![2] तीन लाख श्रमणियों की प्रमुख साध्वियाँ थीं।[3] साध्वी सुन्दरी भगवती ब्राह्मी के साथ विचरणशील रहीं। जन-मानस को प्रभावित करने में स्वयं के त्याग-वैराग्य और साधनामय जीवन का दृष्टान्त एक अतीव समर्थ साधन रहा। वस्तुतः त्याग धर्म की गरिमा और महिमा त्यागमूर्तियों के श्रीमुख से ही शोभा देती है। अन्ततः महासती सुन्दरी ने समग्र कर्मों का समूलतः नाश कर निर्वाण पद की प्राप्ति की।[4]

महासती दमयन्ती—साध्वी रत्न दमयन्ती वस्तुतः धैर्यमूर्ति थी। विशिष्ट साध्वियों की अग्रपंक्ति में साध्वी श्री दमयन्ती का गौरवपूर्ण स्थान रहा है। वे

१ आवश्यक निर्युक्ति गाथा १९६
२ (क) हरिवंश पुराण सर्ग ९ पृ. १८३
(ख) आदि पुराण भाग–१ पर्व २४
३ कल्पसूत्र—सूत्र १९७
४ आवश्यक निर्युक्ति गाथा ३४८, १९६

सप्राण-प्रेरणा-स्रोत हैं। इन्होंने सुदीर्घकालीन पति वियोग की पीड़ा को जिस धैर्य के साथ सहन किया, वह नारी संस्कृति का एक श्रेष्ठतम आदर्श है, एक मूल्यवान् तत्त्व है। राजा नल और रानी दमयन्ती इन दोनों ने दृढ़ता के साथ आत्म-कल्याण के मार्ग पर कदम बढ़ाये। वस्तुतः साध्वी दमयन्ती का जीवन एक ज्योतिर्मय जीवन था।[१]

महासती कौशल्या—साध्वी रत्न श्री कौशल्या एक आदर्श जननी थीं। माता कौशल्या का आदर्श जननी के रूप में उज्ज्वल यश अमर रहेगा। मर्यादा पुरुषोत्तम राम के शील और औदार्य से भला कौन अपरिचित होगा ? आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श स्वामी आदि गुणों की व्याख्या के लिये श्री रामचन्द्र का आदर्श-चरित दृष्टान्त रूप में प्रयुक्त होता है। वे पुरुषोत्तम रूप में जाने-माने जाते हैं। वे वास्तव में माता कौशल्या की ही देन थे। राम जैसे सुपुत्र की जननी होकर ही वह धन्य हो गयीं ! यह कथन कदाचित् अत्युक्तिपूर्ण और अस्वाभाविक नहीं होगा कि कौशल्या की मनःसृष्टि की साकार दिव्य छवि ही मर्यादा पुरुषोत्तम रामचन्द्र के रूप में आविर्भूत हुई थी।

कौशल्या वस्तुतः आदर्श जननी थी और उनके उज्ज्वल चरित का दीपक प्रकाशनमान है। उन्होंने भागवती दीक्षा ग्रहण की एवं आत्म कल्याणार्थ साधना-रत हो गयीं।[२]

महासती सीता— साध्वी रत्न सीता की जीवन-गाथा स्वतः ही इतनी अधिक पावन है कि पवन प्रवाह की तरह कितनी ही शताब्दियाँ लहराती निकल गयी हैं किन्तु उनका जीवन आलोक-स्तम्भ के रूप में जगमगाता रहा है।

राजकुमार श्री रामचन्द्र और राजकुमारी सीता का पाणिग्रहण हुआ। राम-सीता का दाम्पत्य जीवन आरम्भ हुआ। उन्होंने अपने पतिदेव से निवेदन किया— मेरा मन आपके प्रति निर्मल है, विशुद्ध है किन्तु सांसारिक-विषयों से मेरा अन्तर्मन ऊब गया है। आर्यवर ! मुझे दीक्षा ग्रहण करने के लिये आज्ञा प्रदान कीजिये। अन्ततः राम को अनुमति देने हेतु विवश होना पड़ा। सीता ने दीक्षा ग्रहण की और साधनारत हो गईं।

सतीत्व धर्म की धारिका साध्वीरत्न सीताजी का जीवन वृत जगतवन्द्य स्वरूप सर्वदा अमर रहेगा।[३]

१ (क) भरतेश्वर बाहुबली वृत्ति गाथा ८
(ख) त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित–पर्व ८, सर्ग ३
२ त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित—पर्व ७, आचार्य हेमचन्द्रजी।
३ त्रिषष्टि शलाका पुरुष चरित—पर्व ७

महासती कुन्ती—सुदूर प्राचीन काल में अंधक वृष्णि नामक नरेश शौरिपुर नगर में शासन करते थे। इनकी गुण शीलवती कन्या थी—कुन्ती! माता का नाम रानी सुभद्रा था। इनकी माद्री नामक एक और बहन थी। कुन्ती और माद्री दोनों का परिणय हस्तिनापुर नरेश पाण्डु के साथ सम्पन्न हो गया। कुन्ती राज-परिवार में जन्मी, पोषित हुई, राजघराने में ही विवाह सम्पन्न हुआ। पर कुन्ती का मन विरक्त हो उठा! अन्ततः समस्त वैभव, सुख अधिकारों का सर्वथा त्याग कर कुन्ती साध्वी हो गयीं और आत्म-कल्याण के भव्य मार्ग पर अग्रसर हुईं। अध्यात्म-साधना और अत्युग्र तप के फलस्वरूप उन्हें शाश्वत आनन्द उपलब्ध हुआ।[1]

महासती द्रौपदी—साध्वी रत्न द्रौपदी का निर्मल चरित्र, सत्य और शील का साकार रूप है। उसने शील एवं सत्य के संरक्षण हेतु जिस तेजस्वी-स्वरूप का परिचय दिया था, वह अपने आप में अद्भुत है। जब दुर्योधन ने भरी सभा में अपनी जंघा निर्वस्त्र करते हुए द्रौपदी को उस पर आसीन हो जाने का आदेश दिया, महासती इस क्रूरतम अपमान से अत्यन्त ही तिलमिला उठी। उस सिंहनी ने दुःशासन एवं दुर्योधन को उनकी दुष्टता के लिए करारी लताड़ लगायी। उसने कठोर शब्दों में इनकी और इनके दुष्कृत्यों की घोर निन्दा की। सती का तेज प्रत्यक्ष रूप में प्रगट हुआ और महासतियों के स्वर्णिम इतिहास में वह क्षण सदा-सदा अमर हो गया।

द्रौपदी ने युधिष्ठिर, अर्जुन, भीम, नकुल और सहदेव इन पाँचों पाण्डव-पतियों सहित सानन्द जीवन यापन आरम्भ किया। यहीं उसने पाण्डुसेन नामक तेजस्वी पुत्ररत्न को जन्म दिया। उसने आजीवन विघ्न-बाधाएँ सहन की, किन्तु सतीत्व का अनमोल रत्न हस्तगत ही रखा, उसे सुरक्षित ही रखा, छिटकने नहीं दिया। शीलधर्म के इस दृढ़तापूर्वक निर्वाह ने उसके जीवन को सार्थकता दी। द्रौपदी ने सांसारिक सुखों का परित्याग कर संयम-पथ स्वीकार करने का दृढ़तम संकल्प कर लिया।

विरक्तात्मा द्रौपदी ने दीक्षा ग्रहण की और संयम के साथ अध्यात्म-साधना में लीन हो गई। अन्ततः उसको पाँचवें स्वर्ग की प्राप्ति हुई। द्रौपदी की विरक्ति से पाण्डव भी संप्रेरित हुए और वे आत्म-कल्याण के मार्ग पर अग्रसर हो गये। पाण्डव बन्धुओं ने भी मोक्षपद को प्राप्त किया।

महासती द्रौपदी का जीवन एक अनुपम जीवन था। वह सत्य, शील, समभाव और क्षमा की तो जैसे साक्षात् प्रतिमा ही थी।[2]

१ ज्ञाता धर्म कथाङ्ग अध्ययन १६
२ ज्ञातासूत्र अध्ययन १६

महासती राजीमती—साध्वी श्रेष्ठ राजीमती का उज्ज्वल जीवन भी अद्भुत त्याग, उत्कृष्ट संयम का अनुपम गान है। वह अलौकिक दृढ़व्रता थी, जिसने केवल वाग्दत्ता होते हुए भी, तोरण से अपने वर के लौट जाने पर आजीवन अविवाहित रहने का प्रण कर दृढ़ता के साथ महाव्रतों का पालन किया। ऐसी गौरवशालिनी नारी के आधार पर ही नारी-आदर्श का भव्यतम आदर्श अवस्थित हैं।

साध्वी रत्न श्री राजीमती का जीवन वासना विहीन, पावन प्रेम और आत्मोत्सर्ग का एक अत्यन्त ही अद्भुत चित्र है। नारी जगत् की इस गौरव विभूति को सदा-सर्वदा अभिनन्दनीय स्थान प्राप्त रहेगा।[1]

महासती पुष्पचूला—श्रमणी रत्न पुष्पचूला का महासतियों की उज्ज्वल-परम्परा में एक विशिष्ट स्थान है। निर्मल स्नेह, ब्रह्मचर्य निष्ठा, अविचल साधना आदि विविध रंगों से साध्वी पुष्पचूला का जीवन चित्र संवरा हुआ है। इनके चरित्र की गौरव-गाथा के स्मरण मात्र से कलुषित मानस में निर्मलता का अभिसंचार हो जाता है।

महासती पुष्पचूला संसार में रहकर भी विरक्त रही। विवाहित रहकर भी ब्रह्मचर्य की साधना में लीन रही। बाहर से राजरानी थी, पर वह भीतर में सदा साध्वी बनी रही। वह सत्य भाषण की अभ्यस्त एवं परदुःख कातर थी। पवित्र स्नेह, विनय, अहिंसा की साक्षात् मूर्ति थी। महासती पुष्पचूला का पावन जीवन इस दृष्टि से अनुकरणीय है, अभिवन्दनीय है।[2]

महासती प्रभावती—साध्वी रत्न प्रभावती का सतियों की पावन-परम्परा में मौलिक स्थान है, परम विशिष्ट स्थान है। इस साध्वीरत्न ने अपने आदर्श जीवन दृष्टान्त के द्वारा नारी जगत् के लिये पत्नी का गौरव-स्वरूप प्रतिष्ठित किया। उसके उज्ज्वल जीवन में यह स्पष्ट होता है कि पत्नी के लिये पति का आमन्त्रण स्वीकार करता तो अनिवार्य है, किन्तु साथ ही पतिदेव को सन्मार्ग पर लाने का उत्तरदायित्व भी उसे वहन करना चाहिये। पत्नी पतिदेव की धर्म सहायिका होती है। वह पति के जीवन को धर्ममय बनाये रखने के लिये सतत रूप से सहायता करती है और उसका यही स्वरूप प्रमुख है।

महासती प्रभावती महाराजा चेटक की यशस्विनी कन्या थी। प्रभावती, मृगावती, पद्मावती और शिवा-चेटक की इन पुत्रियों की गणना तो सोलह सतियों में की जाती है। इनके अतिरिक्त इनकी एक बहिन त्रिशला भगवान महावीर

१ दशवैकालिक निर्युक्ति अध्ययन—२ गाथा ८
२ आवश्यक निर्युक्ति गाथा १२८४

की माता थी। छठी बहन चेलना थी जिसने अपने पतिदेव राजा श्रेणिक को धर्म-मार्ग पर अग्रसर किया था। सातवीं बहन थी—सुज्येष्ठा। जिस ने आजीवन ब्रह्मचर्य का दृढ़ता से पालन किया था। ऐसे धर्म प्रधान परिवार में महासती प्रभावती का प्रादुर्भाव हुआ। बाल्यावस्था से ही धर्मानुरागी पिता का संरक्षण उसे प्राप्त था। ऐसी अवस्था में प्रभावती के लिये धर्म के प्रति अभिरुचि और धर्म पालन का भाव होना स्वाभाविक है।

साध्वी प्रभावती, भगवान् महावीर की अनन्य उपासिका थी। उसका जीवन विलास रहित, संयमित और निष्कलुष था।

सचमुच में प्रभावती महासती का जीवन एक आदर्श जीवन था। नारी-जगत् के लिये उसका निर्मल-चरित सदा-सदा ही संप्रेरक बना रहेगा। पत्नियों के गम्भीर दायित्वों और पति के साथ सम्बन्धों का जैसा अनूठा आदर्श महासती ने प्रस्तुत किया, वह आदर्श-ज्योति कभी भी धूमिल नहीं हो सकती, प्रभावहीन नहीं हो सकती, उसका जो महत्त्व है, वह शाश्वत है। [क्रमशः]

□ □ □

धारावाहिक उपन्यास [६]

आत्म-दर्शन*

□ श्री धन्ना मुनि

ऋषभकुमार ने यौगलिकों को वन्य पशुओं को पालने, उनसे दूध, बछड़े आदि प्राप्त करने, बैलों, घोड़ों और हाथियों से विशाल भू-भाग को कृषि योग्य बनाने आदि अनेक कलाओं की शिक्षा प्रदान की। कल्पवृक्षों के तिरोहित हो जाने के परिणामस्वरूप अब मानव मात्र के लिये आवास की व्यवस्था परमावश्यक हो गई थी।

कर्म क्षेत्र में स्वतंत्रता एवं सुखपूर्वक स्वावलम्बी जीवनयापन करने के लिये जितनी भी कलाओं की आवश्यकता होती है, यौगलिकों ने उन सभी कलाओं की शिक्षा ऋषभकुमार से प्राप्त की। कलाओं के सीखने के पश्चात् आर्यभूमि के इस कोने से उस कोने तक यातायात के लिये पक्के मार्ग, नदियों पर पुल और समतल पर उठे हुए भूमि भागों में ग्रामों, नगरों के रूप में भवनों का निर्माण कर विशाल सुन्दर जनपदों को बसाया गया। प्रत्येक भवन के पृष्ठ भाग में कूप, जल कुण्ड और बगीचे तैयार किये गये। वन्य धान्य के पके बीजों को संचित करने का परामर्श प्राप्त कर यौगलिकों ने प्रत्येक के धान्यागार में धान्य एकत्रित किया। पाले हुए बैलों और घोड़ों से अपने महान् जननायक ऋषभकुमार के निर्देशानुसार जमीन को जोतकर यौगलिकों ने उसे कृषि योग्य बनाया। अब वे भोग भूमि के यौगलिक नहीं किन्तु कर्म भूमि के कसकर श्रम करने वाले कर्मठ कार्यकर्ता थे। ग्रामों, नगरों एवं जन पदों के निर्मित हो जाने के साथ ही साथ कृषि योग्य विशाल भू-भाग कृषि के लिये जोतकर तैयार कर दिया गया। समय पर सुवृष्टि हुई, लोगों ने अपनी-अपनी भूमि पर बीज बोये, आर्यधरा का बहुत बड़ा भू-भाग अंकुरों से शस्य श्यामल हो उठा। समय-समय पर वर्षा के परिणामस्वरूप वे अंकुर धान्य के हरे पौधों से लहलहा उठे। उन पर सुनहरी बालें आयीं और चारों ओर वायु के मन्द-मन्द झोकों से झूमती हुई बालों को देखकर एक नयनाभिराम दृश्य यत्र-तत्र-सर्वत्र दृष्टिगोचर होने लगा मानों धरा हरीतिमा लिये स्वर्णिम परिधान पहन कर, नव-वधू के समान

*मुनि श्री की डायरी से संकलित।

थिरक रही है। समय पर पका धान्य काटकर खलिहानों में रखा गया, बैलों और घोड़ों के क्षुरों से उसे कुचल कर उफानने योग्य बनाया गया। मन्द मदिर बयार में इस प्रकार तैयार की गई धान्य और भूँसे की मिश्रित राशियों को पृथक् किया गया। गाड़ियों द्वारा अनाज खलिहानों से घरों के धान्यागारों में भरा गया। सम्पूर्ण धरा धान्य के विशाल भण्डारों से सम्पन्न अन्नपूर्णा सी प्रतीत होने लगी। इस प्रकार काल के प्रभाव से तिरोहित भोग भूमि के स्थान पर मानव के बुद्धिबल और अथक श्रम के परिणामस्वरूप शस्य श्यामला पृथ्वी कर्मभूमि के रूप में परिवर्तित हो गई। इस प्रकार मानव संस्कृति के सूत्रधार अथवा आदिकर्ता कुमार ऋषभदेव के कृपाप्रसाद से कर्मयुग उत्तरोत्तर प्रगति के पथ पर त्वरित गति से अग्रसर होने लगा।

सब ओर प्रजा पूर्णत: समृद्ध और सुख सम्पन्न थी। अभाव-अभियोग का कहीं कोई नाम तक सुनाई नहीं देता था। खानों से लोहा, तांबा, पीतल, चांदी, सोना आदि अनेक प्रकार की धातुयें और हीरे, माणिक, नीलम, पुखराज, पन्ना आदि जगमगाते जवाहरात और समुद्र से तथा मदोन्मत्त गजराजों के कपालों से महार्घ्य मोती निकाले जाने लगे।

इस प्रकार सम्पन्न प्रजा की सुरक्षा एवं न्याय-नीति की परिपालना हेतु प्रजा के लिये एक शासक की आवश्यकता हुई अत: कुलकर महाराज नाभि के परामर्शानुसार ऋषभकुमार को स्वर्ण निर्मित एवं रत्नजटित राज सिंहासन पर आसीन कर प्रजा द्वारा उनका बड़े हर्षोल्लास के साथ राज्याभिषेक किया गया। अपने अनन्य परोपकारी ऋषभकुमार को महोच्च राजसिंहासन पर आसीन करते समय कर्म भूमि के आदि कर्मठ कार्यकर्ता नर-नारी समाज ने अभूतपूर्व वाणी अथवा लेखनी द्वारा अभिव्यञ्जनीय आह्लाद का अनुभव किया। सबने नतमस्तक हो अपने नवाभिषिक्त आदि राजा ऋषभकुमार को नमन करते हुए समवेत स्वर में कहा—"नाथ! आज से आप हमारे प्राणाधार सर्व रक्षक राजराजेश्वर और हम आपकी आज्ञानुवर्ती प्रजा हैं। हम आपके प्रत्येक आदेश का प्राणपन से पालन करेंगे। आपके एक इंगित पर हम सब अपना सर्वस्व न्यौछावर करने हेतु कटिबद्ध रहेंगे। यदि कभी आवश्यकता पड़ गई तो आपके पसीने की एक बूँद के पीछे हम अपने रक्त की महानदियाँ प्रवाहित कर देंगे। यह हमारा दृढ़ संकल्प है और यही है हमारी अटल प्रतिज्ञा।"

अब कहीं भी भोग भूमि का अवशिष्ट नहीं रह गया था। अत: मानवता को कर्म भूमि के ढांचे में ढालने के लक्ष्य से उन्होंने अभिनव मानव संस्कृति का सूत्रपात किया। आदि राजा ऋषभदेव—

"दर्शयन् वर्त्म वीराणां सुरासुरनमस्कृतः ।
नीतित्रितयकर्तायो, युगादौ प्रथमो जिनः ।।" (मनुस्मृति)

समाजनीति, राजनीति और धर्मनीति इन तीनों प्रकार की नीतियों के निर्माता-सूत्रधार अथवा संस्थापक थे। उन्होंने सर्व प्रथम मानवता को मर्यादा में आबद्ध करते हुए समाजनीति, अर्थनीति और राजनीति का नियमन किया। कर्मभूमि के अभिनव सिद्धान्तों को क्रियान्वित करते हुए महाराज नाभि ने ऋषभकुमार का सुमंगला और सुनंदा नाम की दो कुमारियों से पाणिग्रहण संस्कार कराया। यह समाज व्यवस्था के सूत्रपात की प्रथम शृंखला थी।

आषाढ़भूति ने रंगमंच पर जिस समय ऋषभकुमार के विवाह का दृश्य दिखाया तो यौगलिक नर-नारियों के असीम उल्लास, आश्चर्य मिश्रित हाव-भाव एवं उद्वेलित अथाह उदधि की अतिलोल उत्ताल तरंगों के समान उनके रोम-रोम से उठती हुई उमंगों को देखकर दर्शक रसानुभूमि और साधारणीकरण से पात्रवत् हो गए। रस वर्षण का यह अनन्य प्रमाण था।

विवाह के उपरान्त भी कुमार ऋषभ अपनी प्रजा के अभ्युदय, उत्थान एवं विकास हेतु अहर्निश प्रयत्नशील रहते। कुमार ऋषभ के ये प्रयास अभिनव संस्कृति को पुष्पित, पल्लवित एवं विकसित करने में प्रभावकारी एवं प्रेरक सिद्ध हुए।

एक रात्रि में महादेवी सुनंदा ने सुखपूर्वक सुप्तावस्था में १४ शुभ स्वप्न देखे। १४ महास्वप्नों को देखते ही महादेवी की निद्रा भंग हुई। उन्होंने अथाह आनंद सागर में डुबकियाँ लगाते हुए अनुभव किया मानो वह एकान्ततः सुख से ओतप्रोत किसी दिव्य लोक में ऊँची उड़ानें भर रही थी। उसका अंग-प्रत्यंग और रोम-रोम अमृत पान तुल्य अनिर्वचनीय आनंद का अनुभव कर रहा था। वे सुख शय्या से उठीं और मन्थर गति से उनके चरण सरोज हठात् कुमार ऋषभ के शयन कक्ष की ओर अनायास ही उठे। ऋषभकुमार प्रगाढ़ निंद्रा में प्रसुप्त थे। महादेवी सुनंदा उनके पर्यंक पर पावों की ओर बैठ गई और अपने कुसुम कुड़मल कोमल करपल्लवों से अपने प्राण नाथ के पाद पद्मों को शनैः शनैः सहलाने लगी। महादेवी के करपल्लवों के स्पर्श से कुमार उन्निद्र हुये और महादेवी को देखकर हठात् उठ बैठे, आश्चर्य मिश्रित मधुस्वर में ऋषभकुमार ने महादेवी से प्रश्न किया—"महादेवी ! कुशल मंगल तो है ? आज उषाकाल से घटिका पूर्व ही अकस्मात् यहाँ मेरे शयन कक्ष में शुभागमन कैसे हुआ ? हाँ देवी ! आज तुम अत्यन्त हर्ष विभोर प्रतीत हो रही हो। तुम्हारे केवल मुख मण्डल से ही नहीं अपितु कनकलता तुल्य देहवल्लरी के अंग-प्रत्यंग

एवं रोम-रोम से एक अतिक्रमनीय अलौकिक आभा भामण्डल की भांति दमक रही है। तुम्हारी मुखमुद्रा और अधरों के स्पन्दन से स्पष्टतः यह प्रकट हो रहा है कि तुम आज मुझे कोई अतीव सुखप्रद संवाद सुनाने की उत्कट अभिलाषा से यहाँ आई हो।" देवी सुनंदा वीणा की झंकृति से भी नितरां अतीव सम्मोहक सुमधुर स्वर में बोली—प्राणनाथ ! आप श्री का अनुमान शत-प्रतिशत यथार्थ है।

"तो देवी वह सुखद सुमधुर सुसंवाद मुझे सुनाकर अपने अन्तर मन में उद्वेलित आनंदसागर को मेरे मानस में भी उडेल कर उसे तरंगित कर दो।"

लज्जातिरेक वशात् कुछ क्षणों तक ग्रीवा झुका मौन रहने के अनंतर देवी सुनंदा ने कहा—नाथ ! आज मैंने अभी-अभी उन्निद्र अवस्था में चौदह महास्वप्न देखे। संक्षेप में चौदह स्वप्नों का विवरण प्रस्तुत करते हुए सुनंदा ने कहा—जगत् वन्दन ! जीवन धन ! इन स्वप्नों को देखने के साथ ही साथ मेरे अन्तर में अलौकिक उल्लास और आह्लाद का सुधा-सागर लहरा रहा है। सघन श्याम घनघटा को देखकर जिस प्रकार मयूर आत्म विभोर हो "मे आव मे आव" की मीठी बोली के माध्यम से अपने आन्तरिक आह्लाद को न केवल अपने सन्निकट वरन् दूर-दूर के वातावरण में बिखेरता हुआ नाच उठता है, ठीक उसी प्रकार मेरा मत्त मन-मयूर भी किसी अननुभूत अनुपम आनन्द की उपलब्धि की प्रतीक्षा में नाच उठा है।

चौदह स्वप्नों का विवरण सुनने के अनंतर मतिश्रुतावधि ज्ञानत्रयी के धारक ऋषभकुमार ने गम्भीर सुधासिक्त स्वर में कहा—महाभाग्यवती ! तुम्हारे द्वारा देखे गये ये चौदह महास्वप्न गर्भाधान के समय केवल वे ही मातायें देखती हैं जो चतुर्विध धर्मतीर्थ के संस्थापक तीर्थेश्वर अथवा षट्खण्डों की साधना कर चक्रवर्ती सम्राट् पद पर अधिष्ठित अभिषिक्त होने वाले पुत्र रत्न को जन्म देती हैं। ये चौदह स्वप्न सुखद भावी के सूचक हैं कि तुम महान् भाग्यशाली चक्रवर्ती सम्राट् को समय पर जन्म दोगी। तुम्हारा वह पुत्र विपुल वैभव, विजय, यशोकीर्ति, अष्टसिद्धि, नवनिधि का स्वामी होकर अन्ततोगत्वा इसी भव में जन्म, जरा, मृत्यु के बंधनों को काट अमर पद प्राप्त करेगा। महादेवी वस्तुतः तुम धन्य हो और हो बधाई की पात्र। कुक्षि में समागत उसी महान् सौभाग्यशाली पुण्यात्मा के पुण्य प्रताप से तुम इस प्रकार का अनुपम आह्लाद अनुभव कर रही हो। स्वप्न फल को सुनकर अपने आपको कृतकृत्य और अपने जन्म को सफल मानती हुई देवी सुनंदा आनंद मग्न हो गई।

कुछ क्षणों तक अपने पति श्री ऋषभकुमार की पर्युपासना करने के

अनंतर महादेवी सुनंदा मन्थर गति से अपने शयन कक्ष में लौट गईं, और जाग्रत अवस्था में ही शेष रात्रि व्यतीत की। समुचित सुयोग्य आहार विहार पूर्वक देवी सुनंदा अपने गर्भ का पालन करती हुई उच्च कोटि के आदर्श विचारों में ही निमग्न रही। कतिपय दिनों पश्चात् देवी सुमंगला ने भी शुभ स्वप्न देखे। देवी सुनंदा की भाँति ही सुमंगला ने भी अपने पति के समक्ष उन स्वप्नों का विवरण प्रस्तुत किया। ऋषभकुमार से अपने स्वप्नों का यह फल सुनकर कि वह एक अद्‌भुत महाशक्तिशाली चरम शरीरी पुत्र रत्न और सकल कलाओं की निधान एवं अनुपम सुन्दरी पुत्री रत्न को जन्म देगी, देवी सुमंगला के हर्ष का भी पारावार न रहा। कालान्तर में महादेवी सुनंदा ने अपनी रत्न कुक्षि से एक महातेजस्वी पुत्र रत्न के साथ ओज पुञ्ज कन्या रत्न को भी जन्म दिया।

गर्भ काल पूर्ण होने पर समंगला ने भी एक पुत्र और एक पुत्री को जन्म दिया। कालान्तर में देवी सुमंगला ने समुचित समय के अन्तराल से **उनपचास बार में पुत्र युगलों के रूप में ९८ पुत्र रत्नों को जन्म दिया।**

महाराज नाभि के प्रासाद में आनंदोत्सव की झड़ी लगी रही। ऋषभकुमार ने अपनी बड़ी पुत्री ब्राह्मी के माध्यम से तत्कालीन मानवता को लिपि का ज्ञान प्रदान कर चौदह विद्याओं में निष्णात किया। अपनी लघु पुत्री सुन्दरी के माध्यम से आर्यधरा के तत्कालीन और भावी महिला समाज को चौसठ कलाओं के ज्ञान से और बाहुबली के माध्यम से पुरुष वर्ग को ७२ कलाओं के ज्ञान से सुसम्पन्न एवं समृद्ध किया। अपने बड़े पुत्र भरत को सभी प्रकार के शास्त्रास्त्रों के संचालन की शिक्षा प्रदान कर कर्मभूमि के मानवों को स्वतंत्रता-पूर्वक ससम्मान जीने की कला में निष्णात किया। इसी प्रकार अपने शेष ९८ पुत्रों को अनेक प्रकार की उपयोगी कलाओं-विद्याओं आदि की शिक्षा प्रदान कर जनता को सभी प्रकार की विद्याओं से सुसम्पन्न किया। असि, मसि और कृषि इन तीनों ऐहिक विषयों से सम्बन्धित सभी कार्यकलापों का, विद्याओं का एवं इनके भेदों की सभी प्रकार की शिक्षा का ज्ञान ऋषभकुमार ने अपने पुत्रों, पुत्रियों एवं अन्य प्रतिभाशाली किशोरों के माध्यम से तत्कालीन मानव समाज को प्रदान किया। कुछ ही समय पूर्व जहाँ यौगलिक नितांत शांत और स्वयं में मग्न दृष्टिगोचर होते थे, उसी धरा पर सम्पूर्ण मानव समाज यत्र तत्र सर्वत्र किसी न किसी कार्य में निमग्न दृष्टिगोचर होने लगा। कुम्भकार आदि कर्मकार अपने कार्यकौशल का, शिल्प का और कर्मठता का चमत्कार दिखाने में संलग्न रहने लगे। किशोर एवं युवक असि आदि शस्त्रों के संचालन में निष्णातता प्राप्त करने में संलग्न रहने लगे। कृषक कृषि भूमि को उपजाऊ बनाने और उससे अधिकाधिक उपज लेने के लिये प्रयास करने लगे। भूगर्भ में छिपी अनेक प्रकार

की सम्पदाओं को खनन कर निकालने में अगणित हाथ कर्मठता के साथ अपना कौशल प्रकट करने लगे। जो धरा भोगयुग के समय चारों ओर शांत दृष्टि-गोचर होती थी, वह अब कर्मसंकुल और कर्म प्रधान हो रही थी। सम्पूर्ण आर्य धरा देवविमानोपम गगन चुंबी भवनों, स्वच्छ विस्तीर्ण पथों, अनेक प्रकार के सुस्वादु फलों के भार से विनम्र वृक्षों, लताओं एवं गुल्मों से संकुल, उद्यानों से लहलहाती हुई प्राणी मात्र को मुग्ध कर रही थी। ग्राम्य पाठशालाओं, विद्यालयों आदि के रूप में शिक्षण संस्थाओं का एक जाल सा बिछा दिया गया। ग्रामवासियों एवं नगरवासियों के बालक-बालिकाओं को प्रारम्भिक से लेकर उच्च से उच्चतम कोटि की शिक्षा दी जाने लगी। प्रजा की रक्षा हेतु राजन्य वर्ग की, जीवनोपयोगी सामग्रियों के आदान-प्रदान, आयात-निर्यात, क्रय-विक्रय अथवा व्यापार के लिये वैश्य वर्ग की, पशुपालन एवं औद्योगिक विकास के माध्यम से जन समाज की सेवा करने वाले कर्मठ कर्मकार वर्ग की ऋषभकुमार द्वारा स्थापना, प्रतिष्ठा अथवा व्यवस्था की गयी। ये तीनों वर्ग ही आगे चलकर कालांतर में क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन तीन वर्णों के रूप में लोक में प्रसिद्ध हुए।

इस प्रकार ऋषभकुमार ने प्रारम्भ से ही अधीन रहते चले आ रहे भोग-भूमि के भोले भाले यौगलिकों को अहर्निश व अथक प्रयास से कर्म भूमि का सक्रिय पाठ पढ़ा सभी भाँति सुसम्पन्न बना इस धरा पर एक प्रकार से साकार स्वर्ग ला उतारा। आर्यधरा के निवासियों को स्वावलम्बी बना उन्हें दिव्य देवोपम सुखों से सुसम्पन्न कर दिया। कहीं किसी प्रकार के अभाव-अभियोग के लिये उस समय अवकाश नहीं था। यत्र, तत्र, सर्वत्र वस्तुतः सुख का ही साम्राज्य दृष्टिगोचर हो रहा था। (क्रमशः)

परोपकार

□ श्री दीपक जैन

महातपस्वी अबुल कासिम नशोराबादी ने श्रद्धा के साथ मक्का की सत्तर बार यात्रा की थी। एक बार यात्रा करते हुए रास्ते में कहीं उन्हें दुबला-पतला एक भूखा कुत्ता दिखाई दिया। उस समय उनके पास कोई खाने की चीज नहीं थी, किन्तु कुत्ते की तड़पन भी वे देख नहीं सके। कुछ सोचकर वे ऊँचे स्वर में बोल उठे—"मैं एक रोटी के बदले अपनी चालीस मक्का यात्राओं का पुण्य देता हूँ। कोई लेना चाहता हो तो ले सकता है।" यह सुनकर एक अन्य यात्री तैयार हो गया। उसने एक तीसरे यात्री को साक्षी बनाकर चालीस मक्का यात्राओं के बदले एक रोटी दे दी। रोटी लेकर अबुल कासिम ने बहुत प्रेम से उस कुत्ते को खिला दी। इसे कहते हैं—सहानुभूति, उदारता, दया, परोपकार।

—१०६, महावीर नगर, टोंक रोड, जयपुर—३०२ ०१५

नेहरू-शताब्दी-वर्ष पर विशेष प्रेरक प्रसंग

ऐसे थे पंडित नेहरू !

□ श्री राजेन्द्रप्रसाद जैन

नेहरूजी ने एक सम्पन्न, संस्कारित परिवार में जन्म लिया था। वे सुख-सुविधाओं के साये में पले थे। वे बाल्यकाल से ही चंचल और होनहार थे। उनके घर की बंदूक ने उनमें शिकार का शौक पैदा कर दिया। अवकाश में बंदूक को कंधे पर रख वे जंगल में शिकार के लिए निकल जाते थे। तब घने बियाबान जंगल में, मस्ती से कुलांचे मारने वाले हिरणों की कमी नहीं थी। हिरणों के झुंड पर वे अपनी बंदूक से अचूक निशाना मारकर प्रसन्नता का अनुभव करते थे। शिकार का यह क्रम चलता रहा। तभी एक दिन घटना ने मोड़ लिया। उस दिन नेहरूजी की गोली से एक हिरण जख्मी हो गया और उसने आँखों में आंसू लिये, कातर दृष्टि से नेहरूजी को ताकते हुए अपने प्राण-त्याग दिये। दृश्य बड़ा करुण था, मृत्योन्मुखी हिरण की कातर दृष्टि एवं करुण दशा ने मासूम नेहरू को उद्वेलित कर दिया। हिरण की पीड़ा ने उन्हें अभिभूत कर दिया, कोमल हृदय को आहत कर दिया। उनकी आँखें छलछला आईं। कुछ क्षण मौन साधे वे हिरण के पार्थिव शरीर को देखते रहे और....और....फिर वहीं खड़े-खड़े संकल्प कर बैठे....अब किसी निरीह जीव को नहीं सताऊँगा....कभी आखेट नहीं करूँगा....कभी नहीं और फिर उन्होंने जीवनपर्यन्त कभी शिकार नहीं किया।

कोई भावुक हृदय जब अन्तर्मन से दया और करुणा में आबद्ध हो जाता है तो वह अहिंसा को समर्पित हो जाता है। प्राणी-मात्र का मित्र बन जाता है। ऐसा ही आगे चलकर नेहरूजी के जीवन में घटित हुआ। समय सरका और द्वितीय महायुद्ध के पूर्व उस विदेशी साम्राज्यवादी सरकार ने लाहौर में एक वृहद् पशु-वध-शाला का निर्माण करना चाहा। संवेदनशील देशवासियों ने निरीह पशुओं के रक्त के इस कारखाने का प्रबल विरोध किया। फिर भला नेहरूजी कैसे पीछे रहते ? उन्होंने इस प्रस्तावित बूचड़खाने का तीव्र विरोध किया। उनके विरोध को तत्कालीन समाचार पत्रों ने पूर्ण समर्थन देते हुए उनके वक्तव्य अपने पृष्ठों पर सुर्खियों में प्रकाशित किये। तब उस युगपुरुष ने सशक्त शब्दों में कहा था—

"मैं कसाईखानों को बिलकुल नापसन्द करता हूँ। जब कभी कसाईखाने के पास से गुजरता हूँ, मेरा दम घुटने लगता है। वहां कुत्तों का झपटना तथा

चील कौवों का मंडराना मुझे घृणास्पद लगता है। पशु हमारे देश का धन है, इसके ह्रास को मैं कदापि पसन्द नहीं करता। सरकार ने लाहौर में जो बूचड़-खाना खोलने का निश्चय किया है, मैं उसका घोर विरोध करता हूँ। इसके विरोध में जो कदम हमारे देशवासी उठावेंगे, मैं उसके साथ रहूँगा।"

और....और....इतिहास का पृष्ठ साक्षी है कि उस विदेशी साम्राज्यवादी गौरांग सरकार को जन-मत के आगे घुटने टेक, अपनी क्रूर-खूनी-योजना को निरस्त होने को मजबूर होना पड़ा था। उस समय वस्तुतः पं० नेहरू ने अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व से देशवासियों का नेतृत्व करते, लाखों करोड़ों निरीह पशुओं को जीवनदान, अभयदान देते हुए करुणा मूर्ति महाश्रमण महावीर के पावन उद्घोष—सव्वे पाणा पियाउया, सुहसाया, दुक्खपडिकूला अप्पियवहा, पियजीविणो, जिविउकामा, सव्वेसिं जीवियं पिये।" को मूर्त-रूप दिया था।

जन्म-शताब्दी-वर्ष में उस महान् आत्मा को मेरा विनम्र प्रणाम।

—एडवोकेट, भवानीमंडी (राजस्थान)

दो कविताएँ

पूरकता

☐ डॉ. सत्यपाल चुघ

सामान को ग्राहक
और ग्राहक को
सामान चाहिए,
माँ-बाप को सन्तान
और सन्तान को
माँ-बाप चाहिए,
सुवक्ता को श्रोता
और श्रोता को
सुवक्ता चाहिए,
पर मेरे एकान्त को
और भी एकान्त
अन्तरात्म चाहिए।

—१०, स्टॉफ क्वार्टर्स,
किरोड़ीमल कॉलेज, दिल्ली-७

एकता

☐ श्री सुनील पामेचा

एक-एक यदि पेड़ लगाओ,
तो तुम बाग लगा दोगे।
एक-एक यदि ईंटें जोड़ो,
तो तुम महल बना लोगे।

☐

एक-एक यदि पैसा जोड़ो,
तो बन जाओगे धनवान।
एक-एक यदि अक्षर सीखो,
तो बन जाओगे विद्वान्।

—पामेचा सदन, नई आबादी
रोड नं. ४, मन्दसौर

वे साधु धन्य हैं

□ डॉ० प्रेमचन्द रांवका

विन्ध्याद्रिर्नगरं गुहा वसतिकाः शय्या शिला पार्वती ।
दीपाश्चन्द्रकरा मृगाः सहचरा मैत्री कुलीनाङ्गना ।
विज्ञानं सलिलं तपः सदशनं येषां प्रशान्तात्मनां ।
धन्यास्ते भवपङ्क निर्गम पथ प्रोद्देशका सन्तु ते ।।२१।।

आचार्य शुभचन्द्र 'ज्ञानार्णव' के उक्त श्लोक में कहते हैं—जिन प्रशान्तात्मा योगियों के लिये विन्ध्याचल पर्वत नगर के समान है, गुफाएँ गृह के समान है, पर्वत की शिला ही शय्या है, चन्द्रमा जिनका दीपक है, वन के मृगादि सहयोगी हैं, प्राणी मात्र से मित्रता ही कुलीन स्त्री है, विज्ञान (आत्मज्ञान) ही जल है, तथा तप ही उत्तम भोजन है, ऐसे वे साधु धन्य हैं, जो संसार रूपी कीचड़ से निकलने के पथ प्रदर्शक हैं ।

प्राचीन काल में साधु-सन्त निर्जन वन-प्रदेश में अकेले रहते और आत्म-साधना करते थे । प्रकृति के अतिरिक्त उनके पास कोई साधन—रहने, खाने, पीने, सोने के नहीं होते थे । सुख-दुःख का कोई साधन-साथी उनके पास नहीं होता था । ऐसे वन प्रदेश में उनकी निर्भय तपःसाधना पर शंका करने वाले को भर्तृहरि ने अपने 'वैराग्य शतक' में उत्तर दिया—

धैर्यं यस्य पिता क्षमा च जननी शान्तिश्चिरं गेहिनी,
सत्यं सूनुरयं दया च भगिनी भ्राता मनः संयमः ।
शय्या भूमितलं दिशोऽपि वसनं ज्ञानामृतं भोजनं,
ऐते यस्य कुटुम्बिनो वद सखे कस्माद्भयं योगिनः ।।

धैर्य जिसका पिता है, क्षमा माता है, नित्य शान्ति स्त्री है, सत्य ही पुत्र है, दया भगिनी है, मनः संयम भ्राता है, भूमितल ही जिसकी सुकोमल सेज है, दिशाएँ ही वस्त्र हैं और ज्ञानामृत ही भोजन है, ये सब जिसके कुटुम्बी हैं, कहो मित्र ! उस योगी को किससे भय हो सकता है ?

ऐसे योगी जहाँ जन्म लेते हैं उनके माता-पिता कृतार्थ हो जाते हैं, वह देश और कुल धन्य हो जाता है और उस योगी को दिया हुआ अक्षय हो जाता है ।

कृतार्थौ पितरौ तेन धन्योदेशः कुलं च तत् ।
जायते योगवान् यत्र दत्तमक्षयतां व्रजेत् ।।
साधूनां दर्शनं पुण्यं तीर्थभूता हि साधवः ।
तीर्थं फलति कालेन सद्यः साधु समागमः ।।

साधुओं के दर्शन पावन हैं, क्योंकि वे तीर्थस्वरूप होते हैं । तीर्थ का फल तो फिर भी देर से मिलता है, परन्तु साधु समागम का फल तत्काल प्राप्त होता है ।

— ६६१०, मोदी के रास्ता, जयपुर-१ (राज.)

प्रश्नमंच कार्यक्रम [३४]

सन्तोष*

□ प्रस्तोता श्री पी० एम० चौरडिया

[१]

(१) **प्रश्न**—सन्तोष की परिभाषा क्या है ?

उत्तर—(१) साधारण बोलचाल की भाषा में ईमानदारी से पुरुषार्थ करते हुए जो भी मिले, उससे संतुष्ट होना ही संतोष कहलाता है।

(२) 'अहंभाव को छोड़कर विपत्ति को भी सम्पत्ति मानना संतोष है।'
—जुन्नेद

(२) **प्रश्न**—संतोष जागृत कैसे होता है ?

उत्तर—जो लोभ नहीं करता और सम भाव में रमण करता है, उसे संतोष जागृत होता है।

(३) **प्रश्न**—किन-किन जैन शास्त्रों में संतोष के विषय में विशेष वर्णन किया गया है ?

उत्तर—(१) दशवैकालिक सूत्र, (२) उत्तराध्ययन सूत्र, (३) आचारांग सूत्र, (४) स्थानांग सूत्र, (५) सूत्र कृतांग सूत्र।

[२]

(१) **प्रश्न**—सांई इतना दीजिये, जा में कुटुंब समाय।
मैं भी भूखा ना रहूँ, साधु न भूखा जाय॥

इसका भावार्थ कीजिए।

---

*श्री एस. एस. जैन युवक संघ मद्रास द्वारा आयोजित कार्यक्रम जिसमें स्वाध्याय संघ, युवक संघ एवं बालिका मण्डल ने भाग लिया। —सम्पादक

उत्तर—हे प्रभु ! आप मुझे इतना दीजिये जिसमें मैं अपने परिवार का अच्छी तरह लालन-पालन कर सकूँ । मुझे भी भर पेट भोजन मिले तथा अतिथि व साधुजनों को भी मैं भोजन दे सकूँ ।

(२) **प्रश्न**—कबीरा ओन्दी खोपड़ी, कबहू न धापे आय ।
तीन लोक की संपदा, कब आवे घर माय ।।

उपर्युक्त दोहे में कवि ने क्या सन्देश दिया है ?

उत्तर—कबीर कहते हैं कि मनुष्य की तृष्णा रूपी खोपड़ी कभी भी नहीं भरने वाली है । यदि तीनों लोक की सारी सम्पदा भी दे दी जाए तो भी तृष्णा कभी शांत नहीं होती ।

(३) **प्रश्न**—गुरु प्रसाद सन्तोष-गज, जे नर बैठा जाय ।
जग लालच कूकर जिया, लाल सकै न लगाय ।।
—बांकीदास ग्रन्थावली, भाग ३ से

उपर्युक्त दोहे में कवि ने क्या विचार प्रकट किये हैं ?

उत्तर—गुरु की कृपा से जो मनुष्य संतोष रूपी हाथी पर बैठ जाता है, उसे लोभ रूपी हलका कुत्ता नहीं काट सकता ।

[३]

(१) **प्रश्न**—'व अल्लाऊ मुहिब्बुउस्साबिर्रान ।'

अर्थ—अल्लाह सब्र करने वालों से मुहब्बत रखता है ।

उपर्युक्त उत्तम विचार किस ग्रन्थ से लिए गये हैं ?

उत्तर—कुरान शरीफ (२/२४६) से ।

(२) **प्रश्न**—'असन्तुष्ट व्यक्ति को सभी जगह भय रहता है ।'

उपर्युक्त विचार किस ग्रन्थ में व्यक्त किये गये हैं ?

उत्तर—आचारांग चूर्णि में ।

(३) **प्रश्न**—'असंतोषी इन्द्र व चक्रवर्ती को भी सुख नहीं मिलता ।' ये विचार किसमें व्यक्त किये गये हैं ?

उत्तर—योग शास्त्र में ।

[४]

(१) **प्रश्न**—क्या संतोष खरीदा जा सकता है ?

उत्तर—नहीं । संतोष तो हृदय एवं बुद्धि का उद्गम स्थान है, वह बाह्य साधनों से नहीं खरीदा जा सकता ।

(२) **प्रश्न**—लोभी एवं निर्लोभी (संतोषी) दोनों संसार में रहते हुए भी उनके आचार-व्यवहार में क्या अन्तर होता है ?

उत्तर—जो संतोषी होते हैं, वे सांसारिक कार्य करते हुए भी भोग-विलास और धन-वैभव की वासना से अलिप्त रहते हैं। दूसरी ओर लोभी मनुष्य का आचार-व्यवहार इसके विपरीत होता है।

(३) **प्रश्न**—तृष्णा और संतोष में क्या सम्बन्ध है ?

उत्तर—तृष्णा और संतोष दोनों एक दूसरे के विपरीत हैं। तृष्णा संतोष को प्राप्त नहीं करने देती।

[५]

(१) **प्रश्न**—असंतोष को मानसिक ज्वर क्यों कहा गया है ?

उत्तर—जिस प्रकार बुखार होने पर रोगी शारीरिक और मानसिक दोनों तरह से अशक्त हो जाता है, उसे सिर दर्द, चक्कर आदि आने लगते हैं, उसी प्रकार असन्तोषी व्यक्ति भी कुढन, जलन जैसे विचारों से घिरा रहता है। उसकी शक्ति दूसरों के दोषारोपण, प्रतिशोध, ईर्ष्या, निन्दा आदि में ही व्यय होती रहती है। शान्ति, क्षमा, सहिष्णुता आदि गुण उन व्यक्तियों से पलायन कर जाते हैं। इन कारणों से असन्तोष को मानसिक ज्वर कहा गया है।

(२) **प्रश्न**—संतोष कहाँ से पैदा होता है ?

उत्तर—संतोष मन की कोमल वृत्तियों से पैदा होता है।

(३) **प्रश्न**—सन्तुष्ट और असन्तुष्ट व्यक्ति में क्या अन्तर होता है ?

उत्तर—दो व्यक्तियों को एक सरीखे साधन और समान सुविधाएँ प्राप्त होने पर भी जो असन्तोषी होगा वह हर समय कोई न कोई दुखड़ा रोता रहेगा, परन्तु जो सन्तोषी होगा, वह प्रत्येक परिस्थिति में सन्तुष्ट, प्रसन्न और सुखी रहेगा।

[६].

(१) **प्रश्न**—सद्दे अत्तित्ते य परिग्गहम्मि,
सत्तो व सत्तो न उवेइ तुट्ठिं।

अर्थ—शब्द आदि विषयों में अतृप्त और परिग्रह में आसक्त रहने वाली आत्मा संतोष को कभी प्राप्त नहीं होती।

उपर्युक्त आगम की वाणी किस शास्त्र से ली गई है ?

उत्तर—उत्तराध्ययन सूत्र ३२/४२।

(२) **प्रश्न**—'सन्तोष मूलं हि सुखमं।'

अर्थ—सुख का मूल सन्तोष है ।

उपर्युक्त उत्तम विचार किस ग्रन्थ से लिये गये हैं ?

उत्तर—मनुस्मृति से ।

(३) प्रश्न—'सन्तोषादुत्तमः सुख लाभः ।

अर्थ—सन्तोष से उत्तम सुख प्राप्त होता है ।

सन्तोष के विषय में ये विचार किस ग्रन्थ से लिये गये हैं ?

उत्तर—पातंजल योग दर्शन से ।

[७]

(१) प्रश्न—'दुविधा में दोऊ गए, माया मिली न राम ।

इस कहावत का क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—जो लोग हमेशा हाय-तोबा करते हैं, संतोष को धारण नहीं करते, उनके जीवन में ऐसा घटित होता है । दो कर्मों में से एक कार्य भी सिद्ध नहीं होता ।

(२) प्रश्न—'आशा पास महा दुख दानी, सुख पावे संतोषी ज्ञानी ।'

उपर्युक्त कहावत का अर्थ बताइये ।

उत्तर—तृष्णा व्यक्ति को बन्धन में डाल देती है । वह उसके लिए दुखदायक होती है । सुखी वही व्यक्ति होता है, जिसको संतोष रूप ज्ञान है और उसने उसको धारण कर रखा है ।

(३) प्रश्न—'धीरज का फल मीठा ।'

इस कथन का क्या संकेत है ?

उत्तर—कोई भी कार्य करने के पूर्व उस कार्य के बारे में अच्छी तरह से सोचना-समझना चाहिए व उसके परिणामों को जानने के बाद ही उस कार्य को प्रारम्भ करना चाहिए । ऐसा करने पर ही उस कार्य में सफलता मिलती है ।

[८]

(१) प्रश्न—'विद्या काम धेनु है और सन्तोष ही नन्दन बन है ।'

उपर्युक्त विचार किसने व्यक्त किये हैं !

उत्तर—चाणक्य ने ।

(२) प्रश्न—'सबसे अधिक प्राप्ति उसी को होती है, जो संतुष्ट होता है ।'

उपर्युक्त विचार किस पाश्चात्य विद्वान् ने व्यक्त किये हैं ?

उत्तर—शैक्सपियर ने ।

(३) **प्रश्न**—'सुहमाह तुट्ठि अर्थात् तुष्टि (संतोष) को ही सुख कहा है। यह सुन्दर विचार कहाँ व्यक्त किये गये हैं ?

उत्तर—'गौतम कुलक' के २२वें जीवन-सूत्र में।

(१) **प्रश्न—दे मस्त फकीरी वह मुझको।**

तर्ज—आ जाओ तड़फते हैं अरमां...............।

दे मस्त फकीरी वह मुझ को, शाहों की भी परवाह नहीं।
मैं भी न किसी का शाह बनूं, मेरा भी कोई शाह न हो॥

दुनिया दौलत में मस्त रहे, मैं मस्त रहूँ तुझ को पाकर।
मैं रहूँ अकिंचन सा बनकर, पर कण भर मन में चाह न हो॥

पर पीड़ा मेटूं जी भर, पर निज पीड़ा न रुला पाये।
पर सुख को अपना सुख समझूं, सुखिया से मन में डाह नहीं॥

उपर्युक्त स्तवन के निम्न शब्दों के अर्थ बताइये ?

(१) मस्त फकीरी (२) अकिंचन

उत्तर—(१) **मस्त फकीरी**—फक्कड़पन, सभी परिस्थितियों में मस्ती से जीना, सम भाव में रहना।

(२) **अकिंचन**—निर्लिप्त, जल में कमल समान रहना अर्थात् संसार में रहते हुए भी संसार के मोह-माया में लिप्त न होना।

(२) **प्रश्न—मुझे है काम ईश्वर से, जगत रूठे तो रूठन दे॥ टेर॥**

कुटुम्ब परिवार सुत दारा, माल धन लाज लोकन की।
हरि के भजन करने में, अगर छूटे तो छूटन दे॥ १॥

बैठ संगत में संतन की, करूँ कल्याण मैं अपना।
लोग दुनिया के भोगों में, मौज लूटें तो लूटन दे॥ २॥

प्रभु के ध्यान करने की, लगी दिल में लगन मेरे।
प्रीति संसार—विषयों में, अगर टूटे तो टूटन दे॥ ३॥

उपर्युक्त गीतिका के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—'ब्रह्मानन्द।'

(३) **प्रश्न—तर्ज मन डोले**...........

नहीं तन तेरा, नहीं धन तेरा, नहीं मात-पिता परिवार रे,
इस रंग-रंगीली दुनिया में.....................

मल-मल के इस तन को धोता, साबुन तेल लगाता।
बढ़िया-बढ़िया पोशाकों से, फिर-फिर इसे सजाता।
कहता मेरा, फिर भी तेरा, उठता क्यों हाहाकार रे॥ १॥

धन के खातिर कितनी-कितनी, दगाबाजियाँ करता ।
भूख-प्यास, सर्दी-गर्मी की, दिल परवाह नहीं करता ।
फिर भी धेला भरती वेला, नहीं मिलता करले विचार ।। २ ।।

उपर्युक्त स्तवन के रचयिता कौन हैं ?

उत्तर—धन मुनि ।

(१) **प्रश्न**—सन्तोष का उद्‌गम स्थान कहां है ?

उत्तर—हृदय और बुद्धि ।

(२) **प्रश्न**—वर्तमान में कौनसा व्यक्ति सुखपूर्वक जीवन बिताता है ?

उत्तर—वर्तमान में वही व्यक्ति सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करता है जो सन्तोष वृत्ति को अपनाता है ।

(३) **प्रश्न**—'सतोसिणोए पकरेंति पावं ।'

सूत्र कृतांग सूत्र १/१२/१५

इसका अर्थ बताइये ।

उत्तर—सन्तोषी व्यक्ति पाप नहीं करते ।

P.M. Chordia & Co., Chartered Accountants,
89, Audiappa Naicken St., Madras-600 079

VEGETARIAN DIET*

In earlier days it was considered that meat diet is better than vegetarian diet. But later, researches have shown that there is nothing practical that could support this theory.

It was also said that meat protiens are better assimilated into the body than vegetable protiens. Latest, experiments have shown that it is not so. A judicious selection of vegetables would give required quantity of protiens from vegetable food.

It is a vulgar error to regard meat eating in any form as necessary for life. We know how much of the prevailing meat diet is not merely a wasteful extravagance but a source of serious evil to the consumer.

Vegetarian diet is the best diet :

Meat, fish and eggs are not necessary food because a diet containing cereals, milk, pulses, vegetables and fruits in the right amount, is in every way a quite satisfactory (well balanced) diet.

—Health Bulletin No. 30, Page No. 15
(Government of India)

Vegetarian diet is the best.
Vegetarian diet is full of food essentials. :

(1) **Protein**—Supplies building material for the body and making good the loss of tissue.

(2) **Fat**—Supplies reserve energy and prevents the loss of heat from the body.

(3) **Carbohydrates**—Body's chief source of energy.

*Courtesy : Mahaveer Vani Prakashan, Raichur (Karnataka)

(4) Mineral Salt—(a) Calcium—Necessary for the growth of bones and teeth and makes the heart work properly.

(b) Phosphorus—Necessary for all living tissues and is an important constituent of blood.

(c) Iron—Necessary for blood formation. Enables blood to carry oxygen from lungs to every part of the body. For lack of sufficient iron in the blood, people suffer from general weakness anaemia.

(5) Vitamins—Vitamins (A, B, C, D etc) are organic substances required in regulating some of the body processes and preventing diseases. Their constant deficiency in food causes one disease or the other.

Calories—Calories are heat units by which food requirements are estimated. One gram of protein yields-4.1 calories. One gram of carbohydrates yields 4.4 calories. On gram of fat yields 9.3 calories.

Water—Water is necessary for removing sweat urine etc. from the body. It cleans kidney and helps digestive system and blood circulation. It also maintains normal temperature of the body.

HOW MUCH TO EAT DAILY ?

A diet list of a healthy person :

		Grams
Cereals	....	450
Milk & Milk Products	....	250
Pulses	....	100
Vegetables	....	200
Leafy Vegetables	....	125
Ghee, Oils, Fats	....	50
Fruits, Nuts	....	50

A Great Medical Authority : Food Value Chart

VEGETARIAN FOODS

NAME	Calories per Gms.	Protien %	Fat %	Mineral Salt %	Carbo Hydrates %	Calcium %	Phos-phorous %	Iron %
Green Gram	334	24.0	1.3	3.6	56.6	0.14	0.28	8.4
Black Gram	350	24.0	1.4	3.4	60.3	0.20	0.37	9.8
Red Gram	353	22.3	1.7	3.6	57.2	0.14	0.26	8.8
Lentil	346	25.1	0.7	2.1	59.7	0.13	0.25	2.0
Peas	358	22.9	1.4	2.3	63.5	0.03	0.36	5.0
Bengal Gram	372	22.5	5.2	2.2	58.9	0.07	0.31	8.9
Cow Gram	327	24.6	0.7	3.2	55.7	0.07	0.49	3.8
Soya Beans	432	43.2	19.5	4.6	22.9	0.24	0.69	11.5
Almond	655	20.8	58.9	2.9	10.5	0.23	0.49	3.5
Cashewnut	596	21.2	46.9	2.4	22.3	0.05	0.45	5.4
Coconut	444	4.5	41.6	1.0	13.0	0.01	0.24	1.7
Gingelly	564	18.3	43.3	5.2	25.2	1.44	0.57	10.5
Groundnut	549	31.5	39.8	2.3	19.3	0.05	0.39	1.6
Pistochionut	626	19.8	53.5	2.8	16.2	0.14	0.43	13.7
Walnut	687	15.6	64.5	1.8	11.0	0.10	0.38	4.8
Cumin	356	18.7	15.0	5.8	36.6	1.08	0.49	31.0
Fenugreek	333	26.2	5 8	3.0	44.1	0.16	0.37	14.1
Cheese	348	24.1	25.1	4.2	6.3	0.79	0.52	2.1
Ghee	900	—	98.0	—	—	—	—	—
Skimmed Milk Powder	347	38.0	0.1	6.8	15.0	1.37	1.00	1.04

FLESH FOODS

NAME	Calories per Gms.	Protien %	Fat %	Mineral Salt %	Carbo Hydrates %	Calcium %	Phos-phorous %	Iron %
Egg	173	13.3	13.3	1.0	—	0.06	0.22	2.1
Fish	91	22.6	0.6	0.8	—	0.02	0.19	0.9
Mutton	194	18.5	13.3	1.3	—	0.15	0.15	2.5
Pork	114	18.7	4.4	1.0	—	0.03	0.20	2.3

— Health Bulletin No. 23
Government of India

EGGS ARE STORES OF POISON

Eggs contain 6 kinds of poisons :

Modern science has found the following harmful substances in egg which damage the organs of the human body in different ways and cause many diseases in the humun beings :

(1) Cholesterol	(4) Saturated Fatty Acids
(2) D. D. T.	(5) S. R. Fraction 10 to 20
(3) Lipoproteins	(6) Microglobulins

Effect of the poisons in the body :

Eggs cause heart disease, high blood pressure, paralysis stone in gall bladder, intermittent claudication etc.

The above six harmful substances damage the human body such as arteries, heart, brain, kidney, liver etc., and cause many diseases such as coronary artery thrombosis, angina pectoris, atherosclerosis, hypertension, paralysis, stone in gall bladder, intermittent claudication, cerebral insufficiency etc.

Whatever may be the type of eggs, they gradually and slowly damage the important organs of the human body and help in creating diseases.

Vegetarian Eggs—Absolutely a false propaganda because they are not produced by any plant.

Misconception is being intentionally created by some poultry farms by the name of so called 'Vegetarian Eggs'. In fact they are not produced by any plant like vegetable milk or ghee. Each and every egg is produced by a hen or a duck.

Vegetarian Egg—a type of abortion, moistened with urine blood and faecal matter.

Egg, from which a chicken does not come out, some people also call it, by nick name 'Vegetarian Egg' for business purpose to

increase their sale. In reality it is a type of abortion of a hen which is moistened with urine, blood and faecal matter. It has more potential of creating diseases in human body than an ordinary egg. It is not a vegetable substance. Normally such type of eggs are not produced. They are not available in the market and an average person cannot recognise them.

Eggs cause putrefaction in the intestines :

Eggs do not contain carbohydrates and vitamin 'C' and are deficient in calcium, iron, and vitamin 'B' complex. Besides this, they contain many poisonous substances. So they cause putrefaction in the intestines and harmful substances which are generated and absorbed in the body and thus damage important organs of human beings and put unnecessarily harmful load on the body metabolism. As such they disturb the digestion and normal metabolism of the body and reduce life span in the long run. Eggs are not completely and easily digested as compared to milk.

छोटी उम्र और भावना

□ **श्री मोतीलाल सुराना**

अरे बेटे, कल तो तूने पाँच रुपये माँगे थे और आज फिर पाँच रुपये माँग रहा है। हाँ पिताजी, वे सब खर्च हो गये, आज और दे दीजिये—लड़के ने कहा—अब चार दिन तक एक पैसा भी नहीं माँगूंगा। पिता ने फिर से पाँच रुपये दे दिये, पर बाद में अपने विश्वस्त नौकर को कहा कि जब यह स्कूल जाने को निकले तक तू इसके पीछे-पीछे थोड़ी दूरी पर चलना, देखना आखिर यह क्या-क्या खरीदता है।

नौकर ने वैसा ही किया। घर से थोड़ी दूर पर बालक ने एक कच्चे मकान से एक दोस्त को बुलाया। दोनों पुस्तक बेचने वाले की दुकान पर गये और उसे पाँच रुपयों की पुस्तकें दिलवा दीं तथा बालक दोस्त से बोला—कल की और आज की दस रुपयों की पुस्तकों से तेरा पढ़ाई का पूरा काम बन जायगा।

नौकर ने घर आकर मालिक को सब बात बताई तो वे अत्यन्त खुश हुए। शायद आप जानना चाहेंगे कि वह बालक कौन था? वह चितरंजनदास था, जो बड़ा होने पर देशबंधु के नाम से विख्यात हुआ। भविष्य में बड़े बनने वाले बचपन से ही सद्गुणों को आत्मसात करते रहते हैं।

चिंतन और व्यवहार (१६)
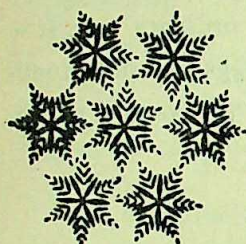
क्या आध्यात्मिक साधना हेतु साम्प्रदायिक मर्यादाओं का निर्वाह आवश्यक है ?

□ श्री चंचलमल चौरड़िया

साधना क्या है, उसका ध्येय, उद्देश्य एवं लक्ष्य क्या हो, उसकी प्राथमिकताएँ एवं पात्रता के मूल मापदण्ड क्या हों, मूल सिद्धान्तों एवं उप सिद्धान्तों के पालन में किसको महत्त्व दिया जाए, परिस्थितियों वश कभी दोनों में से एक को प्राथमिकता देनी हो तो किसको देने का विवेक रखा जावे, द्रव्य एवं भाव साधना में किसको प्रमुखता दी जावे ? जब तक इन प्रश्नों का सद्विवेकपूर्ण समाधान नहीं होता तब तक साधना में सहायक तत्त्वों का कैसे मूल्यांकन किया जावे ?

राग-द्वेष कम कर समत्व अथवा वीतरागता को प्राप्त करना ही सभी साधकों की साधना का परम लक्ष्य है । नर से नारायण बनना एवं आत्मा से परमात्व पद को प्राप्त करना ही साधना का उद्देश्य है । आत्मा से निज स्वभाव में आना अथवा आत्मीय गुणों को प्रकट करना ही साधना की सफलता का मापदण्ड है । आश्रवों से बचते हुए संवर, निर्जरा का आलम्बन लेते हुए तनावमुक्त हो, पूर्व संचित कर्मों को समभाव पूर्वक क्षय करना ही साधना का क्रमिक विकास है । जो साधक इन मापदण्डों को स्वीकारते हैं, द्रव्य के साथ-साथ भाव-साधना में आगे बढ़ते हैं, उनका जीवन दिन-प्रतिदिन लक्ष्य की तरफ बढ़ता जाता है, परन्तु जो जड़ साधना का मायावी आचरण करते हैं उन्हें स्वयं के प्रति भी ईमानदार कैसे कहा जाय ? आज प्रत्येक साधक को अपनी साधना का स्वयं लेखा-जोखा करना होगा एवं कम से कम धर्म के नाम पर होने वाली मायावृत्ति एवं राग-द्वेष की प्रवृत्ति को त्यागने का प्रयास करना होगा, तब ही हम सावना के लक्ष्य को प्राप्त कर सकेंगे ।

आगमों में साधना की विभिन्न पद्धतियों का पात्रता के अनुरूप विस्तृत विवेचन किया गया है । सभी स्तर के साधकों के लिए स्पष्ट मार्गदर्शन उपलब्ध है । आगम वाणी का भाव कौन से संदर्भ में क्या है, उसके पीछे क्या ध्येय

अथवा प्रेरणाएँ रही हुई हैं, **कहाँ किसको कितना महत्त्व अथवा प्राथमिकता देना तथा कब किसको गौण करना ताकि मूल सिद्धान्तों की सुरक्षा हो सके, साधकों के सद्विवेक एवं चिन्तन पर निर्भर करता है। अतः प्रत्येक साधक को साधना की पात्रता के आवश्यक मापदण्डों को स्वीकारना होगा। मूल सिद्धान्तों को आचरण में प्राथमिकता देनी होगी। पूर्वाग्रहों एवं दुराग्रहों से हट आगम की कसौटी पर अपने आचरण को परखना होगा।** सही निर्णय पाने के लिए अनेकान्तवादी दृष्टिकोण से सद्विवेकपूर्ण चिन्तन करना होगा। परन्तु आज हम अहिंसा, अपरिग्रह, अनेकान्त, अप्रमाद तथा विषय-कषाय के त्याग अथवा समभाव का जितना प्रचार-प्रसार करते हैं, जीवन में उनका उतना आचरण प्रायः नहीं कर पाते। व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं, सस्ती लोकप्रियता का मोह, परिषहों को सहन करने का असामर्थ्य तथा शास्त्रीय ज्ञान का अभाव होने एवं पूर्वाग्रहों से ग्रसित होने से हम साधना की प्राथमिकताओं का सही निर्धारण नहीं कर पाते। शास्त्रों का विवेचन करते समय शब्दों को अधिक पकड़ते हैं परन्तु उसके पीछे रही भावना को समझने का सम्यक् प्रयास कम करते हैं। इसी कारण **संवत्सरी जैसा पावन प्रसंग राग-द्वेष पोषण का निमित्त बन रहा है जो हमारी अनेकान्तवादी मान्यता को कड़ी चुनौती है।**

आगमवाणी का अलग-अलग विवेचन कर एक ही धर्म के अनुयायी अपनी-अपनी मान्यताओं के अनुसार साधना के मापदण्ड निर्धारित करते हैं जिन्हें हम विभिन्न सम्प्रदायों के रूप में मान्यताएँ दे रहे हैं। **आश्चर्य की बात तो यह है कि सभी सम्प्रदाय अपने आचरण एवं व्यवहार को आगम के शत-प्रतिशत अनुकूल मानते हैं, उनमें अटूट आस्था एवं विश्वास प्रकट करते हैं। सभी शास्त्रों का विवेचन अपनी सुविधानुसार करने का प्रयास करते हैं व अपने समर्थन में ऐसे-ऐसे शास्त्रीय तर्क प्रस्तुत करते हैं कि अन्ध श्रद्धालु भ्रमित हो जाते हैं।**

साधकों एवं अनुयायियों का सम्यग्ज्ञान के अभाव में चिंतन सद्विवेकपूर्ण नहीं हो पाता। फलतः श्रद्धालु भक्त अपने गुरुओं का श्रद्धापूर्वक अन्धानुकरण करते नहीं हिचकिचाते एवं जिन उचित अथवा अनुचित सिद्धान्तों को वे मान्यता देते हैं, अपनी सहज सहमति प्रकट कर देते हैं। मान्यताओं का अनेकान्त दृष्टिकोण से चिंतन तक नहीं करते एवं कभी-कभी मूल सिद्धांतों पर पड़ने वाले प्रतिकूल प्रभावों को भी गौण कर देते हैं। इसी कारण आज अधिकांश समाज अलग-अलग सम्प्रदायों में विघटित होने के बावजूद अपनी-अपनी मान्यताओं में अन्तर से पूर्णतया अनभिज्ञ हैं। **अतः हमें स्वीकारना होगा कि गुरुओं के प्रति अन्ध श्रद्धा आज बढ़ती हुई अधिकांश सम्प्रदायों का प्रमुख कारण है।**

विचारों में भेद होना बुरा नहीं। गणधर श्री गौतम एवं केशी श्रमण में भी विचार-विमर्श से पूर्व मतभेद थे, स्वयं गौतम स्वामी को दीक्षा से पूर्व भगवान महावीर की मान्यताओं के प्रति सन्देह था परन्तु जैसे ही सत्य प्रकट हुआ, उन्होंने सभी पूर्वाग्रहों को छोड़ सत्य को स्वीकार किया। **पुराने समय में जब कभी नवीन सम्प्रदायों का उद्भव हुआ, उसके पीछे धर्म के मौलिक सिद्धान्तों, मर्यादाओं, नियमों-उपनियमों की सुरक्षा की भावना रहती थी अतः नवीन सम्प्रदाय के प्रेरक अपना जीवन समर्पण करके, अपार परिषहों व विरोध सहन करने के बावजूद भी सिद्धांतों के साथ समझौता नहीं करते। उनमें न तो सस्ती लोकप्रियता की भावना ही थी और न श्रद्धालुओं की अन्ध भक्ति अथवा व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाएँ। इसी कारण ऐसी सम्प्रदायों की उपयोगिता से नकारा नहीं जा सकता जो साधना की सुरक्षा के लिए अनिवार्य बन गई थी।** परन्तु आज जिन छोटी-छोटी सम्प्रदायों का विघटन हो रहा है, उनके पीछे सैद्धांतिक आधार कम और व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाएँ अधिक हैं, जिससे संगठन की शक्ति का दिनोंदिन ह्रास हो रहा है।

"संगठन ही शक्ति है" एवं संगठित समाज ही विकास कर सकता है। संगठन से धर्म प्रभावना होती है एवं प्रचार-प्रसार सहज व सरलता से होता है। जन-साधारण धर्म के प्रति अधिक प्रेरित होता है। संगठन के अभाव में धर्म दिखावा मात्र रह जाता है एवं जन-साधारण उससे दूर हटने लगता है। जनतंत्र के युग में तो संगठन का विशेष प्रभाव पड़ता है। सरकारी नीतियों के निर्माण में उनकी प्रभावी भूमिका होती है। **यदि हम असंगठित एवं बिखरे हुए हैं तो हमारी उचित बात भी नहीं सुनी जाती। इसके विपरीत जो संगठित हैं, उनकी सभी बातों को महत्त्व दिया जाता है भले ही वे राष्ट्र के लिए घातक ही क्यों न हों। देश में बढ़ती हुई हिंसा, बिगड़ता आचरण एवं नैतिक पतन इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है।** हमारे सिद्धांतों में इनका सम्यक् समाधान होते हुए भी असंगठित होने से हमारी भूमिका मूकदर्शक से अधिक नहीं कही जा सकती। संगठित समाज ही नीतियों के निर्माण एवं क्रियान्वयन में प्रमुख भूमिका निभाता है। जो प्रचार-प्रसार हम संगठित होकर सहज कर सकते हैं वह हम असंगठित रूप में नहीं कर सकते। वर्तमान में साधक समाज पर होने वाले घातक हमलों को संगठन द्वारा ही रोका जा सकता है। संगठन से शक्ति कई गुणा बढ़ जाती है। अतः छोटी-छोटी मान्यताओं में मतभेदों को लेकर नई-नई सम्प्रदायों का गठन धर्म के लिए घातक है और जो धर्म के लिए घातक है, साधना के लिए कैसे उपयोगी हो सकता है? **परन्तु जो संगठन में रहकर अपने स्वतन्त्र अस्तित्व का दावा करते हैं; नियम मर्यादाओं का पालन नहीं करते। नियमित जीवन में प्रमाद को बढ़ावा दे, अपने लक्ष्य से भ्रमित हो रहे हैं। संगठन का आवरण अपनी कमजोरियों को छिपाने में करते हैं। संघ-संचालक इन सबको जानते**

हुए भी अनजान हैं अथवा साधकों का सही मार्ग दर्शन करने में असमर्थ हैं, 'जैसा चल रहा है चलने दें' की स्थिति को प्रोत्साहन दे रहे हैं, वे भी अपने उत्तरदायित्वों को ईमानदारी पूर्वक नहीं निभा रहे हैं। ऐसे संगठनों का न तो वर्चस्व ही होता है और न ही दीर्घकालीन अस्तित्व। लकड़ी में दीमक की भांति बाहर से संगठित, सुव्यवस्थित लगने के बावजूद वे पूर्ण रूपेण खोखले हैं। उनका आचरण समूह एवं एकान्त में बहुरूपियों की भांति मायावी होता है। जिस प्रकार बिना जड़ के पेड़, बिना नींव के भवन का अस्तित्व संदिग्ध है उसी प्रकार ऐसे संगठनों को संगठन समझना बहुत बड़ा धोखा है। जहाँ मन-भेद हो, विचार-भेद हो, आचार-भेद हो, वे संगठन के खोखले रूप हैं, अपनी कमजोरियों पर आवरण डालने हेतु संगठन का ढोल पीटते हैं एवं अपनी कमजोरियों को छिपाने में संगठन का लाभ उठाते हैं।

इसके विपरीत सम्प्रदायों में प्रायः अनुशासन एवं नियंत्रण सुव्यवस्थित होता है। साधना हेतु आचार्यों की प्रेरणा एवं मार्ग-दर्शन नियमित मिलता रहता है। विचारों में समानता होने से साधना हेतु उचित वातावरण एवं सहयोग मिलता है। परन्तु सम्प्रदाय का आचार्य अथवा संचालक विवेकशील, व्यवहारकुशल, चिंतक एवं अप्रमादी न हुआ तो साधना का पवित्र क्षेत्र सम्प्रदायिक महत्त्वाकांक्षाओं अथवा अहम् पोषण का केन्द्र बन घृणा, द्वेष, निन्दा, ईर्ष्या जैसे दुर्गुणों का अखाड़ा बन जाता है। वहाँ साधना गौण परन्तु व्यक्तिगत हित सर्वोपरि हो जाते हैं। आचार्य के कार्यकलापों के विरुद्ध साधक सोच भी नहीं सकता। साधक को तो आचार्य के निर्देशों एवं संघ की मर्यादाओं का आँख मूंद कर पालन करना पड़ता है अन्यथा उन्हें सम्प्रदाय से निष्कासित कर दिया जाता है। सम्प्रदाय में कभी-कभी गुरु को भगवान से ज्यादा महत्त्व दिया जाता है। भगवान के गुणगान हों अथवा नहीं, मगर गुरु के गुणगान अवश्य होते हैं। कहीं-कहीं तो कट्टरता के नाम पर महावीर की सन्तान कहलाते भक्तों को लज्जा का अनुभव होता है। परन्तु सम्प्रदाय विशेष के वंशज कहलाने में गौरव का अनुभव करते हैं जो कदापि उचित नहीं कहा जा सकता। शाखाओं से समग्र पेड़ का महत्त्व अधिक है—साम्प्रदायिक मनोवृत्ति वालों को इस पर चिन्तन करना होगा।

सम्प्रदायों में चर्चा हम अनेकान्तवाद की करते हैं परन्तु आचरण एकान्तवाद का। उपदेश प्राणीमात्र के कल्याण का देते हैं परन्तु दृष्टिकोण में साम्प्रदायिक हितों से ऊपर सोच भी नहीं सकते। सभी इस बात को स्वीकार करते हैं कि गणधर गौतम को भगवान महावीर के प्रति अनुराग होने से केवलज्ञान की प्राप्ति में विलम्ब हुआ फिर भी साधना के नाम पर साम्प्रदायिक राग को क्यों संजोये हुए हैं? चिन्तन का विषय है। सम्प्रदाय में दृष्टिकोण

संकुचित एवं सीमित हो जाता है । परिवार की भाँति अपने अनुयायियों के प्रति राग एवं अपनत्व बढ़ जाता है । एक परिवार से सम्बन्ध तोड़ साधक सैकड़ों परिवारों से जुड़ जाता है । अपने श्रद्धालुओं एवं अन्य भक्तों के प्रति उनके व्यवहार में स्पष्ट अन्तर देखा जा सकता है । कभी-कभी साम्प्रदायिक मर्यादाओं की आड़ में साधारण लोक व्यवहारों की भी खुले रूप में उपेक्षा करते संकोच नहीं होता ।

लोक व्यवहार एवं विवेक का पालन करने में साधना खण्डित होती नजर आती है । **आज हमने जड़ क्रियाओं को मूल सिद्धान्तों से अधिक महत्त्व दे दिया है । इसी कारण जिन सम्प्रदायों में आपसी व्यवहार नहीं, उनके साथ उठना, बैठना, व्याख्यान देना वर्जित हो रहा है एवं इसकी उपेक्षा करने वालों को प्रायश्चित दिया जाता है एवं कभी-कभी तो संघ से निष्कासित तक कर दिया जाता है । दूसरी तरफ उससे भी अधिक आवश्यक मूल सिद्धान्तों के प्रतिकूल राग एवं द्वेष बढ़ाने वाले कृत्यों का खुले रूप में अनुमोदन किया जाता है । हमारी दृष्टि मूल से हटती जा रही है । अपने दुर्गुण एवं दूसरों की अच्छाइयाँ हम नहीं देख पा रहे हैं ।**

बहुत सी सम्प्रदायों को जहाँ अपने ज्ञान तथा आचरण पर गर्व है तो चन्द सम्प्रदायों को अपने सकुशल एवं सुव्यवस्थित नेतृत्व पर । कुछ अपने बढ़ते परिवार को सफलता का मापदण्ड समझ रहे हैं एवं **उनका एकमात्र उद्देश्य उचित अथवा अनुचित प्रेरणा अथवा लालच देकर अपने अनुयायियों एवं भक्तों की संख्या बढ़ाना है । साधना का मापदण्ड आध्यात्मिकता के मूल सिद्धान्तों से हटकर अनुयायियों, भक्तों की संख्या पर केन्द्रित होता जा रहा है । कुछ साधक अपना प्रभाव बतलाने के लिए बड़ी-बड़ी योजनाएँ व भव्य आयोजन कर अधिक से अधिक भीड़ जुटाने में अपनी साधना को सफल मानते हैं ।**

बहुत से व्यक्ति संगठन के नाम पर शिथिलाचार की उपेक्षा करते हैं । उनका दृष्टिकोण है कि **कलियुग में सतयुग की कल्पना कैसी ? 'जैसा मिले अन्न, वैसा होवे मन ।' साधक वर्ग हम से तो बहुत अच्छा ही है एवं हमें उनके दुर्गुणों की तरफ विशेष ध्यान नहीं देना चाहिये ।**

भारतीय संस्कृति की परम्परा रही है कि जो भी संकल्प लिया जाता है उसको प्राणों का उपसर्ग होने पर भी निभाया जाता है । सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र ने सत्य के लिये अपना सर्वस्व क्यों त्यागा ? **इतिहास ऐसी हजारों घटनाओं से भरा पड़ा है कि जब कभी प्राण एवं प्रण में एक को बचाने का प्रसंग आया तो प्रण की रक्षा को ही महत्त्व दिया गया । इसी कारण आज**

हमारी संस्कृति जीवित है । साधारण प्रतिकूल परिस्थितियों में अपने संकल्पों को तोड़ने वाले साधक इस बात पर सद्चिन्तन कर अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने के प्रति सजग बनेंगे ।

अन्त में हमें स्वीकारना होगा कि यदि सम्प्रदायों की स्थापना मूल सिद्धान्तों की रक्षा, आध्यात्मिक मूल्यों की सुरक्षा, शिथिलाचार को हतोत्साहित करने के लिये तथा साधना के अमूल्य लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये है, तब तो उचित है । सिद्धान्तों के विपरीत आचरण करने वालों के प्रति साधक के मन में करुणा का भाव होना चाहिये परन्तु जिन सम्प्रदायों का गठन निजी महत्त्वाकांक्षाओं की पुष्टि के लिये अपने श्रद्धालुओं के बल पर होता है, वहाँ राग-द्वेष, विषय-कषाय को निश्चित प्रोत्साहन मिलता है । ऐसी सम्प्रदायों में व्यक्तिगत तथा साम्प्रदायिक हित प्रमुख एवं साधना गौण हो जाती है । जब साधना ही गौण होगी तो साधक अपने लक्ष्य को कैसे प्राप्त करेंगे ? वे दूसरों का भला कर पायें या नहीं, स्वयं के प्रति भी ईमानदार नहीं कहे जा सकते । अतः जो सम्प्रदायें आध्यात्मिक नियन्त्रण रख साधना के पथ को सुव्यवस्थित करने में सक्षम हैं वे ही उपयोगी हैं । अन्य तो मायावी, प्रदर्शन का माध्यम । चिन्तनशील साधक ही द्रव्य, क्षेत्र एवं भावना के आधार पर सम्प्रदायों की उपयोगिता का निर्णय ले सकते हैं ।

—चौरड़िया भवन, जालौरी गेट के बाहर, जोधपुर

जीवन-निर्माण की महत्त्वपूर्ण बातें

□ सं० श्री विजयसिंह डागा

- अपना स्वयं का भोजन संक्षिप्त करके भूखे का पेट भरना महान् कार्य है ।
- सिद्धि की चिन्ता नहीं, शुद्धि की चिन्ता करें ।
- स्वयं का ज्ञान स्वयं के पुरुषार्थ से ही होता है ।
- निन्दा करने से अपनी शुद्ध क्रिया भी दूसरे की अशुद्ध क्रिया के बराबर हो जाती है ।
- दूसरे की मृत्यु की चिन्ता होती है किन्तु खुद की मृत्यु की चिन्ता नहीं होती ।
- स्वयं को जाने बिना, सबको जानना बेकार है ।
- आपने किसी का उपकार किया है उसे भूल जाइये, आपका किसी ने उपकार किया है, उसे सदा याद रखिये ।

—डागा सदन, १९ मारवाड़ी रोड, भोपाल

बाल कथामृत* (७२)

☐ १८ वर्ष तक के बच्चे इस कहानी को पढ़कर प्रश्नों के उत्तर १५ दिन में "जिनवाणी" कार्यालय को भेजें। उत्तरदाताओं के नाम पत्रिका में छापे जायेंगे। प्रथम, द्वितीय व तृतीय आने वालों को क्रमशः २५, २० व १५ रुपयों की उपहार राशि भेजी जायेगी। श्री राजेन्द्रप्रसादजी जैन, एडवोकेट भवानीमंडी की ओर से उनकी माताजी की पुण्य स्मृति में ११ रुपये का 'श्रीमती बसन्तबाई स्मृति पुरस्कार' चतुर्थ आने वाले को दिया जायेगा। प्रोत्साहन पुरस्कार स्वरूप १० बच्चों तक को "जिनवाणी" का सम्बद्ध अंक निःशुल्क भेजा जायेगा।

—सम्पादक

प्रतिज्ञा

☐ **श्री मदनलाल जैन**

एक शहर में एक मोची रहता था। वह अपने व्यवसाय में प्रतिदिन ५०) रुपये कमा लिया करता था, लेकिन उसे शराब, जीव हिंसा और मांस खाने की लत लग जाने के कारण उसके पास उन रुपयों में से कुछ भी नहीं बच पाता था। यद्यपि प्रतिदिन की ५०) रुपये आमदनी कोई कम नहीं होती थी, फिर भी दुर्व्यसनों के कारण वह अपना और अपने परिवार का लालन-पालन ठीक ढंग से नहीं कर पाता था।

एक दिन जब वह अपनी दुकान पर जा रहा था तो उसने देखा कि एक स्थानक में महाराज श्री के प्रवचन हो रहे थे और सौभाग्य का दिन था कि उस दिन प्रवचन भी जीव हिंसा, शराब और मांस निषेध पर ही हो रहे थे। वह अनमने ढंग से वहाँ जाकर खड़ा हो गया और महाराज श्री के प्रवचनों का श्रवण-लाभ लेने लगा। प्रवचन समाप्ति के पश्चात् वह महाराज श्री के चरणों

* श्री राजीव मानधिते द्वारा सम्पादित—परीक्षित स्तम्भ।

में गया और निवेदन किया कि "महाराज! मैं मोची हूँ और मेरी प्रतिदिन की आय काफी होने पर भी मेरे परिवार का लालन-पालन ठीक ढंग से नहीं कर पाता हूँ और न ही मुझे शांति मिलती है।" महाराज तुरन्त उसकी बात समझ गये और कहने लगे—"इसका समाधान तो है, लेकिन क्या आप उसका पालन कर सकोगे?"

मोची ने उत्तर दिया—"महाराज! आप मार्ग बताओ। मैं उसका सहर्ष पालन करूँगा।" तो गुरुदेव ने जीव हिंसा, शराब और मांस न खाने की प्रतिज्ञा लेने को कहा। मोची ने सहर्ष इसे स्वीकार कर लिया और उसे प्रतिज्ञा दिला दी। उसे काफी दिनों तक तो कुछ बेचैनी रही, लेकिन कुछ ही दिनों में उसको उसका सुफल दिखाई देने लगा। अब वह अच्छा खाता, अच्छा पहनता और अच्छे ढंग से रहता और इसके बावजूद भी उसके पास पैसे बचते थे। शीघ्र ही उसने इतने पैसे इकट्ठे कर लिये कि एक छोटा सा मकान भी खरीद लिया और अपने परिवार के साथ उसमें वह सुखपूर्वक रहने लगा।

हर व्यक्ति की प्रतिज्ञा की एक अग्नि परीक्षा भी होती है। यदि वह उसमें सफल हो जाता है तो मानो उसकी प्रतिज्ञा सही है। इसी प्रकार मोची की प्रतिज्ञा की भी अग्नि परीक्षा का समय आया। एक दिन अपने समाज में किसी बड़े व्यक्ति के यहाँ भोज था। उसे पूर्व में ही ज्ञात था कि वहाँ पर शराब और मांस का सेवन किया जाता है। लेकिन यदि वह उनके यहाँ नहीं जाता है तो उसे समाज से बहिष्कृत किये जाने का डर था। पर अन्ततः उसने वहाँ न जाने का ही निर्णय लिया और इसका फल यह हुआ कि उसे समाज से बहिष्कृत कर दिया गया। उसने समाज से बहिष्कृत हो जाना अच्छा समझा, लेकिन अपनी प्रतिज्ञा को नहीं तोड़ा।

समृद्धि और यश का सभी आदर करते हैं। उसके समाज के सभी लोग आश्चर्यचकित थे उसकी बदलती हुई दशा को देखकर। अतः वे अपने समाज-भाई उस मोची के पास गये और उसकी समृद्धि का कारण पूछा। उसने उन्हें सारी बातें सुनायीं, जिससे उन सबका भी हृदय परिवर्तन हो गया और पास गाँव में विराजित साधु महाराज से भोज, शादी, जलसा, पार्टी या अन्य खुशी के अवसर पर कभी भी मांस, शराब और जीवहिंसा न करने की सामूहिक प्रतिज्ञा ग्रहण की तथा नवकार मंत्र का जाप प्रतिदिन सुबह उठने के साथ करने का नियम लिया। इससे उनके मन को शांति मिली और निर्व्यसनी होने से आर्थिक लाभ भी होने लगा, जिससे उनका विश्वास धर्म में बढ़ता गया और वे नवकार मंत्र के साथ अब उपवास, आयम्बिल, पौषध आदि भी करने लगे और उनका जीवन धर्ममय हो गया।

—...ए, एवरेस्ट कॉलोनी, लालकोठी, जयपुर-१५

अभ्यास के लिए प्रश्न

१. मोची ने महाराज श्री के सामने क्या समस्या रखी ?

२. महाराज श्री ने उसके समाधान के लिए क्या उपाय बताया ?

३. 'उसने समाज से बहिष्कृत हो जाना अच्छा समझा लेकिन अपनी प्रतिज्ञा को नहीं तोड़ा।' इससे मोची के चरित्र की किस विशेषता का पता चलता है ?

४. मोची-समाज के भाइयों ने महाराज से क्या प्रतिज्ञा ग्रहण की ?

५. नवकार मंत्र क्या है ? इसका महत्त्व संक्षेप में बताइये।

६. उपवास, आयम्बिल और पौषध के सम्बन्ध में संक्षिप्त टिप्पणियाँ लिखिए।

७. सप्त कुव्यसन क्या हैं ? इनसे क्या हानि होती है ?

८. आप अपने जीवन की कोई ऐसी घटना लिखिए जिसमें कोई नियम लेने से लाभ हुआ हो।

'जिनवाणी' के जुलाई, १९८९ के अंक में प्रकाशित श्री ऋषभ जैन की कहानी 'भोज वृक्ष का रस' (७०) के उत्तर जिन बाल पाठकों से प्राप्त हुए हैं उन सभी को बधाई।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं के नाम

प्रथम—श्रीपालचन्द देशलहरा, श्री जैन रत्न माध्यमिक विद्यालय, **भोपालगढ़** (जोधपुर) राज०।

द्वितीय—सुनीलकुमार भाटी 'नील', द्वारा—श्री लक्ष्मीनारायणजी भाटी, रेल्वे फाटक बाहर, **चौमहल्ला** (झालावाड़)।

तृतीय—सुरेशकुमार जैन, द्वारा—सम्पतराज बोथरा, गांधी वाड़ी, **नागौर**–३४१ ००१।

चतुर्थ—ज्योति जैन, द्वारा—शान्ताप्रसादजी जैन, १२१, इन्द्रा कॉलोनी, बजरिया (मान टाउन), **सवाईमाधोपुर** (राज०)।

प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त उत्तरदाता

जिन्हें सितम्बर, १९८९ की 'जिनवाणी' उपहार स्वरूप भेजी जा रही है :—

१. विकास जैन, द्वारा—अमरचन्दजी जैन, ११, सोजतिया बास, **पाली**–३०६ ४०१ ।

२. ब्रजेशकुमारी भाटी, रेल्वे फाटक बाहर, **चौमहल्ला** (झालावाड़) राज०

३. वीरेन्द्रकुमार जैन, द्वारा—भोलानाथजी जैन, जैन कॉलोनी, वार्ड नं. ८, **खेरलीगंज** (अलवर) ३२१ ६०६ ।

अन्य उत्तरदाता

बाड़मेर से जितेन्द्रकुमार बांठिया, **बजरिया सवाईमाधोपुर** से आशीष जैन, अमित जैन, **जोधपुर** से अश्विनीकुमार भट्ट, जी. सी. चोपड़ा, गुणवन्त चोपड़ा, चन्द्रप्रकाश अग्रवाल, **चौमहल्ला** से सुरेशकुमार राठौर, **नागौर** से विमलकुमार जैन, नवरत्नमल बोथरा, **बंगलौर** से गौतमचन्द लुंकड़, **जयपुर** से रंजन लोढ़ा ।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं के वे घटना-प्रसंग जिसमें मिल-जुलकर काम करने से मुश्किल काम सरल हो गया—

(१)

वार्षिक परीक्षा का परिणाम सुनकर हैरान-परेशान थे बेचारे । एक तरफ गरीबी दूसरी तरफ पूरक परीक्षा । प्राइवेट ट्यूशन के लिये उनके पास दो-दो सौ रुपये नहीं थे ।

गणपत को योजना सूझी । उसने नरपत से कहा—भैया नरपत ! तुम्हारे गणित में विशेष योग्यता है परन्तु हिन्दी में पूरक परीक्षा जबकि मेरे हिन्दी में ८५% अंक हैं परन्तु गणित में सिर्फ ३ नम्बर से पूरक परीक्षा आई है । क्यों न हम आपस में एक दूसरे को पढ़ालें । तुम मुझे गणित व मैं तुम्हें हिन्दी पढ़ा दूंगा, बस अपना काम बन गया ।

भैया गरगपत ! हम क्यों चौधरी के चक्कर में पड़ें । वो तो २००) रुपये लेकर भी एक महीना पढ़ाने को तैयार नहीं । उनके यहाँ भीड़ लगी रहती है। अरे हाँ, वो चंचल जिसके गणित में पूरक परीक्षा है, वह मेरे से कह रहा था मुझे गरिगत पढ़ा दो मैं तुम्हें ७५) रु० माहवार दे दूँगा । क्यों न हम चंचल व मनोहर को भी अपने साथ ले लें। हमारे साथ-साथ उनकी भी पढ़ाई हो जायेगी । चंचल गरिगत के लिये लिये मुझे व मनोहर हिन्दी के लिये तुम्हें ७५), ७५) रुपये दे देंगे । नरपत ने कहा ।

ऐसा ही हुआ । चारों छात्र पूरक परीक्षा में उत्तीर्ण हो गये । गरगपत व नरपत ने जुलाई में उन ७५) रुपयों से अपना शुल्क भी जमा करवा दिया व पुस्तकें भी खरीद लीं । संगठन में ही शक्ति है । सहयोग व स्नेह का फल मीठा होता है । ये चारों छात्र कक्षा नवम में मेरे सहपाठी थे ।

—श्रीपालचन्द देशलहरा, भोपालगढ़

(२)

एक वर्ष पहले की बात है। हमारे मामा के यहाँ से तार आया कि वे बहुत बीमार हैं और उन्होंने हमारी माताजी को बुलाया था । माताजी और पिताजी जाने को तैयार हो गये । हम तीनों भाई-बहिनों को घर पर ही रहना पड़ा क्योंकि स्कूल में पढ़ाई जोरों पर थी तथा परीक्षा भी निकट ही थी । यथा-समय माताजी और पिताजी रवाना हुए । फिर घर की सारी जिम्मेदारी हम तीनों पर आ गई । पहले ही दिन मेरी बहिन और भाई झगड़ने लगे । मेरी बहिन ने भाई से वस्त्र धोने को कहा था और भैया वस्त्र धोने के लिये राजी नहीं थे । सब अपने-अपने काम अलग-अलग करना चाहते थे । कहा-सुनी की आवाज सुन पड़ौस के भोला काका आ गए और पूछने लगे । सारी बात जानकर गम्भीर वारगी में बोले—"तो तुम लोगों के झगड़े का यह कारण है । तुमने पढ़ा नहीं कि छोटे-छोटे कमजोर तिनकों से बनी रस्सी भारी-भरकम ताकतवर हाथी को बाँध सकती है । अगर बच्चो ! तुम सब मिलजुल कर काम करोगे तो कठिन से कठिन काम भी सरल हो जाएगा ।" ऐसा कहकर वे चले गए । हमें उनकी बात समझ में आ गई । हम सब मिलजुल कर काम करने लगे । बहिन भोजन बनाने लगी, भैया वस्त्र धोने लगे और मैंने बर्तन साफ करने व सफाई करने का बीड़ा उठाया । इस तरह ५-६ दिन खुशी-खुशी बीत गए तथा काम भारी और कठिन भी नहीं लगा ।

—सुनीलकुमार भाटी 'नील', चौमहल्ला

(३)

कुछ समय पूर्व मैं एक गाँव में रहता था। पहाड़ियों के बीच गाँव बसा हुआ था। दो गाँवों के बीच एक नदी बहती थी। वर्षा ऋतु में नदी उफनती थी, उमड़ पड़ती थी। इसके परिणामस्वरूप दोनों गाँवों का सम्बन्ध टूट जाता था व लोग, पशु और धन नदी की बाढ़ में बह जाते थे। नदी के किनारे एक छोटा मन्दिर था जहाँ एक महात्माजी रहते थे। महात्माजी से गाँव वालों की यह मुसीबत देखी नहीं गई। उन्होंने मन ही मन सोचा—जैसे भी हो, यह विपत्ति दूर होनी चाहिए। अकेला चना भाड़ नहीं फोड़ सकता। यह सोचकर महात्माजी ने इस पार के और उस पार के लोगों को एकत्रित किया। उनके सामने नदी पर पुल बनवाने का प्रस्ताव रखा ताकि रोज-रोज की इस मुसीबत से छुटकारा मिल सके, साथ ही गाँव वालों को रोजी-रोटी का जुगाड़ भी बैठ सके।

नदी पर पुल बनाने का काम प्रारम्भ कर दिया गया। गधे वाले बिना पैसे रेत ला रहे थे। चूने के भट्टे वाले ठेकेदार ने पुल के लिए चूना बिना कीमत लिए दिया। पास की पहाड़ी से बैल गाड़ियाँ पत्थर ला रही थीं। पानी तो नदी का था ही, इसलिए कोई दिक्कत नहीं आई।

गाँव के लोग, बच्चे और औरतें इस पुल के बनाने में लगे रहे। महात्माजी भी गाँव वालों की मदद कर रहे थे। एक बार काम शुरू हुआ तो पुल बन जाने के बाद ही लोगों ने दम लिया।

सब लोगों ने चार महीनों के अथक परिश्रम से पुल तैयार कर दिया।

आखिर मिलजुल कर काम करने से इस मुश्किल काम को सभी ने सरल बना दिया। मेहनत रंग लाई। सबके चेहरों पर प्रसन्नता की लहर दौड़ रही थी। गाँव वाले अब सरलता से नदी पार करने लगे तथा भविष्य में आने वाली नदी की बाढ़ से बच गये।

—सुरेशकुमार जैन, नागौर

(४)

जब मैं कक्षा ७ में पढ़ती थी, हमारा वह स्कूल कुछ दिनों पहले बना था। स्कूल बहुत बड़ा था। उसके चारों ओर बहुत जगह खाली पड़ी थी। उसमें कई कांटेदार बबूल आदि गन्दगी पड़ी हुई थी। मैंने सोचा कि क्यों न हम सब मिलकर इस जगह का उपयोग करें और खेलने का मैदान व अच्छी बगीची बनायें। मैंने कक्षा की सभी छात्राओं से कहा तो उन्होंने हाँ भर ली। दूसरे

दिन से हमने स्कूल के मैदान की सफाई आरम्भ कर दी। हम रोज स्कूल के टाइम से आधे घण्टे पहले आ जाते थे और तीन चार दिन में पूरे मैदान की सफाई कर दी। सफाई करने के बाद हमने मैदान का आधा हिस्सा खाली रहने दिया और आधे में पेड़-पौधे लगाने का विचार किया। हम बाजार से तरह-तरह के बीज, कई पौधे आदि लाये और मैदान की खुदाई करके पेड़ लगा दिये। उनमें पानी दिया और प्रत्येक लड़की को ड्यूटी लगा दी कि वह बारी-बारी से रखवाली करे। इस प्रकार आज वह मैदान बहुत हरा-भरा है, स्वस्थ वातावरण मिलता है व हमारे अध्यापकगण हमसे बहुत प्रसन्न हुए।

—ज्योति जैन, बजरिया, सवाईमाधोपुर

(५)

बात उस समय की है जब मैं कक्षा ८वीं में पढ़ता था। हमारी स्कूल की परीक्षा समाप्त होने के बाद माउण्ट आबू चलने का कार्यक्रम बना। हम सब २० लड़के हो गये। हमने एक मिनी बस किराये की। आबू से लगभग १५ कि. मी. पहले एक चट्टान सड़क के बीच में आकर गिर पड़ी। ट्राफिक जाम हो गया। हमारे पीछे भी बहुत सी गाड़ियाँ खड़ी थीं। हम सब ने मिल कर अपने अध्यापकजी को सुझाव दिया कि सब मिलकर धक्का लगायेंगे। अध्यापकजी ने यह बात वहाँ उपस्थित लोगों को बताई। हमारा सुझाव पसन्द आया। हम सब ने मिलकर उस बड़ी चट्टान को सड़क के बीच में से साइड में कर दिया। रास्ता खुल गया। हमारी यात्रा खूब आनन्ददायक रही।

—विकास जैन, पाली

'जिनवाणी' का अहिंसा विशेषांक

परम श्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के आचार्यत्व के ६०वें वर्ष के उपलक्ष्य में शीघ्र ही **'जिनवाणी'** का **'अहिंसा विशेषांक'** प्रकाशित किया जा रहा है जिसमें अहिंसा सम्बन्धी शास्त्रीय निबन्धों के साथ-साथ अहिंसा और प्रशासन, अहिंसा और पर्यावरण, अहिंसा और स्वास्थ्य तथा अहिंसा और उद्योग सम्बन्धी विशेष लेख रहेंगे। उच्च स्तरीय, मौलिक चिन्तन प्रधान लेख प्रबुद्ध लेखकों से आमंत्रित हैं।

—डॉ. नरेन्द्र भानावत, सम्पादक

मार्मिक प्रसंग :

आशा औरन की क्या कीजे

□ महात्मा आनन्दघन

"कल आपने मेरी प्रतीक्षा किये बिना ही प्रवचन प्रारम्भ कर दिया था। मैं पूजा-पाठ कर आ ही रहा हूँ। मेरे आने पर ही व्याख्यान प्रारम्भ करें।" नगर सेठ ने आनन्दघनजी महाराज से कहा।

सर्व विरति धारण करने वाले, अप्रमत्त, निष्पृही और बोधदाता महायोगी आनन्दघन अपने समय पर प्रवचन दिया करते थे, चाहे सुनने वालों की संख्या कम हो या अधिक। दस बजे व्याख्यान प्रारम्भ हुआ—

राम कहो, रहमान कहो, कोऊ कान्ह कहो महादेव री।
पारसनाथ कहो, कोऊ ब्रह्मा, सकल ब्रह्म, स्वयमेव री॥

वन्दना के स्वरों से उपाश्रय गूँज उठा। बाबा आनन्दघन ने कहा—चाहे राम कहो, चाहे रहमान कहो, परमतत्त्व एक ही है। चाहे कृष्ण का संकीर्तन करो या महादेव का, केवल शब्दों का अन्तर है। शब्द गौण है और भाव मुख्य। चाहे पार्श्वनाथ का स्मरण करो या ब्रह्मा का। स्मरण तो सच्चिदानन्दी शुद्ध स्वरूपी आत्मा या ब्रह्म के स्वरूप का ही है। महत्त्व नाम का नहीं गुण या पद का है। शब्दों को लेकर विभक्त हो जाना, सम्प्रदायों में बंट जाना, धर्म के नाम पर झगड़ा करना दुर्भाग्यपूर्ण है, आत्माराम का या भगवान् का अपमान है।

मेड़ता के श्रोता प्रवचन की अजस्रधारा में मस्त थे। मस्तयोगी आनन्दघन ने अन्त में कहा—प्रभु का निवास स्थान मन्दिर, गुरुद्वारा या रामद्वारा में न होकर घट में ही चेतना शक्ति के रूप में है। ये निवास स्थान तो चेतना शक्ति को जगाने के साधन मात्र हैं। इस देश में कई धर्म हैं और कई धर्म आयेंगे। अतः सर्वधर्म समभाव रखो, परमत सहिष्णु बनो, द्रव्य दृष्टि से नहीं, किन्तु भाव दृष्टि से धर्मी बनो। सुखी रहो।

व्याख्यान समाप्त हो गया, परन्तु लोग उठने का नाम तक नहीं ले रहे थे। केवल नगर सेठ के मन-मस्तिष्क में प्रतिक्रिया थी। सेठजी अहंकार के साथ अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करने के लिये बोल पड़े—"महाराज, मैंने चातुर्मास के लिये आपको आमंत्रित किया। मैं चाहता तो आपसे बढ़कर किसी चमत्कारी मुनिराज को बुला सकता था। आप इसी गाँव में जन्मे हैं, अतः आपका हम आदर-सत्कार करते हैं। आहार, पानी, कपड़ा आदि से आपकी सेवा करते हैं और आपको....।"

आनन्दघनजी ने सेठ के शब्दों को धैर्य के साथ सुना और बिना किसी क्रोध के कहा—"भाई, आहार तो हम खा गये। यह अपने कपड़े और यह अपना उपाश्रय सम्भालो। हम साधुओं को कोई आशा-तृष्णा नहीं है। जब आशा है, फिर आसन मार कर बैठने से क्या लाभ? पेड़ छोड़ कर पेड़ की छाया खोजने से क्या लाभ? घर छोड़ कर द्वार-द्वार भटकने से क्या लाभ? अब तो हमें अनुभव-ज्ञान के सुधा रस को पीना है।"

ऐसा कहते हुए महात्मा आनन्दघन उपाश्रय छोड़कर चल पड़े और गाने लगे—

आशा औरन की क्या कीजे, ज्ञान सुधारस पीजे।

प्रेरक प्रसंग :

प्रमाण-पत्र

☐ श्री राजकुमार जैन

एक दफा सुप्रसिद्ध रूसी लेखक टाल्सटाय से उनके एक मित्र ने कहा—"टेली, मैंने तुम्हारे पास एक व्यक्ति को नौकरी के लिए भेजा था। उसके पास ढेरों प्रमाण-पत्र थे लेकिन तुमने उसे नहीं चुना। मैंने सुना है कि जिस अभ्यर्थी को तुमने इस पद के वास्ते चुना है, उसके पास कोई प्रमाण-पत्र नहीं था, सिफारिशीपत्र नहीं था। लेकिन फिर भी उस व्यक्ति को तुमने चुन लिया। आखिर उस व्यक्ति में ऐसा कौनसा गुण था, जिससे प्रभावित होकर तुमने उसे चुना?"

टाल्सटाय ने गम्भीर स्वर में जवाब दिया—"दोस्त, मैंने जिस शख्स को चुना है, उसके पास अमूल्य प्रमाण-पत्र थे। उसने कमरे में आने से पहले मुझसे अनुमति माँगी। फिर पैरों को दरवाजे के सामने की चटाई पर साफ किया। उसके वस्त्र साधारण थे, लेकिन स्वच्छ थे। उसमें आत्म-विश्वास था। उसने मेरे हर सवाल का ठीक व संतुलित उत्तर दिया। मेरे सवाल खत्म होने पर वह इजाजत लेकर चुपचाप बाहर चला गया। उसने किसी प्रकार की चापलूसी नहीं की और न किसी की सिफारिश की उसने जरूरत समझी। ये सब ऐसे प्रमाण-पत्र थे, जो बहुत कम लोगों के पास होते हैं। ऐसे गुण-सम्पन्न लोगों के पास लिखित प्रमाण-पत्र न भी हो तो कोई बात नहीं। वे काबिल होते हैं और लिखित प्रमाण-पत्र अथवा सिफारिशी-पत्र के मोहताज नहीं होते।"

मित्र को अपने सवाल का जवाब मिल चुका था। उसने अपनी भूल महसूस की।

—पचपहाड़ रोड, भवानीमंडी (राज.) ३२६५०२

बारह व्रतधारी–स्वाध्यायी साधक

श्री चाँदमल कर्णावट

☐ श्री चंचलमल चौरड़िया

उदयपुर विद्याभवन शिक्षक प्रशिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय के भूतपूर्व प्राध्यापक, बारह व्रतधारी, २५ वर्षों से निरन्तर चौविहार तप की ग्राराधना करने वाले, वरिष्ठ स्वाध्यायी, प्रबुद्ध विचारक, चिन्तक एवं कवि श्री चाँदमल कर्णावट का जन्म भोपालगढ़ के पास कुड़ी ग्राम (जिला जोधपुर) में हुग्रा।

बचपन से ही ग्रापको माता-पिता से धार्मिक सुसंस्कार प्राप्त हुए, जिसके फलस्वरूप व्यावहारिक शिक्षा में एम. ए., एम. एड., साहित्यरत्न करने के साथ ग्रापने धार्मिक क्षेत्र में 'धर्मभूषण' एवं 'धर्म रत्न' की परीक्षाएँ उत्तीर्ण कर अपने धार्मिक ग्रध्ययन को बढ़ाया। ग्रापने ग्रनेक शास्त्रों एवं थोकड़ों का गहन चिन्तन एवं ग्रध्ययन किया। जैन धर्म में शिक्षा पर ग्रापके ४ शोध पत्र प्रकाशित हो चुके हैं।

स्वाध्याय संघ के ग्रन्तर्गत जब से साधक संघ (साधना विभाग) की स्थापना हुई, तब से ग्राप इसके संचालक पद पर कार्य कर रहे हैं। साधकों को साधना-हेतु शिविरों के माध्यम से ग्राप समय-समय पर प्रेरणा देते रहते हैं। स्वाध्यायी के रूप में १० वर्षों से जलगाँव, खैरोदा, गिलुण्ड, मावली ग्रादि क्षेत्रों में पर्युषण में सेवा देते रहे हैं। विभिन्न स्वाध्यायी शिविरों में कुशल ग्रध्ययन एवं सफल संचालन भी किया है ग्रौर ग्रभी भी करते रहते हैं।

ग्राप गूढ़ विषयों को सरल शैली में प्रस्तुत करने में निपुण हैं। काफी समय तक ग्राप 'जिनवाणी' पत्रिका के सम्पादक मण्डल में भी रहे। वर्तमान में 'स्वाध्याय-शिक्षा' द्वैमासिक पत्रिका के सम्पादक-मण्डल में हैं। 'स्वाध्याय-शिक्षा' में ग्रध्यापक प्रशिक्षण पर ग्रापके क्रमिक लेख प्रकाशित हो रहे हैं। जैन पत्र-पत्रिकाग्रों में समय-समय पर ग्रापके शोधपूर्ण लेख ग्राते रहते हैं। स्वाध्यायियों के पत्राचार पाठ्यक्रम में भी ग्रापके पाठ प्रकाशित हो रहे हैं, जिनसे स्वाध्यायियों को ज्ञानवृद्धि में सहायता मिलती है।

आप उदयपुर में महावीर जैन परिषद् के ५ वर्ष तक सदस्य रहे। श्री स्था० जैन श्रावक संघ के भूतपूर्व अध्यक्ष एवं साधुमार्गी जैन शिक्षण संघ के मंत्री के रूप में भी अपनी अमूल्य सेवायें दे चुके हैं। आपकी उल्लेखनीय सेवाओं के लिये सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल जयपुर की तरफ से आपका अभिनन्दन भी किया जा चका है।

आप जैसे धर्मनिष्ठ, कर्तव्यनिष्ठ, आचरण वालों पर स्वाध्याय संघ को गर्व है। प्रतिकूलताओं के बावजूद भी गत ३० वर्षों से आप सचित्त जल का सेवन नहीं करते। ऐसे दृढ़ मनोबली स्वाध्यायी हम सबके प्रेरणा स्रोत हैं।

आप चिरायु हों, शतायु हों एवं स्वाध्याय संघ व साधना-विभाग को अपना मार्गदर्शन एवं सेवायें देते रहें, इसी मंगल भावना के साथ—

शान्ति कोई नहीं चाहता

□ श्री देवीचन्द भण्डारी

एक आदमी ने तथागत भगवान बुद्ध से पूछा कि प्रभु बतावें मैं शान्ति कैसे प्राप्त करूँ? भगवान बुद्ध ने उसे कहा—तुम प्रत्येक आदमी से पूछो कि उसकी जीवन की आकांक्षा क्या है? वह आदमी घर-घर जाकर एक-एक आदमी से उसके जीवन की आकांक्षा के बारे में पूछने लगा। किसी ने धन की, किसी ने बच्चे की, किसी ने भव्य भवन की, किसी ने नौकरी की, किसी ने पत्नी की, किसी ने स्वस्थ रहने की आकांक्षा प्रकट की। परन्तु किसी ने भी शान्ति से रहने की आकांक्षा नहीं प्रकट की। वह आदमी भगवान बुद्ध के पास लौटा और लोगों की आकांक्षा के बारे में बताया। भगवान बुद्ध ने कहा—अब तुम ही बताओ मनुष्य शान्ति की न आकांक्षा करता है और न शान्ति पाने के कार्य करता है तो उसे शान्ति कैसे प्राप्त होगी? तुम अगर शान्ति की आकांक्षा करते हो तो बताओ।

उपर्युक्त कथन से स्पष्ट है कि वर्तमान में भी हर मानव प्रभु से शान्ति की याचना न करके अशान्ति को जन्म देने वाले नौकरी, धन, बंगला, बच्चे व पत्नी की याचना करता रहता है। यहाँ तक कि अपना जीवन जोखिम में डाल करके भी उसके लिए ही कार्य करता है। अहिंसा का पुजारी कहलाता है पर हिंसा के कार्य करने में भी संकोच नहीं करता। शान्ति मिले वैसे कार्य करने के लिए उसके पास समय नहीं है और न ही करने की उसकी इच्छा है। इससे ज्ञात होता है कि मानव सिर्फ ऊपर से शान्ति का नारा बुलन्द करता है, परन्तु सच्चे हृदय से शान्ति नहीं चाहता है।

—स्वाध्याय चिन्तन केन्द्र, डी-47, देव नगर, टोंक रोड, जयपुर-302 015

संगोष्ठी-विवरण
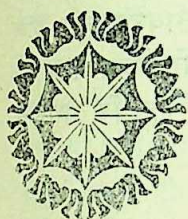
कानोड़ में समता-साधना संगोष्ठी

□ श्री मुक्तक भानावत

आचार्य श्री नानेश के ५०वें दीक्षा वर्ष के उपलक्ष्य में कानोड़ में त्रिदिवसीय अ० भा० समता-साधना संगोष्ठी आयोजित की गई जिसमें राजस्थान, गुजरात, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, बंगाल आदि प्रान्तों के लगभग ५० विद्वानों ने भाग लिया। अ० भा० जैन विद्वत् परिषद, अ० भा० साधुमार्गी जैन संघ एवं जवाहर विद्यापीठ कानोड़ के संयुक्त तत्वावधान में १३, १४, १५ अगस्त को आयोजित इस गोष्ठी के उद्बोधक जैनाचार्य श्री नानालालजी म० सा० ने कहा कि सभी धर्मों का मूल समता है। आज का संसार आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक विषमता से ग्रस्त है। ऐसे समय में समता के माध्यम से ही मानवता को बचाया जा सकता है। समता के समतावादी, समताधारी तथा समतादर्शी नामक तीन स्तर बताते हुये उन्होंने कहा कि मानसिक ग्रन्थियों का विमोचन करके ही समता को प्राप्त किया जा सकता है। श्री ज्ञानमुनिजी एवं विजय मुनिजी ने भी संगोष्ठी को उद्बोधित किया। संगोष्ठी के उद्घाटक सुखाड़िया विश्वविद्यालय के कुलपति डॉ० आर० एन० सिंह ने समता के स्वरूप पर प्रकाश डालते हुये कहा कि व्यक्ति और समाज, भावना और विचार एवं गति और स्थिति में संतुलन स्थापित करना ही समता है। शिक्षा में समता का तत्त्व लाकर ही चरित्रवान नागरिक तैयार किये जा सकते हैं। डॉ० सिंह ने विद्वत् परिषद् की ट्रैक्ट योजना के अन्तर्गत प्रकाशित पुस्तक सं० ५६ 'वीतराग मार्ग' (कन्हैयालाल लोढा) का भी विमोचन किया।

जोधपुर विश्वविद्यालय के संस्कृत विभाग के प्रो० डॉ० दयानन्द भार्गव ने बताया कि समता ही एक ऐसा सूत्र है जो श्रमरण एवं ब्राह्मरण परम्पराओं को ही नहीं अपितु विश्व के सभी धर्म-दर्शन तथा आर्थिक एवं राजनैतिक विचारधाराओं को जोड़ता है। उन्होंने कहा कि हिंसा और अहिंसा को लेकर देश-काल की अपेक्षा विवाद हो सकता है परन्तु समता निर्विवाद है और वह अहिंसा से भी व्यापक है।

संगोष्ठी के निदेशक एवं विद्वत् परिषद् के महामंत्री डॉ० नरेन्द्र भानावत ने इस आयोजन के महत्त्व को प्रतिपादित करते हुये बताया कि आज व्यक्ति से लेकर विश्व तक का समग्र परिवेश मन, वचन व कर्म के स्तर पर विषम भावों से ग्रस्त है। यही कारण है कि तनाव, द्वन्द्व और संघर्ष का वातावरण हमें दुःख रहित सुख का अनुभव नहीं होने देता। हम स्वतन्त्र होते हुये भी स्वतन्त्रता के अहम् में जीते हैं और उसकी अनुभूति नहीं कर पाते। उन्होंने कहा कि संतुलन, स्थिरता, सहृदयता और स्वावलम्बन समता के ४ सूत्र हैं।

गोष्ठी के ६ सत्रों में समता के सैद्धान्तिक स्वरूप, समता और जीवन व्यवहार तथा समता-साधना की प्रक्रिया पर विशेष व्याख्यान एवं शोध पत्र प्रस्तुत किये गये।

संभागी विद्वानों में जयपुर के डॉ० डी० एस० पोखरना (समता-स्वास्थ्य), डॉ० के० एल० शर्मा (दार्शनिक पक्ष), कन्हैयालाल लोढ़ा (क्रियात्मक पक्ष), डॉ० संजीव भानावत (जन संचार), अहमदाबाद के डॉ० शेखर जैन (साधना पक्ष), सागरमल जैन (शैक्षणिक आयाम), इन्दौर के प्रो० उदय जैन (आर्थिक आयाम), केशरी किशोर नलवाया (वैयक्तिक संदर्भ), उदयपुर के डॉ० महेन्द्र भानावत (लोक संस्कृति) डॉ० प्रेमसुमन जैन (प्राकृत साहित्य), डॉ० आर० सी० जैन (आत्मिक पक्ष), कन्हैयालाल दक (आगम परम्परा), डॉ० ए० के० सिंह (वाणिज्य एवं प्रबन्ध), डॉ० उदयचन्द जैन (शब्द मीमांसा), डॉ० सुभाष (श्रावकाचार), जैनेन्द्र जैन (विश्व शान्ति), जलगाँव के सुन्दरलाल मल्हारा (समता क्यों और कैसे), बीकानेर के भँवरलाल कोठारी (प्रतिक्रमण), कलकत्ता के सरदारमल कांकरिया (व्यावहारिक पक्ष), जालोर के शेष चोरड़िया (बाल शिक्षा), जयपुर के गुमानमल चौरड़िया (जीवन व्यवहार) तथा नीमच के उदय जारोली (आध्यात्मिक) ने अपनी भागीदारी से समता-साधना के विभिन्न पक्षों पर महत्त्वपूर्ण विचार व्यक्त किये।

महिला संभागियों में जयपुर की डॉ० शान्ता भानावत, जोधपुर की डॉ० सुषमा सिंघवी, उदयपुर की डॉ० रेखा व्यास तथा इन्दौर की डॉ० कुसुम जैन ने क्रमशः परिवार, तत्त्व मीमांसा, संस्कृत साहित्य और पर्यावरण के सन्दर्भ में समता-साधना की व्यापक अनुभूतियों पर शोध पत्रों का वाचन किया।

साधुमार्गी जैन संघ के अध्यक्ष गणपतराज बोहरा ने आगत विद्वानों को आचार्य नानेश का समता-साहित्य भेंट किया। ... विद्यापीठ के संचालक सोहनलाल धींग ने विद्यापीठ की शैक्षणिक प्रवृत्तियों का परिचय दिया।

चातुर्मास व्यवस्था समिति के संयोजक सुन्दरलाल मुर्डिया ने आभार व्यक्त किया।

इस संगोष्ठी की सर्वाधिक जनोपलब्धि यह रही कि समापन के अन्तिम दिन आचार्य श्री नानेश के सान्निध्य में दो भाइयों ने विगत पन्द्रह वर्षों से चला आ रहा अपना आपसी मन मुटाव दूर किया। बड़ी सादड़ी निवासी यशवन्तसिंह तथा शान्तिलाल मेहता नामक दोनों भाई अपना वैयक्तिक वैरभाव भूल क्षमायाचना के अश्रुपूरित नेत्रों से गले मिले तो सारी धर्मसभा भाव विह्वल हो उठी।

—३५२, श्री कृष्णपुरा, उदयपुर

सन्त और सल्तनत

□ श्री मोतीलाल सुराना

साम्राज्य बढ़ाने की लालसा तुर्की के बादशाह में भी जागृत हुई और चढ़ाई करदी ईरान पर। घमासान युद्ध होता रहा। अनगिनत लोग हताहत हो गये। इसी बीच ईरान के सुप्रसिद्ध संत फरीरुद्दीन को तुर्की के सैनिकों ने पकड़ लिया। बादशाह ने उन पर जासूसी का झूठा इल्जाम लगाया और फैसला दे दिया फाँसी लगाने का।

ईरान का बच्चा-बच्चा उन्हें बड़ी श्रद्धा से देखता था। ऐसे जनप्रिय संत की फाँसी की सजा की बात सुनकर तुर्की के बादशाह तक यह खबर पहुँचाई कि संत को फाँसी न दी जाय, उसके बदले हम आपको उनके बराबर सोना देने को तैयार हैं। मेहरवानी कर संत को छोड़ दीजिये।

पर तुर्की वाले इस बात से राजी न हुए। वे तो उन्हें मार डालना चाहते थे। आखिर में ईरान के बादशाह ने कहलाया कि जिस राज्य के लिये आप लड़ाई लड़ रहे हो, वह पूरा राज्य मैं आपको सौंपने को तैयार हूँ पर आप संत को फाँसी न देकर उन्हें हमें लौटा दीजिये।

संत की गरिमा ने तुर्की के बादशाह की आँखें खोल दीं। उसने लड़ाई बन्द कर संत को ईरान की प्रजा को सौंप दिया।

• •

समाज-दर्शन

कोसाणा में अहिंसक (अजैन) भाइयों में तपस्या की लहर

परम श्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०, आगमज्ञ पं० रत्न श्री हीरा मुनिजी म० सा० आदि ठाणा ७ के वर्षावास का लाभ मिलने से जैन बन्धुओं के साथ अहिंसक भाइयों में भारी उत्साह देखते ही बनता है। दिनांक १७ जुलाई को २१ अजैन भाइयों ने एकासन व्रत की आराधना कर सम्पूर्ण दिन धर्माराधना में बिताया। पूज्य आचार्य प्रवर श्री शोभाचन्द जी म० सा० की ६३वीं पुण्य तिथि के प्रसंग से कोसाणा ग्राम के विश्नोई, ब्राह्मण, माली, राजपूत, सुथार, बढ़ई, चौधरी, सोनी आदि ७ अहिंसक भाइयों ने दयाव्रत की आराधना कर पूज्य स्व० आचार्य श्री के प्रति श्रद्धा की सच्ची भेंट चढ़ाकर अनूठा आदर्श प्रस्तुत किया। दया, उपवास, एकासन, आयंबिल आदि की छोटी तपस्याएँ तो अनेक भाइयों ने कीं, इसके साथ ही बड़ी तपस्याओं में मालावास निवासी श्री जीवनसिंहजी राजपूत एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रामू कँवर ने सजोड़े अठाई की तपस्या के प्रत्याख्यान १५ अगस्त को किये। आप दोनों पति-पत्नी २ कि० मी० दूर अपने निज गाँव मालावास से प्रतिदिन कोसाणा आकर पूज्य गुरुदेव के श्रीमुख से प्रत्याख्यान करते थे। कोसाणा निवासी श्री अमरराम जी विश्नोई ने १२ उपवास के प्रत्याख्यान किये। कोसाणा निवासी श्री अखेराजजी बाघमार ने ३१ की तपस्या का पारणा १८ अगस्त को किया। सभी साधकों का स्वास्थ्य अच्छा चल रहा है। पं० रत्न श्री हीरा मुनिजी म० सा० का जैन रामायण पर मार्मिक उद्बोधन बड़ा प्रेरणादायक है। कई अहिंसक भाइयों ने अमल (अफीम), शराब, बीड़ी, सिगरेट, तम्बाकू आदि दुर्व्यसनों का त्याग किया है।

—राजेन्द्रकुमार जैन

त्रिदिवसीय साधना शिविर सम्पन्न

कोसाणा—परम श्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०, आगमज्ञ पं० रत्न श्री हीरा मुनिजी म० सा० आदि ठाणा ७ के सान्निध्य एवं साधना विभाग के संयोजक वरिष्ठ स्वाध्यायी श्री चाँदमल जी कर्णावट के संयोजन में १२ से १४ अगस्त तक त्रिदिवसीय साधना शिविर सानन्द सम्पन्न हुआ। इस शिविर में उदयपुर, जोधपुर, सवाईमाधोपुर आदि क्षेत्रों के १६ साधकों ने भाग लिया। शिविर काल में प्रतिदिन ध्यान, मौन, तप, संयम, साधना एवं ज्ञानाराधना

के कार्यक्रम हुए । सभी साधकों ने प्रतिदिन दयाव्रत की आराधना के साथ ब्रह्मचर्य, अचौर्य व्रत, एकासन एवं एक विगय का त्याग किया । श्री रतनलालजी रांका (भोपालगढ़) मद्रास निवासी के मौन एवं एकान्तर की साधना चल रही है ।

शिविर शुभारम्भ के दिन पूज्य आचार्य प्रवर ने साधकों को सम्बोधित करते हुए फरमाया—"स्वाध्यायी ज्ञान की साधना करता है, पर ज्ञान के साथ क्रिया की साधना भी जरूरी है स्वाध्यायी, अच्छे वक्ता, लेखक एवं प्रवचन व भाषण कला में निपुण हो सकते हैं, पर उनमें आचरण भी उसी अनुरूप होना आवश्यक है । साधक साधना के द्वारा आचरण की रूपरेखा तैयार करते हैं, कषाय, इन्द्रिय आदि को वश में कर साधना के क्षेत्र में आगे बढ़ते हैं । आप सभी साधकों को साधना के क्षेत्र में आगे बढ़ना है, ध्यान एवं मौन की साधना से साथ आगे बढ़ेंगे, ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप की आराधना करेंगे तो आपकी आत्मा का कल्याण होगा ।"

१३ अगस्त को साधना शिविर के सभी साधक मेड़ता प्रवर्तक पं० रत्न श्री सोहनलालजी म० सा० आदि संतों के दर्शन एवं मार्गदर्शन का लाभ लेने के लिए सेवा में उपस्थित हुए ।

जैन युवक विकास मण्डल की स्थापना

कोसाणा—आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०, आगमज्ञ पं० रत्न श्री हीरा मुनिजी म० सा० आदि ठाणा की सद्प्रेरणा से दिनांक १४–८–८९ को श्री जैन युवक विकास मण्डल की स्थापना की गई है । समाज के बालक और युवकों में सामाजिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक विकास करते हुए सेवा भावना बढ़ाना, नैतिक शिक्षा में आगे बढ़ाना, दुर्व्यसनों से दूर हटाकर निर्व्यसनी बनाना, स्वधर्मी भाई-बहनों और वृद्ध लोगों की सेवा करना व सहयोग देना, तथा 'हम सब भाई-भाई हैं, हममें नहीं जुदाई है' नारे का पालन करते हुए उक्त उद्देश्यों की पूर्ति का लक्ष्य निर्धारित किया गया । श्री जैन युवक विकास मण्डल के चुनाव में निम्न पदाधिकारी सर्व सम्मति से चुने गये—

अध्यक्ष	श्री एल. सुरेशचन्द बाघमार
उपाध्यक्ष	,, डी. गौतमचन्द नाहर
मंत्री	,, जी. गणपतराज बाघमार
सहमंत्री	,, हंसराज बाघमार
कोषाध्यक्ष	,, टी. महावीरचन्द नाहर
सह-कोषाध्यक्ष	,, एस. किस्तूरचन्द बाघमार

प्रचार मंत्री „ डी. अशोक बाघमार
सह-प्रचार मंत्री „ एस. महेन्द्र नाहर

आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म० सा० की पुण्य तिथि धर्माराधना के साथ सम्पन्न

ब्यावर—पं० र० श्री मानमुनिजी, श्री शुभमुनिजी आदि ठाणा ५ एवं महासती श्री संतोषकँवर जी आदि ठाणा ५ के सान्निध्य में इस अवसर पर लगभग ४०० सामूहिक आयम्बिल तप की आराधना हुई। **हरमाड़ा** में महासती श्री तेजकँवरजी आदि ठाणा ३ के सान्निध्य में आचार्य श्री शोभाचन्द जी म० सा० के साथ उग्र तपस्वी श्री सागरमलजी म० सा० की पुण्य-तिथि भी धर्म-ध्यानपूर्वक मनाई गई। दया की पचरंगी, उपवास, एकासन, दया आदि विविध तपस्याएँ हुईं। **बीकानेर** में तपस्वीराज श्री चम्पालालजी म० सा० की आज्ञानु-वर्तिनी महासती श्री प्रवीणा श्रीजी के सान्निध्य में आचार्य श्री की पुण्य-तिथि दयाव्रत के रूप में मनाई गई। अन्य स्थानों पर भी विविध तप-त्याग किये गये।

स्व० मरुधर केशरी जी की ९९वीं जयन्ती

बंगलौर में प्रवर्तक श्री रूपचन्दजी म० सा०, उप-प्रवर्तक श्री सुकनमलजी म० सा० आदि ठाणा ८ के सान्निध्य में उक्त समारोह १६ अगस्त को विविध तप-त्यागपूर्वक सम्पन्न हुआ। उग्र-तपस्वी श्री अमृतचन्द्रजी म० सा० 'प्रभाकर' की ३२ दिवसीय तपस्या एवं महासती श्री आनन्द शीलाजी की ३३ दिवसीय तपस्या का पूर सानन्द सम्पन्न हुआ। **जयपुर** में विदुषी साध्वी डॉ० मुक्तिप्रभा जी एवं डॉ० दिव्यप्रभाजी के सान्निध्य में आयोजित समारोह में साध्वी-द्वय ने लोक कल्याण, सर्वधर्म-समभाव एवं मानव सेवा की प्रेरणा दी। **जसवन्तगढ़** में उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी एवं उपाचार्य श्री देवेन्द्रमुनिजी के सान्निध्य में विविध त्याग-प्रत्याख्यान हुए। इस अवसर पर 'जिनवाणी' के संपादक डॉ० नरेन्द्र भानावत एवं राजस्थान विश्वविद्यालय के दर्शन विभाग के प्राध्यापक डॉ० के० एल० शर्मा ने भी अपने विचार प्रकट किये। देश के विभिन्न स्थानों पर त्याग-प्रत्याख्यान पूर्वक यह आयोजन सम्पन्न हुआ।

आचार्य श्री आनन्द ऋषिजी की ९०वीं जयन्ती सानन्द सम्पन्न

देश के विभिन्न क्षेत्रों में आचार्य श्री आनन्द ऋषिजी की ९०वीं जयन्ती तप-त्यागपूर्वक संपन्न हुई। **जसवन्तगढ़** में उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी एवं उपा-चार्य श्री देवेन्द्र मुनिजी के सान्निध्य में श्री महावीर युवक परिषद् द्वारा आयो-जित समारोह में आसपास के ३५ गाँवों के श्रावकों के सहयोग से १२०० से भी

अधिक आयम्बिल तप की भव्य आराधना संपन्न हुई । इस अवसर पर एक कवि सम्मेलन भी रखा गया, जिसमें कवियों ने अपनी श्रद्धा-वन्दना समर्पित की। **बोलारम** में युवाचार्य डॉ० शिव मुनिजी के सान्निध्य में विविध तप प्रत्याख्यान हुए। **बंगलौर** में प्रवर्तक श्री रूपचन्दजी म० सा० आदि ठाणा ८ के सान्निध्य एवं कर्नाटक के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री गुण्डुराव के मुख्य आतिथ्य में समारोह आयोजित किया गया। कार्यक्रम की अध्यक्षता श्री पारसमल जी चोरड़िया ने की। श्री शांतिलालजी सियाल की धर्मपत्नी श्रीमती शांतिबाई ने ३१ उपवास के प्रत्याख्यान ग्रहण किये। **कोयम्बटूर** में श्री आशीष मुनि ठाणा ३ के सान्निध्य में अखण्ड 'नवकार-मंत्र' के जाप के साथ उपवास, दया, आयम्बिल, एकासन आदि विविध तपस्याएँ हुईं। **सवाईमाधोपुर** में उप-प्रवर्तिनी श्री मानकँवरजी आदि ठाणा ६ ने तत्वावधान में जयन्ती मनाई गई। विदुषी साध्वी डॉ० सुशील जी एवं डॉ० प्रभाकुमारी जी ने आचार्य श्री के जीवन और व्यक्तित्व पर विशेष प्रकाश डाला। **मदनगंज** में विदुषी साध्वी श्री चारित्रप्रभा जी एवं डॉ० दर्शन-प्रभाजी के सान्निध्य में इस अवसर पर २५० दया का भव्य आयोजन हुआ। लगभग ५० युवतियाँ प्रतिक्रमण सीख रही हैं। विविध प्रकार के तप-त्याग सम्पन्न हुए। **अमरावती** में महासती प्रतिभा जी के सान्निध्य में कई तप-त्याग हुए। श्रीमती कमलाबाई सामरा ने मासखमण के पच्चखाण किये।

संक्षिप्त समाचार

देवास—यहाँ श्री अजित मुनिजी एवं महासती श्री शांतिकँवर जी के सान्निध्य में महासती श्री चांदकँवरजी की चतुर्थ पुण्य-तिथि दयाव्रत एवं जाप दिवस के रूप में मनाई गई। श्री चाँदकँवर पारमार्थिक ट्रस्ट द्वारा छात्रों को पाठ्य पुस्तकें एवं छात्रवृत्ति प्रदान की गई।

जसवन्तगढ़—उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी एवं उपाचार्य श्री देवेन्द्र मुनिजी की प्रेरणा से सैंकड़ों की संख्या में आदिवासी भाई-बहिनों ने कुव्यसन त्यागकर सात्विक जीवन जीने के नियम ग्रहण किये। तरपाल निवासी श्रीमती कंकूबाई ने मासखमण के तथा २१ भाई-बहिनों ने ८ व ११ की तपस्या के प्रत्याख्यान किये। २९, ३०, ३१ अगस्त को यहाँ सामूहिक तेलों का आयोजन किया गया।

बम्बई—अहिंसा प्रसारक ट्रस्ट, बम्बई की विज्ञप्ति के अनुसार अमेरिका में शाकाहारी जीवन पद्धति विशेष लोकप्रिय हो रही है। 'वेजिटेरियन टाइम्स पत्रिका' के अनुसार १९८५ से अब तक बीस लाख अमेरिकन नागरिक शाकाहार की ओर मुड़े हैं। शाकाहारी संस्थाओं की संख्या अब एक हजार से भी ज्यादा हो गई है। वहाँ बसे जैन धर्मियों ने दुनिया के गिने-चुने प्रमुख धर्मों के आठ धर्म चिह्नों में जैन धर्म चिह्न को भी सम्मिलित करा लिया है।

जयपुर—विश्व शाकाहार संगठन, नई दिल्ली एवं पशु क्रूरता निवारण समिति, जयपुर के तत्त्वावधान में १५ अक्टूबर को शाकाहार के ऊपर एक वृहद् संगोष्ठी का आयोजन किया गया है जिसमें भारत एवं विदेशों के मान्य चिकित्सक एवं पोषाहार विशेषज्ञ भाग लेंगे।

इन्दौर—जैन सोशल ग्रुप, इन्दौर द्वारा २४ एवं २५ सितम्बर, १९८९ को चतुर्थ जैन युवा परिचय मेला का आयोजन किया गया है। इस अवसर पर शादी योग्य जैन युवक एवं युवतियों की जानकारी निःशुल्क प्रकाशित की जायेगी। अपना परिचय भेजकर एवं मेले में सम्मिलित होकर इस अवसर का लाभ उठावें। इच्छुक जन सम्पर्क करें—जैन सोशल ग्रुप, इन्दौर, पेनजान ऑफिस ८९, महारानी रोड, इन्दौर–४५२ ००७।

बंगलौर—प्रवर्तक श्री रूपचन्दजी म० एवं उप-प्रवर्तक श्री सुकनमलजी म० के सान्निध्य में स्वाध्याय शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें ८५ युवक व प्रौढ़ स्वाध्यायियों ने भाग लिया।

पाली—यहाँ प्रवर्तक श्री सोहनलालजी म० सा० की आज्ञानुवर्तिनी विदुषी महासती श्री ज्ञानलता जी, दर्शनलता जी, चारित्रलता जी आदि ठाणा के सान्निध्य में ४ अगस्त से १२ अगस्त तक महिला स्वाध्यायी शिविर का आयोजन किया गया।

जयपुर—श्री जैन श्वे० संघ, जवाहरनगर के चुनाव में श्री उमरावचन्द संचेती अध्यक्ष चुने गये। उन्होंने श्री सुधीन्द्र गैमावत को उपाध्यक्ष, श्री सुरेन्द्र पोखरना को महामंत्री, श्री आनन्द मेहता को सहमंत्री, श्री राजेन्द्र जैन को सांस्कृतिक मंत्री, श्री फतहसिंह बरड़िया को निर्माण मंत्री, डॉ० संजीव भानावत को शिक्षा व साहित्य मंत्री एवं श्री दौलतचन्द्र चपलावत को कोषाध्यक्ष मनोनीत किया है।

जोधपुर—यहाँ श्री उत्तम मुनिजी एवं महासती श्री चन्द्रकान्ता जी आदि के सान्निध्य में जैन ज्ञान श्रावक संघ के तत्त्वावधान में ६०० भाई-बहिनों की दयाव्रत साधना सम्पन्न हुई।

बडोत—यहाँ दिगम्बर आचार्य श्री कुंथुसागरजी म० के सान्निध्य में १४ जुलाई को सुश्री लीला बहिन, सुश्री मणि बहिन व सुश्री सुमन बहिन की आर्यिका दीक्षा सम्पन्न हुई।

नोखा चाँदावतों का—यहाँ मोहन मुनिजी एवं उप-प्रवर्तक श्री विनय मुनिजी 'भीम' तथा महासती श्री मनोहरकंवर जी आदि ठाणा के सान्निध्य में

महासती श्री तरुणप्रभा जी की ३६ दिवसीय तपस्या का पारणा सानन्द सम्पन्न हुआ।

राजनांद गाँव—श्री देवानन्द जैन गुरुकुल के भूतपूर्व अध्यक्ष स्व० सूरजमल जी वैद्य (बालाघाट) की पुण्य-तिथि पर आयोजित समारोह में प्रसिद्ध पत्रकार श्री शरद कोठारी ने गुरुकुल पद्धति से दी जाने वाली शिक्षा की आवश्यकता पर बल दिया। श्री ऋषभचन्द वैद्य ने चारित्र निर्माण में इस गुरुकुल के योगदान पर प्रकाश डाला। श्री अमृत मेहता ने संचालन किया।

श्यामपुरा—आचार्य श्री नानेश की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री सुशीला-कँवर जी के समतामय प्रेरक उद्‌बोधन से यहाँ संघ में गत ७ वर्षों से चला आ रहा विवाद समाप्त हो गया और सब में प्रेम तथा मैत्री भाव की लहरें व्याप्त हो गईं।

उदयपुर—सुखाड़िया विश्वविद्यालय की १९८९ की एम० ए० अर्थशास्त्र (उत्तरार्द्ध) परीक्षा में मुक्तक भानावत ने, एम० ए० की चित्रकला (पूर्वार्द्ध) में कुमारी कहानी भानावत ने और एम० कॉम० (पूर्वार्द्ध) में शूरवीरसिंह भाणावत ने क्रमशः ६४, ७२ व ७६ प्रतिशत अंक प्राप्त कर प्रथम स्थान प्राप्त किया है। हार्दिक बधाई।

हैदराबाद—यहाँ एयर मार्शल श्री पी० के जैन के मुख्य आतिथ्य में आयोजित समारोह में 'विश्व जैन परिषद्' की स्थापना की गई। श्री हस्तीमल जैन अध्यक्ष एवं श्री पारस जैन महामंत्री मनोनीत किये गये। इस परिषद् का मुख्य उद्देश्य जैन समाज में एकता, भाईचारा एवं सेवाभाव जागृत करना है। परिषद् ने इसके लिए ११ सूत्री कार्यक्रम प्रसारित किया है।

जयपुर—श्री वर्द्धमान स्था० जैन श्रावक संघ, जयपुर एवं अ० भा० जैन विद्वत् परिषद् के संयुक्त तत्त्वावधान में विदुषी साध्वी डॉ० मुक्तिप्रभा जी एवं डॉ० दिव्यप्रभा जी आदि ठाणा के सान्निध्य में लाल भवन में १३, १४ व १५ अक्टूबर को **'कर्म सिद्धान्त और जीवन व्यवहार'** विषय पर एक अखिल भारतीय विद्वत् संगोष्ठी का आयोजन किया गया है।

खेरली—भारतीय पल्लीवाल जैन महासभा ने पल्लीवाल जैन नवयुवक मण्डल, खेरली के प्रयास से क्षेत्रिय पाँच विधवाओं को ४५००/- रु० की नकद सहायता प्रदान की है, जिससे उनके जीवनयापन हेतु सिलाई मशीन आदि क्रय कराई जायेंगी।

जोधपुर—श्री सुधर्म प्रचार मण्डल की ओर से 'श्री सुधर्म-सौरभ' दस वर्षीय स्मारिका का प्रकाशन किया जा रहा है। मण्डल द्वारा धार्मिक शिक्षण, आध्यात्मिक प्रशिक्षण, सद् साहित्य प्रकाशन एवं स्वाध्याय का विशेष कार्य किया जाता है।

भवानीमण्डी—महासती श्री छगनकँवर जी के नेश्राय में श्रीमती चन्द्र-कान्ता धर्मपत्नी श्री हरकचन्द जी गोलेछा ने संयम-सादगी के साथ २१ की तपस्या सम्पन्न की।

जयपुर—साध्वी श्री डॉ० मुक्तिप्रभाजी, डॉ० दिव्यप्रभाजी आदि ठाणा के सान्निध्य में मासखमण, अट्ठाइयाँ आदि तपस्याओं के साथ-साथ भक्तामर का अखण्ड जाप आदि कार्यक्रम सम्पन्न हो रहे हैं। नवकार मंत्र साधना पर डॉ० दिव्यप्रभा जी का मनोवैज्ञानिक विवेचन विशेष प्रभावक एवं प्रेरक है।

मैसूर—यहाँ उपाध्याय श्री केवल मुनिजी के सान्निध्य में विशेष तप-त्याग हो रहा है। दरला परिवार की ओर से विकलांग व्यक्तियों को जयपुर लिम्ब दिये गये। कान्वेन्ट से लेकर कॉलेज तक के शिक्षण की विशेष योजना पर विचार चल रहा है।

गुलाबपुरा—यहाँ महासती श्री सायरकँवर जी के सान्निध्य में १८ अगस्त से २७ अगस्त तक महिला धार्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया जिसमें ४० महिलाओं ने भाग लिया। अध्यापन कार्य ४ सुशिक्षित महिलाओं ने किया। प्रथम वर्ग में श्रीमती कंचनदेवी संचेती व श्रीमती विमला सेठी, द्वितीय वर्ग में श्रीमती सुशीला कावडिया व श्रीमती विजयलक्ष्मी चपलोत, तृतीय वर्ग में श्रीमती सुन्दरबाई चौधरी व चन्दना चौधरी क्रमशः प्रथम व द्वितीय रहीं। स्वाध्याय संघ गुलाबपुरा का शिविर-व्यवस्था में विशेष सहयोग रहा। यहाँ आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म० सा० व मुनि श्री सागरमल जी म० सा० की पुण्यतिथि विशेष तपाराधना के साथ सम्पन्न हुई।

नाथद्वारा—महासती श्री लहरकँवर जी के सान्निध्य में विशेष तप-त्याग हो रहा है। आपकी २१ दिवसीय तपस्या के उपलक्ष्य में यहाँ २६ अगस्त को तपोत्सव का आयोजन किया गया। इस अवसर पर जीवदया फण्ड की स्थापना की गई। श्री सोहलाल जी सोनी, श्री गोपीलालजी सिसोदिया, श्री सोहनलाल जी लोढ़ा व श्री चुन्नीलालजी बागरेचा ने सजोड़े शीलव्रत के प्रत्याख्यान किये।

तंडियार पैठ–मद्रास—यहाँ महासती श्री नानूकँवर जी के सान्निध्य में विशेष तप-त्याग एवं धर्माराधना चल रही है। महासती श्री प्रभावनाश्री जी ने

३६ की, लब्धिश्री जी ने ३१ की तपस्या पूर्ण की। तपस्विनी श्री चारित्रप्रभा जी की ४२ की तपस्या पूर्ण हो चुकी है। आपने वैराग्य अवस्था में सिरकाली में ९९ की और कोयम्बटूर में ६१ की तपस्या की थी।

सैदापेठ-मद्रास—महासती श्री सूर्यकान्ता जी के सान्निध्य में चार भाई-बहिनों के मासखमण के प्रत्याख्यान हुए। महासती श्री रचनाश्री जी के ३७ की तपस्या चल रही है।

जोधपुर—प्रवर्तक श्री रमेश मुनिजी के सान्निध्य में मरुधर केशरी श्री मिश्रीमल जी म० की ९९वीं जयन्ती एवं मेवाड़भूषण श्री प्रतापमल जी म० सा० की ९वीं पुण्य तिथि गुणानुवादपूर्वक मनाई गई।

अहमदाबाद—श्री तिलोक रत्न धार्मिक परीक्षा बोर्ड की परीक्षाएँ १५ अक्टूबर से होंगी। १५ सितम्बर तक आवेदन-पत्र भरकर भिजवा देवें।

बम्बई—यहाँ एस० एन० डी० टी० महिला यूनिवर्सिटी के स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग में डॉ० नरेन्द्र भानावत का २ सितम्बर को 'महाकाव्यों के तत्त्व एवं जीवन-मूल्य' विषय पर विशेष व्याख्यान हुआ, जिसकी अध्यक्षता विभागाध्यक्ष डॉ० उमा शुक्ल ने की। डॉ० भानावत ने 'प्रियप्रवास' को सेवा मूल्य का, 'साकेत' को संयम और तप मूल्य का और 'कामायनी' को समता मूल्य का महाकाव्य बताया। डॉ० पुष्पा जौहरी ने धन्यवाद दिया। प्रारम्भ में डॉ० माधुरी चाले ने परिचय दिया।

बून्दी—कुशल सेवामूर्ति श्री शीतल मुनिजी व श्री धन्ना मुनिजी के सान्निध्य में धर्म व तपाराधना अच्छी संख्या में हो रही है। जैन-जैनेतर बड़ी संख्या में व्याख्यान-श्रवण का लाभ ले रहे हैं।

अलीगढ़-रामपुरा—श्री चम्पक मुनिजी, नंदीषेण मुनिजी के सान्निध्य में अठाइयाँ, दया, उपवास, बेला, तेला, पचरंगी आदि तपस्याएँ हो रही हैं।

किशनगढ़—श्री ज्ञान मुनिजी ठाणा ३ के सान्निध्य में ८० बालक-बालिकाएँ सामायिक-प्रतिक्रमण सीख रहे हैं। आचार्य शोभाचन्द्र जी म० सा० की पुण्य तिथि पंच दिवसीय साधना दिवस के रूप में मनाई गई। श्री कानसिंह जी परिहार की धर्मपत्नी ने १८ अगस्त को १५ के प्रत्याख्यान किये हैं। आगे बढ़ने की भावना है।

जोधपुर—घोड़ों के चौक में प्रवर्तनी महासती श्री बदनकँवर जी म० सा०, सेवाभावी श्री लाडकँवर जी म० सा०, परम विदुषी महासती श्री मैना-

सुन्दरी जी आदि ठाणा ६ व पावटा में महासती श्री सौभाग्यवती जी आदि ठाणा ३ के सान्निध्य में आचार्य श्री शोभाचन्द्र जी म० सा० की पुण्य तिथि तप-त्यागपूर्वक मनायी गई।

नसीराबाद—महासती श्री शान्तिकँवर जी ठा० ४ के सान्निध्य में अठाई, पचोला, तेला, बेला, उपवास, दया की पचरंगी आदि तप-त्याग हुए।

दूणी—महासती श्री सुशीलाकँवर जी ठाणा ६ के सान्निध्य में सामायिक संघ की स्थापना की गई है। इसके संयोजक हैं श्री प्रकाशचन्द जी गोखरू। यहाँ विविध प्रकार की तपाराधना चल रही है।

शोक-श्रद्धांजलि

मद्रास—यहाँ के सुप्रतिष्ठित श्रावक, वयोवृद्ध समाजसेवी, धर्म-परायण श्री खींवराज जी चौरड़िया का १७ अगस्त, १९८९ को ७५ वर्ष की आयु में दुःखद निधन हो गया। आपका जन्म १९ सितम्बर, १९१४ को नोखा चांदावतों (नागौर जिला) में हुआ। आपका व्यक्तित्व बहुआयामी था। खींवराज मोटर्स लि०, मद्रास व बंगलौर के आप संस्थापक अध्यक्ष थे। धार्मिक, शैक्षिक एवं सामाजिक प्रवृत्तियों से आपका सक्रिय जुड़ाव रहा। आप श्री एस० एस० जैन एज्युकेशनल सोसायटी के अन्तर्गत चल रहे मोहनमल चौरड़िया जैन इण्डस्ट्रियल ट्रेनिंग सेन्टर के संरक्षक सदस्य थे। भ० महावीर अहिंसा प्रचार संघ, श्री सनातन धर्म स्कूल, दया सदन, बाल निकेतन के अध्यक्ष रहे। नोखा, जोधपुर आदि स्थानों पर स्थानक भवनों के निर्माण, पुष्कर के वृद्धाश्रम में भोजन व्यवस्था, मूक पशुओं के लिए चारे की व्यवस्था, अकाल राहत कार्य आदि में आपका विशेष आर्थिक सहयोग रहा। असहाय बालकों, महिलाओं, रोगियों आदि की मदद के लिए आप सदा तत्पर रहते थे। स्थानकवासी समाज के आप प्रमुख थे पर सभी धार्मिक प्रवृत्तियों एवं संत-सतियों की
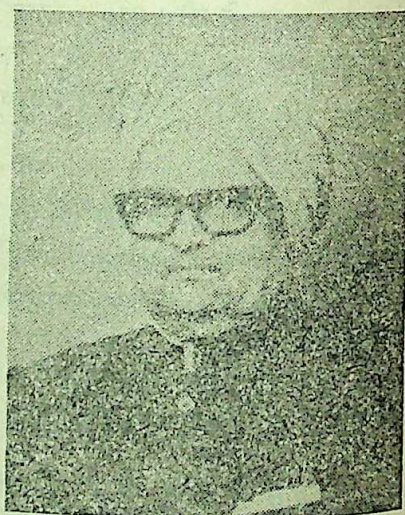
सेवा में आप अग्रणी रहते थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं।

आगरा—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक एवं अग्रणी पुस्तक प्रकाशक श्री पदमचन्द जी जैन का १३ अगस्त को लम्बी बीमारी के बाद ६३ वर्ष की आयु में दुःखद निधन हो गया। आप मूलतः अलवर के निवासी थे। आपने रतन प्रकाशन मन्दिर, ओसवाल बुक सेन्टर तथा प्रेम इलेक्ट्रिक प्रेस की स्थापना कर पुस्तक एवं मुद्रण व्यवसाय के क्षेत्र में विशेष ख्याति अर्जित की। गरीबों, असहायों व अनाथों की सेवा में आप रुचि लेते थे। उपाध्याय श्री अमर मुनिजी की प्रेरणा से आपने राजगृह स्थित 'वीरायतन संस्था' के विकास में विशेष योगदान दिया। आप अनेक वर्षों तक उसके उपाध्यक्ष व मंत्री रहे। आप अत्यन्त मिलनसार, उत्साही समाजसेवी, साहित्यप्रेमी एवं उदार हृदय थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं।
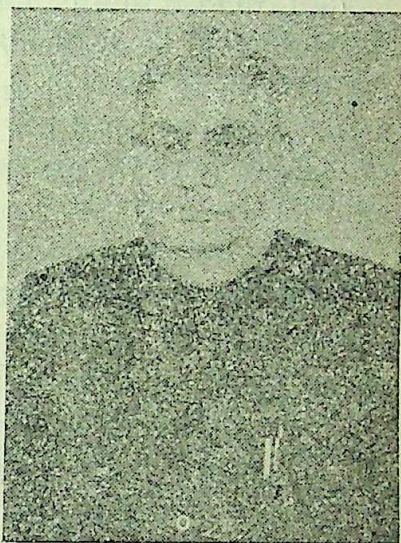
उज्जैन—यहाँ के स्थानकवासी समाज के वयोवृद्ध श्रावक एवं समाजसेवी श्री धूलचन्दजी भटेवरा का १९ अगस्त को ९२ वर्ष की आयु में निधन हो गया। आप बालकों में धार्मिक संस्कार एवं शिक्षण के लिए सदैव प्रयत्नशील रहते थे। आप मूलतः खाचरौद के निवासी थे। वहाँ के देशी औषधालय के संचालन में आपका विशेष योगदान रहा। देश के स्वाधीनता संग्राम में भी आपने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। उज्जैन के महावीर भवन एवं चन्दनबाला भवन के निर्माण में भी आपका सहयोग रहा। आप इन्दौर के सामाजिक कार्यकर्ता श्री हस्तीमल जी झेलावत के ताऊजी थे।

उदयपुर—प्रमुख शिक्षाविद् डॉ० लक्ष्मीलाल जी ओड का ३ अगस्त, १९८९ को ६६ वर्ष की आयु में असामयिक निधन हो गया। आपने १९६३ में लन्दन विश्वविद्यालय से शिक्षा में पी० एच० डी० की उपाधि अर्जित की। सन् १९५३ से आप शिक्षा क्षेत्र में अपनी सेवाएँ देते रहे। सन् १९८५ में आप वनस्थली विद्यापीठ से शिक्षा संकाय के प्रोफेसर एवं डीन के पद से

सेवा-निवृत्त हुए। सम्प्रति आप राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर में मानद प्रोफेसर (शैक्षिक शोध) के रूप में कार्यरत थे। ३० से अधिक शोध छात्रों ने आपके मार्ग-निर्देशन में पी० एच० डी० की उपाधि प्राप्त की। देश के अनेक विश्वविद्यालयों तथा शिक्षा परिषदों से आप संबंधित थे। हिन्दी, अंग्रेजी में शिक्षा संबंधी आपकी १२ पुस्तकें एवं लगभग १५० लेख प्रकाशित हैं। जीवन के अन्तिम क्षण तक आप लेखन कार्य से जुड़े रहे। मृत्यु से कुछ समय पूर्व ही आपने जैन शिक्षा पर एक पुस्तक पूर्ण की थी। सेवामंदिर रावटी (जोधपुर) के जैन शिक्षा आयोग का प्रतिवेदन आपके द्वारा ही तैयार किया जा रहा था। आपका जीवन सरल और सादगीपूर्ण था। आपके निधन से एक सेवाभावी आदर्श शिक्षाशास्त्री की क्षति हुई है।

ब्यावर—धर्मपरायण, सुश्रावक श्री प्रकाशचन्द जी मेहता का १७ जुलाई, ८६ को ५५ वर्ष की आयु में निधन हो गया। आप दिग्विजय सीमेन्ट कम्पनी, जामनगर के वाइस-प्रेसीडेन्ट थे। आप ख्यातिप्राप्त ज्योतिर्विद श्री बालचन्द जी मेहता के ज्येष्ठ पुत्र थे। आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० के प्रति आपकी अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं।

जयपुर—यहाँ के प्रतिष्ठित, सामाजिक कार्यकर्ता, धर्मनिष्ठ श्रावक श्री नेमीचन्द जी भंसाली का ६ अगस्त ८६ को ६४ वर्ष की आयु में आकस्मिक निधन हो गया। आप खरतरगच्छ संघ के वर्षों से विभिन्न पदों पर पदाधिकारी रहे एवं वर्तमान में पंचायती मंदिर के व्यवस्थापक थे। श्री वीर बालिका शिक्षण संस्थान एवं ज्वैलर्स एसोसियेशन की कार्यकारिणी में भी आप वर्षों से सदस्य रहे।

इचलकरणजी—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री मूलचन्द जी बोहरा का २२ जुलाई को आकस्मिक निधन हो गया। आप सरल, सादगीप्रिय व उदारमना व्यक्ति थे। आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० के प्रति आपकी अगाध श्रद्धाभक्ति थी।

बीजापुर (कर्नाटक)—यहाँ के प्रतिष्ठित श्रावक श्री देवीलाल जी रुणवाल का ७ अगस्त, ८६ को आकस्मिक निधन हो गया। आप सरल, सादगीप्रिय धार्मिक व्यक्ति थे। सन्त-सतियों की सेवा में अग्रणी रहते थे। आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के प्रति आपकी अगाध श्रद्धा-भक्ति थी। मद्रास की ओर पधारते समय आपने बीजापुर में आचार्य श्री की सेवा-

भक्ति का पूरा लाभ लिया। आप 'जिनवाणी' के आजीवन सदस्य एवं नियमित पाठक थे। आप अपने पीछे भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं।

यह विचित्र संयोग ही है कि आपकी धर्मपत्नी श्रीमती सूरजबाई को आपकी मृत्यु के तीसरे दिन से ही स्वप्नदर्शन होने से संथाराभाव जागे। विशाल परिवार होने से किसी की भी यह इच्छा नहीं थी कि वे संथारा लें, पर आप अपने निश्चय पर सुदृढ़ और अटल बनी रहीं। अतः समस्त परिवार और सकल श्रीसंघ की अनुमति से १३ अगस्त के दिन आपने जावजीव संथारा ग्रहण कर लिया।

सिहुँड़ी (म० प्र०)—श्रीमती भागवतीबाई धर्मपत्नी श्री दरबारीलाल जैन का १९ मई को असामयिक निधन हो गया। आप धार्मिक प्रवृत्ति की सरलहृदया श्राविका थीं। आप सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर में प्राकृत एवं जैन विद्या विभाग के अध्यक्ष डॉ० प्रेमसुमन जैन की माताजी थीं।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति हम सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 'जिनवाणी' एवं अ० भा० जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए शोकविह्वल परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

—सम्पादक

साभार प्राप्ति स्वीकार

२५१ रु. "जिनवाणी" की आजीवन सदस्यता हेतु प्रत्येक

२५२३. श्री नरेन्द्रकुमारजी सिंघी, कलकत्ता
२५२४. श्री अमितजी टाटिया द्वारा—श्री दलपतराजजी टाटिया, जोधपुर
२५२५. श्री सोहनलालजी कवाड़, जोधपुर
२५२६. श्री इन्द्रमलजी सुराणा, बीकानेर

"जिनवाणी" को सहायतार्थ भेंट

११०१ रु. श्री एस. लालजी सुरेशकुमारजी बाघमार, कोसाणा
अपनी सुपुत्री सौ. कां. राखी के पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के मुख से अठाई की तपस्या करने के उपलक्ष्य में भेंट।

२५१ रु. शिवराजजी नथमलजी नाहर, कोसाणा
श्री देवराजजी नाहर एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती किरणदेवी के सजोड़े अठाई की तपस्या एवं श्री नथमलजी नाहर धर्मपत्नी श्रीमती किरणदेवी के अठाई की तपस्या के उपलक्ष्य में भेंट ।

२५१ रु. श्री देवराजजी चौरड़िया नवरतनमलजी चौरड़िया, मद्रास
पूज्य पिताजी श्री खींवराजजी साहब चौरड़िया की पुण्य स्मृति में भेंट ।

२०१ रु. श्री प्रसन्नमलजी लोढ़ा, नागौर (राज०)
उनकी पुत्रवधू श्रीमती विजयकुमारी लोढ़ा धर्मपत्नी श्री अमरचन्दजी लोढ़ा के अक्षया तृतीया दिनांक १९.४.८८ को जयपुर में सम्पन्न हुए पारणे के उपलक्ष्य में भेंट ।

२०१ रु. श्री अखेराजजी गौतमचन्दजी बाघमार, कोसाणा
श्री अखेराजजी बाघमार के पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के श्री मुख से ३१ के उपवास करने के उपलक्ष्य में भेंट ।

१५१ रु. श्री घीसूलालजी दलीचन्दजी बाघमार, कोसाणा
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. का कोसाणा में आँख का सफलपूर्वक आपरेशन होने के उपलक्ष्य में भेंट ।

१५१ रु. श्री अमृतराजजी बसन्तराजजी कुमट, जयपुर
श्रीमान् सज्जनराजजी कुमट की पुण्य स्मृति में भेंट ।

१०१ रु. श्री बस्तीमलजी चौरड़िया, जोधपुर
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के मुख से श्रीमती सायरदेवी धर्मपत्नी श्री बस्तीमलजी चौरड़िया के ग्यारह के उपवास करने के उपलक्ष्य में भेंट ।

१०१ रु. श्री नरेन्द्रकुमारजी लूणिया, दिल्ली
आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के कोसाणा में दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष्य में भेंट ।

१०१ रु. श्री सम्पतलाल एण्ड ब्रादर्स, जबलपुर
श्री पारसमलजी बाघमार की धर्मपत्नी श्रीमती कंचनदेवी के आठ की तपस्या एवं श्री सम्पतलालजी बाघमार की धर्मपत्नी श्रीमती कमलादेवी के नौ की तपस्या के उपलक्ष्य में भेंट ।

१०१ रु. श्री इन्द्रचन्दजी धोका, निम्बाजवाले, आबूर्णी
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के कोसाणा ग्राम में दर्शनार्थ का लाभ लेने के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१ रु. श्री जवाहरलालजी प्रेमचन्दजी बाघमार, कोसाणा
श्री जवाहरलालजी बाघमार के अठाई एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती शान्ताकंवरजी की पाँच की तपस्या के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१ रु. श्री शाह बादलचन्दजी लीलमचन्दजी बाघमार कोसाणा
श्री बादलचन्दजी बाघमार की अठाई की तपस्या के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१ रु. श्री नवरत्नमलजी लोढ़ा, जोधपुर
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के कोसाणा में दर्शनार्थ जाने के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१ रु. श्री जैन युवक विकास मण्डल, कोसाणा
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा., पं. रत्न श्री हीरामुनिजी म. सा. आदि ठाणा ७ के वर्षावास में मण्डल की दि. १४ अगस्त को स्थापना होने के उपलक्ष्य में भेंट।

५१ रु. श्री बी. लूनचन्दजी कुमट बी. घेवरचन्दजी कुमट, मद्रास
बहनोई साहब श्री चम्पालालजी कांकरिया तथा बाई भूरीकंवरजी ने सजोड़े छटे व्रत की सौगन कोसाणा में ली उसकी खुशी में भेंट।

५१ रु. श्री सजनीदेवीजी सुराना, नागौर
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. एवं सन्त मण्डल के दर्शनार्थ जाने के उपलक्ष्य में भेंट।

५१ रु. श्री लालचन्दजी कोठारी, गोटन
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के कोसाणा में दर्शनार्थ जाने के उपलक्ष्य में भेंट।

५१ रु. श्री सम्पतराजजी उमरावमलजी सुराणा, जोधपुर
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के कोसाणा में दर्शनार्थ जाने के उपलक्ष्य में भेंट।

५१ रु. श्री विमलचन्दजी उत्तमचन्दजी भंसाली, जयपुर
पूज्य पिताजी श्रीमान् नेमीचन्दजी भंसाली की पुण्य स्मृति में भेंट।

५१ रु. श्री एच. चम्पालालजी दिलीपकुमारजी कांकरिया, मद्रास
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के दर्शन करके शील-व्रत की सौगन ली उसके उपलक्ष्य में भेंट।

५१ रु. श्रीमती उगमबाईजी चौधरी, आरकाट
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के कोसाणा में दर्शनार्थ जाने के उपलक्ष्य में भेंट ।

५१ रु. श्री सुगनमलजी नेमीचन्दजी गोगड़, आगोलाई
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. से श्री मांगीलालजी गोगड़ द्वारा गुरु आम्नाय ग्रहण करने के उपलक्ष्य में भेंट ।

२१ रु. श्री रामदयालजी जैन सेवानिवृत्त तहसीलदार, गंगापुरसिटी
अपने पुत्र श्री भागचन्दजी जैन के पुत्र रत्न के जन्म होने के उपलक्ष्य में भेंट ।

२१ रु. श्री वर्धमान स्थानकवासी जैन श्रावक संघ, मदनगंज-किशनगढ़
उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी म. सा. की आज्ञानुवर्तिनी परम विदुषी श्री कुसुमवती म. सा. की सुशिष्या विदुषी साध्वी श्री चारित्र प्रभाजी म. सा. की सुशिष्या साध्वी श्री दर्शन प्रभाजी म. सा. ने पी.एच.डी. प्राप्त की उसकी खुशी में भेंट ।

२१ रु. श्री अमरचन्दजी संचेती, व्यावर (अजमेर)
श्रीमती सुशीलादेवीजी संचेती धर्मपत्नी श्री इन्द्रचन्दजी संचेती के १५ उपवास करने के उपलक्ष्य में भेंट ।

२१ रु. श्री बाबूलालजी संचेती, जोधपुर
पूज्य आचार्य प्रवर के कोसाणा ग्राम में दर्शनार्थ जाने के उपलक्ष्य में भेंट ।

२१ रु. श्री बख्तावरसिंहजी भण्डारी, जोधपुर
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के कोसाणा में दर्शनार्थ जाने के उपलक्ष्य में भेंट ।

२१ रु. श्री संजयकुमारजी नरेन्द्रकुमारजी मेहता, भोपाल
कोसाणा ग्राम में आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के मुख से गुरु आम्नाय ग्रहण करने के उपलक्ष्य में भेंट ।

२१ रु. श्री सोहनलालजी देवीलालजी रुणवाल, वीजापुर
श्रीमान् देवीलालजी रुणवाल की पुण्य स्मृति में भेंट ।

मण्डल को सहायतार्थ भेंट

५०१ रु. श्री प्रसन्नचन्दजी लोढ़ा, नागौर (राज.)
अपनी पुत्र वधु श्रीमती विजयकुमारी लोढ़ा धर्मपत्नी श्री अमरचंदजी

लोढ़ा के अक्षय तृतीया दिनांक १९.४.८८ को जयपुर में सम्पन्न हुए पारणे के उपलक्ष्य में भेंट।

२१ रु. श्री रामदयालजी जैन, सेवानिवृत्त तहसीलदार, गंगापुरसिटी
अपने पुत्र श्री भागचन्दजी जैन के पुत्र रत्न के जन्म होने के उपलक्ष्य में भेंट।

'स्वाध्याय शिक्षा' को सहायतार्थ भेंट

२०१ रु. श्री अखेराजजी गौतमचन्दजी बाघमार, कोसाणा
श्री अखेराजजी बाघमार की ३१वीं तपस्या के उपलक्ष्य में भेंट।

१०१ रु. श्री शिवराजजी नथमलजी नाहर, कोसाणा
श्री देवराजजी नाहर एवं उनकी धर्मपत्नी श्रीमती किरणदेवी एवं श्री नथमलजी नाहर की धर्मपत्नी श्रीमती किरणदेवी की अठाई की तपस्या के उपलक्ष्य में भेंट।

जीव दया को सहायतार्थ भेंट

२१ रु. श्री रामदयालजी जैन, सेवानिवृत्त तहसीलदार, गंगापुरसिटी
अपने पुत्र श्री भागचंदजी जैन के पुत्र रत्न के जन्म होने के उपलक्ष्य में भेंट।

५०१ रु. साहित्य प्रकाशन की आजीवन सदस्यता हेतु

३५५. श्रीमती प्रभादेवीजी विनोदकुमारजी जैन, शुजालपुर नगर (म.प्र.)
३५६. श्री अक्षयजी मोहनोत, जोधपुर
३५७. श्री अमितजी टाटिया, जोधपुर

चिरस्मरणीय संस्मरण

इस स्तम्भ के लिए अपने तथा अपने सम्बन्धियों के चिरस्मरणीय प्रसंग/संस्मरण/अनुभव भेजिए। प्रत्येक प्रकाशित संस्मरण/प्रसंग अनुभव पर आपको पाँच पुस्तिकायें पुरस्कार में दी जायेंगी। अपने संस्मरण/प्रसंग/अनुभव इस पते पर भेजें :–

मंत्री,
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार, जयपुर-३०२००३

समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियाँ भेजें :

साहित्य-समीक्षा

☐ डॉ० नरेन्द्र भानावत

१. **सद्धा परम दुल्लहा** :—उपाचार्य श्री देवेन्द्र मुनि, प्र० श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय, शास्त्री सर्किल, उदयपुर, पृ० ३०८, मू० ३५.०० ।

उपाचार्य श्री देवेन्द्र मुनि जैन आगमों के गूढ़ तत्वान्वेषी और सहज-सरल व्याख्याता हैं । प्रस्तुत ग्रन्थ के दो खण्डों में आपने सम्यक् दर्शन रूप श्रद्धा का सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक रूप ३० निबन्धों में प्रस्तुत किया है । सच्चे देव, गुरु और धर्म पर सम्यक् श्रद्धा रखकर ही साधक मानव जीवन को सार्थक बनाता हुआ परमात्म सिद्धि प्राप्त कर सकता है । इन निबन्धों में उपाचार्य श्री ने सम्यक् श्रद्धा के मर्म को स्पष्ट करते हुये श्रद्धा के विभिन्न रूपों—श्रेय, विश्वास, संकल्प, आस्था, आत्म-समर्पण, शम, संवेग, निर्वेद, अनुकम्पा और आस्तिक्य का गम्भीर पर सहज-सरल विश्लेषण प्रस्तुत किया है । शास्त्र के गांभीर्य एवं लोक अनुभव के सारल्य से समन्वित यह कृति सभी स्तर के पाठकों के लिए परम उपयोगी और जीवनोत्थान में मार्ग दर्शक है ।

२. **उपासक दशांग और उसका श्रावकाचार** :—डॉ० सुभाष कोठारी, प्र० आगम, अहिंसा, समता एवं प्राकृत संस्थान, पद्मिनी मार्ग, उदयपुर, पृ० २६०, मू० ६५.०० ।

आगम, अहिंसा, समता एवं प्राकृत संस्थान द्वारा प्रकाशित यह ग्रन्थ सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर द्वारा स्वीकृत पी. एच-डी. के लिए शोध प्रबन्ध है। उपासक दशांग में आनन्द, कामदेव आदि १० श्रावकों के माध्यम से श्रावकाचार का बड़ा सुन्दर व प्रेरक विवरण प्रस्तुत किया गया है । डॉ० कोठारी ने इस कृति के छः अध्यायों में आगम साहित्य में उपासक दशांग का महत्त्व दर्शाते हुए इसकी विषय वस्तु का व्रत-साधना की दृष्टि से प्रभावी विवेचन किया है । उपासक दशांग के रचनाकाल, इसमें वर्णित समाज एवं संस्कृति के स्वरूप तथा भाषा सम्बन्धी विशेषताओं पर भी अच्छा प्रकाश डाला गया है । श्रावकाचार के विवेचन में दिगम्बर एवं श्वेताम्बर दोनों परम्पराओं के मान्य ग्रन्थों को आधार बनाया गया है । परिशिष्ट में पारिभाषिक शब्दों का स्पष्टी-

करण करने से यह ग्रन्थ सामान्य पाठकों के लिए भी विशेष उपयोगी बन गया है।

३. **सांस्कृतिक राजस्थान खण्ड २** :—सं० रतन शाह, प्र० अखिल भारतीय मारवाड़ी सम्मेलन, १५२–बी०, महात्मा गाँधी रोड, कलकत्ता–७, पृ. २००, मू. २१.०० ।

अ. भा. मारवाड़ी सम्मेलन, राजस्थान के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जागरण में सचेष्ट है। राजस्थान की सांस्कृतिक विरासत को उजागर करने के क्षेत्र में प्रस्तुत प्रकाशन का विशेष योगदान है। इसका प्रथम खण्ड पाठकों के लिए बड़ा उपयोगी सिद्ध हुआ और शीघ्र ही समाप्त हो गया। इसके द्वितीय खण्ड में रावत सारस्वत ने राजस्थान के इतिहास को विभिन्न कालक्रमों में प्रस्तुत किया है। डॉ. जयचन्द शर्मा एवं डॉ. मनोहर शर्मा ने राजस्थान की नृत्य कला का कत्थक, गिन्दड़ एवं घूमर नृत्य के परिप्रेक्ष्य में विवेचन किया है। डॉ. महेन्द्र भानावत ने राजस्थान की लोककला के विभिन्न रूपों—गृह, भित्ति, आँगन, तन, माटी, प्रस्तर, काष्ठ, धातु, पट, पाटा आदि का रोचक परिचय दिया है। विषय से सम्बन्धित चित्र भी यथास्थान दिए गए हैं। प्रकाशन भव्य, उपयोगी और पठनीय है।

४. **समकित-तरंग** :—श्री राजमल पवैया, प्र. दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल, दिगम्बर जैन मन्दिर, चौक बाजार, भोपाल पृ. २००, मू. ८.०० ।

श्री राजमल पवैया वयोवृद्ध गीतकार एवं आध्यात्मिक भाव सम्पदा के कवि हैं। इस कृति में संकलित १५१ कविताएँ समकित भावना से सम्बन्धित हैं। इनके अध्ययन-मनन से आत्म-स्वभाव एवं आत्म-बोध जागता है। चित्त विषय-कषाय से हटकर निज अनुभव में, समता-भाव में रमण करने की प्रेरणा ग्रहण करता है। आत्मानुभव को उपमा, रूपक, उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों के माध्यम से सहज-सरल बनाकर अभिव्यक्त करने का प्रयास किया गया है। उपभोक्ता संस्कृति में जीने वाले लोगों के लिए संकलित कविताएँ उपयोग दृष्टि विकसित करने में सहायक हैं।

५. **जैन धर्म** :—प्रवर्तक श्री रमेश मुनि, प्र. प्रताप मुनि ज्ञानालय, स्टेशन रोड, बड़ी सादड़ी–३१२४०३, पृ. १७२, मू. ४.०० ।

स्व. उपाध्याय श्री कस्तूरचन्दजी म. के शताब्दी वर्ष के सन्दर्भ में प्रकाशित इस कृति में जैन धर्म के तत्त्व चिन्तन, श्रावकाचार, श्रमणाचार, समाज-दर्शन, शाकाहार, जैन प्रतीक आदि को सहज-सरल भाषा शैली में संक्षेप में स्पष्ट किया गया है। सामान्य पाठकों के लिए पुस्तक उपयोगी है।

६. **भक्ति की महिमा :**—श्रीकृष्ण जैन, सं. डॉ. खेमचन्द जैन, प्र. शास्त्र स्वाध्यायशाला, श्री पार्श्वनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर, सब्जी मण्डी, बर्फखाना के पीछे, दिल्ली–७, पृ. ८८, मू. ४.०० ।

धर्म-अध्यात्म में भक्ति का बड़ा महत्त्व है । जैन समाज में आचार्य मानतुंग द्वारा रचित 'भक्तामर स्तोत्र' अत्यन्त लोकप्रिय स्तुति काव्य है । इसमें प्रथम तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की स्तुति की गई है । ४८ संस्कृत छन्दों की इस रचना के विभिन्न भाषाओं में शताधिक अनुवाद हो चुके हैं । इस कृति में मूल पाठ के साथ लेखक का अपना हिन्दी पद्यानुवाद, शब्दार्थ और भावार्थ दिया गया है । यथास्थान विशेष टिप्पणियाँ भी दी गई हैं । भक्तजनों के लिए यह कृति उपयोगी है ।

७. **संगीत सारिका भाग–२ :**—संग्राहक एवं भेंटकर्ता जवाहरलाल बाघमार, ६, चन्द्रप्पा मुदली स्ट्रीट, साहूकार पैठ, मद्रास–७९, पृ. ६४, मू. नित्य पठन ।

अपनी जन्मभूमि कोसाणा (जोधपुर) में आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के चातुर्मास के उपलक्ष्य में इस कृति का प्रकाशन भक्तिभाव से प्रेरित होकर किया गया है । इसमें संग्राहक श्री जवाहरलाल बाघमार द्वारा गाये जाने वाले स्वयं के व अन्य आचार्यों, मुनियों के ४० आध्यात्मिक पद एवं भजन संकलित हैं । सभी रचनाएँ आध्यात्मिक प्रेरणा देने के साथ-साथ आत्मविभोर करने वाली हैं ।

८. **प्रार्थनाञ्जलि :**—संग्राहक एवं भेंटकर्ता जवाहरलाल बाघमार, ६, चन्द्रप्पा मुदली स्ट्रीट, साहूकार पैठ, मद्रास–७९, पृ. ४८, मू. नित्य पठन ।

इसका प्रकाशन भी आचार्य श्री के कोसाणा चातुर्मास के उपलक्ष्य में किया गया है । इसमें अरिहन्त, सिद्ध, भगवान महावीर, शांतिनाथ आदि की स्तुति के साथ-साथ अपने आराध्य गुरु आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. की स्तवना-वन्दना में रचित गीत व भजन संकलित हैं ।

अभिनन्दन एवं बधाई

जयपुर :—प्रमुख समाजसेवी स्व. श्री सोहनमलजी कोठारी की पुत्रवधू एवं श्री दिग्विजय कोठारी की धर्मपत्नी श्रीमती भँवरीदेवी कोठारी का मास-खमण की तपस्या पर हार्दिक अभिनन्दन एवं बधाई ।

उदयपुर :—उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ ने डॉ. महेन्द्र भानावत को उनकी कृति 'अजूबा राजस्थान' पर ७ हजार रु. का 'रामनरेश त्रिपाठी पुरस्कार' प्रदान किया है । बधाई ।

अपनी बात

विजयादशमी की प्रासंगिकता

□ डॉ. नरेन्द्र भानावत

विजयादशमी का त्यौहार हम प्रति वर्ष मनाते हैं और पीढ़ी-दर-पीढ़ी मनाते चले आ रहे हैं। स्थूल रूप से इसका सम्बन्ध रावण पर राम की विजय से जोड़ा जाता है, पर विजय का भाव इससे पूर्व भी मानव-मन के संस्कार में मानव के जन्म से ही रहा हुआ है। राम-रावण का प्रसंग चाहे प्रागैतिहासिक या पौराणिक रहा हो, पर उसकी प्रासंगिकता आज भी बनी हुई है। वस्तुतः राम-रावण का संघर्ष प्रत्येक व्यक्ति के मन में क्षण-प्रतिक्षण उठने वाला संघर्ष है। राम सत्कर्म का, सत्वृत्ति का प्रतीक है तो रावण दुष्कर्म का, असद्वत्ति का प्रतीक है। जब-जब समाज में दुष्कर्म और असद्वृत्ति प्रबल बनती है, तब-तब अशान्ति, संघर्ष, विग्रह और कलह का वातावरण प्रगाढ़ बनता जाता है। इस वातावरण को सद्कर्म और सद्वृत्ति द्वारा सर्वजनहितकारी और मांगलिक बनाया जा सकता है।

कहा जाता है कि रावण बड़ा शक्तिशाली था। उसने प्राकृतिक शक्तियों को अपने अधीन कर लिया था। पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि उसके दास थे। यहाँ तक कि आकाश भी उसके आगे थर-थर काँपता था। उसने भौतिक शक्ति को अपनी मुट्ठी में कैद कर रखा था। अपनी बुद्धि और कला-कौशल का उपयोग वह इन्द्रिय-भोग में ही मुख्य रूप से करता था। जब-जब बुद्धि भोगोन्मुखी बनती है, तब-तब वह विकारग्रस्त हुए बिना नहीं रहती। काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह आदि विकार जब बुद्धि को घेर लेते हैं, तब चाहे वह कितनी ही शक्ति सम्पन्न हो, उसका पतन हुए बिना नहीं रहता। रावण का यही हाल हुआ। राम के हाथों वह मारा गया। दूसरे शब्दों में दैवी शक्ति द्वारा आसुरी शक्ति पराजित हुई। इसी स्मृति में, विजयोल्लास में हम विजयादशमी अथवा दशहरा पर्व मनाते हैं।

आज पार्थिव रूप में राम-रावण हमारे समक्ष नहीं हैं, पर स्मृति रूप में, प्रतीक रूप में वे हमारे सामने हैं। आज भौतिक शक्ति ने जिस रूप में विकास किया है, वह विस्मयकारक है। विज्ञान का बढ़ता हुआ विध्वंसकारी रूप हमें रावण की याद दिलाता है। विज्ञान के द्वारा आज पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि

आदि को बन्दी बना लिया गया है। इनका उपयोग व्यक्ति अथवा समूह अपने स्वार्थ और इन्द्रिय-भोग के लिए अधिकाधिक करने लगा है। परिणामस्वरूप विश्व का पूरा माहौल प्रदूषित हो रहा है। प्रदूषण पर नियन्त्रण करने का दायित्व प्राकृतिक एवं भौतिक शक्तियों में निहित न होकर आत्म-शक्ति और आत्म-संयम में है। जब तक पाँच ज्ञानेन्द्रियों और पाँच कर्मेन्द्रियों की प्रवृत्तियों को आत्म-नियन्त्रण में नहीं लिया जाता, तब तक प्रदूषण का दुष्चक्र तोड़ा नहीं जा सकता।

राम ने रावण के दस सिर काटे थे, छेदे थे। इसी की स्मृति रूप दशहरा पर्व है। यदि हम अपनी दशविध कर्मेन्द्रियों और ज्ञानेन्द्रियों की भोगवृत्ति, कामवृत्ति का छेदन-भेदन नहीं करते तो हम विजय पर्व मनाने के अधिकारी नहीं बनते। यह अधिकार विध्वंसक हथियारों का निर्माण कर, उनका संचय कर, उनके प्रयोग द्वारा निरपराध मानव जाति का संहार कर प्राप्त नहीं किया जा सकता। यह अधिकार आकाश की भांति निरन्तर बढ़ती रहने वाली इच्छाओं पर संयमन और नियन्त्रण करके ही प्राप्त किया जा सकता है। राम यदि राजा के रूप में रावण से लड़ते तो वे कब और किस प्रकार विजय प्राप्त करते, कहा नहीं जा सकता। राम ने भोगी राजा के रूप में नहीं, वरन् संयमी, तपस्वी, वनवासी, पितृभक्त, निर्वासित आत्मवीर के रूप में विजय प्राप्त की थी। यह निर्वासन मात्र देशनिकाला नहीं था, वरन् अपने मन की समस्त वासनाओं को निकालने का प्रसंग था, सब प्रकार के देहजनित स्वार्थों से ऊपर उठने का अवसर था। भूमि, जल, अग्नि, वायु आदि तत्त्वों को अपनी मुट्ठी में बन्द कर केवल अपने भोग के लिए उनका उपयोग करने का राम का लक्ष्य नहीं था वरन् भूमि की पावनता को स्पर्श करने के लिए, जल की तरलता से स्निग्ध होने के लिए, अग्नि की उष्णता से प्राण शक्ति को उद्दीप्त करने के लिए, वायु की प्राणवत्ता से अपने को शुद्ध, प्रबुद्ध और अन्तर्मुखी बनाने के लिए निर्वासन था, वन की यात्रा थी। प्रकृति के कण-कण से मैत्री, पशुपक्षियों से वात्सल्य भाव और समाज के उपेक्षित, पद-दलित, दुःखी, पीड़ित लोगों के साथ भाईचारा और सुख-दुःख की भागीदारी का बल ही उनका वास्तविक क्रियात्मक बल था। लक्ष्मण उनकी क्रियात्मक शक्ति के रूप थे। इन सबके समुच्चय से राम में ऐसा सामर्थ्य और आन्तरिक वीरत्व जगा कि वे रावण जैसी महान् भीषण शक्ति पर विजय प्राप्त कर सके।

विभीषण ने बहुत प्रयत्न किया कि रावण की अहंकारजन्य भौतिक शक्ति की भीषणता कम हो, उसमें शक्ति के साथ संयम का भाव जागे, मान का स्थान सम्मान और सत्ता का स्थान सेवा ले, पर रावण का अहम् और उन्माद विभीषण को गले न लगा सका। भीषणता भव्यता का रूप न ले सकी।

विभीषण भीषणता को, भयंकरता को विरहित कर भव्य भावना को आत्मसात् करने का प्रतीक है। उसका रावण से सम्बन्ध तोड़कर राम से मिलना क्रूरता से सम्बन्ध तोड़कर करुणा से मिलना है, रौद्र स्वरूप से सौम्य स्वरूप में स्थित होना है।

विजयादशमी की प्रासंगिकता इस बात में नहीं है कि हम विजय के नाम पर दूसरों को दबायें, उनके अधिकारों का हनन करें, अपने सुख के लिए उनके सुख को कम करें, बल्कि विजयादशमी की प्रासंगिकता इस बात में है कि हम विज्ञान का शक्ति-द्वार सबके कल्याण के लिए, सबके सुख के लिए खोल दें। विजय का उल्लास इस बात में समझें कि सबके प्रति हमारा वात्सल्य भाव उमड़े, आर्थिक, सामाजिक और मानसिक विषमता का गढ़ टूटे, सर्वत्र समता का प्रसार हो, जीवन की दाहकता मिटे और शीतलता व्यापे। आसोज का माह मन में आशा और ओज पैदा करे। विजय विनाश का नहीं वात्सल्य का बाना पहनकर विचरे, विहरे। □□

मनुष्य

□ श्री अभयप्रकाश जैन

शिष्य ने विनम्र भाव से अपने गुरुजी से पूछा—

"गुरुवर मनुष्य क्या है?"

गुरुजी ने प्रसन्न हो उत्तर दिया—"मनुष्य मिट्टी का खिलौना है जो न जाने कब, कहाँ और कैसे टूट कर चकनाचूर हो जाये।"

शिष्य ने फिर उत्सुकता से पूछा—"फिर राम, कृष्ण, बुद्ध, महावीर, ईसा और गाँधी का इतना महत्त्व क्यों है?"

गुरुजी ने कहा—"प्रेम की व्यथा ने उन्हें मनुष्य को पल-पल की मृत्यु से देवता के अमरत्व में अधिष्ठित कर दिया है, इसलिये।"

शिष्य ने कहा—"समझा आचार्य, प्रेम की व्यथा में अणु को विराट् करने की क्षमता है।"

—एन १४, चेतकपुरी
ग्वालियर

ज्ञानामृत–१४
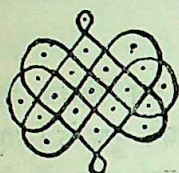
सत्संग से सदाचरण

□ डॉ० प्रेमचन्द रांवका

गुणाः गुणज्ञेषु गुणाः भवन्ति, ते निर्गुणंप्राप्य भवन्ति दौषाः ।
आस्वाद्यतोयाः प्रभवन्तिनद्यः, समुद्रमासाद्य भवन्त्य पेयाः ।।

पंचतन्त्र के इस छन्द में पण्डित मनीषी विष्णु शर्मा का संबोधन है कि गुण गुणियों में गुणों की वृद्धि ही करते हैं, किन्तु वे ही गुण निर्गुणी के पास पहुँच कर दोष बन जाते हैं। जैसे नदियों का जल बड़ा मधुर और आस्वाद्य होता है, परन्तु वही जल समुद्र में मिलकर पीने योग्य नहीं रहता है। अभिप्राय यह है कि गुणी वस्तु भी कुसंगति से दोषयुक्त हो जाती है।

मुक्ति की सिद्धि तथा असिद्धि में व्यक्ति की योग्यता के साथ-साथ संगति भी एक कारण है। धार्मिक व्यक्तियों की संगति से मनुष्यों में ही क्या पशुओं में भी धार्मिक भावना जागृत हो जाती है। तीर्थंकरों की सन्निधि में रहने वाले भव्य पुरुष संयम ग्रहण करके अपने योग्य सिद्धि पा लेते हैं। मुनियों के सम्पर्क में रहने वाले व्यक्ति यदि मुनि नहीं बन पाते तो मुनियों जैसे अनेक शुभाचरणों के अभ्यासी तो हो ही जाते हैं। सिंह आदि क्रूर पशु भी अहिंसा का पूर्णाचरण करने वाले मुनिराजों के समागम से अपनी दुष्ट भावना छोड़कर अहिंसक बन जाते हैं।

सर्प के काटने से तो केवल मनुष्य के प्राण ही जाते हैं, उसके गुण नष्ट नहीं होते, परन्तु दुर्जन मनुष्य के संसर्ग से जीवन के साथ ही समस्त गुण भी नष्ट हो जाते हैं। सच है, संगति क्या नहीं करती ? विद्वान् के साथ निर्गुणी/दुराचारी भी गुणी/सदाचारी दिखाई देता है। चारुदत्त गुरुकुल में सदाचारी लोगों की संगति में अखण्ड ब्रह्मचारी बना रहा, लेकिन वसन्तसेना के सम्पर्क से महाव्यभिचारी बन गया। निश्चित ही मनुष्य के निर्माण में संगति का बड़ा योग है। कविवर रहीम ने ठीक ही कहा है—

कदली सीप भुजंग मुख, स्वाति एक गुण तीन ।
जैसी संगति बैठिये, तैसो ही फल दीन ।।

१६१०, खेजड़े का रास्ता, जयपुर–१ (राज.)

पर्युषण पर्वाराधन पर विशेष उद्बोधन

तपस्या को प्रदर्शन का रूप न दें•

□ आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०

पर्वाधिराज पर्व पर्युषण का लाभ केवल मनुष्यों को ही मिलता है, ऐसी बात नहीं। प्राणिमात्र के लिये यह पर्व कल्याणमय शक्तिदाता है, लाखों करोड़ों कोसों दूर से वीतराग वाणी श्रवण के लिये देव समवसरण मे आते हैं फिर आप तो दस-बीस पच्चीस कोस दूर से आकर यह नहीं समझें कि हम यहां आकर बड़ी भक्ति कर रहे हैं। आने वाले को लक्ष्य रखना है कि वह ज्ञानी बनकर न आये, बल्कि संतों की सेवामें आकर संत जीवन का नमूना अपने जीवन में उतारें। रत्नमणि पीठिकाओं में बैठने वाले असंख्य देव पर्व की आराधना करने समवसरण में आते हैं, क्यों आते हैं, क्या खूबी है, क्या लाभ है? और जो हमारे भक्तजन ग्राम, नगर, व प्रान्त से आकर संत सेवा में रहते हैं उनको विचार करना है गहराई से कि जिस उद्देश्य के लिए वे यहां आये हैं, उसका उपयोग करना है। पर्वाराधना की ये शुभ घड़ियाँ महालाभ का कारण हैं।

राजस्थान में जोधपुर, बालोतरा, पाली आदि नगरों में जैन बन्धु पर्युषण पर्व के दिनों में व्यावसायिक प्रतिष्ठान, फैक्ट्रियां आदि बन्द रखते हैं। बालोतरा में सैकड़ों रंगों की फैक्ट्रियां हमारे समाज के लोगों की हैं, उनमें हजारों की प्रतिदिन इनकम है। पर समय के बदलाव के साथ कुछ में शिथिलता आयी, पर श्रद्धालु श्रावकों की प्रेरणा से अब भी वे पर्व दिनों में अपना धन्धा बन्द रखते हैं। फिर आप तो छोटे-छोटे ग्रामों-नगरों में रहते हैं, अपना व्यापार बन्द रखकर पर्व दिनों का पूरा लाभ उठावें। पर्व के महत्त्व के कारण देवता देवलोक से आते हैं तो हम को भी सामर्थ्य के साथ अधिकाधिक धर्माराधना कर पर्व दिनों का लाभ उठाना चाहिए।

इस आध्यात्मिक पर्व को मेले की तरह नहीं मनाना है। आप यह न समझें कि कोसाणा में कोई मेला है अपितु जप-तप के साथ इसे मनाना है। तपस्या

• कोसाणा चातुर्मास में २९-८-८९ को दिये गये प्रवचन का अंश। श्री राजेन्द्रकुमार जैन द्वारा संकलित।

करने वाले भाई-बहिन बाहरी ग्राडम्बरों से दूर रहें; इसे शादी-विवाह ग्रादि लौकिक प्रसंगों के रूप में न समझें, तपस्या के प्रसंग पर मायरा ग्रादि न लें, बहिनें स्वर्णजंड़ित ग्राभूषणों से सुसज्जित होकर तपस्या न करें, तप प्रसंग से मिष्टान्न ग्रादि विविध पकवान न बनायें, ग्राप तपस्या को प्रदर्शन का रूप न दें, तपस्या के साथ कुछ त्याग करें, स्वधर्मी भाइयों को सहयोग दें, शुभ प्रवृत्तियों में दान दें। ग्राप ज्ञान, दर्शन, चारित्र की ग्रभिवृद्धि में ग्रपनी शक्ति का उपयोग करें।

किसान बीज कहाँ डालेगा ? खेत में। ग्रगर वह सड़क पर, तालाब में डाले तो क्या होगा ? बीज ग्रंकुरित नहीं होगा ग्रौर वह व्यर्थ चला जायेगा। ग्राप भी सोच-समझकर त्याग-तप के साथ धर्माराधन करें। जैसा कि कहावत है–ऊँची दुकान, फीका पकवान।

ग्राप तपस्या ग्रादि से धर्म प्रभावना कर रहे हैं, पर दिखावे के कारण ग्रापको इसका पूरा लाभ नहीं मिल रहा है। पुराने लोग तपस्या ग्रादि ग्रात्म-शान्ति के लिये करते थे, पर ग्राप लोगों में दिखावा हो गया। जितना दिखावा करोगे उतना ही खतरा मोल लेना पड़ेगा। बालोतरा ग्रादि में रंग के कारखाने नौ दिन बन्द रहते हैं, फिर ग्रापके यहाँ तो संत समागम है जिसका ग्रापको लाभ उठाना है जिससे ज्ञान, दर्शन, चारित्र की वृद्धि हो।

मैं भी पर्व में ग्रापके साथ सम्मिलित होने ग्राया हूँ। पर्युषण के ग्राठ दिन ग्राठ कामों के लिये हैं। ग्रापको ग्राठ कर्मों की गांठ को काटनी है, मद भी ग्राठ ही हैं, जाति मद, कुल मद ग्रादि। इनमें ग्रहंकार मद जबरदस्त है। ग्रहंकार से राजनीति में लड़ाई हो जाती है। तपस्या ग्रादि में ग्रहंकार करने से तपस्या का महत्त्व कम हो जाता है। यह पर्व इसलिए ग्राया है कि ग्राप इन मदों को काट डालो। लोग तपस्या ग्रादि का भी मद करते हैं। हम तो ग्रठाइयां बगल में रखते हैं, यह तो उपवास भी नहीं कर सकता। इस प्रकार ग्राप ग्रहंकार करेंगे तो ग्राप ग्रशुभ कर्म का बन्ध कर गिर जाग्रोगे, तप के महत्त्व को कम कर दोगे।

ग्रापको इन ग्राठ दिनों में ग्राठ मदों को छोड़ना है व ग्राठ कर्मों की गांठ को काटना है। सोने के पात्र में खाने वाले कुमार संयमी बन लकड़ी के पातरे में खाने लगे। हम मालवा में घूमे। मन्दसौर के पास भाटखेड़ा गांव में गये। वहां एक ठाकुर साहब के घर पर ठकुराइन लकड़ी के पातरे में खाती थी। ग्राप के यहां ग्राज कौन पातरे में खाता है ? यदि संतों को पातरों की ग्रावश्यकता पड़े, तो वह भी मिलना कठिन हो जाता है। यहां ग्रहिंसक भाइयों में भारी श्रद्धा है। श्री जीवनसिंह जी सजोड़े नौ की तपस्या कर चुके हैं व जिनवाणी का लाभ

लेने के लिए मालावास से आते हैं। जैन धर्म सिर्फ महाजनों का ही धर्म नहीं है, तीर्थंकर राजपूत कुल में जन्में हैं। राम, कृष्ण भी क्षत्रिय कुल में पैदा हुए। द्वारिका के साढ़े तीन करोड़ कुमार जब नशा करने लगे तो श्रीकृष्ण ने नगर की सारी दारू को नगर के बाहर फिंकवा दी। पर आज ऐसा कौन मंत्री या राजनेता है जो नशा आदि पर रोक लगा सके।

यह पर्व त्याग-तप सिखाने के लिए आया है। संक्षेप में कहें तो जिस प्रकार आठ बातें छोडने की हैं, उसी प्रकार आठ बातें ग्रहण करने की हैं। ये आठ गुण कब प्रकट होते हैं ? पांच समिति, तीन गुप्ति की आराधना करो। चलने-फिरने में खयाल रखो। ऊँची गर्दन करके न चलो। बोलो तो सोच के बोलो, कटु वचन न बोलो। खाने-पीने की वस्तुओं में संयम रखो। बाजार में गये और मिठाई खरीद ली, उस पर अच्छा वर्क चढ़ा है पर देखते यह नहीं कि ये कितने दिनों की हैं, खराब तो नहीं हुई है। आजकल शुद्ध दूध भी शहरों में नहीं मिलता और लोग दूध छोड़ भी नहीं सकते, नहीं मिलता तब थैली का दूध काम में लेते हैं। छोटे-छोटे श्रीमन्त भी आजकल मोटरकार रखने लग गये, पर उनके यहाँ गाय, भैंस नहीं मिलेगी। एक मोटर और गाय-भैंस में कितना खर्चा होता है ? गाय भैंस से शुद्ध दूध के साथ खाद आदि प्राप्त होते हैं अर्थात् गाय भैंस के रखने से बहुत कम खर्च होता है पर महाजन के आज गाय भैस आदि पशु मिलना मुश्किल है। कहने का मतलब यह है कि आज खाने का संयम नहीं है। मिले वैसे ही खालें, इसलिए जानो, देखो और बाद में सोचकर मुँह खोलो। प्रत्येक शरीरधारी को जीवन चलाने के लिए खाना जरूरी है, उसी प्रकार विसर्जन भी जरूरी है। शहरों में फ्लश की टट्टी में जाते हैं, गांवों में बाहर जाते हैं पर इसमें भी ध्यान रखना आवश्यक है। कहीं कोई देखता तो नहीं। गली रास्ते में बैठ गया, पर इससे लोगों की गाली मिलेगी। आये तो संतों के दर्शनों को और मिली गाली। इस प्रकार ये पांच समिति हैं। मन, वचन, काया पर संयम रखना तीन गुप्ति है। इस प्रकार इन आठ का ध्यान रखेंगे तो आपके लिए मोक्ष का मार्ग प्रशस्त होगा, पूर्व कर्म क्षय होंगे तथा नये कर्म रुकेंगे। आप आठ मद को गालते हुए पांच समिति, तीन गुप्ति की आराधना कर, उपवास, दया, एकासन आदि कुछ भी तपाराधन करें। भगवान महावीर ने 12 प्रकार के तप बताये हैं। जो खाये पिये बिना नहीं रह सकता वह भी इन तपों को कर सकता है।

1. अनशन–चार प्रकार के या तीन प्रकार के आहारों का त्याग करना। 2. ऊनोदरी–भोजन की अधिक रुचि होने पर भी कम भोजन करना 3. भिक्षाचर्या –शुद्ध आहार आदि की गवेषणा करना 4. रसपरित्याग–विगय आदि रसों का त्याग करना 5. कायाक्लेश–वीर आसन आदि कष्ट प्रद क्रिया करना 6. प्रतिसंलीनता–इन्द्रिय, कषाय आदि को रोकना 7. प्रायश्चित्त–लगे हुए दोषों की आलो-

चना कर आत्मा को शुद्ध करना 8. विनय–गुरु आदि अपने से बड़ों का विनय करना 9. वैयावृत्य–आचार्यादि की सेवा-भक्ति करना 10. स्वाध्याय–शास्त्रों का पठन-पाठन करना 11. ध्यान–मन को एकाग्र कर शुभ भावों में लगाना 12. कायोत्सर्ग–काया के व्यापार का त्याग करना।

भाई-बहिन इनकी सच्चाई के साथ आराधना करें, दिखावा नहीं करें। दान के द्वारा अर्थ का सदुपयोग करें। दानदाता ऐसा दान देवें जिससे दांये हाथ को भी पता न लगे अर्थात् त्याग की भावना से दान देंगे तो आपको अव्याबाध सुख की प्राप्ति होगी। □ □ □

मार्मिक प्रसंग

ऋषभ जिनेश्वर प्रीतम माहरो रे

○ महात्मा आनन्दघन

तीन सौ वर्ष पूर्व की बात। राजस्थान में सती प्रथा अति प्रचलित थी। आनन्दघन बाबा एक श्मशान के निकट से जा रहे थे। एक स्त्री पति की मृत्यु के बाद पति के साथ भस्म होकर सती होने की तैयारी में थी। योगानुयोग उस स्त्री की नजर पड़ी आनन्दघनजी पर। वह दौड़ कर उनके पाद-पंकजों में गिरी और विनती करने लगी–"बाबा, मुझे आशीर्वाद दीजिये। मैं सती होकर अपना धर्म निभा रही हूं।" बाबा ने समझाया कि सती होना भ्रांति है, अज्ञानता है। सांसारिक पति तो आधि-व्याधि-उपाधि युक्त है। लौकिक प्रेम काल, स्थल, रूप, गुण आदि की अपेक्षा से घटता है, बढ़ता है एवं नाश को भी प्राप्त होता है। मीरा ने गाया है ....

ऐसे वर को क्या करूं, जो जन्मे अरु मरी जाय।
वर वरिये एक सांवरो, मेरो चूड़ो अमर हो जाय।।"

आगे बाबा ने कहा...."सच्चा पति तो गिरधर गोपाल या ऋषभ जिनेश्वर ही है। इनके हजारों नाम हैं। प्रसन्न हुए प्रभु कभी साथ नहीं छोड़ते हैं। वे धणी हैं, प्रियतम हैं, जीवन साथी हैं और आशा के विश्रामधाम हैं। "ऋषभ जिनेश्वर प्रीतम महारो रे" कहने वाली आत्मा अखण्ड सौभाग्यवती होती है। उसे अशान्ति, अभाव, असमता रूपी वैधव्य कभी नहीं सताता। वह धन्य-धन्य हो जाती है।"

महायोगी आनन्दघन के प्रवचन से उस स्त्री की भ्रांति मिट गई, सुप्त चेतना जागृत हो गई। बाद में आनन्दघन जी ने ऋषभ जिन स्तवन बड़ी तन्मयता से मांगलिक के रूप में सुनाया...............

"ऋषभ जिनेश्वर प्रीतम माहरो रे, और न चाहूँ रे कंत।
रीझ्यो साहेब संग न परिहरे रे, मांगे आदि अनन्त।।"

धारावाही लेखमाला [९]
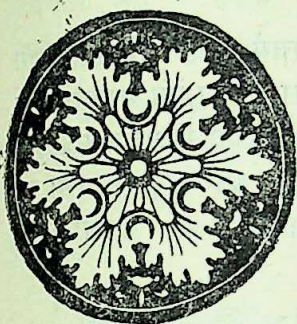
जैन संस्कृति में नारी का स्थान

□ श्री रमेश मुनि शास्त्री
[उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी के विद्वान् शिष्य]

महासती मृगावती—साध्वीरत्न मृगावती यशस्विनी प्रतिभामूर्ति महासती प्रभावती की बहिन थी। ज्योतिर्मय प्रभु महावीर की माता त्रिशला भी साध्वी मृगावती की मौसी थी। महासतियों की उज्ज्वल श्रेणी में महासती मृगावती का महत्त्वशील स्थान है। साध्वी का शील ही उसके लिये सर्वस्व है। हजारों-हजार बाधाएँ उसके मार्ग में आती हैं, किन्तु वह निस्तेज होकर इन विलोम तत्त्वों के प्रति समर्पिता नहीं होती, अपितु वह शक्तिभर इनसे संघर्ष करती है। अन्ततः सतीत्व शक्ति की ही विजय होती है और बाधाएँ ध्वस्त हो जाती हैं। सती नारी का अद्भुत, समुज्ज्वल ऐसा ही सुरम्य चित्र—महासती मृगावती के चरित्र में उभरा है।

मृगावती प्रभु महावीर के श्री चरणों में दीक्षित होकर आर्या चन्दनबाला के संरक्षण में धर्म साधना करने लगी। एक समय का पावन प्रसंग है कि प्रभु महावीर विचरण करते-करते कौशाम्बी पधारे। चन्दनबाला उनके दर्शनार्थ पहुँची। उनके साथ साध्वी मृगावती भी थी। मृगावती भी भगवान के दर्शनार्थ पहुँची। उस समय सूर्य प्रभु की सेवा में उपस्थित था। सूर्य के प्रकाश में मृगावती को दिन के समाप्त हो जाने का आभास नहीं हुआ और वह काफी समय तक प्रभु की सेवा में बैठी रही। जब वह विलम्ब से लौटी तो उसे साध्वी मर्यादा के उल्लंघन हो जाने का खेद था। आर्या चन्दनबाला ने भी उपालम्भ देते हुए कहा—साध्वियों को सूर्यास्त के समय बाहर नहीं रहना चाहिये। मृगावती ने क्षमायाचना के साथ सारी स्थिति स्पष्ट कर दी, किन्तु फिर भी उसको अपनी भूल पर पश्चात्ताप हुआ और परिणामतः उसे केवलज्ञान की प्राप्ति हो गई। अब वह सर्वज्ञ-सर्वदर्शी हो गई थी। इसी केवलज्ञान की रात्रि में जब मृगावती जगी हुई थी और समीप ही साध्वी चन्दना सोई हुई थी। उसने एक सर्प को आर्या के समीप से निकलते हुए देख लिया। साहस के साथ आर्या के हाथ को

पकड़ कर उसने भूमि से ऊपर उठा दिया और सर्प वहाँ से निकल गया। आर्या सहसा जाग उठी। उस ने मृगावती को कर स्पर्श का कारण पूछा और सर्वदर्शी मृगावती ने सर्प वाली घटना बता दी।

साध्वी प्रमुखा चन्दनबाला को अत्यन्त ही आश्चर्य हुआ कि इस सघन अन्धकार में इसको काला नाग दृष्टिगोचर कैसे हो गया? उन्होंने मृगावती से इसी आशय का प्रश्न किया। मृगावती ने उत्तर में कहा—अब मैं सर्वत्र सब कुछ देख पा रही हूँ और ज्ञानालोक में बिहार कर रही हूँ। आर्या चन्दनबाला को यह समझने में बिलम्ब नहीं हुआ कि मृगावती को केवलज्ञान की उपलब्धि हो गई है।

आर्या चन्दना ने केवली मृगावती की वन्दना की और स्वयं भी ध्यान-साधना में लीन हो गई। उन्होंने क्षपक श्रेणी में आरूढ़ होकर चार घनघाती कर्मों का क्षय कर लिया। इसी रात्रि में चन्दनबाला को भी केवलज्ञान हो गया। महासती मृगावती भी यथा समय अघाती चार कर्मों का क्षय कर सिद्ध, बुद्ध और मुक्त हुई।[1]

महासती पद्मावती—साध्वी रत्न पद्मावती भी वैशाली गणराज्य के अधिपति महाराजा चेटक की यशस्विनी पुत्रियों में से एक थी। अन्य बहनों की भाँति यह भी धर्मानुरागिनी और अत्यन्त ही प्रतिभाशालिनी थी। चम्पा नगरी के धर्मनिष्ठ नरेश दधिवाहन के साथ पद्मावती का विवाह हुआ था। ये दोनों धर्म के मार्ग पर सहयात्री थे, सहयोगी थे। राज दम्पति का जीवन सुख शान्ति-पूर्ण था।

पद्मावती सांसारिक सुखों से सर्वथा विरक्त हुई और उसने प्रव्रज्या ग्रहण की। उसने साध्वी होकर जनकल्याण के क्षेत्र में सक्रियतापूर्वक अभिरुचि ली और पिता तथा करकण्डू पुत्र के मध्य युद्ध के घोर दुष्कर्मों को पूर्णतः रोक दिया। इससे होने वाली हिंसा को उन्मूलित कर अहिंसा की स्थापना की और आत्म कल्याण के मंगलमय मार्ग पर बढ़ कर अपना जीवन सार्थक किया।[2]

महासती शिवा—शिवादेवी वैशाली नरेश चेटक की चतुर्थ राजकुमारी थी। पतिव्रता धर्म में अविचल रहने वाली शिवा सत्यप्रिय और विवेकशील थी। सतीत्व की तेजस्विता उसकी अन्यतम विशेषता थी। राजकुमारी शिवा का विवाह अवन्ती देश के अधिपति चण्डप्रद्योतन के साथ हुआ। रानी शिवादेवी

१. (क) दशवैकालिक निर्युक्ति अध्ययन—१, गाथा—७६।
(ख) आवश्यक निर्युक्ति गाथा—१०४८।

२. आवश्यक निर्युक्ति गाथा—१३११ की भाष्यगाथा २०५–२०६

अधिकार की गरिमा से पूर्ण वातावरण में रहती हुई भी इनसे कोसों दूर थी। वे अनासक्त भावना से सम्पन्न रहीं। वैराग्य भावना उनके जीवन की प्रमुख विशेषता रही। इनके ज्योतिर्मय जीवन में—निर्लिप्तता की आदर्श झांकी उपलब्ध होती है।

ज्योतिपुञ्ज प्रभु महावीर के श्री चरणों में महारानी शिवादेवी ने दीक्षा अंगीकार की। साध्वी शिवा ने आर्या चन्दनबाला के पावन सान्निध्य में अनेकधा साधनाएँ कीं और तपश्चर्या से कर्मों का आत्यन्तिक क्षय कर सिद्ध, बुद्ध एवं मुक्त हुईं।[1]

महासती सुलसा—साध्वीरत्न सुलसा का समूचा जीवन धर्म के रंग से रंगा हुआ था। वे धार्मिक साधना में विशेष आस्था रखती थीं और एकनिष्ठा के साथ त्याग धर्म की आराधना करती थीं। उनने धर्म को ही सर्वस्व माना। सुलसा का समग्र जीवन इस तथ्य का परिपुष्ट उदाहरण है कि पत्नी अपने मधुर-मृदुल उद्बोधन द्वारा पतिदेव को भी श्रद्धावान बनाने में सफल हो सकती है, ऐसा कर्तव्य निभाकर वह एक आदर्श पत्नी की भूमिका का निर्वाह करती है, अपने गम्भीर उत्तरदायित्व की सम्पूर्ति करती है।

सुलसा का जन्म राजवंश में नहीं हुआ। नाग नामक राजगृही के एक सामान्य सारथी की पत्नी सुलसा एक अतीव साधारण गृहस्थ थी, किन्तु यह सत्य है कि वह अतिशय रूप से धर्मपरायणा थी। सम्यग्दर्शन में अविचल रहने वाली सुलसा ने श्रद्धा और साधना के बल पर ही तीर्थंकर नाम कर्म का उपार्जन किया। उसका जीव ही आगामी चौबीसी में पन्द्रहवें तीर्थंकर के रूप में अवतरित होगा।[2]

महासती सुभद्रा—श्रमणीरत्न सुभद्रा का सम्पूर्ण जीवन धार्मिक दृढ़ता का जीता-जागता प्रतीक था। विपरीत परिस्थितियाँ, प्रतिकूल परिवेश भी आत्मिक शक्ति के समक्ष प्रभावहीन होकर परास्त हो जाते हैं। विजय सत्य की होती है। सुभद्रा का जीवन इसी विजय का उद्घोषक एवं धारक रहा है।

सुभद्रा जिनदास की यशस्विनी पुत्री थी। जिनदास वसन्तपुर का प्रतिष्ठित श्रेष्ठी था। धीरता, कोमलता, धार्मिक अभिरुचि आदि सुभद्रा की अन्यतम विशेषता थी। सुभद्रा का सारा का सारा परिवार धर्म भावना के रंग से रंजित था। सुभद्रा के मानस का धर्मराग एक नैसर्गिक तत्त्व ही था। सुभद्रा का प्रभु

१. आवश्यक निर्युक्ति गाथा—१२८४।
२. आवश्यक निर्युक्ति गाथा—१२८४।

महावीर के सिद्धान्तों में अविचल विश्वास था। वह उनको आचरण में उतार कर व्यावहारिक रूप देने में तत्पर रहती थी।

चम्पानगरी में एक धनाढ्य युवक निवास करता था। जिसका नाम था—बुद्धदास। जिनदास श्रेष्ठी ने गुणवती सुभद्रा का पाणिग्रहण बुद्धदास के साथ कर दिया था। विवाहोपरान्त सुभद्रा अपने पतिदेव के साथ चम्पानगरी में आ गयी। सुभद्रा ने तो प्रथम प्रातः ही अपनी दिनचर्या धार्मिक साधना के साथ प्रारम्भ की। सुभद्रा ने बुद्धदास के समूचे परिवार को "नमो अरिहन्ताणं" का मंगलमय महामन्त्र दिया। महामन्त्र की पावन वाणी से घर गूँज उठा। बुद्धदास के लिये तो प्रस्तुत मन्त्र जाप ही हो गया। जैन-धर्म की हजारों-हजार शीतल लहरों से समूचा परिवार प्रक्षालित हो गया। परम-पावन और सुख-शान्ति के दिव्य आलोक से जगमगा उठा। [क्रमशः]

प्रेरक प्रसंग

अधिक बोलना ठीक नहीं है

□ सीमा कुचेरिया

अधिक बोलना, समय-असमय बोलना आदमी के लिये शोभाजनक नहीं होता है। अधिक बड़बोला–व्यक्ति कोई अच्छी बात भी कहता है तो लोग उसे बकवास समझकर अनसुनी कर देते हैं। इस सम्बन्ध में चीन का एक प्रसंग है।

चीन के एक विचारक थे—मोउत्सु। एक बार त्सु-ची नामक एक व्यक्ति उनके पास आया और बोला—'महाशय! लोग कहते हैं कि अधिक बड़बोला होना अच्छी बात नहीं है। कृपया किसी उपयुक्त उदाहरण सहित मुझे इस कथन की सच्चाई को समझाइये।'

मोउत्सु ने कहा—

"भाई देखो, किसी पोखर-तालाब में मेंढक होते हैं न! वे लगातार टर्र-टर्र करते ही रहते हैं। इसी प्रकार मच्छर या मक्खी भिनभिनाते ही रहते हैं। इन सबकी टर्र-टर्र तथा भिनभिनाहट का क्या महत्त्व है? कौन उस पर ध्यान देता है? कोई नहीं।

किन्तु मुर्गा प्रातःकाल, निश्चित समय पर पुकार लगाता है, दिन-रात वह चिल्लाता नहीं रहता। तो सब लोग उसकी प्रातःकालीन पुकार पर ध्यान देते हैं। जान जाते हैं कि सवेरा हो गया।

इस उदाहरण से हमें भी यह सीखना चाहिये कि मितभाषी होना ही मनुष्य के लिए सम्मान की बात है।

द्वारा श्री पारसमल कुचेरिया
२०३३, रामललाजी का रास्ता, पीतलियों का चौक,
जौहरी बाजार, जयपुर-302 003

तुलनात्मक समीक्षा
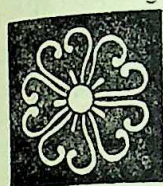
रामायण एवं महाभारत का सन्देश

□ श्री राजमल सिंघी

धर्म कथाएँ—ये दोनों धर्म कथाएँ हैं। धार्मिक सिद्धान्त को सरलता एवं भली प्रकार समझने के लिए धर्म कथाएँ आवश्यक होती हैं। धर्म कथाओं के श्रवण एवं पठन से धार्मिक जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है, जीवन में परिवर्तन आता है एवं पापी मनुष्य भी पुण्यात्मा बन जाता है। अतः धर्म का मर्म जानने के लिए इन दोनों कथाओं का ज्ञान आवश्यक है।

लेखक—रामायण के मूल स्रोत महर्षि वाल्मीकि हैं एवं महाभारत के मूल स्रोत वेदव्यास हैं। जैन रामायण आचार्य विमलसूरि ने एवं जैन महाभारत आचार्य देवप्रभसूरि ने लिखा है।

समय—रामायण के पात्र बीसवें जैन तीर्थंकर मुनिसुव्रत स्वामी के समय में एवं महाभारत के पात्र बाइसवें तीर्थंकर नेमीनाथ स्वामी के समय में हुए थे। इस आधार पर महाभारत का काल लगभग ८७ हजार वर्ष पूर्व का एवं रामायण का काल लगभग एक लाख ९७ हजार वर्ष पूर्व का माना जा सकता है।

राग में से जन्म—दोनों कथाओं का मूल राग-भाव है। रावण द्वारा पर-स्त्री के प्रति काम राग के कारण रामायण की रचना हुई एवं दुर्योधन के अपने स्वयं के प्रति राग-भाव (अहंकार भाव) के कारण महाभारत का निर्माण हुआ। अपने स्वयं के प्रति राग के कारण ही दुर्योधन को पाँडवों के प्रति द्वेष उत्पन्न हुआ।

पुत्र मोह की प्रधानता—रामायण की रचना ककयी द्वारा अपने पुत्र भरत के प्रति मोह के कारण हुई एवं महाभारत की रचना का कारण धृतराष्ट्र का अपने पुत्र दुर्योधन के प्रति मोह था।

कुटुम्ब में एकता लाने वाले ग्रंथ—रामायण यह बोध देती है कि कुटुम्ब में राम, भरत, सीता, लक्ष्मण जैसे सत्पुरुष होने चाहिए और महाभारत दर्शाता

है कि धृतराष्ट्र, दुर्योधन, शकुनि जैसे निकृष्ट व्यक्ति नहीं होने चाहिए । रामायण एकता की महिमा बताती है एवं महाभारत एकता के अभाव के कटुफल दर्शाता है ।

दोनों ग्रंथ बोध-प्रद—दोनों ग्रंथ अद्भुत बोध प्रदान करते हैं, यद्यपि दोनों के बोध देने की विधि भिन्न-भिन्न है । रामायण में गुणों के वर्णन की प्रधानता है । आदर्श पुत्र, भाई, सास, बहू कैसी होती है—इसका वर्णन रामायण में इतने प्रभावकारी रूप से बताया है कि हमारी भी इच्छा होती है कि हम भी ऐसे ही गुणवान बनें । महाभारत की बोध देने की रीति इसके ठीक विपरीत है । इस कथा के कई पात्रों में कपट, निर्लज्जता, द्वेष भाव इत्यादि अवगुणों के देखने से हमारा मन होता है कि हम हमारे स्वजनों, स्नेहीजनों अथवा किसी के प्रति इतना नीच व्यवहार तो न करें । इस प्रकार इन दोनों ग्रंथों में प्रदर्शित गुणों एवं अवगुणों द्वारा हमें उन्नत जीवन जीने की प्रेरणा मिलती है । रामायण में रावण की कामवासना एवं कैकयी की राग की भयंकरता देखकर एवं महाभारत में दुर्योधन के क्रोध, अहंकार, तिरस्कार वैर-वृत्ति इत्यादि अवगुण देखकर हमको बोध मिलता है कि हम ऐसे अवगुणों से दूर रहें ।

आरम्भ एवं अन्त में भिन्नता—रामायण के आरम्भ में कैकयी की वरदान याचना, दशरथ का दुःख, राम का वनवास इत्यादि हमारे चित्त को अत्यन्त दुःखी करते हैं, किन्तु आगे बढ़ते-बढ़ते अन्त में तो राम-राज्य की अद्भुत स्थापना होती है जिससे हमारा मन आनन्दित होता है, किन्तु महाभारत इससे सर्वथा भिन्न है । प्रेम पूर्वक साथ-साथ खेलते हुए कौरवों एवं पांडवों से कथा प्रारम्भ होती है जिससे मन प्रसन्न होता है, किन्तु ज्यों-ज्यों कथा आगे बढ़ती है त्यों-त्यों हमारी व्याकुलता बढ़ती है और अंत में लाखों मनुष्यों का संहार तो मन को अत्यन्त दुःखी करता है । इस प्रकार रामायण का अंत सुखद और महाभारत का दुःखद है ।

पुरुषार्थ एवं कर्म के प्रेरक ग्रंथ—रामायण में बताया गया है कि राम ने रावण से सीता की पुनः प्राप्ति के लिए अथक पुरुषार्थ किया और अन्त में सफलता प्राप्त की । इस प्रकार रामायण हमको पुरुषार्थी बनने की प्रेरणा देती है, किन्तु महाभारत बताता है कि कर्म ही बलवान है । जो कर्म किए हैं वो भोगने ही पड़ते हैं । कर्म की प्रबलता के कारण महाभारत में दुर्योधन के पुरुषार्थ को असफलता मिली, कर्म के कारण ही विदुर का कौरव कुल को बचाने का पुरुषार्थ निष्फल हुआ, किन्तु राम का वन-गमन, भरत की राज्य की अस्वीकृति, सीता की शील रक्षा आदि पुरुषार्थ सफल हुए ।

अहंकार एवं काम की भयानकता—रामायण में रावण का अन्त उसकी कामवासना के कारण हुआ । इससे हमें बोध मिलता है कि हमको काम से दूर

रहना चाहिए वरना रावण जैसा हाल होगा। महाभारत में अहंकार की भयानकता का दिग्दर्शन होता है क्योंकि दुर्योधन अहंकार के कारण ही मरा। जैसी कामवासना की घातकता रामायण में बताई गई है, वैसी ही अहंकार की भयानकता महाभारत में है। एक ही मनुष्य दुर्योधन के कषाय भाव (क्रोध, मान, माया, लोभ) ने कितना विशाल नर-संहार किया, यह महाभारत भली प्रकार बताता है जिससे हमको बोध मिलता है कि हम क्रोध, मान, माया, लोभ से दूर रहें।

जैन मान्यता—जैन रामायण एवं जैन महाभारत के अनुसार दशरथ, राम, भरत, सीता, लक्ष्मण, बाली, मंदोदरी, इन्द्रजीत, मेघवाहन, कुम्भकरण, पांडु, कुन्ती, पाँचों पांडव, द्रौपदी, विदुर, भीष्म, बलदेव, श्री कृष्ण की रुक्मिणी आदि आठ पटरानियों ने अन्त में दीक्षा (संयम) अंगीकार कर अपना कल्याण किया। श्री कृष्ण के चचेरे भाई नेमीनाथ तो तीर्थंकर हुए। राजा दशरथ की राम के वनवास में जाने के आघात से मृत्यु, सीता का पृथ्वी में समाजाना, पाँचों पांडवों का हिमालय में विलीन होना इत्यादि कथानक जैन रामायण में नहीं हैं। श्री कृष्ण ने अन्त में तीर्थंकर श्री नेमीनाथ से बोध पाया। वे स्वयं तो दीक्षा न ले सके, किन्तु उन्होंने अपनी सभी रानियों को दीक्षा के लिए प्रेरित कर उन्हें दीक्षा दिलवाई। उनकी प्रजा में जो भी व्यक्ति दीक्षा लेता, उसकी दीक्षा का सारा व्यय वे स्वयं उठाते थे एवं दीक्षा लेने वालों के परिवार-जनों के भरण-पोषण (यदि वे स्वयं सम्पन्न न होते तो) का सारा व्यय भी श्री कृष्ण स्वयं करते थे। श्री कृष्ण महाराजा आगामी चौबीस तीर्थंकरों में से ग्यारहवें अमम नामक तीर्थंकर होंगे एवं मोक्ष पद प्राप्त कर सिद्ध भगवान् होंगे। श्री राम और महासती सीता तो मोक्ष पद प्राप्त कर चुके हैं और जन्म-मरण की क्रिया से सदा के लिए मुक्त हो चुके हैं।

उपसंहार—काम-राग से बनी रामायण और कषाय (क्रोध, मान, माया, लोभ) भावों से बना महाभारत संसार को शिक्षा देते हैं और कहते हैं कि हे मानव ! सांसारिक क्षणिक सुखों के लिए अपना मानव-जीवन नष्ट मत कर। मानव-जीवन का श्रेष्ठ उपयोग कर, अत्यन्त कठिनाई, पुरुषार्थ एवं पुण्योदय के कारण प्राप्त मानव-जीवन को सार्थक बना। मोक्ष प्राप्ति का लक्ष्य रखकर, मोक्ष का शाश्वत सुख प्राप्त कर ताकि इस असार संसार की दुःखमय चारों गतियों (देव, मनुष्य, तिर्यंच, नर्क) में जन्म ही न लेना पड़े और फलतः कभी मरना ही न पड़े। फिर न तो तुझे कोई दुःख होगा, न तुझे कोई पाप करना पड़ेगा और तुझे सदा-सदा के लिए अनन्त सुख और शांति (मोक्ष-पद पाने से) की प्राप्ति होगी।

—बी-६१, सेठी कॉलोनी, जयपुर

धारावाहिक उपन्यास [७]
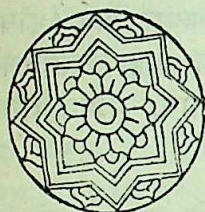
आत्म-दर्शन*

□ श्री धन्ना मुनि

इस सब के होते हुए भी आधिदैविक, आधिभौतिक और आध्यात्मिक त्रिविध ताप से तो कोई भी मुक्त नहीं था। इन त्रिविध तापों से कोई मुक्त होता भी तो कैसे? क्योंकि जब तक देह से सदा सर्वदा के लिये छुटकारा अथवा मुक्ति की प्राप्ति नहीं होती, तब तक कर्म-पाश से भी मुक्ति नहीं हो सकती, और जब तक कर्म-पाश से सदा सर्वदा के लिये मुक्ति प्राप्त नहीं हो जाती तब तक इस त्रिविध ताप से भी मुक्ति कैसे प्राप्त हो सकती है? इष्ट-वियोग, अनिष्ट-योग, व्याधि-वार्धक्य और अन्ततोगत्वा मृत्यु के घोर अन्धकार में व्यक्ति के विलुप्त होने के दुःख से सभी संतप्त थे, पीड़ित थे और थे दुःखी। परावलम्बी निस्पृह मानव को स्वावलम्बी, सक्रिय एवं ऐहिक सुखोपभोगों से सुखी एवं सम्पन्न बनाने के अनन्तर कुमार ऋषभदेव ने मानवता को त्रिविध ताप से भी मुक्ति देने हेतु चिन्तन करना प्रारम्भ किया।

यह दृश्यमान जगत् विनाशशील, क्षणभंगुर एवं इन्द्रजाल तुल्य असत्य है, और है जड़ चेतन के योग की लीला का चमत्कार। एक ओर चेतन सच्चिदानन्द स्वरूप है, तो दूसरी ओर जड़ चेतन से पूर्णतः विपरीत स्वभाव वाला, ज्ञान लव विहीन आनन्द से अछूता और परिवर्तनशील, क्षरणशील, गलनशील एवं विनाशशील। अपने से नितान्त भिन्न जड़ के साथ संबंध स्थापित कर—जड़ को अपना समझकर चेतन अनादि काल से अनन्तानुबंधी दारुण दुःख परम्परा का दैनीय पात्र बना है। अनेक प्रकार की दुःखद एवं भौतिक सुखद सामग्री होते हुए भी अन्ततोगत्वा दुःखों की खान, सुखाभासों का दास बना चेतन अनेक प्रकार की दुःखद योनियों में भटकता, रोता, बिलबिलाता, चिल्लाता चला आ रहा है। अनादि काल का यह क्रम वस्तुतः जब तक चेतन अपनी भूल को नहीं सुधारेगा, तब तक अनन्त काल पर्यन्त चलता ही रहेगा और इसमें पिलता रहेगा यह चेतन।

*मुनि श्री की डायरी से संकलित।

एक मात्र मानव जन्म प्राप्त करना ही चेतन के लिये सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सुयोग है। क्योंकि मानव जन्म प्राप्त करके ही चेतन इन अनादि काल से आ रहे त्रिविध संतापों को, दुःसह्य दारुण दुःखों को और इन सब के मूलभूत प्रमुख कारण कर्मबंध को नष्ट कर सकता है। सब प्रकार के दुःखों का सदासर्वदा के लिये अन्तकर शाश्वत सुख की प्राप्ति वस्तुतः एक मात्र मानव तन से ही प्राप्त की जा सकती है, मानवेतर अन्य किसी जीव योनि से नहीं। मानव की अपेक्षा देवयोनि भौतिक सुखों की दृष्टि से अत्यधिक सौभाग्यशाली व सौख्यशाली है किन्तु एक न एक दिन उन सुखों का भी अन्त अनिवार्य रूपेण अवश्यंभावी है। देव योनि की भांति भोग भूमि के यौगलिकों को भी सुख की प्राप्ति के लिये किसी प्रकार का श्रम नहीं करना पड़ता। प्रकृति प्रदत्त जीवनोपयोगी भौतिक सौख्य सामग्री के आश्रय अथवा आधार पर वे देवयोनि की अपेक्षा स्वल्प, किन्तु कर्मभूमि के मानव की अपेक्षा पर्याप्तरूपेण अधिक सुखपूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं, किन्तु भोग भूमि के प्रकृति प्रदत्त सुविधाओं के बल पर निर्भर मानव तन में कर्मबंध को क्षय करने की क्षमता नहीं होती। क्योंकि भोगयुग के मानव के मस्तिष्क में इन सांसारिक दुःखों के मूलभूत कारण कर्मों को नष्ट करने का संकल्प तो क्या विचार तक भी जीवन भर उत्पन्न नहीं होता।

भोग युग के मानव का जन्म वस्तुतः पूर्वोपार्जित पुण्य के सुफल के भोगोपभोग मात्र के लिये होता है। न वह अपने यौगलिक जन्म में अभिनव प्रभावकारिणी कर्म प्रकृतियों का उपार्जन ही कर सकता है और न पूर्वकृत अशुभ कर्मों के दलिकों को प्रनष्ट करने में ही प्रवृत्त हो सकता है। इसी कारण कर्मयुगीन कर्मभूमि में मानव जन्म प्राप्त करना वस्तुतः अपने आप में एक बड़ी ही महत्त्वपूर्ण उपलब्धि कही जा सकती है।

कुमार ऋषभदेव का चिंतन आगे की ओर बढ़ा और उन्होंने अपने समय के मानव के जीवन पर अपनी चिंतन धारा को केन्द्रित कर विचारना प्रारम्भ किया—"मेरे समय के भारत की धरा के ये मानव वस्तुतः भोग युग और कर्मयुग के संधिकाल की परिवर्तित परिस्थितियों के थपेड़ों से, अभाव-अभियोगजन्य कटु अनुभवों की आँच में पक कर श्रम के बल पर स्वावलम्बी बन अपने स्वयं के पैरों पर खड़े हुए हैं। जहाँ तक भौतिक सुख-सम्पत्ति, भोगोपभोग सामग्री का प्रश्न है, श्रम कार्य कौशल आदि से नितान्त अनभिज्ञ होते हुए भी इन भोगयुगीन भोले-भाले लोगों ने मेरे प्रति अटूट आस्था, अमिट श्रद्धा एवं प्रगाढ़ भक्ति प्रकट करते हुए मेरे निर्देशानुसार श्रम किया, अपना पसीना बहाया, और देखते-देखते समस्त आर्यावर्त को गगनचुम्बिनी अट्टालिकाओं से सुशोभित अतिसुरम्य, अतिविशाल हरे भरे उद्यानों, उपोद्यानों से मण्डित कर दिया। अपने अथक श्रम के बल पर मानो स्वर्ग ही उतार कर साकार रूप में रख दिया है। आज ये सब लोग अपने आपको

सुसम्पन्न, सुसमृद्ध एवं सभी भांति सुखी समझते हैं। अब उन्होंने अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ ली है और यह अनुभव करते हैं कि अब इन्हें कुछ भी करना शेष नहीं है। मुझमें अटूट आस्था रखने वाले इन भोले भावुक लोगों की इस भ्रांति को मिटाना मेरा कर्तव्य हो जाता है। इनकी यह भ्रांति किस प्रकार मिटाई जाए और अनन्त काल तक भयावह भवाटवी में ही निरन्तर भटकाते रहने वाले पथ का इनसे परित्याग करवाकर इन्हें किस प्रकार शाश्वत सुख की प्राप्ति के पथ पर अग्रसर किया जाय, इस संबंध में सर्व प्रथम सुपथ की खोज करनी होगी।

भोग युग एवं कर्मयुग की सन्धि के संक्रांति काल में यदि कर्म युग के अनुरूप श्रम एवं कलाकौशल का परिज्ञान इन लोगों को नहीं कराया जाता तो इनको बड़ी ही दुःखपूर्ण स्थिति का सामना करना पड़ता। ठीक इसी प्रकार यदि इन्हें ऐहिक जीवन से उत्पन्न त्रिविध ताप के संताप से मुक्ति के साथ शाश्वत सुख की प्राप्ति के उपाय नहीं बताये गये होते तो दिग्विमूढ़ जैसी दुरवस्था से त्रस्त मानवता चिंतामणि रत्न तुल्य मानव जन्म को प्राप्त करने के उपरान्त भी उससे कोई लाभ न उठा सकेगी।

रंगमंच पर वैक्रिय लब्धि के प्रताप से ऋषभकुमार के रूप में विचार मग्न आषाढ़भूति के अन्तर्मन से उद्भूत इस प्रकार के विचार मन्थन को सुनकर दर्शकों ने यही अनुभव किया मानो तृतीय आरक के अन्तिम चरण में अभिनिष्क्रमण से पूर्व प्रभु आदिनाथ स्वयमेव चिंतन मग्न हों। अपने विचार मन्थन से एक निष्कर्ष पर पहुँचते हुए ऋषभकुमार ने उस सत्पथ को खोज निकालने का दृढ़ संकल्प किया जिस पर अग्रसर होने से साधक सभी प्रकार के दुःखों का अन्त और शाश्वत सुख को प्राप्त कर सकता है।

सत्पथ को खोज निकालने का कार्य बड़ा दुःसाध्य है। इसके लिये पूर्णतः कटिबद्ध हो कर्म-क्षेत्र में उतरना होगा। सब प्रकार के सांसारिक बंधनों, राज्य, ऐश्वर्य, परिजन और पौरजनों का तथा स्वयं अपने शरीर तक का मोह-ममत्व त्याग कर सच्चे सुख की राह खोज निकालना होगा। इस दृढ़ संकल्प के साथ महाराज ऋषभ ने अपने अमात्यों, परिजनों, राजन्यवर्ग एवं पौरजनों को एकत्र कर अपने बड़े पुत्र भरत को राजसिंहासन पर अभिषिक्त किया। तदनन्तर बाहुबलि आदि अपने शेष ९९ पुत्रों को अन्यान्य विभिन्न राज्यों का अधीश्वर बनाकर एक वर्ष पर्यन्त नियमित रूप से प्रतिदिन दान देना प्रारम्भ किया। वर्ष पर्यन्त दान देने के अनन्तर महाराजा ऋषभ ने सब प्रकार के सांसारिक प्रपन्चों का त्याग कर अपने ४ हजार अनुगामियों के साथ अभिनिष्क्रमण कर अहिंसा, सत्य, असत्येय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इन पंच महाव्रतों को जीवन पर्यन्त

अंगीकार करते हुए श्रमण धर्म में प्रव्रजित हुए। श्रमण धर्म में प्रव्रजित होने के साथ ही भगवान ऋषभदेव मनःपर्यव ज्ञान के धारक भी बन गये। घोर तपश्चरण के साथ-साथ अपने आत्म-चिंतन रूपी आग्नेयास्त्र से कर्म समूह को ध्वस्त करना प्रारम्भ किया। मध्याह्नोत्तर काल में प्रभु प्रतिदिन भिक्षार्थ ग्राम अथवा नगर में भ्रमण करते।

रंगमंच पर आषाढ़भूति ने प्रभु के भिक्षाटन का दृश्य प्रस्तुत किया तो वहाँ उपस्थित सहस्रशः दर्शकों के नेत्रयुगलों से एक साथ गंगा-यमुना प्रवाहित हो उठी। अपने अनन्य उपकारी परम हितैषी एवं आराध्य शास्ता को अपने घर-प्रांगण में उपस्थित देख लोगों के हर्ष और आश्चर्य का पारावार न रहा। अनेक सद्गृहस्थ रत्नजटित अम्बावारि से सजे हस्तिरत्न उपस्थित कर प्रभु के चरण कमलों पर अपना उत्तमांग रखकर और अश्रुप्रवाह से प्रभु की पद-रज को पखारते हुए निवेदन करते—महाराज ! हम सब को देवोपम समृद्धि उपलब्ध करा, नाथ ! आप इस प्रकार नंगे पाँव किस लिए घूम रहे हैं ? यह हस्तिरत्न आप ही का प्रदान किया हुआ है। आप इस पर विराजिए और यथेच्छ विचरण कीजिये। कई सद्गृहस्थ अपनी सुखोपमा सुन्दर कन्या को षोडशालंकारों से अलंकृत कर निवेदन करते—हे स्वामिन् ! यह मेरी सर्वसुलक्षरण सम्पन्ना सुपुत्री एक आदर्श अनुचरी के रूप में आपकी सेवा में अहर्निश तत्पर रहने के लिए समुद्यत है। इसे स्वीकार कीजिए। कोई गृहस्थ सुवर्ण पात्रों में रत्नराशियाँ रख प्रभु से अनुनय विनयपूर्वक अभ्यर्थना-प्रार्थना करता–भगवन् ! ये अमूल्य रत्नराशि ग्रहण कर दास को कृतार्थ कीजिये। प्रभु कुछ लेने की बात तो दूर, बिना कुछ कहे आगे की ओर बढ़ जाते।

रंगमंच पर आषाढ़भूति ने इस प्रकार का दृश्य उपस्थित किया कि मध्याह्नोत्तर काल में भगवान ऋषभदेव भिक्षार्थ एक घर से दूसरे घर की ओर भ्रमण कर रहे हैं। उस समय अनेक सद्गृहस्थ प्रभु के समक्ष उपस्थित हुए और प्रभु को साष्टांग प्रणाम करते हुए गिड़गिड़ाकर कहने लगे—"हे नाथ ! आर्य धरा के निवासियों के उदर की अग्नि–ज्वालाओं को शान्त कर उन्हें देवोपमैश्वर्य प्रदान करने वाले आप एकाकी मौन धारण किये हुए पाणिपात्र और दिगम्बर वेश में इधर से उधर और उधर से इधर किस कारण भ्रमण कर रहे हैं ? अपनी प्रजा को सभी प्रकार की समृद्धियों से परिपूर्ण करने वाले आपको किस वस्तु की कमी है ? हे देव ! आप कुछ कहें कि आप क्या चाहते हैं ? हम जड़मति हैं, बिना बताये आपके अन्तर्मन की बात को नहीं समझ सकते। नाथ ! आपका इस प्रकार नंगे पाँव एकाकी इधर-उधर घूमना हम से नहीं देखा जाता। नाथ कृपा कर आपके दास की झोंपड़ी में पदार्पण कर इस झोंपड़ी को पवित्र और इस दास को कृतकृत्य कीजिए। तैलाभ्यंगादि के अनन्तर हम आपको स्नान करवाकर

उत्तमोत्तम कोशिय परिधानों से अलंकृत करते हैं। कृपा कीजिए स्वामिन! थोड़ी देर शयन कक्ष में सुकोमल पर्यंक पर विश्राम कीजिये।

इन सब प्रार्थनाओं पर बिना किसी प्रकार की प्रतिक्रिया की अभिव्यक्ति के प्रभु आगे बढ़ जाते। यह सब कुछ देख कर हताश-निराश वे लोग फूट-फूट कर रोने लगते और इनके हृदयद्रावी करुणक्रंदन को, अभिनय को, मंच पर देखकर सम्पूर्ण आबालवृद्ध दर्शक समूह भी फूट-फूट कर रोने लगता।

जब भी पट-परिवर्तन होता, सहस्रों-सहस्र कण्ठों से समवेत स्वरों में यही ध्वनि मुखरित हो उठती – आषाढ़भूति हे महान् नाटककार! इस नयनाभिराम मनोहर दृश्य को निमेषार्थमात्र के लिये भी हमारे नयनों से ओझल मत रखो।

इस प्रकार एक वर्ष से भी अधिक समय तक आदि महातपस्वी ऋषि ऋषभदेव का दिवस के तृतीय प्रहर में भिक्षार्थ विभिन्न नगरों, विभिन्न ग्रामों में भ्रमण होता रहा। किन्तु श्रमणचर्या और धर्म तत्त्व से नितान्त अनभिज्ञ कर्म युग के आदि मानवों में से कोई भी यह कल्पना तक नहीं कर सका कि सारी मानवता को अन्न उपलब्ध कराने वाला अशन, पान आदि उपलब्ध कराने वाला अन्नदाता उनका आराध्य नायक भोजन के लिये घर-घर, द्वार-द्वार पर क्यों अटन कर रहा है? इस कारण किसी भी गृहस्थ ने अपने आँगन में आये हुये आदि योगीश्वर को अशन-पान ग्रहण करने की अभ्यर्थना नहीं की। पूरे साढ़े तेरह मास तक अन्न-जल मात्र भी प्रभु ऋषभ को प्राप्त नहीं हुआ। इस घोर तपश्चरण के दृश्य को रंगमंच पर देखकर दर्शकों ने दीर्घनिश्वास से वायुमण्डल को उष्ण करने के साथ-साथ अश्रुधाराओं से धरातल को आर्द्र बना डाला। तेरह मास और १५ दिन से निर्जल-निराहार रहने के परिणामस्वरूप प्रभु ऋषभदेव अतीव कृश हो गये थे। मुख का तेजोमण्डल तो तपश्चरण के कारण शत गुणित होकर दैदीप्यमान हो रहा था, किन्तु देहयष्टि शुष्क एवं दुर्बल दृष्टिगोचर हो रही थी। इसी कारण सभी दर्शक इस दृश्य को वास्तविक समझकर प्रकम्पित हो उठे। प्रभु की इस प्रकार की ह्रासोन्मुख शारीरिक स्थिति देखकर, इसके कारण को खोजने का राजा, राजन्य और श्रेष्ठि आदि सभी प्रजाजनों ने अपनी ओर से पूर्ण प्रयास किया, पर इसका कोई कारण उनकी समझ में नहीं आया। अतः आबाल-वृद्ध नर-नारी शोक सागर में निमग्न हो गये। [क्रमशः]

प्रकृति शाकाहारी है।

◇ सं० श्रीमती हीरामणि छाबड़ा

मनुष्य + शाकाहारी जानवर

जैसे—गाय, घोड़ा, हाथी आदि

१. पानी जीभ निकालकर नहीं पीते हैं, बल्कि मुँह को पानी में डुबोकर होठों की सहायता से पीते हैं।

२. दांत तथा नाखून सपाट होते हैं।

३. पाचन मुंह से शुरू होता है।

४. पेट की आंतें लम्बी होती हैं।

५. एक समय में एक ही बच्चा पैदा करता है (कुछ अपवादों को छोड़कर)

६. शरीर से पसीना निकलता है।

७. बच्चे पैदा होते समय आँखें खोलकर रखते हैं।

८. आँखें ज्यादा दूर नहीं दौड़तीं। रात्रि में ज्यादा नहीं दिखाई देता है। घ्राण इन्द्रियां भी ज्यादा तेज नहीं होतीं।

९. हड्डियां अधिक मजबूत होती हैं, घाव जल्दी भरते हैं।

१०. जबड़ा भोजन को अच्छी तरह चबाने के लिये ऊपर-नीचे, दाँये-बाँये चारों तरफ घूम सकता है।

मांसाहारी जानवर

जैसे—शेर, कुत्ता, बिल्ली आदि

१. पानी जीभ की सहायता से चाट-चाट कर पीते हैं।

२. दाँत तथा नाखून नुकीले होते हैं, शिकार पकड़ने में सहायता मिलती है।

३. पाचन आमाशय से शुरू होता है।

४. पेट की आंतें छोटी होती हैं ताकि मांस उसमें जल्दी पच जाये और सड़ने के पहले ही बाहर निकाला जा सके।

५. एक समय में एक से ज्यादा बच्चे पैदा करते हैं।

६. इनके शरीर से पसीना नहीं निकलता है। पसीना जीभ और पैरों की गद्दियों से आता है।

७. बच्चे पैदा होते समय आँखें बन्द किये रहते हैं।

८. आँखें ज्यादा तेज और रात में दिखने लायक होती हैं, क्योंकि शिकार रात्रि में पकड़ने की जरूरत होती है। घ्राण शक्ति तेज होती है।

९. हड्डियाँ मजबूत नहीं होती हैं। घाव जल्दी नहीं भरते।

१०. जबड़ा मांस के छोटे-मोटे टुकड़ों को उदरस्थ करने के लिये सिर्फ ऊपर नीचे चलता है।

११. मांस के साथ-साथ हड्डियां नहीं खा सकते ।
१२. बच्चे पैदा होते ही मांस नहीं खा सकते । प्राकृतिक आहार दो, तीन साल तक दूध और अन्न ही है ।
१३. स्वभाव से और चेहरे के भावों से शान्त प्रकृति के होते हैं ।
१४. मांस को कच्चा नहीं खा सकते । कच्चे मांस को देखकर खुश नहीं होते ।
१५. प्रायः दीर्घजीवी होते हैं ।
१६. शाकाहार से चित्तवृत्तियां शांत एवं मन प्रसन्न रहता है, व्यवहार में शालीनता आती है, साथ ही शरीर भी स्वस्थ, सुडौल एवं चुस्त बना रहता है ।

११. मांस के साथ-साथ हड्डियाँ भी खा सकते हैं ।
१२. बच्चे पैदा होते ही मांस खा सकते हैं ।
१३. स्वभाव से और चेहरे व आँखों से हिंसक प्रकृति के होते हैं ।
१४. मांस कच्चा खा सकते हैं । कच्चे मांस को देखकर उल्लास से भर जाते हैं ।
१५. प्रायः अल्पायु होते हैं ।
१६. मांसाहार तामसिक है । अतः यह नैतिक पतन का कारण भी बनता है । इनमें हिंसक प्रवृत्ति ज्यादा बलवती है ।

[साभार—'शाकाहार जागृति']

□ □ □

विकास कर सकें ।

□ एम. उषा रानी

काँटों को सहकर
फूलों को मह सकें,

झोपड़ियों में रहकर
महलों को ले सकें ।

दीपक की तरह डटकर,
देश के लिए मर मिटकर,

इतिहास बन सकें ।
विकास कर सकें ।।

**
**

सामयिक :

समाज-प्रदूषण

□ श्री धनपतसिंह मेहता

आज चतुर्दिक प्रदूषण की चर्चा सुनाई दे रही है। वायु-प्रदूषण, जल-प्रदूषण, ध्वनि-प्रदूषण एवं पर्यावरण-प्रदूषण। सब कुछ जैसे दूषित ही दूषित। शुद्धता का कहीं नाम निशान ही नहीं। जीवन का ओर–छोर उससे परिव्याप्त है। लगता है जैसे प्रदूषण के चक्र-व्यूह में फँसकर जीवन छटपटा रहा है। उससे त्राण का, मुक्ति का कोई उपाय दृष्टिगोचर नहीं हो रहा है।

पर एक प्रदूषण उससे भी विकट एवं आत्मघाती है और वह है हमारा समाज-प्रदूषण – समाज के आचार का प्रदूषण, समाज के विचार का प्रदूषण। इसके फलस्वरूप समग्र इन्सानी जीवन विकृत एवं कुरूप हो गया है, भद्दा, वीभत्स एवं घिनौना। उसमें कहीं शुद्धता एवं सात्विकता के दर्शन ही नहीं होते। जीवन की गरिमा एवं गौरव क्षत-विक्षत हो गया है। उसका शील एवं शालीनता नष्ट-भ्रष्ट है। उसकी सुषमा एवं सौन्दर्य का जनाजा निकल चुका है। मानव जीवन की बर्बादी की यह करुण कहानी है, अटपटा आलेख है।

प्रश्न यह उछलता है कि इस समाज व्यापी प्रदूषण का, इस विकृति का, इस बर्बादी का कारण क्या है? क्यों हमारे सामाजिक ढाँचे की चूलें हिल रही हैं? वह क्यों जीर्ण-जर्जर हो रहा है? वह क्यों अपनी ताजगी, अपनी श्री सुषमा खो रहा है? उत्तर स्पष्ट है। उसका एकमात्र कारण है हमारी भोगवाही मानसिकता। आज भयंकर भोग की संस्कृति (या विकृति?) पनप रही है। आज के अर्थ प्रधान युग में जीवन का एकमात्र लक्ष्य है—'येनकेन प्रकारेण' अर्थोपार्जन कर विलास के विविध साधन जुटाना, उसका अम्बार लगा देना जिससे लगे कि हम विलास के महासागर में अहर्निश गोते लगाते हुए असीम, अनन्त इन्द्रिय सुख का अनुभव कर रहे हैं, जिससे लगे कि जिन्दगी सचमुच फूलों की सेज है जहाँ कोमलता ही कोमलता है, सुख ही सुख है। दुःख की, कंटीले दर्द की उसमें कहीं लेश मात्र भी अनुभूति नहीं, जिससे लगे कि जीवन एक विस्तीर्ण नन्दन वन है जहाँ केवल सुरभित, मादक बयार के हल्के झोंकों का सुखद स्पर्श है एवं रंग-बिरंगे फूलों की बहार ही बहार।

ऐसा है हमारा आज का कल्पना-लोक, राग-रंग, हास-परिहास, नृत्य-

संगीत की मधुरिमा से ओत-प्रोत। बस छक कर मजा लेने की एक ही धुन सवार है आज के युग में। यही जीवन का एकमात्र साध्य है। उसकी आपूर्ति के साधन कुछ भी हों, यह तथ्य गौण है। पर छक कर मजा लेने के लिये पैसे चाहिए। उसके अभाव में विलास के विपुल साधन उपलब्ध नहीं हो सकते। कार, टी. वी., फ्रीज, विडियो, कूलर एवं अन्यान्य विविध विलास के उपकरणों से सजा शानदार बंगला, नौकर-चाकर। तभी तो इन्द्रिय सुख का मजा लिया जा सकता है। पर विलास के इन विपुल साधनों के लिए उतनी ही विपुल धनराशि चाहिए। वह परिश्रम एवं ईमानदारी से तो कमाई नहीं जा सकती। उसके लिए ओछे हथकंडे अपनाना अनिवार्य हो जाता है। शार्टकट के रास्ते चलना पड़ता है जिससे पलक झपकते ही पैसा बरस पड़े।

यह समाज-प्रदूषण का महा रोग है। बिना परिश्रम के, गलत तरीके अपनाते हुए छल से, बल से, कौशल से, अनीति से पैसा बटोरना आज के इन्सान का मनोरोग है। वह पागल होकर पैसे के पीछे भाग रहा है, वैभव की अपनी मोहक दुनिया बनाने-बसाने के लिए। इस घातक मनोरोग के फलस्वरूप सारे जीवन-मूल्य लड़खड़ा कर दम तोड़ रहे हैं। सत्य, न्याय, निष्ठा एवं ईमानदारी की अन्त्येष्टि हो रही है। जिधर देखो उधर उल्टी गंगा बह रही है। जीवन के पावन आदर्श धूलि-धूंसरित हो रहे हैं। सदाचार की जगह दुराचार-अनाचार, नीति की जगह अनीति, पुण्य की जगह पाप, धर्म की जगह अधर्म का तांडव हो रहा है। जो जितना कुटिल और पाप की कमाई में निपुण, निष्णात है, वह बाजी मार ले जाता है और देखते ही देखते लक्ष्मी का लाड़ला बन जाता है।

आज समाज में शोषण का भीषण चक्र चल रहा है। जो व्यक्ति जितना बुद्धिवादी एवं शक्ति सम्पन्न है वह उतना ही धूर्त और बेरहम होकर गरीब एवं असहाय लोगों को लूट रहा है। उनको अपना गुलाम समझते हुए और उनसे कोल्हू के बैल की तरह काम लेते हुए बदले में उन्हें देता क्या है? उनका पारिश्रमिक इतना कम होता है कि उससे उनके एवं उनके परिवार का गुजारा कठिन होता है। न तन ढक सकते हैं, न पूरा पेट ही भर सकते हैं और न किसी छत के नीचे अपना सिर ही छिपा सकते हैं। जिन्दगी उनके लिए भार स्वरूप होती है। वह (जिन्दगी) जैसे उनके लिए मौत की अमानत हो जो कभी भी ली जा सकती है। रोते-सिसकते अपने अस्तित्व को बनाए रखने के लिए रात-दिन पिसते रहना जैसे उनकी नियति बन गई है।

इधर शोषण का खूनी चक्र चलता है और उधर लक्ष्मी के लाड़ले उन गरीब मजदूरों के श्रमबल पर होने वाले उत्पादन से ढेरों मुनाफा कमाकर

अपनी तिजोरियाँ भरते जाते हैं और सुरा-सुन्दरी तथा अन्यान्य रूप में छक कर जिन्दगी के मजे लूटते हैं। जहाँ उस श्रमिक की जिन्दगी में हर समय पतझड़ का मौसम होता है, वहाँ धनपतियों के जीवन में सदा-सर्वदा बसन्त की बहार ही बहार है।

उपर्युक्त पूँजीवादी व्यवस्था में जहाँ लाखों-करोड़ों इन्सान गरीबी की जिन्दगी जीने को विवश हैं वहाँ छल-छद्म से, कुटिलता और धूर्तता से चन्द व्यक्तियों के पास अकूट धनराशि का संग्रह-परिग्रह हो जाता है जो लाखों-करोड़ों ही नहीं, अरबों की सीमा को छू लेता है। पूँजीवाद का यह विष-चक्र अविराम गति से घूमता रहता है जिसके फलस्वरूप गरीब अधिक गरीब हो जाता है और अमीर अधिक अमीर। यह स्थिति वैसी ही है जैसे छोटी-छोटी जल धाराएँ बहकर एक बड़े जलाशय को भरती जाती हैं और स्वयं सूखती जाती हैं। इस प्रकार समाज के कतिपय धनपति ऐसे जलाशयों के जीवन्त प्रतीक होते हैं जो अपने पास अपार धनराशि जमाकर करोड़ों इन्सानों को रोटी, कपड़े को तरसने और बिलबिलाने को बाध्य कर देते हैं।

कैसी है यह हमारी सामाजिक संरचना! परिश्रम किसी का और पैसा किसी के पास। यही तो है समाज-प्रदूषण, सड़ी-गली, समाज-व्यवस्था जो इन्सानी जीवन को खंड-खंड कर बिखेर रही है। असली इन्सान के तो कहीं दर्शन ही नहीं होते। वह तो जैसे तिरोहित हो गया है। आज का आदमी बड़ा कुटिल, स्वार्थी और दम्भी हो गया है। चारों ओर शैतानियत का नंगा नाच हो रहा है। उधर पश्चिम की आँधी ने सब कुछ उजाड़ कर रख दिया है। उसके फलस्वरूप हमारी समग्र जीवन-शैली ही बदल गई है, पश्चिम हमारे लिए आदर्श बन गया है, उसकी आत्म-केन्द्रित, अमर्यादित, छिछोरी जीवन-शैली जैसे हमारे लिए वर्तमान युग की मनु स्मृति बन गई है। उसके अन्ध प्रवाह में सनातन एवं उदात्त भारतीय जीवन-मूल्य तेजी से तिरोहित होते जा रहे हैं। बड़ी वितृष्णा हो गई है हमें भारतीय जीवन पद्धति से। पश्चिम का सब कुछ अच्छा है, उत्कृष्ट है—खाना-पीना, पहनना, ओढ़ना, रहन-सहन, आचार-विचार। उसे अपना कर हम गर्व से फूले नहीं समाते और अपने आपको धन्य अनुभव करते हैं क्योंकि उससे हमें कुलीनता का, भद्रता एवं ऊँचे सामाजिक स्तर का बोध होता है और परम्परागत भारतीय रहने में हीनता और लघुता का। यह हमारे सामाजिक जीवन की कैसी विडम्बना है?

तो यह है हमारे समाज-प्रदूषण का दीर्घ व्यापी आयाम। कहाँ तक कहें। सब कुछ जैसे पश्चिम के रंग में रंग गया है। पश्चिम से आयातित आचार-विचार के साथ वहाँ की हर वस्तु हमें जीवन की गरिमा का, उच्चता का

आभास देती है और भारतीय होना हीनता का परिचायक हो गया है। यह समाज-प्रदूषण की चरम स्थिति है जिससे हमारी चिर-पुरातन एवं महान् सभ्यता एवं संस्कृति को गंभीर खतरा उत्पन्न हो गया है। एक खुली चुनौती है हमारे समक्ष कि हम अपने उदात्त एवं पावन जीवन-मूल्यों की पश्चिम के घातक प्रहार से रक्षा करें। इस हेतु एक प्रबल क्रांति के द्वारा सांस्कृतिक पुनर्जागरण की, रिनेशा (Renuiance) की महती आवश्यकता है। तभी हमारे पथ-भ्रष्ट-राष्ट्र की जीवन-धारा फिर से सही रास्ते पर आ सकती है और हम अपनी खोई हुई अस्मिता को पुनः प्राप्त कर सकते हैं।

—राम झरोखा, प्लाट ७९३, केनरा बैंक की गली,
चौपासनी रोड, जोधपुर

प्रेरक प्रसंग :

दंड

☐ प्रेमलता

शिवाजी के गुरु समर्थ रामदास एक बार शिवाजी से मिलने गए। साथ में उनके चेले भी थे। रास्ते में ईख का खेत आया। चेलों का मन नहीं माना और वे ईख तोड़-तोड़कर खाने लगे।

संयोग से उसी समय खेत का रखवाला आ गया। देखते ही चेले तो भाग गए। रामदास वहीं बैठे रहे। रखवाले ने आगा देखा न पीछा, और रामदास को मारना शुरू कर दिया। रामदास चुपचाप मार सहते रहे।

अंततः जब खेत का रखवाला थक गया तो उसका हाथ रुक गया। रामदास उठकर चल दिए। चेले भी उनके साथ हो गए। वे शिवाजी के पास पहुँच गए।

जब शिवाजी ने रामदास की घायल पीठ देखी तो बहुत परेशान हुए। उन्होंने उनके चेलों से पूछा। चेलों ने सारा हाल बता दिया। शिवाजी ने फौरन उस रखवाले को बुलवाया। उसके आने पर महाराज शिवाजी ने रामदास से पूछा—"गुरुजी, इसे क्या दंड दिया जाए?"

समर्थ रामदास का जवाब था—"राजन्, यदि आप दंड देना ही चाहते हैं तो वह ईख का खेत ही इसे दे दो।"

शिवाजी रामदास का जवाब सुन स्तंभित रह गए। अंत में, उन्होंने उस रखवाले को ईख का वह खेत दे दिया।

—वार्ड नं. ५, मुक्ति मार्ग, भवानीमंडी
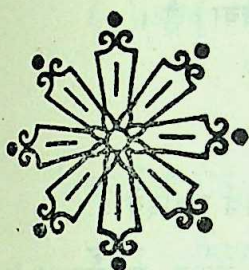
सेवा*

प्रस्तोता—**श्री पी० एम० चौरड़िया**

[१]

(१) **प्रश्न**—सेवा क्या है ?

उत्तर—प्रतिफल की चाह किये बिना दूसरों के हित के लिए कार्य करना या सहयोग देना ही सेवा हैं।

(२) **प्रश्न**—सेवा का उद्गम स्थल क्या है ?

उत्तर—अन्तःकरण, हृदय।

(३) **प्रश्न**—परमात्मा की सेवा का वास्तविक अर्थ क्या हैं ?

उत्तर—परमात्मा की सेवा का अर्थ है—स्वयं की आत्मा की सेवा, उसका परिष्कार और परिमार्जन।

[२]

(१) **प्रश्न**—सेवा को तप क्यों कहा गया है ?

उत्तर—सेवा में अपनी इच्छाओं पर संयम रखना पड़ता है। सेवा सुश्रूषा में अपने वैयक्तिक लाभ, स्वार्थ एवं सुखों का परित्याग करना होता है। अपनी इच्छाओं का, आसक्ति का निरोध ही तप है—'इच्छा निरोधस्तप' : अतः सेवा को तप कहा गया है।

(२) **प्रश्न**—जैन शास्त्रों में सेवा के लिए कौनसा शब्द मिलता है ?

उत्तर—वैयावृत्य।

(३) **प्रश्न**—वैयावृत्य तप क्या है ?

*श्री एस. एस. जैन युवक संघ, मद्रास द्वारा आयोजित कार्यक्रम जिसमें स्वाध्याय संघ, युवक संघ एवं बालिका मण्डल ने भाग लिया। —सम्पादक

उत्तर—जिस तप से अपनी विशिष्ट इच्छाओं, कामनाओं, महत्त्वाकांक्षाओं, स्वार्थों, कषायों, इन्द्रिय-विषयोपभोगों और दुष्वृत्तियों के विशेष रूप से लौटने या हटने की भावना या क्रिया हो, वह वैयावृत्य (सेवा) है।

[३]

(१) **प्रश्न**—'परस्परोपग्रहो जीवानाम्।' इसका अर्थ बताइये ?

उत्तर—एक दूसरे की सहायता और सेवा करना चेतन का स्वभाव है, धर्म है।

(२) **प्रश्न**—'जो करेइ सो पसंसिज्जइ।'—आवश्यक चूर्णि इसका अर्थ कीजिए।

उत्तर—जो सेवा करता है, वह प्रशंसा पाता है।

(३) **प्रश्न**—'जे गिलाणं पडियरइ से धन्ने।—भगवान् महावीर इन शब्दों का क्या तात्पर्य है ?

उत्तर—जो व्यक्ति ग्लान, रोगी, पीड़ित एवं दुःख से संतप्त व्यक्ति की समर्पित मन से सेवा करता है, मैं उसे साधुवाद देता हूँ।

[४ [

(१) **प्रश्न**—देवता सेवा करने की स्थिति में क्यों नहीं हैं ?

उत्तर—देवलोक में न तो परिवार है और न समाज ही। अतः सेवा सम्भव नहीं है।

(२) **प्रश्न**—मनुष्य सेवा करने के लिये कब उद्यत होता है ?

उत्तर—जब मनुष्य में दया और करुणा जागती है तभी वह दूसरों की सेवा करने के लिए उद्यत होता है।

(३) **प्रश्न**—सेवा कार्य में सफल होने के लिए कौन-कौन से गुणों का होना आवश्यक है ?

उत्तर—धैर्य, गाम्भीर्य, निष्कांक्षता, निष्पृहता, निस्वार्थता, निरहंकारता, आदि गुण सेवा कार्य में सफल होने के लिए अपेक्षित हैं।

[५]

(१) **प्रश्न** – जन सेवा ते प्रभुनी सेवा, एह समझ बिसराय नहीं ।
ऊँच-नीचनो भेद प्रभुना, मारगड़ामां थाय नहीं ।।

—संत हरिदास

उपर्युक्त दोहे में कवि ने सेवा के विषय में क्या भाव व्यक्त किये हैं ?

उत्तर—समाज के दलित, असहाय, कमजोर एवं रोगी व्यक्तियों की सेवा करना ही वास्तव में प्रभु की सेवा करना है। यही हमारा अटल एवं दृढ़ निश्चय होना चाहिए। निःस्वार्थ भाव से सेवा करना प्रभु की सेवा करना है। ऐसा करने में ऊँच-नीच, गरीब-अमीर आदि का हमें कभी भी विचार नहीं करना चाहिए।

(२) **प्रश्न**—तुलसी या संसार में, सबसे मिलिए धाय ।
ना जाने किस भेष में, नारायण मिल जाय ।।

—संत तुलसीदास

उपर्युक्त दोहे में तुलसीदास ने क्या कहा है ?

उत्तर—तुलसीदास ने इस दोहे में हमें सबसे प्रेम एवं वात्सल्य से रहने की प्रेरणा दी है। इस संसार में जो भी तुम्हारे सम्पर्क में आए, उससे प्यार से मिलो। क्योंकि न जाने किस रूप में हमें परमात्मा के दर्शन हो जाएँ।

(३) **प्रश्न**— अगर है शौक मिलने का,
तो हरदम लौ लगाता जा ।
जलाकर खुदनुमाई को,
भसम तन पर लगाता जा ।।

न मर भूखा, न रख रोजा,
न जा मस्जिद, न कर सिजदा ।
वजू का तोड़ दे कूजा,
शराबे शौक पीता जा ।।

—एक मुसलमान कवि

उपर्युक्त कविता की पंक्तियों का अर्थ बताइये ।

उत्तर—अगर तुझे ईश्वर से मिलने की तमन्ना है तो प्रतिपल उसके ध्यान में रह, उसकी भक्ति में ऐसा तल्लीन होजा कि अपने आपको भूल सके, अपने आपको जलाकर खाक करदे और उसकी भस्म अपने तन पर लगादे। तुझे भूखे

मरने की तथा रोजे रखने की ग्रावश्यकता नहीं है, न ही मस्जिद में जाकर सिजदे करने की जरूरत है। तू तो ईश्वर की, खुदा की भक्ति रूपी शराब पीता रह तथा उसी में छका रह जिससे बेड़ा पार होगा।

[६]

(१) **प्रश्न**—'सेवा करे सो मेवा पाय।'

यह कहावत किस प्रकार सत्य है ?

उत्तर—जिसकी सेवा की जाती है उसका भला तो होता ही है पर जो सेवा करता है, उसका भी भला होता है। इसके ग्रलावा सेवा करने से यश ग्रौर कीर्ति मिलती है। क्या ये सब मेवा मिलने से कम है ?

(२) **प्रश्न**—'ग्रतिथि देवो भव।'

इन शब्दों का ग्राशय क्या है ?

उत्तर—ग्रतिथि को देवता की तरह पूजो, उसका स्वागत-सत्कार करो।

(३) **प्रश्न**—'माता-पित्रोश्च पूजक।' इसका ग्रर्थ क्या है ?

उत्तर—सद्‌गृहस्थ ग्रपने माता-पिता की भक्ति ग्रौर सेवा करता है।

[७]

(१) **प्रश्न**—परोपकार में स्वोपकार छिपा हुग्रा है।' इस कथन की पुष्टि कीजिए।

उत्तर—'परोपकार' तब ही संभव होता है जब मानव ग्रपने स्वार्थों से ऊपर उठता है। इससे मैत्री ग्रौर करुणा की भावना का विकास होता है, जीवन में सद्‌गुणों की वृद्धि होती है, पुण्य का संचय होता है तथा संवर-निर्जरा होती है ग्रतः स्पष्ट है कि परोपकार से ग्रपना उपकार होता है।

(२) **प्रश्न**—श्रावक के बारह व्रतों में बारहवाँ व्रत 'ग्रतिथि संविभाग' व्रत है। इस व्रत में श्रावक क्या करता है ?

उत्तर—श्रावक प्रतिदिन यह भावना करता है कि मेरे भोजन में से कोई साधु त्यागी, ग्रतिथि ग्राकर संविभाग कुछ ग्रंश ग्रहण करे तो मैं धन्य हो जाऊँ।

(३) **प्रश्न**—सेवा का भावात्मक पक्ष क्या है ?

उत्तर—अनुकम्पा, करुणा, वात्सल्य, अहिंसा, आदि। इनका फल संवर और निर्जरा रूप मिलता है अर्थात् कर्मक्षय होते हैं।

[८]

(१) **प्रश्न**—'वेयावच्चेणं तित्थपर नामगोयंकम्मं निबंधेइ।'

अर्थ—आचार्यादि की वैयावृत्य करने से जीव तीर्थंकर नाम गौत्र का उपार्जन करता है।

उपर्युक्त वाणी किस शास्त्र से ली गई है ?

उत्तर—उत्तराध्ययन सूत्र २९/३

(२) **प्रश्न**—'समाहिकारएणं तमेव समाहिं पडिलब्भई।'

अर्थ—जो दूसरों के सुख एवं कल्याण का प्रयत्न करता है, वह स्वयं भी सुख एवं कल्याण को प्राप्त होता है।

उपर्युक्त आगम की वाणी कहाँ से ली गई है ?

उत्तर—भगवती सूत्र ७/१।

(३) **प्रश्न**—'सुस्सूसए आयरि अप्पमत्तो।'

अर्थ—शिष्य अप्रमादी होता हुआ आचार्य की सेवा-भक्ति करे।

उपर्युक्त वाणी किस आगम की है ?

उत्तर—दशवैकालिक सूत्र ९/१७।

[९]

(१) **प्रश्न**—स्वार्थी व्यक्ति में सेवा का अभाव क्यों रहता है ?

उत्तर—स्वार्थी व्यक्ति स्व की सुखोपलब्धि का ही ध्यान रखता है। स्व-सुख हेतु अन्य व्यक्ति व प्राणियों के दुःख-दर्द की वह परवाह नहीं करता। अतः स्वार्थी व्यक्ति में करुणा भाव नहीं होता। करुणा के बिना सेवा सम्भव नहीं है। यही कारण है कि स्वार्थी व्यक्ति में सेवा का अभाव रहता है।

(२) **प्रश्न**—सेवा का क्रियात्मक पक्ष क्या है ?

उत्तर—अन्न-जल, वस्त्र, पात्र, शिक्षा, चिकित्सा आदि से किसी को शांति पहुँचाना। इससे पुण्य कर्म का बंध होता है।

(३) **प्रश्न**—सन्त और सती वर्ग किनकी सेवा में तत्पर रहते हैं ?

उत्तर—संत और सती वर्ग अपने संकल्पों, प्रतिज्ञाओं एवं आदर्शों को सुरक्षित रखते हुए अपने से जितनी चतुर्विध संघ की, वीतराग देवों की वाणी की और प्रभु महावीर के शासन की सेवा बनती है, उस सेवा में तत्परता रखते हैं।

[१०]

(१) **प्रश्न**—चाहे कुटी अति घने वन में बनावैं,
चाहे बिना नमक, कुत्सित अन्न खावैं।
चाहे कभी नर नये पर भी न पावैं,
सेवा प्रभो! पर न तू पर की करावैं।

उपर्युक्त पद्य के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी।

(२) **प्रश्न**—सेवा से सब मल गल जाते,
नयी शक्ति, नव तेज निखरता।
आत्म-गुणों का सिंचन होता,
दुःख दरदों का जाल विदरता।

सेवा से बनते परमातम,
दुर्लभ नर जीवन का सार।
सेवा आत्मा का विस्तार॥

उपर्युक्त गीतिका के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—डॉ० नरेन्द्र भानावत।

(३) **प्रश्न**—क्या सेवा और पद का साथ-साथ होना आवश्यक है ?

उत्तर—सच्ची सेवा निःस्वार्थ भाव से की जाती है। इसका पद के साथ कोई सम्बन्ध नहीं है। सेवा का सम्बन्ध तो भावना से होता है और भावना है तो किसी भी पद के माध्यम से या बिना पद के भी भरपूर सेवा की जा सकती है।

[११]

(१) प्रश्न—सम्यग्दर्शन के आठ अंगों में कौन-कौन से चार अंग व्यक्ति को समाज से जोड़ते हैं ?

उत्तर—(१) निर्विचिकित्सा (२) उपगूहन
(३) वात्सल्य (४) प्रभावना

(२) प्रश्न—'सच्ची सेवा मां की तरह होती है।'

यह कथन किस प्रकार सत्य है ?

उत्तर—जिस तरह माँ अपने बच्चे की सेवा करती है, कोई इसका ढिंढोरा नहीं पीटती और न ही प्रदर्शन करती है। सेवा के बदले कोई भेंट अथवा उपहार, वेतन आदि लेना तो दूर, उसकी कामना भी नहीं करती। उसी प्रकार सच्चे सेवक को सेवा करनी चाहिए। उसे अपना कर्तव्य निःस्वार्थ भाव से करते रहना चाहिए एवं बदले में किसी प्रकार फलाकांक्षा व नामना-कामना नहीं करना चाहिए।

(३) प्रश्न—'मैं आत्म-दर्शन के लिए भटकता फिरा, पर मुझे आत्म-दर्शन न हुआ। भगवान की खोज करने न जाने कहाँ-कहाँ गया पर भगवान नहीं मिला। तब आनन्दवन में कुष्ठ रोगियों को बसाकर मानव-सेवा में जुट गया और मुझे दोनों ही मिल गये। इन कोढ़ी भाई-बहनों की सेवा-सहायता करके मैं अपनी ही सेवा-सहायता करता हूँ क्योंकि वे हमारे हैं, हमारे अपने हैं।'

उपर्युक्त विचार किसने व्यक्त किये हैं ?

उत्तर—बाबा आमटे ने।

[१२]

(१) प्रश्न—कृपया एक पंक्ति में उत्तर दीजिए।

माता-पिता की सेवा का निम्न महान् पुरुषों ने किस प्रकार आदर्श प्रस्तुत किया ?

(१) रामचन्द्र ने, (२) भीष्म पितामह ने, (२) श्रवणकुमार ने।

उत्तर (१) रामचन्द्र—अपने पिता की आज्ञा को शिरोधार्य करते हुए वे १४ वर्षों के लिए वनवास चले गए।

(२) **भीष्म पितामह**—अपने पिता शांतनु की खुशी के लिए स्वयं ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत अंगीकार कर लिया।

(३) **श्रवणकुमार**—अपने अंधे माता-पिता को कंधों पर बिठाकर तीर्थ-यात्रा करवाई।

(२) **प्रश्न**—सेवा आत्मा के विकास की प्रतीक किस प्रकार है ?

उत्तर—सेवा आत्मीयता का क्रियात्मक रूप है। जितना स्वार्थ भाव अधिक होगा, उतनी ही आत्मीय भाव में कमी होगी। स्वार्थ भाव राग भाव का दूसरा रूप है। अत: जितना राग भाव कम या मंद होगा, उतना ही आत्मीय भाव गहरा होगा। इस प्रकार सेवा आत्मा के विकास की प्रतीक है।

(३) **प्रश्न**—भोगजन्य सुख एवं सेवा से उपलब्ध सुख में क्या अन्तर है ?

उत्तर—भोगजन्य सुख क्षणिक होता है, उसका अन्त नीरसता में होता है। समय वीतने के साथ उस सुख का रस सूखता जाता है, परन्तु सेवा से उपलब्ध सुख सदा सरस रहता है। वह अक्षय होता है। यह बाहर से पैदा नहीं होता, अन्दर से उद्‌भूत होता है। अत: सेवा का सुख आध्यात्मिक सुख है।

—89, Audiappa Naicken Street
Sowcarpet, Madras-600 079

हार्दिक बधाई

कानोड़—श्री जवाहर विद्यापीठ कानोड़ के संचालक श्री सोहनलाल धींग के सुपुत्र श्री हिमांशु धींग ने माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान, अजमेर की सीनियर हायर सैकण्डरी विज्ञान (गणित ग्रुप) की १९८९ की परीक्षा में योग्यता सूची में नौंवा स्थान प्राप्त किया है। हार्दिक बधाई।

—सम्पादक

बाल कथामृत* (७३)

☐ १८ वर्ष तक के बच्चे इस कहानी को पढ़कर प्रश्नों के उत्तर १५ दिन में "जिनवाणी" कार्यालय को भेजें। उत्तरदाताओं के नाम पत्रिका में छापे जायेंगे। प्रथम, द्वितीय व तृतीय आने वालों को क्रमशः २५, २० व १५ रुपयों की उपहार राशि भेजी जायेगी। श्री राजेन्द्रप्रसादजी जैन, एडवोकेट भवानीमंडी की ओर से उनकी माताजी की पुण्य स्मृति में ११ रुपये का 'श्रीमती बसन्तबाई स्मृति पुरस्कार' चतुर्थ आने वाले को दिया जायेगा। प्रोत्साहन पुरस्कार स्वरूप १० बच्चों तक को "जिनवाणी" का सम्बद्ध अंक निःशुल्क भेजा जायेगा।

—सम्पादक
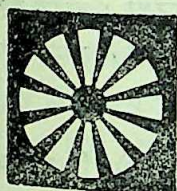
गुरु-निष्ठा

☐ **श्री राजेन्द्रप्रसाद जैन**

वह मेधावी बालक अभावों में पला था पर हर परीक्षा में प्रथम आने वाले उस विद्यार्थी ने मैट्रिक परीक्षा भी प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण करली। आगे अध्ययन की उसकी अभिलाषा थी पर आर्थिक अभाव आड़े आ रहे थे। वह कलकत्ता के एक विख्यात वकील साहब के पास पहुँचा और अपनी करुण स्थिति उन्हें सुनाते हुए कहा—"नौकरी से बचे समय में मैं अपनी पढ़ाई भी करता रहूँगा।"

वकील साहब ने कहा—"नौकरी करना हो तो २४ घंटे काम करना होगा, अध्ययन के लिए मेरे यहाँ समय नहीं मिल सकता।"

वकील साहब का उत्तर सुन बालक उदास हो गया तो वकील साहब ने कहा—"अच्छा! अभी जा, विचार कर एक हफ्ते बाद आना।"

एक हफ्ते पश्चात् बालक पुनः वकील साहब के पास पहुँचा और विनम्र स्वर में कहा—"सर! २४ घंटे की नौकरी मेरे बस की बात नहीं।"

* श्री राजीव भानावत द्वारा सम्पादित—परीक्षित स्तम्भ।

उत्तर ने वकील साहब को उत्तेजित कर दिया और उसे झिड़क कर बंगले से बाहर कर दिया....वकील साहब ने उसे बाहर तो कर दिया पर तभी हृदय के किसी कोने में दबी दया उमड़ आई। उन्होंने उसे आवाज देकर बुलाया और कहा—"अच्छा भाई ! नौकरी से बचे समय में तू विद्याध्ययन भी कर लेना।"

बालक का स्वाभिमान जाग उठा। वह बोला—"क्षमा करें श्रीमान्.... जहाँ मानवता का कोई मूल्य नहीं....अभावग्रस्तों के प्रति जहाँ दया, करुणा और संवेदना नहीं, वहाँ मैं नौकरी करने से विवश हूँ।"

मन के सच्चे उस मासूम बच्चे के शब्दों ने, शब्दों की दुनिया के धनी उन प्रबुद्ध वकील साहब को झकझोर डाला। मन ही मन अपने अमानवीय व्यवहार के प्रति पश्चात्ताप करते हुए वकील साहब ने कहा—"भाई ! तू हमारे यहाँ नौकरी करे या न करे पर जीवन का एक क्षण भी व्यर्थ न जाने देना और मेरे इस मंगल-सूत्र को सदैव याद रखना।"

कालान्तर में श्रम और धर्म का संबल थामे, उस बालक ने वकालत की परीक्षा पास कर कलकत्ता न्यायालय में प्रैक्टिस चालू करदी। देखते-देखते उसने अपने क्षेत्र में काफी ख्याति प्राप्त करली। जिस मुकद्दमे को उसने अपने हाथ में लिया, उसी में सफलता ने उसके चरण चूमे।

एक बार ऐसा अवसर आया कि जिन वकील साहब ने उसे झिड़क कर बंगले से बाहर निकाल दिया था उन्हीं वकील साहब के मुकद्दमे में विपक्ष की ओर से अतीत का वह बालक, एक प्रतिभाशाली युवा अभिभाषक के रूप में पेश हुआ। उसने वकील साहब की सशक्त युक्तियों को काट कर ऐसा तर्क न्यायाधीश महोदय के समक्ष रखा कि उन्होंने उस युवा अभिभाषक के पक्ष में अपना निर्णय सुना दिया। वकील साहब उस युवा अभिभाषक को पहचान तो नहीं पाये पर उसके बुद्धि-बल व वाक्-चातुर्य की सराहना कर बैठे।

इस तरह चार वर्ष तक अपने मुकद्दमों में शत-प्रतिशत सफलता प्राप्त करने वाले उस युवा अभिभाषक को वकील बन्धुओं ने अभिभाषक-परिषद् का अध्यक्ष बना दिया। तभी उन जज साहब का—जिनके न्यायालय में यह युवा अभिभाषक पैरवी करता था, उनका कार्य काल समाप्त हो गया तो वायसराय ने ब्रिटिश पार्लियामेन्ट से पूछा कि इनके स्थान पर किसे नियुक्त किया जावे। पार्लियामेन्ट ने वायसराय को ही इस पद के लिए योग्य व्यक्ति का नाम भेजने को लिखा। वायसराय ने अभिभाषक-परिषद् से सभी वकीलों के नाम और उनकी कार्यक्षमता बाबत रिपोर्ट मांगी तो पता चला कि सभी वकीलों में यही

एक मात्र युवा-अभिभाषक है जो आज तक कोई मुकद्दमा नहीं हारा। वायसराय ने उनके नाम की सिफारिश करदी जो स्वीकार करली गई। पर जब उन्हें पद-ग्रहण करने को आमंत्रित किया गया तो उन्होंने पद-ग्रहण से इंकार कर दिया। अभिभाषक-बन्धु आश्चर्य चकित, वायसराय हैरान-साथी अभिभाषकों ने उसे बहुतेरा समझाया। वायसराय ने बड़े स्नेह पूर्ण शब्दों में कहा—"मेरे युवा बन्धु! यह क्या कर रहे हो? सोचो, समझो, यह गौरवशाली पद आज तक किसी भारतीय को नहीं मिला है। मान और सन्मान तुम्हारे द्वार पर दस्तक दे रहा है। इसे नकारो मत—"

पर जब युवा अभिभाषक टस से मस नहीं हुआ तो वायसराय साश्चर्य प्रश्न कर बैठे—"भाई, बात क्या है? राज क्या है?"

वायसराय के आत्मीयता में आबद्ध प्रश्नों का उत्तर देते उस युवा अभिभाषक ने विनम्र स्वर में कहा—"महामहिम! बात कुछ नहीं और फिर उस युवा-अभिभाषक ने महामहिम को वकील साहब के बंगले पर नौकरी की तलाश में जाने से लगाकर वकील बन जाने का सारा विवरण सुनाते हुए कहा—"सर! उन्हीं की अमूल्य शिक्षा कि जीवन का एक क्षण भी व्यर्थ न खोना" को मूर्त रूप देते हुए मैं आज इस स्थिति तक पहुँचा हूँ। इस माने में वे ही मेरे जीवन के निर्माता हैं। यदि मैं न्यायाधीश की कुर्सी पर बैठ गया तो उन्हें मेरे सामने खड़ा रहना पड़ेगा। मुझे 'सर' कह सम्बोधित करना पड़ेगा—मैं यह नहीं कर सकता - हरगिज नहीं कर सकता।

चिंतन के धरातल पर खड़े ब्रिटिश वायसराय मन ही मन भारतीय संस्कृति को नमन कर रहे थे। गुरु-शिष्य के पावन रिश्तों को वंदन कर रहे थे।

यही युवा आगे चलकर हजारों रुपयों की मासिक प्रैक्टिस को लात मार गाँधीजी के स्वतंत्रता संग्राम में कूद पड़ा। देश की स्वतंत्रता के लिए जेल की यातना सह, स्वतंत्रता संग्राम के इतिहास में अमिट नाम लिखा देने वाला यह महामानव और कोई नहीं श्री चितरंजनदास थे जिन्हें संक्षिप्त में सी. आर. दास कहा जाता है।

—एडवोकेट, भवानीमंडी (राजस्थान)

अभ्यास के लिए प्रश्न

१. बालक चितरंजन को आगे अध्ययन में क्या कठिनाई आ रही थी और उसे हल करने के लिए उसने क्या सोचा?

२. बालक चितरंजन ने वकील साहब के यहाँ नौकरी करने से क्यों इन्कार कर दिया ?

३. वकील साहब ने बालक को क्या मंगल-सूत्र दिया ?

४. बालक अपने जीवन में उन्नति करता-करता प्रख्यात सफल अभिभाषक बन गया। उसकी इस सफलता का क्या कारण था ?

५. वायसराय ने जज के लिए चितरंजनदास के नाम की सिफारिश क्यों की ?

६. चितरंजनदास ने जज बनना क्यों अस्वीकार कर दिया ?

७. यदि चितरंजनदास के स्थान पर आप होते तो क्या करते ?

८. चितरंजनदास के चरित्र की कोई तीन विशेषताएँ बताइये।

९. भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम के बारे में दस पंक्तियाँ लिखिए।

१०. आप अपने जीवन का कोई ऐसा घटना-प्रसंग लिखिए जिसमें गुरु के प्रति आपकी भक्ति व निष्ठा प्रमाणित हो।

"जिनवाणी" के अगस्त, १९८९ के अंक में प्रकाशित श्रीमती गिरिजा 'सुधा' की कहानी **"महाभारत का मर्म"** (७१) के उत्तर जिन बाल पाठकों से प्राप्त हुए हैं, उन सभी को बधाई।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं के नाम

प्रथम—श्री सुनीलकुमार भाटी, द्वारा श्री लक्ष्मीनारायणजी भाटी, रेलवे फाटक बाहर, पुलिस चौकी के पास, **चौमहल्ला** (जिला झालावाड़)।

द्वितीय—सुश्री प्रमिला जैन, द्वारा शान्तिलालजी प्रकाशचन्द्रजी बोहरा, स्टेशन रोड, **भवानीमंडी** (राज.)।

तृतीय—श्री नवनीत आगाल, द्वारा श्री लक्ष्मीलालजी, पोस्ट **रेलमगरा** (जिला उदयपुर)।

चतुर्थ—सुश्री ब्रजेशकुमारी भाटी, द्वारा श्री लक्ष्मीनारायणजी भाटी, रेलवे फाटक बाहर, पुलिस चौकी के पास, चौमहल्ला (जिला झालावाड़)।

प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त उत्तरदाता

जिन्हें अक्टूबर, १९८९ की "जिनवाणी" उपहार स्वरूप भेजी जा रही है :—

१. सुश्री स्नेहलता जैन, द्वारा श्री गणेशलालजी डांगी, पुरानी तहसील के पास, **रेलमगरा** (जिला उदयपुर)।

२. श्री चन्द्रप्रकाश अग्रवाल, द्वारा श्री सत्यनारायणजी अग्रवाल, कटला बाजार, **जोधपुर–३४२ ००१**।

अन्य उत्तरदाता

कोसाणा से ज्ञानचन्द बाघमार, **अलीगढ़** से अनिलकुमार जैन, **नागौर** से विमलेशकुमार जैन, सुरेशकुमार जैन, नवरतनमल बोथरा, **गुलाबपुरा** से रमेशचन्द्र शर्मा, **बजरिया, सवाईमाधोपुर** से ज्योति जैन, **आलनपुर** से पिंकी जैन, **हरसौर** से महेन्द्रकुमार, **पाली मारवाड़** से राजेन्द्र एस. जैन, राकेशकुमार जे. कटारिया, **बालेसर सत्ता** से राकेश चौपड़ा, संजय चौपड़ा, **जैन पाठशाला, भवानीमंडी** से मुकेश मूथा, ममताकुमारी जैन, संध्या बालानी, पंकजकुमार जैन, नीरा जैन, विजय जैन, शिल्पा जैन, सपनाकुमारी जैन, शीतल जैन, संजयकुमार जैन, रजनीकुमारी, तृप्ति जैन, पिंकी जैन (ललवानी), राजेश जैन (विजावत), नीरज जैन (विजावत), विकास जैन, सुनील मूथा, मोनिका जैन, हरीशकुमार बालानी, कविता विजावत, संजय जैन, **चौमहल्ला** से सुरेशकुमार राठौर, **सेमरा** से ममता सोनी, **बम्बई** से महेन्द्रकुमार कच्छारा, **खेड़ली** से पारसचन्द जैन, **जयपुर** से आनन्द अजमेरा।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं द्वारा प्रस्तुत वे घटनाएँ जिसमें न्यायालय के बजाय आपसी प्रेम-व्यवहार व बातचीत से झगड़ा सुलझाया गया हो—

(१)

हमारे घर से कुछ दूर एक परिवार रहता था। उस परिवार में पिता और दो पुत्र थे। माता का स्वर्गवास हो चुका था। कुछ समय पश्चात् पिता का भी स्वर्गवास हो गया। बाद में उनके रिश्तेदारों ने दोनों भाइयों का विवाह

कर दिया। लेकिन एक घर में दोनों बहुओं की कभी नहीं बनती थी। आये दिन घर में क्लेश होने लगा। कुछ बुजुर्गों ने उन्हें बंटवारे की सलाह दी। दूसरे ही दिन वे न्यायालय में केस दाखिल कराने हेतु एक वकील के पास गये। वकील बुद्धिमान थे। वे जानते थे कि भाई के मन में भाई के प्रति कड़वाहट उत्पन्न नहीं होनी चाहिये। उन्होंने कहा—"ठीक है। पहले तुम घर की सभी सम्पत्ति आधी-आधी बराबर कर लो। फिर न्यायाधीश की आज्ञा से बँटवारा हो जाएगा।" दोनों भाइयों ने आज्ञा मानकर सभी वस्तुएँ आधी-आधी कर लीं। उनके पास दो गाएँ भी थीं। एक गाय के दो बछड़े थे। दूसरी के कोई बछड़ा नहीं था। उन्होंने १-१ गाय और १-१ बछड़ा लेने की सोची लेकिन जैसे ही उन्होंने एक बछड़े को दूसरे बछड़े से अलग किया, वह तुरन्त छूटकर फिर बछड़े के पास चला गया। कई बार प्रयत्न के बाद भी वे बछड़ों को अलग नहीं कर सके। सब लोग बछड़ों के प्रेम को देखकर दंग रह गए। भाइयों ने वकील को सारा हाल बताया तो वकील बोला—"देखा, तुमने पशुओं के प्रेम को। ये जानवर भी एक दूसरे से अलग होना पसंद नहीं करते और तुम मनुष्य होकर भी अलग होना चाहते हो।" वकील के बोल का ऐसा जादू दोनों भाइयों पर हुआ कि दोनों ने बँटवारे के लिये मना कर दिया। दोनों की बहुओं ने भी अलग होने से इन्कार कर दिया।

—सुनीलकुमार भाटी, चौमहल्ला

(२)

हमारे घर के पास दो पड़ौसियों में हमेशा झगड़ा रहता था। झगड़े का कारण यह था कि दोनों के घर की नालियाँ एक थीं। दोनों के घर का पानी उस एक ही नाली में निकलता था। एक कहता कि मैंने कल नाली साफ की थी आज तुम्हारी बारी है। दूसरा कहता कि नाली तुम्हारे घर के पानी से ज्यादा गंदी होती है, अतः तुम ही साफ करो। झगड़ा बढ़ते-बढ़ते बात न्यायालय में जाने तक पहुँचने लगी। इतने में एक समझदार बुजुर्ग व्यक्ति वहाँ पहुँचे और बोले—तुम दोनों इतनी छोटी-सी बात के लिये आपस में क्यों झगड़ा करते हो? नाली मैं ही साफ कर देता हूँ। इतना सुनकर वे दोनों व्यक्ति लज्जित हो गये और उनका झगड़ा हमेशा के लिये समाप्त हो गया।

—प्रमिला जैन, भवानीमंडी

(३)

मेरे पापा और हमारे पड़ौसी के बीच कई वर्षों से भाईचारा व प्रेम का व्यवहार चल रहा था। उनके दुःख-सुख में पापा हर समय सहयोगी बने। उनकी पुत्री की शादी में भी भारी आर्थिक सहयोग दिया। अचानक पड़ौसी के स्वर्गवास से सब जिम्मेदारी उनके एकमात्र पुत्र पर पड़ गई। गलत संगति और बहकावे में आकर उसने हमारे से भी व्यवहार तोड़ दिया। ऐसी स्थिति

में पापा ने उससे हिसाब समझने को कहा तो उसने न केवल लेन-देन से इन्कार किया बल्कि ओछे स्तर पर भी उतर आया। मामला न्यायालय तक पहुँचा। एक दिन उसकी माताजी अपने घर में सीढ़ियों से गिर पड़ीं। सिर में चोट लगने से बेहोश हो गईं। मेरे पापा सबसे पहले वहाँ पहुँचे। उन्हें अस्पताल पहुँचाया। तत्काल जरूरत होने से पापा ने अपना रक्त भी दिया। दो दिन तक उनकी सेवा में रहे। दो दिन बाद पड़ौसी-पुत्र बाहर गाँव से वापस आया तब सब हालात सुनकर पापा के पैरों में गिर पड़ा और अपने किये पर क्षमा माँगी। न्यायालय से मुकदमा हट गया और आपसी प्रेम-व्यवहार व बातचीत से सभी मामले सुलझ गये।

—नवनीत आगाल, रेलमगरा

(४)

बात उस समय की है जब अमेरिका के राष्ट्रपति अब्राह्म लिंकन वकील थे। एक दिन उनके पास एक जमींदार आया और बोला—वकील साहब, मुझे एक किसान पर मुकदमा दायर करना है। उसने बहुत समय पूर्व मुझसे दो हजार डालर उधार लिये जो अब तक नहीं लौटाये। अतः आप मेरी तरफ से केस लड़ें। लिंकन ने जमींदार को समझाया कि केस लड़ने में दो हजार डालर से कहीं अधिक खर्च आएगा। इसमें तुम्हारा ही नुकसान होगा। इससे अच्छा है कि तुम विश्वास और प्रेम के बल पर अपने डालर वसूल करो। परन्तु जमींदार हठी था। वह बोला—वकील साहब, आप मुकदमा लड़ें, चाहे जितने डालर मैं ख़र्च करने को तैयार हूँ। लिंकन उसकी हठवादिता समझ गये। उन्होंने जमींदार से दस हजार डालर देने को कहा और बोले कि कल तुम्हारा केस अदालत में दाखिल कर दिया जाएगा। जमींदार १० हजार डालर देकर चला गया।

जमींदार के जाने के बाद लिंकन ने उस किसान को बुलवाया और उसे पांच हजार डालर देते हुये कहा कि वह जमींदार का कर्ज तुरन्त लौटा दे और भविष्य में ईमानदारी से लिया हुआ कर्ज लौटाने का संकल्प करे। किसान ने वादा किया और लिंकन को धन्यवाद दिया कि उसे कर्ज से मुक्ति भी मिल गई और तीन हजार डालर भी मुफ्त में मिले। उधर जब जमींदार को अपने डालर मिल गये तो उसने भी लिंकन को आकर धन्यवाद दिया।

इस प्रकार दया व न्याय की जीती-जागती मूर्ति थे लिंकन। उन्होंने जमींदार और किसान के मुकदमे को न्यायालय में न ले जाकर अपनी चतुराई और वाक्पटुता से सुलझा दिया और अपनी सूझबूझ से स्वयं भी पाँच हजार डालर कमा लिये। दरअसल लिंकन शांति प्रिय थे। वे नहीं चाहते थे कि छोटी-मोटी बातों को लेकर लोग आपस में लड़ें और मामला अदालत तक पहुँचे।

—[illegible]कुमारी भाटी, चौमहल्ला

चिंतन और व्यवहार (१७)
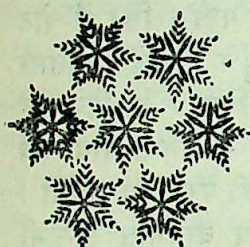
क्या हम स्वयं के प्रति ईमानदार हैं ?

□ श्री चंचलमल चौरड़िया

जैन शास्त्रों में वर्णित बालक अतिमुक्त कुमार के वे उद्गार "जिसको मैं जानता हूँ, उसको नहीं जानता एवं जिसको नहीं जानता उसको जानता हूँ।" आज भी उतने ही शाश्वत हैं, भूतकाल में थे एवं भविष्य में रहेंगे, तथा हमको स्वयं के प्रति ईमानदार बनने की युगों-युगों तक प्रेरणा देते रहेंगे। क्या हम नहीं जानते कि जो जन्म लेता है, वह एक दिन मृत्यु को अवश्य प्राप्त होता है। परन्तु हम नहीं जानते कि हमारी मृत्यु कब, कहाँ और कैसे होगी ? इसी प्रकार हम मानते हैं कि अच्छे कर्मों का फल अच्छा तथा बुरे कर्मों का फल बुरा मिलता है, फिर भी आज हमारा आचरण कैसा है ? कहीं हमने अपने आपको अमर मानने की भूल तो नहीं कर ली है ? क्या हम कभी अपनी मृत्यु का चिंतन करते हैं ? क्या हमने कभी अपने जन्म अथवा मृत्यु के बाद की अवस्था का विचार किया है ? अमूल्य हीरों से अल्प मूल्य की वस्तु को खरीदने वालों को हम पागल अथवा मूर्ख कहते हैं। परन्तु क्या हम अमूल्य मानव जीवन को क्षणिक भौतिक सुविधाएँ जुटाने में व्यर्थ गवां, वैसी मूर्खता तो नहीं कर रहे हैं ? मानव जीवन की सार्थकता तो भक्त से भगवान, नर से नारायण, अथवा आत्मा से परमात्मा बनने में है। आज प्रत्येक मानव को भले ही वह गृहस्थ हो, या साधक, लेखक हो या पाठक, वक्ता हो या श्रोता, गुरु हो या शिष्य, शिक्षक हो या विद्यार्थी, वृद्ध हो या बालक, राजा हो या प्रजा, अमीर हो या गरीब, सेठ हो या नौकर, पुरुष हो या नारी, अपने आपका निरीक्षण, परीक्षण करना चाहिये, कि वे मानव-जीवन का उपयोग कैसे कर रहे हैं ? हम दुनिया को धोखा दे सकते हैं। हमारी बाहरी स्थिति मायावी हो सकती है। परन्तु अपनी आंतरिक स्थिति से जितने स्वयं परिचित हैं, उतना शायद दूसरा न हो। हमें अपने जीवन की शांत चित्त से पूर्वाग्रहों को छोड़ समीक्षा करनी चाहिये ताकि हमें पता लग सके कि हम स्वयं के प्रति कितने ईमानदार हैं ?

ईमानदार होने का तात्पर्य अपने जीवन के सही लक्ष्यों का निर्धारण कर अपने कर्तव्यों का सजगतापूर्वक पालन करते हुए लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु सतत प्रयत्नशील रहना है। अतः हमारी प्रथम आवश्यकता है अपने आपको जानने की,

समझने की। सम्यक् ज्ञान के अध्ययन, चिंतन तथा स्वाध्याय एवं धर्म गुरुओं के मार्गदर्शन से हम आत्मा एवं शरीर के भेद-विज्ञान को समझ सकते हैं। उसके बिना हमारी श्रद्धा स्थिर न रह सकेगी एवं हम अपने जीवन का सही लक्ष्य भी निर्धारण न कर सकेंगे। आत्मा की अमरता एवं उस पर कर्मों के प्रभाव पर विश्वास करने हेतु हमें निरन्तर चिंतन करना होगा कि, मैं कौन हूँ? कहाँ से आया हूँ? मुझे कहाँ जाना है? मैं इस अल्प मानव जीवन में अपने लक्ष्य को कैसें प्राप्त कर सकूँगा? क्या मैं अपनी क्षमताओं का लक्ष्य प्राप्ति की दिशा में सदुपयोग कर रहा हूँ? क्या मेरा आचरण आत्मीय गुणों को प्रकट करने में सहायक है, अथवा लक्ष्य के विपरीत तो नहीं है? क्या मुझमें पुनर्जन्म, आत्मा एवं शरीर के भेद विज्ञान के बारे में श्रद्धा है? क्या प्राणी मात्र सुखी है? अगर नहीं तो क्यों? कोई स्वस्थ जीवन जीता है, तो कोई जन्म से ही अपंग अथवा रोगग्रस्त क्यों रहता है? कोई दीर्घ आयु को प्राप्त करता है तो कोई अल्प आयु क्यों? किसी को बिना प्रयास बहुत कुछ मिल जाता है, परन्तु दूसरों को निरन्तर पुरुषार्थ करने के बावजूद भी कुछ नहीं मिलता। कोई अमीर के घर जन्म लेकर सुख भोगता है, और कोई गरीब के घर जन्म लेकर कष्टपूर्ण जीवन यापन करता है। कोई बाल्यकाल से ही प्रखर बुद्धिमान होता है, तो कोई सारे प्रयासों के बावजूद भी मूर्ख। कर्मों की विसंगतियों को प्रतिक्षण हम आसपास के वातावरण में सहज अनुभव कर सकते हैं जो इस धारणा को दृढ़ बनाते हैं कि हमारी उपलब्धियों के पीछे हमारे पूर्व जन्म के कर्म जिम्मेदार हैं तथा इस जन्म में हमारे द्वारा प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष किये गये सुकृत एवं दुष्कृत्यों का फल समय परिपक्व होने पर हमें अवश्य मिलेगा। चोरी करने वाला तभी तक प्रसन्न रह सकता है जब तक कि वह पकड़ा न जावे। यह आवश्यक नहीं कि चोरी के प्रथम प्रयास में ही उसे दंड मिल जावे। इसी प्रकार हमें हमारे कर्मों का फल अवश्य मिलेगा। यदि हम पापाचार करें एवं उसका फल तुरन्त न मिले तो अपनी सफलताओं पर गर्व करने की भूल नहीं करनी चाहिये। इस प्रकार का चिंतन करने से हमारा बहुपक्षीय विकास होगा। हम अपने कर्तव्यों के पालन में सजग रहेंगे तथा हमारा आचरण नर से नारायण बनने में सहायक होगा।

परन्तु आज वास्तविकता क्या है? हम विज्ञान के भौतिक चमत्कारों के प्रभाव से अपने आपको नहीं पहचान पा रहे हैं। चन्द्रमा एवं अन्य ग्रहों की यात्राएँ करने वालों को अपने अन्दर झांकने का अवकाश नहीं। विज्ञान सत्य को स्वीकारता है। एक बार सत्य प्रकट हो जाने के पश्चात् उसका पूर्वाग्रह समाप्त हो जाता है। बिजली का उपयोग हम प्रतिदिन लेते समय कभी नहीं सोचते कि इसका आविष्कार करने वाला कौन था? उस राष्ट्र, जाति एवं धर्म से हमारे सम्बन्ध कैसे हैं? वह कौन से देश का नागरिक था? कौनसे धर्म को मानने वाला था? हम सभी विज्ञान के आविष्कारों को बिना पूर्वाग्रह स्वीकारते हैं एवं

अपने दैनिक जीवन में उपयोग लेते हैं। अमेरिका और रूस के सम्बन्ध भले ही अच्छे न हों परन्तु जब अमेरिका के यात्री चन्द्रमा पर उतरे तो रूस के वैज्ञानिकों ने उसको बिना हिचकिचाहट स्वीकारा। आश्चर्य की बात है बाह्य जगत् में इतनी व्यापक दृष्टि रखने वाले अन्तरजगत् के प्रति इतने उदासीन क्यों? सत्य को स्वीकारने वालों का दृष्टिकोण इस तथ्य के प्रति पूर्वाग्रहों से ग्रसित एवं उपेक्षित क्यों? हम प्रायः आध्यात्मिकता के बारे में न तो चिंतन, मनन एवं अध्ययन करते हैं एवं न सत्य को समझने का प्रयास। फिर भी धर्म के बारे में ऐसे कुतर्कपूर्ण दृढ़ विचार प्रकट करते हैं जैसे हमने इसके बारे में गूढ़ अध्ययन कर लिया हो। हमारा प्रयास ठीक वैसा ही है जैसे किसी अशिक्षित मूर्ख द्वारा अनुभवी डॉक्टरों की सभा को चिकित्सा विज्ञान के बारे में अधिकार पूर्वक सम्बोधित करना। जिसको विषय की जानकारी नहीं, उसके विचारों का क्या महत्त्व? हम भूल जाते हैं डॉक्टरी, इंजीनियरिंग जैसे सामान्य विषय पर आंशिक योग्यता एवं अनुभव प्राप्त करने के लिए भी वर्षों तक अध्ययन, चिंतन एवं प्रयास करना पड़ता है फिर भी उस विषय में पूर्ण रूप से दक्ष नहीं हो पाते। अतः अपने प्रति ईमानदार बनने वालों को अपनी सुषुप्त आत्म-शक्तियों को जगाने हेतु समुचित प्रयास करना होगा अन्यथा भविष्य में हमें पछताना पड़ेगा।

आज दुराग्रहों एवं अज्ञानता के कारण चारों तरफ अनैतिकता, छल-कपट एवं भ्रष्टाचार का बोलबाला है। पद, प्रतिष्ठा एवं व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति हेतु हिंसा, असत्य, असन्तोष, घृणा, द्वेष एवं मायावृत्ति का आचरण करते तनिक भी संकोच नहीं हो रहा है। हमारी धारणा के अनुसार दुनियादारी के सारे कार्य पैसों से किये जा सकते हैं। अतः धन कमाना ही हमारा मुख्य लक्ष्य बन जाता है। हम बुराई को बुरा मानने तक तैयार नहीं होते अपितु अनैतिक तरीकों से क्षणिक सफलता प्राप्त कर फूले नहीं समाते। हम अपनी सफलताओं को पूर्व पुण्य का फल न मानकर अपने पुरुषार्थ एवं योग्यता का ही कारण मानते हैं। बाह्य उपलब्धियों से इतने अधिक प्रभावित हो जाते हैं कि अपने अन्दर झांक कर भी नहीं देख पाते। अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए थोड़ा बहुत सेवा, दान का कार्य कर इतने हर्षित एवं गर्व का अनुभव करते हैं मानो हमने जीवन के बहुत बड़े लक्ष्य को प्राप्त कर लिया हो। क्या हमारा दान अपने दुष्कृत्यों पर आवरण डालने एवं प्रतिष्ठा बढ़ाने तथा व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति के लिये तो नहीं है। क्या ये ही हमारी ईमानदारी के लक्षण हैं?

धर्म की साधना करने वालों को आज आलसी, मूर्ख, निकम्मा, रूढ़िवादी, परम्परावादी समझने तथा स्वयं को सभ्य और बुद्धिमान, प्रगतिशील मानने की भूल हो रही है। क्षणिक भौतिक उपलब्धियों के कारण हमारा दृष्टिकोण बदल गया है। हमारी प्राथमिकताएँ एवं मापदंड बदल गये हैं। प्रतिक्षण हमारा प्रयास

बाह्य सुख-सुविधाओं के साधन उपलब्ध करने में ही लगा हुआ है। हम जो कुछ भी कर रहे हैं उसके पीछे व्यक्तिगत लाभ, अंह-पोषण, प्रतिष्ठा एवं स्वार्थ जुड़ा हुआ है। अपनी सुख-सुविधाओं के लिए दूसरों का अनर्थ एवं सिद्धांतों के विरुद्ध आचरण करते तनिक भी संकोच नहीं हो रहा है। क्या यही हमारी ईमानदारी के लक्षण हैं? पैसों के बल हम धर्मगुरुओं को प्रसन्न रखने का अभिनय कर रहे हैं।

क्या हम अपनी क्षमताओं का सदुपयोग कर रहे हैं? कहीं हमने स्वयं का अवमूल्यन तो नहीं कर दिया है? हमें हमारे चिंतन का दृष्टिकोण बदलना होगा एवं स्वयं के प्रति उपेक्षावृत्ति छोड़नी होगी। सुख एवं शांति का राज क्या है? इतनी भौतिक सुख-सुविधाओं के बावजूद आज हम अशांत, भयभीत एवं तनावपूर्ण क्यों हैं? कहीं मूल में तो भूल नहीं हो रही है? अपनी भूल को सुधारना होगा एवं मानवीय गुणों को विकसित करने का प्रयास करना होगा। आध्यात्मिकता के प्रति अरुचि का प्रमुख कारण सही मार्गदर्शन का अभाव है।

आज अभिभावक बच्चों को सुसंस्कारित करने के अपने कर्तव्यों से विमुख होते जा रहे हैं। बच्चों को सही मार्गदर्शन न देने के कारण विकास विपरीत दिशा में हो रहा है। हमारा प्रयास बच्चों को प्रायः पैसा कमाने के योग्य बनाने तक ही सीमित हो रहा है। बच्चों की संगति और संस्कार के प्रति हम प्रायः उदासीन हैं। दिन-प्रतिदिन बिगड़ता खानपान एवं अनैतिक आचरण इसी का दुष्परिणाम है। शिक्षण संस्थाएं अपना दायित्व व्यावहारिक शिक्षा तक ही समझ रही हैं। बच्चों को सुसंस्कारित करने हेतु उनके पास कोई कार्यक्रम नहीं है। न सुसंस्कारित बच्चों को पुरस्कृत करने की योजना। अधिकांश धार्मिक एवं सामाजिक संस्थाएँ अपने सिद्धान्तों के प्रति प्रायः समर्पित नहीं हैं, अपितु उनके सदस्य संस्थाओं को स्वार्थपूर्ति का माध्यम बना रहे हैं। इसी कारण जब कभी सदस्यों की आचार-संहिता जैसा मूल प्रश्न उठाया जाता है तो संस्थाओं में हड़कंप मच जाता है, तूफान खड़ा हो जाता है। क्या ऐसी मायावी प्रवृत्तियों के रहते हम अपने आपको स्वयं के प्रति ईमानदार मानने का दावा कर सकते हैं?

हम चाहते हुए भी स्वयं के प्रति ईमानदार क्यों नहीं हो रहे हैं? हमारी राह में कौनसी धारणाएँ, समस्याएँ एवं परिस्थितियाँ बाधक बन रही हैं, उनका चिंतन कर समाधान ढूँढ़ना होगा। तभी हम दृढ़ मनोबल से अपने लक्ष्य की तरफ बढ़ सकेंगे।

कभी-कभी जब अन्याय, दुराचार, अनैतिकता, हिंसा जैसे घृणित आचरण करने के बावजूद समाज एवं राष्ट्र में व्यक्ति को प्रतिष्ठा मिलती है, धर्मगुरु तक उनकी खुशामद करते नहीं थकते। वहीं दूसरी तरफ न्याय एवं नैतिकता का

ईमानदारीपूर्वक आचरण कर अपने कर्तव्यों का निर्वाह करने वालों पर आरोप लगाये जावें, व्यंग्यात्मक भाषा का प्रयोग किया जावे, तिरस्कार एवं उपेक्षा की जावे, सामाजिक एवं धार्मिक संस्थाओं में समुचित आदर सम्मान न दिया जावे तो जनसाधारण का सच्चाई से भटकना स्वाभाविक है।

आजकल अधिकांश धर्मगुरुओं एवं प्रचारकों की स्थिति विचित्र बन रही है। साधना के नाम पर दिखावा अधिक परन्तु सिद्धान्तों का पालन कम हो रहा है। क्रोध, मान, माया, लोभ, प्रमाद, मोह, घृणा, निंदा, आंतरिक कलह जैसे दुर्गुणों में अभिवृद्धि हो रही है। साधारण से परिषह, प्रतिकूलताओं एवं उपसर्गों में अपने संकल्पों, नियमों, मर्यादाओं का खुले आम उल्लंघन हो रहा है।

दूसरी तरफ ज्ञान एवं बाह्य क्रियाओं के अहं के कारण दूसरों को घृणा एवं हीनता के भाव से देखा जा रहा है। निंदा, बुराइयां करते तनिक संकोच नहीं हो रहा है। धर्म के मूल सिद्धांत राग एवं द्वेष को घटाने के स्थान पर बढ़ाते हुए संकोच नहीं हो रहा है। अनेकांत दृष्टि प्रायः लुप्त होती जा रही है। पाप से घृणा करने के स्थान पर पापी से घृणा की जा रही है। हम भूल जाते हैं कि पाप में प्रवृत्ति करने वाले शिथिलाचारी भ्रम में हैं, अतः करुणा के पात्र हैं। मूल सिद्धान्तों की उपेक्षा कर जड़ क्रियाओं को ही सब कुछ समझने की भूल हो रही है। हमारा प्रयास वृक्ष की जड़ों को सींचने के बजाय शाखाओं-प्रशाखाओं अथवा फूल-पत्तों के सींचने के समान है।

प्रतिक्षण इस जीवन को कैसे जीया जावे, गौण हो रहा है। परलोक के प्रलोभन का श्रद्धालुओं को आश्वासन दिया जा रहा है। हम भूल जाते हैं जैसे-जैसे कषायों की मंदता होती जावेगी जीवन को शांति प्राप्त होती जावेगी। सच्ची साधना कषाय-विजय में है एवं उसका परिणाम शीघ्र मिलता है। परलोक तक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती। हमें अपने दृष्टिकोण को बदलना होगा। आज चिंतन एवं स्वविवेक के अभाव में ज्ञान एवं धार्मिक क्रियायें भार स्वरूप लग रही हैं एवं अहं-पोषण का कारण बन रही हैं। जनसाधारण साधक अथवा धार्मिक कहलाने वालों के मायावी आचरण से भ्रमित हो आध्यात्मिकता से विमुख हो रहा है। साम्प्रदायिक राग के कारण कट्टरता, संकुचित दृष्टिकोण पर दोष-दर्शन की प्रवृत्ति बढ़ रही है। बढ़ता हुआ साम्प्रदायिक वैमनस्य, प्रलोभन एवं प्रभाव द्वारा धर्म परिवर्तन करवाना आतंकवाद इसी के परिणाम हैं। यदि पथ प्रदर्शक स्वयं सही मार्ग से भटक जावें तो उन्हें अपने प्रति ईमानदार कैसे समझा जावे? धर्म एवं सम्प्रदायें हमें अपनी तरफ आकर्षित करने में व्यस्त हैं। आयोजनों एवं महोत्सवों में भीड़ इकट्ठी कर व्यक्तिगत महत्त्वाकांक्षाओं की पूर्ति के साथ जनसाधारण को अपना प्रभाव बतलाकर गुमराह किया जा रहा है। कहीं-कहीं तो भक्त एवं भगवान के बीच बहुत बड़ी दीवार है। भक्त भक्त ही रहता है। भगवान

बन ही नहीं सकता। जिसको उसने भगवान के रूप में स्वीकारा उसके सारे कार्य एवं आचरण अनुमोदनीय हैं।

'बुराई बुराई ही है।' अपने आराध्य एवं प्रेरणा स्रोतों के हर आचरण को अच्छा बताकर भक्तों द्वारा अंधानुकरण कहाँ तक उचित है? आज के तर्क-शील मानव के गले में ये बातें नहीं उतर रही हैं। उन्हें भक्तों के आचरण में श्रद्धा अधिक परन्तु वास्तविकता कम लग रही है। उसका दृढ़ विश्वास है कि डाक्टर अथवा दवाई की माला फेरने, तारीफ करने मात्र से रोग दूर नहीं हो सकता। रोग को मिटाने के लिए डाक्टरों की सलाह से दवाई का सेवन करना होगा। इसी प्रकार भगवान की माला फेरने एवं उनके सिद्धान्तों को अच्छा बताने से हमारा कल्याण नहीं हो सकता। हमारा भला तो सिद्धान्तों का आचरण करने से होगा। इस प्रकार जनसाधारण आज के वातावरण से भ्रमित हो सच्चाई के मार्ग से हट रहा है।

हमें अपने लक्ष्य से भटकाने में सबसे अधिक भूमिका तो हमारा विज्ञान निभा रहा है। उसकी लगातार सफलताओं के अहं ने मानव को पागल बना दिया है। भौतिक उपकरणों का उपयोग सभी समान रूप से कर सकते हैं। चाहे पंखा हो या रेल, टी. वी. हो या रेडियो। उपकरण सामने वालों के पाप एवं पुण्यों के हिसाब से प्रभाव नहीं दिखाता। दूसरी बात अनुकूलता का मार्ग सबको प्रिय है एवं बाह्य दृष्टिकोण से उसका चिंतन वर्तमान सुख-दुःख तक ही केन्द्रित हो रहा है एवं उसका सारा प्रयास वर्तमान तक ही सीमित हो गया है। चन्द व्यक्ति अपने पेट की समस्याओं, पारिवारिक तथा सामाजिक जिम्मेदारियों से इतने अधिक दबे रहते हैं कि उन्हें आत्म-चिंतन का अवकाश ही नहीं मिलता तो कुछ व्यक्ति स्वास्थ्य की अनुकूलता न होने से इस महत्त्वपूर्ण चिंतन से वंचित रह आत्मोत्थान हेतु पुरुषार्थ नहीं कर पाते। वास्तविकता तो यह है कि हमने आत्मो-त्थान को जीवन में तनिक भी महत्त्व नहीं दिया। अतः बाह्य परिस्थितियों, वातावरणों एवं व्यक्तिगत कठिनाइयों का बहाना ढूंढ़ते हैं। अगर हम सत्य को समझ जावें, उसके प्रति रुचि प्रकट हो जावे तो ये सारी बाधायें हटते तनिक भी देर नहीं लगती।

चंद व्यक्ति अपने परिवार, सम्प्रदाय, समाज अथवा राष्ट्र की सेवा में से किसी एक के या अधिक के लिये पूर्ण रूप से समर्पित रहते हैं, तो कुछ व्यक्ति मानव सेवा अथवा पशुओं की सेवा को ही अपने जीवन का लक्ष्य बनाते हैं। उसके लिये सर्वस्व अर्पण करके भी अपने कर्तव्यों को निभाते हैं तथा उसके लिये अपने समय, श्रम एवं साधनों का उपयोग करना ही मानव जीवन की सार्थकता समझते हैं। इस जीवन में उससे भी अधिक आवश्यक आत्मोन्नति के सम्बन्ध में वे पूर्णरूप से अनभिज्ञ रहते हैं। वे जीवन के एक पक्ष में तो काफी सफल होकर

प्रतिष्ठित होते हैं, आदर एवं प्रतिष्ठा पाते हैं, परन्तु जीवन के दूसरे महत्त्वपूर्ण पहलुओं के प्रति पूर्णरूपेण उपेक्षित होने के कारण अपने जीवन का सही मूल्यांकन नहीं कर पाते एवं सही लक्ष्य की प्राप्ति में असफल हो जाते हैं। वे इस बात का चिंतन तक नहीं करते कि अमूल्य मानव जीवन से जो कुछ सद्कार्य वे कर रहे हैं उससे भी अधिक आवश्यक उपयोगी कुछ तत्त्व हैं जिन्हें मानव जीवन में ही प्राप्त किया जा सकता है। सही मार्गदर्शन के अभाव में उनका चिंतन एवं आचरण सही दिशा में होने के बावजूद सीमित होता है। ऐसे व्यक्तियों को चिंतन करना होगा कि महावीर, बुद्ध एवं अन्य तीर्थंकरों ने सभी अनुकूलताएँ होते हुए भी निवृत्ति का मार्ग क्यों अपनाया ? गृहस्थ जीवन में रहकर वे दान एवं सेवा के कार्य अधिक कुशलता पूर्वक कर सकते थे। सेवाभावी समर्पित कार्यकर्ताओं को इस बात का चिंतन करना होगा कि सेवा के नाम पर जितना वे कर रहे हैं उससे सन्तोष न करें। अपने कर्तव्यों के निर्वाह हेतु अन्य व्यक्तियों की अपेक्षा बधाई के पात्र हैं, परन्तु अपने अन्य आत्मीय गुणों को विकसित करने हेतु भी उन्हें सजग और प्रयत्नशील रहना चाहिये।

अन्त में सारे चिंतन का निष्कर्ष यही है कि हम जहाँ भी रहें, हमारा विवेक जागृत रहे, कर्तव्यों के प्रति हम उदासीन न बनें। अपने अमूल्य समय, श्रम एवं साधनों का उपयोग आलस्य एवं प्रमाद को कम कर आत्मोत्थान में लगावें। अनुकूल एवं प्रतिकूल परिस्थितियों में समभाव से जीना सीखें। हम विषय एवं कषायों को मंद करने में प्रयत्नशील रहें। जितने-जितने हमारे कदम इस दिशा में बढ़ेंगे, हम अपने जीवन का उत्थान कर पावेंगे एवं अपने लक्ष्य के नजदीक पहुँचते जावेंगे। ऐसा आचरण करने वाला ही स्वयं के प्रति ईमानदार कहलाने का अधिकारी है। जितने-जितने अंशों में आत्मीय गुणों का विकास होगा, हम उतने अंशों में ईमानदार कहलाने के योग्य होंगे। धर्म के संचालकों से अपेक्षा है कि वे अपने दायित्वों का ईमानदारी पूर्वक निर्वाह करते हुए हमारा सही मार्गदर्शन करें। साथ ही राष्ट्र के निर्माताओं से भी अपेक्षा है कि वे नैतिक मूल्यों की उपेक्षा न करें एवं चिरसंचित हमारी आध्यात्मिक धरोहर को अपने स्वार्थ के कारण बर्बाद होने से बचावें। अपनी नीतियों में आध्यात्मिक मूल्यों को संरक्षण प्रदान करें।

जो स्वयं के प्रति ईमानदार नहीं, वह दूसरों के प्रति ईमानदार कैसे हो सकता है। "आप सुधरे तो जग सुधरा" एवं "निज पर शासन फिर अनुशासन" वाली लोकोक्तियां हमें स्वयं के प्रति ईमानदार बनने की निरन्तर प्रेरणा देती हैं। लक्ष्य हमारे सामने है। चलना तो स्वयं को ही पड़ेगा। हम स्वयं अपनी स्थिति का चिंतन करें कि "हम कितने ईमानदार हैं ?"

—चौरड़िया भवन, जालोरी गेट के बाहर, जोधपुर-३
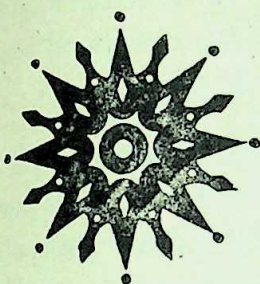
The Sacred Navakara Maha Mantra*

☐ Pradeep Kumar Jain

This Sacred Mantra is the first and foremost Mantra of Jainism. The first five lines of the Mantra or prayer are to offer reverential adoration to the Panch Parameshtis, the five divine personages, who from the five bases or the five pedestals symbolic of practising the three supreme precepts of life : Ahimsa (Non-violence), Samyama (Self-discipline) and Tapa (Austerities) in order to realise the inner self. This Mantra presents the foremost five stages of the enlightened ones and includes all meritorious and virtueous thoughts and ideas indispensable to the lowest as well as to the highest who seek asylum in the five Panch Parameshtis to develop these three divine qualities in them. With a vowful determination, the aspirants should chant the Navakara Maha Mantra incessantly almost every day and also try to a harmless life of utmost serenity and sanctity as far as possible.

The Navakara Maha Mantra (Namaskara Mantra) consists of nine lines and the first five are intended to offer adoration, prostrations and salutations to the Panch Parameshtis. These are five states of spiritual development, The remaining four lines are meant to denote the miraculous effect of chanting the first five lines.

Navakara Maha Mantra

Namo Arihantanam
Namo Siddhanam
Namo Aayariyanam
Namo Uvvajjhhayanam

*Courtesy : Mahaveer Vani Prakashan, Raichur (Karnatak)

Namo Loe Savvasaahunam
Esso Pancha Namukkaro
Savva Pavappanasano
Mangalanam Cha Savvesim
Paddamam Havai Mangalam

नवकार महामंत्र

नमो अरिहंताणं
नमो सिद्धाणं
नमो आयरियाणं
नमो उवज्झायाणं
नमो लोए सव्व साहूणं
एसो पंचणमोक्कारो,
सव्व पावप्पणासणो ।
मंगलाणंच सव्वेसिं,
पढ़मंहवइ मंगलम् ।।

Namo Arihantanam

ADORATION to the Arhant. The Arhant is the personification of all virtues and he is worthy to be adored, proprated and worshiped. Thirthankara, the originator of the holy path of self purification and Jineswara (self Conqueror) are the Arhant's synonymous names. The Arhant is the holiest human who has become a divine man. He is so extraordinary and unique among the entire creation that he is regarded as one of the most bonafide world Teachers and all recognise him by his nature. The self enlightened human has become an Arhant by eliminating all his Karmas, destroying all his mental foes and elevating himself to the realm of a perfect man, the embodiment of all virtues. The Arhant is Omniscient. He is ALL KNOWING master of infinite Compassion and other benevolent qualities. By his renunciation and sacrifices in his human life for fulfilling the Cosmic Mission of universal welfare and the uplifitment of all living beings he has elevated himself, to the exalted position of the Arhant in the realm of nature. By his own right of an Arhant, the emancipated soul in the human form, the entire nature with all her paraphernal bows down to him and stands at his command to render

him all services in the fulfilment of his meritorious mission of peace and beautitude.

Namo Siddhanam

ADORATION to the Siddhas. The Siddhas are those purified and emancipated souls, who have reached their original stage of the formless, the self illuminating, the self blissful and the self powerful nature of the liberated soul. These Siddhas also become free from the cycles of births and deaths by attaining to the highest stage of realisation. They exist in a most purified and perfect state. Their very existence in the Sidhaloka at the topmost region of the universal is the real fountain head of universal welfare of all living beings, As the shining moon gives us coolness and showers the nectar of peace by its own nature, the Siddhas by their own ultramundane existence having attained perfection bestow peace and happiness on all living beings.

Namo Aayariyanam

ADORATION to the Acharyas. They represent the First Lord Arhant and propagate his message of truth and practice them in their own lives for the development of real knowledge. Having realised divine powers as a result of their own Sadhana by the practice of Ahimsa, Samyama and Tapa, they preach and show the right path for the purification of our thoughts and our actions.

Namo Uvvajjhhayanam

ADORATION to the Upadhyayas. They also show us the right path and teach us the tenets as expounded in the holy scripture by the Tirthankaras and their accredited representatives, the Acharyas. They show us the true nature of reality existing in the Cosmic order and also its potential constitutional laws and how to observe them in our practical life.

Namo Loe Savvasahunam

ADORATION to all the Saints and Ascetics of the world. They are ocean of Forgiveness (Kshama) and are immersed in high and

noble thoughts bestowing blessings for the betterment of all living beings. Having taken the vow of living the non-injurious life or the life of Ahimsa, they commit no sin by word, thought and deed.

THOSE five Divine Personages or the Panch Parameshtis described above are offered adoration and salutations by the five lines presented in the Navakara Maha Mantra. These five Parameshtis are to be worshipped, extolled, adored, loved and respected and contemplated by all aspirants who desire to live the needful and compassionate life for their self-enlightenment and emancipation.

THE Navakara Maha Mantra is all inclusive of spiritual aspirations and ideals for guiding into the gateway of self-realisation. By chanting this holy Mantra regularly immersed in deep contemplation of the Pancha Parameshtis, the entire divine qualities of Ahimsa. Samyama and Tapa are gradually generated day by day in the aspirant. It is needless to say that the potential strength of Ahimsa. Samyama and Tapa would increase by contemplating, reciting and meditating on this holy Mantra.

THUS we could destroy all our sins by developing the three divine qualities in us. Therefore, the Navakara Maha Mantra is the first and foremost among all the Mantras, the most miraculous benedictory hymn, most sacred for its cosmopolitan and catholicity of spiritual ideals for advancing universal peace and the common welfare of all living beings.

THE last four lines show that all the sins of the aspirant are annihilated by the effect of the five salutations and therefore it is the first and foremost duty of man to recite them in deep devotion and faith.

THE crux of the Navakara Maha Mantra can be explained here briefly in a few sentences : "I beg to offer my respectful and apologising adorations to the sanctified and enlightened souls occupying the different evolutionary stages of spiritual development possessing divine qualities of Ahimsa, Samyama and Tapa, and I offer my apologies

to all living beings belonging to the various kingdoms of life," This forms the summum bonum of the soul.

IF we recite this Mantra regularly, methodically and systematically with deep devotion and concentration of the mind, we can realise its potential spiritual power in the course of a few days and the stream of peace will begin to flow in our mind.

THE aim and purpose of reciting the Navakara Maha Mantra is to generate the three divine qualities of Ahimsa, Samyama and Tapa in the heart of the aspirant. Unless, we begin to think seriously for the welfare of all living beings and take the vow to eliminate all vices. sinful and violent activities gradually and tender our heartfelt apologies to all living beings for all our sinful and violent deeds involving them in sufferings it is difficult to reap the real benefit of this holy Mantra. One should chant and remember this Mantra with sincere sentiments and adoration to the five ideal symbols of spiritual realisation or to the five Pancha Parameshtis mentioned in the Mantra and offer apologies simultaneously to all living beings begging their forgiveness and pardon.

THE sacred Mantra of Jainism is considered as the holiest of the holy and the best for practising and developing Universal Brotherhood or Vishwaprema. The advancement of peace, happiness and progress of all living beings is entirely based on the regular recitation of the hidden truth of this holy Mantra.

दो मुक्तक

☐ छन्दराज पारदर्शी

१. आचरण

आचरण से ही इंसान-इंसान है ।
आचरण से ही बनता शैतान है ।
आ-चरण में गुरु के तो ज्ञान मिले—
आचरण से ही मिलते भगवान हैं ।

२. बातें

बैठो तो करो प्यार की बातें ।
तोड़ो सब तकरार की बातें ।
बैर में शेर भी ढेर होते सुनो—
छोड़ो-छोड़ो अहंकार की बातें ।

—२६१, तांबावती मार्ग, उदयपुर

समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियाँ आना आवश्यक है।
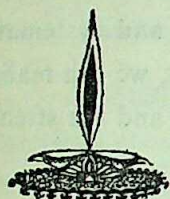
साहित्य-समीक्षा

□ डॉ. नरेन्द्र भानावत

१. **अप्पा सो परमप्पा** :—उपाचार्य श्री देवेन्द्र मुनि, प्र० श्री तारक गुरु जैन ग्रन्थालय, शास्त्री सर्किल, उदयपुर, पृ० ४२०, मू० ४०.००।

इस पुस्तक में उपाचार्य श्री देवेन्द्र मुनिजी ने इस तथ्य को अपने ज्ञान और अनुभव के बल पर स्पष्ट किया है कि आत्मा ही परमात्मा है। आत्मा और परमात्मा में स्वरूप का नहीं वरन् स्थिति का अन्तर है। अज्ञान और मोह के कारण आत्मा अपने में निहित परमात्म तत्त्व को पहचान नहीं पाती। ज्यों ही अज्ञान और मोह का अंधकार दूर होता है, परमात्मा का प्रकाश फूट पड़ता है। आत्मानुभव और आत्म-साधना के पुरुषार्थ द्वारा आत्मा परमात्मा बन जाती है। आत्मा के परमात्म बनने में जो विविध बाधक और साधक कारण हैं इनका विविध उदाहरणों द्वारा सहज-सरल भाषा शैली में स्पष्टीकरण किया गया है। आत्मा से परमात्मा बनने की अन्तर्यात्रा का अनुभवगम्य दस्तावेज है यह कृति।

२. **जैन कथा साहित्य की विकास यात्रा** :—उपाचार्य श्री देवेन्द्र मुनि, प्र० उपर्युक्त, पृ० ४५० मूल्य ४०.००।

उपाचार्य श्री ने जैन आगम-आगमेतर, उपनिषद् पुराण आदि ग्रन्थों का गहन, अध्ययन और चिन्तन किया है। वे बराबर यह महसूस करते रहे कि धर्म, दर्शन और नीति शास्त्र की गहन गूढ़ बातों को स्पष्ट करने के लिए कथाओं का विशेष आलम्बन लिया गया है। मानव सभ्यता के विकास के साथ-साथ कथा साहित्य का स्वरूप और शिल्प बदलता रहा है। तीन खण्डों में विभक्त इस कृति के प्रथम खण्ड में प्राकृत, अपभ्रंश एवं हिन्दी जैन कथा का कथ्य और वैशिष्ट्य स्पष्ट करते हुए उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी की शताधिक जैन कथाओं का महत्त्व प्रतिपादित किया गया है। द्वितीय खण्ड में जैन आगमों में आयी हुई श्रमण-श्रमणियों, श्रावक-श्राविकाओं और श्रेष्ठ पुरुषों की कथाएँ सहज-सरल भाषा शैली में प्रस्तुत की गई हैं। तृतीय खण्ड आगमोत्तर कालीन कथा साहित्य से सम्बन्धित है जिसमें सिद्धर्षि रचित 'उप-

मिति भव प्रपंच कथा' को स्पष्ट किया गया है। कथा साहित्य की विकास यात्रा को समझने में यह ग्रन्थ विशेष उपयोगी और मार्ग-दर्शक है।

३. **चिन्तन के चार चरण** :—विजय मुनि शास्त्री, प्र० पॉपुलर इलैक्ट्रिक वर्क्स, फव्वारा, आगरा–३, प्राप्ति स्थान—दिवाकर प्रकाशन, ए-७ अवागढ़ हाउस, एम० जी० रोड, आगरा–२, पृ० २७२, मूल्य २०.००।

श्री विजय मुनि शास्त्री गहन अध्येता और व्यापक दृष्टि सम्पन्न सन्त साहित्यकार हैं। धर्म, अध्यात्म, दर्शन, इतिहास, संस्कृति, शिक्षा एवं साहित्य के विविध पक्षों में आपकी गहरी पेठ है। इस कृति में आपके ३५ निबन्ध संकलित हैं जो जैन दर्शन की अध्यात्म दृष्टि, योग-साधना, जीव-तत्त्व विज्ञान को स्पष्ट करने के साथ-साथ भारतीय संस्कृति, साहित्य और शिक्षा के विभिन्न पक्षों पर अच्छा प्रकाश डालते हैं। मुनिश्री की अपनी अन्तर्दृष्टि है और वे इतिहास के विभिन्न प्रसंगों और महापुरुषों के योगदान को व्यापक सांस्कृतिक फलक पर देखते-परखते हैं। मुनिश्री के व्यापक चिन्तन और दीर्घ अनुभव का दर्पण है यह ग्रन्थ।

४. **चाह गई चिन्ता मिटी** :—चन्दनमल 'चाँद' प्र० चाँद प्रकाशन, २ बी–५ प्रेमनगर, बोरीवली (वेस्ट) बम्बई–४०००९२, पृ० १९०, मूल्य २५.००।

श्री चाँदजी प्रबुद्ध चिन्तक, सफल कवि, समर्पित कार्यकर्ता और संवेदनशील लेखक हैं। "जैन जगत्" में प्रकाशित इनकी समाजोपयोगी एवं जीवनोत्कर्षकारी संपादकीय टिप्पणियाँ प्रमुख रूप से इस पुस्तक में संकलित हैं। संकलित निबन्ध २ भागों में विभक्त हैं। प्रथम खण्ड—"जीवन सौरभ" में २३ निबन्ध हैं जो इस बात पर बल देते हैं कि जीवन को चिन्ताग्रस्त और बोझिल बनाने के मूल में अतृप्त इच्छा और कभी पूरी न होने वाली चाह है। यदि व्यक्ति अपनी इच्छाओं पर नियन्त्रण कर ले तो वह जीवन की सुगन्ध से तरोताजा हो सकता है। इसके लिए चाहिए मधुर मुस्कान, मीठी वाणी, उत्साह, आस्था, समभाव, गुण ग्राहकता, आत्म-संयम, आदि गुण। द्वितीय खण्ड "बिम्ब प्रतिबिम्ब" में २८ निबन्ध हैं जो धार्मिक एवं सामाजिक प्रवृत्तियों और गतिविधियों की वर्तमान स्थिति का चित्रण करते हुए उनमें रचनात्मक परिवर्तन लाने के लिए सम्यक् दिशा बोध करते हैं। पुस्तक सामान्य पाठकों के लिए जीवन को सुखी बनाने के विविध उपाय और सूत्र प्रस्तुत करती है।

५. **सचित्र जैन वर्णमाला** :—साध्वी विमलवती, प्र० अमर हर्ष साहित्य सदन, जोधपुर, पृ० ६४, मूल्य १५.००।

बच्चों के नैतिक संस्कार-निर्माण में यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है। साध्वीश्री ने बड़े श्रम और निष्ठाभाव से जैन सिद्धान्त को जैन शब्दावली व रंगीन चित्रों के माध्यम से स्पष्ट करने का सरल और प्रभावी प्रयास किया है। ज्योंही बालक वर्णमाला सीखने का प्रयास करता है वह अपने इर्द-गिर्द के विभिन्न पदार्थों और घटनाओं से जुड़ता है। अ=अरिहंत, आ=आचार्य, क=कल्पवृक्ष, ग=गजसुकुमार मुनि जैसी समझ विकसित होने से बालक सद्-संस्कारों में प्रारम्भ से ही ढलने लगता है। प्रत्येक वर्ण को किसी न किसी मूल्य से जोड़ने के लिए सरल भाषा में उससे सम्बद्ध एक दोहा रचा गया है और फिर उसमें निहित प्रसंग या कथा को एक अनुच्छेद में स्पष्ट किया गया है। बहुरंगी चित्र बालमन को सहज आकर्षित करते हैं। इस प्रकाशन द्वारा एक अभाव की पूर्ति हुई है।

सादगी का सुख

□ राज सौगानी

गौतम बुद्ध ने जीवन में पूरी तरह सादगी अपना ली थी। वे दिन में केवल एक बार भोजन करते थे। ज्ञान-प्राप्ति के बाद उन्होंने किसी गृहस्थ का दिया हुआ वस्त्र भी नहीं पहना। जो लोग उन्हें आमंत्रित करते उनसे भी वे आग्रह करते थे कि स्वाभाविक व सादगी को कायम रखा जाए। एक बार बोधि राजकुमार ने उन्हें अपने घर बुलाया और उनकी राह में कालीन बिछा दिए। उन्हें देखकर बुद्ध अटक गए। उनका अभिप्राय समझ कर उनके प्रिय शिष्य आनन्द ने कहा—

"राजकुमार, ये कालीन हटा लो, तथागत इन पर नहीं चलेंगे।"

आनन्द ने यह भी बताया कि वे भावी पीढ़ी के लिए सादगी का आदर्श रखना चाहते हैं और अल्प साधनों से जीवनयापन करने में विश्वास रखते हैं। अल्प भोजन, अल्प वस्त्र तथा खुली जगंह उन्हें प्रिय है।

फलस्वरूप राजकुमार ने कालीन हटा लिए तब गौतम बुद्ध आगे बढ़े।

एक बार कड़ाके की सर्दी में भी गौतम बुद्ध वन में पत्तों के आसन पर बैठे ध्यान में लीन थे। उनके एक अनुयायी ने देखा तो उनके पास पहुँचकर बोला—

"आप मात्र एक हलका वस्त्र पहने हैं, पत्तियों का आसन भी पतला है और जमीन भी ऊँची-नीची है, जाड़े की हवा चल रही है, आपको कष्ट हो रहा होगा, मेरे साथ चलिए।"

गौतम बुद्ध ने उत्तर दिया—"मुझे कोई कष्ट नहीं है। संसार में सुखी रहने वाले मनुष्यों में से मैं एक हूँ।"

—स्टेशन रोड, भवानीमण्डी (राज.)

पढ़ा तब लिखा—

पाठकों के पत्रांश

("जिनवाणी" में प्रकाशित सामग्री के विषय में प्राप्त पाठकों के पत्रों के अंश यहाँ प्रकाशित किये जा रहे हैं।—सम्पादक)

आचार्य सम्राट् श्री आनन्द ऋषिजी म० सा० ने "जिनवाणी" में प्रकाशित श्री रमेश मुनि 'शास्त्री' की धारावाहिक लेखमाला 'जैन संस्कृति में नारी का स्थान' पर अपना अभिप्राय व्यक्त करते हुए कहा कि लेखन शैली पांडित्यपूर्ण, भाषा प्रवाहपूर्ण और भाव अति स्पष्ट हैं। मुनिश्री जिनशासन की प्रभावना करते रहें, यही मंगल कामना है।

—चन्द्रभूषण मणि 'त्रिपाठी', अहमदनगर

'जिनवाणी' में महत्त्वपूर्ण सामग्री प्रकाशित होती है, इसके लिए साधुवाद। 'जैन संस्कृति में नारी का स्थान' तथा 'चिन्तन और व्यवहार' लेखमालाएँ बहुत उपयोगी हैं। 'जिनवाणी' समय पर प्रकाशित होती है, यह बड़े सौभाग्य की बात है।

—डॉ० कृष्णदत्त वाजपेयी
भूतपूर्व अध्यक्ष, इतिहास एवं पुरातत्त्व विभाग, सागर विश्वविद्यालय

जुलाई अंक में 'जानलेवा सौन्दर्य प्रसाधन आवश्यक क्यों?' लेख पढ़कर बहुत ही गम्भीर अनुभूति व चिन्तन हुआ। लेखक ने मूक निरीह जीवों के प्रति वात्सल्य भाव जगाने व इन अत्याचारों को रोकने की जो प्रेरणा दी है, वह हम सबके लिए जरूरी है। असल में यह सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री हमारी नवपीढ़ी को अंधकारमय जीवन की ओर ले जा रही है। इससे हमें सावधान रहना चाहिये।

—ललित सिंघवी, सुल्तान व्रिड रोड, अमृतसर

जुलाई अंक में प्रकाशित 'जीवन और धर्म' निबन्ध सुन्दर और शिक्षाप्रद लगा। धारावाहिक कथा 'आत्म-दर्शन' बच्चों के लिए संस्कार की भूमिका है। 'भोजवृक्ष का रस' बच्चों के स्तर से अधिक कठिन है।

—जितेन्द्र बांठिया, लक्ष्मी बाजार, बाड़मेर

मई अंक में प्रकाशित कहानियाँ 'सच्ची सहनशीलता' व दो 'बूंदें' प्रेरक लगीं। 'गुरु-हस्ती' कविता तथा 'आत्म-दर्शन' उपन्यास आकर्षक लगे। 'समाज-दर्शन' व 'साहित्य समीक्षा' स्तम्भ उपयोगी हैं।

—संजय चोपड़ा, बालेसर सत्ता, जोधपुर

'प्रश्न मंच कार्यक्रम' में सरल ढंग से बात समझाई जाती है जो सीधी याद हो जाती है। इसमें कहानी देकर उत्तर पूछे जाते हैं, यह अच्छा है। आप पहेलियाँ देकर, उसके उत्तर भी पूछें।

—महेन्द्रकुमार बोहरा, पीह (नागौर)

'जिनवाणी' में प्रकाशित आचार्य श्री का प्रवचन, कविताएँ, प्रेरक-प्रसंग उच्च स्तरीय व भावोत्पादक होते हैं। 'जिनवाणी' के माध्यम से मैं समाज में मैत्री सहयोग की अटूटता की शुभकामना करता हूँ।

—ऋषभ जैन, इन्द्रगढ़—सुमेरगंज मण्डी (बूंदी)

जून के अंक में प्रकाशित 'महावीर मार्ग और हम' लेख आज के समाज के लिए प्रेरक और मार्गदर्शक है।

—कुन्दनलाल सुराणा, पाली

---

१०१ रुपये में १०८ पुस्तकें प्राप्त करें

अ. भा. जैन विद्वत् परिषद् द्वारा प्रारम्भ की गई "ज्ञान प्रसार पुस्तक-माला" के अन्तर्गत अब तक ६१ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। कुल १०८ पुस्तकें प्रकाशित करने की योजना है। प्रत्येक पुस्तक का फुटकर मूल्य दो रुपया है पर जो व्यक्ति या संस्था १०१ रुपये भेजकर ट्रैक्ट साहित्य सदस्य बन जायेंगे, उन्हें १०८ पुस्तकें निःशुल्क प्रदान की जायेंगी।

तपस्या, विवाह, जयन्ती, पुण्यतिथि पर प्रभावना के रूप में वितरित करने के लिए १०० या अधिक पुस्तकें खरीदने पर २५ प्रतिशत कमीशन दिया जायेगा।

कृपया १०१ रुपये मनिआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा 'अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद्' के नाम सी-२३५ ए, तिलक नगर, जयपुर-३०२ ००४ के पते पर भेजें।

—डॉ. नरेन्द्र भानावत
सम्पादक-संयोजक

समाज-दर्शन

सांवत्सरिक क्षमायाचना

हम, संघ नायक परम पूज्य आचार्य प्रवर श्री १००८ श्री हस्तीमल जी म० सा०, श्रद्धेय मुनि मण्डल एवं महासती मण्डल से वर्ष भर में हुई अविनय-आशातना के लिये अंजलिबद्ध हो कर क्षमायाचना करते हैं। प्रमादवश एवं अविनयवश हम आपके बताये मार्गदर्शन को समझ नहीं पाये हों, अपने जीवन को त्रुटियों से मुक्त कर संवार नहीं पाये हों, मन-वचन-कर्म का योग जिनशासन एवं संघ सेवा में अपेक्षित रूप से नहीं जोड़ पाये हों, संघ की पदमर्यादा का यथापेक्षित निर्वहन नहीं कर पाये हों, इस हेतु आप हमारे गुरुतर अपराध को भी अपने करुणार्द्र हृदय से सहज क्षमा कर यह आशीर्वाद दें कि हम आने वाले वर्ष में अपने कदम जिनशासन सेवा एवं संघ सेवा में आगे बढ़ा सकें।

हम, समाज के सभी सदस्यों से हार्दिक क्षमायाचना करते हैं। आप सबकी अपेक्षा के अनुरूप हम कार्य नहीं कर पाये हों, आपके परामर्श, दिशानिर्देशन एवं प्रेरणा को सही रूप में समझकर अमलीकृत नहीं कर पाये हों एवं कदाचित् संघ द्वारा प्रदान की गई जिम्मेदारियों के वहन में, लिखने में, बोलने में कोई कटु उद्गार व्यक्त हुए हों तो उन सब कृत्यों के लिये आप अपने हृदय को विशाल बनाकर भूलों को क्षमा प्रदान करेंगे और भविष्य में सदैव हमें सहयोग, परामर्श और प्रेरणा देते रहेंगे, ऐसी विनम्र आशा है।

संघ के प्रेरक एवं दिशानिर्देशक संरक्षक मण्डल एवं हमारे सहयोगी कार्यकर्ताओं के प्रति प्राप्त सहयोग के लिये आभार व्यक्त करते हुए हम अपनी त्रुटियों के लिये क्षमा प्रार्थी हैं।

हम अपने कार्यालय–सहयोगियों एवं संघ के सभी कर्मचारियों से क्षमायाचना करते हैं।

क्षमाप्रार्थी
सम्पतसिंह भाण्डावत, अध्यक्ष
करोड़ीमल लोढ़ा, महामंत्री
अ० भा० श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर

श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ के आकर्षक साहित्य पुरस्कार

बीकानेर—श्री अखिल भारतवर्षीय साधुमार्गी जैन संघ ने वर्ष १९८८ के लिए महोपाध्याय श्री मानिकचन्द जी रामपुरिया कलकत्ता द्वारा अपने पुत्र की

स्मृति में स्थापित **'स्व. श्री प्रदीप कुमार रामपुरिया स्मृति साहित्य पुरस्कार'** हेतु जैन धर्म, दर्शन संबंधित, सृजनात्मक मौलिक ग्रन्थ आमन्त्रित किये हैं। ग्रंथ सभी विधाओं में स्वीकार किये जायेंगे। यह पुरस्कार ११,०००/- रु. का है।

इसी प्रकार संघ स्व. श्री चम्पालाल जी सांड देशनोक की स्मृति में प्रति वर्ष ५,१००/- रु. का साहित्य पुरस्कार देता है। वर्ष १९८८ के लिए जैन विद्या से संबंधित किसी भी उपाधि सापेक्ष एवं उपाधि निरपेक्ष लिखित शोध प्रबन्ध, शोध समीक्षा एवं सम्पादित ग्रन्थ को स्वीकार किया जावेगा। यह पुरस्कार स्व. श्री सांड के सुपुत्र श्री शांतिलाल जी सांड बैंगलोर द्वारा स्थापित किया गया है।

सभी विद्वानों से निवेदन है कि संघ द्वारा प्रारम्भ इन दोनों साहित्य पुरस्कारों हेतु अपनी कृतियाँ शीघ्र भेजें। कृति भेजने और विस्तृत नियमावली प्राप्त करने हेतु समता भवन, बीकानेर पिन ३३४ ००१ के पते पर सम्पर्क करें।

रचनाएँ भेजने की अंतिम तिथि ३१ अक्टूबर, १९८९ है।

पीरदान पारख, मंत्री

विभिन्न स्थानों पर पर्युषण पर्वाराधन तप-त्यागपूर्वक सम्पन्न

कोसाणा में आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा., पं. रं. श्री हीरामुनिजी आदि ठाणा ७ के सान्निध्य में देश के सुदूर क्षेत्रों से आगत अनेक भाई-बहनों ने दयाव्रत, उपवास आदि धार्मिक आराधना की। स्थानीय अहिंसक भाइयों ने व्यसनों का त्याग किया और कइयों ने आजीवन शीलव्रत अंगीकार किये। श्री अखेराजजी बाघमार एवं श्रीमती मांगीलालजी कटारिया ने मासखमण की तपस्या की। श्री भँवरलालजी बोहरा ने सजोड़े २१ की तपस्या पूर्ण की। श्री अमरारामजी विश्नोई ने ८० वर्ष की वृद्धावस्था में २१ की तपस्या के प्रत्याख्यान ग्रहण किये। इस अवसर पर राजस्थान के गृहमंत्री श्री अशोक गहलोत, देवस्थान विभाग मंत्री श्री राजेन्द्र चौधरी, सहकारिता मंत्री श्री रघुनाथ विश्नोई आदि ने उपस्थित होकर आचार्य श्री के दर्शन एवं प्रवचन-श्रवण का लाभ लिया तथा श्री अमरारामजी की तपस्या एवं स्वास्थ्य की पृच्छा की। आचार्य श्री ने अपने मंगल प्रवचन में फरमाया कि भाई अमराराम जी को भेंट स्वरूप मैं यही चाहूँगा कि आप नशा बन्दी करायें, शराब, अफीम आदि नशीले पदार्थों पर रोक लगायें, हिंसा, व्यभिचार को रोकने में अपनी शक्ति व प्रभाव का उपयोग करें। श्री उत्तमचन्दजी बाघमार ने जोधपुर में बूचड़खाना नहीं खोलने का गृहमन्त्री से अनुरोध किया। कोसाणा संघ की तरफ से इस तपस्या के उपलक्ष्य में निःशुल्क नेत्र चिकित्सा शिविर लगाने की घोषणा की गई। अन्य अनेक प्रकार के छोटे-बड़े तप-त्याग-प्रत्याख्यान बड़ी संख्या में हुए।

ब्यावर में पं. रं. श्री मान मुनिजी आदि ठाणा ५ एवं महासती श्री संतोष कंवरजी आदि ठाणा ५ के सान्निध्य में दया, उपवास, बेला, तेला, पंचोला, आठ, नौ, ग्यारह आदि अनेक तपस्याएँ हुई। भाइयों एवं बहनों में पंचरंगी एवं दया-पौषध की नवरंगी हुई। लगभग १२० अठाइयाँ, २०० तेले आदि हुये। **बून्दी** में कुशल सेवा मूर्ति श्री शीतल मुनिजी ठाणा २ के सान्निध्य में विविध तप-प्रत्याख्यान हुए। **अलीगढ़–रामपुरा** में श्री चम्पकमुनिजी ठाणा २ के सान्निध्य में ३९ परिवारों ने चतुर्दशी के स्थान पर दशमी को रोट बनाने के संकल्प किये जिससे चतुर्दशी पर आरम्भ-सारम्भ न हो और अधिकाधिक धर्मध्यान हो सकें। विविध प्रकार के तपत्याग बड़ी संख्या में हुए। **किशनगढ़** में श्री ज्ञानमुनिजी ठाणा ३ के सान्निध्य में भाइयों एवं बहनों में अलग-अलग पंचरंगी एवं शान्ति जाप हुए। ६१ तेले, ५ अठाई, २ ग्यारह, १ चौदह, १ दस व १ नौ तथा अन्य तपस्याएँ हुई। लगभग ८५ बालक-बालिकायें धार्मिक अध्ययन कर रहे हैं।

जोधपुर में प्रवर्तिनी महासती श्री बदनकंवरजी म० सा०, परम विदुषी साध्वी श्री मैनासुन्दरीजी म० सा० आदि ठाणा १२ के सान्निध्य में विविध तपत्याग हुए। घोड़ों के चौक में प्रति रविवार को बच्चों को सुस्संकारित करने के लिए बाल-संस्कार शिविर का आयोजन किया जाता है। साध्वी श्री रतन-कंवरजी ठाणा ३ के सान्निध्य में सरदारपुरा में विशेष धर्माराधना सम्पन्न हुई। पावटा में महासती श्री सौभाग्यवतीजी आदि ठाणा ३ के सान्निध्य में विविध त्याग-प्रत्याख्यान सम्पन्न हुए। **गुलाबपुरा** में महासती श्री सायरकंवरजी ठाणा ३, **नसीराबाद** में महासती श्री शान्तिकंवरजी ठाणा ४, **हरमाड़ा** में महासती श्री तेजकंवरजी ठाणा ३ तथा दूणी में महासती श्री सुशीलाकंवरजी ठाणा ६ के सान्निध्य में भाई-बहनों ने विविध प्रकार की तपस्याएँ कर एवं त्याग-प्रत्याख्यान लेकर पर्युषण पर्व की आराधना की।

पाली में ज्ञानगच्छाधिपति तपस्वी श्री चम्पालालजी म० सा० ठाणा ७ के सान्निध्य में दया की २१ रंगी सम्पन्न हुई। १० मासखमण, ३०१ तेले सामूहिक रूप से हुए। प्रति रविवार को ४००-५०० दयाव्रत कम से कम होते रहे। श्री चन्दनमलजी सुपुत्र रूपचन्दजी मथियारी वालों ने सजोड़े ४५ वर्ष की आयु में आजीवन शीलव्रत के नियम ग्रहण किये।

जसवंतगढ़ में उपाध्याय श्री पुष्कर मुनिजी एवं उपाचार्य श्री देवेन्द्रमुनिजी के सान्निध्य में अन्य तपस्याओं के साथ ७०० सामूहिक तेले सम्पन्न हुए। विविध प्रतियोगिताओं में २०० के लगभग बालक-बालिकाओं ने भाग लिया। **बोलारम–सिकन्दराबाद** में युवाचार्य डॉ० शिवमुनिजी के सान्निध्य में सामूहिक क्षमापना, ध्यान शिविर एवं विद्वत् संगोष्ठी सानन्द सम्पन्न हुई। **बंगलौर** में प्रवर्तक श्री रूप-चन्दजी म० सा० के सान्निध्य में ६६, ५१, ४१ की बड़ी तपस्याओं के साथ कई

मासखमण, इक्कीस, पन्द्रह, ग्यारह, अठाई आदि की तपस्याएँ हुईं। बुसी निवासी ठाकुर जसवन्तसिंहजी ने पूज्य मरुधरकेशरीजी की ६६वीं जयन्ती के उपलक्ष्य में ६६ उपवास की दीर्घ तपस्या के प्रत्याख्यान किये। **आबूपर्वत** पर अनुयोग प्रवर्तक मुनि श्री कन्हैयालालजी म० सा० "कमल" के सान्निध्य में, **जोधपुर** में प्रवर्तक श्री रमेशमुनिजी एवं महासती श्री गवरांजी के सान्निध्य में १०० से ऊपर बड़ी तपस्याएँ एवं ४००-५०० तेले सम्पन्न हुए। युवा तपस्वी श्री अभयमुनिजी ने मासखमण की तपस्या सम्पन्न की। **पीतमपुरा दिल्ली** में मुनि श्री रामकृष्णजी म०, **सूरत** में मुनि श्री मंगलचन्दजी एवं भगवती मुनि 'निर्मल', **देवास** में श्री अजित मुनि ठाणा २, **नोखा** में श्री मोहनमुनिजी एवं उप-प्रवर्तक मुनि श्री विनयकुमारजी 'भीम', **कोयम्बटूर** में मुनि श्री सुमतिप्रकाशजी, आशीष मुनिजी ठाणा ५ के सान्निध्य में पर्युषण पर्वाराधना विविध तपत्याग के साथ सम्पन्न हुई। **नीमच** में श्री कमलमुनिजी के सान्निध्य में १०-१२ गांवों के वीरवाल बन्धुओं ने अठाई की तपस्या की। स्थानीय लगभग ५५ अठाइयाँ सम्पन्न हुईं। रामपुरा के श्री प्रेमचन्दजी घोटा ने मासखमण सम्पन्न किया।

जयपुर में विदुषी महासती डॉ० मुक्तिप्रभाजी, डॉ० दिव्यप्रभा आदि ठाणा ११ के सान्निध्य में बड़ी संख्या में विविध तपत्याग हुए। उपवास ३००१, बेला १२५, तेला ३०१, चोला ३१, पंचोला २५, अठाई ४५, पन्द्रह १, सोलह १, तेरह २, चौदह १, ग्यारह २, एकासना मासखमण २, वर्षीतप ४ आदि कई तपस्यायें हुईं। मासखमण करने वालों में साध्वी श्री विरागसाधना जी, साध्वी श्री योग साधनाजी, श्रीमती इचरज बाई लुणावत, श्रीमती भंवरदेवी कोठारी, श्रीमतो चन्द्रकान्ता बैद, श्रीमती पुष्पा जैन, श्री दीपक वैद, श्री महेन्द्र बोथरा आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। स्थानीय संघ अध्यक्ष श्री उमरावमलजी चौरडिया ने मौन अठाई की तपस्या की एवं आजीवन सजोड़े शीलव्रत के नियम ग्रहण किये। सामूहिक क्षमापना समारोह मनाया गया, जिसमें सभी जैन समुदायों के संतों-सतियों एवं श्रावक-श्राविकाओं ने भाग लिया। **भवानीमण्डी** में विदुषी साध्वी श्री छगनकंवरजी के सान्निध्य में विविध तपत्याग हुए। श्री पन्नालालजी कुम्हार ने जीवनपर्यन्त के लिए मदिरापान त्याग किया। प्रत्येक शुक्रवार को बूचड़खाने बन्द रखने के नियम का शक्ति से पालन कराया जा रहा है। **डूंगला** में महासती श्री कुसुमवतीजी ठाणा ५, **मदनगंज** में महासती श्री चारित्रप्रभाजी के सान्निध्य में विविध तपत्याग हुए। यहाँ नेत्र चिकित्सा शिविर एवं महिला धार्मिक शिविर का भी आयोजन किया गया। **नासिक रोड** में महासती श्री चन्दनाजी के सान्निध्य में तेले के सामूहिक पारणे हुए तथा युवती मण्डल की स्थापना की गई। **तंडियारपैठ मद्रास** में महासती श्री नानूकंवरजी के सान्निध्य में महासती श्री प्रभावनाश्रीजी ने ३६ की, लब्धिश्रीजी ने ३१ की व चारित्रप्रभाजी

ने ४२ की तपस्या सम्पन्न की। **सैदापैठ** में महासती श्री सूर्यकान्ताजी के सान्निध्य में ४ मासखमण हुए। **भिलाई** में साध्वी श्री इन्द्रकंवरजी के सान्निध्य में छत्तीसगढ़ एवं उड़ीसा क्षेत्रीय स्वाध्यायी अभिनन्दन समारोह सम्पन्न हुआ। **मद्रास** के एस० एस० जैन युवक संघ के सदस्य मद्रास में १० स्थानों पर विराजित संत-सतियों के दर्शन एवं क्षमापना हेतु गये। **कोटा** में जैन दिवाकर विद्यालय में सामूहिक क्षमापना समारोह आयोजित किया गया।

कोसाणा में विद्वत् संगोष्ठी का आयोजन

श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ कोसाणा एवं श्री अ० भा० जैन विद्वत् परिषद् जयपुर के संयुक्त तत्त्वावधान में परमश्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० एवं पं० र० श्री हीरामुनिजी आदि ठाणा ७ के सान्निध्य में कोसाणा में ११, १२ व १३ नवम्बर, १९८९ को **'जैन धर्म और उसका प्रचार'** विषय पर एक विद्वत् संगोष्ठी का आयोजन किया जा रहा है।

संक्षिप्त समाचार

जयपुर :—श्री जैन शिक्षण संघ के मंत्री श्री पुखराज कुचेरिया की विज्ञप्ति के अनुसार ९ व १० सितम्बर को संघ के सदस्य तथा जैन पाठशाला के बालक आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. तथा अन्य सन्त-सतियों के दर्शनार्थ धर्मयात्रा पर गये। **किशनगढ़** में श्री ज्ञान मुनिजी एवं **मदनगंज** में महासती श्री चारित्रप्रभाजी आदि सन्त-सतियों के दर्शन किये। **अजमेर** में श्री प्रकाश मुनिजी के दर्शनों का लाभ लिया एवं नियमित सामायिक के अतिरिक्त ५–५ सामायिक प्रति माह करने का नियम ग्रहण किया। **ब्यावर** में पं. र. श्री मान मुनिजी ठाणा ५ के दर्शन किये। रात्रि विश्राम **जैतारण** में किया। वहाँ मरुधर केशरीजी की स्मृति में संचालित छात्रावास के बालकों से सम्पर्क किया। दूसरे दिन **मेड़ता सिटी** में प्रवर्तक श्री सोहनलालजी म. सा. का प्रवचन श्रवण किया। वहाँ से **कोसाणा** जाकर आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के दर्शन किये एवं प्रतिदिन नियमित सामायिक-स्वाध्याय करने के संकल्प ग्रहण किये। संघ के लगभग ७०–८० सदस्य पाथर्डी बोर्ड की धार्मिक परीक्षाओं में सम्मिलित होने के लिए अध्ययनरत हैं।

बंगलौर :—यहाँ श्री जैन शिक्षा समिति के तत्त्वावधान में स्व. श्री हुकमीचन्दजी खींचा की स्मृति में १० सितम्बर को २०, प्रिमरोज रोड पर स्थित जैन छात्रालय में प्राकृतिक चिकित्सालय का उद्घाटन प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक डॉ. वेंकटरावजी द्वारा सम्पन्न हुआ। समारोह की अध्यक्षता वैद्यराज श्री चतरानन्दजी ने की। शिक्षा समिति के संस्थापक अध्यक्ष श्री जोधराजजी सुराणा

ने अन्य चिकित्सा-पद्धतियों की तुलना में प्राकृतिक चिकित्सा की विशेषताओं को स्पष्ट किया। प्रारम्भ में श्री मोहनलालजी खारीवाल ने अतिथियों का स्वागत किया।

पूना :—यहाँ की जैन फ्रैण्ड्स संस्था विश्व भर में फैले हुए विभिन्न भाषायी जैन युवकों को घर बैठे पत्र द्वारा परस्पर मित्रता-सूत्रों में बाँधने का कार्य करती है। संस्था द्वारा हर महीने जैन पत्र मित्रों की सूची प्रकाशित की जाती है। सूची में छात्रवृत्ति, रोजगार, जैन पत्र-पत्रिकाएँ, जैन युवक संगठन आदि के बारे में जानकारी दी जाती है। दो रुपये के डाक टिकिट भेजकर निम्न पते से सूची मंगवाई जा सकती है—जैन फ्रैण्ड्स, पो. बॉ. ५८, चिंचवड़ पूर्व, पुणे–४११०१९।

जोधपुर :—श्री ओसवाल सिंह सभा (धर्मपुरा समिति) सिवांची गेट, जोधपुर द्वारा विगत १५० वर्षों से बकराशाला एवं कबूतरखाना संचालित किया जा रहा है। वर्तमान में २२०० बकरे-गैटे हैं, जिनका भरण-पोषण, रख-रखाव और अभय जीवन दान देने का पूरा प्रयत्न किया जाता है। हजारों कबूतरों के लिए प्रति माह १५ बोरी अनाज की आवश्यकता रहती है। समिति का वार्षिक खर्चा ३ लाख रुपये है। जीवदया प्रेमी महानुभाव सहायता राशि नकद, चैक/ड्राफ्ट से श्री ओसवाल सिंह सभा (धर्मपुरा) के नाम से भेजें।

नई दिल्ली :—इस वर्ष 'अहिंसा इन्टरनेशनल डिप्टीमल जैन स्मृति पुरस्कार' वयोवृद्ध विद्वान् डॉ. पन्नालाल जैन साहित्याचार्य, सागर को प्रदान किया गया है।

बंगलौर :—यहाँ विराजित प्रवर्तक श्री रूपचन्दजी म. सा., उपप्रवर्तक श्री सुकन मुनिजी के सान्निध्य में जनसेवा कार्य संपन्न हुआ। जैन युवा समिति द्वारा महाराष्ट्र बाढ़ पीड़ितों के लिए ५०,००० रु. के कपड़े एवं ५१,००० रु. की राशि प्रदान की गई। कृष्ण जन्माष्टमी 'गौ संरक्षण दिवस' के रूप में मनाई गई। यहाँ खुलने वाले कत्लखाने का बड़ा विरोध किया गया। गौ रक्षा चित्रमयी प्रदर्शनी भी लगाई गई।

वैलूर :—यहाँ श्री विचक्षण मुनिजी ठाणा ३ के सान्निध्य में १७ से २३ सितम्बर तक धार्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन किया गया। २१०० आयम्बिल तप सामूहिक रूप से संपन्न हुए।

नोखा चांदावतों का :—यहाँ १३ सितम्बर को श्री मोहन मुनिजी एवं विनय मुनिजी 'भीम' के सान्निध्य में आचार्य जयमलजी म. सा. की २८२वीं जयन्ती तप-त्याग पूर्वक मनाई गई। देवास में भी श्री अजीत मुनिजी के सान्निध्य

में आचार्यश्री का गुणानुवाद किया गया। **जोधपुर** में प्रवर्तक श्री रमेश मुनिजी के सान्निध्य में जयन्ती समारोह सम्पन्न हुआ।

रायपैठा (मद्रास) :—पं. र. श्री सुमतिप्रकाशजी म. सा., उपाध्याय श्री विशाल मुनिजी म. सा. के सान्निध्य में २७ अगस्त को सुप्रसिद्ध डॉ. बद्रीनाथजी (शंकर नेत्रालय अस्पताल) के नेतृत्व में चक्षुदान शिविर का आयोजन किया गया, जिसमें ६०० लोगों ने नेत्रदान देने के लिए संकल्प पत्र भरे।

बम्बई :—भारत जैन महामण्डल के नये अध्यक्ष प्रसिद्ध उद्योगपति श्री संचयलालजी डागा निर्वाचित हुए हैं। आप जैन श्वे. तेरापंथी सभा, बम्बई के अध्यक्ष एवं कई धार्मिक, सांस्कृतिक संस्थाओं से जुड़े उदार, उत्साही व्यक्ति हैं। हार्दिक बधाई।

श्यामपुरा :—श्री वर्धमान जैन श्रावक संघ के चुनाव में श्री रतनलालजी जैन अध्यक्ष, श्री नरेन्द्रमोहनजी जैन उपाध्यक्ष, श्री लड्डूलालजी जैन मंत्री, श्री घासीलालजी जैन सहमंत्री एवं श्री पुष्पेन्द्रकुमारजी जैन कोषाध्यक्ष चुने गए हैं।

दिल्ली :—ग्यारहवीं कक्षा की एक छात्रा तनु आहूजा की आकस्मिक मृत्यु के बाद उसके दोनों नेत्र दो व्यक्तियों—कलकत्ता निवासी ३६ वर्षीय ए. के. चटर्जी तथा भरतपुर निवासी ८ वर्षीय बालक देवीलाल को प्रदान किए गए, जिससे उनकी अंधी दुनिया उजागर हो गई। (बाल भारती, माह अगस्त, १९८९)

शोक-श्रद्धांजलि

श्री सुगनमलजी भण्डारी, नीमाज का निधन

बंगलौर :—वीर प्रसविनी मरु वसुन्धरा के जोधपुर रियासतान्तर्गत नीमाज ठिकाणे के ठाकुर उम्मेदसिंहजी राठौड़ की प्रिय नगरी नीमाज के सुप्रतिष्ठित जैतारण पट्टी के गौरवशाली भण्डारी परिवार के श्री गंभीरमलजी बादरचन्दजी के चार पुत्रीय परिवार के द्वितीय पुत्र श्री सुगनमलजी भण्डारी का जन्म विक्रम संवत् १९६९ आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को माता चुन्नीबाई की कुक्षि से हुआ था।

आपकी शिक्षा प्रथमतः मारवाड़ नीमाज स्कूल में हुई। तदनन्तर लाला पूनमचन्दजी खींवसरा ब्यावर के संस्थान में जैन सिद्धान्तों की मौलिक जानकारी के साथ व्यावहारिक दक्षता हासिल की।

बाल्यावस्था से ही आपकी धर्मानुरागता की ओर विशेष अभिरुचि थी। आपका विवाह लगभग १४ वर्ष की आयु में शा श्री अन्नराजजी कांकरिया बिलाड़ा की सुपुत्री सुवाबाई के साथ बड़े समारोह के साथ संपन्न हुआ। आपने अपना व्यवसाय कार्य अपने अग्रज श्री इन्द्रचन्दजी भण्डारी की देखरेख में ही किया। आप उन्हें पितृ तुल्य सम्मान देते थे। उनकी आज्ञा के बिना कोई कार्य नहीं करते थे।

लगभग २० वर्ष की उम्र में आपने चौविहार का नियम लिया और जीवन पर्यन्त इस नियम का अस्खलित रूप से निर्वहन किया।

आप में 'गुरु एक सेवा अनेक' की भावना सर्वतोभावेन रग-रग में समाई हुई थी। फलतः पूज्य श्री श्रीलालजी म. सा., पूज्य श्री जवाहरलालजी म. सा., पू. श्री गणेशीलालजी म. सा. एवं पूज्य श्री नानालालजी म. सा. के दर्शन एवं सेवा का समय-समय पर लाभ लेते रहे।

आपको इस सत्य तथ्य का पूरा ध्यान था कि परम पूज्य आचार्य श्री रतनचन्दजी म. सा. की सन्त-परम्परा की मेरे परिवार पर विशेष कृपा दृष्टि रही है और भण्डारी परिवार उनकी कृपा का सदैव ऋणी है। वर्तमान आचार्य प्रवर पूज्य श्री १००८ श्री हस्तीमलजी म. सा. के प्रति आपकी अटूट भक्ति व दृढ़ श्रद्धा थी। जब भी संकटों से मन आच्छादित होता, आप पूज्य प्रवर से मांगलिक श्रवण कर संकट मुक्त होते रहे। आपकी भावना थी कि पूज्य प्रवर का चातुर्मास नीमाज में कराऊँ पर संयोग के अभाव में पूज्य प्रवर का चातुर्मास आप वहाँ नहीं करा सके।

आप पूज्य आचार्य सम्राट् श्री आनन्द ऋषिजी म. सा., तपस्वी श्री सिरेहमलजी म. सा., बहुश्रुत पं. र. श्री समरथमलजी म. सा., मरुधर केशरी श्री मिश्रीमलजी म. सा., खादी धारी श्री गणेशीलालजी म. सा. एवं तपस्वीराज श्री चंपालालजी म. सा. आदि सन्त-सतियों की समय-समय पर दर्शन व सेवा भक्ति का लाभ उठाने में अग्रणी रहते थे। आत्मार्थी सन्त-सतियों से आपका विशेष लगाव था।

सादड़ी, भीनासर, सोजत एवं अजमेर में हुए साधु सम्मेलनों में आपने सन्त-सती दर्शन के साथ चतुर्विध संघ सेवा का लाभ लिया।

साधु-सतियों के निर्मल चरित्र में सहयोगी पात्र रजोहरण आदि उपकरणों का आप संग्रह रखते थे।

जीव दया के क्षेत्र में आपकी अच्छी उमंग थी। बकराशाला, गौशाला एवं नीमाज स्थानक भवन निर्माण में आपका अच्छा सहयोग रहा।

जैन साहित्य का विकास, प्रचार-प्रसार अधिक से अधिक हो, इस ओर आपकी विशेष अभिरुचि थी। जैन इतिहास समिति जयपुर, सम्यक्-ज्ञान प्रचारक मण्डल जयपुर, दिवाकर दिव्य ज्योति ब्यावर, पाथर्डी अहमदनगर, अगरचन्द भैरोदान सेठिया बीकानेर आदि संस्थाओं द्वारा प्रकाशित सत् साहित्य का आप खूब प्रचार करते थे।

परम पूज्य आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के दर्शनार्थ आप १७ दिसम्बर, ८८ को अलीगढ़–रामपुरा पधारे थे। उस समय आपकी रीढ़ की हड्डी में दर्द था। असह्य वेदना की स्थिति में भी आलोचना कर प्रायश्चित्त पूज्य श्री से ग्रहण किए। ये आपके अन्तिम दर्शन थे।

गणेश बाग बेंगलौर विराजित प्रवर्तक श्री रूपचन्दजी म. सा. से ६ अगस्त ८६ को क्षमापना कर मांगलिक श्रवण किया। तदनन्तर १४ अगस्त को रात्रि के १० बजे अपने परिजनों को खमापना लिखवाया। लगभग ११ बजे त्याग-प्रत्याख्यान ग्रहण किए और १५ अगस्त, ८६ को प्रातः ५ बजे सामायिक के लिये उठते हुये कमर में वेदना शुरू हुई। प्रातः ८.१५ पर संथारा-पच्चखाण किए एवं ८.४५ पर संथारा सीझ गया और आप ७७ वर्ष की आयु में देवलोक को प्रयाण कर गये।

आपके पीछे एक पुत्र, चार पुत्रियाँ, एक पौत्र, चार पौत्रियों से भरापूरा परिवार है। आपके सुपुत्र श्री गणेशमलजी भण्डारी आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के श्रद्धालु भक्त श्रावक हैं।

श्रद्धानिष्ठ श्रावक श्री मोतीलालजी गाँधी का निधन

कानपुर :—धर्म परायण, श्रद्धानिष्ठ श्रावक, अनन्य गुरु भक्त, साहित्य सेवी रत्न पिता श्री मोतीलालजी गाँधी का ७६ वर्ष की आयु में ८ सितम्बर, १६८६ को कानपुर में स्वर्गवास हो गया। आपका जन्म आसोज वदी १४ संवत् १६७० दिनांक २६ सितम्बर, १६१३ को मनमाड़

(महा.) में हुआ। आपने पिता श्री हरकचन्दजी गाँधी एवं मातुश्री से जो धार्मिक संस्कार मिले, वे उत्तरोत्तर बढ़ते ही गए।

स्वर्गीय गाँधीजी ने समाज की जो सेवाएँ की हैं वे अत्यन्त सराहनीय हैं। सर्वप्रथम आपने परमाराध्य आचार्य प्रवर पूज्य श्री हस्तीमलजी म. सा. द्वारा निर्देशित आचार्य श्री विनयचन्द ज्ञान भण्डार जयपुर के अन्तर्गत लगभग २५ वर्ष तक अनवरत जैन साहित्य विकास कार्य में अनूठा योगदान दिया। जब पूज्य आचार्य प्रवर पाटण, बड़ौदा, अहमदाबाद आदि क्षेत्रों में धर्मोद्योत की लहर फैला रहे थे, उस समय आप उनकी सेवा में रहकर पाटण, अहमदाबाद, बड़ौदा आदि गुजरात के ग्राम-नगरों में पहुँचकर अलभ्य ग्रन्थों के फोटो लेकर फोटो कॉपियाँ तैयार करवा कर भण्डार में संग्रह एवं सुव्यवस्थित कर सजोने का कार्य भार संभालते रहे। परिणामस्वरूप आज आचार्य श्रीविनयचन्द ज्ञान भण्डार जयपुर में व्यवस्थित रखी प्रतियों के सूक्ष्मावलोकन से आपकी कार्य सेवाओं का दर्शकों को आभास हो जाता है। जैन इतिहास की सामग्री जुटाने में एवं इसके निर्माण कार्य में आपने पूर्ण निष्ठा के साथ आचार्य प्रवर के दक्षिण प्रवास में अच्छा सहयोग दिया।

आप श्रद्धेय आचार्य प्रवर के विश्वासपात्र सुश्रावक थे। गुरु महाराज के संकेतानुसार आगम साहित्य की सार-संभाल में आपकी पूर्ण दिलचस्पीयुक्त लगन देखते बनती थी। समाज व शासन सेवा में आप सदैव अग्रणी रहते थे। आप अपने विचारों को निर्भीकता से व्यक्त करते थे। साफ कहने की आपकी आदत थी। आप कई वर्षों से बारह व्रतधारी श्रावक थे। पिछले करीब ३० वर्षों से आप शीलव्रत अंगीकार किये हुये थे।

स्वर्गीय गाँधीजी ने तो समाज सेवा में योगदान दिया ही। आगे भी शासन सेवा होती रहे, इसी उद्देश्य से आपने अपने आत्मज श्री हीरा मुनिजी म. सा. को आचार्य प्रवर की सेवा में अर्पित कर दिया। आज श्रद्धेय आचार्य प्रवर के परम पावन सान्निध्य में पं. रत्न श्री हीरा मुनिजी म. सा. अपनी ओजस्वी वाणी से जिनवाणी का पान करा कर अनेक श्रद्धालुओं को सद्बोध प्रदान कर रहे हैं।

आप अपने पीछे १ संतरत्न, २ पुत्र, २ पुत्रियाँ, कई पौत्र-पौत्रियाँ एवं दौहित्र-दौहित्रियों से भरा-पूरा परिवार छोड़ गये हैं।

महासती श्री पुण्यप्रभाजी का स्वर्गवास

मद्रास :—उत्तरमेरूर (जिला चंगलपेट) तरुण तपस्विनी बाल-ब्रह्मचारिणी साध्वी श्री पुण्यप्रभाजी म. सा. का ३१.८.८९ को २२ वर्ष की अल्पायु में स्वर्गवास हो गया। आप विल्लीपुरम निवासी श्री रावत-मलजी डोसी की सुपुत्री थीं। आपने अपनी बड़ी बहिन चन्द्राबाई के साथ आचार्य श्री नानेश की विशेष अनुमति से विल्लीपुरम में ११ मई, ८९ को महासती श्री नानूकँवरजी के सान्निध्य में भागवती दीक्षा अंगीकृत की थी। आपने ४३ उपवास की तपस्या इसी चातुर्मास में संपन्न की थी।

सनवाड़ :—प्रवर्तक श्री अम्बालालजी म. सा. की आज्ञानुवर्ती स्थिरावास विराजित परम विदुषी महासती श्री रतनकँवरजी म. सा. का ३०.८.८९ को प्रातः ५.४५ बजे के लगभग संथारा सहित स्वर्गवास हो गया। आपने लगभग ६० वर्ष तक संयम की निर्मल आराधना की।

जयपुर :—जोधपुर वि. वि. के भूतपूर्व कुलपति एवं कलकत्ता वि. वि. के हिन्दी विभाग के भू. पू. अध्यक्ष, प्रसिद्ध विद्वान् प्रो. कल्याण-मलजी लोढ़ा के सुपुत्र श्री जगदीशमलजी लोढ़ा का १२ सितम्बर को ४६ वर्ष की आयु में असामायिक निधन हो गया। आप कुछ समय से अस्वस्थ थे एवं आपकी चिकित्सा मद्रास व जयपुर में हुई थी। आप बड़े ही मिलनसार और सेवाभावी सुश्रावक थे। आप अपने पीछे पत्नी एवं दो पुत्र छोड़ गये हैं।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति हम सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 'जिनवाणी' एवं अ० भा० जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए शोकविह्वल परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

—**सम्पादक**

साभार प्राप्ति स्वीकार

२५१/- रु. "जिनवाणी" के आजीवन सदस्यता हेतु प्रत्येक

२५२७. श्री जुगराजजी शांतिलालजी कोठारी, हैदराबाद
२५२८. श्री दानमलजी जैन, कलकत्ता
२५२९. श्री गुदड़मलजी छगनमलजी लूणावत, निम्बोल (पाली)
२५३०. श्री नेमीचन्दजी सुरेन्द्रसिंहजी सिंघी, जोधपुर
२५३१. श्री ओमप्रकाशजी सुपुत्र श्री जबरचन्दजी ओस्तवाल, गोटन
२५३२. श्री रणजीतमलजी लोढ़ा, अजमेर
२५३३. श्री चंचलमलजी राजेन्द्रकुमारजी कोठारी, चिदम्बरम्
२५३४. श्री शान्तिलालजी छाजेड़, बम्बई
२५३५. श्री पुखराजजी लुंकड़, बम्बई
२५३६. श्री पूनमचन्दजी कर्णावट, बम्बई
२५३७. मैसर्स सीयाल ट्रेडिंग कम्पनी, मावली जंक्शन (उदयपुर)
२५३८. श्री हीरालालजी धर्मेन्द्रकुमारजी जैन, मावली जंक्शन (उदयपुर)
२५३९. श्रीमती चन्द्रकान्ताजी धाड़ीवाल, बरेली
२५४०. श्री प्रेमचन्दजी जैन, नई-दिल्ली
२५४१. श्री सोहनलालजी राजेन्द्रकुमारजी छाजेड़, के. जी. एफ. (कर्नाटक)
२५४२. श्री श्वे. स्था. जैन संघ, कांधला (यू. पी.)
२५४३. मैसर्स भूपेन्द्रकुमारजी दिलीपकुमारजी जैन, रायपुर (झालावाड़)
२५४४. श्री महावीरचन्दजी मेहता, बम्बई
२५४५. श्री माणकचन्दजी लूणकरणजी बोहरा, पुष्कर (अजमेर)
२५४६. श्री हस्तीमलजी मूलचंदजी बोहरा, रतकुण्डिया (जोधपुर)
२५४७. श्री मदनलालजी बाघमार, जबलपुर
२५४८. श्री चन्द्रशेखर शान्तिलालजी मेहता, इन्दौर
२५४९. मैसर्स सज्जन ट्रेडर्स, पीपाड़ शहर
२५५०. श्रीमती कमलाजी कुमट, जोधपुर
२५५१. श्री दलपतमलजी कुमट, जोधपुर
२५५२. श्री कमलकिशोरजी पींचा, नागौर
२५५३. श्री गजेन्द्रकुमारजी सुराणा, बीकानेर
२५५४. श्री सुभाषचंदजी कटारिया, पीपाड़ शहर
२५५५. श्री सुरेन्द्रसिंहजी कोठारी, मदनगंज-किशनगढ़
२५५६. श्री मांगीलालजी गांधी, पाली

२५५७. श्री टी. महावीरचंदजी नाहर, मद्रास
२५५८. श्री बहादुरमलजी नरेन्द्रकुमारजी मूथा, बैंगलौर
२५५९. श्री झुमरमलजी मदनलालजी सिंघवी, मद्रास

५०१/– रु० "जिनवाणी" की संरक्षक सदस्यता हेतु प्रत्येक

२४. श्री उत्तमचन्दजी महेन्द्रकुमारजी कांकरिया, मद्रास

"जिनवाणी" को सहायतार्थ भेंट

५०१/– श्री मूलचन्दजी नवरतनमलजी लक्ष्मीचन्दजी भंडारी, ब्यावर
अपनी पूज्य भुवासा (बाईजी) गाजी बाईजी के २४-८-८९ को ८७ वर्ष की उम्र में समाधिपूर्वक स्वर्गवास होने की पुण्य स्मृति में भेंट।

५०१/– श्री घीसूलालजी दलीचन्दजी बाघमार, कोसाणा
श्री दलीचन्दजी बाघमार की धर्मपत्नी श्रीमती कमला देवी, श्री गणपतजी बाघमार की धर्मपत्नी श्रीमती प्रमिला देवी के आठ व श्री घीसूलालजी बाघमार की सुपुत्री सौ. प्रेमलता देवी धर्मपत्नी श्री इन्दरचन्दजी बोकड़िया की ९ की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

५००/– श्री गणेशमलजी गौतमकुमारजी भण्डारी, बैंगलोर
पूज्य पिताजी श्री सुगनमलजी भण्डारी की पुण्यस्मृति में भेंट।

२५१/– श्री भंवरलालजी मगनलालजी मुणोत, पीपाड़वाले (भण्डारा) म. प्र.
धर्म पत्नी सौ. राजाबाई मुणोत के तेरह की तपस्या के प्रत्याख्यान पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के मुख से लिये व कोसाणा में वर्षावास में करने के उपलक्ष में भेंट।

२५१/– श्री किशोरीमलजी चंचलमलजी सुराणा, बीकानेर
श्री चंचलमलजी सुराणा की धर्मपत्नी श्रीमती इन्द्रदेवी की अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

२५१/– श्री चन्द्रशेखरजी ललितकुमारजी प्रदीपकुमारजी सुपुत्र श्री शान्तिलालजी मेहता, इन्दौर
मातु श्री श्रीमती सुशीला बाई के अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

२५१/– श्री गौतमचन्दजी, राजेन्द्रकुमारजी, जितेन्द्रकुमारजी सुपुत्र श्री मांगीलालजी कटारिया, पीपाड़ शहर
मातु श्री श्रीमती लीलाबाई के ३१ उपवास की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

२०१/– श्री जेतनमलजी संचेती, अलवर वाले
अपनी धर्म पत्नी श्रीमती संतोष बाई संचेती के १७ दिन की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

२०१/– श्री सोहनलालजी संचेती, जोधपुर
श्रीमती सोहनकंवर एवं श्री सोहनलालजी संचेती के सजोड़े अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

२०१/– श्री प्रसन्नचन्दजी अमरचन्दजी लोढ़ा (नागौर वाले) गोटन
चि. अभयकुमारजी लोढ़ा के अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

२०१/– श्री रेखचन्दजी जसवन्तराजजी बाघमार, कोसाणा
श्रीमती सम्पतदेवी धर्मपत्नी श्री रेखचन्दजी बाघमार के ११, श्रीमती चन्द्रकला धर्मपत्नी श्री मदनलालजी के आठ, श्रीमती उज्ज्वला धर्मपत्नी श्री पदमचन्दजी के चार, श्रीमती किरण धर्मपत्नी श्री जसवंतराजजी के चार, श्री पदमचन्दजी बाघमार व श्री शान्तिलालजी बाघमार के तेले की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

१५१/– श्री रतनराजजी एन. भण्डारी, भांयदर
पूज्य पिताजी श्री नेमीचन्दजी भंडारी की पुण्य स्मृति में भेंट।

१५१/– श्री चम्पालालजी धारीवाल, पाली-मारवाड़
पुत्रवधू शशिकला धर्मपत्नी श्री शान्तिकुमारजी के अठाई तप का पारणा सुखसाता पूर्वक सम्पन्न होने के उपलक्ष में भेंट।

१५१/– श्री मूलचन्दजी प्रसन्नचन्दजी बाफणा, जोधपुर
श्री मूलचन्दजी बाफणा की सुपुत्री ललिता के अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

१५१/– श्री अनराजजी महेन्द्रकुमारजी कांकरिया, मद्रास
चि० रवीन्द्रकुमार संग शर्मिला का विवाह १२-७-८९ को सानन्द सम्पन्न होने के उपलक्ष में भेंट।

१०१/– श्री शाह सम्पतराजजी गौतमचन्दजी मकाना, बैंगलोर
सुपुत्र के विवाह के उपलक्ष में भेंट।

१०१/– श्री झुमरलालजी माधोलालजी मूथा, चौकड़ीकला
श्री माधोलालजी मूथा के अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

१०१/– श्री रिखबचन्दजी बाघमार, कोसाणा
श्री रिखबचन्दजी बाघमार की धर्मपत्नी की अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

१०१/– श्री अमरचन्दजी मेहता, जयपुर
श्री अमरचन्दजी मेहता एवं श्रीमती सुकनकंवरजी मेहता के तेले के पारणे के उपलक्ष में भेंट ।

१०१/– श्री हेमराजजी पुखराजजी मुणोत, (पीपाड़ वाले) बम्बई
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के सपरिवार दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट ।

१०१/– श्री जवाहरलालजी प्रेमचन्दजी बाघमार, कोसाणा
श्री राजेन्द्रकुमारजी उनकी धर्मपत्नी श्रीमती रूपादेवी ने कोसाणा ग्राम में आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. से गुरुआम्नाय करने के उपलक्ष में भेंट ।

१०१/– श्री पारसमलजी पन्नालालालजी मूथा, पीपाड़ शहर
श्री पारसमलजी व उनकी धर्मपत्नी श्रीमती सुशीला देवी के आजीवन शीलव्रत कोसाणा में अंगीकार करने के उपलक्ष में भेंट ।

१०१/– श्री सुगनचन्दजी चौरड़िया, लवेरा कला
श्रीमती चंचलदेवी धर्मपत्नी श्री सुगनचन्दजी चौरड़िया के अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट ।

१०१/– श्री सोहनलालजी पितलिया, रतलाम
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी महाराज के दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट ।

१०१/– श्री विजय राजजी धारीवाल, द्वारा–मंगल टैक्सटाइल्स, जोधपुर
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट ।

१०१/– श्री जैन रत्न युवा संघ, मद्रास
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट ।

१०१/– श्री पी. एस. सुराणा, एडवोकेट, मद्रास
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट ।

१०१/– श्री उत्तमचन्दजी महेन्द्रकुमारजी, कांकरिया, मद्रास
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के दर्शनार्थ पधारने से उपलक्ष में भेंट ।

१०१/– श्री मदनलालजी कमलकिशोरजी कांकरिया, मद्रास
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

१०१/– श्री अन्नराजजी पन्नालालजी कोठारी, मद्रास
पुत्रवधू अनीता कोठारी के ९ की तपस्या के एवं दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

१००/– श्री राजमलजी चौरड़िया, मैसर्स दलीचन्दजी नानालालजी चौरड़िया, रतलाम
श्री राजमलजी चौरड़िया के बड़े पुत्र श्री चन्दनमलजी चौरड़िया इन्दौर के पौत्र रत्न की प्राप्ति की खुशी में भेंट।

१००/– श्री कल्याणमलजी कनकमलजी चौरड़िया ट्रस्ट, मद्रास
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के सपरिवार दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्री श्रीलाल सम्पतराजजी कावड़िया, अजमेर
पर्युषण पर्व के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्री धरमचन्दजी मेहता, सेंथीया निवासी
अपनी पुत्रवधू सौ. अरुणा देवी धर्मपत्नी श्री प्रथमराजजी मेहता की अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्री किशोरचन्दजी मेहता, सेंथीया निवासी
अपनी धर्मपत्नी श्रीमती सुशीला देवी की अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्री श्वे. स्था. जैन श्रावक संघ, रायपुर (झालावाड़)
पूज्य भावनाजी म. सा. के ३१ उपवास की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्रीमती विद्यादेवी कोठारी धर्मपत्नी श्री शान्तिलालजी कोठारी, जयपुर
अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्री ताराचंदजी ज्ञानचंदजी बैद (खण्डेला वाले) जयपुर
उनकी पूज्य माताजी की पुण्य स्मृति में भेंट।

५१/– श्री लालचन्दजी मोहनलालजी, गोटन

५१/– श्री घेवरचन्दजी नाहर, भोपाल
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्री गोकलचन्दजी मेहता, मद्रास
श्री देवराजजी नाहर एवं उनकी धर्मपत्नी के अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्री बनवारीलालजी जैन, नारनौल (हरियाणा)
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के दर्शनार्थ पधारने एवं सजोड़े शीलव्रत अंगीकार करने के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्री प्यारचन्दजी रांका, सैलाना
चि. मुकेश ने आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. से कोसाणा ग्राम में गुरु आम्नाय लेने के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्री महेन्द्रचन्दजी चौधरी, मद्रास
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के सपरिवार दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्री गौतमचन्दजी उम्मेदराजजी हुण्डीवाल, मद्रास
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के सजोड़े दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

५१/– श्री बादरमलजी मूथा, बैंगलोर
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के सपरिवार दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

५०/– श्री वर्द्धमान जैन श्वे. स्था. संघ, रामगंजमण्डी (कोटा)
पर्युषण पर्वाराधन के उपलक्ष में भेंट।

५०/– श्री बादलचन्दजी खिवेसरा, जोधपुर
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के सपरिवार दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

३१/– श्रीमती मानकंवरजी डागा, बून्दी
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. मा. के आज्ञानुवर्ती सुशिष्या पं. रत्न श्री शीतलमुनिजी म. सा. का बून्दी चातुर्मास होने के उपलक्ष में भेंट।

३१/– श्री पानमलजी जसवन्तराजजी मूथा, लासुर-स्टेशन
आचार्य प्रवर के सान्निध्य में अष्ट दिवसीय पर्युषण पर्वाराधना करने के उपलक्ष में भेंट।

३१/– श्री बलवन्तराजजी सुराना मैसर्स सुजानमलजी बागमलजी सुराना, अशोकनगर (गुना) की सुपुत्री सुश्री निशा के अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

३१/– श्री मोहनलालजी रतनलालजी कोठारी, गोटन
हमारे बड़े कंवर सा. देवराजजी एवं हमारी बाई किरण तथा हमारी छोटी बाई सुन्दर के अठाई की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

२१/– श्री शेषमलजी चम्पालालजी कोठारी, मद्रास
सपरिवार पूज्य आचार प्रवर के दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

२१/– श्री धनरूपचन्दजी बुबकिया (जैन), जोधपुर
अपनी धर्मपत्नी श्रीमती सुशीलादेवीजी के स्वास्थ्य लाभ की खुशी में भेंट।

२१/– श्री कैलाशचन्दजी शान्तिलालजी बोहरा, भवानीमंडी
विदुषी महासती श्री छगनकंवरजी के सान्निध्य में पर्युषण पर्व पर ११ उपवास की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

२१/– श्री मांगीलालजी प्रजापत, पीपाड़शहर
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के मुखारविन्द से सजोड़े आजीवन शीलव्रत अंगीकार करने के उपलक्ष में भेंट।

२१/– श्री सूरजमलजी शिशोदिया, रामपुरा वाले
विदुषी महासती श्री छगनकंवरजी म. सा. के सान्निध्य में पुत्रवधू सौ. सोहन बाई की २१ उपवास की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

११/– श्री संतोषकुमारजी अमृतलालजी मूथा, सालुर स्टेशन
श्री अमृतलालजी मूथा के ज्येष्ठ सुपुत्र चि. संतोषकुमारजी का शुभ विवाह सौ. कां. अनीता के साथ होने की खुशी में भेंट।

५०१) रु० साहित्य प्रकाशन की आजीवन सदस्यता हेतु

३५८. श्री वर्द्ध. स्था. जैन श्रावक संघ, बैंगलोर
३५९. श्री गणेश जैन पुस्तकालय, भदेसर, (चित्तौड़गढ़)
३६०. श्री बादलचन्दजी गौतमचन्दजी कांकरिया, मद्रास
३६१. श्री मनोहरलालजी जैन, हैदराबाद
३६२. शाह. श्री हस्तीमलजी इन्द्रचन्दजी भंसाली, बैंगलोर
श्री चम्पालालजी विजयकुमारजी सिंघवी, जयपुर

स्वाध्याय संघ को भेंट

५०१/– श्रीमान् रिखवचंदजी सा. सुखाणी, रायचूर ने सजोड़े पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. से आजीवन शीलव्रत अंगीकार करने के उपलक्ष में स्वाध्याय संघ जोधपुर को भेंट र. नं. १२५, २३-९-८९

५०१/– श्री रिखबचंदजी सा. सुखाणी के रिश्तेदारों की ओर से श्री सुखाणी एवं धर्म पत्नी श्री रत्ना बाई सुखाणी के आजीवन शीलव्रत अंगीकार करने के उपक्षल में भेंट स्वरूप प्राप्त हुए। र. नं. १२६–२३-९-८९

२५१/– श्री गौतमचंदजी राजेन्द्रकुमारजी जितेन्द्रकुमारजी सुपुत्र श्री मांगीलाल जी कटारिया, पीपाड़ सिटी, श्री लीला बाई के ३१ की तपस्या के उपलक्ष में आचार्य श्री के दर्शनार्थ जाने के उपलक्ष में।

२०५/– गुप्त दान से र. न. १२४–२३-९-८९

२०१/– श्री अन्नराजजी बस्तीमलजी भण्डारी, रायचूर र. नं. १२३–२३-९-८९

(सन्दर्भ—जोधपुर स्वाध्याय संघ पत्र दिनांक २३-९-८९)

स्वाध्याय शिक्षा को सहायतार्थ भेंट

५००/– श्री रेखराजजी चौधरी, आरकाट वालों ने स्वाध्याय शिक्षा के प्रकाशनार्थ ५००/– प्रति वर्ष देने की भावना व्यक्त की है।

□□□

"जिनवाणी" में प्रकाशनार्थ विज्ञापन की दरें

साधारण अंक की दरें	प्रतिमाह	सम्पूर्ण वर्ष	विशेषांक की दरें
टाइटल चौथा पृष्ठ	१,५००/—	८,०००/—	५,०००/—
टाइटल तीसरा पृष्ठ	१,०००/—	५,०००/—	३,०००/—
टाइटल दूसरा पृष्ठ	१,०००/—	५,०००/—	३,०००/—
आर्ट पेपर पृष्ठ	१,०००/—	५,०००/—	३,०००/—
साधारण पृष्ठ	६००/—	३,०००/—	१,०००/—
साधारण आधा पृष्ठ	४००/—	२,०००/—	५००/—
साधारण चौथाई पृष्ठ	३००/—	१,०००/—	२५०/—

कृपया विज्ञापन राशि मनीआर्डर/ड्राफ्ट/चैक से 'जिनवाणी' के नाम से कार्यालय के पते पर भेजें।

विज्ञापन देने वालों को तथा प्रेरित करने वालों को 'जिनवाणी' पत्रिका एक वर्ष तक निःशुल्क भेजी जा सकेगी। —मंत्री, सम्यग्ज्ञान प्रचारक मंडल

SHRI BHUDAR KUSHAL DHARAM

INCOME AND EXPENDITURE ACCOUNT

Expenditure	Amount
To Cash grants to poor, grants for Medical & Education.	2,44,392.05
To Postage Expenses	7,603.95
To Bank Commission	20.00
To Miscellaneous Expenses	397.30
To Difference in Trial Balance	1.00
	2,52,414.30

JAIPUR
Dated : 11 Sep., 1989

Poonam Chand Bader
Trustee

BANDHU KALYAN KOSH, JAIPUR

FOR THE YEAR ENDED ON 31ST MARCH, 1989

Income	Amount
By Donations	82,101.00
By Interest on Deposits	1,66,662.73
By Excess of Expenditure over Income.	3,650.57
	2,52,414.30

AUDITORS' REPORT

As per our report of even date.

For N. C. DHADDA & CO.

(S. K. JAIN)

Partner

Chartered Accountants

SHRI BHUDAR KUSHAL DHARAM

Balance Sheet as on

Liabilities			Amount
GENERAL FUND :			
As per last Balance Sheet	12,57,807.88		
Add : Contributions received towards corpus of the Trust.	1,14,552.00		
	13,72,359.88		
Less : Excess of Expenditure over Income for the year.	3,650.57		13,68,709.31
			13,68,709.31

JAIPUR
Dated : 11 Sep., 1989

Poonam Chand Bader
Trustee

BANDHU KALYAN KOSH, JAIPUR

31st March, 1989

Assets		Amount
DEPOSITS : (Including Accrued Interest)		
Hindustan Zinc Ltd.	1,00,000.00	
Hindustan Machine Tools Ltd.	1,00,000.00	
Cement Co-operation of India Ltd.	1,50,000.00	
Steel Authority of India Ltd.	8,51,812.50	
Indian Telephone Industries Ltd.	1,00,000.00	
		13,01,812.50
Income-tax deducted at source		6,967.00
Balance with New Bank of India in S.B. A/c		40,905.40
Çash-in-hand		19,024.41
		13,68,709.31

AUDITORS' REPORT

As per our report of even date.

For N. C. DHADDA & CO.

(S. K. JAIN)

Partner

Chartered Accountants

यह शरीर नौका रूप है, जीवात्मा उसका नाविक है और संसार समुद्र है। महर्षि इस देह रूप नौका के द्वारा संसार-सागर को तैर जाते हैं। उत्तराध्ययन २३/७३

अपनी बात :

जो देवे सो देवता

○ डॉ० नरेन्द्र भानावत

सभी धर्मों में दान का महत्त्व है। दान मात्र धार्मिक अनुष्ठान नहीं वरन् सामाजिक दायित्व और कर्तव्य-बोध है। व्यक्ति अकेला जन्म लेता है और सामाजिक सहकार-सरोकार पाकर ही वह अपने जीवन-जगत् का विकास करता है। उसे अपने इस जीवन-विकास में सब ओर से कुछ न कुछ मिलता ही है। सूर्य प्रकाश देता है, तो बादल वर्षा करते हैं। पेड़ फल देते हैं तो कुएँ-नदी निर्मल नीर। परस्पर देना और सहकार लेना पारिवारिक जीवन और सामाजिक उन्नति का मूल आधार है। प्रकृति से और समाज से कुछ न कुछ प्राप्त कर हम इतने सामर्थ्यवान और समृद्ध बन जाते हैं कि पुनः दूसरों के लिए कुछ न कुछ दें। जो केवल ले-लेकर संचित करता रहता है और दूसरों के लिए कुछ देता नहीं है वह अपराधी है, कृतघ्न है। बिनोवा भावे ने ठीक ही कहा है, जो देता है, वह देवता है और जो ले-लेकर रखता है वह राक्षस है।

जब भी किसी को दें उसे अपना कर्तव्य समझकर दें। यदि देने के बदले में अधिकाधिक प्राप्ति का भाव है तो वह दान नहीं सौदा है, व्यापार है। इसके पीछे यश, पद, प्रतिष्ठा की भावना रहती है तो समझना चाहिए कि आपने देकर भी उसे खो दिया। देना त्याग रूप में होना चाहिए न कि भोग रूप में। यदि आपने दान देकर उसके बदले में अपना नाम लिखा लिया, विज्ञापन छपा लिया, पुस्तक, भवन, या अन्य रूपों में अपने नाम को उसके साथ जोड़ लिया, सम्बद्ध कर लिया तो वह दान का भोग है। इस दान से आपके खाते में कुछ जमा नहीं होता। इसीलिए धर्म शास्त्रों में गुप्तदान का माहात्म्य बताया गया है। यहाँ तक कहा गया है कि आप दाहिने हाथ से दें तो बायें हाथ को पता न लगे। गुप्तदान देने का मन तभी हो पाता है जब दाता दी जाने वाली वस्तु के प्रति ममत्व नहीं रखता, आसक्ति नहीं रखता। उसके बदले में कुछ चाहता नहीं। वह स्नेह, प्रेम और सामाजिक कर्तव्य के वशीभूत होकर जो कुछ समाज से प्राप्त किया है, उसे वापस समाज को ही अर्पित करता है। यदि दान देकर उसका विज्ञापन कर दिया, प्रदर्शन कर दिया तो वह व्यर्थ चला गया। कहा भी है—"गुप्त सो गुप्त और व्यक्त सो व्यक्त।"

किसान जब धरती में बीज बोता है तो क्या वह बीजों की संख्या का प्रचार करता है ? व्यापारी व्यापार में धन लगाता है तो क्या वह अपने धन का ढिंढोरा पीटता है ? गुप्त रखने पर ही खेती और सम्पत्ति फलती-फूलती है। इसी प्रकार जो निर्विकार भाव से, निःस्वार्थ भाव से दान देता है, वह अपने खाते में पुण्य संचित करता है। यह श्रेष्ठ गणित की प्रक्रिया है। इसमें ४+४ आठ नहीं बल्कि इसमें ४×४ सोलह होते हैं। जो निम्न स्तर की गणित में गोते खाते हैं वे दान की महिमा को नहीं समझते। वे उसे सामान्य लेन-देन का व्यापार मानकर चलते हैं।

आज समाज में हर क्षेत्र में दान की बात बड़े जोरों से चलती है। दान की प्रतिस्पर्धा में बड़ी-बड़ी बोलियाँ लगती हैं। जो जितना अधिक दान दे पाता है, वह उतना अधिक श्रेष्ठ धर्मात्मा-पुण्यात्मा समझा जाता है। धर्म तत्त्व को, धर्म रस को जिसने कभी जाना नहीं, समझा नहीं, छुआ नहीं वह पैसे के बल पर समाज का सर्वेसर्वा और संघ-संगठन का कर्णधार बन बैठता है। उसकी जय-जयकार होने लगती है। गला मालाओं से लद जाता है। रजत और स्वर्ण फ्रेमों में जटित अभिनन्दन पत्रों का अम्बार लग जाता है। यह स्थिति दान को दम्भ में बदल देती है। देखने में ऐसे कई प्रसंग आते हैं जहाँ कमरों और भवनों पर ही नहीं, सीढ़ियों, पंखों और टेबल-कुर्सियों तक पर दानदाताओं के नाम लिखे हुए मिलते हैं। दान देने की यह होड़, कई बार अधिक धन संचय करने की लोभवृत्ति में बदल जाती है जो अन्यथा तरीकों से धनार्जन के लिए उत्प्रेरित करती रहती है।

यह ध्यान रहे कि दान में केवल वस्तु या धन देना ही जरूरी नहीं है। आपके पास जो कुछ है वह निःस्वार्थ भाव से प्रेम पूर्वक दूसरों को दीजिए। अपना ज्ञान देकर दूसरों का बोध जगाइए, प्रेम देकर वैर-विरोध शान्त कीजिए, आहार देकर भूख मिटाइये, औषध देकर रोग मिटाइये। दो हाथ से कमाइए और हजार हाथ से बांटिए पर क्रोध या अहं के वशीभूत होकर नहीं, दिखावा करके नहीं, आन्तरिक प्रेम और वात्सल्य भाव में डूबकर, सराबोर होकर।

★ • ★
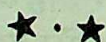
प्रवचनामृत

अभी नहीं तो कब करोगे ?*

☐ आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा.

आज यहाँ नीमाज का श्री संघ आपके मध्य उपस्थित है। चातुर्मास की विनती के लिए आस-पास के श्री संघों का आना कोई नई बात नहीं है। नीमाज श्री संघ की विनती के पीछे एक वयोवृद्ध, समाज के अग्रगण्य कर्मठ-कार्यकर्ता की चिर-संचित अभिलाषा कार्य कर रही है। वे कार्यकर्ता आज नहीं हैं। अपने परिवार, अपने समाज को छोड़ हमेशा के लिए इस जगत से चले गये। वय में वृद्ध होते हुए भी दिवंगत सुश्रावक श्री सुगनमलजी भंडारी ने अपने अंतिम क्षणों तक जीवन को समाज के लिए समर्पित रखा। जीवन भर उन्होंने अपने परिवार के साथ ही साथ अपने समाज की भी निष्ठा के साथ देखभाल की। मारवाड़ में भी और बैंगलोर में भी वे सदा समाज, जाति, धर्म के लिए कुछ न कुछ किया करते थे। वे एक अग्रणी पुरुष थे, जिनसे सैकड़ों अन्य व्यक्ति प्रेरणा पाते थे। अपने परिचय के घेरे में आने वाले नवयुवकों से वे जब भी मिलते, सामायिक एवं स्वाध्याय के बारे में अवश्य प्रश्न करते।

बंगलोर रहते हुए भी उन्होंने मारवाड़ के नवयुवकों को सदा प्रेरित किया और उन्हें समाज में आगे बढ़ने के लिए तैयार किया। वर्तमान घोर भौतिकवादी युग के इस स्वछंद वातावरण में जी रहे बच्चों और युवकों को उनकी यह प्रेरणा कभी-कभी बहुत अखरती थी। उन्हें लगता कि यह वयोवृद्ध व्यक्ति उन्हें कस रहा है। नियन्त्रण जब बड़ा लगता तो व्यक्ति को उसकी प्रेरणा और उसकी अनुकम्पा तक अप्रासंगिक लगने लगती है। तब झुंझला कर कोई युवक कह देता 'ये बार-बार इस तरह हमें क्या सिखाते हैं, क्या हम अब कोई बच्चे हैं?' अब उस वयोवृद्ध का नियन्त्रण समाप्त हुआ। उन्होंने संसार से विदा ले ली, कहना चाहिए एक जीती-जागती प्रेरणा-पूर्ति ने आपसे विदा ले ली। विदा होने वाले इस दिवंगत आत्मा की भावनाओं की पूर्ति के रूप में ही इस विनती को गिनना चाहिए, जिसमें निमित्त बने हैं, यहाँ बैठे हुए उनके ये ज्येष्ठ पुत्र गौतमचन्द। यह विनती इनके लिए एक कर्तव्य है।

---

*कोसाणा चातुर्मास में २५ सितम्बर को दिये गये प्रवचन का अंश। श्री राजेन्द्रकुमार जैन एवं श्री पुखराज मुणोत द्वारा संयुक्त रूप से संकलित।

भण्डारी जी समाज में अपने प्रतिष्ठित पद को रिक्त कर गये। यही इस संसार की रीति है। यहाँ जो भी आता है, उसे एक न एक दिन जाना ही पड़ता है। मृत्यु एक चिरंतन सत्य है। आप और हम, सभी को यहाँ से विदा होना है। जब विदा होंगे तो धन, सम्पत्ति, पद, कुर्सी, सत्ता, गादी (गद्दी) और बाल-बच्चे सभी यहीं छूट जायेंगे। साथ क्या जायेगा? साथ ले जाने के लिए यह जरूरी है कि जब तक श्वास है, सामर्थ्य है, सत्ता है तभी तक कुछ कर लिया जाए। नहीं कर सके कुछ भी तो सब कुछ यहीं रह जायेगा। सारी गाथा यहीं पड़ी रह जायेगी। खाली हाथ जाना पड़ेगा। प्रसंग चल रहा है, उस स्वर्गवासी आत्मा का। वे वयोवृद्ध थे। सत्तर वर्ष के होकर गए। हर कोई सत्तर का होकर ही जायेगा, यह कौन कह सकता है? आयु का क्या भरोसा? सत्तर क्या, अस्सी भी पार हो सकते हैं। और साठ, पचास या चालीस पर या उससे भी पहले ब्रेक लग सकते हैं। अच्छा से अच्छा ज्योतिषज्ञाता भी इस ज्योतिष में मात खा जाता है। एक ज्योतिषाचार्य ने अपने पुत्र की विदेश यात्रा का मुहूर्त निकाला। बड़े ख्याति प्राप्त थे वे ज्योतिषीजी! बहुत बड़े मिनिस्टर, बैरिस्टर, जस्टिस आदि उनके यहाँ अपना भाग्य जानने आते थे। अपनी ज्योतिष विद्या का बड़ा अभिमान उन्हें। तो साहब उन्होंने बहुत बढ़िया मुहूर्त निकाला अपने कुलदीप के लिए। ठीक समय पर सुपुत्र जी की यात्रा प्रारम्भ हुई पर मंजिल? मंजिल उसे मिले इससे पहले ही मौत मिल गई। यात्रा समाप्त होने से पहले ही जीवन-यात्रा समाप्त हो गई।

यह आर्य क्षेत्र, यह मानव भव, यह साधन-सामग्री, शरीर की स्वस्थता और घर तथा बाहर का कार्य करने के लिए सुयोग्य बाल-बच्चे, इतना सब होते हुए भी यदि अभी नहीं करोगे तो कब करोगे? जो कुछ मिला है उसके सदुपयोग का यही तो समय है।

"हंस के दुनिया में मरा, और कोई रो के मरा।
जिन्दगी उसीकी हो पाई, जो कि कुछ होके मरा।।"

संयम-पथ के पथिक बनें, पंच महाव्रत धारें, यह कठिन हो तो बारह व्रतधारी श्रावक बनें। इतना भी न कर सकें तो बारह व्रतों में से जितने-जितने ग्रहण कर सकें, उतने ही व्रत ग्रहण करें। भामाशाह बनें और राष्ट्र, समाज, जाति, धर्म के लिए धन का त्याग करें। महिलायें जयन्ति जैसी बनें, महासती मृगावती सी बनें। तप और त्याग करें। शीलव्रत धारण करें।

बंधुओ! जाना तो निश्चित है पर कुछ होके जाना या रोते ही जाना है? झोली भर के जाना है या खाली हाथों जाना है? इसका निर्णय आपको ही करना है।

चिन्तन :
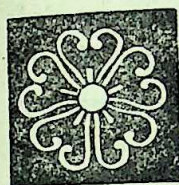
निश्चय और व्यवहार

□ श्री सूरजमल मेहता

निश्चय साध्य है व्यवहार साधन है। निश्चय लक्ष्य है व्यवहार मार्ग है। निश्चय मंजिल है व्यवहार सीढ़ियाँ है। निश्चय यदि पानी है तो व्यवहार पाल है। निश्चय में जीव अमर है, व्यवहार में जन्मता-मरता है।

हमारा लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति है, पर वह कैसे प्राप्त हो ? भगवान् महावीर ने हमें मोक्ष प्राप्ति का रास्ता बतलाया और कहा—

"नांण च दंसणं चेव, चरित्तं च तवो तहा।
एस मग्गुत्ति पन्नतो, जिणेहिं वर दंसिहिं ॥

—उत्तराध्ययन, अ. २८ गा. २

अर्थात् सर्वज्ञ सर्वदर्शी जिनराज ने ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप को ही मोक्ष मार्ग कहा है।

'तत्त्वार्थ सूत्र' में भी मोक्ष प्राप्ति का यही मार्ग वाचक श्री उमास्वाति ने बतलाते हुए कहा है—

"सम्यक्दर्शनज्ञानचारित्राणि मोक्षमार्गः।"

—तत्त्वार्थ सूत्र अ. १, गा. ९

याने सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान और सम्यग्चारित्र ये तीनों मिलकर मोक्ष के साधन हैं।

इससे स्पष्ट है कि सम्यग्ज्ञान, दर्शन, चारित्र और तप ही मोक्ष मार्ग है। मोक्ष पहुँचने के लिये हमें चारों की आवश्यकता है। चारों को ही पूर्ण रूप से जीवन में अपनाना पड़ेगा। यदि हमने सम्यग्ज्ञान, दर्शन को पा लिया किन्तु जीवन में चारित्र और तप का आचरण नहीं किया तो हम मोक्ष रूपी मंजिल पर नहीं पहुँच सकते हैं।

वास्तव में निश्चय और व्यवहार दोनों की आवश्यकता है, दोनों अपनी-अपनी जगह पर ठीक हैं। कोरे निश्चय से भी काम नहीं चल सकता, क्योंकि

साधक को चलना व्यवहार की धरती पर है। निश्चय के आकाश में उड़ने के लिये व्यवहार की धरती पर पहले पैर जमाना आवश्यक है। निश्चय के पर्वत-शिखर पर चढ़ने के लिये व्यवहार की तलहटी से ही आगे कदम बढ़ाना होता है। इसलिये निष्कर्ष यह निकला कि साधक की आँखें निश्चय की ओर टिकी हों, और उसके पैर टिके हों व्यवहार की धरती पर। एकान्त निश्चय की ओर देखते रहकर व्यवहार को दृष्टि से ओझल नहीं करना है, तथैव एकान्त व्यवहार की धरती पर चलते रहने की धुन में निश्चय को आँखों से ओझल नहीं करना है। साधक जब तक संसार दशा में है, तब तक दोनों दृष्टियों का उसे उपयोग करना है। साधक को 'ज्ञान क्रियाभ्यां मोक्षः' यह सूत्र ध्यान में रखना है अर्थात् सिद्धि-प्राप्ति के लिये ज्ञानपूर्वक क्रिया करना याने निश्चय और व्यवहार दोनों आवश्यक हैं।

आज निश्चय की ओर तो बहुत जोर दिया जा रहा है, किन्तु व्यवहार को गौण किया जा रहा है, पर बिना व्यवहार के निश्चय पर पहुँचा कैसे जा सकता है ? जब तक मंजिल पर नहीं पहुँचते तब तक व्यवहार की आवश्यकता रहेगी। जैसे-जैसे ऊपर की सीढ़ियों पर चढ़ते जावेंगे, नीचे की सीढ़ियाँ अपने आप छूटती चली जावेंगी। जिस प्रकार एक विद्यार्थी परीक्षा में उत्तीर्ण होकर अगली कक्षा में चला जाता है तो पिछली कक्षा की पढ़ाई स्वतः ही छूट जाती है तथा जिस प्रकार नदी को पार करने के लिये नाव की आवश्यकता होती है, किन्तु नदी पार करने के पश्चात् उसकी आवश्यकता नहीं रहती। इसी प्रकार जैसे-जैसे आत्मा का विकास होता जावेगा वैसे-वैसे व्यवहार छूटता जावेगा और जब आत्मा का पूर्ण विकास हो जावेगा याने आत्मा कर्म-मल से रहित हो जावेगी और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर लेगी तो व्यवहार की कोई आवश्यकता नहीं रहेगी।

सांसारिक कार्यों की पूर्ति हेतु हम व्यवहार की आवश्यकता समझते हैं और उस व्यवहार को करते भी हैं। जैसे दुकानदार दुकान पर जाता है। उसका दुकान पर जाने का एकमात्र लक्ष्य रुपया कमाने का है किन्तु वह नहा-धोकर तथा अच्छे वस्त्र पहन कर दुकान पर जावेगा, दुकान पर भी समय पर वह पहुँचेगा तथा दुकान को भी वह साफ-सुथरी रखेगा, सामान को सजाकर रखेगा और ग्राहकों से अच्छा व्यवहार करेगा तथा उचित कीमत पर माल बेचेगा, तो अधिक ग्राहक उसकी दुकान पर आकर माल खरीदेंगे और इस प्रकार उसको अच्छी कमाई होगी। तथा एक दूसरा दुकानदार जो मेले वस्त्र पहनकर दुकान पर जाता है और सामान को भी व्यवस्थित ढंग से दुकान पर नहीं रखता है, जिसका व्यवहार भी ग्राहकों के साथ अच्छा नहीं है, वह ऊपर वाले दुकानदार से अधिक ग्राहकों को आकर्षित नहीं कर सकेगा और वह उसके बराबर रुपया

भी नहीं कमायेगा चाहे वह अपने माल को कुछ कम कीमत पर ही बेचे। इससे स्पष्ट होता है हम संसार में व्यवहार को कितना महत्त्व देते हैं, पर आध्यात्मिक जगत् में उसके महत्त्व को नहीं समझते।

यह सत्य है कि जब तक सम्यक्त्व की प्राप्ति नहीं होगी, तब तक हम अपने मोक्ष रूपी लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर सकेंगे, किन्तु सम्यक्त्व की प्राप्ति का होना, यह तो हमारा चतुर्थ गुणस्थान ही होगा, हमें तो पाँचवाँ, छठा, सातवाँ गुणस्थान प्राप्त करते-करते तेरहवाँ गुणस्थान प्राप्त करना है, फिर तेरहवें से चौदहवाँ तो प्राप्त होगा ही और मोक्ष भी निश्चित है, किन्तु पाँचवें और छठे गुणस्थान को प्राप्त करने के लिये हमें चारित्र की तरफ कदम बढ़ाने पड़ेंगे और पूर्वबद्ध कर्मों की निर्जरा हेतु तप भी करना पड़ेगा। स्वयं तीर्थंकर भगवान् महावीर ने दीक्षा धारण की, फिर साढ़े बारह वर्ष तक घोर तपस्या करके कर्मों को नष्ट करके केवलज्ञान प्राप्त किया और बाद में सिद्ध, बुद्ध, मुक्त हुये।

यह ठीक है कि इस समय इस भरत क्षेत्र में केवलज्ञान प्राप्त नहीं हो सकता है लेकिन आज भी बहुत से महापुरुष मौजूद हैं जो एक भव से मोक्ष जावेंगे तथा ऐसे महापुरुष इस पाँचवें आरे के अन्त तक रहेंगे। साथ ही हम यह भी नहीं भूलें कि यदि केवलज्ञान प्राप्त नहीं हो तो हम अपनी साधना में आगे नहीं बढ़ें, पता नहीं हमें केवलज्ञान प्राप्त करने के लिये कितने-कितने जन्म लेने पड़ेंगे और कितनी-कितनी कठोर साधना करनी पड़ेगी। यह बात भगवान् महावीर के जीवन से हमें ज्ञात होनी चाहिये कि सम्यक्त्व प्राप्ति के २७ विशेष भवों के बाद और इन भवों में काफी साधना और तपस्या करने के पश्चात् महावीर के भव में तीर्थंकर रूप से उन्होंने जन्म लेकर आत्म कल्याण किया। इसलिये हमें भी साधना के मार्ग पर निरन्तर आगे बढ़ना चाहिये।

जब तक हम लक्ष्य पर नहीं पहुँचते, हमें व्यवहार की आवश्यकता है। स्वयं तीर्थंकर भगवान् महावीर ने व्यवहार का पालन किया है। किसी समय जब भगवान् महावीर अपने शिष्यों के साथ बीतभय नगर की ओर विहार कर रहे थे, भीषण गर्मी पड़ रही थी, दूर-दूर तक बस्तियाँ भी नहीं थीं अतः सभी शिष्यों को भूख और प्यास लग रही थी। मार्ग में तिलों से भरी हुई गाड़ियाँ मिलीं। साधुओं को देखकर गाडी वालों ने साधुओं से तिल खाकर अपनी भूख मिटाने को कहा। भगवान् जानते थे कि तिल उचित है, फिर भी भगवान् ने शिष्यों को तिल खाने की अनुमति नहीं दी। पास ही तालाब का पानी भी उचित था किन्तु गलत परम्परा पड़ने के कारण भगवान् ने शिष्यों को पानी पीकर प्यास मिटाने की आज्ञा नहीं दी और इस प्रकार व्यवहार का निर्वाह

किया। छद्मस्थ के लिये कहा है कि निश्चय में निर्दोष होने पर भी लोक विरुद्ध, वस्तु का ग्रहण नहीं करना चाहिये।

—वृहत कल्प भा. वृ. भा. २ गा.
९९७ से ९९९, पृ. ३१४-१५

व्यवहार से निश्चय की ओर बढ़ने का ज्वलंत उदाहरण प्रसन्नचन्द्र राजर्षि के जीवन में देखने को मिलता है। प्रसन्नचन्द्र राजर्षि दीक्षा लेकर भगवान् महावीर के साथ विहार करते हुये राजगृह आये। वहाँ भगवान् से कुछ दूर जाकर एक पैर पर खड़े होकर ध्यान लगाया। उधर महाराजा श्रेणिक अपने सैन्य सहित भगवान् महावीर को वन्दन करने को निकले। मार्ग में महाराजा श्रेणिक ने मुनि को ध्यानस्थ देखा तो हाथी के हौदे से उतर कर इनको वन्दन किया और फिर भगवान् महावीर को वन्दन करने को चले। भगवान् को वन्दन करने के पश्चात् उन्होंने भगवान् से पूछा कि कुछ दूर जो मुनि ध्यानस्थ खड़े हुये हैं, वे यदि इस समय काल करें तो कहाँ जावें। भगवान् महावीर ने कहा कि इस समय काल करें तो वे सातवीं नरक में जावें। कुछ देर पश्चात् आकाश में देवदुदुंभि बजी। महाराजा श्रेणिक ने भगवान् से इस दुदुंभि बजने का कारण पूछा और जब उन्हें मालूम हुआ कि मुनि प्रसन्नचन्द्र जो ध्यानस्थ खड़े थे, उन्हें केवलज्ञान प्राप्त हो गया है, तो वे आश्चर्य चकित रह गये और भगवान् से इसका कारण पूछने लगे। भगवान् महावीर ने कहा— जब तुम सवारी के साथ मेरे वन्दन को आ रहे थे तब तुम्हारे साथ जो सेना चल रही थी उनमें से एक सैनिक ने तो उनके ध्यान की प्रशंसा की किन्तु दूसरा सैनिक बोला कि ये तो मुनि बन गये हैं किन्तु उन्होंने अपने राज्य का भार अपने नादान बालक पर छोड़ दिया है और मंत्री सब राज्य कार्य संभाल रहा है। उधर पड़ौसी राजा ने अवसर का लाभ उठाकर इनके राज्य पर चढ़ाई कर दी है। सम्भव है बालक को राज्यच्युत करके मंत्री ही राज्याधिकार अपने हाथ में ले लेवे अथवा पड़ौसी राजा द्वारा बालक राजा को बन्दी बना लिया जावे।

ये शब्द ध्यानस्थ मुनि प्रसन्नचन्द्र के कानों में पड़े और पुत्र की ममता जागृत हुई तथा उनको मंत्री की धूर्तता पर एवं पड़ौसी राजा पर बड़ा क्रोध आया और मन ही मन में वे दोनों से घोर युद्ध करने लगे। तुमने जब मुझसे पहले मुनि के बारे में पूछा तब मुनि मोह वश युद्ध में लगे हुये थे और इसलिये मैंने इनको सातवीं नरक का अधिकारी बताया। युद्ध करते-करते मुनि का हाथ अपने सिर पर गया और सिर के मुकुट से वे मंत्री एवं पड़ौसी राजा को मारना चाहते थे, किन्तु जैसे ही हाथ सिर पर गया और उनको अपना सिर मुण्डित मालूम हुआ तो उन्हें तुरन्त ध्यान आया कि मैं तो साधु बन गया हूँ। अब मुझे

पुत्र से या उसके राज्य से क्या मतलब ? और फिर वे अपने आपको इन कुकृत्य विचारों के लिये धिक्कारने लगे और पाप का प्रायश्चित करने लगे। प्रायश्चित करते-करते परिणामों की इतनी विशुद्धता हुई कि समस्त घाती कर्मों को नष्ट कर केवलज्ञान और केवलदर्शन को प्राप्त कर लिया, जिसके कारण देवों के द्वारा दुदुंभि बजाई गई है। भगवान् के मुखारविन्द से श्रेणिक यह सुनकर बहुत ही प्रसन्न हुये।

इससे स्पष्ट होता है कि निश्चय की प्राप्ति के लिये व्यवहार कितना आवश्यक है।

—छाजूसिंह के दरवाजे के सामने, अलवर–३०१ ००१

इन्द्रिय-नियन्त्रण

○ श्री देवीचन्द भण्डारी

यह अनुभव सिद्ध है कि इन्द्रियों का क्षण मात्र का प्रमाद भी शरीर की शक्ति क्षीण कर देता है तथा आत्मा को सत्पथ से कुपथ की ओर ले जाता है।

जैसे मानव के हाथ में जब तक घोड़े की लगाम रहती है, तब तक वह अपनी इच्छा अनुसार उसे चलाकर अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँच जाता है अन्यथा जंगल में भटक सकता है, दुःखी हो सकता है। ऐसे ही मानव के हाथ में इन्द्रियों की लगाम रहे तो मानव अपनी इच्छा अनुसार मुक्ति-पथ पर चलकर गन्तव्य मोक्ष धाम तक पहुँच सकता है।

यह अनुभव सिद्ध सत्य है कि इन्द्रियों को आनन्द विषय-भोगों में आता है और आत्मा को आनन्द विषय-भोगों से विरत होने में आता है। अतः इन्द्रियाँ आत्मा के अधीन होकर कार्य करें तो मानव पूज्य बन सकता है।

इन्द्रियों के भौतिक सुख प्राप्त करने में व्यक्ति जितना श्रम करता है अगर उतना ही श्रम आत्म-सुख प्राप्त करने में करे तो इन्द्रियों को भी आनन्द का अनुभव होगा और आत्मा भी आत्मिक सुख के निकट रहेगी। इसका प्रत्यक्ष दर्शन संत, त्यागियों, ऋषियों, मुनियों में कर सकते हैं।

शारीरिक स्वास्थ्य की प्राप्ति के लिए भी इन्द्रिय दमन आवश्यक है। स्वस्थ शरीर से ही मानव सभी कार्य कर सकता है, अतः इन्द्रियों को नियंत्रण में रखकर ही मानव महामानव बनता है।

—डी-४७, देव नगर, टोंक रोड, जयपुर–३०२ ०१५

प्रेरक प्रसंग :
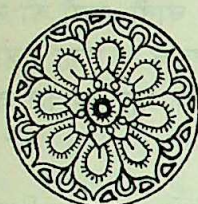
संस्कारों का प्रभाव

□ श्री बलवन्तसिंह हाड़ा

आदमी आपत्तिकाल उपस्थित होने पर, विचलित हो जाता है । वह अपने प्राणों की रक्षार्थ असत्य का सहारा तक ले लेता है लेकिन जिन्हें सत्य प्रिय होता है, वे प्राणों का मोह छोड़कर भी सत्य पर अटल बने रहते हैं । ऊँटों पर सामान लादे एक काफिला ईरान के रेगिस्तान में होकर बगदाद जा रहा था । काफिले को बीच रेगिस्तान में डाकुओं ने घेर कर प्रत्येक व्यक्ति की तलाशी ली । जो कुछ भी मिला, सब लूट लिया । काफिले में एक किशोर भी था जो बगदाद विद्याध्ययन के लिए साथ-साथ जा रहा था । लड़का पुस्तकों के गट्ठर एवं अपनी गरीब वेशभूषा में खड़ा सब कुछ देख रहा था । एक डाकू ने उपेक्षा से कहा—"ऐ छोकरे ! तेरे पास भी इन सड़ी किताबों के अलावा कुछ पैसे कौड़ी तो नहीं है ?" लड़के ने अपनी जाकिट उतारी और डाकू को सौंप दी ।

डाकू ने उस जाकेट को वापस लड़के की ओर फेंकते हुए क्रोध में कहा—"भाग यहाँ से ! तेरे पास क्या है ?" लड़के ने कहा—"मेरी माँ ने ४० सोने की अशर्फियां मेरे विद्याध्ययन समय में खर्च करने के लिए मेरी इसी जाकेट में सी रखी हैं ।" लड़के ने अपनी जाकेट से ४० अशर्फियां निकालकर डाकुओं के सामने सचमुच रख दीं । और कहा—"मुझे मेरी मां ने अशर्फियों के साथ यह भी शिक्षा दी थी कि कभी झूठ मत बोलना ।"

लड़के के भोले स्वभाव और उसकी सत्यवादिता पर डाकू मुग्ध हो गये । उन्होंने उसे प्यार किया और सारी अशर्फियां उसे लौटा दीं । डाकुओं ने काफिले के सभी मुसाफिरों को उनका सारा सामान लौटा कर यह कहते हुए क्षमा याचना की कि हम कभी अब डाका नहीं डालेंगे और मनुष्य जीवन को सफल बनाने हेतु भले आदमियों का-सा जीवन बितायेंगे ।

डाकुओं के व्यवहार और जीवन में यह परिवर्तन, उस किशोर के सत्य-व्यवहार जैसे सुसंस्कार के कारण ही सम्भव हो सका ।

—खाल की हवेली, झालावाड़-३२६ ००१ (राज.)

धारावाहिक उपन्यास [९]

आत्म-दर्शन•

□ श्री धन्ना मुनि

इस प्रकार प्रयाण करते हुए वे तिमिस्र गुफा के समीप पहुँचे। सेना के स्कन्धावार में पड़ाव डालने के अनंतर पौषधशाला में अष्टमभक्त का प्रत्याख्यान कर दर्भासन पर बैठ महाराज भरत ने कृतमाल देव का आराधन प्रारंभ किया। अष्टम तप का अवसान होते-होते अवधिज्ञान के उपयोग से कृतमाल देव को ज्ञात हुआ कि प्रवर्तमान अवसर्पिणी काल के प्रथम चक्री भरत भरत-क्षेत्र के विभिन्न राज्यों पर अपनी विजय वैजयंती फहराते हुये यहाँ आये हैं। भूत, वर्तमान और भावी कृतमाल देवों के सहज पारंपरिक जीताचार के अनुसार कृतमाल देव भी भरत चक्री के भावी स्त्रीरत्न के लिये तिलकादि चौदह प्रकार के आभरण वस्त्रालंकारादि लेकर महाराज भरत की सेवा में समुपस्थित हो निवेदन करने लगा—"देवानुप्रिय! मैं आपके राज्य का निवासी हूँ। आपका आज्ञाकारी किंकर कृतमाल देव हूँ, अतः आपके भावी स्त्री रत्न के लिये दिव्य तिलकादि १४ प्रकार के आभरण और उच्च कोटि के वस्त्रालंकार मेरी ओर से भेंट स्वरूप स्वीकार कीजिये।"

अपनी अधीनता स्वीकार करने वाले कृतमाल देव का भरत महाराज ने समुचित मधुर संभाषण से सत्कार-सन्मान करने के अनंतर उन्हें सादर विदा किया और अपने अधिकारियों, सैनिकों एवं प्रजाजनों को कृतमाल देव का अष्टाह्निक महामहोत्सव हर्षोल्लासपूर्वक मनाने का आदेश दिया। कृतमाल देव के अष्टाह्निक महामहोत्सव के सानन्द अवसान के अनंतर महाराज भरत ने अपने सेनापति रत्न सुखसेन को बुलाकर सिंहल, बर्बर, अति रमणीय अंगदेश, यवनद्वीप, मणिरत्नों एवं स्वर्ण भंडारों से भरपूर अरब देश अरखण्ड, पंखुर, कालमुख, यवनक उत्तर दिशा में वैताढ्य पर्वत-पर्यंत सभी देशों, नैऋत्य कोण के देशों और सिन्धु नदी से समुद्रपर्यंत सभी देशों पर विजय प्राप्त करने का आदेश दिया। सेनापति सुखसेन ने चक्रेश्वर भरत के आदेश को शिरोधार्य कर उसका अक्षरशः पालन किया।

•मुनि श्री की डायरी से संकलित।

चक्रवर्ती के चर्मरत्न से सेनापति ने अपने दलबल के साथ सिन्धु नदी को पार कर उपर्युक्त सब देशों पर चक्रवर्ती भरत की विजय वैजयन्ती फहराते हुए उन देशों के अधिपतियों से महार्घ्य मणिरत्नों एवं स्वर्ण भंडारों की भेंट प्राप्त की।

अपने समय के सर्वोत्कृष्ट कलाकार नटराज आषाढ़भूति ने अपनी वैक्रिय लब्धि के बल पर चर्मरत्न से चक्रवर्ती की सुविशाल चतुरंगिनी सेना को पार करने का जो दृश्य रंगशाला में प्रस्तुत किया, उसको देखकर तो वहाँ समुपस्थित बड़े-बड़े राजा-महाराजाओं से लेकर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादि सभी वर्गों के दर्शकों के आश्चर्य का पारावार न रहा। मगधाधिराज की हर्षानुभूति एवं गौरवानुभूति का यथार्थ चित्रण न वाणी के वश की बात थी और न लेखनी के ही। भरतेश्वर की षट्खण्ड साधना के दृश्यों को दर्शक यथाशक्ति यथासंभव अधिकाधिक समय पर्यन्त सांस रोके अपलक विस्फारित नेत्रों से तन्मयतापूर्वक देख रहे थे।

उपर्युक्त सब देशों के क्षितिज में भरतेश्वर की विजय पताका फहराने, वहाँ के अधिनायकों को महाराज भरत के आज्ञाकारी अधीनस्थ किंकर बनाकर और उनसे महाराज भरत के लिये बहुमूल्य, स्वर्णाभरण रत्नजटित अलंकारों एवं अनेक जाति के अनमोल, अलभ्य मणिरत्नों के भंडार भेंट रूप में स्वीकार कर सेनापति सुखसेन सदलबल चर्मरत्न पर आरूढ़ हो सिन्धु नदी को पार करते हुए महाराज भरत की सेवा में लौटे। बहुमूल्य स्वर्ण रत्नों के भण्डार महाराज भरत की सेवा में प्रस्तुत करते हुए उन्हें साञ्जलि शीर्ष झुका उन्होंने निवेदन किया—"चक्रेश्वर महाराज ! आपके आदेशानुसार सिन्धु नदी और लवणसिन्धु के कतिपय भागों को पार कर सिंहल, अरब आदि आपके द्वारा निर्दिष्ट सभी देशों के राजाओं पर विजय प्राप्त कर उन देशों पर आपकी विजय वैजयन्ती फहरा दी गई है। स्वामिन् ! उन सभी देशों के अधिकारियों ने आपकी अधीनता एवं किंकरता स्वीकार करते हुए महार्घ्य मणिरत्नों, रत्नजटित स्वर्णाभूषणों एवं हिरण्य, सुवर्ण आदि के अमित भंडार आपकी सेवा में प्रस्तुत किये हैं।"

महाराज भरत ने भेंट में प्राप्त मणिरत्नादि के विपुल भण्डारों की ओर दृष्टिनिपात करते हुए अपने सेनापति रत्न सुखसेन का समुचित सम्मान कर उसके उत्साहोल्लास का संवर्धन किया। तदनंतर सुखसेन को सादर विदा करते हुए चतुरंगिणी सेना को कतिपय दिनों के लिये विश्राम करने का आदेश दिया। आमोद-प्रमोद के साथ कतिपय दिनों तक विश्राम कर लेने के अनंतर एक दिन महाराज भरत ने अपने सेनापति रत्न सुखसेन को बुलाकर तिमिस्र गुफा के निवेदित किया। इस सुसंवाद को सुनते ही चक्रवर्ती भरत के हर्ष का पारावार

न रहा। उन्होंने सेनापति को समुचित पारितोषिक व प्रीतिदान आदि से सम्मानित किया।

उधर उसी समय चक्ररत्न आयुधशाला से बाहर निकला और गगन-मण्डल को अपने दिव्य वाद्ययंत्रों की स्वर लहरियों के समान सम्मोहक मधुर घोष से गुन्जरित करता हुआ तिमिस्र गुफा के दक्षिणी द्वार की ओर नभोमण्डल में अग्रसर हुआ। यह देखते ही महाराज भरत ने अपने सेनापति रत्न को आदेश दिया कि चतुरंगिणी सेना को सन्नद्ध कर चक्ररत्न का अनुसरण करते हुए प्रयाण करे। उसी समय महाराज भरत का हिमगिरि गौर पट्ट हस्ती रत्नजटित स्वर्ण की अंबावारी से सुसज्जित किया जाकर हस्तिशाला के अधिपति द्वारा वहाँ प्रस्तुत किया गया। जिस प्रकार उदीयमान अरुण वरुण रोहण-गिरि पर आरूढ़ होते हैं ठीक उसी प्रकार महाराज भरत भी उस गिरिवर शिखरोपम श्वेत हस्ती पर अम्बावारी में आरूढ़ हुये। उन्होंने चार अंगुल लंबे और दो अंगुल चौड़े अपने श्रेष्ठ मणिरत्न को अभिषेक पट्टहस्ती के दक्षिणी कपोल पर धारण करवाया। एक हजार देवता इस मणिरत्न की सेवा में अहर्निश समुद्यत रहते थे। उसकी अगणित महत्ताओं में आत्यन्तिक महत्व की विशेषताएँ थीं कि (१) इसे मस्तक पर धारण करने वाला सदा यौवन सम्पन्न, सुखी, स्वस्थ और परम प्रसन्न रहता। (२) उस पर किसी भी प्रकार के शस्त्रास्त्र का प्रहार नहीं होता। (३) देव, मनुष्य, और तिर्यञ्च द्वारा उपस्थित किये गये किसी भी प्रकार के उपसर्ग कभी भी उसका पराभव तो क्या, किंचित् मात्र मी अनिष्ट करने में सक्षम नहीं होते। (४) उस मणिरत्न को सिर पर धारण करने वाला सदैव सर्वावस्थाओं में पूर्णरूपेण अभय ही रहता।

इस प्रकार के मणिरत्न से विभूषित हस्तिरत्न पर आरूढ़ महाराज भरत ने गगन को गुंजरित एवं गिरिगह्वरों को प्रतिध्वनित कर देने वाले जयघोष के बीच अपनी चतुरंगिणी सेना के साथ तिमिस्र गुफा के द्वार में प्रवेश किया। घोर अंधकार से आपूरित तिमिस्र गुफा में भरत इस प्रकार शोभायमान हो रहे थे मानों पूर्णिमा का पूर्ण चन्द्र प्रलयकालीन काली काली सघन घन घटाओं के घटाटोप में प्रवेश कर रहा हो। गुफा में प्रवेश करते ही अपने काकिणी रत्न को हाथ में लिया, जो चार अंगुल ऊँचा तथा उतना ही लंबा और चौड़ा और तोल में आठ स्वर्ण पट्टिकाओं के बराबर भार वाला था। जहाँ सूर्य, चाँद और तारे भी कभी प्रकाश नहीं कर पाते थे, वहाँ महाराज भरत द्वारा काकिणी रत्न के हाथ में लिये जाते ही काल रात्रि की भाँति निविड तम अंधकार से ओत प्रोत तिमिस्र गुफा बारह योजन पर्यंत प्रकाश से जगमगा उठी। गुफा में प्रवेश करनें के अनंतर महाराज भरत ने उस गुफा की पूर्वी और पश्चिमी दोनों भित्तियों पर एक-एक

दक्षिणद्वार के कपाटों को खोलने का आदेश दिया। अपने स्वामी चक्रधर भरत की आज्ञा को शिरोधार्य कर सेनापति सुखसेन ने तेले की तपश्चर्या के साथ कृतमाल देव की आराधना की। अष्टमभक्त की तपश्चर्या के अनन्तर स्नानोपरान्त वस्त्राभरणों से सुसज्जित हो धूप, पुष्पमाला आदि हाथों में ले सेनापति सुखसेन तिमिस्र गुफा के द्वार पर पहुँचा। अनेक ईसर, तलवर, माण्डलिक, सार्थवाह और मंगल कलश लिये देश-विदेश से समागत दासियों के समूह सेनापति का अनुसरण कर रहे थे। पिहित कपाटों के पास पहुँचते ही सेनापति सुखसेन ने मयूर पिच्छ से उनका सर्वप्रथम परिमार्जन किया, तदनंतर विशुद्ध जलधारा से कपाटों का प्रक्षालन कर सेनापति ने गोशीर्ष चंदन के लेप से अपनी हथेली सहित पाँचों अँगुलियों को उस लेप से प्रलिप्त कर कपाटों पर गोशीर्ष चंदन के छापे लगाये तत्पश्चात् गंध, माला, आदि से उन्होंने कपाटों की अर्चना की।

इस प्रकार अर्चना के पश्चात् सुखसेन सेनापति ने कपाटों के सम्मुख जानु प्रमाण पुष्पों का ढेर लगाया और कपाटों पर वस्त्र का आरोपन किया। तदनंतर स्वच्छ अच्छ रजतमय सुकोमल चावलों से कपाटों के समक्ष आंगन में अष्ट-मांगलिकों का आलेखन किया। पुनः वहाँ जानु प्रमाण पुष्पों का ढेर कर सुखसेन ने चकवर्ती महाराज भरत के दण्ड रत्न को धूप निवेदित किया। यह सब कुछ कर लेने के अनंतर सेरापति सुखसेन ने शत्रुओं का विनाश करने में सक्षम, चक्रवर्ती की सेना के मार्ग को समतल, सुन्दर ओर सुगम समर्थ, सशक्त से सशक्त शत्रुओं की सेनाओं का सहज ही में सामूहिक संहार करने में सुनिपुण, चक्रवर्ती के अभिप्सित सभी मनोरथों को तत्काल पूर्ण करने वाले तथा रत्नमय मूठ वाले, वज्रनिर्मित दण्ड रत्न को अपने दोनों हाथों से कसकर पकड़ा। इसी स्थिति में सात-आठ डग पीछे की ओर उलटे पाँव सरक कर पुनः बड़ी ही त्वरित गति से कपाटों की ओर बढ़कर उन्होंने उस दण्ड रत्न से तिमिस्र गुफा के दक्षिणी द्वार के कपाटों पर पूरे वेग के साथ प्रहार किया। पुनः उसी भाँति सात-आठ डग उलटे पांव सरककर और पुनः विपुल वेग से आगे की ओर बढ़ते हुए उन कपाटों पर क्रमशः दूसरी बार और तीसरी बार भीषण प्रहार किये। तीसरे प्रहार के साथ ही तिमिस्र गुफा के पिहित कपाट घोर धरधराहट करते हुए उद्घाटित हो गये। प्रलय कालीन घनघटा में कड़कड़ाती हुई विद्युत् से पृथ्वी, आकाश और पाताल को एक ही साथ प्रकम्पित कर देने वाले वज्रपात के समान सेनापति द्वारा कपाटों पर किये गये प्रहारों के कर्णवेधी निर्घोष के आषाढ़भूति द्वारा प्रदर्शित दृश्य को देखकर सभी दर्शकों के हृदय धक् धक् करने लगे।

तिमिस्र गुफा के द्वारों को उद्घाटित करने के अनंतर सेनापति सुखसेन ने तलवर आदि विशिष्ट जनों के साथ महाराज भरत की सेवा में समुपस्थित हो तिमिस्र गुफा के दक्षिणी द्वार के कपाटों को उद्घाटित करने का सुसंवाद

योजन के अंतर से काकिणी रत्न से चन्द्रमण्डल के समकक्ष आकार वाले मण्डलों का आलेखन किया। उन मण्डलों के प्रभाव से सम्पूर्ण गुफा में चारों ओर दिन के समान प्रकाश व्याप्त हो गया। उस प्रकाश में चक्रवर्ती की सेना बड़ी ही सहज सुगमता से आगे की ओर बढ़ती ही गई। उस काकिणी रत्न में अनेक अति-विशिष्ट गुण थे जिनमें आत्यधिक महत्व के गुण थे—(१) उस काकिणी रत्न को धारण करने वाले व्यक्ति पर स्थावर अथवा जंगम किसी प्रकार के विष का कभी किञ्चित् मात्र भी प्रभाव नहीं होता। (२) संसार में जितने भी मान-उन्मान हैं, उन सब का सही ज्ञान काकिणी रत्न से तत्काल सहज हो जाता। (३) जहाँ भी काकिणी रत्न विद्यमान रहता वहाँ कृष्ण पक्ष की अंधकार पूर्ण रात्रि में भी दिन के सदृश प्रकाश होता। भरत अपनी सुविशाल चतुरंगिणी वाहिनी के साथ तिमिस्र गुफा का आधा मार्ग ही पार कर पाये थे कि उनके समक्ष दो बड़ी ही भयाविनी महानदियां आईं। एक का नाम था—उन्मग्नजला महानदी और दूसरी निमग्नजला महानदी। पहली नदी में तृण, पत्र, काष्ठ, कंकर, पत्थर, हाथी, घोड़ा, रथ, योद्धा, अथवा मनुष्य यदि गिरता तो वह उसे तीन बार घुमाकर बाहर पृथ्वीतल पर फेंक देती थी। इसके विपरीत दूसरी नदी भीतर गिरी हुई ऊपर वर्णित वस्तुओं में से किसी भी वस्तु को, पशु-पक्षी अथवा मनुष्य को तीन बार घुमाकर अपने गहन तम तल में सदा के लिए डुबो देती थी। ये दोनों महानदियां उस गुफा की प्राची दिशा की भित्ति से निकलकर पश्चिम दिशा की सिन्धु महानदी में मिल गई थी।

महाराज भरत ने अपने वार्धिक रत्न को बुलाकर आदेश दिया कि उन दोनों नदियों पर अनेक शत स्तम्भों के अवलंबन से युक्त अचल, अकम्प, अभेद्य स्वर्णरत्नमय सुदृढ़ ऐसा पुल बनाओ जिस पर से हस्ति सेना, अश्वसेना, रथ सेना और पदाति सेना सभी प्रकार की सुख-सुविधा के साथ सुगमतापूर्वक गमनागमन कर सके। वार्धिक रत्न ने चक्रवर्ती की आज्ञा को शिरोधार्य कर और देखते ही देखते दोनों महानदियों पर भरतेश्वर की कल्पना के अनुसार सुविशाल, सुदृढ़ सेतु का निर्माण कर दिया। अपनी सेना के साथ उस सुदृढ़ सेतु के माध्यम से दोनों भयंकर महानदियों को पार कर महाराज भरत गुफा के उत्तरी द्वार की ओर अग्रसर हुए। उनके उत्तरी द्वार के समीप पहुँचते ही कपाट कड़कड़-चड़चड़ निनाद के साथ स्वतः उद्घाटित हो गया। सेना सहित गुफा पार कर महाराज भरत ने आगे के क्षेत्र पर अपनी विजय वैजयन्ती फहराने हेतु प्रयाण किया।

भरत क्षेत्र के उस उत्तरार्ध विभाग में उस समय आपात नामक चिलात (म्लेच्छ) जाति के लोग रहते थे। वे लोग बड़े ही समृद्ध, तेजस्वी एवं बलशाली

थे। वे सुविशाल एवं सुविस्तीर्ण भव्य भवनों में निवास करते थे। उन लोगों के पास गृह, शैया, सिंहासन, रथ, घोड़े, पालकी आदि का प्राचुर्य था। उनके भंडार स्वर्ण, रत्न, रजत, आदि से परिपूर्ण थे। अशन, पान, खादिम, स्वादिम आदि सामग्रियों से उनके कोष्ठागार भरे पड़े थे। उनके पास दास-दासी और पशु धन का भी प्राचुर्य था। वे सब लोग वैभवशाली, बलिष्ठ, हृष्ट पुष्ट, शूरवीर मनुष्यों में अपराभूत, अजेय, उद्भट योद्धा और संग्राम में अमोघ लक्ष्यवेधी थे।

जिस समय महाराज भरत ने षट् खण्ड की साधना के लिये अपनी विशाल सशक्त चतुरंगिणी सेना के साथ प्रयाण किया, उसी समय से उन आपात जाति के चिलातों के देश में अकाल, मेघ गर्जन, वज्रपात, अकाल में ही वृक्षों पर फल पुष्पादि का उत्पन्न होना, नभोमण्डल में प्रेत, प्रेत्यों के नृत्य जैसे दृश्यों का दृष्टि-गोचर होना आदि-आदि अनेक प्रकार के उत्पात होने लगे। इस प्रकार के अप्रत्याशित उपद्रवों को देखकर वे आपात नामक चिलात बड़े ही चिंतित दुःखित, आर्तध्यान में विरत, सदाशोक निमग्न रहने के कारण किंकर्तव्यविमूढ़ बन गये थे। [क्रमशः]

सहनशील ही सच्चा वीर

□ श्री बलबन्तसिंह हाड़ा

बादशाह हारुन-उल-रशीद बड़ा न्यायप्रिय और विवेकवान था। एक दिन उसको शहजादे ने आकर कहा कि सेनापति के लड़के ने उसे माँ की गाली दी है। हारुन ने अपने सभी मंत्रियों से इस मामले में राय ली। किसी ने कहा कि उसका सर कलम करवादें, किसी ने उसकी जीभ निकलवा देने की राय दी। बादशाह ने अपने पुत्र से कहा—"बेटा! तू यदि उस बालक साथी को क्षमा करदे तो सबसे अच्छी बात है। क्रोध के समय संयम रखना चाहिए। सहन-शील ही सच्चा वीर होता है। बेटे! तुझमें यदि ऐसी शक्ति नहीं हो तो तू भी इसे वही गाली दे। परन्तु क्या मेरे बेटे को यह शोभा देगा?"

शहजादा उठा। उसने सेनापति के पुत्र को जो उसका साथी था, गले लगा लिया। उसका साथी रो पड़ा और क्षमा मांगने लगा।

—खाल की हवेली, झालावाड़
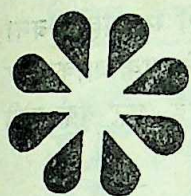
चांदी का वर्क शाकाहार नहीं है

☐ मेनका गांधी

क्या आप भोजन के अंत में पान, मिठाई या खुशबूदार सुपारी खाना पसंद करते हैं ? और अगर इन चीजों पर वर्क लगा हो, तब तो क्या कहने ; खुशबूदार सुपारी पर भी वर्क चढ़ाया जाता है। घर में त्यौहारों पर बनने वाली मिठाई पर वर्क होता ही है।

चांदी का वर्क बहुत महंगा नहीं होता। कीमत उसके वजन पर निर्भर करती है। आमतौर पर १६० वर्क १०० रु. से २०० रु. में मिल जाते हैं। यानी करीब एक रुपए में एक वर्क लगाया जाने लगा है। कुछ आयुर्वेदिक दवाइयों को भी वर्क में लपेट कर खाने की सलाह दी जाती है।

आपका क्या ख्याल है—चांदी का वर्क कैसे बनता हैं ?

कलेजा थाम लीजिए।

बैल के मांस की तहों की किताब-सी बना कर, उसमें चांदी की पतली पत्ती रख कर, वर्क बनाया जाता है। दूसरे शब्दों में—बैल को बूचड़खाने में मारने के बाद उसकी आंते निकाल कर, फौरन, वर्क बनाने वाले को बेच दी जाती हैं। पुरानी आंतों से बनी चमड़ी काम नहीं आती। यहाँ तक कि एक दिन पुरानी आंतें भी नहीं, क्योंकि कुछ घंटे बाद लचक जाती रहती है।

वर्क बनाने वाला आंतों से खून-टट्टी साफ करके उसके टुकड़े-टुकड़े कर देता है और एक के ऊपर एक टुकड़ा रख कर तहों की किताब-सी बना लेता है। अपने घर या 'कारखाने' में जाकर इस किताब के एक-एक पन्ने में चांदी (या सोने) के टुकड़े रख कर हथोड़े से मार करता है। ऐसा करने से चांदी (या सोने) की पत्ती पतली होते-होते वर्क का रूप धारण कर लेती है।

बैल की आतें इतनी मजबूत होती हैं कि लगातार हथौड़े मारने पर भी उनका कुछ नहीं बिगड़ता और फिर, इसमें रखी चांदी की पत्ती इधर-उधर नहीं होती। हथोड़े मारने से बैल की आंत का कुछ अंश वर्क में मिल जाता है।

इसके बाद वर्क वाला ये वर्क हलवाइयों और मीठी सुपारी बनानेवालों को थोक में बेच देता है। छोटे पैमाने पर वर्क तैयार करने वाले लोग मंदिरों को वर्क बेचते हैं, जहाँ वर्क को प्रसाद पर चढ़ाया जाता है।

यह वर्क गन्दी चीज तो है ही, मांसाहार भी है। मांस खाने वाले भी आंत नहीं खाते। और तो और, यह वर्क, सुपारी और मिठाई को भी मांसाहार बना देता है। कुछ साल पहले इंडियन एयर लाइन्स को पता चला कि वर्क शाकाहार नहीं है, तभी से भारतीय विमानों में परोसी जाने वाली मिठाई पर वर्क नहीं चढ़ाया जाता।

पान के शौकीन शाकाहारी लोग अब तक बैल की कई मील आंते खा चुके हैं। उनके लिए एक और खबर—

जो चूना आप खाते हैं, वह भी शाकाहार नहीं है।

कुछ चूना तो असली चूना है, जो अपने आप में हानिकारक है। लेकिन पान वाले ज्यादातर जो चूना इस्तेमाल करते है, वह सीपियों से बनता है। सीपी क्या है? समुद्री जीवों के शरीर का हिस्सा है। ये जीव हमारे समुद्रों और तटों को साफ रखते हैं, इसलिए बहुत उपयोगी हैं।

इन छोटे-छोटे जीवों को पानी से निकाल कर मार दिया जाता है। फिर सीपियां निकाल कर भून लेते हैं। सीपियां भुन जाने के बाद वह 'इथिल' बन जाती है। इसे पानी में भिगो कर नरम कर लेते हैं। इसके पश्चात् सूखा कर कूट कर, सफेद पाउडर बना लेते हैं। इसमें गोंद जैसा रसायन मिला देते हैं। बस चूना तैयार, जो पान में इस्तेमाल होता है।

आप चूना मुंह में डालते हैं, तो कई मरे हुए जीवों को खा जाते हैं। यह वैसे ही है, जैसे किसी बकरे या सूअर को मार कर खाना। जीवन सभी प्राणियों में है। पीड़ा भी सभी को एक सी होती है।

अगर अब आप पान खाएं तो चूना नहीं खाएं। न ही मिठाई या मीठी सुपारी पर लगा वर्क खाकर जानवर की आंत खाएं। अगर कोई हलवाई या मीठी सुपारी बनाने वाला परिचित हो तो उसे कहिए कि वर्क इस्तेमाल न करें। कभी-कभी खुशबू और वर्क से सभी कुछ छिप जाता है, इसलिए सुपारी बनाने वाली कम्पनियां कभी-कभी खराब या पुरानी सुपारी से खुशबूदार सुपारी बनाते हैं, जो शरीर के लिए बहुत खतरनाक है। अगर वे वर्क न चढ़ाएँ तो आप को पता चल सकता है कि सुपारी ताजा और खाने लायक है या नहीं।

(सौजन्य—सान्ध्य टाइम्स, नई दिल्ली, ७ अक्टूबर, १९८९ के अंक से उद्धृत)

□□

विशेष लेख :

जैन शिक्षण संस्थाओं (विद्यालयों-महाविद्यालयों) में जैन सिद्धांत का प्रचार-प्रसार*

☐ श्री उदयलाल जारोली

भारत के सैंकड़ों ग्रामों-नगरों-महानगरों में जैन शिक्षण संघों, ट्रस्टों या समितियों द्वारा जैन विद्यालय, महाविद्यालय चलाये जाते हैं। इनमें हजारों जैन जैनेतर विद्यार्थी सभी प्रकार की व्यावहारिक शिक्षा पाते हैं। परन्तु इनमें जैन धर्म-दर्शन-सिद्धान्त की पढ़ाई नहीं कराई जाती। इनमें जैन धर्म पढ़ाया जायेगा तो शिक्षा निदेशक या विश्वविद्यालय एतराज करेगा और इन्हें मिलने वाला शासकीय अनुदान बन्द हो जायेगा, मान्यता नहीं मिलेगी या छिन जायेगी, ऐसा कहा जाता है।

आइये हम देखें कि भारतीय संविधान में क्या प्रावधान किये गये हैं और न्यायपालिका ने उन्हें कैसे माना है।

अनुच्छेद २५(१) : जन-व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य तथा इस भाग के अन्य प्रावधानों के अध्यधीन सभी व्यक्ति समानतः **अन्तःकरण की स्वतन्त्रता** के अधिकारी होंगे और उन्हें **धर्म को निराबाध मानने, पालने** और **प्रचार करने** का अधिकार होगा।

यह अधिकार भारत के सभी व्यक्तियों को समान रूप से प्रदत्त है। वह व्यक्तिशः या समूहगत रूप से संस्थाओं के माध्यम से यह अधिकार रखता है। धर्म यह अन्तःकरण का विषय है। वह आत्मा और परमात्मा या पराशक्ति को माने या न माने या किसी को भी माने यह आजादी है। सामाजिक समूह अन्तःकरण की आजादी में हस्तक्षेप नहीं कर सकता।

यह अनुच्छेद धर्म को निराबाध मानने (to profess) और पालने (to practice) के साथ एक महत्त्वपूर्ण अधिकार देता है वह है **प्रसार करने का**

* श्री अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद् द्वारा कोसाणा में आयोजित 'जैन सिद्धान्त प्रचार-प्रसार संगोष्ठी' (दिनांक ११, १२ व १३ नवम्बर, ९९) में पठित निबन्ध।

(to propogate) जो मान्यता, विश्वास या धारणा वह रखता या बनाता है, उसे अन्य के पास पहुँचाने का भी मौलिक अधिकार है। वह किसी भी धार्मिक संस्थान, स्थान या बैठक में हो सकता है। अर्थात् वह अपनी धार्मिक मान्यताओं का प्रचार-प्रसार करने का अधिकारी है बशर्ते वह बलात् धर्म परिवर्तन न करता हो या बल-प्रयोग न करता हो, वह अपने विचारों की अभिव्यक्ति दे सकता है, उन्हें फैला सकता है। यह अवश्य है कि इससे जन-व्यवस्था, नैतिकता और स्वास्थ्य को हानि नहीं पहुँचे। इन तीन आधारों पर यह अधिकार राज्य द्वारा नियमित किया जा सकता है।

अनुच्छेद २६ (a) में प्रावधान है कि प्रत्येक धार्मिक सम्प्रदाय या उसकी शाखा धार्मिक एवं परोपकार के हेतु संस्थाएँ स्थापित एवं संचालित कर सकता है।

अनुच्छेद २८(१) में प्रावधान है कि राजकीय निधि से पूर्णतः संचालित किसी भी शैक्षणिक संस्था में कोई धर्म-देशना नहीं दी जा सकेगी। इसका तात्पर्य है कि जो विद्यालय, महाविद्यालय, राजकीय या शासकीय श्रेणी में आते हैं उनमें किसी भी धर्म की शिक्षा नहीं दी जा सकती है। विभिन्न धार्मिक मान्यताओं वाले देश में यह उचित है।

अनुच्छेद २८(२) में प्रावधान है कि अनुच्छेद २८(१) का प्रावधान उन शिक्षण संस्थाओं पर लागू नहीं होता जो किसी ऐसे न्यास या व्यवस्थापन द्वारा स्थापित होते हैं जो उनमें धर्म-देशना का निर्देश देता है परन्तु वे शिक्षण संस्थान राज्य की प्रबन्ध-व्यवस्था में हैं।

यह प्रावधान उन संस्थाओं पर लागू होता है जो राज्य-निधि से संचालित नहीं होते हैं। इनकी प्रबन्ध-व्यवस्था राज्य के पास न्यासी के रूप में होती है। संस्था की स्थापना किसी दानदाता द्वारा हुई हो और राज्य उसका व्यवस्थापक बन गया हो तो दानदाता न्यास के निर्देशानुसार उस संस्था में धार्मिक-देशना दी जा सकती है। जैसे बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय में हिन्दू धर्म-दर्शन का प्रचार-प्रसार अनिवार्य है। फिर चाहे वह केन्द्रीय सरकार द्वारा संचालित होता हो और चाहे विश्वविद्यालय अनुदान आयोग कितना ही अनुदान भी देता हो।

अनुच्छेद २८(३) में प्रावधान है कि राज्य द्वारा मान्यता प्राप्त या राज्य निधि से अनुदान प्राप्त किसी शैक्षणिक संस्था में अध्ययनरत किसी व्यक्ति को उसमें दी जाने वाली धर्म-देशना या की जाने वाली धार्मिक उपासना में भाग लेने हेतु बाध्य नहीं किया जायेगा जब तक कि उसने या उसके पालक ने उस हेतु सहमति न दे दी हो।

वैसे तो राज्य निधि का व्यय किसी धर्म विशेष के प्रचार-प्रसार पर नहीं किया जायेगा ऐसे अनुच्छेद २७ के प्रावधान पर सर्वोच्च न्यायालय में दो और एक देहली उच्च न्यायालय में प्रकरण विचारित हुए और बुद्ध जयन्ती, महावीर निर्वाण २५वां शताब्दी समारोह और गुरु नानक विश्वविद्यालय पर राजकीय व्यय को न्यायालयों ने संवैधानिक ठहराया हुआ है। इनमें यह माना गया कि भारत के महान् सन्तों के जीवन, शिक्षाएँ, दर्शन और संस्कृति का अकादमिक अध्ययन करना-कराना धर्म-देशना में नहीं आता है।

यहाँ उल्लेख करना आवश्यक है कि निर्वाण-शताब्दी समारोह की शासकीय योजना को चुनौती दी गई थी। योजना में महावीर के उपदेशों वाले स्तम्भ निर्माण, जैन साहित्य-ग्रन्थालय निर्माण, भगवान् महावीर के उपदेशों की शिशुओं को जानकारी देना, महावीर के उपदेशों की पुस्तकें छपवाना और जैन तीर्थों की फिल्में दिखाना आदि थे। देहली उच्च न्यायालय ने यह माना कि यह धर्म-देशना (religious instruction) की श्रेणी में नहीं आता। अर्थात् इन कार्यों में राज्य-निधि का व्यय भी असंवैधानिक नहीं माना गया। इसके पूर्व सर्वोच्च न्यायालय ने भारत के महान् सन्त गुरु नानक के जीवन और उपदेशों के अध्ययन प्रचार-प्रसार हेतु गुरु नानक विश्वविद्यालय और उस पर शासकीय व्यय को संवैधानिक ठहराया था।

इन न्याय-निर्णयों को उद्धृत करने का उद्देश्य मात्र इतना ही है कि कहाँ तो न्यायालयों ने राजकीय निधि से स्थापित-संचालित शिक्षण संस्थाओं में या योजनाओं में भगवान् महावीर के जीवन और उपदेशों के अध्ययन प्रचार-प्रसार को संवैधानिक ठहरा रखा है और कहाँ हम जैन धर्मावलम्बियों के लाखों-करोड़ों रुपयों के व्यय से स्थापित और संचालित विद्यालयों, महाविद्यालयों में हमारे संचालक और शिक्षा-व्यवस्थापक भगवान् महावीर का नाम लेने से भी डरते हैं, अरे! हमारी मान्यता चली जायेगी! अरे हमारा अनुदान रुक जायेगा!!

समस्या यह है कि आज भगवान् महावीर के प्राणीमात्र के कल्याण हेतु दिये गये उपदेशों को हम भूल गये और हम सम्प्रदायवादी लोग अपने-अपने बाड़ों में बन्धकर पृथक् मान्यता, पूजा-अर्चना की विशिष्ट पद्धतियों-अवधारणाओं, बाह्याचारों का प्रचार-प्रसार करना चाहते हैं। अपनी-अपनी गुरुडम परम्परा का विकास चाहते हैं और वे धार्मिक शिक्षाएँ नहीं दी जा सकती हैं। भगवान् महावीर के मूलभूत सिद्धान्तों, सार्वभौमिक-सार्वजनीन उपदेशों के अध्ययन प्रचार-प्रसार में कोई बाधा नहीं आ सकती है।

यहाँ शैक्षणिक और सांस्कृतिक स्वतन्त्रता प्रदान करने वाले अनुच्छेद २९ और ३० का उल्लेख और विवेचन तथा सर्वोच्च न्यायालय द्वारा की गई व्याख्या का वर्णन भी आवश्यक है।

अनुच्छेद ३०(१) में धर्म और भाषा पर आधारित सब अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रुचि की शिक्षा-संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अधिकार दिया गया है।

अनुच्छेद २९(१) में यह प्रावधान है कि भारत के राज्य क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के निवासी नागरिकों के किसी विभाग को, जिसकी अपनी विशेष भाषा, लिपि या संस्कृति है, उसे बनाये रखने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद २९(२) में प्रावधान है कि जो शिक्षा संस्था राज्य द्वारा घोषित है या राज्य-निधि से अनुदान प्राप्त है उसमें किसी नागरिक को केवल धर्म, वंश, जाति, भाषा या इनमें से किसी के आधार पर प्रवेश से वंचित नहीं किया जायेगा।

अनुच्छेद ३०(२) में प्रावधान है कि शिक्षा संस्थाओं को अनुदान स्वीकृत करने में राज्य किसी शिक्षा संस्था के साथ इस आधार पर भेदभाव नहीं करेगा कि वह किसी धार्मिक या भाषाई अल्पसंख्यकों के प्रशासन में है।

जैन राज्य में अल्पसंख्यक श्रेणी में आते हैं। वैदिक संस्कृति से भिन्न इनकी विशिष्ट संस्कृति है। प्राकृत, अर्धमागधी, संस्कृत विशिष्ट भाषाएँ हैं। अनुच्छेद २९(१) के अनुसार जैन धर्मावलम्बी नागरिक अपनी विशेष भाषा संस्कृति का रक्षण करने के अधिकारी हैं।

इसी प्रकार धर्म की अपेक्षा भी हर राज्य में जैनी अल्पसंख्यक समूह में आते हैं। इन्हें अपनी रुचि की, अर्थात् अपने धर्म—उसकी मान्यताओं, शिक्षाओं के अनुरूप शिक्षण संस्थाएँ स्थापित करने और पोषित करने का अधिकार है। अनुच्छेद २५(१) प्रत्येक व्यक्ति को (या व्यक्ति समूह को) अपने धर्म का प्रचार करने का अधिकार देता है। अनुच्छेद २८(३) उन्हें यह अधिकार देता है कि उस शिक्षा संस्था में धर्म-देशना दी जा सकती है, विशिष्ट प्रकार से धार्मिक उपासना की जा सकती है।

न्यायालयों ने यह अवधारित किया है कि अल्पसंख्यकों द्वारा स्थापित शिक्षा संस्थाओं में व्यावहारिक शिक्षा दी जाने से या/और अन्य समूहों के शिशुओं/विद्यार्थियों को प्रवेश देने से, यहाँ तक कि उनकी अधिक संख्या हो जाने पर भी, अपना अल्पसंख्यक-चरित्र नष्ट नहीं कर देती है।

अनुच्छेद ३०(१) में 'अपनी रुचि की शिक्षा-संस्थाओं' का उल्लेख है। यह आवश्यक नहीं है कि वे अनुच्छेद २९(१) में दिये गये 'भाषा, लिपि या संस्कृति' के मूल अधिकार के प्रवर्तन के लिए स्थापित की गई हों। अर्थात् अल्पसंख्यक समूह धार्मिक या धर्म-निरपेक्ष किसी भी शिक्षा के लिए अपनी 'रुचि' की शिक्षा संस्था स्थापित और प्रशासित कर सकते हैं।

प्रश्न आया कि इन्हें राज्य से अनुदान पाने का तो मौलिक अधिकार नहीं है और यदि राज्य किन्हीं शिक्षा संस्थाओं को अनुदान निश्चित शर्तों पर देता है तो अल्पसंख्यकों की शिक्षा संस्था पर भी वे शर्तें समानतः लादी जा सकती हैं क्या ?

उच्चतम न्यायालव ने यह अभिनिर्धारित किया कि राज्य अल्पसंख्यकों की संस्थाओं पर ऐसी शर्तें, मान्यता देने या सहायता देने के बहाने नहीं आरोपित कर सकता जिसके बदले में इन संस्थाओं को अपने मौलिक अधिकार का ही परित्याग करना पड़ जाये।

संस्था की उत्कृष्टता सुनिश्चित करने के लिए तो शर्तें लगाई जा सकती है जैसे अध्यापन के साधारण मानक लागू हों, अध्यापक सुयोग्य हों—अर्हता प्राप्त हों आदि।

अल्पसंख्यक वर्गों को 'अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं' की स्थापना और 'प्रशासन' का अधिकार है। शब्द 'प्रशासन' की गहन व्याख्या उच्चतम न्यायालय द्वारा की गई है।

शिक्षकों/प्राध्यापकों/कर्मचारियों को उचित और पूरा वेतन मिले, उनका चयन योग्य रीति से हो, उनकी पदमुक्ति अनुचित प्रकार से न हो इस हेतु बनाये गये विनिवमों को न्यायालय ने संवैधानिक पाया परन्तु विनियमों द्वारा अधिरोपित कर्तव्यों की उपेक्षा करने पर राज्य उनका प्रबन्ध पाँच वर्ष के समय तक के लिए अपने हाथ में ले लेगा और आवश्यक हो तो क्षतिपूर्ति देकर उस संस्था को राज्य अर्जित कर लेगा ऐसे प्रावधानों को अनुच्छेद ३०(१) के अधिकारों का पूर्ण विनाश ठहराया।

गुजरात राज्य ने जन एवं राज्यहित में नियम बनाया कि शिक्षक-प्रशिक्षण महाविद्यालयों में जिला और म्युनिसीपल बोर्डों के शिक्षकों के लिए ८० प्रतिशत स्थान रिक्त रखे जाएँ। राज्य से सहायता प्राप्त अल्पसंख्यकों के एक महाविद्यालय ने यह नहीं माना। उसकी सहायपा बन्द कर दी गई। न्यायालय में चुनौती दी गई। उच्चतम न्यायालय ने इसे अनुच्छेद ३०(१) के मूल अधिकार का हनन मानते हुए नियम को अवैध ठहरा दिया।

अर्थात् जैनियों द्वारा स्थापित और प्रशासित महाविद्यालयों में प्रवेश उनकी इच्छानुसार हो सकता है।

बिहार राज्य ने नियम बनाया कि प्राइवेट कालेज में प्राध्यापक की नियुक्ति उसी सूची में से की जा सकेगी जो राज्य द्वारा स्थापित 'विश्वविद्यालय

सेवा आयोग' ने उस कालेज की प्रशासन समिति के पास तदर्थ भेजी हो। जिसका ऐसी सूची में नाम न हो ऐसे किसी भी व्यक्ति की नियुक्ति कदापि नहीं की जा सकती।

उच्चतम न्यायालय ने इस शर्त को कैथोलिक समुदाय के अपनी शिक्षा संस्थाओं के मूल अधिकार के विरुद्ध पाया और अल्पसंख्यक संस्थाओं के लिए इसे अवैध और शून्य घोषित कर दिया। उच्चतम न्यायालय ने इस नियम को प्रशासन समिति की स्वतन्त्रता का हनन माना और कहा कि इससे महाविद्यालय का नियन्त्रण ही विश्वविद्यालय सेवा आयोग में निहित हो जाता है।

यहाँ मैं उल्लेख करना चाहूँगा कि जैनियों द्वारा संचालित विद्यालयों, महाविद्यालयों में यदि जैन धर्मावलम्बी शिक्षकों को प्राथमिकता देकर चयन करना हो तो किया जा सकता है। अल्पसंख्यक समुदायों को यह अधिकार अनु. ३०(१) में मान्य है कि वे अपने धर्म के समझने वाले, उसमें रुचि रखने वाले सदाचारी-सुसंस्कारी शिक्षक, प्राध्यापक, कर्मचारी नियुक्त कर सकते हैं। अर्हताएँ और मानक मानना आवश्यक होगा परन्तु अपनी रुचि की शिक्षा संस्था का संचालन-प्रशासन का अधिकार अपने वर्ग के व्यक्तियों का चयन, पदोन्नति, पद-मुक्ति का अधिकार देता है।

आज मान्यता प्राप्त या/और सहायता प्राप्त कोई भी जैन विद्यालय, महाविद्यालय (किसी भी प्रकार की व्यावहारिक शिक्षा देने वाला) इस नियम और न्यायालयीन अधिनिर्णय से अवगत नहीं है और जैन की मान्यता के विपरीत लोगों को अपनी संस्थाओं में भरकर अपना अहित कर रहे हैं।

आप प्रश्न करेंगे कि चयन समितियाँ शासकीय या विश्वविद्यालयीन नियमानुसार गठित करनी पड़ेगी जिनमें उनके द्वारा नाम निर्देशित विशेषज्ञ होंगे और प्रशासन समिति द्वारा उनकी नियुक्ति होगी जिसमें भी शासन या विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि होंगे।

हमारी जैन संस्थाएँ इन नियमों को बाध्यतापूर्वक मान रही हैं। मुझे ज्ञात है कि इन्हीं कारणों से जैनियों की संस्थाओं में मांसाहारी, शराबी, दुर्व्यसनी, बीड़ी-सिगरेट पीने वाले भी नियुक्त हो जाते हैं। जैन धर्म और संस्कृति की छाप विद्यार्थियों पर वह संस्था कैसे छोड़ सकती है? कैसे ऐसे अध्यापकों, प्राचार्यों के माध्यम से वहाँ जैन सिद्धान्तों का प्रचार हो सकता है? वे क्या जानें महावीर, उनके जीवन, शिक्षाएँ और उपदेशों को?

जैनी अपने धर्म, सांस्कृतिक और शैक्षणिक स्वतन्त्रताओं (मौलिक अधिकारों) से परिचित ही नहीं हैं। आज तक किसी जैन संस्था ने यह नहीं

कहा कि हम शासन/विश्वविद्यालय के विशेषज्ञों-प्रतिनिधियों को चयन समिति/प्रशासन समिति में नहीं बुलाएँगे और बुला भी लिया तो उनकी राय नहीं मानेंगे। अन्य धर्मावलम्बियों ने ऐसा कहा और ठेठ उच्चतम न्यायालय तक लड़कर अपने मौलिक अधिकारों को कायम रखा।

अहमदाबाद सेंट जेवियर कालेज सोसायटी वि. गुजरात राज्य (ए. आई. आर. १६७४ एस. सी. १३८६) में नौ न्यायाधिपतियों की न्यायपीठ ने अनुच्छेद २६ और ३० पर व्यापक विचार करके जो निर्णय दिया उससे गुजरात विश्वविद्यालय अधिनियम १६७३ के निम्नांकित प्रावधान, जहाँ तक वे अल्पसंख्यकों पर लागू होते हैं, अवैध और शून्य घोषित कर दिये। प्रावधान निम्नांकित हैं—

(१) धारा ३३-क (१) (क) : जिसके अनुसार कालेज के प्रशासन निकाय में प्राचार्य, विश्वविद्यलय का एक प्रतिनिधि, कालेज-प्राध्यापकों के तीन प्रतिनिधि, कर्मचारियों तथा विद्यार्थियों में से प्रत्येक के न्यूनतम एक प्रतिनिधि का होना अनिवार्य किया गया था।

(२) धारा ३३-क (१) (ख) : जिसके अनुसार कालेज के प्राचार्य हेतु चयन समिति में उपकुलपति द्वारा नाम निर्देशित एक विश्वविद्यालयीन प्रतिनिधि होना तथा अन्य प्राध्यापकों की चयन समिति में विश्वविद्यालय के प्रतिनिधि के अतिरिक्त विश्वविद्यालय के ही सम्बन्धित विषय के या विभाग के अध्यक्ष या उनके नाम निर्देशित व्यक्ति का होना अनिवार्य किया गया था।

(३) धारा ३३-क(२) और (३) : उक्त प्रावधानों के अनुसंगी उपबंध।

(४) धारा ४० और ४१ : जिनका प्रभाव यह था कि विश्वविद्यालय की अनुशंसा पर राज्य उचित समझे तो सम्बद्ध महाविद्यालय को संघटक में परिणत कर सकता था। इसमें उसमें पढ़ाये जाने वाले विषयों और प्राध्यापकों के कर्तव्यों आदि पर विश्वविद्यालय का अत्यधिक नियंत्रण हो जाता था।

(५) धारा ५१-क (१) (क) : जिसके अनुसार किसी भी प्राध्यापक या कर्मचारी को कालेज निर्दोषिता स्थापित करने का अवसर देने के पश्चात् भी किसी अपराध या दोष के लिए उपकुलपति या उसके नाम निर्देशित अधिकारी की सहमति के बिना पदमुक्ति आदि का दंड नहीं दे सकता था।

(६) धारा ५१-क (२) (ख) : जिसके अनुसार किसी कर्मचारी की सेवाओं को कालेज उपकुलपति या उसके नाम निर्देशित की सहमति के बिना समाप्त नहीं कर सकता था।

(७) धारा ५२-क : जिसके द्वारा किसी प्राध्यापक या कर्मचारी और कालेज के प्रबन्धकों के बीच उठने वाले सेवा सम्बन्धी विवादों को किसी भी पक्ष की इच्छा पर मध्यस्था द्वारा निपटाया जाना अनिवार्य कर दिया गया था।

उच्चतम न्यायालय ने शब्द 'प्रशासन' की गहरी व्याख्या की और उक्त प्रावधानों को अल्पसंख्यकों के अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं के प्रशासन में हस्तक्षेप माना। यह हस्तक्षेप उनके अनुच्छेद ३० (१) के मौलिक अधिकार का अतिलंघन करने वाला मानकर उक्त प्रावधान इन अल्पसंख्यक शिक्षा संस्थाओं के लिए अवैध घोषित कर दिये।

मुझे कुछ नामी जैन विद्यालयों, महाविद्यालयों की जानकारी है कि वे दुःखी हैं कि अपनी संस्कृति और धर्म वाले अच्छे व्यक्तियों का चयन नहीं कर पाते, उनकी नियुक्ति नहीं कर पाते और नियुक्ति कर दी तो अयोग्य या दोषी पाते हुए भी हटा नहीं पाते। संस्था चाहे केवल मान्यता प्राप्त हो या सहायता प्राप्त भी हो, उक्त निर्णय के आधार पर ही चयन समितियाँ गठित करें यह आवश्यक नहीं है। निर्धारित अर्हता और मानक को मानते हुए जैनियों को नियुक्त किया जा सकता है। उनके माध्यम से जैन आचार, विचार का, सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार हो सकता है। आवश्यकता है हमारे संस्था-संचालकों और प्रधानाचार्यों और प्राचार्यों को संविधान के प्रावधानों को जानने की और जागरूक बनने की। यदि संस्था-संचालक और प्रमुख अपने संवैधानिक मौलिक अधिकारों के प्रति सजग हो जाएँ और व्यावहारिक शिक्षा के साथ भगवान् महावीर के मूलभूत सिद्धान्तों, शिक्षाओं और उनके जीवन दर्शन का अध्ययन अपनी संस्था में करने का निर्णय करें तो शासकीय मान्यता और अनुदान कायम रखते हुए भी जैन सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार न केवल जैन अपितु उन संस्थाओं में अध्ययनरत हजारों जैनेतर विद्यार्थियों में भी कर सकते हैं। इसमें कोई बाधा नहीं आएगी और सरकार, निदेशक या विश्वविद्यालय कोई एतराज नहीं कर सकता है।

—भूतपूर्व अधिष्ठाता, विधि संकाय, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन,
जारोली भवन, विजय टॉकीज के पास, **नीमच**

□□□

पर्युषण पर्वाराधना प्रतिवेदन :

श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ जोधपुर के २९२ स्वाध्यायियों द्वारा १३३ क्षेत्रों में पर्युषण पर्वाराधन सानन्द सम्पन्न

सन्त-सतियों के चातुर्मास से वंचित ग्रामों तथा शहरों में स्वाध्यायियों को भेजकर अष्ट दिवसीय पर्युषण पर्व की धर्माराधना का महान् रचनात्मक धार्मिक कार्य श्री स्थानकवासी जैन स्वाध्याय संघ जोधपुर (सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल द्वारा संचालित) विगत ४५ वर्षों से करता आ रहा है।

महाराष्ट्र, राजस्थान, उत्तरप्रदेश, पंजाब, मध्यप्रदेश आदि प्रान्तों में विभिन्न छोटे-बड़े दूर नजदीक के १३३ क्षेत्रों में २९२ स्वाध्यायियों ने इस वर्ष १९८९ में सेवायें प्रदान की हैं। सभी क्षेत्रों में पर्युषण पर्व के दिवसों में शास्त्र-वाचन, विभिन्न विषयों पर प्रवचन, सामायिक, प्रतिक्रमण, दया, पौषध, उपवास, आयम्बिल, एकासन आदि अनेकानेक कार्यक्रम सम्पन्न कराये। अनेक स्थानों पर धार्मिक पाठशालायें शुरू करवाने, शांति—जाप एवं दयाव्रत की पंचरंगी करबाने, नियमित प्रार्थना करने एवं हिंसाकारी पदार्थों से बनी वस्तुओं का निषेध, दुर्व्यसनों का त्याग, दहेज प्रथा आदि कुरीतियाँ मिटाने की प्रेरणा की गई।

विभिन्न क्षेत्रों से इस कार्यालय को अब तक प्राप्त धर्म आराधना की रिपोर्ट के अनुसार स्वाध्यायियों द्वारा पर्युषण पर्व में दी गई सेवाओं की क्षेत्रानुसार सूची इस प्रकार है :—

[१] महाराष्ट्र क्षेत्र

धरण गांव— (१) श्री दलीचन्दजी चोरड़िया, जलगांव
(२) श्री प्रकाशचन्दजी जैन, जलगांव
(३) श्री मनोजकुमारजी संचेती, जलगांव

बार्शी— (१) श्री कस्तूरचंदजी बाफणा, जलगांव
(२) श्री [illegible], जलगांव

वरोरा— (१) श्री प्रकाशजी सालेचा, जोधपुर
(२) श्रीमती इन्द्रा सालेचा, जोधपुर
(३) कु. लता जैन (कोचर मुथा), जलगांव

फत्तेपुर— (१) श्री धर्मचन्दजी जैन, जोधपुर
(२) कु. ज्योति ओस्तवाल, बाकोद
(३) कु. ज्योति लुंकड़, बाकोद

एदलाबाद— (१) श्री राजेन्द्रप्रसादजी जैन, सवाईमाधोपुर
(२) कु. अर्चना बांठिया, पाचोरा
(३) कु. मीना बोथरा, वरखेड़ी

सिल्लोड़— (१) सौ. मंगला बाई चौरड़िया, जामनेर
(२) कु. मधुबाला ललवाणी, जामनेर
(३) सौ. कमलादेवी खिवसरा, चालीसगांव

शेन्दूर्णी— (१) श्री मदनलालजी जैन, करेलावाले स. मा.
(२) कु. ज्योति छाजेड़, फतेपुर
(३) कु. उज्ज्वला लुंकड़, बाकोद

मांडल— (१) श्री भंवरलालजी पोखरणा, नवाणिया
(२) श्री नाथूलालजी चंडालिया, भादसोड़ा

पहुर— (१) श्री धर्मीचंदजी कटारिया, रणसीगांव
(२) श्री गौतमचन्दजी घीया, पीपाड़ शहर

बाघली— (१) श्री माणकचन्दजी गादिया, चालीसगांव
(२) कु. निर्मला जैन, चालीसगांव

खलणा— (१) सौ. सुलोचना तातेड़, शाहपुर
(२) कु. गुणवन्ती लोढ़ा, शाहपुर
(३) कु. मधुबाला लोढ़ा, शाहपुर

बरखेड़ा— (१) श्री गोपीकृष्णजी हाड़ा, सवाईमाधोपुर
(२) कु. संगीता घाड़ीवाल, पाचोरा
(३) कु. ममता चोरडिया, पाचोरा

सिन्धखेड़ा— (१) श्री धर्मचन्दजी जैन, सवाईमाधोपुर
(२) कु. अनिता कोठारी, राजणी
(३) कु. सुवर्णा डूंगरवाल, राजणी

बाकोद— (१) श्री उम्मेदचन्दजी जैन, जरखोदा
(२) श्री नथमलजी घीया, पीपाड़

वरखेड़ी— (१) श्री कल्याणमलजी जैन, चोरू
(२) कु. सुरेखा खिवसरा, धुलिया
(३) कु. अनिता तालेरा, फतेपुर

लोही— (१) श्री पदमराजजी घीया, पीपाड़
(२) श्री रतनकुमारजी घीया, पीपाड़

शाहपुर— (१) श्री चंदा बाई लोढ़ा, सिल्लोड
(२) कु. संगीता लोढ़ा, सिल्लोड
(३) सौ. गौरी बाई खिवसरा. मांडल

शेंगोला— (१) श्री छीतरमलजी पामेचा, कोटा
(२) श्री इन्दरचंदजी खिवसरा, चालीसगाँव

हीरापुर— (१) श्रीमती कमला सिंघवी, भड़गांव
(२) सौ. राजकंवर नाहटा, जामनेर

किनगांवराजा— (१) श्री मेघराजजी टोडरवाल, चालीसगांव
(२) श्री दिनेशजी खिवसरा, जलगांव
(३) श्री विनोदजी चोरड़िया, जलगांव

वरणगांव— (१) सौ. तारा बाई डाकलिया, जलगाँव
(२) श्रीमती मोहनी बाई कटारिया, जलगांव
(३) सौ. कमला बाई लुंकड़, जलगाँव

चांदूर रेलवे— (१) श्री राजमलजी संचेती, अमलनेर
(२) श्री संतोषजी सुराणा, बाश्चर

पलास खेड़ा— (१) सौ. बदाम बाई चोरड़िया, शिरपुर
(२) कु. छाया कोठारी, राजणी
(३) कु. अनिता बुगड़ी राजणी

भण्डारा— (१) श्री प्रकाशचन्दजी कांकरिया, जलगांव
(२) श्री महावीरजी गोलेच्छा, जलगांव

लातुर— (१) श्री हीरालालजी मंडचेला, फतेपुर
(२) सुश्री सेलिता खिवसरा, मांडल
(३) कु. साधना गोलेच्छा, पलासखेड़ा

राजणी— (१) श्री भंवरलालजी खेरोदिया, भादसोड़ा
(२) श्री रोशनलालजी नाहर, भादसोड़ा

कासमपुरा— (१) श्रीमती मदन बाई राखेचा, शिरपुर
(२) कु. कल्पना साबडा, मांजरोद
(३) कु. कल्पना संकलेचा, वरखेडी

उस्मानाबाद— (१) श्री दीपचंदजी बोहरा, न्यायडोंगरी
(२) कु. जयश्री हिरण, कजगांव
(३) कु. विजया हिरण, कजगांव

महाड़— (१) श्री ललितजी कोठारी, पीपाड़
(२) श्री मोफतराजजी मुणोत, पीपाड़
(३) श्री नवरतनमलजी मेहता, पीपाड़

[२] मध्यप्रदेश क्षेत्र

बुरहानपुर— (१) श्री जीतमलजी ढाबरिया, अजमेर
(२) श्री सुशीलजी जैन, इन्दौर
(३) श्री केवन्नाजी जव्हेरी, इन्दौर

शुजालपुर— (१) श्री कन्हैयालालजी चौधरी, पहुना

पिपलीया खुर्द- (१) श्री मनोहरलालजी पोखरणा, भादसोड़ा
(२) श्री शंकरलालजी लोढ़ा, भादसोड़ा

बांगली— (१) श्री लक्ष्मीचन्दजी जैन, कसरावद
(२) श्री अजयकुमारजी जैन, कसरावद

बेतूल— (१) श्री शांतिलालजी बड़ेरा, इन्दौर
(२) कु. बिन्दु नाहर, इन्दौर
(३) कु. प्रीति नाहर, इन्दौर

जबलपुर— (१) श्री दीपचंदजी चोरडिया, इन्दौर
(२) श्री राजेशकुमारजी झामड़, इन्दौर

सिवनी मालवा- (१) श्री मोहनलालजी पीपाड़ा, इन्दौर
(२) श्री मनोजकुमारजी ललवाणी, इन्दौर

सुकमा— (१) श्री संजयजी देशलहरा
(२) श्री [illegible]

कोरबा— (१) श्री रिखबराजजी कर्नावट, जोधपुर
(२) कु. दक्षा कपासी, इन्दौर
(३) कु. संगीता बोहरा, इन्दौर

इच्छावर— (१) कु. सुनीता छिंगावत, इन्दौर
(२) कु. ज्योति जैन, रतलाम

कुसमी अतरिया-(१) श्री राजेन्द्रजी श्रोरा, इन्दौर

श्योपुरकलां— (१) श्री बाबूलालजी दसेड़ा, सीतामऊ
(२) श्री प्रकाशजी जैन, इन्दौर

गौतमपुरा— (१) श्रीमती विमलावती जैन, बड़वाह
(२) श्रीमती लीला जैन, बड़वाह
(३) श्रीमती बाली बाई जैन, नन्द्रा

बेरछामण्डी — (१) कु. ममता भगोता, इन्दौर
(२) कु. रानी सुराणा, इन्दौर

श्रंजड — (१) श्री केशरीमलजी जैन, इन्दौर
(२) श्री श्रजयकुमारजी जैन, उज्जैन

बड़वानी— (१) सुश्री संतोष नाहटा, मेघनगर
(२) कु. मीना खिवसरा, मेघनगर

डोंगरगांव— (१) श्री दिनेशजी नाहटा, नगरी
(२) श्री महेशजी नाहटा, नगरी

[३] मेवाड़ क्षेत्र

भादसोड़ा— (१) श्री चांदमलजी कर्नावट, उदयपुर
(२) श्री सुरेशजी हींगड़, पहुना

मावली जं.— (१) श्री राजेन्द्रजी पटवा, जयपुर
(२) श्री बुद्धिप्रकाशजी जैन, जयपुर

दरीबा माइन्स- (१) श्रीमती स्मृति रेखा जारोली, नीमच
(२) श्रीमती कुसुम जैन, नीमच

पहुना— (१) श्रीमती मोहन कौर जैन, जोधपुर
(२) श्रीमती इन्द्रकंवर डागा, जोधपुर
(३) सुश्री शशिकला जैन, जोधपुर

रुदगांव— (१) श्री सोहनलालजी बोथरा, भोपालगढ़
(२) श्री राजमलजी चौपड़ा, भोपालगढ़
(३) श्री अशोकजी बोहरा, भोपालगढ़

नवाणिया— (१) श्री माँगीलालजी नागौरी, पारसोली
(२) श्री मोहनलालजी जैन, पारसोली

लांगच— (१) श्री बालचंदजी पितलिया, पारसोली
(२) श्री कैलाशचन्दजी पितलिया, पारसोली

बाड़ी— (१) श्री सागरमलजी लोढ़ा, महागढ़

फलीचड़ा— (१) श्री मोहनराजजी चामड़, जोधपुर
(२) श्री रिखबचन्दजी मेहता, जोधपुर

छोटा भटवाड़ा-(१) श्री श्रीपालजी देशलहरा, भोपालगढ़
(२) श्री निर्मलजी चौधरी, भोपालगढ़

भानसोल
गढवाड़ा— (१) श्री मानसिंहजी खारीवाल, सहाडा

आरणी— (१) श्री शंकरलालजी हींगड़, मोही

गुड़ली— (१) श्री शान्तिलालजी चौपड़ा, जोधपुर
(२) श्री नथमलजी शर्मा, भोपालगढ़
(३) श्री सुभाषजी मुथा, भोपालगढ़

बड़ा महुआ— (१) श्री केवलमलजी लोढ़ा, जयपुर
(२) श्री महावीरप्रसाद जैन, जयपुर

बनेड़िया— (१) श्री पुखराजजी गिड़िया, जोधपुर
(२) श्री धनराजजी मेहता, जोधपुर

नेवरिया— (१) श्रीमती प्रेमबाई नवलखा, जयपुर
(२) श्री अशोककुमारजी लोढ़ा, जयपुर

[४] मारवाड़ क्षेत्र

बिलाड़ा— (१) श्री हरकचंद जी ओस्तवाल, मद्रास
(२) श्री हंसराज जी चौपड़ा, बुचेटी

दुन्दाडा— (१) श्री करोड़ी मल जी लोढ़ा, जोधपुर
(२) श्रीमती सुशीला जी बोहरा, जोधपुर
(३) श्रीमती अकलकँवर मोदी, जोधपुर
(४) सुश्री बबीता जैन, जोधपुर

आसोप— (१) श्री करणराज जी मेहता, जोधपुर

बिसलपुर— (१) श्री सरदारचंद जी भण्डारी, जोधपुर

पीह— (१) श्री जवरीमल जी छाजेड़, जोधपुर
(२) श्री मांगीलाल जी हिरण, भोपालगढ़
(२) श्री श्रेणिकराज जी लोढ़ा, भोपालगढ़

पांचला सिद्धा—(१) श्री सम्पतराज जी बोथरा, जोधपुर

[५] पोरवाल क्षेत्र

देवली छावनी—(१) श्री राधेश्याम जी गोटेवाले, सवाई माधोपुर
(२) श्री रामदयाल जी सर्राफ, सवाई माधोपुर

मालपुरा— (१) श्री कुशलचंद जी हीरावत, जयपुर
(२) श्री भँवरलाल जी सिंघवी, जयपुर

केथूदा— (१) श्री गिरधारीलाल जी जैन, सवाई माधोपुर
(२) श्री बन्शीलाल जी जैन, समीधी

सुमेरगंज मण्डी–(१) श्री फूलचन्द जी जैन, पचाला वाले, सवाई माधोपुर
(२) श्री शंकरलाल जी सोनी, सवाई माधोपुर

सूरवाल— (१) श्री गणपतलाल जी जैन, आदर्शनगर
(२) श्री पदमचन्द जी जैन, सूरवाल

बाबई— (१) श्री रामकल्याण जी जैन, केथूदा
(२) श्री रामप्रसाद जी जैन, बाबई
(३) श्री पारसकुमार जी जैन, बाबई

फलोदी क्वारी– (१) श्री रामस्वरूप जी जैन, कुण्डेरा

उखलाणा— (१) श्री रामपाल जी जैन, अलीगढ़
(२) श्री ब्रजनकुमार जी जैन, अलीगढ़

जरखोदा— (१) श्री धारासिंह जी जैन, उखलाणा

कुस्तला— (१) श्री लड्डूलाल जी जैन, चोरू

समीधी— (१) श्री बुद्धिप्रकाश जी जैन, उनियारा
(२) श्री नरेन्द्रकुमार जी जैन, उनियारा

चौथ का बरवाड़ा (१) श्री मुन्नालाल जी भण्डारी, जोधपुर

बजरिया— (१) श्री नवरतनमल जी डोसी, जोधपुर
(२) श्री धनसुरेश जी जैन, बजरिया, सवाई माधोपुर

[६] पल्लीवाल क्षेत्र

नदबई— (१) श्री गोपीलाल जी जैन, बजरिया
(२) श्री चौथमल जी जैन, बजरिया
(३) श्री ज्ञानचंद जी जैन, नदबई

गंगापुर सिटी—(१) डॉ० पदमचन्द जी मुणोत, जयपुर
(२) श्री कन्हैयालाल जी लोढ़ा, जयपुर
(३) श्री पवनकुमार जी जैन, जयपुर
(४) श्री प्रकाशचंदजी पारख, जयपुर

नसिया कॉलोनी (१) श्री राजेन्द्रप्रसाद जी जैन, अलीगढ़
गंगापुर सिटी—(२) श्री धर्मेन्द्रकुमार जी जैन, अलीगढ़
(३) श्री विनोदकुमार जी रोहील, अलीगढ़

गोपालगढ़ (१) श्री कजोड़ीमल जी जैन, आलनपुर
(भरतपुर)— (२) श्री विनयचन्द जी जैन, आलनपुर
(३) श्री धर्मचन्द जी जैन, जयपुर

बरगमा— (१) श्री उम्मेदमल जी जैन, झुण्डवा
(२) श्री महावीरप्रसाद जी जैन, चौथ का बरवाड़ा

डेहरा मोड़— (१) श्री अमोलकचन्द जी जैन, जरखोदा
(२) श्री शिवकुमार जी जैन, जरखोदा

भरतपुर— (१) श्री जिनेन्द्रकुमार जी जैन, दिल्ली
(२) श्री हस्तीमल जी भण्डारी, जयपुर
(३) श्री सुशीलकुमार जी जैन, जयपुर

हिण्डौन— (१) श्री प्रदीप जी हीरावत, जयपुर
(२) श्री प्रदीप जी मूसल, जयपुर
(३) श्री कृष्णमोहन जी जैन, लहचोड़ा

खोह— (१) श्री रामस्वरूप जी जैन, गंगापुर सिटी
(२) श्री शिवचरण जी जैन गंगापुर सिटी

[७] अन्य क्षेत्र

विजयवाड़ा— (१) श्री पन्नराज जी ओस्तवाल, जालना
(२) श्री दिनेशकुमार जी भैरविया, जलगांव

यादगिरी— (१) श्री दीपचन्द जी बोथरा, पाचोरा
(२) श्री राजेन्द्रकुमार जी बोथरा, शिरपुर

नाभा— (१) श्री अनिलकुमार जी मोहनोत, जोधपुर

शाहदरा (दिल्ली)— (१) श्री चंचलमल जी चौरड़िया, जोधपुर
(२) श्रीमती रतनदेवी चौरड़िया, जोधपुर

[८] स्थानीय

[क] पोरवाल क्षेत्र

आलनपुर— (१) मोहनीदेवी जैन, आलनपुर
(२) राजेशबाई जैन, आलनपुर

बगावदा— (१) श्री लड्डूलाल जी जैन, बगावदा
(२) श्री मूलचन्द जी जैन, बगावदा

डांगरवाड़ा— (१) श्री लड्डूलाल जी जैन, डाँगरवाड़ा
(२) श्री महावीरप्रसाद जी जैन, डांगरवाड़ा

देई— (१) श्री निहालचन्द जी जैन, देई
(२) श्री कपूरचन्द जी जैन, देई
(३) श्री माणकचन्द जी जैन, देई

पचाला — (१) श्री कपूरचन्द जी जैन, पचाला

पाटोली— (१) श्री शंकरलाल जी जैन, पाटोली
(२) श्री सौभागमल जी जैन, पाटोली

कुण्डेरा— (१) श्री हंसराज जी जैन, कुण्डेरा
(२) श्री सुरेशचन्द जी जैन, कुण्डेरा
(३) श्री मोहनलाल जी जैन, कुण्डेरा

बिणजारी— (१) श्री चौथमल जी जैन, बणज्यारी
(२) श्री रामनारायण जी जैन, बणज्यारी

भेडोला— (१) श्री शान्तिप्रकाश जी जैन, भेडोला
(२) श्री बाबूलाल जी जैन, भेडोला

इन्द्रगढ़— (१) श्री जीतमल जी जैन, इन्द्रगढ़
(२) श्री पारसमल जी जैन, इन्द्रगढ़

जयपुर— (१) श्री पारसचन्द जी जैन, जयपुर

गाड़ोली— (१) श्री सूरजमल जी जैन, गाडोली
(२) श्री नेमीचन्द जी जैन, गाडोली

खातोली— (१) श्री सुरेशकुमार जी जैन, खातोली

रानीपुरा— (१) श्री महावीर जी पोरवाल, रानीपुरा
(२) इन्द्राकुमारी जैन, रानीपुरा

मुई— (१) श्री बच्छराज जी जैन, मुई

[ख] मेवाड़

बोहेड़ा— (१) श्री हीरालाल जी रांका, बोहेड़ा
(२) श्री प्रकाश जी धींग, बोहेड़ा

[ग] मध्यप्रदेश

बरेली— (१) श्री बाबूलाल जी नाहर, बरेली

छोटी कसरावद–(१) कु. किरणबाला जैन, कसरावद
(२) कु. ग्राशा जैन, कसरावद

बड़ी कसरावद–(१) कु. रेखा लूणिया, कसरावद

[घ] पल्लीवाल क्षेत्र

लहचोड़ा— (१) श्री ब्रजमोहनलाल जी जैन, लहचोड़ा
(२) श्री [illegible] जी जैन, लहचोड़ा

वैर— (१) श्री सुमेरचन्द जी जैन, वैर
(२) श्री सुरेशचन्द जी जैन, वैर

सहाड़ी— (१) श्री सुरेशचन्द जी जैन, सहाड़ी
(२) श्री सुमेरचन्द जी जैन सहाड़ी

गढ़ी— (१) श्री रामदयाल जी जैन, गढ़ी

निम्नलिखित क्षेत्रों से अभी तक रिपोर्ट प्राप्त नहीं होने के कारण केवल क्षेत्रों के नाम दिये जा रहे हैं :—

(१) खेरली, (२) बडेर, (३) रसीदपुर, (४) पहरसर, (५) शेरपुर, (६) मण्डावर, (७) करही, (८) कंजोली, (९) दांतिया, (१०) नागलपहाड़ी, (११) खड़ीहेवत, (१२) बाराबड़कोल, (१३) लक्ष्मणगढ़, (१४) हरसाणा, (१५) मोलोनी, (१६) डेहरा।

पर्युषण सहायता

जोधपुर स्वाध्याय संघ कार्यालय को प्राप्त सहायता

२,१००) महाड़, २,१००) शाहदरा (दिल्ली), २,०००) कोरबा, १,१०१) विजयवाड़ा, ५०१) सिल्लोड, ५०१) नाभा, ४५१) दरीबामाइन्स, ३५१) बाकोद, ३२१) शुजालपुर सिटी, ५०१) बिलाड़ा, ३५१) पहुर, ३००) वरोरा, २५१) बरखेड़ी, २५१) बाघली, २५१) पहुना, २५१) भरतपुर, २५१) पीपल्या बुजुर्ग, २५१) गोपालगढ़ (भरतपुर), २००) बागली, १५१) काशमपुरा, १५१) बनेडिया, १५१) गुडली, १५१) मावली जंक्शन, १३१) केथूदा, १०१) फलीचडा, १०१) आरणी, १०१) नवाणिया, १११) गंगापुर सिटी, ५१) बाड़ी, ५०) भानसोल गढ़वाडा। कुल योग प्राप्त राशि=१३,४८४) रु०

महाराष्ट्र स्वाध्यायी संघ को प्राप्त सहायता

१,५५१) भण्डारा, १,००१) धरणगांव, १,००१) बारसी, ७५१) लातूर, ७०१) यादगिरी, ४०१) फत्तेपुर, ३०१) वरणगांव २५१) बरखेड़ा, १४१) शहापुर। कुल राशि=६,०९९) रु०

स्वाध्याय संघ शाखा सवाई माधोपुर को प्राप्त सहायता

७१) डांगरवाड़ा, ५१) सुमेरगंजमण्डी, ५१) समिधी, ५१) उनियारा। कुल राशि=२२४) रु०

स्वाध्यायियों से प्राप्त राशि

३१) श्री भंवरलाल जी पोखरणा, नवाणिया

धर्माराधना

इस कार्यालय को प्राप्त (अब तक) रिपोर्ट के अनुसार सभी क्षेत्रों में कुल मिलाकर धर्म ध्यान इस प्रकार हुआ है :—

(१) सामायिक १,६०,८३८, (२) एकासना २,६०४, (३) पौषध १,६१७, (४) तेला ४२८, (५) छः ४, (६) नौ १६, (७) पचरंगी २४, (८) संवर २,१४२, (९) आयम्बिल ३२५, (१०) अष्ट प्रहर पौषध ७०४, (११) चोला १०, (१२) सात १, (१३) इग्यारह ५, (१४) दया २,५०० (१५) उपवास १०,४२८, (१६) बेला ६६०, (१७) पचोला ११, (१८) अठाई ४६, (१९) दस ८, (२०) बारह १, (२१) पन्द्रह १, (२२) मासखमण २, (२३) शांति जाप आदि।

अन्त में हम उन सभी क्षेत्रों के संघों का आभार व्यक्त करते हैं जिन्होंने हमें सेवा का अवसर प्रदान किया। साथ ही उन सभी स्वाध्यायी बन्धुओं का भी हार्दिक आभार व्यक्त करते हैं जिन्होंने अपना अमूल्य समय देकर और प्रवास आदि का कष्ट उठाकर पर्युषण पर्व में अपनी सेवाएँ प्रदान कीं।

आशा है, सम्पूर्ण समाज का सहयोग भविष्य में भी हमें इसी प्रकार मिलता रहेगा जिससे स्वाध्यायी संघ चहुँमुखी विकास करता रहे एवं समाज को अपनी अमूल्य सेवाएँ प्रदान करे।

इसी भावना के साथ।

भवदीय

सम्पतराज डोसी
संयोजक
स्वाध्याय संघ, जोधपुर

चंचलमल चौरड़िया
सचिव
स्वाध्याय संचालन समिति
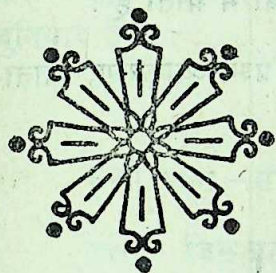
समभाव*

प्रस्तोता—**श्री पी० एम० चौरड़िया**

[१]

(१) **प्रश्न**—समता की परिभाषा क्या है ?

उत्तर—(१) आत्मा की प्रशान्त निर्मल वृत्ति ही समता है।

(२) मोह और क्षोभ से रहित आत्म परिणाम रूप समत्व ही धर्म है और उसी धर्म को सम्यक् चारित्र समझना चाहिए।

—आचार्य कुन्दकुन्द

(३) राग-द्वेष रहित अवस्था ही समता है।

(४) सम होना याने अनन्त होना, विश्वमय होना। समग्र विश्व जीवन पर आत्मा का प्रभुत्व स्थापन करने की पहली सीढ़ी का नाम समता है।

—अरविन्द घोष

(२) **प्रश्न**—समता प्राप्त करने के दो मुख्य साधन क्या हैं ?

उत्तर—सामायिक और स्वाध्याय।

(३) **प्रश्न**—समता और विषमता की पहचान कैसे होती है ?

उत्तर—मानव के वचन और व्यवहार से।

[२]

(१) **प्रश्न**—समता के पर्यायवाची शब्द क्या-क्या हैं ?

*श्री एस. एस. जैन युवक संघ, मद्रास द्वारा आयोजित कार्यक्रम जिसमें स्वाध्याय संघ, युवक संघ एवं बालिका मण्डल ने भाग लिया। —सम्पादक

उत्तर—माध्यस्थ भाव, शुद्ध भाव, वीतरागता, चारित्र धर्म, स्वभाव, आराधना आदि आदि।

(२) **प्रश्न**—समभाव का वर्णन कौन-कौन से सूत्रों में आता है ?

उत्तर—उत्तराध्ययन, दशवैकालिक, आचारांग, प्रश्न व्याकरण, ज्ञाता-धर्मकथा, सूत्रकृतांग आदि।

(३) **प्रश्न**—सच्ची सामायिक कब होती है ?

उत्तर—जब साधक समभाव में विचरण करता है।

[३]

(१) **प्रश्न**—'समत्वं योग उच्यते'

—भगवद् गीता

इसका अर्थ बताइये ?

उत्तर—समत्व ही योग कहलाता है।

(२) **प्रश्न**—'समयं समाचरे'

—सूत्रकृतांग सूत्र

इसका अर्थ बताइये ?

उत्तर—सदा समता का आचरण करना चाहिए।

(३) **प्रश्न**—'समयाए समणो होइ'

—उत्तराध्ययन सूत्र

इसका अर्थ कीजिए।

उत्तर—समता से ही श्रमण होता है।

[४]

(१) **प्रश्न**—समता के विकार-तन्तु क्या हैं ?

उत्तर—राग-द्वेषादि भाव समता के विकार-तन्तु हैं।

(२) **प्रश्न**—समता की आराधना हेतु कौनसी ४ भावनाओं का वर्णन आता है।

उत्तर—(१) मैत्री भावना (२) प्रमोद भावना (३) कारुण्य भावना और (४) माध्यस्थ भावना।

(३) **प्रश्न**—विषमता की बुनियाद क्या है ?

उत्तर—दूसरों के गुणों को न देखना एवं अपने दोषों को न देखना। केवल यही समझना कि मैं ही ठीक हूँ और कोई नहीं। बस, यही विषमता की बुनियाद है।

[५]

(१) **प्रश्न**—समता आध्यात्मिक जीवन की खाद किस प्रकार है ?

उत्तर—जिस प्रकार पेड़-पौधों को पानी, खाद आदि के माध्यम से विशाल वृक्ष का रूप मिलता है, उसी प्रकार आध्यात्मिक जीवन को समता रूपी खाद से मोक्ष रूपी फल की प्राप्ति होती है।

(२) **प्रश्न**—समता के मूल कारण क्या हैं ?

उत्तर—आत्म-विश्वास और आत्म-ज्ञान।

(३) **प्रश्न**—सामायिक एवं समता का क्या सम्बन्ध है ?

उत्तर—सामायिक की क्रिया समता का Field Work है।

[६]

(१) **प्रश्न**—'जीओ और जीने दो' इस सिद्धान्त का समता से क्या सम्बन्ध है ?

उत्तर—इस सिद्धान्त को ज्ञान व आचरण पूर्वक अपनाने से जीवन में समता रस की प्राप्ति हो सकती है।

(२) **प्रश्न**—पांचों महाव्रतों का समावेश सामायिक (समभाव) शब्द में किस प्रकार हो जाता है ?

उत्तर—समता भाव धारण करने वाला विषमता से सदा दूर रहेगा और पाँचों महाव्रत विषमता से बचने के लिए ही हैं।

(३) **प्रश्न**—मार्क्सवादी समता की धारणा क्या है ?

उत्तर—मार्क्सवादी समता की धारणा यह है कि व्यक्तिगत सम्पत्ति की पद्धति के विनाश के बिना आर्थिक, राजनैतिक और सांस्कृतिक समता कायम नहीं हो सकती।

[७]

(१) **प्रश्न**—शत्रु मित्र प्रत्येवर्ते समदर्शिता ।
मान अमाने वर्ते तेज स्वभाव जो ।।
जीवित के मरणो नहीं न्यूनाधिकता ।
भव मोक्षे पण शुद्ध वर्ते समभाव जो ।।

समता के सम्बन्ध में उपर्युक्त पद्य किसने रचा ?

उत्तर—श्रीमद् राजचन्द्र ने ।

(२) **प्रश्न**—कबीरा खड़ा बाजार में, सबकी मांगे खैर ।
ना काहू से दोस्ती, ना काहु से बैर ।।

कबीरदास ने उपर्युक्त दोहे में क्या भाव कहे हैं ?

उत्तर—इस दोहे में कबीरदास ने संसार के सभी प्राणियों की मंगल कामना की है । इस दुनिया में कोई भी दुःखी न हो, ऐसी वे प्रार्थना करते हैं । आगे वे कहते हैं कि दुनिया में वे सभी के साथ समभाव में रम जावें, ताकि किसी से भी न मित्रता होगी और न ही शत्रुता । दूसरे शब्दों में राग-द्वेष से छुटकारा मिल जावे ।

(३) **प्रश्न**—दुःखे सुखे वैरिणि बन्धु वर्गे, योगे वियोगे भुवने वने वा ।
निराकृता शेष ममत्वबुद्धे, समं मेऽस्तु सदापि नाथ ।।

अर्थ—हे देव, सम्पूर्ण ममत्व बुद्धि से रहित मेरा मन, सुख-दुःख, बैरी-बन्धु, संयोग-वियोग, भुवन-वन आदि विषमताओं में समत्व अनुभव करे ।

उपर्युक्त समत्व के सम्बन्ध में उत्तम विचार किसने कहे ?

उत्तर—आचार्य अमित गति ने ।

[८]

(१) **प्रश्न**—दो अक्षरों का 'मम' अर्थात् ममत्व मारने वाला है और तीन अक्षरों का 'नमम' यानि निर्ममत्व तारने वाला है ।

उपर्युक्त उत्तम विचार किस ग्रन्थ में कहे गए हैं ?

उत्तर—महाभारत के 'शान्ति पर्व' में ।

(२) **प्रश्न**—'मो सम कौन कुटिल खल कामी'

इस पंक्ति का अर्थ बताइये तथा इसका चिन्तन करने से क्या लाभ होते हैं ?

उत्तर—मुझ से बढ़कर कोई भी खल-कुटिल और कामी नहीं है । इस तरह जब स्वदोष-दर्शन का स्वभाव पड़ जायेगा तो दूसरे के दोष देखने की आदत छूट जायेगी, जिससे पारस्परिक ईर्ष्या, क्रोध और द्वेष भावना शान्त हो जाएगी ।

(३) **प्रश्न**—समता और विषमता का जीवन में क्या असर पड़ता है ?

उत्तर—समता जीवन का सर्जन करती है और विषमता जीवन की मानसिक, वाचिक, कायिक अवस्था को विषमय करती हुई, उसको विनाश के कगार पर पहुँचा देती है । समता आत्मा का स्वभाव है तथा बिषमता आत्मा का विभाव ।

[९]

(१) **प्रश्न**—साधो मन का मान त्यागो ।
काम क्रोध संगते दुर्जन की, तातें अहनिस भागो ।।टेर।।
सुख दुःख दोनों सम करि जानै, और मान अपमाना ।
हर्ष शोक ते रहे अतीता, तिने जग तत्त्व पिछाना....।।

उपर्युक्त गीतिका के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—गुरु नानक ।

(२) **प्रश्न**—अवधू निरपक्ष विरला कोई, देख्या जग सहु जोई ।।टेर।।
समरस भाव भला चित्त जाके, थाप-उथाप न होई,
अविनाशी के पर की बाता, जानेंगे नर सोई........।
निन्दा-स्तुति श्रवरण सुणीने, हर्ष-शोक नवि आगे,
ते जग में जोगीसर पूरा, नित्य चढ़ते गुरण ठाणें........।

उपर्युक्त गीतिका के रचनाकार कौन हैं ?

उत्तर—सन्त चिदानन्दजी ।

(३) **प्रश्न**—होकर सुख में मग्न न फूले, दुःख में कभी न घबरावे ।
पर्वत नदी श्मशान भयानक, अटवी से नहीं भय खावे ।।
रहे अडोल अकंप निरन्तर, यह मन दृढ़तर बन जावे ।
इष्ट-वियोग अनिष्ट-योग में, सहनशीलता दिखलावे ।।

उपर्युक्त छन्द कहाँ से लिया गया है ?

उत्तर—'मेरी भावना' से ।

[१० [

(१) **प्रश्न**—आध्यात्मिक समता क्या है ?

उत्तर—वीतरागता से जुड़ी हुई समता आध्यात्मिक समता है जो आगमों में दिखाई देती है ।

(२) **प्रश्न**—निम्नलिखित महान् आत्माओं ने किन परिस्थितियों में समभाव रखकर अपनी आत्मा का कल्याण किया ?

(१) खंदक मुनि (२) गज सुकुमाल मुनि (३) धर्म-रुचि अणगार ।

उत्तर—(१) **खंदक मुनि**—अपने शरीर की खाल उतारने पर भी सम भाव में रहे ।

(२) **गज सुकुमाल**—सोमिल द्वारा सिर पर धधकते अंगारे रखने पर भी सम भाव में रहे ।

(३) **धर्म-रुचि अणगार**—कड़वा जहरीला तुंबे का आहार बहराने पर उसे सम भाव से पी गये ।

(३) **प्रश्न**—समता कब प्रकट होती है ?

उत्तर—जब ममता मिट जाती है तब समता प्रकट होती है ।

—89, Audiappa Naicken Street
Sowcarpet, Madras-600 079

अहिंसा विशेषांक के लिए रचनाएँ भेजें

'जिनवाणी' के अहिंसा विशेषांक के लिए अहिंसा और पर्यावरण, अहिंसा प्रशासन और उद्योग के क्षेत्र में जैसे विषयों पर रचनाएँ आमन्त्रित हैं । अहिंसा के क्षेत्र में कार्य करने वाली देश-विदेश की संस्थाओं के परिचय भी भेजें ।

—सम्पादक 'जिनवाणी'
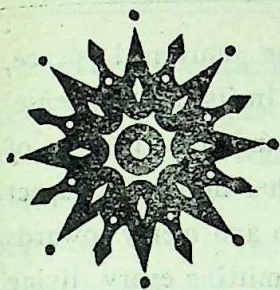
THE DOCTRINES OF JAINISM*

☐ **Pradeep Kumar Jain**

In the light of available evidence, Jainism had its expansion in Asia and Western world from the remote days. Jain doctrines and its right path of life had spread far and wide, influencing man to raise himself from primitive thoughts to intellectual awakening. Being the most outstanding philosophical system, it has as its highest goal the liberation of man from worldly sufferings. The Jaina concepts and the way to achieve salvation are basically different in comparison with other philosophical systems, and it can be asserted that the Jaina way of life for material and spiritual progress is logical, perfect and practicable; a fact which can not be controverted by any impartial studeut of religion.

Ahimsa or Non-Violence

THE doctrine of Jainism can be grouped into three categories. They are Metaphysics, Philosophy and Ethics. In ethics, the most important doctrine is of Ahimsa. All vows, and religious precepts in Jainism are intrinsically linked with the doctrine of Ahimsa. The entire Jaina Philosophy is rooted on the foundation of Ahimsa. It embraces all concepts in Jainism like the all pervading either existing in the universe.

AHIMSA is interpreted as non-violence. But it has a wider significance in Jaina Philosophy. Non-violence is explained in terms of restraint from causing any injury to any sentient life by thought, word or deed, but it also has a wider horizon in its positive sense. Its correct interpretation is not only abstention from doing any harm to living beings involving them in physical pain, suffering or death

*Courtesy : Mahaveer-Vani Prakashan, Raichur (Karnatak)

but it also conveys the meaning of promoting universal peace, happiness and immortal joy to all sentient life. In its positive sense, Ahimsa also conveys the meaning of egolessness and the feeling of non-possession in thought, word and deed. Another important aspect of Ahimsa is its all embracing love, compassion and mercy towards all living beings and also its irrevocable law of permitting every living being to enjoy its allotted span of life.

THE practise of Ahimsa is possible only through the total destruction of egoism, possesiveness, selfishness and hankering after sensual pleasures. Getting rid of egoism is possible only through the achievment of selfishness, humility and a sense nf non-retaliation against greatest or slightest provocation. Ahimsa is the perfect instrument of achieving universal peace and salvation for all living beings. It is a bridge to cross the ocean of sufferings. Ahimsa could convert a foe into a friend and effect mutual understanding and reconciliation between two opposing parties and persons. This doctrine of Ahimsa has given a new turn to every sphere of human existence. It is the essential principle for promoting any kind of peace in any field of human activity—social, political and religious. Ahimsa is strictly observed by Jaina ascetics from rime immemorial. The householders also give great importance to Ahimsa in there every day life. The Jains have an unbroken record in the observance of Ahimsa prescribed in their holy scriptures. The Jains are not only strict vegetarians but also the only community in India and the world at large which do not hunt animals and birds for sport. They do not cage birds and animals for their amusement. The Jain community maintains numerous animal welfare homes in every part of India. One can not ignore the fact that Ahimsa restrains a person from committing any violent deed injurious to life and that it is the only right path for the fulfillment of universal peace and brotherhood and to achieve salvation of the individual soul.

Philosophy of Syadvada

AN important doctrine of Jainism is Syadvada, the philosophy

of effecting a synthesis between two conflicting view-points which can be also applied practically to social welfare. Jaina philosophy advocates Anekantavada or the synthesis in different view points while all other schools of thought preach Ekantavada or one single view point on the ultimate reality. Although Jainism advocates the concept of different view-points, it has also tried to accommodate to a certain extent the absolutist viewpoints to open a new path for effecting reconciliation and promoting universal peace. Jainism has condemned in unequivocal terms the concept of Ekantavada, which is the root cause of all misunderstanding, disunity and coflicts in society. In this way of conceiving every human and spiritual problem in the most comprehensive and universal way, all philosophical thoughts opposed to each other are represented in Jainism. Therefore, one can easily assert that Jaina philosophy is a synthesis of all philosophies. Because of this accommodative tendency, Jaina philosophy is called Syadvada. It is also called Nyayavada or Anekantavada.

THE philosophy of Anekantavada views every object and principle from all possible angles and reveals their nature by a comprehensive view embracing their different aspects and attributes. Syadvada is the theory of non-absolutism. It is the connecting link between the various schools of Indian philosophy. Syadvada is also called SAPTABHANGIVADA the doctrine of seven predications to establish the truth of Ultimate Reality.

THOSE who have properly understood the spirit of Syadvada could interpret it in a proper way and they will never sit silent, but will be inspired to propagate its concepts, its ideals and aspirations for promoting universal peace. Those who condemn Syadvada, declaring that it is shallow and ineffective for bringing about a synthesis of conflicting thoughts are unfortunately ignorant of its central concept, its fundamental principles and its basic doctrines. Although Syadvada is called Nyayavada and Anekantavada in Jaina philosophy, all these have little fundamental difference in their terminology, in view of the fact that their central principle is one

and the same. In the memorable words of Siddhasena Acharya— "There are as many number of Nyayas or correct view-points like varieties of sentences. At the same time, there are also several wrong view-points as many as the number of sentences." By this interpretation, Siddhasena wanted to convey that we should minutely examine each and every sentence. In his view. a little carelessness will change the right view-point into a wrong view-point and a little generosity in our intelligence will turn every wrong view-point into a correct view-point. This philosophy of Nyaya interpreted by Siddhasena can be applied to each and every problem of life from politics to religion. On the basis of this philosophy, one will be encouraged with generosity to carefully examine the rival's view-points. This attitude of toleration in understanding the opponent's view will ultimately lead to reconciliation between opposing view-points resulting in the termination of misunderstanding and quarrel and to finally achieve the climate of peace. Therefore, it is needless to state that our top ranking sociologists will have to agree with the Syadvada principles of reconciliation for promoting universal peace and brotherhood of man.

Philosophy of Karma

IN more or less extent, each and every philosophical school has tried to discuss the Karma philosophy and all except the Jaina system do not regard Karma as atom. But the Jain doctrines define Karma in terms of subtlest particles of matter spread throughout the Cosmic Sphere. These particles have entangled all the souls from beginningless time in bondage in the same way gold particles are mixed up with the earth.

EVERY particle of Karma is mixed with the soul from various causes such as wrong faith or Mithyatva a state of vowlessness or Avriti, the feelings of good and bad, egoism, mineness of Kashaya and all bodily, verbal and mental activities called the Yoga. These particles of Karma are accumulated around the soul like a cover and in consequence, it is subjected to birth and death, happiness and misery in various forms of life.

TO get rid of these particles for the attainment of freedom from all sufferings, one must develop Right Faith, Right Knowledge and Right Conduct. These three essentials should be developed to the highest extent and with their combined help, the entangled Soul will be able to slacken its entire accumulated particles of Karmas and become free for ever from bondage.

THE Karma philosophy in Jainism has laid great emphasis on one particular point that man must not blindly depend upon his past Karma and blame it for all his miseries putting aside his endeavour and incessant labours for reaping the blessings of life. At the same time man must not depend blindly on his own endeavour and hard work for his happiness ignoring the power of Karma for moulding his destiny. Karma exerts dominating influence on the life of man, but he should not turn himself dejected by his disappointments and disheartening setbacks in life, his miseries and sufferings, putting the entire responsibility for his plight to the result of his previous Karma. On the contrary, he should ignore his sufferings, maintain equanimity and exert himself in his labours to uproot the main cause of misery. According to Jaina philosophy the effects of bad Karma can be counteracted by rendering meritorious deeds and all the infulx of the eight types of Karmas arrested by observing austerities. The elimination of Karmas leads a person to liberation. Jaina philosophy declares that all future Karmas prevented by observing the rules of conduct to liberate the entangled soul from bondage.

ACCORDING to Jainism, change of religion without proper understanding will not in any way make the person concerned virtuous or endow him with noble qualities The person concerned should practise the ethical precepts and elevate himself to the state of an ideal man. In a man's life, practise is more important than precept. Jainism tempts none to accept its doctrines for its popularity or for bettering the worldly life. Jainism offers a way of life, a code of regulations which should be practicrlly observed by one self for the attainment of happiness, peace and salvation from wordly bondages. □

बाल कथामृत* (७५)

☐ १८ वर्ष तक के बच्चे इस कहानी को पढ़कर प्रश्नों के उत्तर १५ दिन में "जिनवाणी" कार्यालय को भेजें। उत्तरदाताओं के नाम पत्रिका में छापे जायेंगे। प्रथम, द्वितीय व तृतीय आने वालों को क्रमशः २५, २० व १५ रुपयों की उपहार राशि भेजी जायेगी। श्री राजेन्द्रप्रसादजी जैन, एडवोकेट भवानीमंडी की ओर से उनकी माताजी की पुण्य स्मृति में ११ रुपये का 'श्रीमती बसन्तबाई स्मृति पुरस्कार' चतुर्थ आने वाले को दिया जायेगा। प्रोत्साहन पुरस्कार स्वरूप १० बच्चों तक को "जिनवाणी" का सम्बद्ध अंक निःशुल्क भेजा जायेगा।

—सम्पादक

विवेक की शक्ति

☐ राज सौगानी

उन दिनों दो पड़ौसी देश कंबोडिया और लाओस आपस में युद्ध करने की तैयारी कर रहे थे। झगड़ा दोनों देशों में बहने वाली एक नदी को लेकर था। नदी का नाम था मी-काङ्ग जो लाओस से निकल कर कंबोडिया में बहती थी।

नदी दोनों देशों के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण थी। नदी के पानी की सिंचाई में दोनों देशों के खेत हरे-भरे रहते थे। सर्वत्र हरियाली छाई रहती थी। दोनों देशों में खुशहाली थी। दोनों ही देश मी-काङ्ग को जीवन-दायिनी समझते थे। दोनों का उस पर दावा था।

इस मामले को लेकर स्थिति इतनी बिगड़ गई कि एक बार वे एक-दूसरे के देश पर हमला करने को तुल गए और अपनी-अपनी सेनाएँ लेकर आमने-सामने खड़े हो गए। अचानक ही भगवान् बुद्ध वहाँ पहुँच गए। उन्होंने युद्ध के

*श्री राजीव मानावत द्वारा सम्पादित—परीक्षित स्तंभ।

लिए तैयार देशों की विशाल सेनाएँ देखीं। बुद्ध को इस प्रकार वहाँ अचानक देखकर दोनों की सेनाओं में खलबली मच गई।

बुद्ध ने दोनों देशों के राजाओं, मंत्रियों तथा अन्य अधिकारियों को अपने पास बुलाया। दोनों सेनाओं के बीच खड़े होकर वे ऊँची आवाज से प्रश्न करने लगे।

"तुम लोग आपस में क्यों युद्ध करने जा रहे हो?" जवाब मिला—"हमारे जीवन की आधार मी-काङ्ग नदी के जल के लिए।"

"नदी का जल और मानव का रक्त इन दोनों में से कौन मूल्यवान तथा कारगर है?" बुद्ध ने पुनः प्रश्न किया।

"मानव का रक्त नदी के जल से अधिक मूल्यवान तथा कारगर है।" एक स्वर में दोनों ओर से जवाब मिला।

भगवान् बुद्ध ने अगला प्रश्न किया—"अगर ऐसा ही है तो तुम लोग कम मूल्यवान जल के लिए महत्त्वपूर्ण और कारगर रक्त को क्यों बहाना चाह रहे हो?"

"इसलिए कि हमें जीने के लिए मी-काङ्ग नदी के जल की आवश्यकता है।" दोनों ओर से एक ही जवाब मिला।

बुद्ध ने फिर प्रश्न किया—"अगर तुम लोग जीना चाहते हो, तो मरने के लिए क्यों तैयार हो गए हो?"

दोनों देशों के प्रधान मंत्रियों ने जवाब दिया—"भगवन्! दोनों देशों की आपसी ईर्ष्या के कारण अब स्थिति इतनी बिगड़ गई है कि उसका हल केवल युद्ध से ही हो सकता है इसके अलावा किसी और साधन से हल सम्भव नहीं है।"

बुद्ध ने पूछा—"अगर ईर्ष्या का जवाब ईर्ष्या से दिया जाए तो आखिर ईर्ष्या का अन्त कहां होगा?"

बुद्ध के इस प्रश्न से दोनों सेनाओं में शान्ति सी छा गई और दोनों पक्षों के लोग सोच में पड़ गए कि क्या जवाब दिया जाए और आगे क्या किया जाए? बुद्ध के शान्ति-पथ के प्रश्नों का उन्हें कोई उत्तर नहीं सूझ रहा था। अन्त में बुद्ध के कथन के अनुसार उन दोनों देशों ने एक शान्ति सभा बनाई।

शान्ति सभा ने दोनों देशों के दावे को ध्यान से सुना। उसने दोनों देशों में जाकर असली स्थिति को अपनी आँखों से खुद देखा और समझा। खूब सोच विचार करने के बाद अन्त में उस सभा ने अपना निर्णय सुनाया जिसे दोनों देशों ने मान लिया और युद्ध की आशंका टल गई।

दोनों देशों में समझौता हुआ देख बुद्ध बहुत खुश हुए और उन्होंने सबके सामने कहा—

"विवेक एक ऐसी शक्ति है जिसके द्वारा मानव हिंसात्मक और सर्व-नाशकारी युद्धों तक को रोक सकता है, शान्ति के साथ जीवन बिता सकता है। किसी से झगड़ा है, बदला लेना है, आपसी रंजिश है या ईर्ष्या है तो इनसे निपटने के लिए पहले विवेक से काम लो फिर अगला कदम उठाओ। निश्चय ही परिणाम सुखद होगा अन्यथा जल्दबाजी में लिया गया निर्णय दोनों पक्षों के जीवन के लिए घातक बन जाएगा।"

—स्टेशन रोड, भवानी मंडी, (राजस्थान)

अभ्यास के लिए प्रश्न

उपर्युक्त कहानी पढ़कर निम्न प्रश्नों के उत्तर दीजिए—

१. कंबोडिया और लाओस में झगड़ा किस बात को लेकर था ?

२. दोनों देशों के लिए नदी बहुत महत्त्वपूर्ण क्यों थी ?

३. "मानव का रक्त नदी के जल से अधिक मूल्यवान और कारगर क्यों है ?" स्पष्ट कीजिए।

४. भगवान् बुद्ध ने युद्ध को रोकने के लिए क्या उपदेश दिया ?

५. शान्ति सेना ने क्या निर्णय दिया जिसे दोनों देशों ने मान लिया। अपनी कल्पना के आधार पर लिखिए।

६. विवेक को शक्ति क्यों कहा गया है ?

७. "जल्दबाजी में लिया गया निर्णय घातक होता है।" इस कथन की पुष्टि कोई उदाहरण देकर कीजिए।

८. कोई ऐसा घटना-प्रसंग लिखिए जिसमें समझौते द्वारा आपसी झगड़ा व मनमुटाव शान्त हुआ हो।

"**जिनवाणी**" के अक्टूबर, १९८९ के अंक में प्रकाशित श्री राजेन्द्रप्रसाद जैन की कहानी "**गुरु-निष्ठा**" (७३) के उत्तर जिन बाल पाठकों से प्राप्त हुए हैं, उन सभी को बधाई।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं के नाम

प्रथम—श्री सुनीलकुमार भाटी, द्वारा श्री लक्ष्मीनारायणजी भाटी, रेलवे फाटक बाहर, पुलिस चौकी के पास, **चौमहल्ला** (जि. झालावाड़)।

द्वितीय—श्री चन्द्रप्रकाश अग्रवाल, द्वारा श्री सत्यनारायण अग्रवाल, कटला बाजार, **जोधपुर–३४२ ००१**।

तृतीय—श्री नवनीत आगाल, द्वारा श्री लक्ष्मीलाल, **रेलमगरा–३१३ ३२९** (उदयपुर)।

चतुर्थ—श्री नवरत्नमल बोथरा, द्वारा श्री मुकनमल बस्तीमल बोथरा, बोथरा मैन्शन, **नागौर–३४१ ००१**।

प्रोत्साहन पुरस्कार प्राप्त उत्तरदाता

जिन्हें दिसम्बर, १९८९ की "जिनवाणी" उपहार स्वरूप भेजी जा रही है—

१. सुश्री सपना जैन, द्वारा श्री कैलाश जैन, एडवोकेट, **भवानीमंडी** (राज.)।

२. रमेश एम. पोखरना, द्वारा मनोहरलाल पोखरना, **भादसोड़ा–३१२ ०२४** (चित्तौड़गढ़)।

अन्य उत्तरदाता

भवानीमंडी से मनीषा श्रीश्रीमाल, **नागौर** से विमलेशकुमार जैन, संतोषकुमार जैन, **भादसोड़ा** से सुनील खेरोदिया, **कुड़ी** से अशोक बाफना, **पीह** से टीकमचन्द जैन, **जयपुर** से दीनबन्धु जैन, **रेलमगरा** से स्नेहलता जैन, **सुमेरगंज मंडी** से विमलचन्द जैन, **अजमेर** से आनन्द जैन, **चौमहल्ला** से ब्रजेशकुमारी भाटी।

पुरस्कृत उत्तरदाताओं के जीवन के वे घटना-प्रसंग जिनमें गुरु के प्रति उनकी भक्ति एवं निष्ठा प्रमाणित होती है—

[१]

हमारे एक वृद्ध गुरुजी थे। उन्होंने अपने जीवन में पूर्ण रूप से सादगी बना रखी थी। "सादा जीवन उच्च विचार" उनका आदर्श था। उनके परिवार में उनके अलावा और कोई नहीं था। उनका घर भी अत्यधिक साधारण था, लेकिन वे बहुत विद्वान् थे। हमें बहुत अच्छी तरह व सरल ढंग से पढ़ाते थे। हम सब बच्चे उन्हें बहुत चाहते थे। एक बार वे दो दिन से शाला में पढ़ाने नहीं आये। हमें चिन्ता हुई। हम तीन-चार मित्र उनके घर पहुँचे। वहाँ वे बड़ी दयनीय अवस्था में खाट पर बीमार लेटे थे। उन्हें बीमार देख कर हमें बहुत दुःख हुआ। पैसे की कमी के कारण वे दवाइयाँ नहीं ला सके। हम मित्रों ने जो जेब खर्च जमा किया था, वो निकाल लिया और डॉक्टर को बुलाया। फिर नियमित रूप से उन्हें दवा पिलाने लगे, समय-समय पर उन्हें दूध-पानी आदि देते। डॉक्टर सा. के बताये समय का ख्याल रखते। हमारी सेवा से वे जल्दी ही ठीक हो गये। हमारी गुरु-भक्ति से हमारे माता-पिता भी बहुत खुश हुए।

—सुनील भाटी, चौमहल्ला

[२]

बात उस समय की है जब मैं कक्षा ८ में पढ़ता था। उस समय हमारे सबसे प्रिय अध्यापक हिन्दी विषय पढ़ाने वाले थे। वे कक्षा में बहुत अच्छे तरीके से अध्यापन कराते थे तथा हमारी समस्याओं को व्यक्तिगत रूप से हल कराते थे। वे हमें बहुत प्यार करते थे। लेकिन शैतानी करने पर डांटते भी थे। अतः हमारी उनके ऊपर बहुत श्रद्धा थी।

एक दिन वे हमें अध्यापन करवा रहे थे। तब अचानक अन्य अध्यापक ने आकर उन्हें सूचित किया कि उनके लड़के की किसी वाहन से दुर्घटना हो गई है और उसे अस्पताल ले गए हैं। वे एकदम सुनते ही घबराए और तुरन्त अस्पताल पहुँचे। पीछे-पीछे हम विद्यार्थी भी अस्पताल चले गए। अस्पताल हमारी स्कूल के पास ही था। उनके लड़के की हालत बहुत गम्भीर थी। उसे

खून की आवश्यकता थी। उसके ग्रुप का खून ब्लड बैंक में भी नहीं था। वह उनके परिवार के अन्य किसी सदस्य के खून से भी नहीं मिल रहा था। तब हम विद्यार्थियों ने खून देने की इच्छा व्यक्त की और अपने खून की जाँच करवाई। उस लड़के के ग्रुप का खून मेरे ग्रुप का ही था। मैंने अपने गुरु के लड़के को खून दिया। खून देने के बाद उसकी हालत में सुधार हुआ। सभी ने मेरी प्रशंसा की। मैंने कहा—"यह तो मेरी अपने अध्यापक (गुरु) के प्रति निष्ठा व भक्ति है।"

—चन्द्रप्रकाश अग्रवाल, जोधपुर

[३]

बात उस समय की है जब मैं कक्षा ९ में पढ़ता था। हमारे स्कूल में शीतकालीन अवकाश चल रहा था। तब मैं अपने ननिहाल चला गया। ननिहाल में मेरा एक घनिष्ठ मित्र रहता है जो उन दिनों बहुत बीमार था और अस्पताल में भरती था। मैं उससे मिलने के लिए अस्पताल गया। जैसे ही मैंने अस्पताल के परिसर में प्रवेश किया कि मुझे एक औरत के रोने-चिल्लाने की आवाज सुनाई दी। मैंने अपनी नजरें दौड़ाईं तो मुझे कुछ ही दूर खड़ी वह औरत दिखाई दी जो रो रही थी। वह अपने आस-पास से गुजरने वाले हर व्यक्ति को कह रही थी कि कोई मेरे पति को बचालो। परन्तु कोई उसकी बात पर ध्यान नहीं दे रहा था। मैं उसके पास गया तो वह मुझसे बोली कि मेरे पति को रक्त की सख्त जरूरत है। अगर उन्हें एक बोतल खून की नहीं मिली तो शायद वो नहीं बचेंगे। मैंने औरत को दिलासा दिया और उसके साथ उसके पति के पास पहुँचा। मैं उसके पति को देखकर भौचक्का रह गया। वो तो मेरे गुरु थे जिनके पास मैं ३ वर्ष तक पढ़ा था। वे बहुत ही अच्छे तथा मेहनती व्यक्ति थे। उन्होंने हर व्यक्ति व बालक का मन जीत लिया था। वे हमें बहुत ही प्रेम व लगन से पढ़ाते थे। जब उनका स्थानान्तरण हुआ तो सभी विद्यार्थी फूट-फूट कर रोये थे। हम सभी मित्रवर उनको हमेशा याद करते थे। उन गुरु को देखते ही मेरे में गुरु-निष्ठा के भाव जागृत हो गये और उसी समय मैंने अपने रक्त की जाँच करवायी। मेरे रक्त का वही ग्रुप था जिसकी मेरे गुरु को आवश्यकता थी। मैंने मेरे गुरु को अपना रक्त देकर उनकी अमूल्य जान बचायी। कुछ समय बाद मेरे गुरु ठीक हो गये और मेरे घर आये। उनको स्वस्थ देखकर मेरा हृदय प्रफुल्लित हो उठा।

—नवनीत आगाल, रेलमगरा

[४]

मैं गाँव के एक प्राथमिक विद्यालय में पढ़ता था। विद्यालय में कोई चपरासी सफाई हेतु नहीं था। विद्यार्थियों को नियमित रूप से कचरा निकालना पड़ता था। उस दिन सफाई के लिए मेरी बारी थी। मैंने कचरा निकाला और एक टोकरी में भर लिया, फिर किसी दूसरे काम में लग गया। टोकरी उसी कमरे में पड़ी रह गयी। कुछ समय बाद वयोवृद्ध गुरुजी आये। उन्हें आँखों से कम दिखता था, उन्हें ध्यान नहीं रहा और इधर से उधर जाते हुए वे उस टोकरी से टकरा गए और गिर पड़े। गुरुजी को काफी चोट लगी।

मेरे इस प्रमाद पर क्षुब्ध होकर गुरुजी ने मुझे डण्डे से खूब पीटा। मैंने अत्यन्त शान्ति से गुरुदेव के प्रहार सहे और अपनी भूत के लिए बार-बार क्षमा मांगी। आज भी डण्डे के प्रहार का छोटा निशान हाथ पर है। विद्यार्थियों को पूछने पर मैंने बड़े गर्व से कहा कि यह गुरुजी का प्रसाद है।

शिष्य को सुधारने के लिए गुरु को क्षुब्ध होना पड़ता है परन्तु इस क्षोभ में प्रेम और वात्सल्य भरा रहता है, द्वेष नहीं। आज भी मेरे हृदय में उन वृद्ध गुरुजी के प्रति भक्ति व निष्ठा है और जब भी मिलते हैं तो मैं उन्हें नमस्कार किये बिना नहीं रहता। किसी कवि ने कहा है—

गुरु कुम्हार सिख कुम्भ है, गढ़-गढ़ काढ़ै खोट।
अन्दर हाथ सहार दे, ऊपर मारे चोट।।

—नवरत्नमल बोथरा, नागौर

चिरस्मरणीय संस्मरण

इस स्तम्भ के लिए अपने तथा अपने सम्बन्धियों के चिरस्मरणीय प्रेरक प्रसंग/संस्मरण/अनुभव भेजिए। प्रत्येक प्रकाशित संस्मरण/प्रसंग अनुभव पर आपको पाँच पुस्तिकायें पुरस्कार में दी जायेंगी। अपने संस्मरण/प्रसंग/अनुभव इस पते पर भेजें :—

मंत्री,
सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल
बापू बाजार, जयपुर-३०२००३

समीक्षार्थ पुस्तक की दो प्रतियाँ आना आवश्यक है।
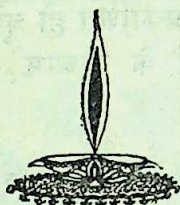
साहित्य-समीक्षा

☐ डॉ. नरेन्द्र भानावत

(१) **क्रान्ति-यात्रा : गौरव ग्रन्थ**—सं० कुमार सत्यदर्शी, प्र० क्रान्ति यात्रा गौरव ग्रंथ प्रकाशन समिति भीलवाड़ा, पृ० ४००, मू० ५०.०० ।

प्रवर्तक श्री महेन्द्र मुनि 'कमल' के दीक्षा रजत जयन्ती के उपलक्ष में उनके सम्मानार्थ प्रकाशित यह ग्रन्थ सामान्य अभिनन्दन ग्रन्थों की लीक से हटकर है और अपनी अलग पहचान रखता है। यह ग्रन्थ ४ खण्डों में विभक्त है। इसका प्रथम खण्ड 'क्रान्ति यात्रा' सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण खण्ड है जिसमें स्वयं महेन्द्र मुनि ने अपनी संयम यात्रा को क्रान्ति यात्रा अभिधान देकर भावात्मक रोचक शैली में जीवन-साधना की अनुभूतियों को चित्रित किया है। इस चित्रण में उनका साधक, कवि, रचनाकार का व्यक्तित्व निखर उठा है। द्वितीय खण्ड 'वन्दना' में प्रमुख सन्त-सतियों और श्रावक-श्राविकाओं के मुनिश्री के सम्बन्ध में संस्मरण श्रद्धा-भाव संकलित हैं। तृतीय खण्ड 'समीक्षा' खण्ड है, जिसमें मुनिश्री की कृतियों पर प्रमुख विद्वानों के समीक्षात्मक लेख हैं। चतुर्थ खण्ड में जैन धर्म से सम्बन्धित सैद्धान्तिक, व्यावहारिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक निबन्ध हैं। ग्रन्थ पठनीय और संग्रहणीय है।

(२) **अध्यात्म-सार**—सं० किशनचन्द जैन, प्र० नेमीचन्द शान्तिदेवी जैन ग्रन्थमाला, अलवर, पृ० ९६, मू० ३.०० ।

लेखक ने जैन धर्म और दर्शन के परिप्रेक्ष्य में जीव, जगत, परमात्मा और मोक्ष मार्ग विषयक १५२ प्रश्नोत्तर संकलित किये हैं। सैद्धान्तिक विषयों को सहज और सरल ढंग से स्पष्ट किया गया है। प्रत्येक स्वाध्यायी के लिए यह पुस्तक उपयोगी है।

(३) **मंगल-देशना**—प्रवचनकार, आचार्य पुष्पदन्त सागरजी म०, सं० मुनिश्री तरुणसागरजी म०, संकलन—अजयकुमार कासलीवाल पंछी, प्र० ९०/१, खातीपुरा चौराहा (जेल रोड) इन्दौर-७।

आचार्य पुष्पदन्त सागरजी म० के वर्षायोग १९८९ नौगामा (बांसवाड़ा) के प्रवचनों का प्रकाशन 'मंगल देशना' पाक्षिक पत्र के रूप में किया जा रहा है। इसके अन्तर्गत अब तक 'गलत फहमी', 'आरती बिन पूजा अधूरी', 'धोबी का गधा न घर का न घाट का' शीर्षक से तीन प्रवचन संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। इन प्रवचनों में आचार्यश्री ने धार्मिक एवं लोक कथा प्रसंगों के माध्यम से सम्बद्ध विषय को रोचक शैली में प्रस्तुत किया है।

(४) **चिन्तन के मोती**—सं० वैद्य मानमल सुराणा 'मस्ताना', प्र० सुराणा साहित्य प्रकाशन, सिंघवियों की पोल के बाहर, नागौर, पृ० ४०, मू० नित्य पठन।

जीवन में आत्म जागृति हो और साधना रस बढ़े, इस दृष्टि से इस लघु कृति में महामंत्र नवकार, श्री वज्र पंजर, उपसर्गहर, चिन्तामणि पार्श्वनाथ, नमिउण, घंटाकर्ण आदि स्तोत्र मूल पाठ आदि के साथ संकलित हैं। जप-साधना में यह संकलन उपयोगी है।

(५) **आत्म-आलोचना**—बी० रमेश जैन, प्र० भीकमचन्द जुगराज गादिया, २, पुलियार कोयल स्ट्रीट, अशोक नगर, बैंगलौर–२५, पृ० १२, मू० स्व-चिन्तन।

इसमें लेखक ने पंच-परमेष्ठि के गुणों का संक्षेप में परिचय देते हुए आत्म-शुद्धि की प्रक्रिया और महत्त्व पर प्रकाश डाला है।

(६) **अर्हत् वचन**—सं० अनुपम जैन, प्र० कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ दि० जैन उदासीन आश्रम ट्रस्ट, ५८४, महात्मा गाँधी मार्ग, तुकोगंज, इन्दौर–१।

कुन्दकुन्द ज्ञानपीठ इन्दौर द्वारा प्रकाशित इस शोध त्रैमासिकी के ४ अंक अब तक प्रकाशित हो चुके हैं। जैन पत्रकारिता के क्षेत्र में वैज्ञानिक दृष्टि से जैन धर्म दर्शन को प्रस्तुत करने में यह पत्रिका अप्रतिम है। अब तक प्रकाशित अंकों में गणित, पुरातत्त्व, भौतिकी, ज्योतिर्विज्ञान, भूगोल और पुनर्जन्म जैसे विषयों पर अंग्रेजी-हिन्दी में शोध सामग्री प्रस्तुत की गई है। प्रकाशन उच्च स्तरीय और भव्य है।

(७) **मोहनदीप**—सं० उगमराज मोहनोत, प्र० डी–९० ए, कृष्णा मार्ग, बापू नगर, जयपुर–१५।

अ० भा० मोहनोत महासभा का यह मुख पत्र है। इसमें सभा की गतिविधियों का परिचय व मोहनोत वंश की उपलब्धियों पर सामग्री प्रकाशित की जाती है। वार्षिक मूल्य ३०.०० रुपया है।

संगोष्ठी-विवरण
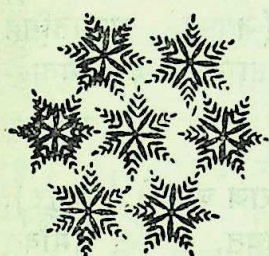
जैन सिद्धान्त प्रचार-प्रसार संगोष्ठी सम्पन्न

☐ डॉ. संजीव भानावत

कोसाणा (जोधपुर)—आज देश में हिंसा, झूठ-फरेब और भ्रष्टाचार का बोल-बाला है। नैतिक मूल्यों का तेजी के साथ ह्रास हो रहा है। ऐसे समय में विद्वानों का दायित्व है कि वे अहिंसा, सत्य और सदाचार का स्वयं पालन करते हुए परिवार, समाज और राष्ट्र में इस त्रिवेणी को प्रवाहित करें।

उक्त विचार प्रसिद्ध जैनाचार्य श्री हस्तीमलजी महाराज ने श्री अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद् एवं श्री जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ कोसाणा के संयुक्त तत्त्वावधान में ११–१२–१३ नवम्बर, १९८९ को आयोजित जैन सिद्धान्त प्रचार-प्रसार संगोष्ठी में व्यक्त किए। इस संगोष्ठी में राजस्थान, मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र व दिल्ली के लगभग ४० विद्वानों एवं पत्रकारों ने भाग लिया। उद्घाटन समारोह की अध्यक्षता अ. भा. जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ के अध्यक्ष डॉ. सम्पतसिंह भांडावत ने की।

इस अवसर पर पंडित रत्न श्री हीरा मुनि ने अपने उद्बोधन में कहा कि आज धर्म फैशन, दर्शन प्रदर्शन और ज्ञान हिंसा का साधन बनता जा रहा है। अतः आवश्यकता है कि कोरा प्रचार न हो। प्रचार आचार और वात्सल्य व सेवा भाव के साथ जुड़े। श्री महेन्द्र मुनि ने भी उद्बोधन दिया।

संगोष्ठी के निदेशक व विद्वत परिषद् के महामन्त्री डॉ. नरेन्द्र भानावत ने कहा कि जैन सिद्धान्त के मुख्य तत्त्व हैं—अहिंसा, संयम, पर्यावरण-शुद्धि, मन, वचन और कर्म की पवित्रता, विचारों में सहिष्णुता और शुद्ध खान-पान। आज की शिक्षा में इन तत्त्वों का जुड़ाव होना चाहिये।

संगोष्ठी के तीन सत्रों में शिक्षण संस्थाओं व विदेशों में जैन सिद्धान्तों का प्रचार-प्रसार व इसमें जन संचार माध्यमों की भूमिका पर विद्वानों एवं पत्रकारों ने अपने निबन्ध प्रस्तुत किये और उन पर खुलकर चर्चा हुई। शिक्षा में जैन

सिद्धान्तों के समावेश पर जशकरण डागा (टोंक), चांदमल कर्णावट (उदयपुर), डॉ. शान्ता भानावत (जयपुर), फूलचन्द मेहता (उदयपुर), ज्ञानेन्द्र बाफना (जोधपुर), श्रीचन्द मेहता (जोधपुर), मदनचन्द्र मेहता (उमरगांव), कन्हैयालाल लोढ़ा (जयपुर), प्रो. उदय जारोली (नीमच), सरदारमल कांकरिया (कलकत्ता), सौभाग्यमल श्रीश्रीमाल (जयपुर), पार्श्वकुमार मेहता (जयपुर), धनपतसिंह मेहता (जोधपुर), डॉ. जगदीश राय जैन (दिल्ली) व सौभाग्यमल जैन (सवाई-माधोपुर) ने अपने विचार—निबन्ध प्रस्तुत किये ।

विदेशों में जैन सिद्धांतों के प्रचार-प्रसार पर डॉ. धनराज चौधरी (जयपुर), डॉ. कामता कमलेश (अमरोहा), श्रीमती कौशल्या भानावत, सुधीन्द्र गेमावत (जयपुर) ने अपने निबन्ध प्रस्तुत करते हुए इस बात पर बल दिया कि विदेशी भाषाओं में जैन आगमों के अनुवाद हों तथा जैन ध्यान केन्द्र व अन्तर्राष्ट्रीय जैन साहित्य अकादमी की स्थापना हो ।

जैन सिद्धान्तों के प्रचार-प्रसार में जन संचार माध्यमों की भूमिका पर विचार करते हुए कहा गया कि जैन श्रमण अपने आचार और पद-विहार के कारण जन-संचार के सशक्त माध्यम रहे हैं । आधुनिक माध्यमों—समाचार पत्रों, आकाशवाणी, टी. वी. फिल्म आदि का उपयोग विवेकपूर्वक किया जाना चाहिये । प्रमुख विचारक, पत्रकार थे—डॉ. भँवर सुराणा (हिन्दुस्तान–जयपुर) ओंकार श्री (माणक–जोधपुर), नेमीचन्द जैन भावुक (जोधपुर), गुमानमल जैन, डॉ. संजीव भानावत (जयपुर), चंचलमल चौरड़िया (जोधपुर), सुशीला बोहरा (जोधपुर), केशरी किशोर नलवाया (इन्दौर) व जितेन्द्र कोठारी (देवली) ।

इन सत्रों की अध्यक्षता की उमरावमल ढड्ढा (अजमेर), नथमल हीरावत (जयपुर) व डॉ. भंवर सुराणा (जयपुर) ने ।

इस संगोष्ठी में लोकसभा चुनाव के लिए मतदाताओं से यह अपील की गई कि वे ऐसे जन प्रतिनिधियों का चुनाव करें जिनका अहिंसा, सत्य, सदाचार में विश्वास हो, जो नशाबन्दी के समर्थक हों, जो पर्यावरण-शुद्धि, पशु क्रूरता-निवारण और शाकाहार-प्रचार के लिए संकल्पबद्ध हों । प्रारम्भ में कोसाणा जैन संघ के मंत्री श्री घीसूलाल बाघमार ने आगन्तुक विद्वानों का स्वागत किया और सम्मान के प्रतीक रूप में शाल भेंट की । समापन समारोह में बोलते हुए राजस्थान हाई कोर्ट के जज श्री जसराज चोपड़ा ने कहा कि आत्म तत्त्व उच्चारण की वस्तु नहीं आचरण व रमण की वस्तु है । ज्ञान को जीवन में जिया जाये, उतारा जाये ।

—सहायक प्रोफेसर, पत्रकारिता विभाग, राज. वि. वि., जयपुर

प्रेरक प्रसंग :
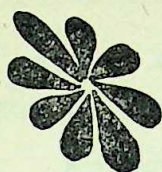
ज्ञान, धन और क्रिया

○ श्री कन्हैयालाल गौड़

एक बार जेठ की तपती दुपहरी के समय एक सेठजी और एक पंडितजी ऊँट पर बैठकर यात्रा कर रहे थे। मार्ग रेगिस्तानी और लम्बा था। चलते चलते जब वे एक गाँव से कुछ ही दूरी पर रह गये तो उन्होंने देखा कि एक रुग्ण व्यक्ति धरती पर पड़ा-पड़ा कराह रहा है। उससे उठा भी नहीं जा रहा है। स्थिति बड़ी दयनीय है। कोई उसे कुछ सहानुभूति के दो बोल भी नहीं कह रहा था। जब ये तीनों यात्री उस रोगी के पास पहुँचे तो ऊँट रोक लिया गया। अब सबसे पहले पंडितजी ने अपनी वाग्धारा बहाई—"भैय्या! रोने-चिल्लाने से क्या होगा? तुमने जैसे कर्म किये हैं, वैसे ही फल तुम्हें मिल रहे हैं। जब तुमने बुरे कर्म किये हैं तो अब रोने-धोने से क्या होगा? जगत् का तो यही नियम है—"इस हाथ दे, उस हाथ ले।"

पंडितजी शास्त्रों के प्रमाण पर प्रमाण देने लगे। पर उस बेचारे को उपदेश की आवश्यकता नहीं थी। सेठजी ने पंडितजी से कहा—"आपका पंडिताई भरा उपदेश इसके किस काम का?" पंडितजी बोले—"हमने तो जो हमसे हो सकता था, अपना काम कर दिया।"

सेठजी ने जेब में हाथ डालकर जो भी सिक्के थे वे ऊपर से फेंक दिये और कहा—"बन्धु! इनसे अपना उपचार करा लेना और तो हम क्या कर सकते हैं?" परन्तु पीड़ा से व्याकुल वह रुग्ण सिक्कों को आँखों से देख रहा था, पर उस समय उन्हें उठाने की शक्ति उसमें नहीं थी। यह स्थिति देखकर ऊँट वाले ने कहा—"सेठजी! आपके सिक्के इसके किस काम के? और पंडितजी! आपका ज्ञान भी इसके किस काम का? आप आगे चलिये मैं आ रहा हूँ। मेरे पास और तो कुछ नहीं, शरीर है, मन की भावनाएँ हैं, उन्हीं का उपयोग करूँगा।" वे दोनों यात्री आगे चल दिये। ऊँट वाले ने रोगी को कंधे पर उठाया, जो भी सिक्के थे, सब एकत्रित कर उसके कपड़े के पल्ले बाँधे और वहाँ से कुछ दूर एक गाँव में चिकित्सालय था, वहाँ उसे पहुँचाया। चिकित्सालय में उस रोगी को भर्ती कराकर और उन पैसों से उसके खाने-पीने की व्यवस्था करवा कर, शेष पैसे उसे देकर कहा—"भाई! अब मैं चलता हूँ। मुझसे जो कुछ बन सका, किया। अब इससे आगे बढ़ने की मेरी शक्ति नहीं है।" रोगी ने उसे नतमस्तक होकर अन्तर से आशीर्वाद दिया और कहा—"भाई! तुमने मेरे लिये बहुत कुछ किया। भगवान् तुम्हें शतायु-बनाएँ।"

—१७, लाला लाजपतराय मार्ग, उज्जैन–४५६ ००६

समाज-दर्शन

सन्त विहार-चर्या

कोसाणा—पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा. के आज्ञानुवर्ती सन्त-सती मण्डल की विहार-दिशाएँ इस प्रकार हैं—

परम श्रद्धेय आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. का स्वास्थ्य अब सामान्यतः ठीक चल रहा है। पूज्य गुरुदेव स्वयं बिना किसी सहारे के खड़े होकर कुछ कदम चल लेते हैं एवं इसमें अब निरन्तर प्रगति हो रही है। यहाँ से विहार पीपाड़ की ओर हो गया है।

मधुर व्याख्यानी पं. रत्न श्री मान मुनिजी, श्री शुभेन्द्र मुनिजी आदि ठाणा ५ ब्यावर का चातुर्मास सम्पन्न कर विभिन्न ग्रामों में धर्म प्रभावना करते हुए २५ नवम्बर को कोसाणा आचार्यश्री की सेवा में पधार गये हैं।

तत्त्व जिज्ञासु श्री चम्पक मुनिजी म. सा., सेवाभावी श्री नंदीषेण मुनिजी ठाणा २ अलीगढ़ रामपुरा का चातुर्मास सम्पन्न कर उखलाना, जैनपुरी, खौहल्या, चौथ का बरवाड़ा, चोरू, डेकवा, गंभीरा, आदर्श नगर, बजरिया, आलनपुर आदि क्षेत्रों में धर्म प्रभावना करते हुए सवाई माधोपुर पधार गये हैं। अग्र विहार कुण्डेरा होते हुए पल्लीवाल क्षेत्र की ओर सम्भावित है।

रोचक व्याख्याता श्री ज्ञान मुनिजी म. सा. ठाणा ३ किशनगढ़ का वर्षा-वास सफलतापूर्वक सम्पन्न कर मदनगंज, शिवाजी नगर आदि क्षेत्रों में धर्म प्रभावना करते हुए अजमेर पधार गये हैं। अग्र विहार पीपाड़ की ओर सम्भावित है।

प्रवर्तिनी महासतीजी श्री बदनकंवरजी म. सा., सेवाभावी महासती श्री लाड़कंवरजी म. सा. ठाणा ६ स्थिरवासार्थ घोड़ों के चौक, जोधपुर स्थानक में सुख शान्तिपूर्वक विराजमान हैं। विदुषी महासती श्री सायरकंवरजी म. सा. ठाणा ३ गुलाबपुरा का चातुर्मास सम्पन्न कर विजयनगर, बांदनवाड़ा, नसीरा-बाद आदि क्षेत्रों में धर्म प्रभावना करते हुए अजमेर पधार गये हैं। अग्र विहार पीपाड़ की ओर सम्भावित है। परम विदुषी महासती श्री मैनासुन्दरीजी म. सा. ठाणा ६ ने जोधपुर चातुर्मास सम्पन्न कर सरदारपुरा, शास्त्री नगर, प्रतापनगर, पावटा आदि उप नगरों में धर्म प्रभावना करते हुए पीपाड़ की ओर विहार किया

है। सेवाभावी महासती श्री सन्तोषकंवरजी म. सा. ठाणा ५ ब्यावर का चातुर्मास सम्पन्न कर पीपाड़ की ओर पधार रहे हैं।

शान्त स्वभावी महासती श्री शान्तिकंवरजी म. सा. आदि ठाणा नसीराबाद का चातुर्मास सम्पन्न कर अजमेर, पुष्कर, तिलोरा थांवला, मेड़ता होते हुए पीपाड़ की ओर पधार रहे हैं।

सेवाभावी महासती श्री तेजकंवरजी म. सा. ठाणा ३ ने हरमाड़ा चातुर्मास सम्पन्न कर किशनगढ़ आदि क्षेत्रों में धर्म प्रभावना करते हुए रूपनगढ़ की ओर विहार किया है। विदुषी महासती श्री सुशीलाकंवरजी म. सा. आदि ठाणा ६ दूणी का चातुर्मास सम्पन्न कर आवां, देवली, कोटड़ी, जहाजपुर होते हुए भीलवाड़ा की ओर विहार कर रहे हैं।

—राजेन्द्रकुमार जैन

अनुकरणीय त्याग

पर्वाधिराज पर्युषण पर्व के पश्चात् कोसाणा में आचार्य प्रवर एवं सन्तों के दर्शनार्थ पधारे संघ के कार्याध्यक्ष श्रीमान् रतनलालजी बाफना एवं जलगांव के सुश्रावक श्रीमान् दलीचन्दजी चोरड़िया ने क्रमशः उपवास युक्त पौषध एवं दया-संवर महीने में एक करने का आचार्य भगवन् से नियम अंगीकार किया। श्रीमान् रतनलालजी बाफना की उपवास युक्त पौषध करने के उपलक्ष्य में प्रतिमाह १०,०००/- शुभ खाते में तथा श्रीमान् दलीचन्दजी चोरड़िया की दया-संवर के उपलक्ष्य में प्रतिमाह ५,०००/- शुभ खाते निकालने की भावना अनुकरणीय है। उक्त शुभ खाते की राशि उनके द्वारा निकाले जाने वाले पूर्व के शुभ खाते से अलग है। दोनों महानुभावों के साथ श्रीमान् मोहनलालजी कटारिया नागपुर ने २,०००/- प्रतिमाह शुभ खाते निकालने की भावना व्यक्त की। तीनों महानुभावों की त्याग के प्रति निष्ठा न केवल आदरणीय है, अपितु अनुकरणीय भी है।

कार्यकर्ता की ईमानदारी

कोसाणा—परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर श्री हस्तीमलजी म. सा., आगमज्ञ पं. रत्न श्री हीरामुनिजी म. सा. आदि सन्त मण्डल की सेवा में अ. भा. जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ, जोधपुर की ओर से लेखन आदि कार्य में कार्यरत स्वाध्याय संघ, जोधपुर के स्वाध्यायी श्री राजेन्द्रकुमारजी जैन ने त्रिविल्लूर (मद्रास) निवासी प्रेमराजजी लुंकड को १५,०००/- राशि का बैग वापस लौटाकर जो ईमानदारी का परिचय दिया है, वह प्रशंसनीय है। श्री प्रेमराजजी लुंकड १७ नवम्बर को पूज्य आचार्य प्रवर की सेवा में सपरिवार दर्शनों का लाभ लेने आये

थे। जब उन्होंने पूज्य गुरुदेव को वन्दना आदि की तो बैग वहीं पर रखकर भूल गये। तब श्री राजेन्द्रकुमारजी ने वह बैग वहां से उठाकर आलमारी में रख दिया। दूसरे दिन जब वे महानुभाव आये तो उन्होंने वह बैग उन्हें लौटा कर ईमानदारी का परिचय दिया। ऐसे निष्ठावान् व ईमानदार कार्यकर्ताओं पर संघ को गर्व है।

—एस. लालचन्द बाघमार

स्वाध्याय दिवस पर स्वाध्याय करने का सुसंकल्प लें

आगामी पौष शुक्ला चतुर्दशी दि. १०.१.९० बुधवार का पावन प्रसंग स्वाध्याय, मौन एवं ध्यान-साधना के प्रबल प्रेरक एवं प्रतीक आचार्य प्रवर १००८ श्री पूज्य श्री हस्तीमलजी म. सा. की ८०वीं जन्म जयन्ती के रूप में तथा दिवंगत श्रमण सूर्य मरुधर केसरी श्री मिश्रीमलजी म. सा. की पुण्य तिथि के रूप में उपस्थित हो रहा है।

दोनों महापुरुषों का समस्त जीवन जनजागरण एवं जनकल्याण हेतु सतत प्रयत्नशील रहा है अतः प्रत्येक श्रद्धालु का दायित्व है कि ऐसे पावन प्रसंग पर सामायिक, स्वाध्याय, जप, तप, त्याग, प्रत्याख्यान आदि की सम्यग् क्रियायें करें एवं स्वाध्याय प्रवृत्ति में आगे बढ़ने हेतु संकल्प करें। अपने परिवार में बच्चों को विशेष रूप से धार्मिक अध्ययन हेतु प्रेरित करें ताकि सुसंस्कारित समाज का निर्माण हो सके। व्यसनों से मुक्त रखने हेतु सजगता रखें।

पदाधिकारियों से विशेष अनुरोध है कि इस प्रसंग पर नियमित सामायिक, स्वाध्याय तथा पर्व दिनों पर रात्रि भोजन त्याग का संकल्प लेकर समाज के सामने आदर्श प्रस्तुत करें।

निवेदक
चंचलमल चोरड़िया
सचिव, स्वाध्याय संचालन समिति, जोधपुर

आवश्यक सूचना

यह सूचित करते हुए हर्ष होता है कि श्री सुवाबाई जैन धर्म प्रचारक प्रशिक्षण केन्द्र के अन्तर्गत जैन ट्रेनिंग कॉलेज श्री सन्मति स्वाध्याय पीठ, बेंगलोर का नया शिक्षण सत्र दि. १ जनवरी, ९० से प्रारम्भ हो रहा है।

जो जैन छात्र व्यावहारिक शिक्षण के साथ जैन धर्म के सिद्धान्तों का संस्कृत-प्राकृत भाषा के अध्ययन द्वारा उच्च शिक्षण प्राप्त करना चाहते है और जिनकी योग्यता हाई स्कूल, कॉलेज स्तर के छात्र संस्कृत प्रथमा परीक्षा अथवा

पाथर्डी या बीकानेर परीक्षा बोर्ड की रत्न परीक्षा उत्तीर्ण होंगे उन्हें जैन ट्रेनिंग कॉलेज में प्रवेश दिया जायेगा।

प्रविष्ट छात्रों के भोजन, निवास आदि की समुचित व्यवस्था संस्था की ओर से नि:शुल्क होगी।

प्रविष्ट छात्रों को छात्रालय के नियमोपनियमों का पालन करना होगा।

पाठ्यक्रम एवं छात्रालय की नियमावली के लिए आवेदन करें। इस वर्ष बाहर के केवल १० छात्रों को ही प्रवेश देने का निश्चय किया है अतः प्रवेश पत्र के लिए शीघ्र निम्न पते पर आवेदन करें—

—संचालक : **जैन ट्रेनिंग कॉलेज सन्मति स्वाध्याय पीठ**
नं. २०, प्रिमरोज रोड, बेंगलोर-२५

अ० भा० जैन विद्वत् परिषद् की बैठक

कोसाणा—श्री अखिल भारतीय जैन विद्वत् परिषद् की साधारण सभा की बैठक दिनांक १२ नवम्बर, १६८६ को कोसाणा में आयोजित की गई। इसमें सर्वानुमति से श्री कन्हैयालाल लोढ़ा (जयपुर) अध्यक्ष एवं कार्यकारिणी समिति के निम्न २० सदस्य चुने गये :—

१. श्री गणपतराज बोहरा (पीपल्यां कलां)
२. श्री सुरेशकुमार जैन (जलगांव)
३. श्री फकीरचन्द मेहता (इन्दौर)
४. श्री जोधराज सुराणा (बंगलौर)
५. श्री सौभाग्यमल जैन (शुजालपुर)
६. श्री भंवरलाल कोठारी (बीकानेर)
७. डॉ० नरेन्द्र भानावत (जयपुर)
८. श्री मोफतराज मूणोत (बम्बई)
६. श्री सरदारमल कांकरिया (कलकत्ता)
१०. श्री गुमानमल चौरड़िया (जयपुर)
११. श्री नथमल हीरावत (जयपुर)
१२. श्री टीकमचन्द हीरावत (जयपुर)
१३. श्री पी० एम० चौरड़िया (मद्रास)
१४. श्री चंचलमल चौरड़िया (जोधपुर)
१५. डॉ० सागरमल जैन (वाराणसी)
१६. श्री रणजीतसिंह कूमट (जयपुर)
१७. पं० कन्हैयालाल दक (उदयपुर)

१८. श्री सुमेरसिंह बोथरा (जयपुर)
१९. श्री पार्श्वकुमार मेहता (जयपुर)
२०. श्रीमती सुशीला बोहरा (जोधपुर)

परिषद् के विधानानुसार अध्यक्ष श्री कन्हैयालाल लोढ़ा ने परिषद् के पदाधिकारियों का मनोनयन इस प्रकार किया—

उपाध्यक्ष	१. श्री जोधराज सुराणा (बंगलौर)
	२. श्री टीकमचन्द हीरावत (जयपुर)
महामंत्री	डॉ. नरेन्द्र भानावत (जयपुर)
संयुक्त मंत्री	१. श्री चंचलमल चौरड़िया (जोधपुर)
	२. श्री पार्श्वकुमार मेहता (जोधपुर)
कोषाध्यक्ष	श्री सुमेरसिंह बोथरा (जयपुर)

बैठक में ट्रैक्ट योजना के स्थायी फण्ड के लिए ट्रैक्ट साहित्य संरक्षक एवं ट्रैक्ट साहित्य संपोषक सदस्य अधिकाधिक संख्या में बनाने का तय किया गया। इसके लिए क्रमशः पांच हजार व ढाई हजार रुपयों की राशि निर्धारित की गई।

संक्षिप्त समाचार

कानोड़—चातुर्मास व्यवस्था समिति के संयोजक श्री सुन्दरलाल मुर्ड़िया की विज्ञप्ति के अनुसार आचार्य श्री नानेश के अर्द्ध-शताब्दि वर्ष के उपलक्ष में इन्दौर के श्री गजेन्द्रकुमार सूर्या के सौजन्य से 'समता एवं विश्वशान्ति' विषय पर अ. भा. सूर्या निबन्ध प्रतियोगिता आयोजित की गई जिसमें मुक्तक भानावत (उदयपुर), प्रथम धर्मचन्द नागौरी (कानोड़) द्वितीय तथा शान्तिलाल श्री श्रीमाल (निम्बाहेड़ा) तृतीय रहे। इन्हें क्रमशः २,५००, १,५०० व १,००० रुपयों की राशि भेंट की जायेगी।

जोधपुर—जैन ब्रिगेड के तत्त्वावधान में महावीर काम्पलेक्स में डॉ. पी. एम. कुमार के संयोजन में २० नवम्बर को सामूहिक विवाह समारोह आयोजित किया गया। ओसवाल समाज के ५ नव-दम्पतियों को इस अवसर पर गणमान्य नागरिकों ने आशीर्वाद प्रदान किया और ऐसे समारोह समय-समय पर आयोजित करने की आवश्यकता प्रतिपादित की।

अलीगढ़—यहाँ आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा. के सुशिष्य श्री चम्पक मुनिजी एवं नन्दीषेण मुनिजी के सान्निध्य में १ नवम्बर से ५ नवम्बर तक

पंच-दिवसीय धर्म-संस्कार निर्माण शिविर आयोजित किया गया जिसमें निकटवर्ती ११ गांवों के ४४ बालक एवं २३ बालिकाओं ने भाग लिया। श्री उच्छत्ररायजी जैन, श्री सौभागमलजी जैन एवं श्री चौथमलजी जैन ने अध्यापन कार्य किया।

हरमाड़ा—यहाँ विदुषी महासती श्री तेजकुंवरजी म. सा. के सान्निध्य में ८ अक्टूबर से १५ अक्टूबर तक वर्धमान जैन धार्मिक शिक्षण शिविर का आयोजन श्री छोटेलालजी मेहता के संयोजन में किया गया। जिसमें ३५ बालक-बालिकाओं ने भाग लिया। समापन समारोह के अध्यक्ष श्री सूरजमलजी नवलखा, जयपुर एवं मुख्य अतिथि श्री मदनलालजी कोठारी किशनगढ़ थे।

भवानीमंडी—स्थानीय संघ द्वारा आयोजित एक सप्ताह के धार्मिक शिविर में लगभग ११५ बालक-बालिकाओं एवं ७० महिलाओं ने भाग लिया। शिविरार्थियों को विदुषी महासती श्री छगनकुंवरजी के उद्बोधन का विशेष लाभ मिला।

रायपुर (भीलवाड़ा)—श्री अरिहन्त मण्डल द्वारा गुलाबपुरा स्वाध्याय संघ के सान्निध्य में १० से १७ अक्टूबर तक बालक-बालिका व महिला शिविर का आयोजन किया गया जिसमें ११३ शिविरार्थियों ने भाग लिया।

समाघोघा (गुजरात)—यहाँ स्थानीय संघ व बम्बई महाजन के तत्त्वावधान में मुनि श्री भास्कर श्री जी म. तथा महासतियांजी श्री मणिबाई एवं प्राणकुंवर बाई ठाणा २२ के सान्निध्य में २९ अक्टूबर से ७ नवम्बर तक श्री नरेन्द्र कामदार के संचालन में आध्यात्मिक ज्ञान संस्कार शिविर आयोजित किया गया जिसमें १११ बालक-बालिकाओं ने भाग लिया।

उपलेटा—गोंडल सम्प्रदाय के श्री धीरजमुनि एवं महासती श्री ताराबाई के सान्निध्य में आयोजित शिविर में ३० गांवों के २०० विद्यार्थियों ने भाग लिया।

पाली—महासती श्री कंचनकंवरजी के सान्निध्य में तपस्वीराज ज्ञानगच्छाधिपति श्री चंपालालजी म. सा. के मुखारविन्द से कु. तारा सुपुत्री श्री माणकचन्दजी चौपड़ा की भागवती दीक्षा ७ दिसम्बर को सानन्द सम्पन्न हुई। पूर्व में आपकी बहिन चन्द्रा ने २५-४-८३ को इसी सम्प्रदाय में दीक्षा अंगीकार की थी जो वर्तमान में साध्वी श्री चन्द्रयशाजी के नाम से मौजूद हैं।

धूलिया—यहाँ मधुर वक्ता पं. रं. श्री जीवनमुनिजी म. सा. का दीक्षा स्वर्ण जयन्ती महोत्सव १३ अक्टूबर को तप-त्याग पूर्वक मनाया गया। इस अवसर पर मुनि श्री को 'वाणी भूषण' अलंकार से सम्मानित किया गया और

श्री प्रकाश मुनिजी द्वारा लिखित—संपादित 'जीवन दर्शन-वन्दन-अभिनन्दन ग्रंथ' का विमोचन किया गया।

मेड़ता सिटी—स्थानकवासी युवक परिषद् के चुनाव में श्री सुरेन्द्रकुमार कोठारी अध्यक्ष, श्री अनिलकुमार मेहता उपाध्यक्ष, श्री प्रवीणकुमार जोगड़ मन्त्री, श्री पुखराज श्रीमाल कोषाध्यक्ष एवं श्री कमलकुमार दुगड़, सहमंत्री चुने गये।

मद्रास—श्री राजस्थानी श्वे. स्था. जैन एसोसिएशन द्वारा संचालित जैन भवन के चुनाव में श्री बादलचन्दजी कांकरिया अध्यक्ष, श्री लूणकरणजी सेठिया, मंत्री एवं श्री रिखबराजजी बाघमार कोषाध्यक्ष चुने गये। इस भवन में कम किराये में जैन भाइयों के ठहरने की उत्तम व्यवस्था है।

अहमदाबाद—गुजरात विद्यापीठ के भाषा-साहित्य विभाग तथा जैन इन्टरनेशनल के संयुक्त तत्त्वावधान में प्रसिद्ध भाषाविद् स्व. पं. बेचरदासजी दोशी की प्रथम जन्म शताब्दी के अवसर पर उन पर तैयार किये गये स्मृति ग्रन्थ का विमोचन विद्यापीठ के कुलनायक प्रो. रामलाल परीख ने २६ नवम्बर को किया। इस अवसर पर पं. दलसुखभाई मालवणिया की अध्यक्षता में पं. बेचरदास जी के जीवन और कृतित्व पर एक विचार गोष्ठी का भी आयोजन किया गया।

दूनी—महासतियाँजी श्री सुशीलाकंवरजी म. सा. आदि ठाणा ६ विहार कर आवां, चांदली, पनवाड़ होते हुए देवली पधारे। विहार के समय जैन-अजैनों की अच्छी उपस्थिति थी। उपस्थित समुदाय में से काफी व्यक्तियों ने ब्रह्मचर्य व्रत पालन करने, रात्रि भोजन त्याग, बीडी-सिगरेट पीने का त्याग, सामायिक-स्वाध्याय करने के नियम आदि अच्छी संख्या में लिए। उपस्थित बालक-बालिकाओं ने प्रातः उठते ही अपने माता, पिता एवं बड़ों को प्रणाम करने के नियम लिए। संघ की ओर से छोटे सतियों व वैरागिन बहिन को पढ़ाने वाले पण्डितजी श्री घासीलालजी अमरपाल को दुशाला ओढ़ाकर सम्मानित किया गया। पूर्व में महासतीजी श्री सरलेश प्रभाजी को जलगांव से पधारे विद्वान् पण्डितजी द्वारा संस्कृत का अध्ययन कराने के लिए उन्हें माल्यार्पण एवं दुशाले से स्थानीय संघ ने सम्मानित किया था।

कोसाणा—यहाँ आचार्य श्री हस्तीमलजी म. सा., पं. र. श्री हीरामुनिजी आदि ठाणा के सान्निध्य में १३ नवम्बर को सामायिक संघ का वार्षिक अधिवेशन आयोजित किया गया। इस अवसर पर पं. र. श्री हीरामुनिजी ने समभाव की साधना के रूप में सामायिक का महत्त्व प्रतिपादित किया। श्री चंचलमलजी चौरड़िया, श्री चांदमलजी कर्णावट, श्रीमती सुशीला बोहरा, श्रीमती रतन

चौरड़िया आदि ने सामायिक के स्वरूप एवं महत्त्व पर प्रकाश डाला। सामायिक संघ के संयोजक श्री राजेन्द्र पटवा ने संघ की प्रवृत्तियों का परिचय दिया। इस अवसर पर संघ के नियम ग्रहण करने वाले ७५ नये सामायिक सदस्य बने।

मद्रास—एस. एस. जैन युवक संघ साहूकारपेट मद्रास के तत्त्वावधान में निःशुल्क नेत्र-शिविर दिनांक ४-११-८६ से १०-११-८६ तक सानन्द सम्पन्न हुआ। समापन समारोह की अध्यक्षता श्री एस. बादलचंदजी चौरड़िया ने की। मुख्य अतिथि श्री कलानिधि, एम. पी. ने इस मानव सेवा की भूरि-भूरि सराहना की। अहिंसा प्रेमी श्री कल्लेमामणी करूपैयाजी ने समारोह में भाग लिया। तामिलनाडु सरकार के नेत्र अस्पताल मद्रास के डाक्टरों की सेवा सराहनीय रही। कुल ७३ मोतियाबिन्द के आपरेशन हुए एवं ५७५ चश्मों का निःशुल्क वितरण किया गया। स्व. सेठ श्री खींवराजजी चौरड़िया की यादगार में उनके निजी ट्रस्ट से अर्थ सहयोग मिला। उनकी धर्मपत्नी उदारमना श्रीमती भँवरीकंवरजी चोरड़िया की भावना के अनुरूप सभी मरीजों की सेवा सुश्रूषा व्यवस्थित रूप से की गई। उनके पौत्र श्री प्रफुलचन्दजी एवं श्री अजीतकुमारजी चोरड़िया समारोह में उपस्थित हुए। सभी महानुभावों को चंदनहार व शाल द्वारा सम्मानित किया गया। युवक संघ के अध्यक्ष श्री नाहरमलजी ललवाणी ने सभी का स्वागत किया एवं संघ की गतिविधियों की जानकारी दी। शिविर के संयोजक थे श्री छोटमल लोढ़ा।

श्री पी. एम. चौरड़िया, सी. ए. गत ४५ महीनों से प्रश्नमंच का संचालन कर रहे हैं। इससे पूरे भारतवर्ष में संघ को ख्याति मिली है। अनेक संस्थाओं में सेवारत वरिष्ठ स्वाध्यायी, कर्मठ कार्यकर्ता, सैंकड़ों धार्मिक ट्रस्टों के निर्माण में सहयोग के लिए उनको '**महावीर पुरस्कार**' से सम्मानित कर अभिनन्दन-पत्र भेंट किया गया।

चतुर्थ पुण्य तिथि पर

श्री सज्जननाथजी मोदी

आपकी प्रेरणा धर्म भावना, सरलता और कार्य-शीलता, सादगीमय जीवन एवं कर्तव्यनिष्ठता हमारे लिए सदैव स्मरणीय है। उसका अनुसरण करने के लिए शासन देव हम सपरिवार को शक्ति प्रदान करे।

जन्म : १४ मार्च, १९२६, जोधपुर (राजस्थान)
स्वर्गवास : १३ नवम्बर, १९८५, जयपुर (राजस्थान)
पिता का नाम : स्व. श्री सौभाग्यनाथजी मोदी
माता का नाम : स्व. श्रीमती चाँदकुँवर मोदी
पालक पिता : स्व. श्री सरदारनाथजी सा. मोदी
पालक माता : श्रीमती धनकुँवर मोदी
धर्मपत्नी का नाम : श्रीमती बिलमकुँवर मोदी
भ्राता के नाम : स्व. श्री सुखसम्पतनाथ, श्री सुमेरनाथ सा. मोदी
श्रीमान् सुन्दरनाथ सा. मोदी
पुत्र का नाम : श्री सतीशनाथ मोदी
पुत्र-वधू का नाम : श्रीमती गुलाब मोदी
पुत्रियों के नाम : श्रीमती स्नेहलता भण्डारी, श्रीमती चन्द्रकांता मेहता
श्रीमती राज डागा
कँवर सा. के नाम : श्री सुरेशचन्द्रजी भण्डारी, श्री चैनराजजी मेहता
श्री ज्ञानचन्द्रजी डागा
पौत्र : सौरभ मोदी, सुधांशु मोदी, **पौत्री** : प्रियंका मोदी

आपकी आत्मा को शाश्वत शांति प्राप्त हो। ऐसी मंगलमय भावना करते हैं।

शोक-श्रद्धांजलि

बीकानेर—यहाँ आचार्य श्री नानेश के सुशिष्य मुनिश्री मोतीलालजी म० सा० का १२ नवम्बर को ६४ वर्ष की आयु में स्वर्गवास हो गया। आपका जन्म सम्वत् १९७२ में गंगाशहर में हुआ। आपके पिता का नाम श्री तनसुखलालजी सुराणा और माता का नाम श्रीमती नवलादेवी था। आपने सम्वत् २०३१ में देशनोक में दीक्षा ग्रहण की। दीक्षा से पूर्व आपने ३३, १५ व ८ आदि की तपस्याएँ की थीं। आपके परिवार में सांसारिक बहनोई श्री करणीदानजी, बाबाजी के पुत्र भाई श्री कुन्दनमलजी व छोटे भाई की सांसारिक पत्नी श्री सुमतिकंवर भी दीक्षित हुए। आपकी सुपुत्री महासती श्री मिताश्रीजी के रूप में दीक्षित हैं। देश के विभिन्न संघों ने दिवंगत आत्मा को श्रद्धांजलि अर्पित की है।

रायचूर—आचार्य श्री आनन्द ऋषिजी म० सा० की आज्ञानुवर्तिनी महासती श्री इन्दुकंवरजी का स्वर्गवास ८० वर्ष की आयु में १९ नवम्बर को हो गया। आप यहाँ १३ वर्ष से स्थिरवास विराजमान थीं। उच्च रक्तचाप व सांस के रोग से ग्रस्त रहने पर भी आपने समभाव पूर्वक संथारा पूर्वक देह त्याग किया। वि० सं० १९९७ में बोदवड़ में आपने दीक्षा अंगीकार की। आप सदैव जय-तप, स्वाध्याय तथा सेवा-कार्य में संलग्न रहती थीं। दिवंगत आत्मा को हार्दिक श्रद्धांजलि।

ब्यावर—जैन धर्म दर्शन साहित्य के वयोवृद्ध प्रकाण्ड विद्वान्, प्रसिद्ध साहित्यकार एवं आदर्श अध्यापक पं० शोभाचन्द्रजी भारिल्ल का एक दिसम्बर को आकस्मिक निधन हो गया। आपका सम्पूर्ण जीवन जैन धर्म, साहित्य और संस्कृति की सेवा में अर्पित रहा। स्थानकवासी समाज में आज साहित्य का जो प्रचार-प्रसार है, उसके मूल में आपका ऐतिहासिक योगदान रहा है। जैन सन्त-सतियों के अध्यापन में आपका सतत योगदान रहा। सेठिया ग्रन्थालय, बीकानेर, जैन ट्रेनिंग कॉलेज, जैन गुरुकुल छोटी सादड़ी, जैन गुरुकुल ब्यावर, श्रमणी विद्यापीठ, बम्बई आदि संस्थाओं में रहकर आपने साहित्य-निर्माण के साथ-साथ सन्त-सतियों के अध्यापन में अपनी उल्लेखनीय सेवाएँ दीं। धर्म, न्याय, दर्शन, व्याकरण, आगम और प्रवचन साहित्य की आपके द्वारा लिखित सम्पादित लगभग ३०० पुस्तकें हैं। प्रखर पाण्डित्य के धनी होते हुए भी आप अत्यन्त विनम्र, मिलनसार और सादगीप्रिय व्यक्ति थे। आपके निधन से एक निष्ठावान, धर्म-परायण,

साहित्य-साधक और सेवाव्रती आदर्श अध्यापक की अपूरणीय क्षति हुई है।

कानोड़—यहाँ के सुप्रसिद्ध श्रावक एवं शिक्षाप्रेमी श्री नानालालजी मुड़िया का लगभग ७५ वर्ष की आयु में २३ नवम्बर को आकस्मिक निधन हो गया। आप स्वर्गीय पं० उदय जैन के बालसाथी थे और शिक्षाकार्य में सदैव उनके सहयोगी रहे। आप प्रगतिशील विचारों के पक्षधर थे। जवाहर विद्यापीठ एवं जैन शिक्षण संघ के आप अध्यक्ष आदि विभिन्न पदों पर रहे। सादा जीवन उच्च विचार को आपने जीवन में चरितार्थ किया। जवाहर जैन गुरुकुल के अधिष्ठाता श्री सुन्दरलालजी मुड़िया के आप पिताश्री थे।

जोधपुर—स्वर्गीय श्री उगमचन्दजी सिंघवी की धर्मपत्नी श्रीमती बिलमकंवर का ७२ वर्ष की आयु में १० नवम्बर, को व्रत-प्रत्याख्यान के साथ निधन हो गया। आपने कई ८, ९ व ११ आदि की तपस्याएँ कीं। गत ४० वर्षों से आप चौविहार करती थीं। धार्मिक प्रवृत्तियों में आपकी अच्छी रुचि थी। आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० के प्रति आपकी अगाध भक्ति थी।

भरतपुर—प्रमुख स्वाध्यायी एवं धर्म-परायणा श्रीमती कंचनबाई धर्मपत्नी श्री केलाप्रसादजी एवं मातुश्री श्री प्रकाशचन्दजी जैन (मुंसिफ मजिस्ट्रेट डिग्गी–मालपुरा) का १४ अगस्त, १९८९ को निधन हो गया। आप सरल स्वभावी महिला थीं।

बम्बई—डॉ० नेमीचन्दजी सोनी की धर्मपत्नी श्रीमती चम्पाकुमारी सुपुत्री श्री पतनमलजी लुणावत का १६ नवम्बर को असामयिक निधन हो गया। आप धार्मिक प्रवृत्ति की सरल-स्वभावी महिला थीं।

उदयपुर—उदयपुर श्री संघ की एक बस भिण्डर के पास कुण्डई ग्राम में आचार्य श्री नानेश के दर्शनोपरान्त पुनः उदयपुर जा रही थी कि ग्राम भमरासिया के पास अचानक उलट गई। इस दुर्घटना में ४ व्यक्तियों का २६ नवम्बर को दुःखद निधन हो गया। उनमें प्रमुख थे—श्री दीपचन्दजी पोखरना जो अ० भा० साधुमार्गी जैन संघ के इसी वर्ष कानोड़ अधिवेशन में उपाध्यक्ष चुने गये थे। आप आचार्य श्री नानेश के संसार पक्षीय भतीजे थे। अन्य तीन व्यक्ति थे—सर्वश्री हस्तीमलजी मारू, बलवन्तसिंहजी सरूपरिया एवं दिलखुशजी मेहता। श्री मारू उत्साही सामाजिक कार्यकर्ता थे और राजस्थान विद्यापीठ के वित्त प्रबन्धक थे।

ब्यावर—राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय के प्राचाय पद से सेवानिवृत्त श्री गुरुदत्तजी शर्मा का लगभग ७० वर्ष की आयु में २८ नवम्बर को निधन हो गया। आप आध्यात्मिक रुचि सम्पन्न आदर्श अध्यापक थे। जैन धर्म, साहित्य से आपका बड़ा लगाव था। श्री गोदावत जैन गुरुकुल छोटी सादड़ी में अध्यापक के रूप में दी गई आपकी सेवाएँ विशेष उल्लेखनीय हैं।

उपर्युक्त दिवंगत आत्माओं के प्रति हम सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, 'जिनवाणी' एवं अ० भा० जैन रत्न हितैषी श्रावक संघ की ओर से हार्दिक श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए शोकविह्वल परिवारजनों के प्रति गहरी संवेदना व्यक्त करते हैं।

—सम्पादक

□ □ □

साभार प्राप्ति स्वीकार

२५१) रु० "जिनवाणी" की आजीवन सदस्यता हेतु प्रत्येक

२५७७. श्री रामविलास जी जैन, सुपरवाइजर, सूंसा (बून्दी)
२५७८. श्री जे० जोदरमल जी कन्हैयालाल जी साहूकार, मेट्टूपलियम
२५७९. श्री अशोककुमार जी डागा, बम्बई
२५८०. श्रीमती सुनीता जी सम्पतराज जी गादिया, श्रीमुशानम्
२५८१. श्री शाह पुखराज जी सीताराम जी लूंकड़, खाण्डप
२५८२. श्री धनराज जी भड़कत्या, बून्दी
२५८३. श्री विजयराज जी कुन्दनमल जी भंसाली, बम्बई
२५८४. श्री सोभचन्द जी मालू, एडवोकेट, जोधपुर
२५८५. श्री वैद्य महावीरप्रसाद जी शर्मा, हैदराबाद
२५८६. श्री प्रकाशमल जी लोढ़ा, जोधपुर
२५८७. कु० अंजुला जैन सुपुत्री श्री आर० सी० जैन, वकील, अजमेर
२५८८. श्री जौहरीलाल जी हीरालाल जी ओस्तवाल, अमरावती
२५८९. श्री रामचन्द जी पूनमचन्द जी धारीवाल, बम्बई
२५९०. श्री सतीशकुमार जी मांगीलाल जी डांगी, इन्दौर
२५९१. श्री शांतिलाल जी दुलीचन्द जी खाबिया, मैसूर
२५९२. श्री मूलचन्द जी चौरड़िया, कटंगी (एम. पी.)

जिनवाणी को सहायतार्थ भेंट

२५१) श्री एस० आनन्द देवेन्द्र चौरड़िया, मद्रास
श्री सायरमल जी चौधरी की पुण्य स्मृति में भेंट।

२५१) श्री मांगीलाल जी सज्जनराज जी बाफणा, भोपालगढ़ (जोधपुर)
कु० स्वाति सुपुत्री श्री सज्जनराज जी बाफणा निवासी भोपालगढ़ एवं चि० महेन्द्रकुमार जी सुपुत्र श्री रूपचन्द जी कांकरिया नागौर निवासी के साथ शादी होने के उपलक्ष में भेंट।

२५१) श्री हुक्मीचन्द जी जैन एडवोकेट, जोधपुर
आचार्य प्रवर हस्तीमल जी म० सा० का स्वास्थ्य लाभ की मंगलकामना के साथ दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

२०२) श्री मदनलाल जी वैद्य, मद्रास
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के कोसाणा ग्राम में सपरिवार दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

२०१) श्री वल्लभचन्द जी डागा, जोधपुर
चि० ऋषभ डागा का शुभ विवाह श्री दीपचन्द जी कुमट की सुपुत्री सौ० कां० सुनीता के साथ हुआ उसकी खुशी में भेंट।

२०१) श्री अनिलकुमार जी कमलकुमार जी तलेहरा, मन्दसौर
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के कोसाणा में दर्शनार्थ आने एवं अपने निजी गृह पर २४ घन्टे तक जाप कराने के उपलक्ष में भेंट।

१५१) श्री दिनेशचन्द जी जैन सुपुत्र श्री जीतमल जी जैन, सवाईमाधोपुर
डॉ० डी० आर० मेहता की प्रेरणा से धर्म आराधना, सेवा भावना जाग्रत होने व अपने निजी कार्यों में उत्पत्ति होने के उपलक्ष में भेंट।

१५१) श्री भँवरलाल जी प्रेमचन्द जी लोढ़ा, कानपुर
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० से दर्शनार्थ पधारने के एवं कोसाणा ग्राम में महावीर निर्वाण (दीपावली) पर सजोड़े तेले की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

१५१) श्री जवाहरलाल जी प्रेमचन्द जी बाघमार, कोसाणा
आचार्य प्रवर के मुखारविन्द से श्री जवाहरलाल जी बाघमार की धर्म-पत्नी श्री शान्ता कंवर के अठाई की तपस्या करने एवं आचार्य प्रवर का चातुर्मास सफल होने के उपलक्ष में भेंट।

१०१) श्री राजकुमार जी कुमट, मद्रास
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के कोसाणा ग्राम में दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

१०१) श्री सुभाष जी मुणोत, इचलकरंजी
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

१०१) श्री सरदारमल जी उमरावमल जी ढढ्ढा, जयपुर
हमारे भ्राता श्री घासीमल जी ढढ्ढा की पुण्यस्मृति में भेंट।

१०१) श्री बाबूलाल जी कन्हैयालाल जी बाघमार, मालेगांव (नासिक)
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के सपरिवार दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

१०१) श्री मोहनलाल जी रणमल जी साहबचन्द जी बडेरा
मैसर्स केवलचन्द सोहनलाल, हुबली
परम श्रद्धेय आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के मुखारविन्द से कोसाणा ग्राम में अपने सुपुत्रों के शुभ विवाह में दहेज न लेने के उपलक्ष में भेंट।

१०१) श्री केवलचन्द जी राजेन्द्रकुमार जी ओस्तवाल, मद्रास
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के कोसाणा ग्राम में दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

१०१) श्री गुमानसिंह जी कर्णावट, बम्बई
आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के सपरिवार दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

१०१) श्री रतनलाल जी जैन, भनोखर (अलवर)
श्री रतनलाल जी की धर्मपत्नी श्री सूरजबाई के दूनी में अठाई तपस्या करने के उपलक्ष में भेंट।

१०१) श्री डी० मुलतानमल जी जैन, मद्रास
श्रीमती उम्मेदकंवर जी मेहता धर्मपत्नी श्री मुलतानमल जी मेहता का १५ उपवास की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

१०१) श्री भँवरलाल जी प्रकाशचन्द जी हुण्डीवाल, भोपालगढ़ (जोधपुर)
चि० अशोक एवं अभय हुण्डीवाल की सगाई होने एवं आचार्य प्रवर के दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

५१) श्री भीखमचन्द जी जुगराज जी चिमनलाल जी गादिया, बैंगलोर
भाई श्री फतेचन्द जी गादिया की पुण्य स्मृति में भेंट।

५१) श्री पूनमचन्द जी बोरड़, द्वारा—श्री मानमल जी सूरजमल जी बोरड़, सरदारशहर (चूरू)
चि० नरेन्द्रकुमार के पुत्र जन्म दिनांक १६ अगस्त, १९८९ मिति सावण शुक्ला १४ को होने के उपलक्ष में भेंट।

५१) श्री पूनमचन्द जी बोरड़, द्वारा—श्री मानमल जी सूरजमल जी बोरड़, सरदारशहर (चूरू)
चि० राजेन्द्रकुमार के पुत्र जन्म दि० १ मार्च, १९८९, मिति फाल्गुण कृष्णा ८ को होने के उपलक्ष में भेंट।

५१) श्री श्वे० स्था जैन श्रावक संघ, दूनी (टोंक)
परमविदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म० सा० आदि ठाणा ६ का दूनी चातुर्मास सानंद सम्पन्न होने के उपलक्ष में भेंट।

५१) श्री खेमचन्द जी भड़कत्या, बून्दी
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के कोसाणा ग्राम में दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

५१) श्री माणकचन्द जी मनमोहनराज जी मूथा, पीपाड़शहर (जोधपुर)
अपने सुपुत्र चि० रविप्रकाश कंचन के कोसाणा ग्राम में पूज्य आचार्य श्री हस्तीमल जी म० सा० के मुखारविन्द से गुरु आम्नाय अंगीकार करने के उपलक्ष में भेंट।

५१) श्री जवाहरलाल जी प्रेमचन्द जी बाघमार, कोसाणा
अपने सुपुत्र चि० सुरेशकुमार के सजोड़े दीपावली पर कोसाणा ग्राम तेले की मौन की तपस्या के उपलक्ष में भेंट।

५१) श्री भोपालचन्द जी पगारिया, बैंगलौर
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के कोसाणा ग्राम में सजोड़े दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

५१) श्री एम० सागरमल जी छाजेड़, मद्रास
गुरुदेव के दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

५०) श्री समाघोघा स्था० जैन छोटी संघ, समाघोघा
पूज्य श्री भास्कर मुनिजी एवं विदुषी श्रीमजीबाई म० सा० ठाणा २२ के सान्निध्य में धार्मिक शिक्षा संस्कार शिविर का आयोजन व चातुर्मास के उपलक्ष में भेंट।

२१) श्री जयचन्द जी नेमीचन्द जी मुजदिया, औरंगाबाद
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के कोसाणा ग्राम में सपरिवार दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

२०) श्री जितेन्द्रकुमार जी कोठारी, देवली
परम पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० का स्वास्थ्य लाभ पृच्छा हेतु कोसाणा ग्राम में दर्शनार्थ पधारने के उपलक्ष में भेंट।

२१) श्री छोटूलाल जी महाजन, अध्यक्ष, श्री वर्द्ध० स्था० जैन श्रावक संघ, देवास (म. प्र.)

सफलवक्ता श्री अजित मुनि जी एवं महा० श्री शान्तिकुंवर जी म० सा० महा० श्री रमणिककुंवर जी म० सा० ठाणा ७ के सफल ऐतिहासिक चातुर्मास के उपलक्ष में भेंट ।

५) श्री मथुरालाल जी जैन, सवाईमाधोपुर
पूज्य आचार्य प्रवर श्री हस्तीमल जी म० सा० के मुखारविन्द से अपने सुपुत्र चि० गोपाल के सजोड़े गुरु आम्नाय करने के उपलक्ष में भेंट ।

मण्डल को सहायतार्थ भेंट

२०१) श्री श्वे० स्था० जैन श्रावक संघ, दूनी (टोंक)
परमविदुषी महासती श्री सुशीलाकंवर जी म० सा० आदि ठाणा ५ का दूनी में चातुर्मास सानन्द सम्पन्न होने के उपलक्ष में भेंट ।

१२०) श्री बुधराजजी कोठारी, कोषाध्यक्ष, श्री वर्द्ध० स्था० जैन श्रावक संघ, मेड़ता पर्युषण पर्व के उपलक्ष में भेंट ।

१०) श्री बादलचन्द जी खिवसरा, जोधपुर
साहित्य प्रकाशन के लिए सहायतार्थ भेंट ।

वात्सल्य सेवा सहायता को भेंट

४०१) श्रीमती कमलाबाई जवाहरलाल जी बोहरा, इचलकरन्जी

५०१/- रु० साहित्य प्रकाशन की आजीवन सदस्यता हेतु

३६८. मैसर्स सिपानी ट्रस्ट, बैंगलोर

३६९. श्री माणकचन्द जी नवलखा, जयपुर

३७०. श्री जौहरीमल जी हीरालाल जी ओस्तवाल, अमरावती

३७१. श्री उगमचन्द जी कांकरिया, मद्रास

३७२. श्री उत्तमचन्द जी कांकरिया, मद्रास

यह शरीर नौका रूप है, जीवात्मा उसका नाविक है और संसार समुद्र है। महर्षि इस देह रूप नौका के द्वारा संसार-सागर को तैर जाते हैं। उत्तराध्ययन २३/७३

जैन जगत् की शान बाल ब्रह्मचारी महामहिम आध्यात्म प्रेरक पूज्य आचार्य प्रवर श्री 1008 **श्री हस्तीमल जी म० सा०** के चरण कमलों में शत-शत वंदना करते हुए आपके सुस्वस्थ दीर्घायुष्य की मंगल कामना के साथ—

YOUR SATISFACTION IS OUR REMUNERATION

Phone : 531313, 552400, 552501

एम. अन्नराज कांकरिया	**M. ANRAJ KANKARIA**
महेन्द्रा ज्वैलर्स (वातानुकूलित)	**MAHENDRA JEWELLERS** (A. K.)
ए. आर. गोल्ड हाउस (वातानुकूलित)	**A. R. GOLD HOUSE** (A. K.)
1001-1001, टी. एच. रोड	1000-1001, T. H. Road
कालादीपेठ	Kaladipet
मद्रास-600 019	MADRAS-600 019

आपका सन्तोष ही हमारा व्यापार है।

Super Cable Machines

WIRE & CABLE MACHINERY

IN Addition to our model
ECONOMIKA

We Introduce our
LATEST MODEL
"TECHNIKA"
54 (12+18+24)
STRANDING MACHINE
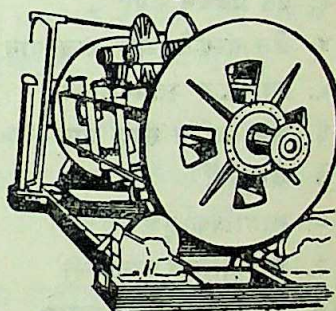
Suitable for
BOBBIN DIA 500/560/610/670 mm
Pintle type.

Wire Tubular Stranding machine statically & Dynamically Balanced

Suitable for :-
Bobbin Dia 450, 500, 610 & 670 mm.
Speed 500 & 300 R.P.M.

We also manufacture

* Heavy duty slip & non slip wire drawing machine
* Armouring machine
* Laying up machine
* Re-Winding machine
* Complete plant for AAC, AAAC & ACSR on turn key project basis

M.R. Choudhary

Super Cable Machines (India) Pvt. Ltd.

OFFICE
Choudhary Ville 1 Shastri Nagar,
AJMER 305 001 Gram CHODHARYCO
Phone 22034, 22299, 30161, 30162, 30163
WORKS. Mangliawas (AJMER)
Phone 21, 23, 24, 25

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल

अंकेक्षित आय-व्यय विवरण वर्ष १९८८–८९

हमने सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर के सम्मिलित स्थिति-विवरण तथा इसके अन्तर्गत चलने वाली संस्थाओं, मण्डल (मुख्य कार्यालय) जिनवाणी, स्वाध्याय संघ एवं जैन शिक्षण संस्थान के स्थिति-विवरण जो कि दिनांक ३१-३-८९ तक बनाये गये हैं तथा उपरोक्त संस्थाओं के आय-व्यय विवरण जो कि दिनांक ३१-३-८९ को समाप्त होने वाले समय के लिये बनाये गये हैं, का अंकेक्षण कर लिया है तथा पाया है कि सभी सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल एवं उसके अधीनस्थ संस्थाओं द्वारा रखी लेखा-पुस्तकों के अनुरूप हैं। हमने पाया कि :—

(१) मण्डल में दर्शाया गया साहित्य का अन्तिम स्टॉक पुस्तकों पर छपे हुए मूल्य पर नहीं लिया जाकर, अनुमानित आधार पर लिया गया है। पुस्तकों के अन्तिम स्टॉक का सत्यापन प्रबन्धकों द्वारा कर लिया गया है।

(२) स्वाध्याय संघ की पुस्तकें विभिन्न शाखाओं द्वारा भेजे गये विवरणों व प्रमाणकों के आधार पर बनाई गई हैं। कुछ खर्चों से सम्बन्धित प्रमाणक (वाउचर) हमारे सत्यापन हेतु प्रस्तुत नहीं किये जा सके हैं।

(३) मण्डल की लेखा-पुस्तकों में सम्मिलित निम्न खातों में सूचना के अभाव में इस वर्ष भी कोई प्रविष्टि नहीं की गई है :—

१. स्थायी जमा अशोका लेलैंड मद्रास	रुपये ५६,०००.००
२. इण्डियन बैंक मद्रास	रुपये २२,५७८.६५

उपरोक्त दोनों खातों में ब्याज की आय की भी प्रविष्टि सूचना के अभाव में विगत तीन वर्ष से नहीं की जा सकी है। इण्डियन बैंक मद्रास के अन्तिम शेष का सत्यापन पत्र भी बैंक द्वारा प्राप्त नहीं हुआ है।

(४) लेखा-पुस्तकें व्यापारिक आधार (मरकेन्टाइल बेसिस) पर लिखी गई परन्तु कुछ खर्चे रोकड़ (केश बेसिस) पर ही लिखे गये हैं।

हमने समस्त आवश्यक जानकारी तथा स्पष्टीकरण जो कि हमारे विवेकानुसार परीक्षण के लिये आवश्यक थे, प्राप्त कर लिये हैं। हमें दी गई सूचनाओं तथा स्पष्टीकरणों के अनुसार उपरोक्त टिप्पणियों सहित :

(अ) सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल का सम्मिलित तथा उसके अधीनस्थ संस्थाओं के स्थिति विवरण, मण्डल तथा अधीनस्थ संस्थाओं के कारोबार की दिनांक ३१.३.८९ को सही स्थिति प्रदर्शित करते हैं।

(ब) सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल के सम्मिलित तथा उसके अधीनस्थ संस्थाओं के ३१.३.८९ को समाप्त होने वाले समय (१.७.८८ से ३१.३.८९ तक) के आय-व्यय विवरण मण्डल तथा उसके अधीनस्थ संस्थाओं के आय-व्यय पर आधिक्य का सही विवरण प्रस्तुत करते हैं।

वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स

जयपुर
दिनांक : १७.१०.८९

ह०/–
(एस. एम. मेहता)

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

सम्मिलित स्थिति विवरण १–७–१९८८ से ३१–३–१९८९

दायित्व	रकम	सम्पत्ति	रकम
कारपस फण्ड	२,५३,९५३.००	**स्थाई सम्पत्ति**	
रिजर्व फण्ड	५,५७,७००.०६	भूमि व भवन	१३,८९५.००
स्तम्भ सदस्यता कोष	१,००१.००	फर्नीचर	९,५९१.०५
संरक्षक सदस्यता कोष	३,५०४.००	साइकिल	४९०.३२
आजीवन सदस्यता कोष	८,९८,४६२.५८	टाइप राइटर	३,१४७.००
सहायता कोष	९८,९५३.०८	साहित्य स्टॉक	१,२९,५०८.९१
अग्रिम साहित्य		आयकर स्रोत कटौती	३०,६७९.६५
प्रकाशन सहायता	६४,८०१.००	उपार्जित ब्याज	२६,७७६.७६
विविध देनदारियां	१,१८,९३७.६०	अग्रिम	०१,६३१.०५
देय खर्च	३,९०३.७५	विविध लेनदारियां	२,३७,७६८.५८
अन्य दायित्व	४५६.८७	फिक्सड् डिपोजिट	११,५६,०००.००
		टेलीफोन डिपोजिट	८१०.००
		रोकड़ व बैंक शेष	
		केन्द्रीय सरकारी बैंक	५.६२
		ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स	२४,१३८.९७
		स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर	२,८०,७८३.१७
		इण्डियन बैंक मद्रास	२२,५७८.६५
		रोकड़ पोते बाकी	७,०२३.६९
		अन्य सम्पत्तियां	३,०६३.००
		व्यय का आय पर आधिक्य	५३,७८४.५२
	२०,०१,६७५.९४		२०,०१,६७५.९४

ह०—	ह०—	ह०—	इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
देवेन्द्रराज मेहता	**चैतन्यमल ढढ्ढा**	**मोतीचन्द करनावट**	**वास्ते मेहता एण्ड कम्पनी**
अध्यक्ष	मंत्री	संयुक्त मंत्री	चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स

जयपुर

ह०—

दिनांक : १७–१०–८९

एस० एम० मेहता

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

सम्मिलित आय-व्यय विवरण १-७-१९८८ से ३१-३-१९८९

व्यय	रकम	आय	रकम
वेतन	९०,०४५.००	सहायता	१,४७,५५१.००
विविध व्यय	७,२९३.३०	कमीशन	१,२००.००
डाक व्यय	१७,८२८.२०	ब्याज	५९,८६३.६७
स्टेशनरी व प्रिन्टिंग खर्च	१,०६,०५३.८५	वार्षिक शुल्क	७,८७९.००
बिजली खर्च	२,१५७.९२	विज्ञापन	३०,४५०.००
ठेली भाड़ा	३८७.००	जीवदया	२५०.००
सफर खर्च	२,६९६.००	पर्युषण सहायता	१५,०३८.००
बैंक कमीशन	४६८.५०	आर्थिक सदस्यता	१९,००१.००
अनुग्रह राशि	३,०००.००	अन्य सहायता	२,४२३.००
किराया खाता	२,४१८.२५	कारपस फण्ड से	५२,५००.००
लेख पुरस्कार	३,४८७.८०		
टेलीफोन खर्च	२,८५७.००		
सम्पादन व्यवस्था	३,९००.००		
साइकिल मरम्मत	२३९.००		
पर्युषण पर्व खर्च	१८,२८५.३५		
पार्सल खर्च	१३१.५०		
प्रचार प्रसार खर्च	२,६०५.८०		
स्वाध्याय प्रशिक्षण शिविर	१,७९८.००		
ट्रांसपोर्ट खर्च	२६.५०		
सामयिक पत्रिका	४३४.६०		
जल खर्च	२७१.८५		
पत्राचार पाठ्यक्रम	४,९१५.००		
मेस खर्च	२१,०४३.४५		
साहित्य प्रकाशन खर्च	६,०७९.००		
डिप्रीसियेशन	२,०३३.८२		
आय का व्यय पर आधिक्य	३५,६९८.९८		
	३,३६,१५५.६७		३,३६,१५५.६७

ह०—
देवेन्द्रराज मेहता
अध्यक्ष

ह०—
चैतन्यमल ढढ्डा
मंत्री

ह०— मोतीचन्द करनावट
संयुक्त मंत्री

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते मेहता एण्ड कम्पनी
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स
ह०—
एस० एम० मेहता

जयपुर
दिनांक : १७-१०-८९

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

स्थिति विवरण १-७-१९८८ से ३१-३-१९८९

दायित्व		रकम	सम्पत्ति	रकम
कारपस फण्ड		२,५३,९५३.००	फर्नीचर	२,४५४.२७
आजीवन सदस्यता		२,७७,१२०.५९	टाइप राइटर	१,०२६.७५
विविध देनदारियां		१,४२,१९२.७२	विविध देनदारियां	१,८०,६५४.५८
कुष्ठ रोगियों की सहायता		५००.००	स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर एण्ड जयपुर	२,७५,३४९.५४
मनीआर्डर		९४.००	उपार्जित ब्याज	२६,७७६.७६
साहित्य प्रकाशन अग्रिम		३७,५०१.००	भूमि व भवन	१३,८९५.००
साहित्य संरक्षक सदस्यता		३,००३.००	इन्कमटैक्स डिडक्शन	३०,६७९.६५
साहित्य प्रकाशन आजीवन सदस्यता		१,७१,३६२-००	इण्डियन बैंक, मद्रास	२२,५७८.६५
स्वाध्याय प्रवृत्ति रिजर्व फण्ड		४५,०००.००	अग्रिम खाता	४५७.००
साहित्य प्रकाशन रिजर्व फण्ड		३,८२,३१०.००	फिक्सड् डिपोजिट	११,५६,०००.००
स्वाध्याय शिक्षा			साहित्य स्टॉक	१,०६,३०६.६८
सहायता	८२,९९७.००		रोकड़ शेष	४,४३९.९६
व्यय	६१,०४४.२०	२१,९५२.८०		
जिनवाणी स्थाई जमा		३,००,०००.००		
अदत्त किराया		२४३.७५		
तलपट फर्क		४७.८७		
वात्सल्य सहायता				
सहायता	२,९९,६०४.००			
ऋण वसूले	४५,१००.००			
	३,४४,७०४.००			
ऋण दिये	३,०२,७००.००	४२,००४.००		
आय का व्यय पर आधिक्य				
गत वर्ष का शेष	१,५९,५८९.५०			
व्यय का आय पर आधिक्य	१६,२५५.३९	१,४३,३३४.११		
		१८,२०,६१८.८४		१८,२०,६१८.८४

ह०—	ह०—	ह०—	इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
देवेन्द्रराज मेहता	**चैतन्यमल ढढ्डा**	**मोतीचन्द करनावट**	वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
अध्यक्ष	मंत्री	संयुक्त मंत्री	चार्टर्ड एकाउन्टेन्ट्स
			ह०
			(एस. एम. मेहता)

जयपुर
दिनांक १७-१०-८९

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

आय-व्यय विवरण १-७-१९८८ से ३१-३-१९८९ तक

व्यय	रकम	आय	रकम
वेतन	३३,६७५.००	सहायता	१,२७४००
विविध व्यय	३,०५८.८५	कमीशन	१,२००.००
डाक व्यय	३,५२८.८५	ब्याज	१६,९९५.७४
स्टेशनरी खर्च	४,८३२.६५	कारपस फण्ड से	१७,५००.००
बिजली खर्च	३३०.५५	नुकसान	१६,२५५.३९
ठेली भाड़ा	१०४.००		
सफर खर्च	१,६५५.००		
बैंक कमीशन	२६२.००		
अनुग्रह राशि	३,०००.००		
किराया	२,१९३.२५		
डिप्रीसियेशन	५८४.९८		
	५३,२२५.१३		५३,२२५.१३

ह०— देवेन्द्रराज मेहता, अध्यक्ष

ह०— चैतन्यमल ढड्ढा, मंत्री

ह०— मोतीचन्द करनावट, संयुक्त मंत्री

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते मेहता एण्ड कम्पनी
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स
ह०—
(एस. एम. मेहता)

जयपुर
दिनांक १७-१०-८९

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

साहित्य प्रकाशन खाता ३१-३-८९ को

व्यय	रकम	आय	रकम
साहित्य खरीद व स्टॉक	१,२१,१०२.६७	प्रार्थना संग्रह	५,०००.००
बाल बोध	३,०००.००	अंतगडदसा सूत्र	११,१११.००
प्रतिक्रमण सूत्र	३,६३०.००	ब्याज	४९.२८९.४९
प्रार्थना संग्रह	९,८७४.५०	साहित्य बिक्री	८,८००.००
सामायिक प्रवेशिका	५,९००.००	३१-३-८९ का शेष	१,०६,३०६.६८
पर्युषण संदेश	१४.५००.००		
जैन विद्वत् परिषद्	२२,५००.००		
	१,८०,५०७.१७		१,८०,५०७.१७

ह०—	ह०—	ह०—	इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
देवेन्द्रराज मेहता	**चैतन्यमल ढढ्ढा**	**मोतीचन्द करनावट**	वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
अध्यक्ष	मंत्री	संयुक्त मंत्री	चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स

जयपुर

दिनांक १७-१०-८९

ह०—

(एस. एम. मेहता)

जिनवाणी

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

स्थिति विवरण १-७-१९८८ से ३१-३-१९८९

दायित्व	रकम	सम्पत्ति		रकम
आजीवन सदस्यता	४,४९,९७९.९९	विविध लेनदारियां		४७,६२६.०३
विविध देनदारियां	१६१.००	स्टेट बैंक ऑफ		
संरक्षक सदस्यता	५०१.००	बीकानेर एण्ड जयपुर		४,९३०.८३
स्तम्भ सदस्यता	१,००१.००	पोस्ट ऑफिस अग्रिम		६००.००
मनीआर्डर	१०.००	डाक व्यय अग्रिम		७४.०५
अग्रिम	३०८.००	मण्डल सम्यग्ज्ञान प्रचारक		
		स्थाई जमा		३,००,०००.००
		व्यय का आय पर आधिक्य		
		गत वर्ष का शेष	९६,३५९.५०	
		चालू वर्ष का	१,६६३.७०	९८,०२३.२०
		रोकड़ पोते		७०६.८८
	४,५१,९६०.९९			४,५१,९६०.९९

ह०—	ह०—	ह०—	इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
देवेन्द्रराज मेहता	**चैतन्यमल ढढ्ढा**	**मोतीचन्द करनावट**	वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
अध्यक्ष	मंत्री	संयुक्त मंत्री	चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स

जयपुर
दिनांक : १७-१०-८९

ह०—
एस. एम. मेहता

जिनवाणी

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

आय-व्यय विवरण १-७-१९८८ से ३१-३-१९८९

व्यय	रकम	आय	रकम
विविध व्यय	१,५८४.५०	सहायता	११,३५३.००
डाक व्यय	१०,४५०.८०	ब्याज	३०,४००.४०
स्टेशनरी व प्रिंटिंग खर्चा	९५,६३९.००	वार्षिक शुल्क	७,८७९,००
ठेली भाड़ा	२८३.००	विज्ञापन	३०,४५०.००
बैंक कमीशन	७८.००	कारपस फण्ड से	३५,०००.००
लेख पुरस्कार	३,४८७.८०	नुकसान	१,६६३.७०
टेलीफोन खर्चा	१,३२३.००		
सम्पादन व्यवस्था	३,९००.००		
	१,१६,७४६.१०		१,१६,७४६.१०

ह०— देवेन्द्रराज मेहता, अध्यक्ष

ह०— चैतन्यमल ढढ्ढा, मंत्री

ह०— मोतीचन्द करनावट, संयुक्त मंत्री

इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
वास्ते मेहता एण्ड कम्पनी
चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स
ह०—
एस. एम. मेहता

जयपुर
दिनांक : १७-१०-८९

स्वाध्याय संघ

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

स्थिति विवरण १-७-१९८८ से ३१-३-१९८९

दायित्व	रकम	सम्पत्ति	रकम
रिजर्व फण्ड	१,१६,२६८.५३	टेलीफोन डिपोजिट	८१०.००
विविध देनदारियां	१,०९,२०३.०२	केन्द्रीय सहकारी बैंक	५.६२
साधर्मी वात्सल्य		फर्नीचर	७,१३६.७८
पल्लीवाल क्षेत्र	२०,२०५.००	साइकिल	४९०.३२
साधर्मी वात्सल्य धार्मिक		टाईपराइटर	२,१२०.२५
पाठशाला	९,०६५.६४	चल पुस्तकालय	३,४७९.६८
प्रश्नमंच सहायता	१,२४३.६४	ओरियन्टल बैंक ऑफ कामर्स	२४,१३८.९७
हिन्डौन सामान	३,०००.००	विविध लेनदारियां	५५,१८४.७३
सामयिक उपकरण	९८२.००	पुस्तकालय साहित्य	२३२.१०
अदत्त वेतन	२,६६०.००	स्टेट बैंक ऑफ बीकानेर	
स्वाध्याय स्मारिका	२७,३००.००	एण्ड जयपुर	५०२.८०
		स्वाध्याय प्रवृत्ति रिजर्व फण्ड	४५,०००.००
		साहित्य स्टॉक	१९,४९०.४५
		स्वाध्याय हॉल	५०.००
		सामायिक स्वाध्याय भवन	
		हिन्डौन	३,०१३.००
		अग्रिम पर्युषण यात्रा व्यय	५००.००
		व्यय का आय पर आधिक्य	
		गत वर्ष का १,७५,३०६.९२	
		(–) चालू ४६,५३३.७९	
		वर्ष लाभ	१,२८,७७३.१३
	२,९०,९२७.८३		२,९०,९२७.८३

ह०— ह०— ह०— इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार

देवेन्द्रराज मेहता — अध्यक्ष
चैतन्यमल ढढ्ढा — मंत्री
मोतीचन्द करनावट — संयुक्त मंत्री
वास्ते मेहता एण्ड कम्पनी — चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स

जयपुर

दिनांक : १७-१०-८९

ह०—
एस. एम. मेहता

स्वाध्याय संघ

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

आय-व्यय विवरण १-७-१९८८ से ३१-३-१९८९

व्यय	रकम	आय	रकम
वेतन	४०,५२०.००	सहायता	९४,९२४.००
विविध व्यय	४८८.९५	ब्याज	४,९३४.३५
स्टेशनरी व प्रिंटिंग खर्च	५,५८२.२०	जीव दया	२५०.००
डाक व्यय	३,८१६.०५	पर्युषण सहायता	१५,०३८.००
बिजली खर्च	६२६.४२	आर्थिक सहायता	१९,००१.००
सफर खर्च	१,०४१.००	अन्य सहायता	२,४२३,००
बैंक कमीशन	१२८.५०		
किराया	२२५.००		
टेलीफोन खर्च	१,५३४.००		
साइकिल मरम्मत	२३६.००		
पर्युषण पर्व खर्च	१८,२८५.३५		
पार्सल खर्च	१३१.५०		
प्रचार प्रसार खर्च	२,६०५.८०		
स्वाध्याय प्रशिक्षण शिविर	१,७९८.००		
ट्रांसपोर्ट खर्च	२६.५०		
सामायिक पत्रिका	४३४.६०		
जल खर्च	१११.०५		
पत्राचार पाठ्यक्रम	४,९१५.००		
साहित्य प्रकाशन खर्च	६,०७९.००		
डिप्रीसियेशन	१,४४८.८४		
आय का व्यय पर आधिक्य	४६,५३३.५९		
	१,३६,५७०.३५		१,३६,५७०.३५

ह०—	ह०—	ह०—	इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
देवेन्द्रराज मेहता	**चैतन्यमल ढढ्ढा**	**मोतीचन्द करनावट**	**वास्ते मेहता एण्ड कम्पनी**
अध्यक्ष	मंत्री	संयुक्त मंत्री	चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स

जयपुर ह०—

दिनांक : १७-१९-८९ **एस. एम. मेहता**

जैन शिक्षण संस्थान

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

स्थिति विवरण ३१-३-१९८९

दायित्व		रकम	सम्पत्ति	रकम
रिजर्व फण्ड		५९,१२१.५३	रोकड़ शेष	१,८७६.८५
विविध देनदारियां		३,९३७.३३	सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल	९०,८५९.७१
आय का व्यय पर आधिक्य				
गत वर्ष का	२२,५९३.२२			
चालू वर्ष	७,०८४.४८	२९,६७७.७०		
		९२,७३६.५६		९२,७३६.५६

ह०—	ह०—	ह०—	इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
देवेन्द्रराज मेहता	**चैतन्यमल ढढ्ढा**	**मोतीचन्द करनावट**	वास्ते **मेहता एण्ड कम्पनी**
अध्यक्ष	मंत्री	संयुक्त मंत्री	चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स

जयपुर

दिनांक : १७-१०-८९

ह०—

एस. एम. मेहता

जैन शिक्षण संस्थान

सम्यग्ज्ञान प्रचारक मण्डल, जयपुर

आय-व्यय विवरण १-७-१९८८ से ३१-३-१९८९

व्यय	रकम	आय	रकम
वेतन	१५,८५०.००	सहायता	४०,०००.००
विविध व्यय	२,१६१.००	ब्याज	७,५३३.१८
डाक व्यय	३२.५०		
बिजली खर्च	१,२००.९५		
पानी खर्च	१६०.८०		
मेस खर्च	२१,०४३.४५		
नफा	७,०८४.४८		
	४७,५३३.१८		४७,५३३.१८

ह०—	ह०—	ह०—	इसी दिनांक की रिपोर्ट के अनुसार
देवेन्द्रराज मेहता	चैतन्यमल ढढ्ढा	मोतीचन्द करनावट	वास्ते मेहता एण्ड कम्पनी
अध्यक्ष	मंत्री	संयुक्त मंत्री	चार्टर्ड अकाउन्टेन्ट्स

जयपुर
दिनांक : १७-१०-८९

ह०—
एस. एम. मेहता

विशेष पत्र

हरकार्ड बनेगा, अहिंसा-अमृत-कलश की अनमोल बूंद

"जीव–दया–प्रेमियों से अपील" के प्रकाशन पर धन्यवाद। आदेश हर शुक्रवार को राजस्थान में पशुओं को अभय-दान, जीवन-दान' का अभिनन्दन करते हुए कहना चाहूंगा कि विशाल भूखंड पर बसे, राजस्थान के दूर-दराज के इलाकों के गाँवों ही नहीं, कई नगरों तक इस आदेश की अभी तक भनक ही नहीं मिल पाई, फलस्वरूप इस आदेश की मौजूदगी में भी पशुओं की हत्याएँ जारी हैं। वस्तुतः इस आदेश की घर-घर, जन-जन तक पहुँच ही इस आदेश को मूर्त्तरूप दे सकती है। सरकार के पास आकाशवाणी जैसा सशक्त संचार साधन है तो मैं चाहूंगा कि अहिंसा में अटूट आस्था और विश्वास रखने वाला हर परिवार, एक पोस्ट-कार्ड माननीय मुख्य मंत्री महोदय राजस्थान सरकार, जयपुर को इस आशय से प्रेषित करें कि इस आदेश को आकाशवाणी से प्रतिदिन दो बार प्रसारित करें, ऐसा होने पर ही आदेश की पूर्णरूपेण मूर्त्तरूप लेने की भूमिका बनेगी।

प्रत्येक प्राणी को आत्मिक आनन्द की अनुभूति देने वाली भगवती अहिंसा वस्तुतः राष्ट्र एवं समाज के जीवन का अमृत कलश है। दयालु, संवेदनशील परिवारों द्वारा प्रेषित ऐसा प्रत्येक पोस्ट-कार्ड इस अमृत कलश की अनमोल बूंद बन कर असंख्य निरीह पशुओं को जीवन-दान देने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करेगा, बस लिख डालिए एक कार्ड।

—राजेन्द्रप्रसाद जैन, एडवोकेट
भवानीमंडी